सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

१३

(जनवरी १९१५ – अक्तूबर १९१७)

सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

१३

(जनवरी १९१५ – अक्तूबर १९१७)

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मन्त्रालय
भारत सरकार

भूमिका

गांधीजीके भारतीय कार्यकालसे सम्बद्ध इस प्रथम खण्डमें १९१५ से लेकर सितम्बर, १९१७ तक की सामग्री दी गई है। इसका प्रारम्भ गांधीजीके ९ जनवरी, १९१५ को बम्बई बन्दरगाहपर उतरनेके साथ होता है और समाप्ति चम्पारन सत्याग्रहकी इतिके साथ।

गांधीजीको गोखलेकी सलाह थी कि वे भारत आकर शीघ्रतामें कोई कार्य आरम्भ न करें और किसी भी सार्वजनिक प्रश्नपर कुछ कहनेसे पहले एक साल तक चुपचाप देशकी परिस्थितियोंका अध्ययन करें। इस सलाहको मानते हुए गांधीजीने एक साल तक सार्वजनिक प्रश्नोंपर मौनकी नीतिका निर्वाह किया और १९१५ का लगभग पूरा वर्ष देशमें घूम-घूमकर नेताओंसे मिलने-जुलने और उनके साथ विचार-विनिमय करनेमें बिताया। उनकी १९१५ की डायरी इस सबका विस्तृत विवरण प्रस्तुत करती है, उसमें हमें महात्मा मुंशीराम (स्वामी श्रद्धानन्द) तथा कविगुरु रवीन्द्रनाथ ठाकुर जैसे महान् व्यक्तियोंसे उनके सम्पर्ककी जानकारी भी प्राप्त होती है।

स्वदेश आनेपर अवसर मिलते ही गांधीजी सबसे पहले सौराष्ट्रमें अपने परिजनोंसे मिले, और तदुपरान्त उन्होंने अपने सहयोगियोंके लिए फीनिक्सके आदर्शको सामने रखकर एक नये जीवनकी योजना तैयार करनेकी व्यावहारिक समस्याकी ओर ध्यान दिया। कठोर नैतिक अनुशासनके आदर्शको गांधीजी अपने लिए ही नहीं, सार्वजनिक प्रश्नोंको सुलझानेके लिए नैतिक शक्तिके प्रयोगका उनका जो कार्यक्रम था, उसकी सफलताके लिए भी अपरिहार्य मानते थे। इस सबको ध्यानमें रखते हुए मई, १९१५ में उन्होंने अहमदाबादके पास कोचरब नामक स्थानपर एक आश्रम की स्थापना की। उद्देश्य यह था कि इसे राष्ट्रके आत्मत्यागी सेवकोंके लिए प्रशिक्षण केन्द्र बनाया जाये। उन्होंने कुछ नियम निर्धारित कर दिये, जिनके अधीन आश्रमवासियोंको अपना जीवन व्यतीत करना था। ये नियम आश्रमके संविधानके मसविदे (पृष्ठ ९५-१०१) में दिये गये हैं। इसमें जीवनके सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक एवं शैक्षणिक आदि विभिन्न पहलुओंसे सम्बन्धित गांधीजीका समस्त कार्यक्रम क्रमबद्ध ढंगसे दिया गया है।

आश्रमकी स्थापना करनेके बाद गांधीजीका दूसरा कार्य था जनताको अपने आदर्शोंकी, सत्याग्रहके दर्शन-पक्ष और भारतकी विशिष्ट समस्याओंके सन्दर्भमें उसके प्रयोगकी शिक्षा देना। अपने इस कार्यके प्रति उनकी वृत्ति और इसके सम्पादनकी उनकी रीति एक सच्चे जनसेवी पत्रकारकी थी, न कि उस दार्शनिककी जो व्यवहारकी दुनियासे निर्लिप्त सैद्धान्तिक विचारोंके महल खड़े करता है। क्या ऊँच और क्या नीच, वे सभी वर्गोंके लोगोंसे मिले और जब-जैसा प्रसंग हुआ, उन्होंने उपयुक्तसे उपयुक्त ढंगसे सभीके सामने अपने विचार प्रस्तुत किये। एक विचार, जो वे अपने मनमें बहुत दिनोंसे सँजोये हुए थे, यह था कि भारतीयोंको आपसी व्यवहारमें अंग्रेजीके बदले देशी भाषाओंका प्रयोग करना चाहिए। स्वदेश आनेके बाद दूसरे ही दिन अपने सम्मानमें आयोजित

गुजरातियोंकी एक सभामें उन्होंने अपने इस चिर-पोषित विचारको कार्यरूप दिया। इसके बाद उन्होंने जो भी कहा, जो भी लिखा, सबमें मुख्य स्वर प्रायः एक ही था — अर्थात् राष्ट्रका सार्वजनिक जीवन स्वस्थ और सुव्यवस्थित हो। इस खण्डमें संगृहीत उनकी वाणीके कतिपय उत्तम उदाहरणोंके रूपमें उनके काशी हिन्दू विश्वविद्यालयमें दिये गये बहु-चर्चित भाषण (पृष्ठ २१२-१८) और मद्रासमें स्वदेशीपर (पृष्ठ २२१-२७) तथा इलाहाबादमें आर्थिक बनाम नैतिक प्रगतिपर (पृष्ठ ३११-१९) दिये गये उनके प्रवचनोंका उल्लेख किया जा सकता है। ये प्रवचन उन्होंने बड़े मनोयोगके साथ तैयार किये थे।

किन्तु, इस कालमें गांधीजीने जिस बातकी ओर सबसे अधिक ध्यान दिया वह थी शिक्षाकी समस्या। दरअसल, इस खण्डमें उनका व्यक्तित्व मुख्यतः एक शिक्षा-शास्त्रीके रूपमें ही उभरा है। उन्होंने देखा कि अगर भारतको अपना असली रूप, अपनी रचनात्मक शक्ति अक्षुण्ण रखनी है तो शिक्षा-पद्धतिमें आमूल परिवर्तन करना होगा — उसे ऐसा रूप देना होगा जिसमें आजकी तरह किताबी ज्ञानपर अनावश्यक जोर न दिया जाये और साथ ही अंग्रेजी भाषाको, जिसने केन्द्रस्थ स्थानको हथिया लिया है, उससे अपदस्थ करना होगा। उन्होंने चम्पारनसे अहमदाबाद स्थित अपने मित्रोंको जो पत्र लिखे उनमें और राष्ट्रीय स्कूलकी नियमावलीमें (पृष्ठ ३३४-३६) उनके शिक्षा-सम्बन्धी विचार किंचित् विस्तारसे मिलते हैं; लेकिन मोटे तौरपर तो इस विषयकी चर्चा उन्होंने विद्यार्थियोंके सामने हर अवसरपर की।

गांधीजी दक्षिण आफ्रिकासे आ तो गये थे, लेकिन उस देशकी चिन्ता उनके मनसे कभी दूर नहीं हुई थी। उन्होंने जे० बी० पेटिटको जो पत्र (पृष्ठ ११०-१६) लिखा, उसमें सत्याग्रह-निधिका पूरा हिसाब देनेके साथ-साथ दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रहपर भी एक विहंगम दृष्टि डाली है। उसकी सीमाएँ और उपलब्धियाँ तथा १९१४ के समझौतेसे क्या-कुछ प्राप्त हुआ और क्या-कुछ प्राप्त करना शेष रह गया है, यह सब उसमें बताया गया है। वेस्ट, कुमारी श्लेसिन और लाज़रसको लिखे उनके पत्रोंसे भी प्रकट होता है कि वहाँके लोगोंके कल्याणकी चिन्ता उन्हें बराबर बनी रहती थी। लेकिन, दक्षिण आफ्रिकाकी जो समस्या उन्हें सबसे अधिक परेशान किये रही वह थी गिरमिट-प्रथा। इसे वे एक ऐसी बुराई मानते थे जिसमें सुधार तो हो ही नहीं सकते थे — उसे समूल नष्ट कर देना ही उसका एकमात्र उपचार था। इस प्रथाके विरुद्ध दिसम्बर, १९१६ में लखनऊ कांग्रेसमें जो प्रस्ताव पास किया गया उसके बाद उन्होंने इसपर और भी तीव्रतासे प्रहार करना आरम्भ कर दिया — अहमदाबाद, बम्बई, सूरत, कराची, कलकत्ता आदि नगरोंमें आयोजित एकके-बाद-एक सभामें उन्होंने माँग की कि ३१ मई, १९१७ से पूर्व भारतीयोंको प्रवासार्थ देशसे बाहर भेजना बन्द किया जाये। और अन्ततः वाइसरॉयने यह माँग स्वीकार कर ली।

आन्तरिक राजनीतिके क्षेत्रमें ब्रिटिश राजनयिकोंकी न्याय-भावना और उदारतामें उनका विश्वास अक्षुण्ण बना रहा; वे मानते रहे कि उन्हें अपना कर्त्तव्य-बोध करानेके लिए इतना ही आवश्यक है कि उनपर जनमतका पूरा दबाव डाला जाये। आतंकवादियोंकी कार्रवाईकी स्पष्ट शब्दोंमें भर्त्सना करनेका जितना बड़ा कारण उनका नैतिक विश्वास

था उतना ही बड़ा कारण ब्रिटिश राजनयिकोंकी शालीनता और उदारतामें उनकी आस्था भी थी। उन्होंने कांग्रेस-लीग सुधार-योजनाका समर्थन किया और उसके पक्षमें जनमत तैयार करनेमें पूरा योगदान किया (पृष्ठ ५३७)।

चम्पारनका संघर्ष भी ब्रिटिश न्याय-भावनाके प्रति उनकी इसी आस्थासे अनुप्राणित था। इस संघर्षमें वे कुल मिलाकर प्रसंगवश ही पड़े थे, और यद्यपि सक्रिय सत्याग्रहकी नौबत आ जानेपर वे उसके लिए भी तैयार थे; फिर भी उनकी दृष्टिमें यह मुख्यत: एक मानवतावादी कार्य ही था, राजनीतिक आन्दोलन नहीं। उन्हें सरकारकी ओरसे चम्पारन जिला छोड़ देनेका आदेश दिया गया, लेकिन उन्होंने उसकी अवज्ञा की और १८ अप्रैल, १९१७ को अदालतमें एक बयान देते हुए (पृष्ठ ३७७-७८) उन्होंने अपने देशमें पहली बार सविनय अवज्ञाके नैतिक आधारकी परिभाषा की, जो इस प्रकार थी, ... "हुक्म-उदूलीकी सजा विरोध किये बिना सहन करना है ... उसे न माननेका कारण सरकारके प्रति आदर-भावमें कमी नहीं, बल्कि अपने जीवनके उच्चतर विधान — अन्तरात्माके आदेशका पालन" करना है। २१ अप्रैलको अखबारोंके लिए दिये गये एक वक्तव्य (पृष्ठ ३८१) में गांधीजीने घोषणा की: "सरकारके आदेशसे मुकदमा वापस ले लिया गया है। मेरे द्वारा की जानेवाली जाँचके दौरान अधिकारी लोग मेरी मदद करेंगे, इसका वचन दिया गया है।" अन्तत: गांधीजीने जाँचका कार्य विधिवत् सम्पन्न किया और १३ मई, १९१७ को अपना प्रतिवेदन सरकारकी सेवामें प्रेषित कर दिया। प्रतिवेदनसे प्रकट होता है कि गांधीजीने तथ्योंका कैसा सम्यक् अध्ययन किया था और उन्हें प्रस्तुत करनेमें उन्होंने कितने संयमसे काम लिया था। उसमें आत्म-सम्मानकी गरिमा भी है और समझौतेके लिए उत्साह भी। जो माँगें पेश की गई थीं, उनसे कमकी कल्पना नहीं की जा सकती थी; किन्तु साथ ही प्रतिवेदनमें तत्काल कार्रवाई करनेका आग्रह भी था। एक सच्चे सत्याग्रहीके नाते गांधीजी किसीको विवश करके कुछ लेनेमें विश्वास नहीं रखते थे। उनका विश्वास देनेवालेके सुप्त विवेकको जगाकर प्राप्त करनेमें था। सो अंग्रेज जमींदारोंकी जातीय गौरवकी भावनाको झकझोरनेका प्रयास करते हुए उन्होंने कहा: "यह कार्य मैंने इस आशासे हाथमें लिया है कि अंग्रेज जातिके नाते अपने इस विश्वासको ध्यानमें. रखकर कि पूरी-पूरी व्यक्तिगत स्वतन्त्रताका उपभोग सभीका जन्मसिद्ध अधिकार है, वे अपने गौरवकी ऊँचाई तक उठकर अपने आश्रित किसानोंको भी स्वतन्त्रता देनेकी उदारता दिखायेंगे।" (पृष्ठ ३९४)। प्रारम्भमें उन्हें इस प्रयासमें सफलता नहीं मिली, लेकिन अन्तमें सरकारने उनकी बात मान ली। एक जाँच-समिति नियुक्त की गई, जिसके सदस्योंमें गांधीजीको भी शामिल किया गया। समितिकी कार्रवाईके दौरान उन्हें एक-एक बातके लिए लड़ना पड़ा और किसानोंके हितोंको सुरक्षित बनानेके लिए बड़ी सौदेबाजी करनी पड़ी। आखिर उन्हें उनकी समझौतापरक नीतिका पुरस्कार मिला — ३ अक्तूबरको समितिके प्रतिवेदनपर सभी सदस्योंने एकमत होकर हस्ताक्षर कर दिये। इस प्रकार गांधीजीका यह सौम्य उद्देश्य कि "मालिकों और रैयतके बीच परस्पर शान्ति स्थापित करूँ, जिससे कि रैयतको भी उतनी स्वतन्त्रता और प्रतिष्ठा मिल जाये जितनी कि मनुष्य-मात्रको मिलनी ही चाहिए" (पृष्ठ ४२९) पूरा हुआ।

इस अवधिमें गांधीजीने तिलक, श्रीमती बेसेंट, लाला लाजपतराय, पंडित मदन-मोहन मालवीय आदि अनेक जननायकों और लोकसेवी व्यक्तियोंसे सम्पर्क भी बढ़ाया। भारत सेवक समाजके सदस्योंसे उनका विशेष सम्बन्ध रहा। इसके अतिरिक्त विनोबा, मशरूवाला, महादेव देसाई, राजेन्द्रप्रसाद, कृपलानी, कालेलकर, जमनालाल बजाज, ऐन्ड्रयूज-जैसे आत्मत्यागी कार्यकर्त्ता भी इसी अवधिमें उनके सम्पर्कमें आये। अन्य खण्डोंकी तरह इस खण्डमें भी उनके व्यक्तिगत पत्रोंकी संख्या पर्याप्त है। इनमें से कुछ उपर्युक्त सज्जनोंको और कुछ अन्य लोगोंको लिखे गये हैं। उनके सामान्य लेखन और सार्वजनिक भाषणोंकी तुलनामें इन पत्रोंका स्वर किंचित् मीठा और अनौपचारिक है। कुमारी एस्थर फैरिंगको लिखे उनके पत्र पहले-पहल इसी खण्डमें आये हैं। आत्मीयता इन पत्रोंका उद्‌गम है। ऐसा जान पड़ता है कि मानो गांधीजी कर्म-संकुल सार्वजनिक जीवनकी क्लांतिको ताजगी और स्फूर्ति देनेके लिए आत्मीयताकी इस गंगामें अवगाहन करते थे। पत्रोंके द्वारा अत्यन्त आत्मीय भावसे मनकी बात कहकर वे जैसे खुद राहत महसूस करते थे; और दूसरोंको तो उससे बल और प्रेरणा मिलती ही थी। उनके शब्दोंमें "मेरी श्रद्धाने मेरी रक्षा की है — स्नेहको विनयशील और धैर्यवान होना चाहिए।"

आभार

इस खण्डकी सामग्रीके लिए हम साबरमती आश्रम संरक्षक तथा स्मारक न्यास (साबरमती आश्रम प्रिजर्वेशन ऐंड मेमोरियल ट्रस्ट) और संग्रहालय, नवजीवन ट्रस्ट, गुजरात विद्यापीठ ग्रंथालय, अहमदाबाद; गांधी स्मारक निधि व संग्रहालय, नई दिल्ली; राष्ट्रीय पुस्तकालय (नेशनल लाइब्रेरी), कलकत्ता; रवीन्द्र सदन, विश्वभारती, शान्तिनिकेतन; भारत सेवक समाज (सर्वेन्ट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी), पूना; स्वातन्त्र्य संग्राम इतिहास (हिस्ट्री ऑफ फ्रीडम मूवमेंट) का कार्यालय, बम्बई; जिला डिप्टी कलक्टर, पोरबन्दर और बिहार सरकार; श्री छगनलाल गांधी, अहमदाबाद; श्री नारणदास गांधी, राजकोट; श्रीमती सुशीलाबेन गांधी, फीनिक्स, डर्बन; श्रीमती राधाबेन चौधरी, कलकत्ता; श्रीमती राजमोहिनी रुद्र, इलाहाबाद; श्री बी० जी० सरैया; श्री रमणलाल सरैया; श्री प्रमोद वीरचन्द शाह; श्री रेवाशंकर सोढा; श्री सी० के० भट्ट; श्री वालजी गोविन्दजी देसाई; श्री एच० एस० एल० पोलक; श्री ए० एच० वेस्ट; 'श्री अमरनाथ झा : ए मेमोरियल वॉल्यूम', 'गांधीजीनी साधना', 'पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद', 'बापूजीनी शीतल छायामां', 'बापूनी प्रसादी', 'महात्मा : लाइफ आफ मोहनदास करमचन्द गांधी', 'महात्मा गांधी', 'महात्मा गांधी : हिज़ लाइफ, राइटिंग्ज़ ऐंड स्पीचेज', 'गांधीजीनी विचार सृष्टि,' 'महादेव देसाईज़ अर्ली लाइफ', 'माई डियर चाइल्ड', 'माझी जीवन कथा', 'लाइफ आफ विनोबा', 'लेटर्स ऑफ राइट ऑनरेबिल वी० एस० श्रीनिवास शास्त्री', 'सत्याग्रह इन चम्पारन,' 'सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज़ मूवमेंट इन चम्पारन' और 'स्पीचेज़ ऐंड राइटिंग्ज़ ऑफ महात्मा गांधी', पुस्तकों और साधन-सूत्रोंकी सूचीमें सम्मिलित रिपोर्टोंके प्रकाशकों तथा निम्नलिखित समाचारपत्रों और पत्रिकाओंके आभारी हैं: 'अमृतबाजार पत्रिका', 'आश्रम', 'इंडियन ओपिनियन', 'इंडियन रिव्यू', 'इंडियन सोशल रिफॉर्मर', 'काठियावाड़ टाइम्स', 'खेड़ा वर्तमान', 'गुजरात मित्र अने गुजरात दर्पण', 'गुजराती', 'टाइम्स ऑफ इंडिया', 'तत्त्वबोधिनी पत्रिका', 'न्यू इंडिया', 'प्रजाबन्धु', 'प्रताप', 'पायनियर', 'बंगाली', 'बॉम्बे क्रॉनिकल', 'बुद्धि प्रकाश', 'मद्रास मेल', 'मराठा', 'मॉडर्न रिव्यू', 'लीडर', 'वैदिक मैगज़ीन', 'सद्धर्म प्रचारक', 'समालोचक' और 'हिन्दू'।

अनुसंधान और सन्दर्भ-सम्बन्धी सुविधाओंके लिए राष्ट्रीय अभिलेखागार (नेशनल आर्काइव्ज़ ऑफ इंडिया), अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी पुस्तकालय, गांधी स्मारक संग्रहालय, इंडियन कौंसिल ऑफ वर्ल्ड अफेयर्स पुस्तकालय, सूचना और प्रसारण मन्त्रालय (मिनिस्ट्री ऑफ इन्फर्मेशन ऐंड ब्रॉडकास्टिंग) के अनुसंधान और सन्दर्भ विभाग (रिसर्च ऐंड रेफरेंस डिवीज़न), नई दिल्ली; साबरमती संग्रहालय तथा गुजरात विद्यापीठ ग्रंथालय, अहमदाबाद; सार्वजनिक पुस्तकालय, इलाहाबाद; तथा श्री प्यारेलाल नय्यर हमारे धन्यवादके पात्र हैं। प्रलेखोंकी फोटो-नकल तैयार कर देनेके लिए हम सूचना एवं प्रसारण मन्त्रालयके फोटो-विभाग, नई दिल्लीके आभारी हैं।

पाठकोंको सूचना

अंग्रेजी और गुजरातीसे अनुवाद करनेमें अनुवादको मूलके समीप रखनेका पूरा प्रयत्न किया गया है, किन्तु साथ ही अनुवादकी भाषा सुपाठ्य बनानेका भी पूरा ध्यान रखा गया है। छापेकी स्पष्ट भूलें सुधारनेके बाद अनुवाद किया गया है और मूलमें प्रयुक्त शब्दोंके संक्षिप्त रूप यथासम्भव पूरे करके दिये गये हैं। यह ध्यान रखा गया है कि नामोंको सामान्यतः जैसे बोला जाता है वैसे ही लिखा जाये। जिन नामोंके उच्चारण सन्दिग्ध हैं उनको वैसा ही लिखा गया है, जैसा गांधीजीने अपने गुजराती लेखोंमें लिखा है।

मूल सामग्रीके बीचमें चौकोर कोष्ठकोंमें दी गई सामग्री सम्पादकीय है। गांधीजीने किसी लेख, भाषण, वक्तव्य आदिका जो अंश मूल रूपमें उद्धृत किया है, वह हाशिया छोड़कर गहरी स्याहीमें छापा गया है, लेकिन यदि ऐसा कोई अंश उन्होंने अनूदित करके दिया है तो उसका हिन्दी अनुवाद हाशिया छोड़कर साधारण टाइपमें छापा गया है। भाषणोंकी परोक्ष रिपोर्ट, तथा वे शब्द, जो गांधीजीके कहे हुए नहीं हैं, बिना हाशिया छोड़े गहरी स्याहीमें छापे गये हैं।

शीर्षककी लेखन-तिथि जहाँ उपलब्ध है, वहाँ दायें कोनेमें ऊपर दे दी गई है; परन्तु जहाँ वह उपलब्ध नहीं वहाँ उसकी पूर्ति अनुमानसे चौकोर कोष्ठकोंमें की गई है और जहाँ आवश्यक हुआ उसका कारण स्पष्ट कर दिया गया है। शीर्षकके अन्तमें सूत्रके साथ दी गई तिथि प्रकाशनकी है।

'*सत्यना प्रयोगो अथवा आत्मकथा*' के अनेक संस्करण होनेसे उनकी पृष्ठ संख्याएँ विभिन्न हैं; इसलिए हवाला देनेमें केवल उनके भाग और अध्यायका ही उल्लेख किया गया है।

साधन-सूत्रोंमें 'एस० एन०' संकेत साबरमती संग्रहालय, अहमदाबादमें उपलब्ध सामग्री का, 'जी० एन०' गांधी स्मारक निधि और संग्रहालय, नई दिल्लीमें उपलब्ध कागज-पत्रोंका और 'सी० डब्ल्यू०' कलैक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गांधी (सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय) द्वारा संगृहीत पत्रोंका सूचक है।

पृष्ठभूमिका परिचय देनेके लिए मूलसे सम्बद्ध कुछ सामग्री परिशिष्टोंमें दे दी गई है। साधन-सूत्रोंकी सूची और इस खण्डसे सम्बन्धित कालकी तारीखवार घटनाएँ अन्तमें दी गई हैं।

विषय-सूची

चित्र-सूची

१. भेंट: 'बॉम्बे क्रॉनिकल'के प्रतिनिधिको

जनवरी ९, १९१५

९ जनवरी, १९१५को, जिस दिन गांधीजी विदेशसे भारत आये, उनसे 'बॉम्बे क्रॉनिकल'के प्रतिनिधिने भेंट की। भेंटमें उन्होंने कहा:

यह कहनेकी आवश्यकता नहीं कि लगातार १३ वर्ष तक और कुल मिलाकर लगभग पच्चीस वर्ष तक भारतसे बाहर रहनेके बाद हम पति-पत्नी, दोनों अपनी प्यारी मातृभूमिके फिरसे दर्शन करके अत्यन्त प्रसन्न हुए हैं और जनताने हमारा जो प्रेमपूर्वक और हार्दिक स्वागत किया, उससे हमारी खुशी और भी बढ़ गई है — हम अभिभूत हो गये हैं। मैं चाहता हूँ कि भविष्यमें हम अपने व्यवहारसे इस स्वागतकी अपनी पात्रता सिद्ध करें।

जैसा कि लोग जानते हैं, मैंने अपने कई देशभाइयोंके साथ अधिकारियोंको लिख कर भेजा था कि हमें युद्धमें सेवा करनेका अवसर दिया जाये। हम लोगोंकी सेवाएँ स्वीकार भी कर ली गईं।[1] फिर मैंने चाहा था कि मुझे ऐसे अस्पतालोंमें से किसीमें सेवाके लिए भेजा जाये जो घायल भारतीय सैनिकोंके लिए निर्धारित कर दिये गये हैं। किन्तु दुर्भाग्यवश मैं उस समय प्लूरिसीसे पीड़ित था, इसलिए विभिन्न विभागोंके अधिकारी (कमांडिंग अफसर) मुझे किसी भी अस्पतालमें भेजनेके लिए तैयार नहीं हुए। इसी बीच मेरी पत्नीका एक पुराना रोग फिर उभर आया। भारत-उपमन्त्रीने[2] यह खबर पाते ही तत्काल मुझे पत्र लिखा कि आखिर मेरा सब कार्य दलके संगठनकी हद तक तो समाप्त हो ही चुका है और फिर हम दोनों बीमार भी हैं, इसलिए हमें तुरन्त भारत लौट जाना चाहिए। इसीसे हम जरा पहले यहाँ आ गये।

मैं जानता हूँ कि जनता दक्षिण आफ्रिकाकी स्थितिके सम्बन्धमें कुछ जानना चाहेगी। इस सम्बन्धमें तो मैं फिर वही कहूँगा, जो पहले कई बार कह चुका हूँ; अर्थात्, जिन मुद्दोंको लेकर सत्याग्रह किया गया था, वे सभी पूर्णतः स्वीकार कर लिये गये हैं। यह सफलता उस महत्त्वपूर्ण सहायताका परिणाम है जो हमें अपने नेक वाइसरायसे[3] और माननीय श्री गोखलेके[4] नेतृत्वमें भारतकी उदार जनतासे मिली। मुझे यह स्वीकार करना चाहिए कि वहाँके मंत्री बहुत ही निश्छल थे और उन्होंने हमारे संघर्षके पीछे जो भावना काम कर रही थी, उसे समझा था। जैसा कि आप जानते हैं, जनरल स्मट्सने[5] रेलवे

१. देखिए खण्ड १२, पृष्ठ ५१९

२. चार्ल्स रॉबर्ट्स।

३. लॉर्ड हार्डिंज।

४. गोपाल कृष्ण गोखले (१८५६-१९१५); शिक्षा-शास्त्री और राजनयिक; देखिए, खण्ड २, पृष्ठ ४१७।

५. जे० सी० स्मट्स (१८७०-१९५०); दक्षिण आफ्रिकी जनरल और राजनयिक, बादमें प्रधानमन्त्री।

हड़तालके नेताओंके निर्वासनसे सम्बन्धित बहसमें बोलते हुए सत्याग्रह और हड़तालका अन्तर बताकर हमारी स्थितिको उचित ठहराया था। अब वहाँ सहानुभूतिकी भावना व्याप्त है और मेरा खयाल है, सरकार हमारे दक्षिण आफ्रिकी भाइयोंको प्रभावित करनेवाला कोई भी विशेष कानून पास करानेकी जिम्मेदारी हाथमें लेनेसे पूर्व भारतीयोंकी राय लेनेकी इच्छा रखती है। इसलिए भविष्यके सम्बन्धमें मैं पूर्णतः आशावान् हूँ। ऐसी बात नहीं है कि समस्त निर्योग्यताएँ दूर कर दी गई हैं, फिर भी अधिकांश दूर कर दी गई हैं; और यदि हम अपना व्यवहार ठीक रखें और सरकारका प्रशासन सहानुभूतिपूर्ण हो तो फिर उन कष्टोंके पुनः सामने आनेकी कोई शंका नहीं होनी चाहिए जो हममें से जाने कितने लोगोंको उठाने पड़े थे।

भावी गतिविधियोंके सम्बन्धमें पूछे जानेपर श्री गांधीने कहा कि मैं भारतमें स्थायी रूपसे रहनेके इरादेसे आया हूँ और यदि परिस्थितियोंने मजबूर नहीं कर दिया, तो मैं दक्षिण आफ्रिका वापस नहीं जाऊँगा। मैं नहीं जानता कि मैं यहाँ क्या करूँगा, किन्तु मेरी सेवाएँ श्री गोखलेके सुपुर्द हैं। मैं उन्हें वर्षोंसे अपना मार्गदर्शक और नेता मानता आया हूँ और मेरी गतिविधियोंका नियन्त्रण और निर्देशन बहुत-कुछ वे ही करेंगे। श्री गांधीने अन्तमें कहा:

फिलहाल, जैसा श्री गोखलेने कहा है[1], चूँकि मैं इतने लम्बे अर्से तक भारतसे बाहर रहा हूँ इसलिए जो मामले मुख्यतः भारतसे सम्बन्धित हैं उनके बारेमें कोई निश्चित निष्कर्ष निकालनेकी मुझे कोई जरूरत नहीं है और मुझे यहाँ एक प्रेक्षक और विद्यार्थीके रूपमें कुछ समय व्यतीत करना चाहिए। मैंने ऐसा करनेका वचन दिया है, और मैं आशा करता हूँ कि मैं इस वचनको निभा सकूँगा।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ११-१-१९१५

२. भेंट: 'टाइम्स ऑफ इंडिया' के प्रतिनिधिको

जनवरी ९, १९१५

दक्षिण आफ्रिकामें भारतीयोंकी स्थितिके सम्बन्धमें प्रश्न किये जाने पर, उन्होंने [गांधीजीने] कहा: उनकी स्थिति जैसी समझौतेसे पहले थी, अब उससे बहुत अधिक अच्छी है; क्योंकि जिन मुद्दोंको लेकर सत्याग्रह प्रारम्भ किया गया था, वे सब मंजूर कर लिये गये हैं। मेरे खयालसे भारतीय समाज कुल मिलाकर [भारतीयोंको] राहत देनेवाले उस कानूनसे,[2] जो अब पास भी हो चुका है, सन्तुष्ट है। भविष्य बहुत-कुछ स्वयं भारतीयोंपर और मन्त्रिमण्डलके सदस्योंपर निर्भर है।

१. देखिए "अहमदाबादमें नागरिकोंके मानपत्रका उत्तर", २-२-१९१५

२. भारतीय राहत-विधेयक (इन्डियन्स रिलीफ बिल, १९१४); देखिए "पत्र: लाजरसको", १७-४-१९१५ के बाद।

मेरे खयालसे एक बड़ी चीज यह मिली है कि सरकारने दक्षिण आफ्रिकी भारतीयोंसे सम्बन्धित कोई भी कानून बनाते समय उसके बारेमें भारतीयोंकी राय लेनेका सिद्धान्त स्वीकार कर लिया है और यह मान लिया है कि जहाँतक सम्भव हो उनकी इच्छाओंका ध्यान रखा जाना चाहिए। मेरा खयाल है कि यह एक प्रगति-सूचक कदम है और प्रगति ठीक दिशामें हुई है। हमारे इस महान् और पुनीत उद्देश्यकी पूर्तिमें परमश्रेष्ठ लॉर्ड हार्डिजने अमूल्य सहयोग दिया और मेरे आदरणीय सुहृद, माननीय श्री गोखलेके ओजपूर्ण नेतृत्वमें उसके प्रति मातृभूमिकी प्रतिक्रिया बड़ी ही शोभनीय रही। इस सुखद परिणामका श्रेय निस्सन्देह इन्हीं दो बातोंको जाता है।

दक्षिण आफ्रिकामें भारतीय प्रवासियोंके वर्तमान रुखका वर्णन करते हुए श्री गांधीने कहा कि सारा भारतीय समाज इस युद्धके दौरान स्थानीय सरकार और साम्राज्य-सरकारको अपनी सेवाएँ देनेमें कोई आगा-पीछा नहीं कर रहा है। यद्यपि इन सेवाओंको स्वीकार करनेका अवसर अभी नहीं आया है, किन्तु दोनों सरकारोंने इस प्रस्तावको बहुत पसन्द किया है। श्री गांधीने आगे कहा कि कुल मिलाकर वर्तमान मन्त्रिमण्डलका[1] रुख सहानुभूति-शून्य नहीं है और चूँकि वह भारतीयोंके प्रश्नोंको समझता है, इसलिए शायद वह भारतीयोंकी भावनाको भी अधिक अच्छी तरह समझ सकता है और इसी कारण किसी अन्य मन्त्रिमण्डलकी अपेक्षा वह भारतीयोंके हितोंका अधिक पोषण और परिवर्धन कर सकता है। उपनिवेशमें भारतीयोंकी माली हालत वैसी तो नहीं जैसी हम चाहते हैं, किन्तु उसका सुधार भावी व्यापारिक सम्भावनाओंपर निर्भर है।

श्री गांधीने कहा कि वे अपना शेष जीवन भारतीय समस्याओंके अध्ययनमें लगाना चाहते हैं और यदि कोई अनपेक्षित परिस्थिति उन्हें बाध्य नहीं कर देती तो वे अपने पिछले कार्यक्षेत्रमें वापस नहीं जाना चाहते।

[अंग्रेजीसे]

टाइम्स ऑफ इंडिया, ११-१-१९१५

३. भाषण : घाटकोपरके स्वागत-समारोहमें

जनवरी ११, १९१५

सोमवारको घाटकोपर [बम्बई] में श्री गांधी और श्रीमती गांधीके स्वागतमें एक समारोह किया गया। श्री गांधीको सोनेकी जंजीरोंसे मण्डित रजत-मंजूषामें एक मानपत्र भेंट किया गया। समारोहकी अध्यक्षता राय बहादुर वसनजी खीमजीने की।

श्री गांधीने भेंटोंके लिए आभार मानते हुए कहा : रजत-मंजूषा और सोनेकी जंजीरें मेरे सरीखे व्यक्तिके लिए कुछ अनुपयुक्त हैं; मेरे रहनेके लिए न तो कोई

१. जिसके प्रधानमन्त्री लुई बोथा थे ।

घर है और न जहाँ मैं रहता हूँ वहाँ ऐसे दरवाजे हैं जो ताला लगाकर बन्द किये जाते हों। जंजीरें चाहे सोनेकी हों या लोहेकी, मेरे लिए तो वे एक-सी हैं, क्योंकि वे हैं तो आखिर जंजीरें ही। आपने जैसा समारोह किया है, वह मेरे स्वभावसे बिलकुल मेल नहीं खाता, और इसमें जो प्रलोभन निहित है, उससे मुझ-जैसा व्यक्ति, जिसके मनमें केवल मातृभूमिकी सेवाका ही खयाल है, चाहे कोई उनकी प्रशंसा करे या निन्दा और जो किसी भी प्रकारके पुरस्कारकी इच्छा नहीं करता, बिगड़ेगा ही।

मेरे कार्यके पीछे केवल कर्त्तव्यकी भावना ही होती है। मैं उसका पालन अभी-तक तो रुपयेमें एक आना-भर ही कर पाया हूँ और इतने वर्ष बाद इसी खयालसे स्वदेश लौटा हूँ कि अपने जीवनका शेष काल बाकी पन्द्रह आने-भरमें से जितना कर सकूँ उतना करनेका यथाशक्ति प्रयत्न करूँ। मैं केवल उस कर्त्तव्यका पालन कर सकूँ जो मेरे सामने उपस्थित है — इससे अधिक मैं कोई आशा नहीं करता, कोई चाह नहीं रखता। मैं आप सबसे प्रार्थना करता हूँ कि मैं जो भी सेवा कर सकूँ, आप उसे स्वीकार करें और मुझे ऐसी मूल्यवान् भेंटें न दें, जिनका मैं कोई उपयोग नहीं कर सकता और जिनका इससे अधिक अच्छा उपयोग किया जा सकता है। मैं सचाईके साथ विश्वास करता हूँ कि आप मेरी बातका अर्थ गलत न समझेंगे। मैं तो केवल अपने हृदयके भाव ही व्यक्त कर रहा हूँ।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १५-१-१९१५

४. पत्र : मगनलाल गांधीको

पौष वदी १०,[१] १९७१, सोमवार [जनवरी ११, १९१५]

चि० मगनलाल,[२]

तुम्हारा पत्र मुझे मिल गया है। बम्बई पहुँचनेपर जैसे ही किनारा दिखा, मेरी आँखोंमें खुशीके आँसू आ गये। अभीतक खुशीसे पागल हूँ; फिर भी बम्बई तो अच्छा नहीं लगता। लगता है जैसे लन्दनकी जूठन हो। मुझे उसमें लन्दनके समस्त दोष दिखाई देते हैं; किन्तु उसकी सुविधाएँ नहीं। यह भी भारतकी खूबी है। ऐसा लगता है कि सुविधाओंके कारण हम भुलावेमें न पड़ जायें इसलिए भारत-माताने हमें लन्दनकी बुरा-इयाँ-भर दिखानेका निश्चय किया है। आदर-सत्कारसे उकता गया हूँ। एक क्षणके लिए भी शान्ति नहीं मिलती। लोगोंका ताँता लगा रहता है। इससे मेरा या उनका, किसीका उपकार नहीं होगा।

१. मूलमें पौष वदी ११ है, यह भूल प्रतीत होती है, क्योंकि उस दिन मंगलवार था।

२. खुशालचन्द गांधीके पुत्र; दक्षिण आफ्रिकामें गांधीजीके साथ १० वर्ष रहे। अगस्त १९१४ में फीनिक्ससे २५ छात्रोंके साथ भारत आये और शांतिनिकेतनमें ठहरे।

मेरा स्वास्थ्य कुल मिलाकर ठीक है। बा की तबीयत भी वैसी ही है। मेरा मन तीन स्थानोंके लिए व्याकुल है, राजकोट, पोरबन्दर और बोलपुर। मुझे वहाँ [बोलपुर] पहुँचनेमें अभी एक माससे अधिक लगेगा। तुम सब वहाँ धैर्यपूर्वक टिक गये, यह ठीक किया। किसान बहुत आ-जा नहीं सकता। किसानका बेटा बुवाई छोड़कर अपने किसान बापसे मिलनेके लिए जाये तो अधर्म होगा। तुम सब की कीर्ति वहाँ सर्वत्र फैलने लगी है, शायद यह तुम्हारे और मेरे किसी पुण्योदयका फल ही है। श्री एन्ड्रचूजने[1] तुम्हारी बहुत प्रशंसा की है। अब हम जल्दी ही मिलेंगे, इसलिए मैं अधिक नहीं लिखता। यह पत्र तुम सभीके लिए है।

मेरा खयाल है, हम सबको हिन्दी, उर्दू, तमिल और बँगला लिपि सीख लेनी चाहिए। यदि सब बच्चोंको ये सिखाई जायें तो अच्छा हो। मैंने इस सम्बन्धमें जहाजमें काफी विचार किया था।

मैंने बँगलाका अध्ययन अच्छा कर लिया है। मैं यहाँसे १६ तारीखको[2] राजकोट रवाना हो जाऊँगा। वहाँसे ५ फरवरीको लौटकर पूना जाऊँगा और पूनासे बोलपुरको रवाना हूँगा। बोलपुरका सबसे सीधा रास्ता कौन-सा है, यह लिखना। श्री ऐन्ड्रचूज और श्री पियर्सनसे[3] पूछ लेना। तुम्हारे खान-पानका ठीक प्रबन्ध हो गया, यह अच्छा हुआ। मैं बिलकुल फलाहार कर रहा हूँ। मुख्यतः केला, मूँगफली और नीबूसे निर्वाह होता है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्चः]

मुझे कुछ लाना है तो लिखना। मैं इंग्लैण्डसे पुस्तकें नहीं ला सका हूँ। नाम लिखो तो यहाँसे भिजवा दूँ। श्री कैलेनबैकको[4] आनेकी अनुमति नहीं मिली, इसलिए वे अभी नहीं आ सके हैं।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५६६०) से।

सौजन्य : राधाबेन चौधरी

१. चार्ल्स फ्रेयर ऐन्ड्रचूज (१८७१-१९४०), अंग्रेज पादरी, जिन्होंने विश्व-भारती विश्वविद्यालयके कार्यमें बहुत दिलचस्पी ली, कई वर्षों तक भारतीयोंके साथ काम किया, जिससे उन्हें 'दीनबन्धु'की उपाधि मिली। वे गांधीजीके घनिष्ठ मित्र थे।

२. वस्तुतः गांधीजी राजकोटको १५ जनवरीको रवाना हुए थे, देखिए "डायरी", १९१५।

३. विलियम विनस्टले पियर्सन, ईसाई पादरी, और भारतीयोंके सक्रिय समर्थक; कुछ समय तक शान्तिनिकेतनमें अध्यापक रहे।

४. हरमान कैलेनबैक, गांधीजीके जर्मन-साथी; इन्हें ब्रिटिश सरकारने युद्धके कारण भारत आनेकी अनुमति नहीं दी थी।

५. भाषण: बम्बईके सार्वजनिक स्वागत-समारोहमें

जनवरी १२, १९१५

जनवरी १२, १९१५ को माउंट पेटिटमें बम्बईके गण्यमान्य लोगोंकी ओरसे गांधीजी और श्रीमती कस्तूरबा गांधीका सार्वजनिक स्वागत किया गया। इसमें ६०० से अधिक प्रमुख नागरिक उपस्थित थे, जिनमें कुछ यूरोपीय थे। माननीय सर फीरोजशाह मेहताने[1] अध्यक्षता करते हुए अतिथियोंका हार्दिक स्वागत किया।

शुभकामनाके आपानकका उत्तर देते हुए श्री गांधीने कहा कि मैं नहीं जानता कि आज इस समय मेरे अन्तस्तलमें जो भाव उमड़ रहे हैं, उनको प्रकट करनेके लिए मुझे ठीक शब्द मिलेंगे या नहीं। मुझे लगता था कि दक्षिण आफ्रिकामें अपने देश-वासियोंके बीच मुझे घरेलूपनकी जैसी अनुभूति होती थी, उससे अधिक अपनी मातृभूमिमें होगी। किन्तु हमने बम्बईमें जो तीन दिन बिताये हैं, उनमें हमने यह अनुभव किया है — और मेरा खयाल है कि मैं यह कहकर अपनी पत्नीके भाव भी व्यक्त कर रहा हूँ — कि हमें उन गिरमिटिया लोगोंके बीच, जो भारतके सच्चे सपूत हैं, इससे अधिक घरेलूपनकी अनुभूति होती थी। हमें लगता है कि हम यहाँ बम्बईमें सचमुच अजनबियोंके साथ रह रहे हैं, और इससे मुझे किसी महान् अंग्रेजकी कही हुई एक बात याद आ जाती है। उसने मुझसे कहा था . . .[2]

मैंने जो-कुछ किया है, वह अपने कर्त्तव्यका पालन-भर किया है, उससे अधिक कुछ नहीं है; और यह देखना अभी शेष है कि मैं अपने कर्त्तव्यका पालन करनेमें कहाँ-तक सफल हुआ हूँ। यह केवल जबानी जमा-खर्च नहीं है? आप विश्वास कीजिए कि मेरे भाव ये ही हैं। मेरे गुरुजनोंने मेरे लिए जो-कुछ किया है, राजनैतिक नेताओंने मेरे लिए जो-कुछ किया है, और सर फीरोजशाह मेहताने मेरे लिए जो-कुछ किया है उस सबके लिए मैं हृदयसे कृतज्ञ हूँ। मैं ऐसी अनेक घटनाएँ याद कर सकता हूँ जब मेरे निराशाके क्षणोंमें फीरोजशाह मेहताने मुझे सान्त्वना और प्रोत्साहन दिया था। मैं तब एक युवक बैरिस्टर था और मेरे पास मुकदमे नहीं आते थे। मुझे अपने देशके कई अन्य प्रमुख लोगोंसे भी निर्देश, मार्गदर्शन और परामर्श प्राप्त करनेका सौभाग्य मिला है; और उन्होंने मुझे जो-कुछ करनेके लिए कहा है, यदि मैं वह-सब न करूँ तो क्या यह मेरी कृतघ्नता न होगी? मैंने आज प्रातःकाल भारतके पितामह श्री

१. (१८४५–१९१५), भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके संस्थापकोंमें से एक; १८९० और १९०९ के कांग्रेस अधिवेशनोंके अध्यक्ष; देखिए खण्ड १, पृष्ठ ३९५।

२. मूल अंग्रेजी वाक्यांश इस प्रकार है: "ड्यूटी वुड बी मेरिटेड पेट दि लास्ट;" किन्तु संदर्भमें इसका अर्थ ठीक नहीं बैठता। अतः इसका अनुवाद यहाँ नहीं दिया जा रहा है।

दादाभाई नौरोजीसे[1] भेंट की है। मुझे उनके जीवनसे बहुत प्रेरणा मिली है। और इस सम्बन्धमें मैं एक अन्य नामको कभी नहीं भूल सकता। यह नाम है मेरे मार्गदर्शक — कमसे-कम कहूँ तो मेरे राजनैतिक नेता — माननीय श्री गोखलेका (हर्षध्वनि)। उनका जीवन मेरे लिए मात्र प्रेरणाका एक स्रोत ही नहीं, उससे कुछ अधिक है। श्री गोखले मेरे लिए सहोदरसे भी बढ़कर रहे हैं। मेरे ऊपर मेरे समस्त देशभाइयोंका जो भारी ऋण है, उसका उल्लेख करना भी मुझे न भूलना चाहिए; और अपने माता-पिताके सम्बन्धमें तो मैं क्या कहूँ, जिन्होंने मुझे अपना सम्मान करना सिखाकर सारे देशका सम्मान करना सिखाया। आप लोग हमारा सम्मान कर रहे हैं; किन्तु हम तो तुच्छ प्राणी हैं, असली वीर तो गिरमिटिया लोग हैं। मैं आपको उस गिरमिटिया भारतीयकी याद दिलाना चाहता हूँ, जिसने मुझे जेलमें चकित कर दिया था। जब मैं उस भारतीयसे मिला तो मैं नहीं जानता था कि उसे किस बातसे जेल जानेकी प्रेरणा मिली थी और उसने जो शब्द कहे वे किस बातसे प्रेरित होकर कहे थे। मैंने उस भारतीयसे कहा कि उसे जेलमें आनेकी कोई आवश्यकता नहीं थी और मैंने हरबतसिंह[2]-जैसे अपने देशभाइयोंको जेल जानेकी सलाह कभी नहीं दी। किन्तु उस वृद्ध पुरुषने कहा: जब मैंने अपने गरीब भाइयों और बहनोंको देशके सम्मानकी रक्षाके लिए जेल जाते देखा तो मैं अपने-आपको रोक नहीं सका। मैं बाहर कैसे रह सकता था? मैं तो यहाँ अपने प्राण दे देना चाहता हूँ। और सचमुच हम तो जीवित रहे, किन्तु उसने अपने प्राण वहीं दे दिये। यही मनुष्य वीर पुरुष था और उसके-जैसे अन्य अनेक लोग भी हैं। यदि वह जीवित होता और भारत आता तो यहाँके लोगोंने उसकी ओर कोई ध्यान नहीं दिया होता और कदाचित् मैंने भी ऐसा ही किया होता। हरबतसिंहका स्मरण हमें समस्त सम्मान-भावसे करना चाहिए।

आपने गांधी महान्की पत्नीके रूपमें श्रीमती गांधीका भी सम्मान किया है। मैं इस महान् गांधीको नहीं जानता; किन्तु इतना कह सकता हूँ कि जो स्त्रियाँ अपने बच्चोंको लेकर जेल दौड़ गई थीं और बहुमतमें शामिल हो गई थीं, उनके कष्टोंके सम्बन्धमें आपको मेरी अपेक्षा श्रीमती गांधी अधिक बता सकती हैं।

अन्तमें श्री गांधीने उनसे अनुरोध किया कि आप मेरी और मेरी पत्नीकी सेवाएँ स्वीकार करें। हमें ईश्वर जितनी सामर्थ्य देगा उतनी सेवा करनेके लिए ही हम भारत आये हैं। उन्होंने कहा कि हम इस तरहका भारी स्वागत-सत्कार करवानेके

१. (१८२५–१९१७), ब्रिटिश संसद (१८९३) में निर्वाचित होनेवाले प्रथम भारतीय सदस्य; १८८६, १८९३ और १९०६ में तीन बार भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके अध्यक्ष निर्वाचित; **पावर्टी ऐंड अन-ब्रिटिश रूल इन इंडिया** (भारतमें दरिद्रता और अब्रिटिश शासन) के लेखक; देखिए खण्ड १०, पृष्ठ ३३५।

२. उत्तर प्रदेशका एक ७५ वर्षीय वृद्ध पुरुष; देखिए "भाषण: मद्रासके स्वागत समारोहमें", २१-४-१९१५।

लिए यहाँ नहीं आये हैं, क्योंकि हम अपने-आपको ऐसे पुरस्कारोंका पात्र नहीं समझते। मुझे तो लगता है कि यदि ऐसी बातोंके परिणामस्वरूप कहीं हमारे मस्तिष्कमें यह खयाल आया कि हमने कोई ऐसा कार्य किया है जिससे हम अपने सम्मानमें आयोजित इस प्रकारके भारी तमाशोंके सही पात्र बन गये हैं तो आप अपने इन आचरणोंसे हमें बिगाड़ेंगे ही। फिर भी आपने आजके इस अपराह्नमें हमारा जो भारी सम्मान किया है, उसके लिए मैं अपनी पत्नीकी ओरसे और अपनी ओरसे आपको हार्दिक धन्यवाद देता हूँ और आशा करता हूँ कि मातृभूमिकी सेवाके हमारे प्रयत्नमें हमें पूरे देशका आशीर्वाद प्राप्त होगा। अभीतक आपको मेरी असफलताओंका कोई ज्ञान नहीं है। आपको सारी खबरें मेरी सफलताओंकी ही मिली हैं। यहाँ आप हमें अपने अनावृत रूपमें देखेंगे और तब आपको हमारे दोष भी दिखाई देंगे। इन सम्भावित दोषों और असफलताओंको ध्यानमें रखकर मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि आप उन्हें नजरअन्दाज कर दें। इस अनुरोधके साथ हम विनम्र सेवकोंके रूपमें अपने देशकी सेवा आरम्भ करने जा रहे हैं। श्री गांधीने अपना और अपनी पत्नीका भारी सम्मान करनेके लिए एक बार फिर लोगोंको हार्दिक धन्यवाद दिया।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १३–१–१९१५

६. भाषण: नेशनल यूनियनकी सभामें

जनवरी १३, १९१५

जनवरी १३ को हीराबाग [बम्बई] में बम्बईकी नेशनल यूनियनकी ओरसे श्री गांधी और श्रीमती गांधीके स्वागतार्थ एक सभा की गई। इसमें श्री तिलक[1] भी उपस्थित थे, यद्यपि उन्हें औपचारिक निमन्त्रण नहीं भेजा गया था। सभामें लगभग २५० लोग आये थे। श्री तिलकने सभामें बोलते हुए कहा कि हम श्री गांधी और श्रीमती गांधीका सम्मान करके अपने कर्त्तव्यका ही पालन कर रहे हैं, क्योंकि वे एक दूरस्थ देशमें भारतके सम्मानकी रक्षाके लिए लड़े हैं। उन्होंने कहा कि भारतमें हमारे इन सम्मानित अतिथियोंकी-सी आत्म-त्यागकी भावनासे युक्त और अधिक स्त्री-पुरुष उत्पन्न होने चाहिए। उन्होंने श्रोताओंके मनमें यह बात बिठाई कि यह वही शिक्षा है, जो कि उन्हें श्री गांधीके जीवन-कार्यसे ग्रहण करनी है।

श्री गांधीका भाषण फीका और औपचारिक था। उन्होंने कहा कि दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय मातृभूमिके कृतज्ञ हैं, जिसने पिछले संघर्षमें उनकी सहायताके लिए

१. लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक (१८५६–१९२०); महान् भारतीय देशभक्त, राजनीतिज्ञ और विद्वान; देखिए खण्ड २, पृष्ठ ४१८।

स्थापित कोषमें[1] खुलकर धन दिया। उन्होंने कहा कि श्री तिलकको बम्बईमें देखकर मुझे बहुत प्रसन्नता हुई है, क्योंकि पूना जानेपर उनकी सेवामें उपस्थित होने और अपनी सम्मानांजलि भेंट करनेकी बात तो मैंने सोच ही रखी थी।

श्री बैपटिस्टाने कहा कि जबतक श्री गांधी सत्यपरता और आत्मसम्मानके आदर्शपर दृढ़ हैं — जैसा कि वे अबतक अपने जीवनमें रहे हैं — तबतक इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता कि वे अपना गुरु किसे चुनते हैं (श्री बैपटिस्टाका संकेत श्री गांधीके इस कथनकी ओर था कि श्री गोखले उनके गुरु हैं)। श्री बैपटिस्टा और श्री अली मुहम्मद भीमजी, दोनोंने वर्तमान युद्धमें न्यायके पक्षका समर्थन करनेमें भारतीय सेनाकी बहादुरीका उल्लेख किया।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे गवर्नमेंट पुलिस एब्स्ट्रैक्ट्स, १९१५, पृष्ठ ४०, पैरा ६०

७. भाषण : सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी, बम्बई द्वारा आयोजित स्वागत-समारोहमें

जनवरी १४, १९१५

जनवरी १४को सायंकाल भारत-सेवक समाजकी[2] बम्बई शाखाके सदस्यों तथा उसके सहायकों, समर्थकों और कार्यकर्त्ताओंके रूपमें उससे सम्बद्ध कुछ लोगोंकी ओरसे मण्डलके भवनमें श्री गांधी और श्रीमती गांधीका स्वागत किया गया। भवनके प्रांगणको बड़े सुरुचिपूर्ण ढंगसे सजाया गया था। उपस्थित लोगोंमें सर भालचन्द्र कृष्ण, सर विठ्ठलदास ठाकरसी, सर जगमोहनदास, सेठ दानी, सेठ हंसराज प्रागजी, श्रीमती रमाबाई रानडे, श्रीमती जगमोहनदास, श्रीमती सोनाबाई जयकर, श्रीमती बहादुरजी आदि शामिल थे। श्री गांधी और श्रीमती गांधीके आ जानेपर एकत्रित लोगोंकी ओरसे श्री देवधर बोले।

उसके बाद श्री गांधीने एक संक्षिप्त भाषण देते हुए कहा कि भारत-सेवक-समाजको, जो जल्दी ही मेरा कार्यक्षेत्र बनेगा, सहायता देनेवाले इतने स्त्री-पुरुषोंको देखकर मुझे गर्व होता है। मैंने श्री गोखलेको अपना राजनैतिक नेता और गुरु स्वीकार कर लिया है और मैं उन लोगोंको भाग्यशाली समझता हूँ जिन्हें श्री गोखलेके साथ काम करनेका सुअवसर प्राप्त हुआ है। मैं एक साल तक देशके भिन्न-भिन्न भागोंका दौरा करके स्वयं स्थितिका अध्ययन करूँगा और इसके बाद ही अपने कर्त्तव्यका निश्चय कर पाऊँगा। अन्तमें उन्होंने अपनी और श्रीमती गांधीकी ओरसे भी अपने सम्मानके लिए समस्त स्त्री-पुरुषोंको धन्यवाद दिया।

१. सत्याग्रह-कोष; देखिए "पत्र : जे० बी० पेटिटको", १६-६-१९१५।

२. सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी, जिसकी स्थापना श्री गोखलेने पूनामें सन् १९०५ में की थी। इसके सदस्योंको देशके लिए आजीवन कार्य करनेका व्रत लेना पड़ता था।

सर भालचन्द्रने श्री गांधीको और श्रीमती रमावाईने श्रीमती गांधीको माला पहनाई। पुष्प-वितरण आदि के पश्चात् समस्त जनसमुदायने जलपानमें भाग लिया।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०-३-१९१५

८. भाषण : गुर्जर-सभा द्वारा आयोजित स्वागत-समारोहमें[1]

जनवरी १४, १९१५

श्री गांधी और श्रीमती कस्तूरवा गांधीके सम्मानमें १४ जनवरी, १९१५ को मंगल-दास भवनके प्रांगणमें गुर्जर-सभा, वम्बईकी ओरसे एक उद्यान-भोज दिया गया। समारोहकी अध्यक्षता गुर्जर-सभाके सभापति मुहम्मद अली जिन्नाने[2] की। श्री जिन्ना तथा श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशीने[3] (अंग्रेजीमें) वोलते हुए अतिथियोंका स्वागत किया।

श्री गांधीने गुजरातीमें वोलते हुए श्री जिन्नाको समारोहकी अध्यक्षता करनेके लिए धन्यवाद दिया और कहा कि जब मैं दक्षिण आफ्रिकामें था उन दिनों गुजरातियोंके सम्बन्धमें जब भी कुछ कहा जाता था तो लोग यही मानते थे कि तात्पर्य केवल हिन्दू समाजसे है और पारसियों तथा मुसलमानोंसे उसका कोई सम्बन्ध नहीं है। इसलिए मुझे एक मुसलमानको गुर्जर-सभाके सदस्य और इस समारोहके अध्यक्षके रूपमें देखकर बड़ी प्रसन्नता हो रही है।

मेरी प्रशंसा और स्वागतमें जो शब्द कहे गये हैं, उनके सम्बन्धमें मुझे नहीं सूझता कि मैं क्या कहूँ। जैसा कि मैं पहले अनेक बार कह चुका हूँ, मैंने और मेरी पत्नीने अपने कर्त्तव्यसे अधिक कुछ नहीं किया है। मैं उसी बातको फिर नहीं कहना चाहता। किन्तु मैं यह कहना चाहता हूँ कि मैं इन सारी सद्भावनाओं और स्नेहपूर्ण शब्दोंको आपका आशीर्वाद मानता हूँ और ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि आपका यह आशीर्वाद मुझे और मेरी पत्नीको ईमानदारीसे अपने देशकी सेवा करनेकी शक्ति प्रदान करे। हमारा इरादा पहले सभी भारतीय प्रश्नोंका अध्ययन करने और तब देशकी सेवा आरम्भ करनेका है। मैं श्री गोखलेको अपना मार्गदर्शक तथा नेता मानता हूँ, और उनमें मेरी पूरी आस्था है। मुझे विश्वास है कि श्री गोखले मुझे कभी भी गलत रास्तेपर नहीं ले जायेंगे। आज सवेरे ही मैं गवर्नर महोदयसे[4] मिला हूँ। मैंने

१. इसका संक्षिप्त विवरण १७-१-१९१५ के **गुजराती**में प्रकाशित हुआ था।

२. (१८७६-१९४८), मुस्लिम नेता; बादमें पाकिस्तानके संस्थापक और प्रथम गवर्नर-जनरल।

३. (१८८७-) वकील, राजनीतिज्ञ और लेखक, भारतीय विद्या-भवनके संस्थापक और अध्यक्ष; उत्तर-प्रदेशके गवर्नर (१९५२-५७)।

४. लॉर्ड विलिंग्डन।

उन्हें इस सम्मानके लिए धन्यवाद देते हुए उनसे भी यही कहा कि मैं माननीय श्री गोखलेके मार्गदर्शनमें कार्य करते हुए ठीक मार्गका अवलम्बन करूँगा, इसका मुझे पूरा विश्वास है।

श्री गांधीने आगे कहा कि सभापति महोदयने दक्षिण आफ्रिकी प्रश्नका उल्लेख किया है। मुझे इस सम्बन्धमें बहुत-कुछ कहना है और मैं निकट भविष्यमें बम्बईकी जनताके सम्मुख और उसके द्वारा समस्त भारतके सम्मुख पूरी स्थितिका स्पष्टीकरण कर दूंगा। समझौता सन्तोषजनक है और मुझे विश्वास है कि जो-कुछ प्राप्त करना शेष है वह भी मिल जायेगा। अब दक्षिण आफ्रिकियोंने यह जान लिया है कि वे भारतीयोंकी बिलकुल उपेक्षा नहीं कर सकते और न उनकी भावनाओंको ठुकरा सकते हैं।

हिन्दू-मुस्लिम समस्याके सम्बन्धमें मुझे बहुत-कुछ जानना बाकी है, किन्तु मैं अपने दक्षिण आफ्रिकाके इक्कीस वर्षके अनुभवको सदा अपने सम्मुख रखूंगा और मुझे सर सैयद अहमदका[1] वह एक वाक्य अब भी स्मरण है। उन्होंने कहा था कि हिन्दू और मुसलमान भारत माताकी दो आँखें हैं और यदि एक आँख एक ओर देखे और दूसरी दूसरी ओर, तो दोमें से कोई कुछ भी नहीं देख सकेगी और यदि एक आँख चली जाती है तो दूसरी आँखकी ज्योति भी उसी हदतक कम हो जायेगी। दोनों जातियोंको भविष्यमें यह बात ध्यानमें रख कर चलना चाहिए।

अन्तमें, उन्होंने अपना और अपनी पत्नीका जबर्दस्त सम्मान करनेके लिए सभाको फिर धन्यवाद दिया।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १५-१-१९१५

९. पत्रका अंश[2]

[जनवरी १५, १९१५ से पूर्व][3]

. . . तुम राधासे[4] मिले होगे। उससे खास तौरसे कहना कि मुझे पत्र लिखे। रलियातबेनसे[5] कहना कि धीरज रखे। ईश्वर चाहेंगे तभी मिलेंगे। किन्तु मुझसे मिलनेका लोभ छोड़ देना चाहिए। मैं बहुत कठिन कामोंमें फँसा हुआ हूँ। उसके दर्शन करनेके

१. सर सैयद अहमद खाँ (१८१७-१८९८); शिक्षाशास्त्री और सुधारक, अलीगढ़के मोहम्मडन ऐंग्लो ओरिएंटल कॉलिजके संस्थापक।

२. इस पत्रका केवल सातवाँ पृष्ठ उपलब्ध है।

३. ऐसा प्रतीत होता है कि गांधीजीने यह पत्र भारत आनेके तुरन्त बाद बम्बईसे राजकोटको रवाना होनेसे पूर्व लिखा होगा।

४. मगनलालकी पुत्री।

५. गांधीजीकी बहन, जिन्हें गोकीबेन भी कहते थे।

लिए मन तो बहुत करता है; किन्तु समय ही नहीं है। घरकी स्थिति कैसी है, आदि सब खबर लिखना। फूलीकी तबीयत कैसी है, सूचित करना। अब घरमें सामान कौन लाता है, आदि, घरकी स्थितिका पूरा हाल लिखना।

मैं हरिलालसे मिला था। उसका चेहरा बहुत अच्छा लगता है।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (एस० एन० ६७१४) से।

१०. राजकोटके नागरिकोंके द्वारा भेंट किये गये मानपत्रका उत्तर[1]

जनवरी १७, १९१५

मेरी तबीयत इन दिनों अच्छी नहीं रहती और पिछले ३६ घंटेसे तो बहुत ही खराब है। फिर भी, मैं अपने भीतर इतनी शक्ति बचाये रहा कि अपनी जन्म-भूमि राजकोट आ सकूँ। यहाँ आकर ही मैं इस बातका अनुभव पूरी तरह कर पाया हूँ कि श्रीयुत केवलराम भाईकी मृत्युसे कितनी बड़ी क्षति हुई है। उन्हें मैं अपने गुरुजनकी तरह मानता था। उनके निधनकी बात सोचकर मुझे बहुत दुःख होता है। मैं पण्डितजीका बहुत कृतज्ञ हूँ, जिन्होंने अपने सद्‌गुणोंसे इस प्रान्तके लोगोंका प्रेम प्राप्त कर लिया है और मेरे प्रति शुभकामना प्रकट की है। स्वर्गीय केवलराम भाईकी अनुपस्थितिमें आप सरीखे उनके परमप्रिय मित्रके हाथसे मुझे यह मानपत्र प्राप्त हुआ है, इसे मैं अपना सौभाग्य मानता हूँ। मुझे माननीय गवर्नर साहबने कहा था कि भारतमें आपके प्रति जो लोकभावना उमड़ रही है, उसको देखते हुए आपका कार्य लाभकर सिद्ध होगा। आज मुझे उसका प्रत्यक्ष प्रमाण मिल गया है। सबसे पहले मेरे मित्र शुक्लजीकी[2] पुत्रीने मुझे तिलक लगाया और अक्षत-फूलसे मेरा स्वागत किया। इसे मैं आशीर्वाद-रूप मानता हूँ। मुझे राजकोटमें जो सम्मान मिल रहा है वह हदसे ज्यादा है। भारतमें इस प्रकार असीम सम्मान देनेकी प्रथा-सी हो गई है।

कहावत है कि "दूरके ढोल सुहावने।" आपने अभीतक मेरी जो प्रशंसा सुनी है वह इसी कहावतको चरितार्थ करती है। वास्तवमें हमने कुछ विशेष नहीं किया है। हम तो यहाँ सीखनेवालोंके रूपमें आये हैं। यह तो सभीने अनुभव किया होगा कि आज दुनियामें लोग अनेक हेतुओंसे कार्य करते हैं। किसी व्यक्तिके हृदयमें क्या है, यह जानना बहुत कठिन है। अब हम स्वदेश आ गये हैं और हम जो कार्य कर रहे हैं उसके आधारपर हमारे सम्बन्धमें सही राय कायम करना आपके लिए सुगम होगा। संसार आज स्वार्थी लोगोंसे भरा हुआ है। और लोग किसी-न-किसी रूपमें स्वार्थसे प्रेरित होकर काम करते हैं। किन्तु ऐसे स्वार्थभावसे कार्य करना दूधमें विष मिलानेके समान होता है। हमें काठियावाड़से बहुत-कुछ सीखना है और हमारा यह प्रशिक्षण पूरा हो जानेके बाद आपको हमारी परीक्षा लेनेका अवसर मिलेगा। किन्तु, मुझे कहना चाहिए कि सम्भव

१. इसकी अध्यक्षता राजकोटके दीवान बेजनजी मेरवानजी उमरीने की।

२. राजकोटके एक बैरिस्टर, जो गांधीजीके मित्र और सहाध्यायी थे।

है, इस प्रसंगमें आपको हमारी असफलताएँ भी देखनेको मिलें। मैं आपसे अनुरोध करता हूँ कि आप तब भी हमारे प्रति यही स्नेह-भाव बनाये रखें, जो आज प्रदर्शित कर रहे हैं। मेरी किसी असफलताके कारण इस देशके दूसरे भागोंके लोग भले ही मेरा त्याग कर दें, किन्तु यदि राजकोटके लोग मेरी खामियोंको उदारतापूर्वक दरगुजर करेंगे तो मैं मानूंगा कि आपने आज जो स्नेह दिखाया है वह वस्तुतः आपके अन्तःकरणकी ऊर्मियोंसे उद्भूत हुआ है। और उस समय आपके इस स्नेहकी खरी कसौटी होगी। दक्षिण आफ्रिकामें हमने जो-कुछ किया है, उसके सम्बन्धमें मैं आपको बता दूं कि हमसे निम्न श्रेणीके लोगोंने उसकी तुलनामें लाख दर्जे अच्छा काम कर दिखाया है। एक ७५ वर्षका वृद्ध पुरुष और एक १७ वर्षकी बालिका, दोनों जेलमें मर गये।[1] मेरे पास तो बैरिस्टरीकी सनद है। इसलिए मुझे उसके बलपर कार्य करनेकी प्रेरणा होना स्वाभाविक है। किन्तु बेचारे असंख्य स्त्री-पुरुषोंने मात्र श्रद्धाके आधारपर और अपना कर्त्तव्य मानकर जेलके कष्ट सहते हुए देश-सेवामें अपने जीवन अर्पित कर दिये हैं। आप उन्हें क्या सम्मान देंगे? इन लोगोंने सच्चे शूरवीरोंकी भाँति अपने प्राणोंकी आहुतियाँ दे दी हैं। अब, आपने हमारा आज जो सम्मान किया है उसे आशीर्वाद-रूपमें स्वीकार करके हम अपनी सेवाएँ इस देशके लिए अर्पित करते हैं और इस घोषणाके साथ उपकार मानते हैं कि यदि अपने कर्त्तव्यपालनके लिए हम निरन्तर उत्सुक बने रहे तो हम राजकोटके सपूत हैं और यदि उससे पीछे हटे तो कपूत हैं।

[गुजरातीसे]

काठियावाड़ टाइम्स, १७–२–१९१५

११. राजकोटमें मोढ-समाज द्वारा भेंट किये गये मानपत्रका उत्तर

जनवरी २०, १९१५

... मानपत्रका उत्तर देते हुए श्री गांधीने बताया कि सार्वजनिक जीवनमें प्रवेश करनेवालोंको अपना हृदय कितना कड़ा करना पड़ता है। मेरे भाई[2] स्वर्गवासी हो गये हैं। मुझे ऐसे ही कई अन्य वियोग भी सहने पड़े हैं। फिर भी मुझे भोज आदि समारोहोंमें जाना पड़ता है; और ऐसी शोकपूर्ण स्थितिके बावजूद कविता, गायन आदि सुनने पड़ते हैं। ऐसे कष्टप्रद मनोभावको अलग रख कर मैं जो मानपत्र लेता हूँ वह जनताके स्नेहके रूपमें ही लेता हूँ। मैंने जो थोड़ा-बहुत किया है, लोगोंको उसका असली मर्म समझना चाहिए; और जब-कभी मैं अपनी जाति अथवा सामान्य जन समुदायोंके हितार्थ कुछ करनेको तैयार होऊँगा तो आप लोगोंके स्नेहका भरोसा करके आपसे सहायता मागूंगा।

१. हरबतसिंह और वलिअम्मा; देखिए "भाषण: मद्रासके स्वागत समारोहमें", २१–४–१९१५।
२. लक्ष्मीदास गांधी, जिनका देहावसान पोरबन्दरमें मार्च ९, १९१४ को हुआ था।

यदि आप उस गाढ़े वक्तमें मेरे प्रति सहानुभूति दिखायेंगे तो मैं समझूंगा कि इस समय आपने मेरे प्रति जो स्नेह दर्शाया है, वह सच्चे हृदयसे दर्शाया है। और यदि ऐसी मदद नहीं मिली तो मैं मानूंगा कि आपने इस समय जो-कुछ किया, वह अपनी गतानुगतिक प्रवृत्तिके कारण; और आप मानपत्र चाहे सोने या चांदीपर लिखकर दें अथवा कागजपर, तीनों एक-से होंगे — धूलके समान होंगे। मुझे यहाँ स्वीकार करना चाहिए कि जब मैं वैरिस्टर होकर स्वदेश लौटा था तो अन्य स्थानोंके मोढ-समाजने मुझे त्याग दिया था, और तब राजकोटके मोढ-समाजने ही मेरा हाथ थामा था। यदि मैं उस बातको भूल जाऊँ तो कृतघ्न माना जाऊँगा, और इसीसे आज मुझे जो सम्मान मिल रहा है उसे मैं आशीर्वाद-रूपमें स्वीकार करता हूँ।

[गुजरातीसे]

काठियावाड़ टाइम्स, २४–१–१९१५

१२. दरबारगढ़में[1] भेंट किये गये मानपत्रका उत्तर

जनवरी २२, १९१५

श्री गांधीने कहा कि इस अवसरपर हिन्दू और मुसलमानोंको एक हुआ देखकर मुझे बहुत प्रसन्नता हुई है और आपने भी ऐसी एकता कायम की है, यही जानकर मने धोराजी आनेका निमन्त्रण स्वीकार किया। भविष्यमें मैं दोनों जातियोंको और भी निकट लाने तथा इनके बीच अधिक सद्भावनापूर्ण सम्बन्ध स्थापित करनेका काम हाथमें लूँगा।

[अंग्रेजीसे]

काठियावाड़ टाइम्स, २४–१–१९१५

१३. पोरबन्दरके मोढ-समाज द्वारा भेंट किये गये मानपत्रका उत्तर

जनवरी २५, १९१५

मैं थोड़ा घूम-फिर कर फिर यहाँ आ जाऊँगा। यहाँकी पहाड़ियोंमें औषधियाँ बहुत होती हैं। उनके सम्बन्धमें मुझे बहुत-कुछ जानना है। मैं अपने मित्र भूतपूर्व क्यूरेटर श्री जयकृष्णभाईके साथ सप्ताह-भर घूमूंगा और फिर आपके पास आ जाऊँगा।

[गुजरातीसे]

काठियावाड़ टाइम्स, ३१–१–१९१५

१. सौराष्ट्रमें धोराजीके निकट एक स्थान।

१४. पोरबन्दरमें नागरिकों द्वारा भेंट किये गये मानपत्रका उत्तर

जनवरी २५, १९१५

अपनी बाल्यावस्थाकी भूमिमें आपका आशीर्वाद स्वीकार करते हुए मुझे असीम आनन्दका अनुभव हो रहा है। मैंने देश-सेवा की है, इस सम्बन्धमें मुझे कहना चाहिए कि सत्यका पालन सिर्फ मैं ही कर सकता हूँ, ऐसी बात नहीं है। यदि मनमें निश्चय कर लें, तो हम सभी उसका पालन कर सकते हैं। और हम ऐसा करें तो अकेला मैं ही नहीं, बल्कि सभी सम्मानके पात्र होकर किसी उत्तम कार्यमें भाग ले सकेंगे।

[गुजरातीसे]

काठियावाड़ टाइम्स, ३१-१-१९१५

१५. पत्र : मेजर हेनकॉकको

राजकोट
जनवरी २६, १९१५

प्रिय महोदय,

मुझे खेद है कि पोरबन्दरमें रहते हुए मैं आपके दर्शनार्थ आ नहीं सका। अब जब फिर पोरबन्दर आऊँगा तब वैसा अवसर प्राप्त करनेका प्रयत्न करूँगा। फिलहाल पोरबन्दरके अधिकारियों और जनताने वहाँ मेरे और मेरी पत्नीके प्रति जो अतीव कृपाभाव प्रदर्शित किया, उसके लिए मैं आपको धन्यवाद देना चाहूँगा। यदि आप अन्यथा न मानें तो आपने दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रह संघर्षमें जो सहायता दी थी, उसके लिए भी आपको धन्यवाद देना चाहूँगा। माननीय श्री गोखलेको आपने अपनी उदारतापूर्ण भेंटके साथ जो स्नेह-भरा पत्र भेजा है, उसकी वे चर्चा कर रहे थे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

मेजर हेनकॉक[1]

मूल अंग्रेजी पत्रकी नकल (सी० डब्ल्यू० ५६६१) से।

सौजन्य : डिस्ट्रिक्ट डिप्टी कलक्टर, पोरबन्दर

१. राणाकी नाबालगीकी अवधिमें पोरबन्दर राज्यके प्रशासक, बादमें पश्चिमी भारतीय राज्य एजेंसीमें वाइसरायके एजेंट।

१६. पत्र: प्रभुदास भगवानदासको[1]

राजकोट

माघ सुदी ११ [जनवरी २६, १९१५]

आपका प्रेमपूर्ण तार मुझे गोंडलमें मिला था। मैंने उसका उत्तर तारसे[2] दिया था; मिला होगा। मुझे दुःख है कि मैं लोगोंका निमन्त्रण स्वीकार नहीं कर सका। किन्तु मेरी स्थिति ऐसी है कि मैं मजबूर हूँ। आशा है, आप सब यह जानकर मुझे क्षमा कर देंगे। मेरा स्वास्थ्य इतना बिगड़ गया है कि यदि मुझे अपनी विधवा भाभियोंसे मिलने राजकोट और पोरबन्दर न जाना होता तो मैं फिलहाल काठियावाड़ न आता। इन दोनों स्थानोंमें जाते समय मार्गमें गोंडल और दूसरे शहर पड़े, इसलिए मुझे वहाँ रुकना पड़ा। भावनगर और अन्य शहरोंमें जानेकी बात सोचता हूँ; मगर लगता है कि मेरे पास उसके योग्य स्वास्थ्य और समय नहीं बचा। अब तो मैं दो-तीन मास बाद लौटूँगा। आशा है, तब आप सबके दर्शन कर सकूँगा।

मोहनदास करमचन्द गांधी
के सादर प्रणाम

[गुजरातीसे]

काठियावाड़ टाइम्स, ३१-१-१९१५

१७. गोंडलकी रसशालामें भेंट किये गये मानपत्रका उत्तर[3]

जनवरी २७, १९१५

वैद्यराज[4] संस्कृत और आयुर्वेदके अच्छे विद्वान हैं। उनकी स्थापित की हुई रसशाला आयुर्वेद पद्धतिसे प्रजाकी सेवा कर रही है। रसशालाने जो साहित्य प्रकाशित किया है वह जनताके लिए बहुत उपयोगी है। मैं उनका [वैद्यराजका] कुछ साहित्य [दक्षिण] आफ्रिकामें पढ़ा करता था। एक ऐसे विद्वानके द्वारा इस मानपत्रमें अपने सम्बन्धमें कही गई बातोंको सुनकर मुझे बहुत प्रसन्नता होती है। मैं उन्हें सदा अपनी स्मृतिमें सहेजकर रखूँगा। मेरे मनमें आयुर्वेदके प्रति बहुत आदर है। वह भारतकी प्राचीन विद्या है, जिससे लाखों गाँवोंके करोड़ों लोगोंको आरोग्य प्राप्त होता रहा है। मैं हर व्यक्तिको

१. भावनगरके व्यापारी-समाजके प्रमुख।

२. उपलब्ध नहीं है।

३. गांधीजी गोंडल (सौराष्ट्र) में स्थापित आयुर्वेदिक दवाखाना रसशाला औषधाश्रमको देखने गये थे और वहाँ नागरिकोंकी एक विशाल सभामें बोले थे। सभामें राज्यके दीवान रणछोड़दास पटवारी भी उपस्थित थे।

४. जीवराम कालिदास शास्त्री, जिन्होंने रसशालाकी ओरसे उन्हें मानपत्र भेंट किया था।

आयुर्वेदकी शिक्षाके अनुसार अपना जीवन वितानेकी सलाह देता हूँ। मेरा यह आशीर्वाद है कि रसशाला औषधाश्रम और वैद्यराज आयुर्वेदकी अधिकसे-अधिक सेवा करनेमें समर्थ हों।

[गुजरातीसे]

रसशाला औषधाश्रम, गोंडलके १९४८ में प्रकाशित विवरणसे।

१८. गोंडलमें नागरिकों द्वारा भेंट किये गये मानपत्रका उत्तर

जनवरी २७, १९१५

श्री गांधीने . . . माननीय ठाकुर साहबके उपकारका उल्लेख करते हुए कहा कि मुझे जो विशेषण दिये गये हैं, मैं उनके योग्य नहीं हूँ फिर भी मैं भारतमें किसी ऐसे व्यक्तिकी खोजमें हूँ, जो उनके योग्य हो। उन्होंने उनके योग्य बननेके अपने प्रयासका जिक्र करते हुए कहा कि मैं दीर्घकालसे इस प्रयासमें रत हूँ और आगे भी रहूँगा। उन्होंने फिर कहा कि मैं ये सभी विशेषण भगवान् कृष्णको अर्पित करता हूँ। केशवजी सेठको कम्बल देते हुए उन्होंने उनसे सौ रुपये[1] देशके निमित्त या धर्मार्थ व्यय करनेका अनुरोध किया। उन्होंने अन्तमें ब्रह्मचर्यको ही सभी गुणोंका मूल और सभी कार्योंकी सिद्धिका साधन बताते हुए कहा कि देखना है, जो भावनाएँ यहाँ इस घड़ी प्रकट की गई हैं वे कसौटीके समय भी इसी रूपमें कायम रहती हैं या नहीं।[2]

[गुजरातीसे]

गुजराती, ७-२-१९१५

१९. अहमदाबादमें नागरिकोंके मानपत्रका उत्तर[3]

फरवरी २, १९१५

अहमदाबाद गुजरातकी राजधानी है और यहीं मैंने अपनी परीक्षा[4] दी थी। अहमदाबादके प्रति मेरे मनमें विशेष आदर होनेका कारण यह है कि सत्याग्रह संघर्ष चलाने और कष्ट सहनेमें मेरा साथ देनेवाले श्री सुरेन्द्रनाथ मेढ यहींके निवासी हैं। अहमदाबादने सत्याग्रह संघर्षमें महत्त्वपूर्ण भाग लिया है। आज मैं उसकी यात्रा करनेके लिए आया हूँ।[5]

१. नीलाम किये गये इस कम्बलको श्री सेठने इतने ही पैसोंमें खरीदा था।

२. *बॉम्बे क्रॉनिकल* के १-२-१९१५ के अंकमें प्रकाशित अंग्रेजी रिपोर्टमें आगे बताया गया था कि गांधीजीने कहा, देशसेवकमें जो गुण होने आवश्यक हैं वे हैं–सादा जीवन, सत्यवादिता तथा ब्रह्मचर्य, और मेरी आकांक्षा काठियावाड़के आसपास एक ऐसी संस्था स्थापित करनेकी है जिसमें देशकी नवोदित पीढ़ीको इन आदर्शोंकी शिक्षा दी जा सके।

३. सर चुन्नीलाल माधोलाल इस सभाके अध्यक्ष थे।

४. मैट्रिककी, १८८७ में।

५. ये दो वाक्य *गुजराती* १४-२-१९१५ से लिये गये हैं।

हमने [दक्षिण आफ्रिकामें] सिर्फ अपना कर्त्तव्य ही निभाया है। मैं इस देशमें सीखनेके लिए आया हूँ। मुझे मेरे पूज्य गुरु श्री गोखलेने यह सलाह दी है कि जो व्यक्ति पच्चीस वर्ष तक भारतसे बाहर रहा हो उसे स्थितिका पूरा अध्ययन करनेसे पूर्व भारतके सम्बन्धमें बोलना नहीं चाहिए। इसी कारण मैं अपने कान खुले रखता हूँ और मुंह बन्द।

[गुजरातीसे]

काठियावाड़ टाइम्स ७-२-१९१५; **गुजराती**, १४-२-१९१५

२०. भाषण: मिशन स्कूल, बम्बईमें[1]

फरवरी ७, १९१५

आजके समारोहसे मुझे जैसी प्रसन्नता हुई है वैसी प्रसन्नता मुझे बड़े और भव्य समारोहोंसे भी नहीं हुई।

मैं हर समय आपसे मिलनेका और आपके साथ सम्पर्क रखनेका प्रयत्न करता रहूँगा।

[गुजरातीसे]

गुजराती, १४-२-१९१५

२१. पत्र: सी० एफ० ऐन्ड्रयूजको

बम्बई
फरवरी ७, १९१५

प्रिय चार्ली,

पत्र-व्यवहारके लिए समय नहीं निकाल पाया हूँ। मुझे अभी श्री सीतलवाडकी[2] प्रतीक्षा करते हुए कुछ क्षण मिल गये हैं। मैं कुछ ही दिनोंमें तुम्हारे पास पहुँच रहा हूँ। हम लोग आज रातको पूना जा रहे हैं। १८ तारीखको या उससे पहले बोलपुरके लिए रवाना हो जानेकी सम्भावना है। वहाँ पहुँचनेकी तिथि निश्चित होते ही तुम्हें तार द्वारा सूचना दूंगा।

सस्नेह,

तुम्हारा,
मोहन

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (सी० डब्ल्यू० ५६६३) से।

सौजन्य: राधाबेन चौधरी

१. गांधीजी किसी विधिवत् निमन्त्रणके बिना ही अन्त्यज बालकोंके मिशन स्कूलको देखने गये थे। इन अन्त्यजोंको ही बादमें उन्होंने 'हरिजन' की संज्ञा दी।

२. डॉ० सर चिमनलाल हरिलाल सीतलवाड बम्बईके एक प्रमुख वकील, बम्बई विश्वविद्यालयके उप-कुलपति।

२२. मथुरादास त्रिकमजीको लिखे पत्रका अंश[1]

फरवरी ७, १९१५

सत्य, ब्रह्मचर्य, अहिंसा, अस्तेय और अपरिग्रह — इन पाँचों यमोंका पालन करना प्रत्येक मुमुक्षुके लिए आवश्यक है। मुमुक्षु तो सभीको होना चाहिए। इसलिए मनुष्यका चरित्र उक्त पाँचों यमोंकी भित्ति पर बनाया जाना चाहिए। इनका आचरण समस्त संसारी जीवोंको करना चाहिए, इसमें सन्देह नहीं। व्यापारी हो तो भी मनुष्य न तो असत्य बोले और न असत्य आचरण करे। गृहस्थ हो तो भी ब्रह्मचर्यका पालन करे। आजीवन अहिंसाका पालन किया जा सकता है। चोरी न करना (अस्तेयका पालन करना) और धन अथवा वस्तुओंका परिग्रह न करना लोक-व्यवहार चलाते हुए कठिन है। फिर भी आदर्शको ध्यानमें रखकर एक सीमा बनानी चाहिए और जब वैराग्य उत्पन्न हो तो महात्याग भी किया जा सकता है।

जो कोई उक्त व्रतोंका पालन करता है उसे इन सब झंझटोंमें से निकलनेका मार्ग मिल ही जाता है।

[गुजरातीसे]

बापुनी प्रसादी

२३. पत्र: महात्मा मुन्शीरामको

सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी
पूना सिटी
माघ कृष्णपक्ष ८ [फरवरी ८, १९१५][2]

महात्माजी,[3]

आपका तार मुझे मीला था। उस्का प्रत्यूत्तर तारसे[4] भेजा था वो आपको मीला होगा। मेरे बालकोंके लीये जो परिश्रम आपने उठाया और उन्होंको जो प्यार बतलाया उस वास्ते आपका उपकार माननेका मेंने भाई एड्रुझको लीखा था।[5] लेकीन आपके

१. गांधीजीके भानजे, आनन्दबेनके पुत्र।

२. फीनिक्सके अध्यापक और बालक १९१५ में गुरुकुल काँगड़ी गये थे। उनके उल्लेखसे लगता है कि पत्र १९१५ में लिखा गया था। १९१५ में माघ कृष्ण ८ फरवरी ७ को पड़ती है, किन्तु गांधीजी ८ फरवरीको बम्बईसे पूना गये थे।

३. महात्मा मुन्शीराम (१८५६-१९२६), बादमें स्वामी श्रद्धानन्दके नामसे प्रसिद्ध; गुरुकुल काँगड़ीके संस्थापक और आर्यसमाजके प्रमुख नेता।

४. और ५. उपलब्ध नहीं हैं।

चरणोंमें सीर झुकानेकी मेरी उमेद है। इसलीये विन आमंत्रण आनेकी भी मेरी फरज समझता हुं। में बोलपुरसे पीछे फीरुं उस वखत आपकी सेवामें हाजर होनेकी मुराद रखता हुं।[1]

आपका सेवक,
मोहनदास गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल पत्र (जी० एन० २२०५) की फोटो नकलसे।

२४. पत्र : मगनलाल गांधीको

[पूना]
माघ वदी ११ [फरवरी १०, १९१५][2]

चि० मगनलाल,

यह पत्र पूनामें [सर्वेंट्स ऑफ इंडिया] सोसाइटीके भवनसे लिख रहा हूँ। तुमने जो कपड़े मँगाये हैं उनके सम्बन्धमें मैंने चि० जमनादासको[3] कहा है। मैं मगनभाईके[4] पिताजीसे मिला। बहुत बातें हुईं। वे कुछ ठंडे भी पड़ गये हैं; किन्तु अपने पुत्रको अभी न भेजेंगे। हमें तीन महीने तक राह देखनी पड़ेगी।

मेरा खयाल है कि चि० नारणदासका[5] पुत्र हमारे साथ आयेगा। किन्तु मैंने अभीतक यह तो सोचा भी नहीं है कि वहाँ इन सबके लिए जगह होगी या नहीं। यदि जगह न हुई तो हम वहाँसे जल्दी चले आयेंगे। उतावलीमें कोई निश्चय नहीं किया जा सकता, इसलिए कुछ देर तो लगेगी। इस बीच जो लोग हमारे साथ रहनेवाले हैं वे बेकार न भटकें, इसी विचारसे उनको वहाँ लानेका फैसला किया है।

मुझे प्रो० बरवेने बताया है कि सितार और तबला वहाँ कलकत्तेमें अच्छे और सस्ते मिलेंगे इसलिए ये चीजें नहीं ला रहा हूँ।

मैं बहुत करके सोमवार अर्थात् १५ तारीखको यहाँसे रवाना हो जाऊँगा। जैसा तुमने लिखा है उस हिसावसे मुझे वहाँ १७ तारीखको पहुँचना चाहिए। तुमने जो रास्ता बताया है उसीसे आनेका निश्चय किया है। अब कुछ ही दिनोंमें मिलेंगे, इसलिए

१. गांधीजी १५ फरवरीको बोलपुरके लिए रवाना हुए थे; किन्तु वे काँगड़ी ६ अप्रैलको ही पहुँच सके थे।

२. पत्रमें गांधीजीके दौरेका जो विवरण दिया गया है उससे यह १९१५ में लिखा गया प्रतीत होता है।

३. मगनलालके छोटे भाई।

४. फीनिक्स शालाके अध्यापक पटेल, जो मगनलालके साथ भारत आ गये थे।

५ मगनलालके छोटे भाई।

और नहीं लिखता। मैं बम्बई रविवारको पहुँचूंगा। यदि तुम्हें कोई तार-आदि देना हो तो वहींके पतेपर देना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

मेरे साथ बा, हरिलाल, जमनादास, काकू, रणछोड़, शान्ति और छोटालाल — छबीलदासका, इतने तो आ ही रहे हैं। शायद एक-दो व्यक्ति और साथ हों।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५६४४) से।
सौजन्य : राधाबेन चौधरी

२५. पूनाकी सभाओंमें प्रश्नोंके उत्तर

फरवरी ११-१२, १९१५

श्री गांधी सोमवारको प्रातः पूना पहुँचे . . . वे भारत सेवक समाज (सर्वेन्ट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी)के भवनमें ठहराये जानेवाले थे। जब वे गाड़ीमें स्टेशनसे वहाँ जा रहे थे तो मार्गमें उन्हें कई स्थलोंपर मालाएँ पहनाई गईं। गुरुवारकी शामको दक्षिण-सभाके सदस्य उनसे एक अनौपचारिक समारोहमें मिले। दूसरे दिन सायंकाल सार्वजनिक सभाके आयोजकोंने उन्हें अपने भवनमें प्रीति-भोज दिया। विद्वज्जनोंकी इन दोनों सांध्य परिषदोंमें श्री गांधीजीने लोगोंसे जो वार्तालाप किया, वह अत्यन्त रोचक और शिक्षाप्रद था। सरल जीवन और उच्च विचारके सिद्धान्तके मूर्तिमन्त स्वरूपके दर्शन करना अपने-आपमें एक बड़ी शिक्षा थी और उनका सहज व्यवहार तथा मुक्त और हार्दिक वार्तालाप उनकी पुनीत एवं प्रदीप्त आन्तरिक भावनाका द्योतक था। उन अवसरोंपर उनसे अनेक प्रश्न पूछे गये। श्री गांधीने सबके स्पष्ट उत्तर दिये :

अपनी भावी योजनाओंके सम्बन्धमें पूछे जानेपर उन्होंने कहा कि मैं अभीतक कुछ तय नहीं कर पाया हूँ और यह भी निश्चित नहीं है कि मैं सर्वेन्ट्स ऑफ इंडिया सोसाइटीका सदस्य बनूंगा या नहीं।

दक्षिण आफ्रिकाके बारेमें उनसे पूछा गया कि ऐसा क्यों है कि वहाँ लोग अब भी यह शिकायत कर रहे हैं कि वहाँकी समस्याका अन्तिम और सन्तोषजनक समाधान नहीं हो पाया है, और आप किस अर्थमें उसे अन्तिम रूपसे हल हो गया मानते हैं? उत्तरमें श्री गांधीने बताया कि शिकायतें दो प्रकारकी हैं; एक तो जिन्हें दूर करानेके लिए लोग अपनी सम्पत्ति और प्राण सब-कुछ बलिदान कर देने — यानी वस्तुतः सत्याग्रही बन जानेको तैयार थे; दूसरी वे जिन्हें लोग उतनी तीव्रतासे महसूस नहीं करते थे। उन्होंने कहा कि पहले दर्जेकी शिकायतोंकी हदतक समाधान हो चुका है; यद्यपि कुछ दूसरी शिकायतें — जैसे बस्तियों और ट्रामगाड़ियों तथा रेलगाड़ियोंमें बरते जाने-

वाले रंगभेदसे सम्बन्धित शिकायतें -- ज्योंकी-त्यों बनी हुई हैं। उन्हें दूर करानेके लिए प्रयत्न करना अब भी निहायत जरूरी है। किन्तु, दूसरी श्रेणीमें आनेवाली ये शिकायतें गम्भीर होते हुए भी इतनी कष्टदायक नहीं हैं कि उनके कारण सत्याग्रह आन्दोलन प्रारम्भ किया जाता या उसे चालू रखा जाता।

फिर उनसे यह सवाल पूछा गया कि संघ-सरकारपर किस खास हलकेसे दबाव पड़ा या वह कौन-सी खास कठिनाई थी, जिसके कारण सरकारको लगभग बाध्य होकर झुकना पड़ा। श्री गांधीने कहा कि जिस चीजके कारण सत्याग्रह आन्दोलनको सफलता मिल पाई, वह चीज थी उपनिवेशका अनुकूल यूरोपीय जनमत। इस दृष्टिसे उन्होंने भारत-सरकार और संघ-सरकारके प्रतिवेदनोंका महत्त्व स्वीकार किया, परन्तु उनके विचारसे यदि सत्याग्रहियोंके उद्देश्यके प्रति वहाँके यूरोपीय जनसाधारणका रुख सहानुभूतिपूर्ण न होता तो इन प्रतिवेदनोंसे कुछ फल न होता। उन्होंने कहा कि यदि वहाँकी साधारण जनताकी अव्यक्त सहानुभूति प्राप्त न होती तो ये कमजोर, निर्धन और निहत्थे सत्याग्रही एक पराये और बेगाने देशमें वैसा शानदार कूच कदापि न कर पाते। अपने कूचके दरम्यान उन्होंने यूरोपीयोंकी पानीकी टंकियोंको खाली कर डाला; और उनसे कोई खास हुज्जत भी किसीने नहीं की। जिस देशमें पानीकी इतनी दिक्कत हो, उसमें यह एक बड़ी बात है। कुछ गोरोंने सत्याग्रहियोंको भोजन भी दिया। एक सत्याग्रहीने लालचमें पड़कर किसी यूरोपीयका एक कम्बल चुरा लेनेकी कोशिश की, परन्तु जिस गोरेका वह कम्बल था उसने उस सत्याग्रहीपर मुकदमा दायर नहीं किया, उसे उदारतापूर्वक क्षमा कर दिया। वहाँके गोरे उपनिवेशियोंका समान्यतया क्या रुख है, यह इस घटनासे स्पष्ट हो जाता है। बन्टू, यानी वहाँके मूल उपनिवेशी भी सत्याग्रहियोंके प्रति विरोध-भाव नहीं रखते थे, उलटे भारतीय उद्देश्यके प्रति सहानुभूति दिखाते थे। विरोध रखते थे मुख्यतः कुछ बोअर लोग तथा गोरी यूरोपीय आबादीके व्यापारी और व्यवसायी वर्गके लोग। वहाँके बागान-मालिक और व्यापारी -- ये ही दो वर्ग भारतीय माँगोंके प्रबल विरोधी थे। गोरे व्यापारी भारतीय दुकानदारों और फेरीवालोंके प्रतिस्पर्धी नहीं हैं। बागान-मालिक भारतीयोंका विरोध तो करते थे, परन्तु उनका काम भारतीय मजदूरोंके बिना नहीं चल सकता था।

जब श्री गांधीसे यह पूछा गया कि गोरे व्यापारी और बागान-मालिक भारतीयोंको बोरिया-बस्ता समेत भारत वापस भिजवा देना चाहते हैं, तब उन्होंने कहा कि बागान-मालिकोंको भारतीयोंकी सख्त जरूरत है, परन्तु वे उन्हें गिरमिटिया मजदूरोंके रूपमें ही चाहते हैं। भारतीयोंके बिना उनके बागान, वीरान हो जायेंगे। वतनी मजदूर भारतीयोंके समान कुशल और मेहनती नहीं होते। दरअसल उस उपनिवेशकी औद्योगिक समृद्धि मुख्यतः भारतीयोंके परिश्रमका ही परिणाम है। श्री गांधीने यह कहकर अपनी बातका रुख मोड़ दिया कि मैं बागान-मालिकोंसे हमेशा यही कहा करता था कि अगर आप लोगोंको वास्तवमें भारतीयोंकी जरूरत नहीं है तो आप उनका बहिष्कार कीजिए।

यह बात तो आपके हाथमें है और भारतीय लोग इस सम्बन्धमें कानूनकी रूसे किसी प्रकारकी शिकायत भी नहीं कर सकते। परन्तु बात यह थी कि मजदूरों और व्यापारियोंके रूपमें भारतीय बड़े उपयोगी थे, और उनके बिना काम नहीं चल सकता था। यही कारण है कि उनका बहिष्कार नहीं किया गया।

यह पूछे जानेपर कि वहाँ हिन्दुओंके लिए मन्दिर और मुसलमानोंके लिए मसजिद आदि हैं या नहीं, श्री गांधीने कहा कि कुछ हैं तो जरूर, परन्तु नामके लिए ही। मैं उनसे सम्बन्धित पुजारियों और मुल्लाओंको जानता हूँ, परन्तु उनके चरित्रका जिक्र करते हुए मुझे बहुत दुःख होता है।

जब श्री गांधीजीसे यह पूछा गया कि दक्षिण आफ्रिकामें रहनेवाले भारतीय तो भारतके भिन्न भिन्न प्रान्तोंके निवासी हैं, फिर वे आपसमें बातचीत किस प्रकार कर पाते हैं, तब उन्होंने गर्वके साथ कहा "हिन्दीके माध्यमसे।" सामाजिक रस्मोंके बारेमें उन्होंने बताया कि विभिन्न वर्गोंके हिन्दुओंके बीच खानपानका व्यवहार जरूर था, परन्तु शादी-विवाहका नहीं।

अब गांधीजीसे यह सवाल किया गया कि भारतीयोंने जिस देशको अपना बना लिया है, उस देशकी आबादी क्या उन्हें अपने भीतर पचा लेगी? श्री गांधीने जोर देकर कहा कि "नहीं"—और इसका श्रेय है भारतीय सभ्यताको। उनके कहनेके ढंगसे यह साफ झलकता था कि "तथाकथित पाश्चात्य सभ्यता"के बारेमें उनके खयाल कोई खास ऊँचे नहीं थे और भारतीय सभ्यताके विषयमें बोलते हुए वे गर्वका अनुभव कर रहे थे।

[अंग्रेजीसे]

मराठा, १४–२–१९१५

२६. भाषण: पूनाकी सार्वजनिक सभामें

फरवरी १३, १९१५

शनिवारको श्री गांधी प्रोफेसर कर्वेके[1] अनाथ-बालिकाश्रम, फर्ग्युसन कॉलेज और आनन्दाश्रम देखने गये। इन सब जगहोंमें उनका हार्दिक स्वागत किया गया। शामको उनके सम्मानमें किर्लोस्कर थियेटरमें एक सार्वजनिक सभाका आयोजन किया गया। बोलनेवाले सज्जनोंमें सभाके अध्यक्ष सरदार नौरोजी पदमजी, सर रा० गो० भाण्डारकर[2] और श्री वाडिया थे।

१. धोंडो केशव कर्वे (१८५८–१९६२), समाज-सुधारक; 'भारत-रत्न'; भारतीय महिला विश्वविद्यालय के संस्थापक। देखिए "भाषण: भारतीय महिला विश्वविद्यालय पर", २३ २–१९१६।

२. डॉक्टर रामकृष्ण गोपाल भाण्डारकर (१८३७–१९२५) प्राच्य-विद्या-विशारद, ग्रंथ रचयिता; बम्बई विश्वविद्यालयके उपकुलपति, हिन्दू सामाजिक और धार्मिक सुधार आन्दोलनोंके अग्रगण्य कार्यकर्ता और नेता। देखिए खण्ड २, पृष्ठ ४१९।

अपने प्रति प्रदर्शित सम्मानके लिए बड़े ही उचित शब्दोंमें कृतज्ञता-ज्ञापन करते हुए श्री गांधीने कहा कि पूना संस्कृति और शिक्षाका केन्द्र है तथा यह अपने नागरिकोंकी आत्म-बलिदानकी भावनाके लिए विख्यात है। इस नगरको चाहे मैं अपना भावी "गेह" बनाऊँ या न बनाऊँ, किन्तु इसे मैं और मेरी पत्नी दोनों एक पवित्र तीर्थ-स्थल मानेंगे। मैंने देशकी बहुत ही थोड़ी सेवा की है, परन्तु उतनी थोड़ी-सी सेवाने भी लोगोंके दिलमें ऐसी बड़ी-बड़ी उम्मीदें पैदा कर दी हैं कि मुझे भय है, आगे चलकर कहीं लोगोंको निराश न होना पड़े। मैं प्रार्थना करता हूँ कि अगर कहीं ऐसा ही हो जाये तो मेरे कार्यको उदारता और क्षमाशीलताके साथ आँका जाये। भाषण समाप्त करनेके पूर्व उन्होंने कहा कि मेरे पथ-प्रदर्शक और शिक्षकने मुझे कुछ समय तक अपनी जबान बन्द और कान खुले रखनेका प्रयत्न करनेका आदेश दिया है। उन्होंने अपना छोटा और सुन्दर भाषण समाप्त करते हुए, उन्हें जो सम्मान दिया गया था, उसके लिए आभार माना और यह आशा व्यक्त की कि अगर भविष्यमें उनसे कोई भूल हो जाये तो लोग उसे उदारता के साथ देखेंगे।

[अंग्रेजीसे]

मराठा, १४–२–१९१५

२७. भाषण : बम्बईमें छात्रोंके पुरस्कार वितरणमें[1]

फरवरी १४, १९१५

ऐसा लगता है इस समय भारतमें घोर कलियुग छाया है। मैं इस देशमें एक माससे भ्रमण कर रहा हूँ। देखता हूँ कि भारतमें भारी पाखण्ड फैला हुआ है। मेरा यह दृढ़ विश्वास था कि मैं बारह मास तक भ्रमण करूँगा। इस बीच मैं कान खुले रखूँगा, सब कुछ सुनूँगा, किन्तु किसी सभामें या किसी विषयमें बोलूँगा नहीं। परन्तु तुम लोगोंसे इतना कहना चाहता हूँ कि जो पुस्तकें तुम्हें पुरस्कारमें दी जा रही हैं, उनको भलीभाँति पढ़ना। उनपर खूब विचार करना और उनमें दिये गये सत्यके मर्मको हर समय ध्यानमें रखते हुए धर्मके मार्गपर चलना। तुम चाहे लड़की हो या लड़के, बड़े होनेपर सांसारिक कर्त्तव्यका भारी बोझ तुम्हारे सिरपर पड़ेगा। इसलिए तुम भविष्यके सम्बन्धमें विचार करो। [सत्यका] मर्म केवल अपने धर्मकी पुस्तकोंमें ही नहीं है, बल्कि अन्य धर्मोंकी पुस्तकोंमें भी है।[2]

तुम्हारा कर्त्तव्य है कि तुमने जो ज्ञान प्राप्त किया है उसे विचारपूर्वक हृदयंगम करो। धर्म और नीतिकी जितनी शिक्षा तुम्हारे काम आ सकती है उतनी ही लेनी चाहिए।

१. मनमोहनदास शराफ द्वारा संस्थापित सनातन धर्म-नीति-शिक्षा-प्रवर्तक समितिके उत्सवमें, जिसकी अध्यक्षता गांधीजीने की।

२. *काठियावाड़ टाइम्स*से।

उतना ही ज्ञान आवश्यक है जितना व्यर्थ और बोझ न बन जाये। तुम छात्रोंके लिए यह विशेष रूपसे कहता हूँ कि चाहे तुम लड़के हो या लड़की, तुमने जो भी ज्ञान प्राप्त किया है, उसका लाभ तुम्हें उसी हदतक मिलेगा जिस हदतक तुमने उसे हृदयंगम किया होगा। इस संस्थाका उद्देश्य भी यही होना चाहिए। तुम जो भी पुस्तक पढ़ो, उसमें सत्य कितना है, यह सोचो। यदि तुम सत्यपर आरूढ़ रहोगे तो तुम्हें सफलता मिलेगी। मैं तुम्हें अपने अनुभवके आधारपर कहता हूँ कि तुमको जो ज्ञान मिलता है उसे सँजोकर रखना। उससे तुम्हें और देशको लाभ होगा।[1]

[गुजरातीसे]

काठियावाड़ टाइम्स, १७–२–१९१५

गुजराती, २१–२–१९१५

२८. भाषण: कपोल छात्रावास, बम्बईमें[2]

[फरवरी १५, १९१५]

आप लोगोंने छात्रावासके लिए ७०,००० रुपये इकट्ठे किये हैं, इससे मुझे आश्चर्य नहीं हुआ, क्योंकि कपोल जाति धनवान् है। गरीब छात्रोंको शिक्षित करना और धन्धोंमें लगाना इस जातिके धनी लोगोंका कर्त्तव्य है। आपने मेरे सम्बन्धमें प्रेमपूर्वक जो कुछ कहा है उसके लिए मैं आपका कृतज्ञ हूँ। मैं इस छात्रावासको देखनेके लिए कदाचित् न आ पाता; किन्तु डा० जीवराजने[3] इसमें रहकर इसे जो उज्ज्वल यश दिया है, उसके कारण मुझे इसे देखनेकी बड़ी इच्छा थी। मैं डॉ० जीवराजके सम्बन्धमें इतना ही कहूँगा कि वे युवा और देशप्रेमी हैं, इसलिए मुझे विश्वास है, वे भविष्यमें देशके लिए कुछ करेंगे। मैं कपोल जातिका ऋणी हूँ, क्योंकि श्री जगमोहनदास सामलदासने मुझे खासी मदद दी थी। जब मैं बैरिस्टर होकर आया उस समय यह भय था कि वे कुछ हिस्सा माँगेंगे; किन्तु उस समय श्री मूलजी वडभैयाने मेरी पर्याप्त सहायता की। छात्रोंसे मैं कहना चाहता हूँ कि वे अंग्रेजी और गुजरातीकी खिचड़ी बनाकर बोलनेके बजाय अपनी मातृभाषामें बोलें। अन्तमें प्रत्येक छात्रसे मेरा आग्रह है कि वह सफलता प्राप्त करे, चरित्रवान बने और अपने परिवार और देशके लिए कुछ करे।

[गुजरातीसे]

गुजराती, २१–२–१९१५

१. **गुजरातीसे**।

२. गांधीजी और कस्तूरबा छात्रावास देखने गये थे। गांधीजीने यह भाषण उसी समय दिया था। सेठ त्रिभुवनदास वरजीवनदासने समारोहकी अध्यक्षता की थी।

३. डॉ० मेहता मई १९६० में पुराने बम्बई राज्यका विभाजन होनेपर गुजरातके प्रथम मुख्य मन्त्री हुए और दिसम्बर १९६३ में लन्दनमें उच्चायुक्त नियुक्त किये गये।

475

२९. भाषण: शांतिनिकेतनके स्वागत-समारोहमें[1]

फरवरी १७, १९१५

आज मुझे जो आनन्द हो रहा है उसका मैंने पहले कभी अनुभव नहीं किया। यद्यपि गुरुदेव रवीन्द्रनाथ[2] यहाँ उपस्थित नहीं हैं तथापि अपने हृदयोंमें हम उन्हें विद्यमान पाते हैं। विशेष आनन्द मुझे यह देखकर हो रहा है कि आपने स्वागत-समारोहकी व्यवस्था भारतीय ढंगपर रखी है। बम्बईमें हम लोगोंका बड़ी धूमधामसे स्वागत हुआ था परन्तु उसमें हमें सुख देनेवाली कोई बात नहीं थी; क्योंकि वहाँ पूरी तरहसे पाश्चात्य तरीकोंकी नकल की गई थी; हम अपनी पूर्वकी पद्धतिसे ही अपने लक्ष्यपर पहुँचेंगे, न कि पश्चिमकी नकल करनेसे; क्योंकि हम पूर्वके हैं। हम भारतके शोभनीय आचार-व्यवहारके सहारे विकास करेंगे और उसकी भावनाके प्रति सच्चे रहकर विभिन्न आदर्श रखनेवाले राष्ट्रोंसे मैत्री रखेंगे। निश्चय ही अपनी प्राचीन संस्कृतिके द्वारा भारत पूर्वी और पश्चिमी राष्ट्रोंसे मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करेगा। मैं आज बंगालके इस आश्रमके प्रति आत्मीयताका अनुभव करता हूँ। मैं आपके लिए कोई अजनबी नहीं हूँ। सुदूर आफ्रिकी देश भी मुझे प्रिय लगते थे क्योंकि वहाँके भारतीयोंने अपने राष्ट्रीय रीति-रिवाजोंको नहीं छोड़ा है।

[अपने भाषणके अन्तमें गांधीजीने श्रोताओंको धन्यवाद दिया।]

[अंग्रेजीसे]

तत्त्वबोधिनी पत्रिका के फरवरी १९१५ के अंकमें प्रकाशित बँगला-विवरणसे।

१. आश्रमवासियों द्वारा आयोजित।

२. रवीन्द्रनाथ ठाकुर (१८६१–१९४१); कवि और कलाकार; जिन्हें अपनी काव्य-पुस्तक *गीतांजलि* पर १९१३ में नोबेल पुरस्कार मिला था।

३०. तार : हृ० ना० कुंजरूको

[बोलपुर
फरवरी २०, १९१५]

ऐक्सप्रेस
कुंजरू[1]
सर्वेंट्स
इलाहाबाद

श्री गोखलेका देहान्त।[2] आज रात डाकगाड़ीसे पूनाको रवाना। छिवकी स्टेशन-पर मिलिए। देवधर हो तो आप भी साथ हो लें।

गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी मसविदे (सी० डब्ल्यू० ५६७२) से।

सौजन्य : नानाबेन चौधरी

३१. तार : करसनदास चितलियाको

[बोलपुर
फरवरी २०, १९१५]

चितलिया[3]
भगिनिया
बम्बई

दुःखद समाचार सुना।[4] सोमवारकी शाम पूना पहुँच रहा हूँ। रेवाशंकरसे[5] कहिए कि पत्रादि पूना भेज दें।

गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी मसविदे (सी० डब्ल्यू० ५६६६) से।

सौजन्य : नानाबेन चौधरी।

१. हृदयनाथ कुंजरू (जन्म १८८७–); भारत सेवक समाज (सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी) के सदस्य; उदार विचारोंके राजनीतिज्ञ और संसद-सदस्य।

२. फरवरी १९ को।

३. भगिनी समाज, बम्बई और भारत सेवक समाज (सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी) पूनावाले करसनदास चितलिया।

४. श्री गोखलेके निधनका समाचार।

५. रेवाशंकर जगजीवन झवेरी, गांधीजीके मित्र और डॉ० प्राणजीवन मेहताके भाई

३२. तार: ट्रान्सवाल ब्रिटिश भारतीय संघको

बोलपुर
[फरवरी २०, १९१५]

गांधी
जोहानिसबर्ग

गोखलेका स्वर्गवास। सार्वजनिक शोकका सुझाव। हम सभी आंशिक उपवासपर।

गांधी, पूना

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी मसविदे (सी० डब्ल्यू० ५६६५) से।
सौजन्य: राधाबेन चौधरी

३३. भाषण: गोखलेकी मृत्युपर शान्तिनिकेतनमें

फरवरी २०, १९१५

आजकी रात यहाँ अपने विचार प्रकट करते हुए मेरी एक ही अभिलाषा है: मेरे हृदयके भाव आपके हृदयोंतक पहुँचें और हम लोगोंके बीच वास्तविक एकात्म स्थापित हो।

आप सब लोगोंको तुलसीदासजीकी रामायणके बारेमें कुछ-न-कुछ तो मालूम ही होगा। उसका सबसे अधिक मर्मस्पर्शी अंश वह है जहाँ रचयिताने सत्संगकी महिमाका वर्णन किया है। हमें उन लोगोंकी संगतिकी कामना करनी चाहिए, जिन्होंने कष्ट उठाये हैं, दूसरोंकी सेवा की है और उसीमें शरीर-त्याग किया है। श्री गोखले ऐसे ही व्यक्ति थे। उनका देहान्त अवश्य हो गया है, परन्तु उनका कार्य जीवित है, क्योंकि उनकी आत्मा जीवित है।[1]

गोखलेकी कार्यदक्षताके बारेमें लोगोंको पता लग चुका है। उनके कर्मठ जीवनके विषयमें भी सभी जानते हैं। परन्तु उनके धार्मिक जीवनके सम्बन्धमें बिरले ही जानते होंगे। उनके समस्त कार्योंका स्रोत सत्य था।

जो-कुछ भी वे करते थे, उस सबके — उनकी राजनीति तकके — मूलमें सत्य ही रहा करता था। उन्होंने इसी उद्देश्यसे भारत सेवक समाज (सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी) की स्थापना की थी, जिसका लक्ष्य राष्ट्रके सामाजिक और राजनीतिक जीवनमें आध्यात्मिकता लाना है।

१. यह अनुच्छेद **तत्त्वबोधिनी पत्रिका**के फरवरी १९१५ के अंकमें प्रकाशित बँगला-विवरणसे लिया गया है।

उनके समस्त जीवन-कार्यका आधार अभय था। परन्तु उनमें जितनी निर्भीकता थी, उतनी ही प्रत्येक कार्यको विधिपूर्वक और पूर्णताके साथ करनेकी खूबी भी थी। शास्त्रोंके जो श्लोक उन्हें बहुत प्रिय थे, उनमें से एकका भाव यह है कि वास्तविक बुद्धिमत्ता किसी कार्यको प्रारम्भ करनेमें नहीं, वरन् उसमें अन्त तक लगे रहकर उसे पूरा करनेमें है। सम्यक् रीतिसे काम करनेकी उनकी खूबीका एक दृष्टान्त सुनिए। उन्हें एक अवसर-पर एक विशाल सभामें भाषण देना था और उसके लिए एक छोटा-सा भाषण तैयार करनेमें उन्होंने तीन दिन लगाये। उन्होंने मुझसे यह भाषण लिख डालनेको कहा। मैंने उसे लिखकर उनके सामने रखा। उसे उन्होंने हाथमें लिया और अपनी स्वाभाविक दिव्य मुस्कानके साथ मेरी ओर देखा। फिर उन्होंने मेरे साथ उसकी विवेचना की और तब बोले: "इसे फिरसे लिखो — कुछ बेहतर चीज तैयार करो।" तीन दिन तक वे उसमें जुटे रहे। और अन्तमें उस भाषणको सुनकर श्रोतागण सचमुच गद्‌गद् हो उठे। वे अपने भाषण सामने नोट्स रखे बिना ही दिया करते थे। कारण, वे उसकी सम्पूर्ण तैयारी कर चुकते थे — इतनी सम्पूर्ण कि, कह सकते हैं वे अपने भाषणोंको अपने रक्तसे लिखते थे। जिस प्रकार अपना हरएक काम सर्वांगपूर्ण रीतिसे करनेकी टेव थी और निर्भीकता थी, उसी प्रकार उनमें विनम्रता भी थी। मानवता तो उनमें कूट-कूटकर भरी हुई थी और उसकी छाप उनके प्रत्येक कार्यपर होती थी। कभी-कभी वे झल्लाते भी थे, परन्तु शीघ्र ही अपनी मुस्कानके साथ इन मधुर शब्दों में सम्बन्धित व्यक्तिसे — फिर वह कोई बड़ा आदमी हो अथवा अदना-सा नौकर — क्षमा माँग लेते थे: "मुझे मालूम है कि आप मुझे क्षमा कर देंगे — नहीं करेंगे क्या?"

उनके जीवनके अंतिम दिन बड़े संघर्षमय बीते। और यह संघर्ष था अपनी अन्तरा-त्माके ही साथ। उन्हें यह निर्णय करना था कि क्या उन्हें अपने बिगड़े हुए स्वास्थ्यकी परवाह न करते हुए संघर्षमें भाग लेते ही जाना चाहिए। उनकी अन्तरात्माकी आवाज ही उनके प्रत्येक कार्यको अनुशासित करती थी। अन्तरात्माके प्रति उनकी निष्ठा सच्ची थी, दिखावटी नहीं। इसलिए वे आज भी जीवित हैं। ईश्वर करे, हममें उनकी अंतिम इच्छाको पूरा करनेकी शक्ति आये। भारत सेवक समाज के जो सदस्य उस समय उनके पास थे उनसे उन्होंने ये अन्तिम शब्द कहे थे: "मैं नहीं चाहता कि मेरे लिए कोई स्मारक बनवाया जाये, या मेरी प्रतिमा खड़ी की जाये। मेरी कामना केवल यही है कि लोग देशसे प्रेम करते रहें और आवश्यकता पड़नेपर उसके लिए प्राण भी न्यौछा-वर कर दें।" उनका यह सन्देश केवल उन्हीं सदस्योंके लिए नहीं, वरन् समस्त देशके लिए है। सेवा-धर्म अपनाकर ही वे अपने स्वभावको परख पाये, देशको जान सके। भारतके प्रति उनका प्रेम सत्यपर आधारित था, इसीलिए वे भारतके लिए जो भी चाहते थे वही मनुष्य-मात्रके लिए भी। उनका प्रेम अन्ध-प्रेम न था, क्योंकि वे भारतकी दुर्बलताओं और त्रुटियोंसे परिचित थे। यदि हम भारतको उसी प्रकार प्यार कर सकें तो भारतकी सेवामें जीवन बितानेकी कला सीखनेके लिए हमारा शान्तिनिकेतन आना सार्थक है। आप उनके उस उत्साह और जोशका जो उनके हरएक काममें झलकता था; उस प्रेमका जो उनके जीवनका मूलमन्त्र था, उस सत्यनिष्ठाका जो उनके प्रत्येक कार्यकी

पथ-प्रदर्शिका थी; और उस सर्वांग सम्पूर्णताका जो उनके हर कामकी खूबी थी — अनुकरण कीजिए।

याद रखिए कि हमारे शास्त्रोंका कथन है कि साधारण सद्गुणोंके अभ्याससे ही उच्चतर जीवन उपलब्ध होता है और अगर हम यह उच्चतर जीवन प्राप्त नहीं करते तो हमारा पूजापाठ, हमारा सारा करना-धरना व्यर्थ है।

भारतमें मैं एक ऐसे वीरात्मा व्यक्तिकी खोजमें था जो वास्तवमें सत्यनिष्ठ हो। वह मुझे श्री गोखलेके रूपमें मिल गया। भारतके प्रति उनका प्रेम और उनकी श्रद्धा सचमुच वास्तविक थी। देशकी सेवाके निमित्त उन्होंने स्वार्थ और सब प्रकारके सुखोंका सर्वथा त्याग कर रखा था, रोगशय्यापर भी वे भारतके हित-चिन्तनमें व्यस्त रहते थे। कुछ-ही दिन पूर्व, एक रातको जब वे पीड़ासे कराह रहे थे, उन्होंने हममें से कुछको बुलाया और वे उनसे भारतके उज्ज्वल भविष्यकी चर्चा करने लगे — बताने लगे कि उसके सम्बन्धमें उनकी कल्पना क्या है। डॉक्टरोंने उनसे बार-बार कहा कि काम मत किया कीजिए, परन्तु उन्होंने उनकी सलाह न मानी। वे बोले: "मुझे तो कार्यसे केवल मृत्यु ही अलग कर सकती है;" और अन्तमें मौतने ही उन्हें विश्राम दिया। ईश्वर उनकी आत्माको सद्गति दे।[1]

शान्तिनिकेतनसे प्रकाशित हस्तलिखित अंग्रेजी-मासिक **आश्रम** के जून और जुलाई १. १९१५ के अंकसे; और **बँगला तत्त्वबोधिनी पत्रिका** के फरवरी, १९१५ के अंकमें प्रकाशित रिपोर्टसे भी।

३४. पत्र: पूर्व भारतीय रेलवेके मुख्य ट्रैफिक मैनेजरको

सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी
पूना सिटी
[फरवरी २३, १९१५][2]

ट्रैफिक मैनेजर
पूर्व भारतीय रेलवे,
कलकत्ता

महोदय,

मैंने पूना जाते हुए गत २१ तारीखको ३ अप, मेल ट्रेनसे श्रीमती गांधी तथा दो अन्य व्यक्तियोंके साथ बर्दवानसे कल्याण तकका सफर किया; हमारे पास तीसरे दर्जेके

१. यह अनुच्छेद **तत्त्वबोधिनी पत्रिका**के फरवरी १९१५ के अंकमें प्रकाशित बँगला-विवरणसे लिया गया है।

२. पत्रके उत्तरसे।

नम्बर ७१८६ से ७१८९ तकके टिकट थे। जब गाड़ी प्लेटफार्मपर पहुँची तब मैंने देखा कि तीसरे दर्जेका डिब्बा खचाखच भरा हुआ है, और लेबिलपर दी गई संख्याके अनुसार उसमें जितने यात्रियोंको बैठना चाहिए उससे बहुत अधिक यात्री सवार हैं। हम लोगोंने भी उसमें घुसनेकी कोशिश की। रेल बाबूने, जो समीप ही खड़ा था, हम लोगोंको अन्दर दाखिल नहीं होने दिया। मैंने उस बाबूसे कहा, चूँकि हम लोगोंको जल्दसे-जल्द पूना पहुँचना है, इसलिए हम खड़े-खड़े ही यात्रा कर लेंगे। लेकिन उसने एक न सुनी। इसपर मैंने उससे अपना यह विचार प्रकट किया कि हम लोग तीसरे दर्जेमें स्थान मिल जाने तक ड्योढ़ेमें यात्रा कर लेंगे। यह बात स्वीकार कर ली गई। हम लोग ड्योढ़े दर्जेके एक डिब्बेमें जा बैठे। उसने बाकायदा इस बातकी सूचना उस ट्रेनके गार्डको दे दी। गार्डने इस बातपर जोर दिया कि या तो हम जबलपुर स्टेशन तकका ड्योढ़े दर्जे और तीसरे दर्जेके किरायोंका अन्तर अदा कर दें या डाकगाड़ीसे न जाकर बादमें आनेवाली यात्री-गाड़ीसे जायें। मैंने इस बातका विरोध किया, परन्तु उसका कोई असर नहीं हुआ। अब मेरे सामने इसके सिवा और कोई रास्ता नहीं रह गया कि दोनों दर्जोंके किरायोंके अन्तरकी रकम सविरोध चुकाना स्वीकार कर लूँ। यह रकम हमसे आसनसोलमें वसूल ली गई। अतिरिक्त भाड़ेके टिकटका नम्बर २७४५७७ था और हम लोगोंको रु० १९–१२–० देने पड़े। मैंने टिकट बाबूसे रसीदपर यह लिख देनेको कहा कि मैंने अतिरिक्त किराया विरोधके साथ चुकाया है। उसने मेरा अनुरोध अस्वीकार कर दिया। मैं ड्योढ़े दर्जेमें यात्रा करनेका इच्छुक तो था नहीं, इसलिए मैं और मेरे साथी ड्योढ़े दर्जेको छोड़कर तीसरे दर्जेमें जा बैठनेका अवसर ढूँढ़ रहे थे। यह अवसर मुगलसरायमें हाथ आया। वहाँ मैंने टिकट कलेक्टरसे कहा कि अतिरिक्त कियायेकी रसीदपर यह नोट कर दीजिये कि हम मुगलसरायसे तीसरे दर्जेमें यात्रा कर रहे हैं। परन्तु उसने मेरी बात नामंजूर कर दी।

निवेदन है कि ऐसी परिस्थितिमें उचित तो यह था कि मेरे तथा मेरे साथियोंके लिए तीसरे दर्जेमें जगह ढूँढ़ दी जाती; और अगर यह सम्भव न था तो हम लोगोंको, हमसे अतिरिक्त किराया वसूल न करके, तबतक ड्योढ़ेमें सफर करने दिया जाता जबतक तीसरे दर्जेमें जगह न मिल जाती। जो भी हो, जबलपुर तकका अतिरिक्त भाड़ा चुकाने पर जोर देना अनुचित था। और चूँकि हम लोग मुगलसराय स्टेशनपर तीसरे दर्जेमें जा बैठे थे, इसलिए मुगलसरायसे जबलपुर तकका तीसरे और ड्योढ़े दर्जोंके किरायोंका अन्तर हमें वापस न मिलनेका कोई कारण नहीं है।

मुझे विश्वास है कि रेलवे प्रशासन सम्बन्धित विभागको कृपया-कृत अतिरिक्त किराया वापस कर देनेका आदेश जारी कर देगा।

मैंने इस मामलेकी ओर आपका ध्यान आकृष्ट करना अपना कर्तव्य समझा है — सो जितना इस खयालसे कि अतिरिक्त कियायेकी रकम वापस कर दी जाये (जिसे यात्राका खर्च सार्वजनिक कोषसे चुकाया गया था) उतना ही इस सिद्धान्तकी रक्षाके खयालसे भी कि तीसरी श्रेणीके यात्रियोंको रेलवेके कर्मचारियोंसे सम्मानपूर्ण व्यवहार पानेका हक है। मैंने देखा कि कई अधिकारी उनके साथ अशिष्टता और अवहेलनापूर्ण

पेश आ रहे हैं। मुझे पूरा विश्वास है कि रेलवे प्रशासन नहीं चाहता कि तीसरी श्रेणीके यात्रियोंके साथ ये विवेक-शून्य अधिकारी किसी तरह अशिष्टतापूर्ण व्यवहार करें।[1]

आपका आज्ञाकारी सेवक

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें अंग्रेजी मसविदे (सी० डब्ल्यू० ५६६७) से।

सौजन्य: राधाबेन चौधरी

३५. पत्र: रतिलाल एम० सेठको

सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी
पूना
फाल्गुन सुदी १३ [फरवरी २७, १९१५][2]

भाई श्री रतिलाल,

आपका पत्र मिला। मेरी तबीयत अच्छी होती जा रही है।

आप देशी कर्घेका उपयोग करना चाहते हैं, यह बात मुझे बहुत जँचती है। मेरी सलाह यह है कि धीरजके साथ देशी कर्घेका उपयोग करनेपर यदि उसमें कुछ परिवर्तन करना ठीक लगे तो किया जाये। आदमी बुद्धिमान हो, फिर वह अच्छी तरह देशी कर्घा चलाना सीखे और उसपर कपड़ा बुने, तभी वह उसमें खोज करके सुधार कर सकता है। ठीक भी यही है। मुझे लगता है कि सूत भी खुद अपने चरखेपर ही कातना चाहिए। मुझे इसीमें देशके गरीबोंकी समृद्धि दिखाई देती है। मिलनेपर इसके बारेमें और बातें होंगी।

जो मनुष्य मनमें यह मानता है कि यह शरीर तो क्षण-भंगुर है, वह सदा मृत्युका आलिंगन करनेके लिए तैयार रहेगा। इसके लिए गृहस्थको ऐसा आचरण करना चाहिए कि उसकी बाह्य प्रवृत्तियोंकी सीमा निर्धारित रहे और आन्तरिक प्रवृत्तियाँ विकसित ही होती जायें। इस नियमका अनुकरण करते हुए आप गृहस्थ होते हुए भी विषय-सेवनकी सीमा बना सकते हैं। कुछ हद तक आप अपने व्यवसायमें भी पवित्रता ला सकते हैं। किसी भी कामको आरम्भ करते समय आप अपने मनसे यह पूछ सकते हैं कि वह आवश्यक है या नहीं। ऐसा करते हुए आप सहज ही यह भी जान लेंगे कि आपकी भलाई किसमें है। विशेष स्पष्टीकरण बातचीतसे ही हो सकता है।

१. मार्च २७ को गांधीजीको इसका उत्तर देते हुए कार्यवाहक डिविजनल ट्रैफिक मैनेजरने रेलवे कर्मचारियोंके कृत्यको समुचित ठहराया। उसने लिखा, चूँकि किरायेका अन्तर नियमानुसार ही लिया गया और चूँकि इस बातके समर्थनमें मुगलसरायमें कोई लिखित प्रमाण नहीं है कि आप लोगोंने वहाँसे जबलपुर तक तृतीय श्रेणीमें यात्रा की, इसलिए साधारण परिस्थितियोंमें अतिरिक्त किरायेकी रकम वापस नहीं की जानी चाहिए। किन्तु मैं आपके कथनको सत्य मान लेनेको तैयार हूँ और मनिऑर्डर द्वारा मुगलसरायसे जबलपुर तकके किरायेके अन्तरकी रकम भेज दूँगा।

२. गांधीजी इस तारीखको पूनामें थे।

आपके पास कैसा कपड़ा रहता है, यह लिखिएगा।

मैं जो-कुछ लिखता हूँ या कहता हूँ उसके सम्बन्धमें इतना याद रखें कि मैं भी आपकी तरह विद्यार्थी ही हूँ। सम्भव है, मुझे कुछ ज्यादा अनुभव हो। आप चाहें तो इस अनुभवका लाभ उठा लें।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ४६४८) से।
सौजन्य: नारणदास गांधी

३६. मथुरादास त्रिकमजीको लिखे पत्रका अंश

पूना
फाल्गुन सुदी १४, फरवरी २८, १९१५

मुझे तुम्हारा पत्र यहाँ मिला। फिलहाल तो मुझे यही आवश्यक लगता है कि तुम भविष्यकी तैयारी करो। मेरा खयाल है यदि तुम हिन्दी और मराठीका अध्ययन भाषाओंके रूपमें करो तो ठीक होगा। साथ ही कर्घेसे कपड़ा बुनना सीखो तो और भी अच्छा हो। रोज नियमसे घूमने जानेकी टेव न डाली हो तो अब डालना। दिनमें कमसे-कम चार घंटे तो शारीरिक श्रम करना ही चाहिए।

पहले 'योगदर्शन'[1] पूरा पढ़ लो। फिर दूसरी पुस्तकके सम्बन्धमें सोचेंगे।

मैं वहाँ सम्भवतः गुरुवारको पहुँचूंगा और उसी दिन वापस बोलपुरको चल पड़ूंगा।

[गुजरातीसे]
बापुनी प्रसादी

३७. पत्र: डी० बी० शुक्लको

फाल्गुन वदी १ [मार्च २, १९१५][2]

भाईश्री,

आपका पत्र मिला। आपने १,५०० रुपये भेजे; इसके लिए मैं आपका आभारी हूँ।

मेरी तबीयत पहलेसे काफी अच्छी है। पसलीमें दर्द तो अभी है; किन्तु डॉ० देवने कहा है कि अब प्लूरिसी तो नहीं है।

१. पतंजलिका **योगदर्शन**। देखिए खण्ड ९, पृष्ठ १२०।
२. डाकखानेकी मुहरसे।

पूज्य गोखलेके देहावसानसे मेरी दशा पंखहीन पक्षीकी-सी हो गई है। यहाँसे गुरुवारको बोलपुर वापस जानेका विचार है।

मोहनदासके वन्देमातरम्

आदरणीय भाई श्री दलपतराम भवानजी शुक्ल[1]
बैरिस्टर
सिविल स्टेशन
राजकोट

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (जी० एन० २३२६) से।

३८. पत्र: सर विलियम वेडरबर्नको

मार्च ३, १९१५

प्रिय सर विलियम,[2]

हम लोगोंपर जो राष्ट्रीय विपदा आ पड़ी है, उसके कारण आपके पत्रका उत्तर देनेमें देर हो गई।

जैसी मंजूषा भेजी गई है, वैसी बहुत-सी भारत भी ले आई गई हैं। परन्तु ऐसा समझिए, मानो केप टाउनवाली मंजूषाको इंग्लैंड ही जाना था। दक्षिण आफ्रिकामें प्राप्त मंजूषाओंमें वह अन्तिम थी, और वह मुझे ठीक साऊदैम्पटन रवाना होनेके दिन भेंट की गई थी। तब हम लोग लन्दनमें रुके, और इसी बीच उस मंजूषाको इंग्लैंडमें ही छोड़ आनेका विचार आया। श्री रॉबर्ट्स, श्री कैलेनबैक और मैं इस निष्कर्षपर पहुँचे कि उसे रखनेके लिए सर्वोत्तम संस्था आपका निवास-स्थान ही है। मुझे जिस व्यक्तिके लिए प्रेम-भाव रखने और जिसे भारतके सबसे बड़े हितैषियोंमें से एक माननेकी शिक्षा दी गई है, यह उसके प्रति मेरे व्यक्तिगत सम्मानकी एक छोटी-सी अभिव्यक्ति-मात्र है। इस मंजूषाको आपके पास रखना दोनों राष्ट्रोंको एकताके सूत्रमें आबद्ध करनेका एक प्रयास सिद्ध हो सकता है।

अतः मेरा निवेदन है कि आप उसे अपने ही पास रखें। मुझे विश्वास है कि यदि श्री गोखलेने आपका पत्र पढ़ा होता तो वे भी आपसे यही प्रार्थना करते जो मैं कर रहा हूँ।

आदर-सहित,

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० २१६४५ सी०) से।

१. राजकोटके एक बैरिस्टर, गांधीजीके मित्र और सहपाठी।
२. सर विलियम वेडरबर्न, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके १८९९ के बम्बई अधिवेशनके अध्यक्ष।

३९. भाषण: गोखलेके निधनपर आयोजित शोक सभामें

पूना
मार्च ३, १९१५

३ मार्च, १९१५ को श्री गोखलेकी मृत्युपर शोक प्रकट करनेके लिए किर्लोस्कर थियेटरमें पूनाके नागरिकोंकी एक सभा हुई। जिसकी अध्यक्षता बम्बईके गवर्नर महोदयने की। सभा-भवन खचाखच भरा हुआ था। जिसमें श्री गांधी द्वारा पेश किये गये निम्नलिखित प्रस्ताव पास हुए:

इस प्रस्तावके द्वारा सभामें एकत्र पूनाके नागरिकगण माननीय श्री गोखलेकी, जो समस्त देशके नेता थे और जिन्होंने अपनी निष्ठा तथा त्यागभावनाके द्वारा निःस्वार्थ सार्वजनिक सेवाका ज्वलंत उदाहरण प्रस्तुत किया है, असामयिक मृत्युके कारण देशको, और विशेषतः पूनाको जो महान् क्षति हुई है, उसको लिखित रूपमें व्यक्त करते हैं। यह सभा श्री गोखलेकी पुत्रियों तथा उनके अन्य सम्बन्धियोंके प्रति उनके शोकमें हार्दिक समवेदना प्रकट करती है और अध्यक्षसे निवेदन करती है कि इस प्रस्तावको उनके पास भेज दें।[1]

उक्त प्रस्ताव पेश करते हुए श्री गांधीजीने दिवंगत राजनयिककी प्रशंसामें एक ओजस्वी भाषण दिया। उन्होंने कहा कि उन स्वर्गवासी देशभक्त की स्मृतिमें परमश्रेष्ठ लॉर्ड विलिंग्डनने जो शब्द कहे हैं, उनके बाद में कुछ कहूँ, तो यह मेरी धृष्टता ही होगी। हाँ, एक बात कहना चाहूँगा, मेरा मतलब उनकी गहरी धार्मिक भावनाओंसे है, जिनके कारण किसी भी कार्यको सम्यक्‌रूपसे करना उनके स्वभावका एक विशेष गुण हो गया था। उनकी अन्तरात्मा भी बहुत जागरूक थी। मृत्युसे कुछ ही पहले श्री गोखलेके सामने यह प्रश्न उठा कि वे अमुक सम्मेलनमें जायें या नहीं। बहुत सोच-विचारके पश्चात् उन्होंने देश-हितको ध्यानमें रखकर, उस सम्मेलनमें जाना निश्चित किया; यद्यपि इसमें उनकी जानको बहुत खतरा था।[2]

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ४-३-१९१५
अमृत बाजार पत्रिका, ५-३-१९१५

१. बॉम्बे क्रॉनिकलमें प्रकाशित रिपोर्टसे।
२. अमृत बाजार पत्रिकामें प्रकाशित रिपोर्टसे।

४०. पत्र : मगनलाल गांधीको

[बम्बई]

फाल्गुन बदी ३ गुरुवार [मार्च ४, १९१५][1]

चि० मगनलाल,

यह पत्र बम्बईसे लिख रहा हूँ। शायद मैं एक दिन यहाँ भी रुकूँगा। मुझे तुम्हारे तीन पत्र इकट्ठे पूनामें मिले। हम यह संस्था सारे देशके लिए चलाना चाहते हैं। इसीलिए सारे देशसे भीख माँगेंगे। किन्तु हम अहमदाबादसे आवश्यक जमीन और मकान माँग रहे हैं। इसे हमारी संस्थाकी बुनियाद समझो।

जहाँतक हो सकेगा, वहाँतक हम मशीनोंके बिना काम चलायेंगे। इससे कारखाने बन्द हो जायेंगे, इसकी फिक्र करनेकी हमें जरूरत नहीं है। यदि मिल-मालिक नये कारखाने न खोलें तो भी बुराई कुछ नहीं और यदि नये कारखाने खोलते चले जायें तो भी हमने जिस काममें सुख माना है, उसीमें लगे रहेंगे।

अभी तुम ब्रह्मचर्यके सम्बन्धमें कुछ नहीं समझे। यदि आज केशूको[2] [विवाहसे] मुक्ति मिल जाये तो क्या तुम दुःखी होओगे? यदि इसमें दुःख मानो तो यह दशा कितने गहन मोहकी सूचक है? अच्छे लोग सन्तानोत्पत्ति करेंगे तो उनकी सन्तान संसारको सुखमय बनायेगी, ऐसा सोचना अहंकार और अज्ञानसे भरा हुआ जान पड़ता है। अच्छे लोग सांसारिक प्रवृत्तियोंकी इच्छा नहीं करते। वे तो संसारसे निवृत्ति अर्थात् मोक्ष चाहते हैं। अच्छे लोगोंके लिए उनके साथी ही सन्तान रूप हैं। जबतक इतना भी न माना जाये तबतक मानना चाहिए कि बहुत अज्ञानकी अवस्था बनी हुई है। इस सबका अर्थ यह नहीं है कि केशू कभी विवाह ही न करेगा। उसके जैसे संस्कार होंगे उसमें वैसी ही बुद्धि आयेगी। तुम्हारा कर्त्तव्य यह है कि तुम उसके सम्मुख ऊँचीसे-ऊँची स्थिति रख दो। यदि वह उस तक न पहुँच पाये तो भी चिन्ता नहीं। ऐसे व्यक्तिकी सन्तान लोक-हित कर सकेगी। किन्तु यदि वह उत्तम सन्तान उत्पन्न करनेके विचारसे ही ब्रह्मचर्यको भंग करेगा तो उसकी सन्तान उत्तम हो सकेगी। इन दोनों स्थितियोंका भेद खूब समझ लो। एक स्थिति ज्ञानसे प्राप्त होती है और दूसरी स्थितिमें सब-कुछ जानते हुए भी दुर्बलताके कारण पतन होता है। इसमें फिर ऊँचा उठनेकी गुंजाइश है। पहली अवस्थामें ऊँचा न उठनेका निश्चय है। इसमें ऊँचा उठना ही पतन माना गया है। हम ठीक शिक्षा देते रहें और केशू फिर भी विवाह कर ले तो इसमें कोई हानि नहीं। यदि वह विवाह न करे तो उसमें ऐसा तेज आ सकता है

१. चूँकि पत्रमें अहमदाबादमें संस्थाकी स्थापनाका उल्लेख है, इसलिए यह १९१५ में लिखा गया जान पड़ता है। इस तिथिको गांधीजी बम्बईमें थे और उससे पूर्व, २२ फरवरी और ३ मार्चके बीचमें वे पूनामें थे।

२. मगनलालके पुत्र।

जिससे समस्त संसार तर सके। माँ-बापको अपनी सन्तानके लिए सर्वोत्तम अवस्थाकी इच्छा करनी चाहिए। फिर उसमें जितनी योग्यता होगी उतना ही वह उस शिक्षणसे ग्रहण कर लेगा। निस्सन्देह मेरे विचारमें कोई दोष नहीं है। तुम इसे भली-भाँति समझ लो। यह मेरी इच्छा है। तुम दुर्वलताको वल न समझ लेना। मोहको ज्ञानका स्थान न देना। खूब सोचना। इस पत्रको सँभालकर शान्तिनिकेतन मगनभाईको[1] भेज देना।

मैंने रावजी भाईको यहाँ आनेके लिए तार[2] दिया है। इस पत्रको वहाँ किसीको पढ़वाना आवश्यक हो तो पढ़वा देना।

वापूके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

अगर मेरा वहाँ आना जरूरी जान पड़े तो वोलपुर आदि होते हुए ही जाऊँ यही ठीक लगता है।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ११०) से।
सौजन्य: राधावेन चौधरी

४१. मोढ मण्डल, कलकत्ता द्वारा दिये गये मानपत्रका उत्तर

मार्च १२, १९१५

श्री गोखलेकी असामयिक मृत्युसे मैंने एक ऐसा मित्र, मार्गदर्शक और तत्त्ववेत्ता खो दिया है जिसके पद-चिह्नोंपर चलकर मैं मातृभूमिकी सेवा करने चला था। उन्होंने अपनी मृत्यु-शैयापर से अपने मित्रोंसे आग्रह किया था कि भारतीय अपनी मातृभूमिके प्रति सच्चे रहें और उसकी सेवा करें।

[गुजरातीसे]
खेड़ा वर्तमान, २४-३-१९१५

१. पटेल।
२. उपलब्ध नहीं है।

४२. भाषण: कलकत्ताके स्वागत-समारोहमें[1]

मार्च १३, १९१५

मैं नहीं जानता कि आप लोगोंके इस हार्दिक स्वागतके प्रति मैं अपनी कृतज्ञता किन शब्दोंमें व्यक्त करूँ। (अध्यक्ष) महोदय, आपने मुझे आशीर्वाद देनेके साथ ही एक कर्त्तव्य भी सौंपा है। मैं चाहता हूँ कि मुझे आपके इस आशीर्वादके योग्य सिद्ध होनेकी पात्रता और आपके द्वारा सौंपे गये कार्यको पूरा करनेके योग्य शक्ति एवं तत्परता मिले। कलकत्तेमें आकर अनेक पुनीत और भव्य स्मृतियाँ जाग्रत हो रही हैं। यहीं, सन् १९०२ में मैंने श्री गोखलेको अपने राजनीतिक गुरुके रूपमें ठीक-ठीक पहचाना था। जो मुझे आवश्यक जान पड़ा वह सब मैंने उन्हींके चरणोंमें सीखा। उन्हींके निवास स्थानपर डॉ० प्र० चं० रायसे[2] मेरा परिचय हुआ। सोचता था, कौन जाने कलकत्ता पहुँचनेपर उनके दर्शन हो पाते हैं या नहीं। किन्तु, ईश्वरकी कृपासे उनके दर्शन हो गये। आपने मेरे विषयमें ऐसी अनेक बातें कही हैं, जिनका मैं अपनेको पात्र नहीं मानता। यदि मैं भी आपके हृदयमें स्थान वना सकता हूँ तो फिर हरबत सिंहके सम्बन्धमें आप क्या करना चाहेंगे, जो दक्षिण आफ्रिकामें अपने मित्रोंकी तथा मेरी भी इच्छाके विरुद्ध जेल गये थे। श्री गांधीने कहा कि हरवत सिंहकी मृत्यु कारावासमें हुई। फिर, वलिअम्माने[3] जो-कुछ किया, उसका वर्णन करनेमें तो मैं असमर्थ ही हूँ। उससे प्यारी लड़की इस धरतीपर नहीं जन्मी। उसकी उम्र केवल १७ वर्षकी थी। आप हरबत और वलिअम्माको क्या देंगे? यदि कोई किसी आदरका पात्र है तो वह हरवत सिंह और वलिअम्मा – जैसे व्यक्ति ही हैं। अगर अपने हृदयमें स्थान देना है तो उन्हें दें, न कि इंग्लैंडसे आयात किये गये मुझ-जैसे "वहादुरों" को। मैं जो-कुछ भी कर या कह पाया हूँ, वह सब मैंने इंग्लैंडमें सीखा है। हरबत अशिक्षित थे। वे अंग्रेजीका एक शब्द भी नहीं जानते थे, फिर भी वे हम सबसे बढ़-चढ़कर थे। सम्मानकी पात्र तो वलिअम्मा है, न कि मेरी पत्नी। श्री गांधीने आगे कहा कि मेरी प्रेरणाका स्रोत श्री गोखलेका जीवन है और मेरे सामने अभी जो कार्य पड़ा हुआ है, उसके सम्पादनमें भी मैं उन्हींके जीवनसे प्रेरणा पाता रहूँगा। मेरे वारेमें कहा जाता है कि मैं कानून-शिकनी नहीं करता हूँ।[4] इसे पूरा-पूरा सच मान लेना ठीक न होगा। हम लोगोंको

१. यह सभा महाराजा कासिमबाजारके महल्के मैदानमें बाबू मोतीलाल घोषकी अध्यक्षतामें हुई थी।

२. सर प्र० चं० राय (१८६१–१९४४); वैज्ञानिक और देशभक्त।

३. दक्षिण आफ्रिकाके संघर्षमें शहीद हुई थीं; देखिए "भाषण: मद्रासके स्वागत-समारोहमें" २१–४–१९१५।

४. इस सभामें माननीय सुरेन्द्रनाथ बनर्जीने अपने भाषणमें गांधीजीकी प्रशंसा करते हुए कहा कि श्री गांधीका नाम इतिहासमें दीर्घकाल तक रहेगा। श्री गांधी कानून तोड़ेंगे नहीं, वे उसका पालन करेंगे और उसपर विजयी भी होंगे। बंगालके क्रान्तिकारियोंको इनके उदाहरणसे एक सबक सीख लेना चाहिए और उसका अनुसरण करना चाहिए। श्री गांधीने अपनी नैतिक शक्तिके द्वारा कानूनपर विजय पाई है।

तो दक्षिण आफ्रिकामें कानून तोड़नेवाला ही कहा जाता था। मैंने वहाँ कानून तोड़ा और जो कानून मेरी अन्तरात्माको अमान्य था उसके अन्तर्गत सजा भोगना स्वीकार किया।

बाबू हेमेन्द्रनाथ सेनने अध्यक्षको सभाकी ओरसे धन्यवाद दिया।

सभा विसर्जित होनेसे पूर्व मौलवी लियाकत हुसैनने "वन्देमातरम्"का नारा लगाया; समस्त सभाने उसे दुहराया। अन्तमें कुछ व्यक्तियोंने समवेत स्वरमें "वन्देमातरम्" गीत गाया।

[अंग्रेजीसे]

अमृत बाजार पत्रिका, १५-३-१९१५

४३. पत्र : नारणदास गांधीको

रंगून जाते हुए
फाल्गुन बदी १४ [मार्च १४, १९१५][१]

चि० नारणदास,

डेककी यात्राका बहुत कटु अनुभव हो रहा है; किन्तु वह सभीको होता है। बा, रामदास और मैं जा रहे हैं। उम्मीद है, इस मासके अन्तमें शान्तिनिकेतन पहुँच जायेंगे।

मैं देखता हूँ, हरिलाल और मेरे बीचमें गलतफहमी पदा हो गई है। वह बिलकुल अलग हो गया है। उसे मैं अब पैसेकी मदद नहीं दूंगा। मैंने उसे ४५ रुपये दे दिये और फिर हमने कलकत्तेमें एक दूसरेका साथ छोड़ दिया। दोनोंने किसी प्रकारकी कटुताका अनुभव नहीं किया। उसे मेरी पुस्तकों और मेरे कपड़ोंमें से जो कुछ चाहिए, ले लेने देना। चाबी उसे सौंप देना। जो कुछ निकालना होगा, निकाल कर वह चाबी लौटा देगा। खोई हुई चाबी मिल गई है, यह बात तुम्हें मालूम होगी। रेवाशंकर भाईके पास थी। न मिली हो तो उनसे ले लेना।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें पेंसिलसे लिखे मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५६६८) से।
सौजन्य : नारणदास गांधी

१. गांधीजी रंगून जाते हुए इस तारीखको जहाजपर थे।

४४. मगनलाल गांधीको लिखे पत्रका अंश

[मार्च १४, १९१५ के बाद][१]

अहिंसाके सम्बन्धमें तुम्हारा खयाल ठीक है। दया, अक्रोध, अमानित्व आदि इसके अंग हैं। सत्याग्रहका मूल आधार अहिंसा धर्म है। इसका स्पष्ट दर्शन मुझे कलकत्तेमें हुआ। मैंने वहाँ सोचा कि हमें अपने दूसरे व्रतोंमें इसे भी शामिल कर लेना चाहिए। इस विचारसे यह निष्कर्ष निकला कि हमें समस्त यमोंका ही पालन करना चाहिए और हम व्रत-रूपमें इनका पालन करते हुए उनकी सूक्ष्म महत्ताको देख सकते हैं। यहाँ मैं सैकड़ों लोगोंके साथ बातचीत करता हूँ और उसमें समस्त यमोंको सबसे प्रमुख स्थान देता हूँ।

सिय-राम-प्रेम-पियूष-पूरन होत जनमु न भरतको।
मुनि-मन-अगम यम नियम सम दम विषम व्रत आचरत को।[२]

यह छन्द मुझे कलकत्तेमें इस अवसरपर याद आया और मैंने उसपर बहुत विचार किया। इन व्रतोंके पालनसे ही भारतकी और हमारी मुक्ति होनी है, यह मुझे स्पष्ट दिखाई देता है।

अपरिग्रहका पालन करते समय ध्यानमें रखने योग्य बात यह है कि हम किसी अनावश्यक वस्तुका संग्रह न करें। खेती करते हुए हमें बैल चाहिए तो हम बैलों और उनके लिए आवश्यक सामग्रीका संग्रह करेंगे। जहाँ सदा अकालका भय रहता है वहाँ हम अन्न संचित करके रखेंगे किन्तु इस प्रश्नपर सदा ही विचार करना होगा कि बैलोंकी और अन्नकी आवश्यकता है या नहीं। हमें समस्त यमोंका पालन मनसे भी करना है। इससे हम उनमें दिन-प्रति-दिन दृढ़ होते जायेंगे और हमें नये त्याग सूझते जायेंगे। त्यागकी तो सीमा नहीं है। हम जितना अधिक त्याग करते जायेंगे हमारा आत्मदर्शन उतना ही अधिक होता जायेगा। मनकी गति परिग्रहके त्यागकी ओर हो और यदि हम अपनी शारीरिक सामर्थ्यके अनुसार त्याग करें तो यही समझा जायेगा कि हमने अपरिग्रहका पालन किया है।

यही बात अस्तेयके सम्बन्धमें है। अनावश्यक वस्तुओंके संग्रहका प्रश्न अपरिग्रहके अन्तर्गत आता है और उनके उपयोगका प्रश्न अस्तेयके अन्तर्गत। मैं एक वस्त्रसे शरीर

१. यह पत्र गांधीजीने भारतमें आनेके बाद अपनी शान्तिनिकेतन और कलकत्तेकी प्रथम यात्राके बाद लिखा होगा क्योंकि इसमें कलकत्ते और गुरुदेवका उल्लेख है। गांधीजी कलकत्तेसे १४ मार्च, १९१५ को रवाना हुए थे।

२. छन्दकी दूसरी दो पंक्तियाँ इस प्रकार हैं :

दुःख दाह दारिद दम्भ दूषन सुजस मिस अपहरत को
कलिकाल तुलसीसे सठन्हि हठि राम सनमुख करत को।

तुलसीकृत **रामचरितमानस**: अयोध्याकाण्ड

रख सकता हूँ, फिर भी मैं दो वस्त्र पहनूं तो इस तरह मैंने दूसरा वस्त्र चुराया है, क्योंकि जिस वस्त्रका उपयोग दूसरा व्यक्ति कर सकता है वह मेरा नहीं है। यदि मैं पांच केलोंसे अपना गुजारा कर सकता हूँ तो मेरा छठा केला खाना चोरी है। मान लो हमने सबकी जरूरतका हिसाब करके ५० नीबू रखे हैं। मुझे जरूरत केवल दो नीबुओंकी है; किन्तु चूंकि नीबू अधिक हैं इसलिए मैं तीसरा नीबू ले लेता हूँ। यह चोरी हुई।

इस प्रकार वस्तुओंके अधिक उपयोगसे अहिंसा-व्रत भंग होता है। यदि हम अस्तेय भावसे इन वस्तुओंका उपयोग कम करें तो हममें उदारता बढ़ेगी। यदि हम अहिंसा-भावसे उपयोग कम करें तो दया-भाव बढ़ेगा। यदि हम जीव मात्रको अभय दें तो हममें दया और प्रेमका भाव आता है। जो अपना भाव ऐसा बना लेगा उससे कोई भी जीव स्वप्नमें भी वैर-भाव न मानेगा। यह शास्त्रोंका विशेष निष्कर्ष है। मेरा अनुभव भी यही है।

इन सब व्रतोंका मूल सत्य है। यह हो सकता है, अपने मनको धोखा देकर की हुई चोरीको लोग चोरी न मानें। इसी प्रकार मनुष्य अपने मनको धोखा देकर किये गये परिग्रहको अपरिग्रह समझ सकता है। अर्थात् हम पग-पगपर सूक्ष्म विचार करते हुए सत्यका पालन कर सकते हैं। किसी वस्तुका संग्रह किया जाये या नहीं हम इस सम्बन्धमें जब शंका हो तो सीधा नियम यही है कि संग्रह न किया जाये। त्यागमें सत्यका भंग नहीं होता। जहां यह शंका हो कि बोलना चाहिए या नहीं वहाँ सत्यव्रती का कर्तव्य है कि वह मौन धारण कर ले।

मैं यह चाहता हूँ कि तुम केवल उन्हीं व्रतोंको लो जिन्हें तुम स्वतन्त्र रूपसे ले सको। इन व्रतोंको लेनेकी जरूरत मुझे सदा अनुभव होती है। किन्तु तुममें से प्रत्येक व्यक्ति तभी व्रत ले जब वह उसे स्वयं सूझे और जिसकी आवश्यकता उसे स्वयं अनुभव हो।

रामचन्द्रजी चाहे जितने वीर क्यों न रहे हों, उन्होंने कैसा ही पराक्रम क्यों न दिखाया हो और लाखों राक्षसोंका वध क्यों न किया हो, किन्तु यदि उनके पीछे लक्ष्मण और भरत-जैसे भक्त भाई न होते तो आज रामको कोई जानता भी नहीं। सारांश यह है कि रामचन्द्रजीमें केवल असाधारण क्षात्र-तेज ही होता तो उनकी कीर्ति काला-न्तरमें समाप्त हो जाती। राक्षसोंका संहार करनेवाले उनके जैसे अनेक वीर हो गये हैं। उनमें से किसीकी कीर्ति आज घर-घरमें नहीं गाई जाती। रामचन्द्रजीमें कुछ विशेष तेज था और वे उस तेजको लक्ष्मण और भरतमें उतार सके थे। इसलिए लक्ष्मण और भरत महान् तपस्वी हुए। उनके इसी तपका माहात्म्य गाते हुए तुलसीदासने कहा है कि महान् मुनियोंके लिए भी जो तप अगम है ऐसा तप करनेवाले भरत-जैसे तपस्वी न जन्मे होते तो मुझ जैसे मूढ़को रामका दर्शन कौन कराता? इसका अर्थ यह हुआ कि रामके-यश अथवा उनकी शिक्षाओंके रक्षक लक्ष्मण और भरतजी हैं। फिर तप ही सब-कुछ नहीं है, क्योंकि आहार और निद्राका चौदह वर्ष तक त्याग जैसे लक्ष्मणने किया था वैसे ही इन्द्रजित्‌ने भी किया था। किन्तु लक्ष्मणको रामचन्द्रजीसे तपका जो मर्म प्राप्त हुआ था इन्द्रजित् उससे वंचित था। इतना ही नहीं, उसकी वृत्ति तपका दुरुपयोग

करनेकी ओर भी थी। इसलिए उसे राक्षस कहा गया और भक्त तथा मुमुक्षु लक्ष्मणके हाथों पराजित हुआ। उसी प्रकार गुरुदेवका[1] आदर्श चाहे जितना ऊँचा हो, यदि ऐसा कोई व्यक्ति न निकले जो उनके इस आदर्शको कार्यान्वित कर सके तो उनका यह आदर्श युगके गहन अन्धकारमें पड़ा रहेगा। इसके विपरीत यदि कोई व्यक्ति उस आदर्शको क्रियान्वित करनेवाला निकल आया, तो वह कई गुना प्रकाश फैला सकेगा। आदर्शको क्रियान्वित करनेका मार्ग तप है। उस तप — अनुशासन — को बालकोंके जीवनमें उतारना कितना आवश्यक है, यह समझ लेना चाहिए।

[गुजरातीसे]

गांधीजीनी साधना

महात्मा गांधीजीना पत्रो।

४५. साम्राज्यीय भारतीय नागरिक संघके 'उद्देश्यों' में संशोधन[2]

[मार्च १६, १९१५ को या उसके बाद]

'उद्देश्य' शीर्षकके अन्तर्गत धारा १ से ४ तक[3] के स्थानमें निम्न धाराएँ सुझाई जाती हैं :

भारतके बाहरके देशोंमें भारतीय प्रवासियोंकी, जिनमें गिरमिटिया मजदूर भी शामिल हैं, अवस्थाका पता लगाना और उनपर लगी निर्योग्यताओं एवं उनके कष्टोंके निवारणार्थ आन्दोलन करना।

इन प्रवासियोंके लिए संसारके सम्बन्धित भागोंमें बसे हुए अन्य प्रवासियोंके समान दर्जा प्राप्त करना।

१. रवीन्द्रनाथ ठाकुर ।

२. जहाँगीर बोमनजी पेटिटने १६ मार्च १९१५ को साम्राज्यीय भारतीय नागरिकता संघके नियमों और विनियमोंके मसविदेकी एक नकल भेजी थी और एक पत्र लिखा था । ये संशोधन उन्हींके उत्तरमें भेजे गये थे ।

३. ये १ से ४ तकके उद्देश्य इस प्रकार थे :

(१) भारतके बाहर संसारके किसी भी भागमें, जिसमें स्वशासित ब्रिटिश उपनिवेश भी सम्मिलित हैं, सामान्यतः सभी भारतीयोंके नागरिक अधिकारोंकी रक्षा करना;

(२) भारतीयोंको खास तौरसे, ब्रिटेनके अधीनस्थ समस्त देशोंमें सब मामलोंमें, अन्य ब्रिटिश नागरिकोंके साथ जैसा व्यवहार किया जाता है, वैसा ही व्यवहार सुलभ कराना;

(३) समस्त सम्भव वैधानिक उपायोंसे भारतीयोंके लिए ब्रिटिश साम्राज्यके किसी भी भागमें, जिसमें स्वशासित उपनिवेश सम्मिलित हैं, वैसी ही शर्तोंपर प्रवेश करने और बसनेका अधिकार स्थापित करना एवं कायम रखना; जैसी शर्तोंके अधीन साम्राज्यके अन्य सदस्योंको ऐसा करनेका अधिकार प्राप्त है;

(४) साम्राज्यके अन्तर्गत ब्रिटिश नागरिकोंके रूपमें भारतीयोंके स्वाभाविक अधिकारों और सुविधाओंको हर उचित और वैधानिक उपायसे कायम रखना ।

प्रवासी जिन स्थितियोंमें अपने गन्तव्य स्थानोंकी यात्रा करते हैं उन स्थितियोंकी जाँच करना और जहाँ ये स्थितियाँ दोषपूर्ण हों वहाँ उनमें सुधार करवाना।

संसारके सभी भागोंमें, जिनमें स्वशासित ब्रिटिश उपनिवेश भी सम्मिलित हैं, ब्रिटिश भारतीय प्रवासियोंके लिए प्रवेशकी शर्तों और निवासके सम्बन्धमें अन्य समस्त ब्रिटिश प्रजाजनोंके समान व्यवहार प्राप्त करना।

प्रवासियोंके लाभार्थ एक सूचना-समिति चलाना।

एक ऐसा पुस्तकालय स्थापित करना और चलाना जिसमें उपनिवेशीय तथा विदेशी कानूनकी पुस्तकें और पत्र-पत्रिकाएँ एवं प्रवासियोंकी दिलचस्पीकी अन्य सब पुस्तकें हों।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० ६३०५) की फोटो-नकलसे।

४६. पत्र : बी० आई० एस० एन० कम्पनीके एजेंटगणको

[रंगून]
मार्च १९, १९१५

एजेंटगण,
ब्रिटिश इंडिया स्टीम नेवीगेशन कम्पनी
महाशयो,

मैं श्रीमती गांधी तथा पाँच अन्य लोगोंके साथ 'लंका' नामक जहाजसे डेक श्रेणीमें कलकत्तेसे रंगून आ रहा था। वह जहाज कल यहाँ पहुँचा।[1] पिछले कुछ दिनोंसे मैं डेक श्रेणीमें ही यात्रा करता आ रहा हूँ। मुझे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि इस जहाजपर डेकमें यात्रा करनेवाले यात्रियोंके लिए की गई व्यवस्था जितनी अधिक शोचनीय है उतनी मैंने आजतक अन्य किसी जहाजपर नहीं देखी। डेकपर बहुत ज्यादा भीड़ थी, जिससे लोगोंको बड़ी असुविधा हो रही थी। जितने मुसाफिरोंको डेकके टिकट दिये गये थे, उसमें उन सबके बैठनेके लिए भी पर्याप्त स्थान नहीं था। मेरे साथवाले लोगोंको रात्रिके समय पैर फैलाने लायक स्थान मिल गया, सो भी तब जब अन्य अनेक यात्री हम लोगोंके आरामकी चिन्ता कर रहे थे। मैंने अनेक यात्रियोंको यत्र-तत्र जैसे-तैसे सिमटे-सिकुड़े पड़े देखा। शौचालय बहुत ही ज्यादा गन्दे थे। बैठनेके स्थानों और दरवाजोंके बीचके फर्शको लोगोंने पेशाबखाना बना रखा था। पेशाबके बहनेके लिए कोई नाली नहीं दीख पड़ रही थी। इसलिए यात्रियोंके सामने बराबर पेशाब जमा रहता था। शौचालयोंकी दीवारें अत्यन्त गंदी और चिपचिपी थीं। दरवाजोंमें चटकनियाँ न थीं। और जो एकमात्र स्नानघर मेरी नजरमें आया, उसे भी यात्री पेशाबघरकी तरह काममें ले रहे थे।

१. १९१५ की डायरीके अनुसार १७ तारीखको। यही तारीख कम्पनीके उस पत्रसे भी ज्ञात होती है जिसे कम्पनीने २० मार्च १९१५ को गांधीजीके पत्रकी प्राप्तिको स्वीकार करते हुए तथा जहाजके शौचालयोंकी हालतके बारेमें जाँच करनेका वचन देते हुए लिखा था (एस० एन० ६१६८)।

यात्री लोग जहाँ चाहे थूक दिया करते थे। जिस डेकपर वे लोग थे उसके फर्शको कभी धोया नहीं जाता था।

मुझे यक़ीन है, आपकी-जैसी प्रसिद्ध कम्पनी यह नहीं चाहती कि उसके डेक-श्रेणीके मुसाफिरोंके साथ उपर्युक्त ढंगका व्यवहार किया जाये। आपसे निवेदन है कि इस पत्रको उचित कार्रवाईके लिए सम्बन्धित विभागको भेज देनेकी कृपा करें।

अगले सप्ताह मेरे कलकत्ते लौटनेकी सम्भावना है। क्या मैं आशा करूँ कि उस अवसरपर मुझे और मेरे साथियोंके अलावा अन्य यात्रियोंको भी स्वच्छता सम्बन्धी वे सामान्य सुविधाएँ मिल सकेंगी जो हर इन्सानको मिलनी चाहिए।

आपका विश्वस्त,

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० ६१६७) की फोटो-नकलसे।

४७. रंगूनमें भेंट

[मार्च २२, १९१५ से पूर्व]

रंगूनसे एक संवाददाता २२ मार्चकी तारीख देकर लिखता है:

जब मैंने श्री गांधीसे एक स्थानीय समाचारपत्रके लिए मुलाकात देनेको कहा तब उन्होंने इस सम्बन्धमें कुछ भी सुननेसे इन्कार कर दिया। उन्होंने कहा कि मैं दक्षिण आफ्रिकासे अभी हाल ही में लौटा हूँ। भारतकी समस्याओंपर जितने अध्ययनकी जरूरत है, उतना मैं नहीं कर पाया हूँ। इसलिए मुझसे यह आशा नहीं की जानी चाहिए कि भारतीय मामलोंके बारेमें मैं थोड़े भी अधिकारके साथ कुछ कह सकूँगा। फिलहाल मैं स्वर्गीय श्री गोखलेके आदेशानुसार देशकी समस्याओंके अध्ययनमें लगा हुआ हूँ। मैं अपना यह अध्ययन समाप्त कर लेनेके पश्चात् ही "मुलाकात देनेकी स्थिति" में होऊँगा — उससे पूर्व नहीं।

किन्तु, मैंने उन्हें विश्वास दिलाया कि मैं सामाजिक विषयोंके सम्बन्धमें उनके विचार नहीं जानना चाहता। मैंने उन्हें बताया कि मैं एक तमिल-समाचारपत्रका प्रतिनिधि हूँ; मैं स्वयं एक तमिल हूँ और मैं आपसे केवल इतना ही जानना चाहता हूँ कि तमिल-समाजके लोगोंके बारेमें, जिनके सम्पर्कमें आप दक्षिण आफ्रिकामें बहुधा आये होंगे, आपके क्या विचार हैं। यह सुननेके बाद उन्हें बड़ी राहत-सी मिली, और उन्होंने बिना रुके किसी ऐसे व्यक्तिकी भाँति, जिसने पहलेसे ही अन्तिम रूपसे तय कर रखा हो कि उसे उस विषयमें क्या कहना है, तमिल लोगोंका गुण-गान प्रारम्भ कर दिया।

उन्होंने कहा कि तमिल लोगोंने दक्षिण आफ्रिकामें जो उत्तम कार्य किया है, उसका तो मैं विस्तृत विवरण प्रस्तुत कर सकता हूँ। सत्याग्रह संघर्षके दौरान मुझे सबसे अधिक सहायता तमिल लोगोंसे ही मिली। यों तो भारतीय समाजके सभी वर्गोंने मेरा बहुत

हाथ बँटाया था, परन्तु तमिल लोगोंने विशेष रूपसे। उन लोगोंके बीच किसी भी व्यक्तिके लिए इस सामाजिक उद्देश्यकी खातिर कमसे-कम एक बार जेल न जाना लज्जाका विषय माना जाता था। यह बात और किसी जातिके लोगोंके बारेमें नहीं कही जा सकती, परन्तु तमिल लोगोंके विषयमें तो यह सोलहों आने सच है। मैं प्रारम्भसे ही उनका प्रशंसक बन बैठा। और बादमें तो वे मेरी नजरोंमें उठते ही गये। उन्होंने कहा :

मेरा खयाल है कि तमिल-समाजके लोगोंसे मेरा जितना साम्य है, उतना अन्य किसी भी समाजके लोगोंसे नहीं।

इसके अनन्तर मैंने गांधीजीसे पूछा कि क्या बर्माकी यात्रा करनेमें आपका कोई प्रच्छन्न उद्देश्य था . . .। उन्होंने संक्षिप्त-सा उत्तर दिया :
मेरा कार्यक्षेत्र भारत है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ३०–३–१९१५

४८. पत्र : जमनादास गांधीको

चैत्र सुदी १२ [मार्च २८, १९१५][1]

चि० जमनादास,

तुम्हारा पत्र मिला। आहारके सम्बन्धमें अपने अनुभव तो तुम कुछ समय बाद ही लिख सकोगे। धीरज रखनेसे बात बनेगी। आँखोंके लिए चश्मेकी आवश्यकता पड़नेकी सम्भावना रहती है; लेना है या नहीं, इसपर विचार करेंगे। स्तम्भ अचानक गिर गये इससे तो मुझे भी आश्चर्य है। यदि वे ही स्तम्भ हों जिनपर अमूल्य शिलालेख थे, तो यह बुरा हुआ। तुमने तो ठीक ही किया। अपनी शंकाका निवारण करवा कर उनको तोड़ा, यही उचित था। मुझे वह स्थान बताना। बात उसके बाद अधिक समझी जा सकेगी। मेरा खयाल है कि इमलीसे कमजोरी नहीं आती। अवश्य ही अधिक भोजन किया होगा।

फिक्शनका अर्थ है कल्पित बात। रामायण और महाभारतमें इतिहास कम और कल्पना अधिक है, इसमें सन्देह नहीं। ये दोनों ही धर्म-ग्रन्थ हैं। करोड़ों लोग उन्हें इतिहाससे अधिक महत्त्व देते हैं और यह उचित ही है। भरत जैसा रामका भाई भले ही न हुआ हो; किन्तु वैसे भरत भारतमें हुए हैं। तभी तो तुलसीदास उनकी कल्पना कर सके। जिन लोगोंमें रामायणमें वर्णित गुण हैं, भारतवर्ष उनकी वंदना करता है।

यदि सत्याग्रह करनेसे हमारी अबतककी मेहनत बेकार हो जाये और फीनिक्स उजड़ जाये तो हमें तनिक भी चिन्ता न करनी चाहिए। शान्तिके दिनोंमें खेती करो। अशान्तिमें भीख माँगो, मजदूरी करो या भूखे मरो। किया हुआ काम व्यर्थ नहीं जाता,

१. गांधीजी २६ मार्चको रंगूनसे रवाना हुए थे।

यह निरपवाद नियम है। अपने हृदयमें यह दृढ़ विश्वास रखो और फिर खेती करनेका अवसर आये तो खेती करो। न आये तो निश्चिंत रहो। खेती साध्य नहीं है, साधन है। स्थूल रूपमें कहें तो लोकसेवा साध्य है, सूक्ष्म रूपमें कहें तो मोक्ष साध्य है। दोनोंको सिद्ध करनेका साधन खेती है। यदि वह खेती साध्यकी प्राप्तिमें विघ्न रूप बन जाये तो उसे त्याग देना चाहिए।

क... जो छूट लेता है वह अनुचित है। फिर भी हमें ऐसे व्यक्तिको सहन करना चाहिए—यह मानकर कि वह स्वादका त्याग कर देगा। हमारा संग उसके लिए तो सत्संग ही है। हम उसके लिए जितनी सुविधा कर सकें उतनी कर देनी चाहिए। जो नियम क... के लिए रहे वह दूसरोंपर लागू न किया जाये। इसका अर्थ यह है कि इन मामलोंमें एक ही नियम न रखा जाये। क... [फिर] भी अति करे तो ठीक न होगा।

हम श्री गोखलेके कारण इस संस्थाको भी 'फीनिक्स' कहते जा रहे हैं। उनका कहना था कि अन्य लोग और वे स्वयं इस नामसे उसके उद्देश्योंको तुरन्त समझ सकेंगे। फीनिक्स संस्थाके जो उद्देश्य थे, उनमें से बहुतसे उद्देश्य यहाँकी संस्थाके भी हैं और चूँकि वे स्वयं फीनिक्सके उद्देश्योंको समझते थे, इसलिए उन्होंने [इसका भी] यह नाम रखा। हमें इस नामको सदाके लिए नहीं रखना है; हम जब स्थायी रूपसे टिक जायेंगे तो नाम खोजेंगे। मैं कपड़े संभालकर रखूँगा और तुम्हें दे दूँगा। किन्तु मैंने जिन कपड़ोंको पहन कर जीर्णशीर्ण कर दिया होगा वे तो बेकार हो गये होंगे। इसलिए अब तुम्हें छाँटना पड़ेगा। मुझे रंगूनमें अच्छे अनुभव हुए हैं।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती पत्रकी प्रतिलिपि (सी० डब्ल्यू० ५६८४) से।
सौजन्य: नारणदास गांधी

४९. भाषण: विद्यार्थी भवन, कलकत्तामें[1]

मार्च ३१, १९१५

श्री गांधीने बुधवारकी शामको विद्यार्थी भवन, कॉलेज स्क्वेयरमें माननीय श्री पी० सी० लायन्सकी अध्यक्षतामें आयोजित एक बड़ी सभामें भाषणके दौरान बताया कि देशके कुछ गुमराह युवकोंके अराजकतापूर्ण कामोंको देखते हुए दूसरे तरुणोंका क्या कर्त्तव्य है। मेरे गुरु स्वर्गीय श्री गोखलेका आदेश था कि मैं यहाँ रहनेकी अवधिमें

१. यह भाषण पहले "तरुण-बंगालको श्री गांधीकी सलाह" (मि० गांधीज एडवाइस टू यंग बेंगाल) के नामसे और फिर "अराजकता सम्बन्धी अपराधोंके बारेमें" (ऑन ऐनारकिकल क्राइम्ज) शीर्षकसे नटेसन द्वारा प्रकाशित **स्पीचेज़ ऐंड राइटिंग्ज़ ऑफ महात्मा गांधी** नामक पुस्तकमें प्रकाशित हुआ था।

अपने कानोंको तो खुला रखूं, परन्तु अपना मुंह बन्द ही रखूं; तथापि मैं इस सभामें भाषण देनेका लोभ संवरण नहीं कर सका। मैं और मेरे स्वर्गीय गुरु दोनोंकी यह मान्यता है कि विद्यार्थी-समाजके लिए राजनीतिका ज्ञान निषिद्ध नहीं होना चाहिए। मुझे इसका कोई कारण दिखाई नहीं देता कि विद्यार्थी राजनीतिका अध्ययन न करें और उसमें भाग न लें? मैं तो यहाँतक कहूँगा कि राजनीतिको धर्मसे अलग नहीं किया जाना चाहिए। आप और आपके शिक्षक, अध्यापक और इस सभाके सुयोग्य सभापति, सभी इस बातमें मुझसे सहमत होंगे कि यदि साहित्यिक शिक्षा दृढ़ चरित्रका निर्माण करनेमें समर्थ नहीं तो उसका कोई मूल्य नहीं है। क्या यह कहा जा सकता है कि इस देशके विद्यार्थी या नेता सर्वथा निर्भय हैं? यद्यपि मैं इस समय [राजनीतिक] निर्वासनकी अवधिमें हूँ, फिर भी इसपर बड़ी गम्भीरतापूर्वक विचार करता रहा हूँ। मैं जानता हूँ कि राजनैतिक डकैती या राजनैतिक हत्या क्या है? मैंने इस विषयपर शुद्ध और विनम्र भाव रखकर अत्यन्त सावधानीसे विचार किया है और मैं इस निर्णयपर पहुँचा हूँ कि निःसन्देह हमारे देशके विद्यार्थियोंमें से कुछके हृदयोंमें जोश है और अपनी मातृभूमिके लिए उनके दिलमें बड़ा प्रेम है। परन्तु वे नहीं जानते कि इस प्रेमकी सर्वोत्तम अभिव्यक्ति क्या है? मेरी समझमें कुछ युवक हीन साधनोंका सहारा इसलिए लेते हैं कि उन्हें ईश्वरका नहीं बल्कि मनुष्यका भय है। मैं यहाँ आपसे यह कहने आया हूँ कि यदि हम राजद्रोहको उचित मानते हैं तो ऐसा कहें, प्रकट रूपसे उसकी चर्चा करें और उसका परिणाम भोगें। यदि ऐसा आचरण किया जाये तो उससे वातावरण निर्मल होगा और किसी प्रकारके छलका सन्देह भी दूर हो जायेगा। यदि विद्यार्थी, जिनपर भारतकी ही नहीं, बल्कि साम्राज्यकी आशाएँ केन्द्रित हैं, ईश्वरके भयसे नहीं बल्कि मनुष्यके भयसे, अधिकारियों अर्थात् सरकार, चाहे उसका प्रतिनिधित्व ब्रिटिश करते हों चाहे कोई देशी संस्था — के भयसे काम करेंगे तो इसका परिणाम देशके लिए विनाशकारी सिद्ध होगा। आपको परिणामकी परवाह किये बिना निष्पक्ष भावसे विचार करनेके लिए तैयार रहना चाहिए। जो डकैतियों और हत्याओंकी शरण ले रहे हैं, वे नौजवान गुमराह हैं और आपको उनसे कोई सम्बन्ध नहीं रखना चाहिए। आपको चाहिए कि आप उन लोगोंको अपना और अपने देशका शत्रु समझें। परन्तु मैं एक क्षणके लिए भी यह नहीं कहूँगा कि आप उन लोगोंसे घृणा करें। मैं सरकारमें विश्वास नहीं करता, मेरी चले तो कोई सरकार न रहे। मेरा विश्वास है कि वही सरकार सर्वोत्तम है जो कमसे-कम शासन करती है। मेरे व्यक्तिगत विचार कुछ भी क्यों न हों, इतना तो मैं जोर देकर कहूँगा कि डकैतियों और हत्याओंका सहारा लेनेवाले गुमराह जोशका कोई अच्छा फल नहीं हो सकता। ये डकैतियाँ और हत्याएँ भारतके लिए सर्वथा नई चीज हैं। यहाँ इनकी जड़ें नहीं जम सकतीं और ये चीजें यहाँ स्थायी नहीं बन सकतीं। इतिहाससे सिद्ध होता है कि हत्याओंसे कोई लाभ नहीं होता। इस देशका धर्म — हिन्दू धर्म है। हिंसासे अर्थात् पशुओं तकके प्राण लेनेसे

बचना। मेरा विश्वास है कि यही सिद्धान्त सब धर्मोंका मूल सिद्धान्त है। हिन्दू-धर्मके अनुसार बुरा करनेवालेसे भी घृणा नहीं करनी चाहिए; वह कहता है किसीको बुरा करनेवालेकी भी हत्या करनेका अधिकार नहीं है। पश्चिममें ऐसी हत्याएँ रूढ़ हैं; मैं आपको इन पाश्चात्य ढंगों और बुराइयोंके प्रति सचेत करना चाहता हूँ। पाश्चात्य जगत्‌में उनका क्या प्रभाव हुआ है? यदि नौजवान उनका अनुकरण करते हैं और यह मानते हैं कि इससे भारतको थोड़ा-भी लाभ पहुँच सकता है तो यह सर्वथा उनकी भूल है। यद्यपि मैं भली प्रकार जानता हूँ कि अंग्रेजी शासनमें सुधारकी बहुत गुंजाइश है, फिर भी मैं इस बहसमें नहीं पड़ूँगा कि भारतके लिए ब्रिटिश सरकार अच्छी है या पहले की सरकारें अच्छी थीं।

परन्तु मैं अपने नौजवान दोस्तोंको सलाह दूँगा कि वे निर्भय और सच्चे बनें तथा धर्मके सिद्धान्तोंका अनुसरण करें। यदि उनके पास देशके लिए कोई कार्यक्रम है तो उन्हें चाहिए कि उसे खुले आम जनताके सामने रखें। जो नौजवान यहाँ उपस्थित हैं, उनसे इस अपीलके साथ मैं अपना भाषण समाप्त करता हूँ कि वे धार्मिक बनें और धर्म और नैतिकताकी भावनासे परिचालित हों। यदि आप मरनेके लिए तैयार हैं तो मैं भी आपके साथ मरनेके लिए तैयार हूँ। मैं आपका मार्ग-दर्शन स्वीकार करनेके लिए तैयार हूँ। परन्तु यदि आप देशको आतंकित करना चाहते हैं तो मैं आपके विरुद्ध खड़ा होऊँगा।

इसके बाद अध्यक्षने अपने प्रवाहपूर्ण भाषणमें गांधीजीके व्याख्यानकी प्रशंसा की और यह सुझाव दिया कि देशसे विप्लवके रोगको दूर करनेके लिए नवयुवकोंको एक दलका संगठन करना चाहिए। उन्होंने श्री गांधीको धन्यवाद दिया।

श्री गांधीने इसका उपयुक्त उत्तर देते हुए विद्यार्थी-समुदायसे कहा कि वे चाहें तो उनसे पत्र-व्यवहार करें। उन्होंने उनके पत्रोंका तुरन्त उत्तर देनेका वादा किया।

[अंग्रेजीसे]

अमृत बाजार पत्रिका, १-४-१९१५

सौजन्य: राष्ट्रीय पुस्तकालय, कलकत्ता

५०. गुरुकुल कांगड़ीमें दिये गये मानपत्रका उत्तर

अप्रैल ८, १९१५

श्री और श्रीमती गांधी कुम्भीपर्वके अवसरपर हरद्वार गये थे। ८ अप्रैलको वे गुरुकुल कांगड़ी गये। प्राध्यापक महेशचरणसिंहने ब्रह्मचारियोंके एक दलके साथ उनका स्वागत किया। इस अवसरपर उन्हें एक मानपत्र दिया गया, जिसे ब्रह्मचारी बुद्धदेवने पढ़ा।

श्री गांधीने मानपत्रका उत्तर देते हुए कहा:

मेरे प्रति महात्मा मुंशीरामजीका जो प्रेम है उसके लिए मैं उनका कृतज्ञ हूँ, मैं सिर्फ उनसे मिलनेके लिए ही हरद्वार आया हूँ, क्योंकि श्री ऐन्ड्रयूजने उनका नाम भारतके उन तीन महान् पुरुषोंमें गिनाया था जिनसे मुझे मिलना चाहिए।

श्री गांधीजीने कहा कि ब्रह्मचारियोंने अपने आफ्रिकावासी भारतीय भाइयोंके सहायतार्थ जो धन भेजा है उसके लिए मैं उन्हें धन्यवाद देता हूँ और गुरुकुलमें फीनिक्सवासी छात्रोंके प्रति प्रेम और स्नेहका व्यवहार किये जानेपर ब्रह्मचारियोंका और महात्माजी [मुंशीराम] का विशेष आभार मानता हूँ। मुझे अपनी गुरुकुलकी तीर्थ-यात्रासे बहुत सन्तोष हुआ है।

उन्होंने अपने भाषणमें आगे कहा:

महात्माजीने मुझे अपने एक पत्रमें 'भाई' कहा है, इसका मुझे गर्व है। कृपया आप लोग यही प्रार्थना करें कि मैं उनका भाई बननेके योग्य हो सकूँ। मैं २८ वर्ष बाद अपने देशमें आया हूँ, मैं कोई सलाह नहीं दे सकता। मैं तो मार्गदर्शन प्राप्त करनेके लिए आया हूँ। और जो भी मातृभूमिकी सेवामें लगा है ऐसे प्रत्येक व्यक्तिके सम्मुख झुकनेके लिए तैयार हूँ। मैं अपने देशकी सेवामें अपने प्राण देनेके लिए तैयार हूँ। अब मैं विदेश नहीं जाऊँगा। मेरे एक भाई चल बसे हैं।[1] मैं चाहता हूँ कोई मेरा मार्गदर्शन करे। मुझे आशा है कि महात्माजी उनका स्थान ले लेंगे और मुझे भाई मानेंगे।

उन्होंने ब्रह्मचारियोंसे कहा:

आपका जो उद्देश्य है वही हम सबका भी है। ईश्वर हमारे पवित्र कार्यको सफल करे।

महात्मा मुंशीरामजीने उनका स्वागत करते हुए कहा: मुझे यह सुनकर प्रसन्नता हुई है कि आप अब भारतमें रहेंगे और अन्य लोगोंकी भाँति बाहर- रहकर भारतकी सेवा करनेके लिए विदेश नहीं जायेंगे। मुझे आशा है कि श्री गांधी भारतके लिए ज्योति-स्तम्भ बन जायेंगे।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १२-४-१९१५

१. लक्ष्मीदास गांधी।

५१. भाषण: मद्रास पहुँचनेपर

अप्रैल १७, १९१५

श्री और श्रीमती गांधी पिछले शनिवारकी शाम दिल्ली एक्सप्रेसमें हरिद्वारसे मद्रास आये। . . . लोगोंको थोड़ी निराशा हुई। जब गाड़ी आई तो उन्होंने पहले और दूसरे दर्जेके सब डिब्बे देख डाले; किन्तु श्री गांधी उन्हें दिखाई नहीं दिये। सबने सोचा कि शायद वे आये ही नहीं हैं। तभी उन्हें गार्डने बताया कि वे गाड़ीके एक पिछले डिब्बेमें हैं। बहुत देर तक खोजनेपर आखिरकार वे तीसरे दर्जेके एक डिब्बेमें बैठे मिल गये। श्री गांधी दुबले और कमजोर दिखाई दे रहे थे। वे एक ढीली-सी कमीज और पायजामा पहने थे जो चार दिनकी यात्रामें मैले हो गये थे। लोग लपककर उस डिब्बेकी ओर बढ़े, भीड़ इतनी ज्यादा थी कि वहाँ उपस्थित लगभग एक दर्जन पुलिसके सिपाही उसे सँभाल न सके। अन्तमें वे भीड़को उसकी मर्जी पर छोड़कर हट गये। . . . लोग जोर-जोरसे नारे लगा रहे थे: "गांधी दम्पती चिरजीवी हों", "हमारा वीर चिरजीवी हो", "वन्देमातरम्।" श्री गांधीने भीड़का अभिवादन किया। उसके बाद लोग उन्हें गाड़ीके पास ले गये। छात्र बड़ी संख्यामें आये थे। उन्होंने बग्घीमें से घोड़े खोल दिये और बग्घी खींचनेके लिए स्वयं आगे आ गये। वे बग्घीको खींचकर सुनकुराम चेट्टी स्ट्रीट स्थित मैसर्स नटेसन[1] ऐंड कं० की इमारतमें ले गये। रास्तेभर लोग उनका अभिवादन करते रहे इससे श्री और श्रीमती गांधी बग्घीमें खड़े रहे और हाथ जोड़कर लोगोंके अभिवादनका उत्तर देते रहे।

श्री गांधी जबतक मद्रासमें रहेंगे तबतक नटेसन कं० में ही ठहरेंगे। वहाँ पहुँचते ही वे फिर बग्घीमें खड़े हो गये और ऊँची स्पष्ट आवाजमें बोले: आपने मेरे प्रति जो प्रेम प्रकट किया है उसके लिए मैं आपका अत्यन्त आभारी हूँ। मैं चार दिन लगातार सफर करनेके बाद बहुत थक गया हूँ; इसीलिए अब इस समय आपसे छुट्टी लेना चाहता हूँ। किन्तु मैं जबतक यहाँ हूँ तबतक रोज दिनमें तीन और पाँच बजेके बीच आप मुझसे मिल सकते हैं और सार्वजनिक हितके प्रश्नोंपर बातचीत कर सकते हैं।

श्री गांधी और उनकी पत्नी मद्रासमें एक पखवाड़े तक ठहरेंगे। अधिकांश दक्षिण आफ्रिकी प्रवासी भारतीय जहाँके निवासी हैं श्री गांधी दक्षिणके उन स्थानोंमें जाना चाहते हैं; ताकि वे वहाँ उन सत्याग्रहियोंसे मिल सकें जो लौटकर भारतमें बस गये हैं।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १९-४-१९१५

१. मद्रासमें गांधीजी नटेसन एंड कं० के स्वामी, इंडियन रिव्यू के सम्पादक और भारतीय दक्षिण आफ्रिकी संघके मन्त्री श्री जी० ए० नटेसनके मेहमान थे।

५२. पत्र : लाजरसको

मद्रास
[अप्रैल १७, १९१५ के बाद][1]

प्रिय लाजरस,

आपका पत्र मिला। भारतीय राहत विधेयकको[2] ऐसी मजबूत नींवका काम देना चाहिए जिसपर एक मजबूत इमारत बनाई जा सके। वह इसी उद्देश्यसे बनाया भी गया था। मैं जब दक्षिण आफ्रिकासे चला था तब मैंने साफ चेतावनी दी थी[3] कि सरकार इसका दूसरा अर्थ लगा सकती है। ऐसे प्रत्येक मामलेमें हमारे पास — कानूनी और नैतिक — अपने अलग उपाय हैं। कानूनी उपायका आश्रय हम चाहे लें चाहे न लें। नैतिक उपायका आश्रय लेना सदैव हमारे हाथमें है और होना भी चाहिए और वह उपाय है सत्याग्रह। यदि प्रशासन समझौतेकी भावनाका पालन नहीं करता और कठिनाइयाँ पैदा करता है तो हमारे सामने अन्तिम उपाय सत्याग्रह ही है। मुझे आशा है कि आपमें से किसीने भी यह न सोच लिया होगा कि हमें सत्याग्रह कभी करना ही न पड़ेगा। यही आशा की जा सकती है कि सरकारने अपना रुख बदल दिया होगा और वह बिना सोचे संघर्षको पुनः आरम्भ करनेका निमन्त्रण न देगी। किन्तु यह अन्तिम और अचूक उपाय सदा हमारे हाथमें है और जब कभी आवश्यक हो उसे हम काममें ला सकते हैं। लेकिन यह जानना जरूरी है कि उसको कब काममें लाया जाये। सामान्यतः समझौतेके समय जिन मूल सिद्धान्तोंका निर्धारण किया गया था यदि उनका पालन न किया जाये तो सत्याग्रह करनेके लिए पर्याप्त कारण हैं। आपको राहत [विधेयक] का मुख्य उद्देश्य समझ लेना चाहिए। मैं मुख्य मुद्दे फिरसे दुहरा दूं। पहला तीन पौंडी करको हटाना, दूसरा, भारतीय पत्नियोंके दर्जेको बहाल करना और तीसरा, एशियाई अधिनियमको रद करना, मेरा खयाल है कि ये तीनों बातें लगभग सदाके लिए मनवा ली गई हैं। वर्तमान कानूनोंके न्याय-सम्मत प्रशासनकी बात उस पत्र-व्यवहारमें[4] आ जाती है जो विधेयक पास होनेके तुरन्त बाद प्रकाशित किया गया था और स्वभावतः इस बारेमें ही अनिश्चितता थी। उचित प्रशासनका हमारा अर्थ सरकारके अर्थसे बिलकुल भिन्न हो सकता है और सरकार हमारे दृष्टिकोणको बराबर ठीक समझती रहे इसके लिए हर वक्त चौकस रहना जरूरी है।

१. गांधीजी मद्रास १७ अप्रैल १९१५ को पहुँचे थे, दक्षिण आफ्रिकासे आनेके बाद वे वहाँ पहली बार गये थे।

२. देखिए खण्ड १२, परिशिष्ट २५।

३. देखिए खण्ड १२।

४. देखिए खण्ड १२।

क्रिस्टोफरके सम्बन्धमें आप मुझसे क्या चाहते हैं, वह मेरे ध्यानमें है। मैं जो कुछ भी कर सका, करूँगा। मैं अभी कहीं नहीं टिक पाया हूँ। घूमते-फिरते अभी मद्रास आ पहुँचा हूँ। जैसे ही कहीं टिका, जो हो सका, करूँगा। मैं यह समझता हूँ कि यदि छात्रवृत्ति मिल गई तो वह भारतमें पढ़ेगा।

'इंडियन ओपिनियन' के बारेमें आपका सुझाव मिला। कार्यकर्त्ताओंकी कमी उसके क्षेत्रको संकुचित कर देती है। आप जानते ही हैं कि शक्ति-भर प्रयत्न करनेपर भी हमें निस्स्वार्थ कार्यकर्त्ता काफी नहीं मिल सके हैं। मुझे अब भी यही लगता है कि पत्रको किसी अन्य आधारपर नहीं चलाया जा सकता। सामर्थ्यके अनुसार रुपया देनेकी प्रणाली जारी करते ही इसकी समस्त उपयोगिता चली जायेगी। कुछ भी हो यह फीनिक्सका आदर्श नहीं है। आपको उपनिवेशमें उत्पन्न कुछ थोड़ेसे ऐसे युवक इकट्ठे करने चाहिए जो फलका विचार किये बिना सार्वजनिक कार्यमें लग जायें और आप 'इंडियन ओपिनियन' को इससे अधिक शक्तिशाली बना सकते हैं और तब आपका जैसा सुझाव है उस विशिष्ट अर्थमें आप उससे उपनिवेशोंमें उत्पन्न भारतीयोंकी सेवा कर सकते हैं।

स्वस्थ शरीरमें स्वस्थ मन होता है, यह कहावत आखिर एक सामान्य उक्ति ही है; किन्तु इसकी व्याख्या कई मर्यादाओंको ध्यानमें रखकर की जानी चाहिए। प्रसिद्ध सैंडोको ही लीजिए। उसके शरीरको अत्यन्त स्वस्थ मानेंगे। किन्तु मुझे निश्चय नहीं है कि उसका मन भी स्वस्थ ही होगा। मेरी दृष्टिमें स्वस्थ शरीर वह है जो आत्माका अंकुश मानता है और उसकी सेवाके साधनके रूपमें सदा तैयार रहता है। मेरी रायमें ऐसे शरीर फुटबालके मैदानमें नहीं बनाये जाते। वे तो अनाजके खेतों और फार्मोंमें बनाये जाते हैं। मेरा आपसे अनुरोध है कि आप इस सम्बन्धमें विचार करें और आपको मैंने जो कुछ कहा है उसकी सचाईके समर्थनमें असंख्य उदाहरण मिल जायेंगे। हमारे उपनिवेशोंमें उत्पन्न भारतीय फुटबाल और क्रिकेटके इस उन्मादके प्रवाहमें बह जाते हैं। कुछ विशेष स्थितियोंमें इन खेलोंका अपना महत्त्व हो सकता है। किन्तु मुझे निश्चय है कि हमारे लिए, जो अभी इतने गिरे हुए हैं, उनकी कोई गुंजाइश नहीं है। आप इस सीधी-सादी बातपर विचार क्यों नहीं करते कि मानव जातिका बहुत बड़ा भाग जिनके शरीर और मस्तिष्क शक्तिशाली हैं, सिर्फ किसान ही हैं, वे इन खेलोंको जानते तक नहीं और वे ही संसारमें सर्वश्रेष्ठ हैं। उनके बिना आप और मैं जी भी नहीं सकते। दूसरी ओर सुख-समृद्धिके लिए उनको हमारी कोई आवश्यकता नहीं है।

मेरी पत्नीका और मेरा स्वास्थ्य अच्छा है। हम लगातार यात्रा कर रहे हैं, यदि ऐसा न होता तो हमारा स्वास्थ्य और भी अच्छा होता। किन्तु भारतके पवित्र वातावरणका वही प्रभाव हुआ है जिसकी हमें आशा थी। चूँकि भारतके वातावरणमें एक खास बात है, इसीलिए मैंने अपने उपनिवेशोंमें उत्पन्न मित्रोंको सानुरोध यह सुझाव दिया था कि वे भारत आना अपना कर्त्तव्य समझें; किन्तु वे उन भारतीयोंके रूपमें आयें जो विशुद्ध भारतीय जीवन बिताना चाहते हैं, अर्ध-यूरोपीय और अर्ध-भारतीय जीवन नहीं।

मेरा खयाल है कि आपने जो भी प्रश्न पूछे थे, उन सबका उत्तर मैंने दे दिया है। फीनिक्सके लोगोंसे अच्छा और सहिष्णुताका व्यवहार कीजिए। वे भरसक प्रयत्न कर रहे हैं, अपना सर्वस्व दे रहे हैं और मातृभूमिकी सेवा करना चाहते हैं। इसमें उनकी सहायता कीजिए। जरूरत होने पर उनकी आलोचना भी कीजिए, किन्तु आपकी आलोचनामें आश्रमके प्रति प्रेमका पुट रहे। कृपया पुराने मित्रोंको मेरा नमस्कार कहिएगा। मैं आपको और ब्रायनको न भूलूँगा जिनसे मुझे इतना प्रेम मिला है। आप जब कभी मुझे अपने लड़कोंको मेरी शर्तों पर देनेको तैयार हो जायेंगे, मैं उनका उत्तरदायित्व लेनेको तैयार रहूँगा। आप जितनी जल्दी निर्णय कर लें उतना ही अच्छा है, अन्यथा उनके लिए बहुत विलम्ब हो जायेगा।

हृदयसे आपका,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ६१२०) की फोटो-नकलसे।

५३. भाषण : गोखले-क्लब, मद्रासमें

अप्रैल २०, १९१५

श्री गांधीने कल सायंकाल लगभग सवा घंटा भारत सेवक समाज (सर्वेट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी)के भवनमें गोखले-क्लबके सदस्योंसे बातचीत करनेमें बिताया। नवयुवकोंका यह क्लब कोई छः मास पूर्व अनुभवी वृद्धजनोंके मार्गदर्शनमें सार्वजनिक प्रश्नोंके अध्ययनके लिए संगठित किया गया था।

श्री गांधीने कहा कि मैंने फीनिक्स आश्रमकी योजना[1] मातृभूमिकी सेवाके लिए लोगोंको शिक्षित करनेके उद्देश्यसे बनाई है। आश्रममें चरित्र-निर्माणकी ओर विशेष ध्यान दिया जायेगा और उसमें कई देशी भाषाएँ सिखाई जायेंगी। मेरी रायमें, ब्रह्मचर्यका पालन समस्त राष्ट्रीय सेवकोंके लिए आवश्यक है और यह शर्त आश्रममें प्रवेश पानेके लिए आवश्यक होगी। आश्रममें प्रत्येक व्यक्तिके लिए शारीरिक श्रम अनिवार्य होगा। सबको उसकी शिक्षा भी दी जायेगी, विशेषकर खेती-सम्बन्धी कामोंकी। आश्रममें विवाहित और अविवाहित स्त्री और पुरुष दोनों ही प्रवेश पा सकते हैं। एक प्रश्नकर्त्ताने पूछा कि क्या वे ब्रह्मचर्य और अपरिग्रहको ऐसे आदर्श मानते हैं जिसका सारा देश अनुसरण करे। श्री गांधीने कहा : मैं निस्संकोच देशसे इनका अनुसरण करनेके लिए कहता हूँ; किन्तु मैं यह भी मानता हूँ कि समस्त राष्ट्रके लिए उनपर नैतिक रूपसे आचरण करना असम्भव है। जीवनमें आचरणके लिए मैं दो सिद्धांतोंको सर्वोपरि मानता हूँ —— सत्य-प्रेम और अहिंसा। अहिंसाका अर्थ है किसी भी प्राणीको

१. देखिए "भेंट : मद्रास मेलके प्रतिनिधिको", २२-४-१९१५।

शारीरिक या मानसिक कष्ट न देना। जहाँतक राजनीतिमें सत्याग्रहके प्रयोगका सम्बन्ध है, मैं आप लोगोंको बता देना चाहता हूँ कि सत्याग्रहके शस्त्रको काममें लाना बहुत कठिन है और उसका प्रयोग अन्तिम साधनके रूपमें एवं राष्ट्रीय सम्मान जैसे अत्यन्त प्रिय हितोंके रक्षार्थ ही किया जाना चाहिए। मैं सब तरहके यन्त्रोंका उपयोग करनेके विरुद्ध हूँ और केवल हाथकी बनी चीजोंका ही उपयोग करना चाहता हूँ।

सभा जब विसर्जित हुई तब प्रत्येक उपस्थित व्यक्ति यह अनुभव कर रहा था कि वह उनके प्रेरणाप्रद भाषणसे शुद्ध हो गया है।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २१-४-१९१५

५४. भाषण: मद्रासके स्वागत-समारोहमें[1]

अप्रैल २१, १९१५

जब श्री गांधी बोलनेके लिए उठे तो लोगोंने तीव्र हर्ष-ध्वनिसे उनका स्वागत किया।

सभापति महोदय और मित्रो, यहाँ उपस्थित लोगोंने, मद्रास शहरने, और मैं कहना चाहता हूँ कि इस प्रान्तने हम लोगोंका जो इतना आदर किया है और इस प्रान्तने—जो प्रबुद्ध है, पिछड़ा हुआ नहीं—(हर्ष-ध्वनि) हम लोगोंपर स्नेहकी जो वर्षा की है उसके लिए मेरी पत्नी और मैं दोनों ही आप लोगोंके अत्यन्त अनुगृहीत हैं। यदि हम लोग किसी बातके अधिकारी हैं—जैसा कि इस सुन्दर मानपत्रमें कहा गया है—तो मैं उसे केवल अपने उन गुरुदेवके चरणोंमें अर्पित कर सकता हूँ जिनकी प्रेरणासे मैं देशसे दूर रहकर दक्षिण आफ्रिकामें निरन्तर काम करता रहा हूँ। इस मानपत्रके उन भावोंको जिनमें मेरे विषयमें भविष्यवाणी-सी की गई है, मैं इस बड़ी सभाके आशीर्वाद और अपनी इस प्रार्थनाके रूपमें ग्रहण करता हूँ कि ईश्वर मुझे और मेरी पत्नीको इतना बल, ऐसी आकांक्षा और जीवन दे कि इस पवित्र भूमिमें रहते हुए हम लोग जो कुछ पायें उसे मातृभूमिकी सेवामें अर्पित कर दें (हर्ष-ध्वनि)। हमारा मद्रास आना कोई आश्चर्यकी बात नहीं है। कदाचित् मेरे मित्र श्री नटेसन आप लोगोंसे कहें कि हमको यहाँ बहुत पहले आना चाहिए था और हम लोगोंने मद्रासकी उपेक्षा की है। हमने उपेक्षा नहीं की। हम जानते हैं कि आपके दिलोंमें हमारे लिए स्नेह है; और इसलिए हम आश्वस्त थे कि दूसरे प्रान्तों और नगरोंमें जानेसे पहले यदि हम मद्रास न गये

१. मद्रासकी "इंडियन साउथ आफ्रिकन लीग"ने अप्रैल २१, १९१५ को गांधीजीके स्वागतार्थ एक समारोहका आयोजन किया था, डा० सर सुब्रह्मण्य अय्यरने समारोहकी अध्यक्षता की। श्री जी० ए० नटेसनने मानपत्र पढ़कर सुनाया। समारोहमें श्रीमती एनी बेसेंट, न्यायमूर्ति तैयबजी और श्रीनिवास शास्त्री आदि भी उपस्थित थे।

तो इसे लेकर आप किसी गलतफहमीमें नहीं पड़ेंगे। १८९६ में मैंने श्री गोखलेको अपना राजनीतिक गुरु[1] माना (हर्ष-ध्वनि)। उसी वर्ष मैंने यह देखा कि मद्रासके लोगोंमें जितनी गहरी धार्मिक भावना है, दूसरे प्रान्तोंके लोगोंमें वैसी नहीं है। मैं आप लोगोंके सामने पहले-पहल १८९६ में एक हारी बाजी[2] लेकर उपस्थित हुआ था। मैं तब आपके लिए एक अजनबी था, मगर मैंने पाया कि मद्रासमें या इस प्रान्तमें अच्छे या बुरेको परखनेकी सहज योग्यता है। उस समय आप लोगोंने उस गम्भीर स्थितिको, जिसे मैं सारे भारतमें अपने देशवासियोंको समझाना चाहता था, पूरी तरह समझा (हर्ष-ध्वनि), और १८९६ में ही दक्षिण आफ्रिका लौट जानेपर वहाँके अनुभवोंसे भी मेरी इस धारणाकी यथेष्ट पुष्टि हुई। मेरी समझमें दक्षिण आफ्रिकामें मैंने जो थोड़ा-बहुत काम किया उसके महत्त्वका वर्णन इस मानपत्रको तैयार करनेवाले लोगोंने कुछ-ज्यादा बढ़ा-चढ़ाकर किया है। ('नहीं, नहीं' की आवाजें)। मैंने अनेक अवसरोंपर कहा है कि भारतके मनसे उस महान् राजनीतिज्ञ महात्मा गोखलेका जादू अभी तक नहीं गया (हर्ष-ध्वनि)। उन्होंने मेरी प्रशंसामें जो कहा उसको आपने बिलकुल सच मान लिया। मुझे उस प्रशंसाने बड़ी विकट स्थितिमें डाल दिया है; विकट इसलिए कहता हूँ कि भविष्यमें देशके कामके विषयमें आपने मुझसे या मेरी पत्नीसे जो आशाएँ बाँध ली हैं, कौन जाने हम उन्हें पूरा कर सकेंगे या नहीं? किन्तु महोदय, आपने इस मानपत्रमें हमारे लिए जिन शब्दोंका प्रयोग किया है यदि हम उसके दसवें भागके भी योग्य हैं, तो फिर आप उन लोगोंके लिए किन शब्दोंका प्रयोग करेंगे जिन्होंने दक्षिण आफ्रिकामें अपने प्राण देकर वहाँ हमारे पीड़ित देशवासियोंके प्रति अपना कर्त्तव्य पूरा कर दिया। सत्रह-अठारह वर्षके बालक नागप्पन[3] और नारायण स्वामीके[4] लिए आप किस भाषाका प्रयोग करेंगे, जिन्होंने सहज विश्वासके साथ देशकी मानरक्षाके लिए सभी यातनाएँ, कठि-नाइयाँ और अपमान सहे (हर्ष-ध्वनि)। फिर आप, सत्रह वर्षकी उस प्यारी बालिका वलि-अम्माके[5] लिए कैसी भाषाका प्रयोग करेंगे जो मैरित्सबर्ग जेलसे रिहा होनेके समय ज्वरसे पीड़ित होनेके कारण हड्डियोंका ढाँचा-मात्र रह गई थी और उसी ज्वरसे पीड़ित होकर एक महीनेके अन्दर चल बसी (शर्म, शर्मकी आवाजें)। जो परमात्मा हम सब लोगोंपर शासन करता है उसने इस महान कार्यके लिए हम भारतवासियोंमें से केवल मद्रासियोंको ही चुना। क्या आप जानते हैं कि जोहानिसबर्गके उस बड़े शहरमें मद्रासी लोग ऐसे हर मद्रासीको नीची निगाहसे देखते हैं जो उस भीषण संघर्षमें, जिसमें आठ वर्षोंसे आपके

१. मूलमें "राज्यगुरु" शब्दका प्रयोग किया गया है।

२. देखिए खण्ड २, पृष्ठ १००–१३३।

३. बहुत अशक्त अवस्थामें जेलसे छूटनेपर ६–७–१९०९ को जिसकी मृत्यु हो गई थी। देखिए खण्ड ९, पृष्ठ २९८ और **दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रहका इतिहास**, खण्ड २, अध्याय ७।

४. सत्याग्रह संघर्षमें निर्वासनके कष्टोंसे अक्तूबर १६, १९१० को जिसका देहान्त हुआ। देखिए, खण्ड १०, पृष्ठ ३६३–६४, ४०१ और **दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रहका इतिहास**, खण्ड २, अध्याय ७।

५. देखिए खण्ड १२, पृष्ठ ३५१–५२।

दक्षिण आफ्रिकावासी देशभाई फँसे थे, एक-दो बार जेल न हो आया हो। आपने कहा है कि इन महान् पुरुषों और स्त्रियोंको मैंने प्रेरणा दी, पर मैं यह बात नहीं मान सकता; बल्कि सच पूछिए तो किसी पुरस्कारकी आशा किये बिना, आस्थाके साथ काम करनेवाले ये सीधे-सादे लोग ही मुझे प्रेरित करते रहे। इन्होंने ही मुझे अपने आदर्शसे हटने नहीं दिया। और मैंने जो-कुछ भी किया वह मुझे इनके महान् बलिदान, दृढ़ विश्वास और ईश्वरके प्रति गहरी आस्थासे विवश होकर करना पड़ा (हर्ष-ध्वनि)। यह मेरा और मेरी पत्नीका दुर्भाग्य है कि हमें ऐसी परिस्थितिमें काम करना पड़ा जिससे हमें अधिक प्रसिद्धि मिलती रही और हम लोग जो थोड़ा-सा काम कर सके उसे आप लोगोंने बहुत ज्यादा बढ़ा दिया है ('नहीं, नहीं' की आवाजें)। यदि हम जैसे सांसारिक प्राणियोंके बारेमें, जो उसी मिट्टीसे बने हैं जिससे आप बने हैं, आपको यह खयाल हो कि हम चाहे भारतमें हों चाहे दक्षिण आफ्रिकामें, पारस्परिक सहयोगके बिना कुछ भी कर सकते हैं तो आप और हम दोनों ही, कोई काम न कर पायेंगे। और हमारे सारे प्रयत्न निष्फल होंगे। मैं यह कदापि नहीं मान सकता कि हमने प्रेरणा दी। प्रेरणा तो उन लोगोंने दी। हम तो केवल अपनेको अधिकारी माननेवाले वर्ग और उस वर्गके बीच जिसे कष्ट-निवारणकी इतनी आवश्यकता थी — दुभाषिएका काम करते रहे। हम उन दोनों पक्षोंके बीच एक कड़ीके सिवा और कुछ नहीं थे। चूंकि मेरे माता-पिताने मुझे शिक्षा दी थी, मेरा यह कर्त्तव्य था कि हमपर जो बीत रही थी उसका स्वरूप इन सीधे-सादे लोगोंके सामने रखूं; और वे लोग परीक्षामें पूरे उतरे। उन्होंने भारतमें जन्म लेनेके महत्त्वको समझा, धार्मिक बलकी सामर्थ्यको पहचाना, और उन्होंने-ही हमें प्रेरणा दी और अब भी हमें प्रेरणा उन्हींसे लेनी है। उन्होंने अपना कर्त्तव्य पूरा किया और हम सबके लिए अपने प्राण न्योछावर कर दिये। वे तीनों तो सदाके लिए चले गये पर हम जीवित हैं; और कौन कह सकता है कि भविष्यमें किसी नये संकटका सामना होने पर हम कर्त्तव्य-पथसे विचलित न हो जायेंगे या हमारा मन ही न बदल जायेगा। उत्तर प्रदेशके एक पचहत्तर वर्षीय वृद्ध हरबतसिंहने[1] भी लोगोंका साथ दिया और दक्षिण आफ्रिकाकी जेलमें प्राण त्यागे। आप हमारा जो सम्मान करना चाहते हैं उसके अधिकारी तो वे हैं। बिना किसी विचारके स्नेहवश आपने जो हमारी प्रशंसाके पुल बाँध दिये हैं उनके अधिकारी यही युवक हैं। इस संघर्षमें भाग लेनेवाले सिर्फ हिन्दू ही नहीं पर मुसलमान, पारसी, ईसाई, सभी थे। भारतके प्रायः हर कोनेके लोग इस संघर्षमें शामिल हुए। उन्होंने हम सबके सामने जो संकट था उसे पहचाना, भारतीय होनेके अपने सौभाग्यको पहचाना; और यह उन्हींका दम था कि उन्होंने शस्त्रबलका सामना आत्मबलसे किया (जोरकी तालियाँ)।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २१–४–१९१५

१. देखिए "भाषण : बम्बईके सार्वजनिक स्वागत-समारोहमें", १२–१–१९१५।

५५. भेंट: 'मद्रास मेल'के प्रतिनिधिको[1]

अप्रैल २२, १९१५

कल इस पत्रके एक प्रतिनिधिने श्री गांधीसे भेंट की। दोनोंमें काफी देर तक तात्कालिक महत्त्वके बहुतसे मामलोंपर दिलचस्प बातचीत हुई। जिसे हम संक्षिप्त रूपमें नीचे उद्धृत कर रहे हैं।

क्योंकि दक्षिण आफ्रिकामें आपके कठिन परिश्रमके फलस्वरूप भारतीयोंकी स्थिति-का सन्तोषजनक हल निकल आया है, श्री गांधी, क्या आप यह बतानेकी कृपा करेंगे कि अब आपका कार्यक्रम क्या होगा?

इस वर्षके लिए जिसके तीन मास बीत भी चुके हैं, मुझे श्री गोखलेने यह निर्देश दिया था कि मैं देशका दौरा करूँ, लोगों और संस्थाओंको समझूं और कोई वास्तविक कार्य आरम्भ करनेसे पूर्व अपनी राय कायम करूँ। और अपने इस निरीक्षण कालमें मुझे सार्वजनिक सभाओंमें विवादास्पद विषयोंपर भाषण भी नहीं देने हैं। वर्ष बीत जानेपर मुझे निश्चित रूपसे मालूम हो जायेगा कि ऐसे प्रश्न कौन-कौनसे हैं जिनपर मैं ध्यान दे सकूंगा। किन्तु मेरे एक कामके बारेमें श्री गोखले और मैं दोनों सहमत थे, वह है उस संस्थाको जारी रखना, जिसे वे फीनिक्स आश्रमके नामसे पुकारते थे। यह नाम उन्होंने इसलिए दिया क्योंकि वे कुछ हद तक श्री कैलेनबैकके टॉल्स्टॉय फार्ममें और नेटालके उत्तरी तटपर स्थित एक छोटेसे स्थान फीनिक्समें इस प्रयोगको कार्यरूपमें चलते हुए देखकर आये थे। मैं आपको इस समय इसी प्रयोगके विषयमें बताने जा रहा हूँ। इस आश्रममें युवकों और स्त्रियों एवं बच्चोंको भी, मातृभूमिकी दीर्घकालीन सेवाके लिए शिक्षित किया जाता है। इस संस्थाकी यह विशेषता है कि इसमें प्रत्येक व्यक्तिके लिए किसी-न-किसी प्रकारका शारीरिक श्रम करना आवश्यक है। और चूंकि खेतीका काम सर्वोत्तम शारीरिक श्रम है, इसलिए प्रत्येक व्यक्तिसे दिनमें कुछ समयतक खेतमें काम करनेकी अपेक्षा की जाती है। हाथ-करघेका उद्योग आरम्भ करनेका भी विचार है। इस संस्थामें जो लोग हैं वे देशकी मुख्य भाषाएँ भी सीखेंगे, जिससे वे देशके विभिन्न भागोंमें लोगोंसे बिना-किसी कठिनाईके मिल-जुल सकें। आपसी बातचीत या पत्र-व्यवहारमें देशी भाषाओंका ही प्रयोग किया जायेगा। जहाँतक हो सकेगा अंग्रेजीका प्रयोग सिर्फ अंग्रेजोंसे और उन लोगोंसे जो भारतकी किसी भी मुख्य भाषाको नहीं समझते, व्यवहार करनेके लिए ही किया जायेगा। संस्थामें ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह व्रतोंका पूर्ण पालन किया जायेगा; मुझे लगता है कि यदि यह प्रयोग सफल हुआ और काफी युवक आगे आये तो हम जिन प्रस्तुत समस्याओंसे दुविधा और चिन्तामें पड़े हैं, उनमें से कितनी-ही अपने-आप हल हो जायेंगी।

१. यह इस शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था: "श्री मो० क० गांधी — भारतमें उनका भावी कार्यक्रम।"

आप संस्थामें कामका कौन-सा तरीका अपनाना चाहते हैं और देश-सेवा किस तरहकी होगी, क्या आप मुझे इस बारेमें कुछ बतायेंगे?

सेवाका स्वरूप क्या होगा, मेरे लिए यह बताना सम्भव नहीं है। यह बहुत कुछ, इस परीक्षण कालमें मेरे देखने-सोचनेका क्या परिणाम होगा, उसपर निर्भर करता है। साथ ही आप यह आसानीसे देख सकते हैं कि मैंने शिक्षणकी जो रूप-रेखा बताई है दरअसल उसमें इस सेवाका महत्त्वपूर्ण भाग आ जाता है। इस सम्बन्धमें जिन विविध दशाओंमें काम किया जा सकता है उसकी कल्पना कोई भी आसानीसे कर सकता है। किन्तु मैं और मेरे साथी किन सार्वजनिक कार्योंकी ओर ध्यान देंगे, इस सम्बन्धमें मैं लोगोंसे चर्चा नहीं करना चाहता; क्योंकि जैसा मैंने पहले बताया है मैं श्री गोखलेको वचन दे चुका हूँ कि जबतक मैं यहाँकी समस्याओंको समझ न लूँ तबतक किसी निश्चित कार्यक्रमसे न बंधूँगा। और अब चूँकि मेरी — नौकाका खेवनहार चला गया है और मुझे अब सब-कुछ अपने बलपर ही करना है, यह और भी आवश्यक हो गया है। मैं अत्यन्त सावधानीसे काम करना चाहता हूँ और जहाँतक सम्भव है वहाँतक आजके समस्त ज्वलन्त प्रश्नोंपर निष्पक्ष रूपसे विचार करना चाहता हूँ।

क्या आपके लिए श्री गोखलेने यह परीक्षण काल इस कारण रखा, क्योंकि आप इतने वर्षोंतक भारतसे बाहर रहे हैं?

हाँ, उनका सबसे जोरदार तर्क यही था। चूँकि मैं २८ वर्षसे[1] अधिक समय तक भारतसे बाहर रहा और मेरी विचारधारा भारतके बाहर ही ढली इसलिए उन्होंने मेरे लिए वर्तमान स्थितियोंसे व्यक्तिगत सम्पर्क द्वारा उसे सुधारना नितान्त आवश्यक समझा।

आप पिछली बार जब यहाँ आये थे क्या आपको उसके बादसे भारतके हालातमें कोई स्पष्ट परिवर्तन दिखाई देता है?

जहाँतक मैं देख पाया हूँ और जहाँतक मैं इस योग्य हूँ कि १९०२ में जब मैं भारतमें थोड़े दिनोंके लिए आया था, उन दिनों देखी हुई स्थितिकी तुलना आजकी स्थिति-से कर सकूँ, तो मुझे लगता है कि युवकोंमें मातृभूमिकी सेवा करनेकी अधिक उत्कण्ठा है और जिन कामोंके करनेमें कुछ आत्मत्याग करना पड़े, ऐसे कामोंको करनेकी भी तीव्र इच्छा है।

हमारे प्रतिनिधिने इसके बाद दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय प्रश्न और अन्य विविध विषयोंके साथ भारतके राजनैतिक आन्दोलनका उल्लेख किया, तो श्री गांधीने कहा कि मैं सरकारसे रियायतें प्राप्त करनेके लिए आन्दोलन करनेको उतना महत्त्व नहीं देता, जितना देशके लोगोंके नैतिक, सामाजिक और आर्थिक पुनरुत्थानके लिए काम करनेको; क्योंकि मेरी राय यह है कि यदि लोग एक बार अपने चरित्र और सामर्थ्यसे योग्य बन जायेंगे तो उसके बाद उन्हें विशेषाधिकार अपने-आप मिल जायेंगे। वस्तुतः लोगोंको

१. यहाँ २२ वर्ष होना चाहिए था; इंग्लैंडवासको मिलाकर भी २८ वर्ष ठीक संख्या नहीं है। वे अप्रैल १८९३ से जनवरी १९१५ तक दक्षिण आफ्रिकामें रहे और १८८८ से १८९१ तक इंग्लैंडमें।

रियायतें मांगनी ही न पड़ेंगी और जो-कुछ दिया जायेगा वह रियायत नहीं होगी, क्योंकि वे स्वयं उनके योग्य बन चुके होंगे। मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि भीतरसे सुधार किये बिना राजनैतिक रियायतोंके लिए आन्दोलन करनेसे देशको कोई लाभ न होगा। साथ ही मैं यह चाहता हूँ कि लोग मेरी कही हुई बातोंकी अपेक्षा मेरे व्यवहारको देखकर मुझे तोलें। मेरी राय है कि किसी भेंटमें कहे गये शब्द वह सब अभिव्यक्त नहीं कर सकते जो वह व्यक्ति, जिससे भेंट की जा रही हो, उस विषयपर कहना चाहेगा। क्योंकि आखिरकार भेंटकी अपनी मर्यादाएँ हैं।

[अंग्रेजीसे]

मद्रास मेल, २३–४–१९१५

५६. मद्रासकी महाजन-सभा और कांग्रेसके मानपत्रका उत्तर

अप्रैल २३, १९१५

मद्रास महाजन-सभा और मद्रास प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके सदस्योंने कल सायंकाल महाजन-सभाके अध्यक्ष माननीय नवाब सैयद मुहम्मदके निवास-स्थान 'हुमायूं मंजिल'में श्री गांधी और उनकी पत्नीको भोज दिया। उसमें बोलते हुए श्री गांधीने कहा:

नवाब साहब और मित्रो,

मैं इस समारोहका आयोजन करने और ऐसी सुन्दर भाषामें मानपत्र[1] देनेके लिए दोनों सम्मान्य संस्थाओंको अपनी ओरसे और अपनी पत्नीकी ओरसे हार्दिक धन्यवाद देता हूँ। मैं समझता हूँ, आप यह आशा नहीं करते कि मैं कोई भाषण दूंगा। मुझे लगता है कि हमारे सम्बन्धमें यह कहावत सत्य है 'दूरके ढोल सुहावने होते हैं'। हमें अब आप लोगोंके सामने काम करना है। मैं दक्षिण आफ्रिकासे जो कमाकर लाया हूँ वही मेरी पूंजी है। मैं इस समय उस पूंजीको खर्च कर रहा हूँ। हम जब आपके सामने काम करना आरम्भ करेंगे, तब आप हमें हमारे असली रूपमें देखेंगे और मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि आप तब उसी उदार भावनासे काम लें जिसके लिए हमारी महान् मातृभूमि प्रसिद्ध है। मैं आशा करता हूँ कि आप हमारे दोष क्षमा करेंगे और हम जो-कुछ जिस सद्भावसे दे रहे हैं उसे उसी भावसे स्वीकार करेंगे। (तालियाँ)

[अंग्रेजीसे]

न्यू इंडिया, २४–४–१९१५

१. यह यहाँ नहीं दिया जा रहा है।

५७. भेंट : असोसिएटेड प्रेस, मद्रासके प्रतिनिधिको

अप्रैल २३, १९१५

असोसिएटेड प्रेसके एक प्रतिनिधिने श्री गांधीसे भेंट की। भेंटमें उन्होंने दक्षिण आफ्रिकावासी भारतीयोंकी उत्कृष्ट राजभक्तिका उल्लेख किया और कहा कि उन्होंने महायुद्ध छिड़नेपर संघ-सरकारको साम्राज्य-सरकारका प्रतिनिधि मानकर ही उसका साथ दिया। जनरल बोथाने अपने प्रशंसापूर्ण पत्रमें अवसर आनेपर उनकी सेवाओंका उपयोग करनेका वचन दिया था।

यह पूछनेपर कि क्या युद्धके बाद भारतीयोंके दर्जेमें और सुधार होनेकी सम्भावना है? श्री गांधीने कहा कि यह बहुत-कुछ साम्राज्य-सरकारके रुख और अन्य कई बातोंपर निर्भर करता है।

दक्षिण आफ्रिकामें अपना कार्य जारी रखनेके सम्बन्धमें उन्होंने कहा कि जहाँ-तक कानूनी सहायताका सम्बन्ध है श्री पोलक स्वयं अटर्नीकी हैसियतसे वकालत कर रहे हैं और बहुत अच्छी तरहसे सलाह दे सकते हैं। उन्होंने आगे कहा; बहुत-से योग्य भारतीय सत्याग्रही भी वहाँ हैं और वे स्थितिके प्रति सतर्क हैं। इस प्रकार वहाँ श्री पोलककी सहायतासे भारतीयोंके मित्र जो भी समस्याएँ खड़ी होंगी उनको भली-भाँति सँभाल लेंगे। 'इंडियन ओपिनियन' जो सत्याग्रहियोंके विचारोंको प्रकट करता है, श्री वेस्ट[1] और श्री छगनलाल गांधीके प्रबन्ध और नियंत्रणमें चल रहा है।

भारतमें भविष्यका आपका कार्यक्रम क्या होगा, यह प्रश्न किये जानेपर उन्होंने कहा :

मैं श्री गोखलेकी सलाहसे अध्ययनकी दृष्टिसे देशका दौरा कर रहा हूँ। उसके बाद मैं देशकी सेवा करनेकी निश्चित योजना बनाऊँगा। इस बीचमें उस संस्थाको भी जारी रखूँगा जो दक्षिण आफ्रिकामें चलाई जा रही है और जिसका उद्देश्य आजीवन राष्ट्रीय सेवाके लिए युवकोंको शिक्षण देना है।

सभी जानते हैं कि मेरी देखरेखमें अब भी कई युवक और लड़के हैं। ये दक्षिण आफ्रिकासे मेरे साथ आये हैं। इनमें से कुछ सत्याग्रही हैं और कुछ सत्याग्रहियोंके बेटे हैं।

[अंग्रेजीसे]

बंगाली, २४-४-१९१५

१. ए० एच० वेस्ट; इन्टरनेशनल प्रिंटिंग प्रेसके मैनेजर। फीनिक्स-स्थित इसी प्रेसमें **इंडियन ओपिनियन** छपता था।

५८. भाषण: मद्रास मुस्लिम लीगके स्वागत-समारोहमें

अप्रैल २४, १९१५

शनिवारको सायंकाल मुस्लिम लीगने लॉली हॉल, माउंट रोडमें श्री और श्रीमती गांधीको भोज दिया . . .। भोजके बाद श्री याकूब हसनने[1] छोटा-सा भाषण दिया। उन्होंने मुसलमानोंकी ओरसे वचन दिया कि वे भारतके हितका जो भी काम हाथमें लेंगे उसमें उनका समाज सहयोग देगा।

श्री गांधीने संक्षिप्त उत्तर देते हुए कहा कि आपने हमारे प्रति जो कृपा दिखाई है उसके लिए मैं अपनी पत्नीकी ओरसे और अपनी ओरसे आपको धन्यवाद देता हूँ। आपने यह वचन दिया है कि मैं देशकी ओरसे जो भी काम करूँगा उसमें बिना किसी शर्तके आप मुझे सहयोग देंगे। वचन देना एक बात है और उसे निभाना दूसरी बात। उन्होंने हलकी-सी चेतावनी देते हुए आगे कहा: मैं कर्त्तव्योंके पालनकी माँग करनेमें अत्यन्त आग्रही हूँ, विशेष रूपसे तब जब वे स्वेच्छासे हाथमें लिये गये हों। और जब मैं आपको कर्त्तव्योंके पालनके लिए कहूँगा तो सम्भव है आपको बहुत परेशानी मालूम पड़े। इस सम्बन्धमें मुझे दक्षिण आफ्रिकामें मुसलमानोंकी सेवाके दो उदाहरण याद आ रहे हैं। उनमें से एक उदाहरण एक व्यापारी अहमद मुहम्मद काछलियाका है।[2] मैंने उनसे अधिक अविचल प्रकृतिका दूसरा मनुष्य नहीं देखा। वे देशकी खातिर कई बार जेलमें गये और उनके यूरोपीय साहूकारोंने उनको राजनैतिक कारणोंसे दिवालिया बना दिया। किन्तु उन्होंने उनकी देनदारी पाई-पाई चुका दी। दूसरा उदाहरण है अब्दुल साहब एम० मुआज्जिनका। उन्होंने अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सेवा की। उन्होंने भी देशके निमित्त अपने सर्वस्वका त्याग कर दिया और बिलकुल गरीब हो गये। वे अब अपने परिवार-सहित नेटालमें फीनिक्स आश्रममें हैं। अन्तमें मैं आपको फिर आपके वचनकी याद दिलाता हूँ।

रविवारको दोपहर बाद ढाई बजे आबिदा ऐक्य आनन्द समाजकी महिलाओंकी ओरसे रामस्वामी स्ट्रीट, मनाडीमें संस्थाके अहातेमें भोज दिया गया। समारोहमें मान-पत्र भी भेंट किया गया।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २६–४–१९१५

१. मन्त्री, भारतीय दक्षिण आफ्रिकी लीग।

२. वे १९०८में ब्रिटिश भारतीय संघके अध्यक्ष बनाये गये। इन्होंने दक्षिण आफ्रिकी भारतीयोंके निमित्त अपने सर्वस्वकी आहुति दे दी। इनका स्वर्गवास १९१८में हुआ; देखिए खण्ड ११, पृष्ठ १३, पाद-टिप्पणी ३।

५९. भाषण: मद्रासके कानून-पेशा लोगों द्वारा दिये गये भोजमें

अप्रैल २४, १९१५

पिछले शनिवारको मद्रास वकील-संघ (मद्रास बार असोशिएशन) के तत्त्वावधानमें आयोजित कानून-पेशा लोगोंका वार्षिक भोज-समारोह सम्पन्न हुआ। यह इस ढंगका तीसरा समारोह था। यह आयोजन पीपल्स पार्क, मद्रासके मूअर मण्डपसे लगे खुले मैदान-में किया गया था। संध्याका समय था और उस विस्तृत मैदानमें शुभ्र चाँदनी छिटकी हुई थी। एडवोकेट-जनरल माननीय श्री एफ० एच० एम० कॉरबेट आयोजनकी अध्य-क्षता कर रहे थे। . . . एक बैरिस्टरके नाते श्री गांधीको भी, जो इन दिनों मद्रासमें हैं, आमन्त्रित किया गया था। उन्हें सम्मानपूर्वक माननीय एडवोकेट-जनरलकी बाईं ओर बैठाया गया था। . . . अध्यक्षने श्री गांधीसे "ब्रिटिश साम्राज्य" के लिए शुभ-कामनाका आपानक (टोस्ट) प्रस्तावित करनेका अनुरोध किया। . . . शुभ-कामनाका आपानक प्रस्तावित करते हुए श्री गांधीने कहा:

जब विद्वान एडवोकेट-जनरल महोदयने मेरे पास आकर मुझसे शुभकामनाका आपानक प्रस्तावित करनेको कहा तो मैं कुछ अचम्भेमें पड़ गया। मेरा खयाल है यह उनके ध्यानमें नहीं आया; लेकिन मैं आप सबके सामने इसे स्वीकार करता हूँ। मुझे लगा था कि चूँकि मैं किसी समय उसी पेशेका आदमी था जो आप लोगोंका या आपमें से अधिकांशका पेशा है, और चूँकि मैं इस समय संयोगसे मद्रासमें उपस्थित हूँ, इसलिए मुझे आयोजनमें शामिल होनेका निमन्त्रण दे दिया गया है। और मुझे यह भी लगा था कि यहाँ मुझे एक मूक दर्शकके रूपमें रहने दिया जायेगा। किन्तु, जब उन्होंने इस बातका उल्लेख किया तो [मुझे आश्चर्य हुआ किन्तु] मैंने निःसंकोच कह दिया कि "हाँ, मैं प्रसन्नतापूर्वक यह शुभकामनाका आपानक प्रस्तावित करूँगा।" भारतके मेरे तीन महीनेके दौरेमें और दक्षिण आफ्रिकामें भी लोग मुझसे अकसर पूछते रहे हैं कि आधुनिक सभ्यता-का दृढ़ विरोधी और जाना-माना देशभक्त होते हुए भी मैं ब्रिटिश साम्राज्यके प्रति, जिसका भारत इतना बड़ा अंग है, वफादार कैसे हो सकता हूँ, और मेरे लिए इस बातको संगत मानना कैसे सम्भव है कि भारत और इंग्लैंड पारस्परिक लाभके लिए साथ-साथ काम कर सकते हैं। आजकी सन्ध्याके इस महान् और महत्त्वपूर्ण सम्मेलनमें ब्रिटिश साम्राज्यके प्रति पुनः अपनी वफादारीकी घोषणा करते हुए मुझे अत्यन्त हर्ष हो रहा है; और ब्रिटिश साम्राज्यके प्रति मेरी यह वफादारी बहुत ही स्वार्थपूर्ण आधारपर खड़ी है। एक सत्याग्रहीके रूपमें मैंने यह देखा कि ब्रिटिश साम्राज्यके अन्तर्गत मैं जितनी आजादीसे काम कर सकता हूँ उतनी आजादीसे अन्यथा नहीं कर सकता। वैसे तो मेरी समझमें परिस्थितियाँ चाहे कैसी भी क्यों न हों, सत्याग्रहीको सत्याग्रहके बारेमें अपना दावा सिद्ध करके दिखाना ही चाहिए; और मैंने [यह सिद्ध करनेके प्रयासमें] पाया कि ब्रिटिश

साम्राज्यके कुछ आदर्श हैं और उनसे मुझे प्रेम हो गया है (हर्ष-ध्वनि)। इन आदर्शोंमें-से एक यह है कि प्रत्येक प्रजाजनको अपनी शक्ति और प्रयासोंका अधिकसे-अधिक स्वतन्त्रताके साथ उपयोग करनेका पूरा अवसर प्राप्त रहे, और वह जो-कुछ भी सोचता है, अपनी अन्तरात्माके आधारपर सोच सके। मेरा खयाल है, यह बात जितनी ब्रिटिश साम्राज्यपर लागू होती है उतनी और किसीके साथ नहीं (हर्ष-ध्वनि)। शायद आप लोग जानते होंगे, और मेरा भी अनुभव यह है कि सर्वोत्तम सरकार वही है जो कमसे-कम शासन करे; मैंने देखा है कि ब्रिटिश साम्राज्यमें मेरे लिए कमसे-कम शासित होना सम्भव है। और यही कारण है कि मैं ब्रिटिश साम्राज्यके प्रति वफादार हूँ (तीव्र हर्ष-ध्वनि)। और आपसे इस साम्राज्यकी समृद्धिकी कामना करते हुए आपानक लेनेका अनुरोध करके अपना भाषण समाप्त करनेसे पूर्व क्या मैं आपको दूर-देश दक्षिण आफ्रिकामें इस संघर्षके दौरान घटित एक विशिष्ट घटनाका स्मरण दिला सकता हूँ? ब्रिटिश साम्राज्यकी एक सेनाके विश्वस्त कमांडर जनरल बेयर्सने साम्राज्यके विरुद्ध खुल्लम-खुल्ला विद्रोह कर दिया। और फिर भी उन्हें देखते ही गोलीसे नहीं उड़ा दिया गया। —यह बात इस साम्राज्यमें और केवल इसी साम्राज्यमें सम्भव थी। जनरल स्मट्सने एक स्मरणीय पत्रमें उन्हें लिखा कि किसी समय वे स्वयं भी विद्रोही हो गये थे। उन्होंने बेयर्सको लिखा कि तब भी मैं अपनी जान बचा सका; और यह ब्रिटिश साम्राज्यके अन्तर्गत ही सम्भव है। इन्हीं कारणोंसे मैं ब्रिटिश साम्राज्यके प्रति वफादार हूँ। (तीव्र हर्ष-ध्वनि)।

आपानकके प्रस्तावका लोगोंने बड़े उत्साहसे स्वागत किया।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २६–४–१९१५

६०. भाषण: सोशल सर्विस लीग, मद्रासकी सभामें

अप्रैल २५, १९१५

समाज सेवा संघ (सोशल सर्विस लीग)के सदस्योंने रविवार (२५–४–१९१५)को ३–३० बजे शामको रानडे भवनमें श्री गांधीके स्वागतार्थ एक सभा की। इसमें श्री एस० श्रीनिवास अय्यंगार, राव बहादुर टी० विजयराघवाचारियर, माननीय श्री वी० एस० श्रीनिवास शास्त्री, श्री वी० टी० कृष्णमाचारी, श्री जी० ए० नटेसन और अन्य लोग उपस्थित थे।

उपस्थित लोगोंको गांधीजीका परिचय श्री विजयराघवाचारियरने दिया। उसके बाद गांधीजी बोले। उन्होंने कहा: लीग जो काम कर रही है मैंने उसका कुछ-कुछ परिचय अभी प्राप्त किया है। समाज-सेवाका कार्य अत्यन्त विनम्रता और आत्म-त्यागकी भावनासे किया जाना चाहिए। इस सम्बन्धमें हम श्री गोखलेका उदाहरण लें। उनका कहना है कि जितने भी सच्चे सार्वजनिक कार्यकर्त्ता हैं, उनके लिए उनका काम ही

पुरस्कार है। यदि समाज-सेवी कार्यकर्त्ताके कार्यको मान्यता न मिले या उसकी कद्र न हो तो उसे इससे रुक न जाना चाहिए; उसे अपना कार्य परिश्रमपूर्वक और पूरे मनसे ध्यान देकर करते जाना चाहिए। कोई समाज-सेवी कार्यकर्त्ता जिस कामको भी करनेका प्रयत्न कर रहा हो उसे अपना प्रयास तबतक बन्द नहीं करना चाहिए जबतक वह उसे सफलतापूर्वक पूरा न कर ले। मैं समाज-सेवाका कार्य अधूरे मनसे करनेके विरुद्ध हूँ। ऐसा कार्य करनेसे उसे बिलकुल न करना अच्छा है। एक कार्यकर्त्ताने पूछा कि लीगके सदस्य प्रति सप्ताह कुछ सीमित समय ही दे सकते हैं। उनको आप क्या सलाह देते हैं? गांधीजीने कहा कि आप जो थोड़ा-सा समय बचा सकते हैं उसमें आपको पूरे ध्यानसे काम करना चाहिए। यदि ठीक तरहके सामाजिक कार्य करनेवाले लोग मिल जायेंगे तो आशा की जा सकती है कि सफलता मिलेगी ही।

मेरे पास जो थोड़ा समय है उसमें मैं दलित वर्गोंको नैतिक और धार्मिक निर्देश देनेके प्रश्नपर विचार नहीं कर सकता। किन्तु मैं पूरी तरह विश्वास करता हूँ कि यह एक महत्त्वपूर्ण मुद्दा है। आप इसे ठीक-ठीक समझ लेंगे तभी आप उन लोगोंके हृदयमें प्रवेश कर सकेंगे जिनमें आप काम करते हैं। रात्रि-शालाओंमें पंचम वर्णके[1] बालकोंको और ऊँची जातियोंके बालकोंको साथ-साथ बिठाया जाये या नहीं, इस सम्बन्धमें प्रश्न करने पर उन्होंने कहा कि कमसे-कम रात्रि-शालाओंमें ऐसा करनेमें कोई बुराई नहीं है, क्योंकि वहाँ पढ़ानेके लिए कम-ही समय होता है और इसका किसी तरहका बुरा प्रभाव न तो पंचम बालकोंपर पड़ेगा और न ऊँची जातियोंके बालकों पर। सामान्यतः प्रारम्भिक शिक्षाके बारेमें और प्रारम्भिक शिक्षाको असीमित रूपसे बढ़ानेकी नीतिके बारेमें उन्होंने कहा: इसमें कोई सन्देह नहीं कि जन-साधारणमें स्वच्छता और सफाई बढ़ानेकी दिशामें इससे बहुत-कुछ लाभ हुआ है और सफाई बहुत वांछनीय वस्तु है। किन्तु इसके लिए यह अनिवार्य नहीं है। जिन लोगोंको लिखने-पढ़ने और हिसाब करनेका ज्ञान नहीं है, वे भी सफाईके सिद्धान्तोंको समझ सकते हैं और उनके लिए सुधारकी जो भी उचित योजना बनाई जाये उसमें सहयोग दे सकते हैं। इस दिशामें तेजीसे काम करनेकी आवश्यकता है।[2] . . . उनके दिमागमें यह खयाल बिठा देना कि काम या शारीरिक श्रमसे अप्रतिष्ठा होती है . . .।[3] मुझे उस मोचीमें कोई बुराई दिखाई नहीं देती जिसने जीवनभर अपना धन्धा करते हुए एम० ए० की उपाधि ली है। शराबखोरीके सम्बन्धमें उन्होंने कहा कि यह बुराई ऐसी है जिसका उन्मूलन करना अत्यन्त कठिन है। इस कार्यमें तो केवल कोई महान् धार्मिक कार्यकर्त्ता ही सफल हो सकता है। इस सम्बन्धमें उन्होंने पूनाके एक समाज-सेवी कार्यकर्त्ताका अनुभव बताते हुए एक व्यावहारिक उदाहरण दिया।

१. अतिशूद्र बहिष्कृत।
२ और ३. यहाँ मूलमें कागज फटा हुआ है।

श्री गांधीने बातचीत समाप्त करते हुए कहा कि समाज-सेवाके लिए रुपया नहीं, मनुष्य चाहिए और वे मनुष्य ठीक तरहके हों, उनकी भावनाएँ ठीक हों, उनमें अटूट प्रेम और औदार्य हो, एवं उनका अपने कार्यमें पूर्ण विश्वास हो। यदि आपके पास ऐसे मनुष्य हों तो रुपया अपने-आप बिना माँगे भी आ जायेगा। बहुत-कुछ सामाजिक कार्य रुपयेके बिना ही किया जा सकता है। जन-साधारण जिन भावनाओंसे प्रेरित होते हैं शिक्षित व्यक्तिका उनको ठीक-ठीक समझना और उनका मूल्यांकन करना तबतक बहुत कठिन है जबतक वह स्वयं थोड़ा पीछे हटकर उन्हें समझनेका प्रयत्न न करे। और यदि कोई व्यक्ति, चाहे वह धनी भी हो, यदि स्वयं कामसे प्रेरणा नहीं लेता, बल्कि व्यक्तिगत महत्त्वाकांक्षाकी भावनासे काम करता है तो उसके लिए कोई सामाजिक काम करना असम्भव है। उस मनुष्यके लिए कोई ठोस समाज-सेवा करना ऊँटका सुईके छेदमेंसे निकलनेसे भी अधिक कठिन है।[1]

श्री गांधीको धन्यवाद देनेके बाद सभा ४–३० बजे सायं समाप्त हो गई।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २७–४–१९१५

६१. भाषण : आर्य वैश्य महासभा, मद्रासके स्वागत-समारोहमें[2]

अप्रैल २५, १९१५

श्री गांधीने स्वागत-भाषणका उत्तर देते हुए कहा : आपने मेरा और मेरी पत्नीका जो सम्मान किया है उसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। हमें दक्षिण आफ्रिकामें जो सफलता मिली है उसका श्रेय उन अन्य भारतीयोंको दिया जाना चाहिए जो दक्षिण आफ्रिकाके अधिवासी बन गये हैं। दक्षिण आफ्रिकामें जो-कुछ किया जा रहा है उस सबको बतानेके लिए यह समय उपयुक्त नहीं है। दक्षिण आफ्रिकामें जो भारतीय हैं वे छोटे किसान, फेरीवाले और छोटे व्यापारी हैं। झगड़ेकी जड़ यह है कि इनकी वहाँ आबाद यूरोपीय लोगोंसे जबर्दस्त स्पर्धा है। कई दूसरी बातें भी हैं जिनके कारण संघर्ष करना पड़ा; किन्तु मुख्य कारण स्पर्धा ही है। यद्यपि फिलहाल समझौता हो गया है, किन्तु फिर भी हम यह मान सकते हैं कि उनके मनोंमें कुछ-न-कुछ चिढ़ तो बनी ही है; और जबतक यह स्पर्धा है तबतक बनी रहेगी। वहाँ हमारे जो लोग

१. अंग्रेजी मुहाविरेका अविकल अनुवाद।

२. गोविन्दप्पा नामक स्ट्रीटमें वसंत मंडपममें ६ बजे सायं श्री सल्ला गुरुस्वामी चेट्टीने छोटा-सा स्वागत-भाषण दिया था।

हैं वे विद्वान् या विश्वविद्यालयोंमें पढ़े हुए लोग नहीं हैं; किन्तु वे ऐसे लोग हैं जिनके कारण राष्ट्रोंमें भारतको ऊँचा स्थान मिल सकता है।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २६–४–१९१५

६२. पत्र : नारणदास गांधीको

जॉर्जटाउन
मद्रास
वैशाख सुदी ११ [अप्रैल २५, १९१५][1]

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिल गया है। मैं यहाँसे ७ तारीखको रवाना होकर उस ओर आऊँगा।

मगनलाल और अन्य सब गुरुकुल कांगड़ी, हरद्वारमें हैं। सभीको उपयुक्त दर्जोंमें प्रवेश मिल गया है।

हरिलालके पत्रके सम्बन्धमें तुम्हारा अनुमान ठीक है। हरिलालने जो-कुछ किया है उसकी जोड़का उदाहरण मिलना मुश्किल है। जब कोई लड़का ऐसा लिखता है तब सामान्यतः बाप और बेटेमें झगड़ा ही होता है; किन्तु इस मामलेमें ऐसा होनेकी गुंजाइश भी नहीं है। हरिलालका मन अब शान्त हो गया है, यह उसने बताया है और पत्र लिखनेपर पश्चात्ताप किया है। पत्र नासमझीसे भरा हुआ है और मुझे ऐसा लगता है कि जब उसे अनुभव होगा तब अधिक समझ सकेगा।

बोलपुर गर्मीमें बहुत गर्म रहता है। इसलिए रामदास बीमार हो गया। उसका भोजन दूसरोंकी अपेक्षा कम गर्म था। इन दिनों यहाँके लोग गर्मीके बारेमें शिकायत करते रहते हैं। मुझे तो यहाँ गर्मी मालूम ही नहीं पड़ती।

मैंने दो व्रत लिये हैं।[2] उनके सम्बन्धमें तुम्हें नहीं लिखा। व्रत हैं, इस देशमें कभी सूर्यास्तके बाद भोजन न करना और एक दिनमें पाँचसे ज्यादा चीजें न खाना। दूसरा व्रत कड़ा है और किसी दिन इससे नुकसान भी हो सकता है; फिर भी वह लेने योग्य तो था; और मन उसको लेनेपर अधिक संयत हो गया है। हम दोनोंका स्वास्थ्य अच्छा रहता है। रेवाशंकर भाईके बड़े भाई अपने क्रोधपर विजय पानेके लिए यहाँ आ गये हैं और मेरे साथ रहते हैं। वे भी फलाहार करते हैं। हमारे साथियोंमें से मेरे साथ कोई नहीं है। मैं बम्बईमें लगभग चार दिन रहकर अहमदाबाद चला जाऊँगा।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५६६९) से।
सौजन्य : नारणदास गांधी

१. गांधीजी १५ अप्रैलको हरद्वार और दिल्लीसे आये थे। इस वर्षमें दो वैशाख पड़े थे।
२. ये उन्होंने ९ अप्रैलको हरद्वारमें लिये थे; देखिए "डायरी : १९१५"।

६३. भाषण : मद्रासके भारतीय ईसाइयोंके स्वागत-समारोहमें

अप्रल २६, १९१५

वेजलेयन मिशन, पीटर्स रोड, रायपेटाके रेवरेंड टी० और श्रीमती सुब्रह्मण्यमने कल अपने घरपर कुछ यूरोपीय प्रचारकों और भारतीय ईसाइयोंको जो पादरीवर्ग और सामान्य ईसाई-समाजका प्रतिनिधित्व करते थे, गांधी दम्पतिके स्वागतार्थ बुलाया। बैरिस्टर श्री एम० डी० देवदास और श्री वी० चक्काराई चेट्टीने मद्रासके भारतीय ईसाई-समाजकी ओरसे उनके स्वागतार्थ कुछ शब्द कहे . . .।

श्री गांधीने उत्तर देते हुए कहा कि मैं जब दक्षिण आफ्रिकामें था तब मुझे फैनन ब्रूय और अन्य पादरियों एवं समस्त भारतीय ईसाइयोंका हार्दिक सहयोग और सहानुभूति प्राप्त थी। मेजवानोंको आवभगतके लिए धन्यवाद देकर गांधी दम्पतिने उनसे विदा ली।

[अंग्रेजीसे]

मद्रास मेल, २७-४-१९१५

६४. भाषण: वाई० एम० सी० ए०, मद्रासमें[1]

अप्रैल २७, १९१५

सभापति महोदय तथा प्यारे मित्रो, मेरे तथा मेरी स्त्रीके गुणोंका उल्लेख करते हुए मद्रासने अंग्रेजी शब्द-कोशके प्रायः समस्त विशेषणोंका प्रयोग कर डाला है और यदि मुझसे यह बतलानेके लिए कहा जाये कि वह कौन-सा स्थान है, जिसने मुझे कृपा, प्रेम तथा शालीनताके व्यवहारसे अभिभूत कर दिया है तो मुझे कहना पड़ेगा कि वह स्थान मद्रास है (करतल ध्वनिसे)। लेकिन मैंने अनेक बार कहा ही है कि मद्रासके सम्बन्धमें मेरा यही विचार है। अतः आप लोग मुझपर अनुपम सुजनतासे जो अनुग्रहकी वर्षा कर रहे हैं वह मेरे लिए कोई आश्चर्यजनक बात नहीं है। और अब जिस भारत सेवक समाज (सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी) की अधीनतामें मैं आजकल अपना परीक्षा-काल बिता रहा हूँ उसके सभापतिने, यदि मैं कह सकूं तो, इस मालामें सुमेरु ही लगा दिया है। क्या मैं इन सब बातोंके योग्य हूँ? मेरे हृदयके अन्तरतम भागसे उत्तर निकलता है कि "नहीं"। किन्तु मैं भारत आया हूँ आप मेरे लिए जिन विशेषणोंका भी उपयोग करें, उन सबके योग्य बननेके लिए और यदि मैं एक योग्य सेवक बनना चाहूँ तो निश्चय ही उसके लिए मुझे अपना सारा जीवन अपने-आपको उन विशेषणोंके योग्य सिद्ध करनेमें उत्सर्ग कर देना पड़ेगा।

१. मद्रासके विद्यार्थियों द्वारा भेंट किये गये मानपत्रके उत्तरमें। इस आयोजनकी अध्यक्षता श्री वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीने की थी।

और अब उस मनोहर राष्ट्रीय गीतकी बात लें, जिसे सुनते ही हम सब श्रद्धा-वश उठ खड़े हुए।[1] उसमें कविने उन समस्त विशेषणोंका उपयोग कर डाला है, जिनका उपयोग भारतमाताके लिए सम्भव है। उन्होंने भारत माताको सुहासिनी, सुमधुर भाषिणी, सुवासिनी, सर्वशक्तिमती, सर्वसद्गुणवती, सत्यवती, सुजला, सुफला, शस्यश्यामला और महान् स्वर्णयुगमें ही सम्भव हो ऐसी मानव-जातिसे बसी हुई बताया है। क्या हमें यह गीत गानेका अधिकार है? मैं अपने आपसे पूछता हूँ, "क्या मुझे उस गीतको सुनकर तुरन्त उठ खड़े होनेका कोई अधिकार है?" निस्सन्देह कविने हमारे सामने एक आदर्श प्रस्तुत किया, जिसके शब्द किसी भविष्य-द्रष्टाके शब्द-मात्र हैं, और हमारी इस मातृ-भूमिका वर्णन करते हुए उन्होंने जो शब्द कहे हैं, उनमें से प्रत्येकको चरितार्थ करना आप लोगोंका — जो भारतकी आशा हैं, काम है। इस समय तो मैं यही समझता हूँ कि मातृभूमिके वर्णनमें इन विशेषणोंका प्रयोग बहुत ही अतिशयोक्तिपूर्ण है, और कविने मातृभूमिकी ओरसे जो दावे किये हैं, उन्हें आपको और मुझे सिद्ध करना है।

वास्तविक शिक्षा

अब आपसे, आप मद्रासके विद्यार्थियोंसे और समस्त भारतके विद्यार्थियोंसे, मैं पूछता हूँ कि क्या आप लोग ऐसी शिक्षा पा रहे हैं जो आप लोगोंको उस आदर्शको चरि-तार्थ करनेके योग्य बना सके और जो आपके सर्वोत्तम गुणोंको निखार सके? या कि यह शिक्षा एक ऐसा कारखाना बन गई है जो सरकारके लिए नौकर अथवा व्यापारिक कार्यालयोंके लिए क्लर्क तैयार करे? जो शिक्षा आप लोग प्राप्त कर रहे हैं, उसका अन्तिम उद्देश्य क्या यही है कि आप लोग सरकारी अथवा दूसरे विभागोंमें नौकरी प्राप्त करें? यदि आप लोगोंकी शिक्षाका अन्तिम उद्देश्य यही है — यदि आप लोगोंने अपने सामने यही उद्देश्य रखा है — तो मैं समझता हूँ और मुझे इस बातकी आशंका है कि कविने अपने लिए भारत माताका जो चित्र खींचा है, उसका साकार हो पाना बहुत दूरकी बात है। जैसा कि आप लोगोंने मुझे कहते हुए सुना होगा अथवा कदाचित् आप लोगोंने पढ़ा भी होगा, मैं आधुनिक सभ्यताका कट्टर विरोधी हूँ। मैं चाहता हूँ कि आप आजकल यूरोपमें जो-कुछ हो रहा है, जरा उस ओर नजर दौड़ा कर देखिए; और तब यदि आप इस निष्कर्षपर पहुँचें कि यूरोप आजकल आधुनिक सभ्यताके पैरों तले पड़ा हुआ कराह रहा है तो आपको और आपके गुरुजनोंको अपनी इस मातृभूमिमें उस सभ्यताकी नकल करनेसे पहले कुछ सोच-विचार करना पड़ेगा। लेकिन लोगोंने मुझसे कहा है कि "ऐसी दशामें, जब कि हम देखते हैं कि हमारे शासक ही उस सभ्यताको हमारी मातृभूमिमें ला रहे हैं तो, हम उसे कैसे रोक सकते हैं?" लेकिन इस सम्बन्धमें किसी भ्रममें न रहें। मैं एक क्षणके लिए भी इस बातका विश्वास नहीं कर सकता कि जबतक आप लोग उस सभ्यताको ग्रहण करनेके लिए तैयार न हों तब तक हमारे शासक हम पर वह सभ्यता लाद सकते हैं। और फिर यदि ऐसा हो भी कि हमारे शासक उस सभ्यताको हम पर लादनेकी कोशिश कर रहे हैं तो मैं समझता हूँ कि हमारे भीतर इतनी शक्तियाँ मौजूद हैं कि अपने शासकोंको ठुकराये

१. समारोहकी कार्यवाही "वन्देमातरम्" के गायनसे आरम्भ हुई थी।

बिना हम उस सभ्यताको ठुकरा दें (करतल-ध्वनि)। मैंने अनेक व्याख्यानोंमें कहा है कि ब्रिटिश जाति हमारे साथ है। जिन कारणोंसे वह जाति हमारे साथ है, मैं उन कारणोंका विवेचन अभी नहीं करना चाहता; लेकिन मेरा विश्वास है कि यदि भारत इस महान् जातिके द्वारा संसारको एक सन्देश, शारीरिक शक्तिका सन्देश नहीं बल्कि प्रेम-बलका सन्देश, देना चाहता है तो वह ऐसा केवल उन सन्त-महात्माओंकी परम्पराओंका पालन करके ही कर सकता है, जिनकी अभी सुयोग्य अध्यक्ष महोदयने चर्चा की है। और तब आप लोगोंके लिए वह सुअवसर आयेगा जब आप खून बहा कर नहीं, बल्कि शुद्ध आत्मिक श्रेष्ठताके बलपर अपने विजेताओंपर भी विजय प्राप्त कर सकें। जब मैं यह सोचता हूँ कि भारतमें आज क्या हो रहा है तब मुझे आवश्यक लगता है कि हम राजनीतिक हत्याओं और राजनीतिक डकैतियोंके सम्बन्धमें अपने विचारोंके बारेमें कुछ कहें। मुझे तो लगता है कि ये सब केवल विदेशसे आई हुई बातें हैं और इस देशमें जड़ नहीं पकड़ सकतीं। लेकिन आप विद्यार्थियोंको इस सम्बन्धमें सावधान रहना चाहिए कि मानसिक अथवा नैतिक दृष्टिसे आप इस प्रकारकी आतंकपूर्ण कार्रवाइयोंका भूलसे भी समर्थन न कर डालें। एक सत्याग्रहीकी हैसियतसे मैं इसके बदलेमें आपको एक दूसरी बहुत कामकी बात बतलाऊँगा। आप अपने-आपको आतंकित कीजिए; अपने अन्तर्मनको टटोलिए; जहाँ-कहीं आपको अत्याचार दिखाई पड़े वहाँ आप समस्त उपायोंसे उसका विरोध कीजिए; आपकी स्वतन्त्रता पर कोई हाथ डाले तो आप हर तरहसे उसका विरोध कीजिए। लेकिन अपने उत्पीड़कका खून बहा कर ऐसा मत कीजिए। हमारा धर्म हमें ऐसी शिक्षा नहीं देता। हमारे धर्मका आधार अहिंसा है, जो कार्य-रूपमें प्यारके अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है। और जब मैं प्यार शब्द कहता हूँ तो उसका मतलब सिर्फ अपने पड़ोसीके प्रति, अपने मित्रोंके प्रति प्यार ही नहीं होता। उस शब्दके भीतर तो वे भी आ जाते हैं जो आपके शत्रु हैं।

इसी सम्बन्धमें मैं एक बात और कहूँगा। मेरा विचार है, यदि हमें सत्य और अहिंसाका पालन करना है तो हमें अविलम्ब निर्भयताका भी पालन करना पड़ेगा। यदि हमारे शासक कोई ऐसा काम करते हों जो हमारी समझमें अनुचित हो और यदि हम यह समझते हों कि उन्हें अपना मत बतला देना हमारा कर्त्तव्य है तो चाहे वह राजद्रोह ही क्यों न समझा जाये, मैं आप लोगोंसे आग्रहपूर्वक कहता हूँ कि आप वह राजद्रोहपूर्ण बात भी कह डालिए; किन्तु ऐसा आप अपने-आपको खतरेमें डालकर ही कर पायेंगे। और आपको उसके परिणाम भुगतनेके लिए तैयार रहना चाहिए। जब आप लोग परिणाम भुगतनेके लिए तैयार हो जायेंगे और न्यायका मार्ग नहीं छोड़ेंगे तब मैं समझता हूँ कि आप लोग इस बातके सच्चे अधिकारी भी हो जायेंगे कि सरकार आपकी सम्मति सुने।

अधिकार और कर्त्तव्य

मैं ब्रिटिश सरकारके साथ इसलिए हूँ कि, मेरा खयाल है, मैं ब्रिटिश साम्राज्यके प्रत्येक प्रजाजनके साथ बराबरीका साझेदार होनेका दावा कर सकता हूँ। मैं आज भी बराबरीका साझेदार होनेका दावा करता हूँ। मैं किसी अधीनस्थ जातिका नहीं हूँ।

मैं अपने-आपको किसी अधीनस्थ जातिका सदस्य नहीं मानता। लेकिन इसमें एक बात है, वह यह कि ऐसी कोई चीज आपको ब्रिटिश शासक नहीं देंगे बल्कि आपको अपने प्रयत्नोंसे उसे स्वयं ही प्राप्त करना है। मैं उस चीजको प्राप्त करना चाहता हूँ और प्राप्त कर सकता हूँ। और मैं उसे मात्र अपने कर्त्तव्योंके निर्वाहके बल पर प्राप्त करना चाहता हूँ। मैक्समूलरका[1] कथन है — यद्यपि हमारे अपने ही धर्मकी व्याख्याके लिए हमें मैक्समूलरका सहारा लेनेकी जरूरत नहीं है — कि हमारे धर्मका मर्म "कर्त्तव्य" शब्दमें निहित है, न कि "अधिकार" शब्दमें। और यदि आप यह मानते हों कि हम जो-कुछ चाहते हैं, वह हमें अपने कर्त्तव्यके और अधिक अच्छे निर्वाह-से प्राप्त हो सकता है तो आप सदा अपने कर्त्तव्यके सम्बन्धमें ही सोचिए। इस ढंगसे जूझते हुए आपको किसी मनुष्यका भय नहीं होगा, आप केवल ईश्वरसे डरेंगे। यही वह सन्देश है जो मेरे गुरु — और यदि कह सकूं तो आप सबके भी गुरु — श्री गोखलेने हमें दिया है। यह सन्देश भारत सेवक समाज (सर्वेंट्स आफ इंडिया सोसा-इटी) के विधानमें सन्निहित है और इसी सन्देशके अनुसार मैं जीवन-भर चलना चाहता हूँ। और यह सन्देश है, देशके राजनीतिक जीवन और राजनीतिक संस्थाओंमें अध्यात्म-का समावेश करना। हमें इसे व्यावहारिक रूप देनेके लिए तुरन्त जुट जाना है। विद्यार्थी राजनीतिसे दूर नहीं रह सकते। उनके लिए राजनीति भी उतनी ही जरूरी है, जितना कि धर्म। राजनीतिको धर्मसे अलग नहीं किया जा सकता। धर्मसे विच्छिन्न राजनीति गिरानेवाली चीज बन जाती है। आधुनिक संस्कृति और आधुनिक सभ्यता ऐसी ही राजनीति है।[2] सम्भव है, मेरे विचार आपको स्वीकार्य नहीं हों। फिर भी, मैं तो आपसे वही बात कह सकता हूँ जो बात मेरे अन्तरतममें उथल-पुथल मचाये हुए है। मैं दक्षिण आफ्रिकाके अपने अनुभवोंके आधार पर दावा करता हूँ कि आपके जिन देशभाइयों पर आधुनिक संस्कृतिका कोई रंग नहीं चढ़ा है, किन्तु जिनमें प्राचीन ऋषि-योंकी शक्ति विद्यमान है; जो अंग्रेजी साहित्यका एक शब्द भी नहीं जानते और न मौजूदा आधुनिक संस्कृतिका ही कोई ज्ञान रखते हैं, किन्तु जिन्हें विरासतमें ऋषियों द्वारा सम्पादित तपश्चर्या प्राप्त हुई है, वे अपनी पूरी ऊँचाई तक उठनेमें समर्थ हैं। और दक्षिण आफ्रिकाके हमारे अशिक्षित और निरक्षर देशभाइयोंसे जितना-कुछ सम्भव हो सका है, हमारी इस पवित्र भूमिमें मेरे और आपके लिए उसका दस गुना कर दिखाना सम्भव है। ईश्वर करे, आपको भी और मुझे भी वह सौभाग्य प्राप्त हो। (हर्ष-ध्वनि)

[अंग्रेजीसे]

स्पीचेज ऐंड राइटिंग्ज ऑफ महात्मा गांधी

१. मैक्समूलर (१८२३-१९००); ऑक्सफोर्डके एक प्रख्यात प्रोफेसर और प्राच्य भाषा-विज्ञानके प्रकाण्ड पण्डित ।

२. ये दो वाक्य २८-४-१९१५ के हिन्दूसे लिये गये हैं ।

६५. भाषण: लक्ष्मी मेमोरियल आर्य पाठशाला, मद्रासमें[1]

अप्रैल २९, १९१५

श्री गांधीने उत्तर देते हुए कहा: श्री एन० स्वामीनाथ अय्यरने,[2] पाठशालाके चलते हुए हमें उसका निरीक्षण कराया। मेरी पत्नी और मैं इसके लिए उनके अत्यन्त आभारी हैं। श्री सी० रामानुजम चेटियर-जैसे दानी पाठशालाके संरक्षक हैं, इसके लिए मैं पाठशालाको बधाई देता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

न्यू इंडिया, ३०-४-१९१५

६६. मद्रासके गुजरातियोंके मानपत्रका उत्तर

अप्रैल २९, १९१५

श्री लाड गोविन्ददासके निवास-स्थान गोविन्द विलास, पीटर्स रोड, रायपेटामें, कल शामको गांधी-दम्पतीके सम्मानमें गुजराती समाजकी ओरसे एक भोज दिया गया; उसमें मद्रासके प्रायः सभी वर्गोंके प्रमुख भारतीय निमन्त्रित थे। बड़ी संख्यामें लोग उपस्थित हुए। श्री गांधीको बीचमें बिठाकर एक सामूहिक फोटो भी लिया गया। श्री लाड गोविन्ददासने अपने संक्षिप्त भाषणमें कहा कि गुजराती समाजको इस बातका सचमुच गर्व है कि उसमें श्री गांधी-जैसे महान् पुरुष मौजूद हैं . . .। दीवान बहादुर गोविन्ददास चतुर्भुजदासने गुजरातीमें मानपत्र पढ़ा।

श्री गांधीने गुजरातीमें उत्तर देते हुए गुजराती समाजका ध्यान इस महत्त्वपूर्ण तथ्यकी ओर आकर्षित किया कि मद्रासमें उनका कल्याण भी उसी बातमें है जिसमें दूसरे समाजोंका है; और इसलिए उन्होंने जोर देकर कहा कि गुजरातियोंका दूसरोंके साथ मिलकर काम करना आवश्यक है। उन्होंने मद्रास शहर और प्रान्तमें इतने अधिक गुजरातियोंको स्थान देनेके लिए वहांके लोगोंके प्रति कृतज्ञता व्यक्त की।

श्री लाड गोविन्ददासने मद्रासके गुजराती समाजके सदस्यों और गुजराती-भाषी लोगोंकी ओरसे श्री गांधीको एक थैली भेंट की।

१. थम्बू चेट्टी स्ट्रीटमें।
२. जॉर्जटाउन रेंजके स्कूलोंके उपनिरीक्षक।

श्री गांधीने थैलीको धन्यवादपूर्वक स्वीकार करते हुए कहा कि वे कभी किसीसे भी किसी प्रकारकी भेंट नहीं लेते; और इसलिए वे उसे सार्वजनिक काममें खर्च करनेके लिए दे देंगे।

[अंग्रेजीसे]

न्यू इंडिया, ३०–४–१९१५

६७. भाषण : ट्रंकेबारके स्वागत-समारोहमें

अप्रैल ३०, १९१५

कल ट्रंकेवार[1] और उसके उपनगरोंके लोगोंकी ओरसे श्री गांधी और उनकी पत्नीका जबर्दस्त और उत्साहपूर्ण स्वागत किया गया। विभिन्न वर्गोंका प्रतिनिधित्व करनेवाले २,००० से अधिक लोग, मुख्यतः सत्याग्रही, इकट्ठे हुए थे . . .। बैरिस्टर श्री के० सी० सुब्रह्मण्यमने मानपत्र पढ़ा . . .।

स्वनामधन्य अतिथिने उचित शब्दोंमें मानपत्रका उत्तर दिया और अपने साथी कार्यकर्त्ताओंसे अनुरोध किया कि जब-कभी और जहाँ भी वैधानिक आन्दोलन करनेकी आवश्यकता हो, वे सत्याग्रहका आश्रय लें।

लोगोंने उनका भाषण तन्मयतासे सुना। उसका भाषान्तर भी साथ-साथ किया जा रहा था।

उसके बाद माननीय श्री वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीसे भाषण देनेकी प्रार्थना की गई। उन्होंने श्रोताओंसे अपने देशके लिए काम करनेका अनुरोध किया।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १–५–१९१५

६८. ट्रंकेबारमें दक्षिण भारतीय दलित वर्ग संघके मानपत्रका उत्तर

अप्रैल ३०, १९१५

दक्षिण भारतीय दलित वर्ग संघने पृथक मानपत्र दिया।

श्री गांधीने उत्तर देते हुए कहा कि हमारे देशमें इस वर्गकी ओर तबतक अधिक ध्यान देने और उसके लिए निष्ठापूर्वक लगनके साथ व्यावहारिक काम करनेकी आवश्यकता है जबतक यह लज्जाजनक अन्तर नहीं मिट जाता, कथित-दलित लोगोंका दर्जा नहीं उठता और उन्हें समान अधिकार प्राप्त नहीं होते।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १–५–१९१५

१. मद्रास राज्यमें।

६९. भाषण: मायावरम्‌के स्वागत-समारोहमें[1]

मई १, १९१५

इसे आप नगर कहें या गाँव, यहाँसे गुजरते वक्त इस अत्यन्त सुन्दर मानपत्रको भेंट करनेके लिए मैं मायावरम्‌के लोगोंका वहुत ही आभारी हूँ। हम दक्षिण आफ्रिकामें आठ वर्ष तक जारी रहनेवाले संघर्षके दौरान मारे गये दो व्यक्तियोंकी विधवाओंसे भेंट कर सकनेकी आशासे एक जगह गये थे; यह स्थान उसीकी राहमें है। मैं उन महिलाओंमें से सिर्फ एकसे मिल पाया, दूसरीसे नहीं; फिर भी आशा है कि इस महान प्रान्तसे जानेके पहले दूसरी महिलासे भी भेंट कर पाऊँगा। हालाँकि हम सिर्फ माया-वरम्‌के रास्तेसे गुजर रहे थे, फिर भी आपने हमें विना सत्कारके जाने नहीं दिया, इस वातसे मुझे वहुत प्रसन्नता हुई है। इस पवित्र भूमिमें आने पर प्रथम वार जव आपने हमारा अत्यन्त सुन्दर और स्नेहपूर्ण सम्मान किया है और जव हमने, हम पर आपने जो स्नेह वर्षा की है, उसे समझ लिया है तो आपकी आज्ञासे मैं आजकी शाम उसका कुछ प्रतिदान करनेकी चेष्टा करना चाहता हूँ।

यह बिलकुल ही संयोगकी वात है कि मुझे अपने पंचम [वर्णके] भाइयोंसे मान-पत्र पानेका सम्मान प्राप्त हुआ और उसमें उन्होंने कहा कि उन्हें पीनेके पानीकी सुविधा नहीं है, उन्हें जीवन-निर्वाहके लिए आवश्यक वस्तुएँ नहीं मिलतीं और वे न जमीन खरीद सकते हैं, न अपने पास रख सकते हैं। न्यायके लिए उनका अदालतमें जाना भी मुश्किल है। सम्भवत: अन्तिम वातका कारण उनका भय ही हो। परन्तु इस भयके लिए निश्चय ही वे स्वयं दोषी नहीं कहे जा सकते। तव फिर इस स्थितिके लिए कौन जिम्मेदार है? क्या हम इस स्थितिको वनाये रखना चाहते हैं? क्या यह हिन्दू-धर्मका अंग है? मेरी समझमें ऐसा नहीं है। अव मुझे शायद यह जानना पड़ेगा कि वास्तवमें हिन्दू-धर्म क्या है। हिन्दुस्तानके वाहर रहते हुए मैं हिन्दू धर्मका जो अध्ययन कर सका हूँ उससे मैंने अनुभव किया है कि अपने अन्तर्गत "अछूत" कहे जानेवाला एक समाज वना छोड़ना, सच्चे हिन्दू धर्ममें नहीं आता। यदि कोई यह सिद्ध कर दिखाये कि यह हिन्दू धर्मका एक आवश्यक अंग है तो कमसे-कम मैं हिन्दू-धर्मके विरुद्ध विद्रोह घोषित कर दूँगा। (हर्ष-ध्वनि)। इस वातपर कि यह हिन्दू-धर्मका आवश्यक अंग है, मुझे विश्वास नहीं है और मैं तो आशा यही करता हूँ कि मृत्युपर्यन्त इसपर विश्वास नहीं करूँगा। अछूतोंके इस वर्गके लिए कौन उत्तरदायी है? मुझे वताया गया है कि सभी स्थानोंपर ब्राह्मण अधिकारपूर्वक अपनी श्रेष्ठताका लाभ उठा रहे हैं। क्या वे आज भी ऐसा कर रहे हैं? यदि कर रहे हों तो इस पापके भागी वे ही वनेंगे। तो इसी प्रतिदानकी मुझे घोषणा करनी है। और आपने मेरे प्रति जो स्नेह

१. विक्टोरिया टाउन हॉलमें आयोजित सभामें नगरपालिका-अध्यक्षके स्वागत-भाषणके उत्तरमें। सभाकी अध्यक्षता माननीय राववहादुर वी० के० रामानुजाचारियरने की थी।

दिखाया है उसका यही प्रतिदान मैं आपको दूँगा। अक्सर अपने सम्बन्धियों, मित्रों और अपनी प्रिय पत्नीके लिए मेरा स्नेह असाधारण पथका अनुगमन करता है। इसी प्रकार आपके स्नेहके प्रतिदान-स्वरूप में कुछ ऐसी बातें कह रहा हूँ जिन्हें सुननेके लिए आप शायद तैयार नहीं थे। पर मुझे लगता है कि ब्राह्मणोंके लिए पुनः अपने सहज गुण प्रतिष्ठित करनेका समय आ गया है। मुझे भवगद्गीताका वह सुन्दर श्लोक याद आता है, पर मैं उसे सुनाकर उपस्थित जनताको उत्तेजित न करूँगा, सिर्फ उसका सार मात्र देता हूँ। "सच्चा ब्राह्मण वह है जो पण्डित और अछूत दोनोंके प्रति समभाव रखे।"[१]

क्या मायावरम्के ब्राह्मण अछूतोंके प्रति समभाव रखते हैं? और वे मुझे बतायें कि उनके समभाव रखनेपर भी दूसरे उनका अनुकरण क्यों नहीं करते। यदि वे मुझसे कहें कि वे तो ऐसा करनेको तैयार हैं पर दूसरे उनका अनुकरण नहीं करेंगे तो जब-तक हिन्दू-धर्मके बारेमें मेरी जो धारणा है उसे मैं छोड़ न दूँ तबतक उनका विश्वास नहीं कर सकूँगा। और यदि ब्राह्मण स्वयं ऐसा समझते हैं कि वे तपस्या और संयमके कारण उच्च आसनपर विराजमान हैं तब तो उन्हें बहुत-कुछ सीखना है; और तब तो निश्चय ही वे ही देशके अभिशप्त और नष्ट होनेके लिए उत्तरदायी ठहरेंगे।

मेरे मित्र श्री अध्यक्ष महोदयने मुझसे यह प्रश्न पूछा है कि क्या देशके नेताओंसे मेरा झगड़ा है, मुझे कहना है, नहीं, ऐसा नहीं है। ऐसा आभास इसलिए होता है कि मैंने बहुत-सी ऐसी बातें सुनी हैं जो मुझे आत्म-सम्मान सम्बन्धी अपने विचारों और मेरी मातृभूमिके आत्म-सम्मानसे बेमेल जान पड़ती हैं। मुझे लगता है कि उन्होंने अपने कन्धोंपर जो पवित्र कर्तव्य-भार लिया है उसको वे सम्भवतः निभा नहीं रहे हैं। मैं यह तो निश्चयपूर्वक नहीं कह सकता कि मैं उन्हें समझने, उनसे कुछ सीखनेकी कोशिश कर रहा हूँ, लेकिन इतना सत्य है कि अभीतक मैं उन्हें समझ नहीं पाया हूँ। हो सकता है कि मुझमें उनका अनुसरण करनेकी योग्यता और सामर्थ्य न हो। मैं अपने विचारोंपर पुनर्विचार करूँगा। फिर भी आभास तो यही होता है कि अपने नेताओंसे मेरा विरोध है। जो-कुछ भी वे करते हैं या जो-कुछ भी वे कहते हैं वह किसी-न-किसी कारण मुझे पसन्द नहीं आता। जो-कुछ वे कहते हैं उसका अधिकांश मुझको पसन्द नहीं आता। यहाँ स्वागत अंग्रेजी भाषामें किया जाता है। कांग्रेसके कार्यक्रममें स्वदेशीपर एक प्रस्ताव मिलता है। यदि आप मानते हैं कि आप स्वदेशी हैं और तब भी आप इन्हें अंग्रेजीमें छापते हैं, तो कहना चाहिए कि मैं स्वदेशीका उपासक नहीं हूँ। मुझे ऐसी बातें असंगत लगती हैं। अंग्रेजी भाषाके विरुद्ध मुझे कुछ नहीं कहना है। परन्तु इतना तो कहूँगा ही कि यदि आप देशी भाषाओंका गला घोट दें और उनकी लाशपर अंग्रेजी भाषाकी इमारत खड़ी करें, (वाह! वाह!) तो आप सही अर्थमें स्वदेशीका समर्थन नहीं कर रहे हैं। यदि आप अनुभव करते हैं कि मैं तमिल नहीं जानता तो आपको मुझे क्षमा करना चाहिए, आप मुझे तमिल सिखलाएँ और सीखनेके लिए कहें। किन्तु आप उस सुन्दर भाषामें ही अपना स्वागत-भाषण दें और मेरे लिए उसका अनुवाद करा दें;

१. अध्याय ५, श्लोक १८।

तभी मैं समझूँगा कि [स्वदेशी] कार्यक्रमको आप कुछ हद तक निभा रहे हैं—पूरा कर रहे हैं; और केवल तभी मुझे लगेगा कि मुझे स्वदेशीकी शिक्षा दी जा रही है। जब हम मायावरम्‌से गुजर रहे थे तब मैंने पूछा कि क्या यहाँ हाथ-करघे चलते हैं और क्या यहाँ हाथ करघोंपर बुनाई करनेवाले जुलाहे भी हैं? मुझे बताया गया कि मायावरम्‌में ५० हाथ-करघे हैं। मैंने पूछा, वे क्या बुनते हैं? मालूम हुआ वे मुख्यतः हमारी बहनोंके लिए साड़ियाँ तैयार करते हैं? तब क्या स्वदेशीको केवल महिलाओं तक ही सीमित रखा जायेगा? क्या यह केवल उन्हींके लिए है? हमारा पुरुषवर्ग इन हाथ-करघोंपर, इन्हीं जुलाहोंसे अपने कपड़े तैयार नहीं करवाता [एक आवाज: यहाँ एक हजार हाथ-करघे हैं]। आप कहते हैं, यहाँ एक हजार करघे हैं। नेताओंका इसके बावजूद पुरुषोंके कपड़ोंकी व्यवस्था न कराना तो और भी बुरा है। (जोरकी करतल ध्वनि) यदि इन हजार करघोंसे सिर्फ स्त्रियोंकी आवश्यकताओंकी पूर्ति होती है तो आप दुगुने करघोंकी व्यवस्था कर दीजिए। तब कपड़ोंकी आपकी जरूरत स्वयं आपके जुलाहोंसे पूरी हो जायेगी और यहाँकी गरीबी खत्म हो जायेगी। मैं आपसे पूछता हूँ और अपने मित्र, अध्यक्ष महोदयसे पूछता हूँ कि आप अपनी पोशाकके लिए किस हदतक विदेशोंके ऋणी हैं। अगर वे मुझे यह बता दें कि बहुत प्रयत्न किया; किन्तु फिर भी अपनी पोशाकके लिए स्वदेशी वस्त्र मुहैया नहीं कर सके और इसीलिए उन्हें विदेशी वस्त्र पहनने पड़ते हैं तब तो मैं उनका शिष्य बननेको तैयार हूँ। मेरा तो यह अनुभव है कि बिना किसी अतिरिक्त व्ययके अपने लिए स्वदेशी पोशाक बनवा लेना मेरे लिए सर्वथा सम्भव है। तब फिर जो लोग कांग्रेसमें स्वदेशीका प्रस्ताव पेश करते हैं या उसे पेश करनेवाले माने जाते हैं, उनसे मैं स्वदेशीके रहस्यको कैसे समझूँ? मैं अपने नेताओं और मायावरम्‌के निवासियोंके चरणोंमें बैठकर कहता हूँ कि वे इस रहस्यका उद्घाटन करें, इसका भेद स्पष्ट करें, मुझे सिखायें कि मैं किस प्रकारका व्यवहार करूँ, वे मुझे समझाएँ कि क्या स्वदेशीका यही अर्थ है, क्या यही राष्ट्रीय आन्दोलनका अंग है कि मैं उन लोगोंकी, जो बेघर-बार हैं, जो अन्न और पानीके लिए चीख रहे हैं, प्रार्थनाएँ अस्वीकार कर दूँ और उन्हें भगा दूँ? यहाँ उपस्थित मित्रोंसे भी मैं ये ही प्रश्न करता हूँ। चूँकि मैं कुछ ऐसी बातें कह रहा हूँ जो आपके विरुद्ध जाती हैं इसलिए मुझे यह आशंका हो रही है कि कदाचित् मैं विद्यार्थी-वर्गका प्रेम-भाव और अपने नेताओंका आशीर्वाद खो दूँगा। किन्तु मेरी प्रार्थना है कि आप विशाल-हृदय बनें और अपने मनके एक कोनेमें मुझे भी स्थान दें। मैं उस कोनेमें निवास करनेका प्रयत्न करूँगा। यदि आप मुझे ज्ञान दें; शिक्षा देनेकी कृपा करें; मैं आपके द्वारा बताई हुई बातोंको बड़े विनीत भाव और पूरे मनोयोगसे सीखूँगा। मैं आपसे इसकी प्रार्थना और याचना कर रहा हूँ। किन्तु यदि आप मुझे अपनी बातोंका रहस्य नहीं समझा सके तो मैं पुनः आपसे और नेताओंसे अपना विरोध घोषित कर दूँगा। (देर तक हर्ष-ध्वनि)

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ३–५–१९१५

७०. पत्र: ए० एच० वेस्टको

मई ४, १९१५

प्रिय वेस्ट,

मैं तुम्हारे पत्रकी बातोंका जवाब क्रमसे दे रहा हूँ। तुम्हारा वकालत पास करना बेकार है। सम्भव है, उससे तुम कुछ अपराधी लोगोंको कानूनी सूक्ष्मताओंके आधार-पर बरी करा सको और कुछ निर्दोष लोगोंको कैदसे भी बचा सको; किन्तु यदि तुम इस बातपर विचार करो कि कितने कम लोगोंको अदालतसे काम पड़ता है तो तुम्हें तुरन्त मालूम हो जायेगा कि वकालत करना कोई मानव-हितका काम नहीं है। वकालत करनेका अधिकार पाये बिना तुम जो-कुछ कर सकते हो, वह सब तुम कर ही रहे हो। इससे अधिककी तुम्हें आवश्यकता नहीं है। यदि तुम्हें अवकाश हो तो अवश्य ही कानूनोंको पढ़ो, जैसा कि श्री गोखलेने पढ़ा है; यद्यपि वे वकील नहीं हैं।

मेरा पहला दौरा करीब-करीब खत्म हो रहा है। मुझे आशा है, इसके बाद मैं तुमको अधिक नियमित रूपसे पत्र लिख सकूँगा और 'इंडियन ओपिनियन' के लिए भी लेख भेज सकूँगा। मुझे बहुत तरहके अनुभव हो रहे हैं। मैं जो सोचता हूँ सो आज भी भारतमें पाया जाता है। यद्यपि निराशाजनक बातें भी अनेक हैं, किन्तु यहाँ आशान्वित करनेवाली बहुत-सी बातें भी मुझे दिखाई पड़ रही हैं।

हम दोनोंका स्वास्थ्य अच्छा है। यदि हम किसी एक स्थानपर टिक कर रहने लगें तो हमारा स्वास्थ्य और भी अच्छा हो जायेगा। इससे अधिक लिखनेके लिए अभी समय नहीं है।

हम दोनोंका स्नेह लो।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

[पुनश्च:]

मैं सलवानकी विधवा पत्नीसे मिल लिया हूँ और उसे सबसे छोटा लड़का मुझे देनेपर राजी भी कर लिया है। उसे ५ रुपया मासिक भत्ता मिलेगा। मैंने उससे भी अपने साथ हो जानेके लिए कहा; किन्तु वह राजी नहीं हुई।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (सी० डब्ल्यू० ४४१८)की फोटो-नकलसे।
सौजन्य: ए० एच० वेस्ट

७१. पत्र : नारणदास गांधीको

वैशाख वदी ५ [मई ४, १९१५][1]

चि० नारणदास,

लगता है, मैं यहाँ १० या ९ को पहुँचूंगा। जहाँ तक मेरा खयाल है, जमनादास संस्थाका सदस्य बन गया था; हो सकता है, मैंने गलत समझा हो। जमनादासका कहना है कि उसने कोई व्रत नहीं लिया। जिसने व्रत न लिया हो, वह सदस्य नहीं माना जा सकता, केवल छात्र रूपमें रह सकता है। विद्यार्थीको भी संस्थामें रहने तक तो व्रतका पालन करना ही पड़ेगा। सदस्योंको आजीवन व्रतका पालन करना चाहिए। जमनादास बाहर रह कर संस्थाके नियमोंका पालन करना चाहता है। मुझे लगता है कि उसके मनपर हरिलालके पत्रका प्रभाव हुआ है और उसके आक्षेपोंसे उसे दुःख हुआ है।

मूंगफली और मजूर खानेसे हममें से अधिकतर लोगोंको कोई नुकसान नहीं हुआ। एक दिनमें पांचसे ज्यादा चीजें न खानेसे हमारा अहिंसाव्रत दृढ़ होता है, क्योंकि इससे उनको छोड़कर बाकी वनस्पति जीवोंको भी हम उस दिन अभय दान देते हैं। इससे अस्वाद व्रतका पालन भी अधिक होगा, क्योंकि पांचसे अधिक चीजोंका स्वाद नहीं लिया जा सकेगा। अस्तेय व्रतका पालन भी होगा। क्योंकि यदि पांच चीजोंसे मन प्रसन्न कर लिया तो इच्छा करने पर भी अधिक न खाया जायेगा और खर्च कम होगा। मूंगफली पाक लेनेसे पहले मुझे सोचना पड़ेगा। तीन चीजें तो उसीमें हो जायेंगी; तो फिर उनके अतिरिक्त लेनेको दो ही चीजें बच रहेंगी। इलायची आदि भी चीजोंमें गिनूंगा। यह व्रत बहुत कठिन है, किन्तु मुझे उसका अभ्यास होता जा रहा है। अभी मन कूदता है, इसलिए पांच चीजोंसे भी अधिक चीजोंका स्वाद लेनेके लिए भाग-दौड़ करता है। अधिक मिलनेपर पूछना। बम्बईमें जितना बन सका उतना काम करूंगा। सबमें अहमदाबादके मामलोंको निपटानेकी ही बात चलती रहती है।

मेरे आनेकी तारीख माधवजीको[2] बता देना।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५६७०) से।
सौजन्य : नारणदास गांधी

१. पत्रमें दिनमें पाँच ही चीजें खानेके व्रतका उल्लेख है। यह व्रत गांधीजीने हरद्वारमें ९ अप्रैल १९१५ को लिया था।

२. कस्तूरबाके भाई।

७२. भाषण : नलौरमें[1]

मई ५, १९१५

सभापति महोदय और मित्रो, मैं आपको भाषण देकर कष्ट नहीं देना चाहता हूँ। आज सुबह श्रीमती बेसेंटने[2] वाग्विदग्धतापूर्ण ढंगसे और श्री शास्त्रियरने अपने बेजोड़, कठोर, पैने और निष्पक्ष तर्कसे व्यक्तिकी जिस स्वतन्त्रताका समर्थन किया है उस स्वतन्त्रताकी मुझे भी बहुत लगन है। आपकी स्वतन्त्रताकी रक्षाके लिए मैं इतना उत्सुक था कि मैंने तो एक योजना ही बना डाली थी; दुर्भाग्यसे वह सफल नहीं हुई। स्वागत-समितिके माननीय सभापति महोदय और वर्तमान सम्मेलनके अध्यक्ष[3] मेरी बातसे सहमत नहीं हुए। मैं यह सुझाव उनके सामने रखना चाहता था कि भावी कांग्रेस सभाओंमें और भावी सम्मेलनोंमें वे अपने भाषण पढ़ें नहीं बल्कि हम लोगोंके पढ़नेके लिए उसे बाँट दिया करें और इस तरह एक नया रास्ता दिखायें।

संयोगवश यह प्रस्ताव[4] ऐसे दो प्रस्तावोंके बाद पेश किया गया है जिनमें से एक तो मेरे पूज्य गुरु श्री गोखलेके सम्बन्धमें था और दूसरा था महामना वाइसरॉयके सम्बन्धमें, जिनकी अभी-अभी सर्वथा उचित प्रशंसा की गई है। दक्षिण आफ्रिकामें रहनेवाले आपके देशभाइयोंकी ओरसे महामना वाइसरॉयकी कृपाके लिए मैं उनके प्रति आभार प्रकट करता हूँ।

महोदय, यहाँ और इसके पहले दूसरे अनेक स्थानोंपर हमारे बारेमें जो-कुछ भी कहा गया है उसपर मैंने हर बार यही कहा है और फिर यही कहना चाहता हूँ कि यदि हम किसी भी प्रकार प्रशंसाके पात्र हैं तो उसका श्रेय भारत ही को जाता है। हमारा प्रेरणा-स्रोत तो भारतीय ही रहा है — अर्थात् श्री गोखले। उनका जीवन, उनके शब्द, उनकी कार्य-प्रणाली और उनका सन्देश सदैव मेरा पथ-प्रदर्शन करते रहे हैं। और आज भी मेरे लिए उनका महत्त्व बना हुआ है। यदि हम उनके जीवनसे

१. २१ वें मद्रास प्रान्तीय सम्मेलनमें।

२. श्रीमती बेसेंटने श्री नटेसनके प्रस्तावका समर्थन करते हुए कहा था कि दक्षिण आफ्रिकी संघर्षका सफलतापूर्ण अन्त भारत भूमिमें स्वतन्त्रता-संघर्षकी सफलताका पूर्वचिह्न है। जो-कुछ उन्होंने किया हम सिर्फ उसीके लिए धन्यवाद नहीं देना चाहते पर इसलिए भी कि उनके कामसे भविष्यमें भारतीय राष्ट्रको और बल मिलेगा। [सार्वजनिक जीवनमें] श्री गांधीका यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण योगदान है कि इन्होंने हमें एक महान् उद्देश्यके एकाग्र अनुगमनकी दिशामें आत्म-त्यागकी प्रेरणा दी और हम लोग यह बात मानने लगे कि सत्य और न्यायके लिए किसी भी प्रकारके कष्ट-सहनसे कोई अपमान नहीं होता; यहाँतक कि यदि व्यक्तिकी आत्मा मुक्त है तो जेल जाना भी अपमानजनक नहीं है — बल्कि वह उस आन्तरिक स्वतन्त्रताका मूल्य ही है।

३. माननीय बी० एन० शर्माकी अध्यक्षतामें।

४. जी० ए० नटेसन द्वारा पेश किये गये इस प्रस्तावमें "श्री और श्रीमती गांधीके महान् बलिदानोंके लिए हार्दिक कृतज्ञता" प्रकट की गई थी।

कुछ सीखें और उसे अपने जीवनमें उतारें तो वही उनका सर्वोत्तम स्मारक होगा। मेरा जीवन तो इसीके लिए समर्पित है और मेरा आपसे विनम्र निवेदन है कि आप हमें बिगाड़ें नहीं; दक्षिण आफ्रिकामें हमने जो-कुछ किया उसकी प्रशंसाका पात्र केवल हमें ही न मानें और उसके लिए अत्यधिक प्रशंसा न करें। मेरी आपसे यही विनय है। दक्षिण आफ्रिकामें जो होना था सो हो चुका। दक्षिण आफ्रिकामें क्या किया गया है, उसे हमारे वहाँ रहनेवाले देशभाई अच्छी तरह जानते हैं। वहाँ हमने जो नाम कमाया उसकी बिना पर यहाँ कुछ भी करना असम्भव है। मुझे लगता है, अत्यधिक प्रशंसासे दो तरहसे हमारा अपकार हो सकता है। एक तो यह सम्भव है कि अभिमानसे हमारा दिमाग फिर जाये और हम देशके किसी कामके न रहें। दूसरे, यह भी हो सकता है कि आप हमसे इतनी बड़ी-बड़ी आशाएँ बाँध लें जिन्हें हम पूरा न कर सकें और अन्तमें निराशा हाथ लगे।

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, ७-७-१९१५

७३. भाषण : नेलौरमें आयोजित छात्रोंकी सभामें

मई ६, १९१५

मानपत्र पढ़ा जा चुकनेके बाद श्री गांधीको भेंट किया गया और तब उन्होंने छात्रोंको सम्मेलनमें[1] ऐसा महत्त्वपूर्ण भाग लेने और स्वयंसेवकके रूपमें काम करनेपर धन्यवाद दिया। उन्होंने कहा: इस समय सभामें जो-कुछ कहा गया है जब तक उसको कार्य-रूपमें परिणत नहीं कर दिया जाता और जब तक लोग उस काममें लगनके साथ जुटे नहीं रहते तबतक ऐसे सम्मेलन व्यर्थ हैं। सम्मेलनमें उद्योगोंको प्रोत्साहन देनेके सम्बन्धमें बहुत-कुछ कहा गया है; किन्तु जब मैं सार्वजनिक भवनके उस भागमें गया जिसमें बुने हुए और नारायणवनम् और चितूर जिलेसे लाये हुए करघेपर बने कपड़े रखे हैं और वहाँ मैंने उनके मालिकसे पूछा कि वे कितना कपड़ा लाये थे और उसमें से कितना बिका है, तो उन्होंने बताया कि १००० रुपयेके कपड़ेमें से केवल ५० या ६० रुपयेका कपड़ा बिका है। कपड़ा काफी अच्छा है। फिर भी शिक्षित लोगों तकको कुछ रुपया खर्च करके थोड़ा कपड़ा खरीदनेके लिए तैयार नहीं किया जा सका। कमसे-कम यह बतानेके लिए ही कि वे स्वदेशी उद्योगोंसे प्रेम करते हैं, उन्हें कुछ-न-कुछ तो खरीदना ही था। जबतक स्थानीय देशी उद्योगोंको प्रोत्साहन देनेके सम्बन्धमें ऐसी स्थिति है, तबतक प्रगतिकी कोई आशा नहीं है। उन्होंने छात्रोंसे अनुरोध किया कि वे क्रियात्मक उदाहरण प्रस्तुत करें और केवल भाषण देकर ही सन्तुष्ट न हो जायें।

[अंग्रेजीसे]
न्यू इंडिया, ७-५-१९१५

१. मद्रास प्रान्तीय सम्मेलन; देखिए पिछला शीर्षक ।

७४. पत्रका अंश[1]

[नेलौर
मई ६, १९१५]

मैं यह मानता हूँ कि इन व्रतोंका पालन करनेमें ही कल्याण है। मैं संसारको जीतनेका जवर्दस्त पुरुषार्थ करना चाहता हूँ। जान पड़ता है, देश-सेवामें उस पुरुषार्थका समावेश हो जाता है। हमारे उद्देश्य ठीक हैं और मुझे ऐसा लगता है कि उनमें मेरी श्रद्धा अविचल है जो अनुभवसे और भी दृढ़ होती जा रही है। मैं चाहता हूँ कि तुम लोग भी ऐसा ही विश्लेषण करो। मैं यह नहीं चाहता कि तुममें से कोई भी मेरी इच्छाके वशीभूत होकर मेरे विचारोंको मान ले। मैं आग्रह भी नहीं करता। तुम सव इन व्रतोंको तभी लेना जव वे तुम्हें रुचें।

साथमें कई मद्रासी आयेंगे। ऐसा दिखाई देता है कि लोग ज्यादा हो जायेंगे। सलवानके[2] लड़केको साथ ला रहा हूँ। इस लड़केको तुम जानते हो। यह वही छोटा लड़का है जो फीनिक्समें ऊधम मचाता रहता था।

मैं यह पत्र नेलौरसे लिख रहा हूँ, यहाँ एक सम्मेलन[3] है, उसमें आया हूँ। कल सुवह जाऊँगा।

बापूके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५६७१) से।
सौजन्य: राधाबेन चौधरी

७५. वक्तव्य: भारतीय दक्षिण आफ्रिकी संघ, मद्रासकी सभामें[4]

मई ७, १९१५

श्री गांधीने अपने संक्षिप्त वक्तव्यमें कहा कि ट्रान्सवालका सत्याग्रह १९०६ में एशियाई संघर्षके साथ प्रारम्भ हुआ। जैसे-जैसे यह संघर्ष वढ़ता गया, स्वाभाविक रूपसे आवश्यकतानुसार उसका क्षेत्र विस्तृत हो गया और उसमें निम्नलिखित मुद्दे भी शामिल कर लिये गये: (१) दक्षिण आफ्रिका संघके प्रवासी विधानमें से जातीय निर्योग्यताओंको दूर कराना; (२) भारतीय पत्नियोंको चाहे उनका विवाह हिन्दू-धर्मके

१. इस पत्रके पहले चार पृष्ठ खो गये हैं। यह अवशिष्ट भाग भी कई जगह कटा-फटा है।
२. देखिए "पत्र: ए० एच० वेस्टको", ४-५-१९१५।
३. इक्कीसवाँ मद्रास प्रान्तीय सम्मेलन; देखिए "भाषण: नेलौरमें", ५-५-१९१५।
४. जी० ए० नटेसन ऐंड कम्पनीके अहातेमें।

अनुसार हुआ हो चाहे इस्लामी रीतिके अनुसार, वह दर्जा दिलाना जो दक्षिण आफ्रिका-में उन्हें सर्ल फैसलेके[1] नामसे प्रसिद्ध निर्णयके पूर्व प्राप्त था; (३) उस तीन पौंडी वार्षिक व्यक्ति-करको रद कराना जो प्रत्येक भूतपूर्व गिरमिटिया भारतीय, उसकी पत्नी और बच्चोंको — लड़का और लड़की दोनोंको, लड़कोंको १६ वर्षका हो जानेके बाद और लड़कियोंको १२ वर्षकी हो जानेके बाद — नेटाल प्रान्तमें स्वतन्त्र नागरिकोंके रूपमें रहनेका निश्चय करनेपर देना पड़ता था; (४) निहित अधिकारोंका खयाल रखते हुए उन वर्तमान कानूनोंका उचित अमल जो खास तौरसे ब्रिटिश भारतीयोंपर लागू होते हैं। ये सब मुद्दे गत वर्षके समझौतेके अनुसार पूर्ण रूपसे प्राप्त कर लिये गये हैं। और जहाँतक कानूनकी दृष्टिसे आवश्यक था, ये सब माँगें उस विधेयकमें शामिल कर ली गई हैं जो भारतीय राहत विधेयकके[2] नामसे प्रसिद्ध है। वैसे उल्लिखित विधेयकके पास होनेके तुरन्त बाद जनरल स्मट्स और मेरे बीच हुए पत्र-व्यवहारमें भी ये मुद्दे मिलेंगे। इस स्थितिमें और चूंकि भारतीय दक्षिण आफ्रिकी संघका संगठन इस संघर्षमें सिर्फ सहायता पहुँचानेके लिए हुआ था, संघका अपने आपको विघटित करना ही ठीक होगा। मैं उस धनकी व्यवस्थाका भी जिक्र कर देना ठीक समझता हूँ जो मुझे भारतसे और साम्राज्यके दूसरे भागोंसे भेजा गया था। संघर्षके दौरान विभिन्न अवसरोंपर आय-व्ययका पूरा ब्योरा प्रकाशित किया जाता रहा है। पहला ब्योरा एक सार्वजनिक पत्रके[3] साथ श्री गोखलेको भेजा गया था। दूसरा ब्योरा एक खुले पत्रके[4] साथ श्री टाटाको भेजा गया था। तीसरा ब्योरा तैयार है। उसे श्री गोखले और बम्बईकी सामान्य समितिके साथ सलाह-मशविरेके बाद प्रकाशित करनेकी बात थी। श्री गोखलेकी यही इच्छा थी। अब मैं श्री नट और समितिके मन्त्री श्री पेटिटसे मिलनेके लिए रुका हूँ ताकि ब्योरा प्रकाशित किया जा सके।[5] इस समय भारतमें अपने परिवारों सहित लगभग ३० सत्याग्रही हैं जिनको सहायता देनेकी आवश्यकता है। इनमें उन दो व्यक्तियोंकी विधवाएँ और बच्चे भी शामिल हैं, जिनकी संघर्षके दौरान गोलीसे मृत्यु हुई थी। इसलिए मेरा सुझाव है कि बची हुई रकम, जो अब भी भारतीय दक्षिण आफ्रिकी संघके पास है, उनकी सहायताके लिए दे डालना अच्छा होगा।[6] इस समय मैं संघको संघर्षके संकटपूर्ण दिनोंमें की गई उसकी

१. मार्च १४, १९१३ को दिये गये न्यायाधीश सर्लके इस फैसलेमें ऐसे विवाहोंको गैर-कानूनी करार दिया गया था जो ईसाइयोंकी रीतिसे सम्पन्न नहीं हुए थे और जिनका विधिवत् पंजीयन नहीं कराया गया था।

२. देखिए खण्ड १२, परिशिष्ट २५।

३. देखिए खण्ड १०, पृष्ठ २४५-४९।

४. देखिए खण्ड ११, पृष्ठ २४५-४९।

५. देखिए "पत्र: जे० बी० पेटिटको", १६-६-१९१५।

६. बादमें लीगने एक प्रस्ताव द्वारा अपने आपको विघटित करते हुए बची हुई रकम गांधीजीको भेंट कर दी थी।

महान् और बहुमूल्य सहायताके लिए दक्षिण आफ्रिकी भारतीयोंकी ओरसे धन्यवाद भी देना चाहता हूँ। मैं किसी विशेष व्यक्तिका उल्लेख नहीं करना चाहता, परन्तु उन बहुतसे ट्रान्सवाली निर्वासितोंके, जो १९०९ में मद्रासमें थे, प्रतिनिधिके रूपमें मैं अपना कर्तव्य समझता हूँ कि श्री नटेसनको उनकी ओरसे हार्दिक धन्यवाद दूँ; क्योंकि भारतमें इन निर्वासितोंके निर्वासन-कालमें उन्होंने उनकी जरूरतोंका बड़ा ध्यान रखा था। संघके अध्यक्ष और सदस्योंको इस संघर्षमें नैतिक और आर्थिक सहायता पहुँचानेके लिए अपना हार्दिक धन्यवाद देनेके लिए मैं स्वयं उपस्थित हो सका, इस बातकी मुझे बड़ी खुशी है।

[अंग्रेजीसे]

लीडर, २४-६-१९१५

७६. भाषण : बंगलौरमें[1]

मई ८, १९१५

प्यारे देशभाइयो,

जिस समारोहके लिए आपने मुझे आमन्त्रित किया है उसका उद्घाटन करनेसे पहले मैं इतना कहना चाहता हूँ कि इस महान अवसरपर आप लोगोंने मुझे बुलाकर मुझपर बहुत कृपा की है।

जो सुन्दर कविता[2] मैंने अभी सुनी उसमें कहा गया है कि ईश्वर उनके साथ रहता है जिनके वस्त्र धूल-भरे और तार-तार हैं। मेरा ध्यान तुरन्त ही अपने कपड़ोंकी ओर गया और मैंने देखा कि न तो वे धूल-धूसरित हैं और न फटे हुए। वे बिलकुल बेदाग और साफ हैं। ईश्वर मुझमें नहीं है। इसके साथ और बातें भी होती हैं; मगर हो सकता है मैं उनमें भी पूरा न उतरूँ। और मेरे प्यारे देशवासियो, हो सकता है, आप सब भी पूरे न उतरें। और यदि हम इसपर विचार करें तो हमें उस व्यक्तिका आदरपूर्वक स्मरण करना चाहिए। जिसके चित्रका आज प्रातःकाल अनावरण करनेके लिए आपने मुझसे कहा है। राजनीतिके क्षेत्रमें मैंने अपने-आपको उनका शिष्य माना है, वे मेरे राजनीतिक गुरु हैं और यही दावा मैं भारतीय जनताकी ओरसे भी करता हूँ। यह निर्णय मैंने १८९६ में घोषित किया था और मुझे इस निर्णयके लिए कभी कोई अफसोस नहीं हुआ।

श्री गोखलेने मुझे यही शिक्षा दी है कि देश-प्रेमका दावा करनेवाला प्रत्येक भारतीय राजनीतिके क्षेत्रमें सिर्फ बातें न करके ऐसा ठोस काम करके दिखाए, जिससे देशका राजनैतिक जीवन और उसकी संस्थाएँ धर्ममय बन सकें। उन्होंने मेरे सम्पूर्ण जीवनको प्रेरित किया और आज भी प्रेरित कर रहे हैं। और उसीके फलस्वरूप मैं अपनेको शुद्ध

१. समाज सेवा लीगके अनुरोधपर गवर्नमेंट हाई स्कूलमें श्री गोखलेके चित्रका अनावरण करते हुए।

२. आशय उस प्रसिद्ध गीत (बँगला गीतांजलि, सं० ११९) से है जिसमें कहा गया है: "यह भजन, पूजन, साधन और आराधना रहने दे। यहाँ दरवाजा बन्द करके मन्दिरके एकान्त कोनेमें क्यों बैठा हुआ है? प्रभु तो धूपमें और वर्षामें वहाँ सबके साथ खड़े हैं। उनके दोनों हाथ मिट्टीसे सने हुए हैं।"

और धर्ममय बनाना चाहता हूँ। मैंने अपने-आपको उसी आदर्शके लिए न्यौछावर कर दिया है। मैं इसमें असफल हो सकता हूँ लेकिन जिस हदतक असफल होऊँगा उस हदतक यही मानूँगा कि मैं अपने गुरुका योग्य शिष्य नहीं था।

देशके राजनैतिक जीवनको धर्ममय बनानेका अर्थ क्या है? अपने-आपको धर्ममय बनानेका अर्थ क्या है? यह प्रश्न मेरे मनमें कई बार उठा है। आपके लिए इसका एक अर्थ हो सकता है, मेरे लिए दूसरा। भारत सेवक समाज (सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी) के विभिन्न सदस्यों तक के लिए इसके विभिन्न अर्थ हो सकते हैं। अर्थकी यह कठिनाई एक बड़ी कठिनाई है और इससे वे सब लोग उलझनमें पड़ जाते हैं जो अपने देशसे प्रेम करना चाहते हैं, जो अपने देशकी सेवा करना चाहते हैं और जो अपने देशका सम्मान करना चाहते हैं। मुझे [इसका यह अर्थ] लगता है कि राजनैतिक जीवन व्यक्तिगत जीवनकी एक झंकार होना चाहिए; और ये दोनों अलग-अलग नहीं हो सकते।

मैं उन साधुमना राजनीतिज्ञके समीप उनके जीवनके अन्तकाल तक रहा और मैंने उनमें कोई अहंकार नहीं पाया। समाज सेवा संघके भाइयो, मैं आपसे पूछता हूँ कि क्या आपमें अहंकार नहीं है? यदि श्री गोखले चमकना चाहते थे, अपने देशके राजनैतिक क्षेत्रमें चमकना चाहते थे, तो इसलिए नहीं कि उनको जनतामें वाहवाही मिले, बल्कि इसलिए कि उनके देशको लाभ पहुँचे। उन्होंने अपने प्रत्येक गुणको विकसित किया; इसलिए नहीं कि संसारमें उनकी प्रशंसा हो बल्कि इसलिए कि उनके देशको उससे लाभ पहुँचे। उन्होंने जनतासे वाहवाही नहीं चाही; फिर भी वह उनपर बरसाई गई, उनपर लादी गई। वे चाहते थे कि उनके देशको लाभ पहुँचे और यही महान प्रेरणा हमें उनसे मिलती है।

बहुत-सी बातें हैं जिनके लिए भारतको दोष दिया जाता है; और उनमें तथ्य भी है। और यदि आप अपनी कमियोंमें आज एक और [वचन और कर्मकी भिन्नता] जोड़ लें तो इसका दोष आपपर ही नहीं, आजके उत्सवमें भाग लेनेके कारण मुझपर भी होगा। परन्तु अपने देशवासियोंपर मुझे बड़ा भरोसा है।

आज आप मुझसे इस चित्रका अनावरण करनेके लिए कहते हैं। मैं सच्चे हृदयसे ऐसा कर रहा हूँ, और सचाई ही हमारे जीवनका ध्येय होना चाहिए। (देरतक हर्ष ध्वनि और तालियाँ)

[अंग्रेजीसे]

इंडियन रिव्यू, मई १९१५

७७. बंगलौरके नागरिकोंके साथ वार्तालाप

मई ८, १९१५

आज कुछ नागरिक श्री गांधीके निवास-स्थान शेषाद्रि रोड, बंगलौरमें उनसे मिले।

भारतकी गरीबीके बारेमें पूछे जानेपर श्री गांधीने कहा कि देश दिनपर-दिन दरिद्र होता जा रहा है और इस दरिद्रताका कारण देशी करघोंकी बुनाईका काम खत्म करनेवाली भीषण प्रतिद्वन्द्विता और इस देशसे कच्चे मालका बराबर बाहर भेजा जाना है।

उन्होंने कहा :

हमारा रहन-सहन एकदम यूरोपीय ढंगका होता जा रहा है और इस तरह हम बहुत हदतक अपना आत्माभिमान खो बैठे हैं। हम लोग अंग्रेजीमें ही सोचते और बातचीत करते हैं। इस प्रकार हम लोग अपनी देशी भाषाओंको कंगाल बना रहे हैं और जनताकी भावनाओंसे विमुख होते जा रहे हैं। अपनी मातृभूमिकी सेवा करनेके लिए अंग्रेजी भाषाका ज्ञान बहुत आवश्यक नहीं है।

वर्ण-व्यवस्थाका उल्लेख करते हुए उन्होंने कहा :

जाति-व्यवस्था हिन्दू-धर्मका बड़ा बल है और वह उसका रहस्य है।

श्री गांधीका घर

जब श्री गांधीसे प्रश्न किया गया कि आप भारतमें कहाँ बसेंगे तब उन्होंने उत्तर दिया :

मुझपर जोर डाला जा रहा है कि मैं बंगालमें रहूँ। लेकिन मुझे गुजरातकी बहुत-सी बातोंका ज्ञान है और वहाँसे मेरे पास बहुत-से पत्र भी आ रहे हैं।

पुस्तकालयकी आवश्यकता

देशी भाषाओंका साहित्य बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। मैं एक ऐसा पुस्तकालय चाहता हूँ जिसमें सब [भारतीय भाषाओंकी] पुस्तकें संगृहीत की जायें। मित्रोंसे मेरी प्रार्थना है कि वे ऐसा पुस्तकालय स्थापित करनेके लिए आर्थिक सहायता दें।

आधुनिक सभ्यता एक अभिशाप

यूरोप और भारत, सभी जगहोंमें आधुनिक सभ्यतासे बड़ी भारी हानि हो रही है। युद्ध इस आधुनिक सभ्यताका प्रत्यक्ष परिणाम है; जिसे देखो वही युद्धकी तैयारियाँ कर रहा है।

बड़ा भारी नैतिक बल

सत्याग्रह एक जबर्दस्त नैतिक बल है; वह दुर्बलके लिए भी है और बलवान्के लिए भी। आत्मिक बल अपने-आपपर निर्भर करता है। आदर्शोंको आचारमें उतारना चाहिए, नहीं तो वे कारगर नहीं हो पाते। आधुनिक सभ्यता पाशविक बल है।"

आदर्शको जानना एक बात है, और उसको कार्य-रूपमें परिणत करना दूसरी बात है; उससे अनुशासनमें वृद्धि होती है और फलस्वरूप अधिक सेवा की जा सकती है;

और अधिक सेवाका अर्थ है सरकारको ही अधिक लाभ। सत्याग्रह एक जबर्दस्त आक्रमणशील शक्ति है। मन तो स्वभावतः चंचल है; उसमें प्रत्येक प्रकारके विचारके लिए स्थान है।

तीन दोष

धन, भूमि और स्त्री बुराईका घर हैं। बुराईका परिहार होना चाहिए। मुझे अपने सुखके लिए भूमि, स्त्री या धनकी आवश्यकता नहीं है। दूसरोंकी बुद्धि भ्रष्ट है इसीलिए मैं भी वैसा क्यों हो जाऊँ? यदि आदर्शोंके अनुरूप आचरण किया जाये तो दोष-पूर्ण कार्य-कलापोंकी गुंजाइश बहुत कम बच रहे। सार्वजनिक जीवनको ढालनेकी आवश्यकता है।

भारतमें साधु

हर नदी अपना प्रवाह बदलती है। यहां पन्द्रह लाख साधु हैं और यदि प्रत्येक साधु अपने कर्त्तव्यका पालन करे तो भारतका बहुत-कुछ हित हो सकता है। जगद्गुरु शंकराचार्य अब 'जगद्गुरु' कहलानेके योग्य नहीं हैं; क्योंकि अब उनमें शक्ति नहीं बची।

भारतीय आदर्श

विद्वेषपूर्ण भौतिक गति-विधि अच्छी नहीं होती। उससे ऐश-आरामकी चीजोंकी-ही वृद्धि होती है। भारतीय संस्थाओंपर, जिन्हें फिरसे हिन्दू-धर्मके आदर्शोंके अनुसार ढालना होगा, आधुनिक उद्योगों और कार्योंका अत्यधिक भार नहीं डाला जाना चाहिए। पुण्य या सत्कार्यको जितना अधिक महत्त्व भारतवर्षमें दिया जाता है उतना विदेशोंमें और कहीं नहीं। दूसरे देशोंके लोग दशरथको मूर्ख समझते हैं; क्योंकि उन्होंने अपनी स्त्रीको दिये वचनका पालन किया। पर भारतीय मानते हैं कि 'प्राण जाहि पर वचन न जाई'। यह एक बड़ी बात है। भौतिक क्रिया-कलाप दोषोत्पादक है। अन्तमें विजय सत्यकी होती है।

प्रवासी

देशके लोगोंका दूसरे देशमें जा बसना मातृभूमिके लिए लाभदायी नहीं होता। प्रवासी किसी प्रकारकी नैतिक उन्नति करके नहीं लौटते। यह सब हिन्दू-धर्मके विरुद्ध है। [विदेशोंमें] न मन्दिर बन पाते हैं, न वहां उत्सवों और त्यौहारोंको मनानेका अवसर मिलता है। वहां हमारे धार्मिक-पुरुष पुरोहित आदि भी नहीं जाते और जो जाते हैं वे अधिकांश काठके पुतले होते हैं। प्रवासी काफी प्रपंच करते हैं और उससे समाजमें भ्रष्टाचार फैलता है। यह साहसपूर्ण उद्योग-धन्धा भी नहीं कहला सकता। सम्भव है, वे वहां आसानीसे अधिक पैसा कमा लें; किन्तु इसका अर्थ तो यह हुआ कि वे परिश्रम करके और ईमानदार बने रहकर धनोपार्जन नहीं करना चाहते। प्रवासी अपेक्षाकृत सुखी भी अधिक नहीं होते और उनकी भौतिक आवश्यकताएँ भी बढ़ जाती हैं।

थियोसॉफिकल सोसाइटी

थियोसॉफिकल सोसाइटीके सम्बन्धमें प्रश्न किये जानेपर श्री गांधीने कहा:

व्यक्तियोंको छोड़ दीजिए, थियोसॉफिकल सोसाइटीमें बहुत-सी अच्छी बातें हैं। उसने नये विचारों और भावोंको गति दी है।

[अंग्रेजीसे]

न्यू इंडिया, १०-५-१९१५

७८. बंगलौरके नागरिकोंको उत्तर[1]

मई ८, १९१५

सभापति महोदय और मित्रो,

मैं सोचता हूँ कि यदि मैं अपनी और अपनी पत्नीकी ओरसे, आपने हमारा जो अपूर्व सम्मान किया है उसके लिए आपको हृदयसे धन्यवाद दूँ, तो शायद वह केवल धृष्टता ही होगी। मेरे पास धन्यवादके लिए उपयुक्त शब्द नहीं हैं और एक विचार तो मुझे और भी त्रस्त कर रहा है। मैं सोच रहा हूँ, क्या मैं या हम इस सम्मानके योग्य हैं? क्या हम इस प्राच्य उदारतापूर्ण प्रेमके अधिकारी हैं? अध्यक्ष महोदयने[2] इस प्रेम-प्रकाशनका कारण बताया है और श्री गोखलेका हवाला दिया है। उस कीर्तिका मुझे बहुत लाभ मत उठाने दीजिए। आप तो मुझे केवल मेरे काम और मेरी कमियोंकी कसौटी पर कसिए। तभी आप मुझे जान सकेंगे। मेरा मार्ग बड़ा कठिन मार्ग है। उसमें फूल और काँटे दोनों बिछे हैं। उस सज्जन राजनयिक [गोखले] ने मेरे आसपास जो प्रकाश-मण्डल खींच दिया था, वह निःशेष हो चुका है। हाथ कंगनको आरसी क्या। इतने लोग यहाँ मेरे प्रति सम्मान प्रदर्शित करनेके लिए जमा हुए हैं। आज सुबह[3] आपने इससे भी बड़ा सम्मान प्रगट किया और स्वागत-समितिने इस उद्देश्यसे हमारे वार्तालापकी[4] व्यवस्था की कि मैं आपके सामने अपने दिलकी बातें रख सकूँ और अपने देशवासियोंके साथ शान्तिपूर्ण वार्तालाप करके उनके गहनतम विचारोंको समझूँ; यह और भी बड़े सम्मानकी बात है।[5]

मुझे गाड़ीमें घुमाया गया; मैं यह नहीं चाहता था। उसका कारण है, हमें जनताके सेवकोंका आदर करके उनका दिमाग खराब नहीं करना चाहिए। उन्हें चुपचाप काम करने दीजिए। इस विचारको प्रोत्साहन नहीं देना चाहिए कि काम करनेसे सम्मान होगा। सार्वजनिक कार्यकर्त्ताओंको यह अनुभव होने दीजिए कि [कामके बावजूद] उनका अपमान किया जायेगा, उनकी उपेक्षा की जायेगी; इतनेपर भी वे अपने 'देशसे प्रेम करें', क्योंकि सेवा ही मेवा है। हमारी जातिके विरुद्ध यह अभियोग लगाया गया है कि हम दिखावा बहुत पसन्द करते हैं और व्यावहारिक तरीकोंकी हममें कमी है। हम यह अभियोग स्वीकार करते हैं। क्या हमें आधुनिक तरीकोंका अनुकरण करना है; अथवा हमें

१. एल्बर्ट विक्टरी कन्जर्वेटरी, लाल बागमें।

२. नगरपालिका परिषद्के सभापति दीवान बहादुर पुत्तना चेट्टी; स्वागत भाषण भी आपने ही पढ़ा था।

३. गांधीजीके आगमनपर स्टेशनपर उनका बड़ा भव्य स्वागत किया गया था। इसके बाद उन्होंने श्री गोखलेके चित्रका भी अनावरण किया।

४. देखिए पिछला शीर्षक।

५. यह अनुच्छेद गणेश एंड कं० द्वारा प्रकाशित **महात्मा गांधी: हिज़ लाइफ, राइटिंग्ज़ एंड स्पीचेज़**से लिया है।

उस प्राचीन सभ्यताको अपनाना है जो इतने आघातोंके बावजूद जीवित है? आपको और हमको राजनीतिके मंचपर आध्यात्मिक दृष्टि रखकर काम करना है। और यदि हम यह कर सकें तो हम विजेताओंको जीत लेंगे। नया प्रभात उस दिन होगा जब हम अंग्रेजोंको अपना साथी, अपने देशका नागरिक मान सकेंगे। (हर्ष-ध्वनि) वह दिन जल्दी ही आयेगा। किन्तु कब आयेगा इसका अन्दाज लगाना है। मुझे कई सच्चरित्र, निष्ठावान्, कुलीन और प्रभावशाली अंग्रेजोंसे मिलने-जुलनेके अपूर्व अवसर मिलते रहे हैं। मैं आपको विश्वास दिला सकता हूँ कि आपाधापीकी वर्तमान स्थिति बीत रही है और जल्दी ही एक नवीन सभ्यताका आगमन होनेवाला है। वह आजकी सभ्यतासे बढ़कर होगी। भारत एक महान् आश्रित-राज्य है और मैसूर एक बड़ी देशी रियासत है। आपको ब्रिटिश शासकों और ब्रिटिश राजनीतिज्ञोंके पास जो सन्देश पहुँचाना है वह सन्देश है राम-राज्यका। मैसूरमें एक राम-राज्य स्थापित कीजिए और आपका मन्त्री वशिष्ठ जैसा हो, सब जिसकी आज्ञा शिरोधार्य करें। (देर तक तालियाँ) मेरे साथी देशवासियो, तभी आप विजेताओंसे अपनी बात मनवा सकेंगे। (देर तक तालियाँ)।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन रिव्यू, मई १९१५

महात्मा गांधी: हिज लाइफ, राइटिंग्ज ऐंड स्पीचेज

७९. पत्र: जी० ए० नटेसनको

बम्बई
मई १०, १९१५

प्रिय श्री नटेसन,

आपने मेरे प्रति जो असाधारण प्रेम दिखाया है उसके लिए मैं आपको कैसे धन्यवाद दूँ?[1] चूँकि आपने यह-सब देशके लिए किया था, इसलिए मैंने इसे स्वीकार कर लिया। मैं इसका पात्र बननेका प्रयत्न करूँगा। हाँ, मद्रासके प्रति मेरे मनमें पक्षपात तो है ही।

हमें यहाँ पहुँचनेमें कोई खास असुविधा नहीं हुई। चूँकि सभाके खास-खास लोग इस समय बम्बईमें नहीं हैं, इसलिए मैं आज रातको अहमदाबाद चला जाऊँगा। लगता है, सुन्दरम्का[2] विकास ठीक हो रहा है। नायकर[3] तो हीरा है ही। हमारे वयोवृद्ध मित्र[4] बिलकुल ठीक हैं। और मेरी पत्नी तो आपके सिवा दूसरी बात नहीं कर पाती।

१. गांधीजीकी मद्रास-यात्रामें।

२. और ३. सत्याग्रह-आश्रमके सदस्य, देखिए अगला शीर्षक।

४. रेवाशंकर झवेरीके बड़े भाई; देखिए "पत्र: नारणदास गांधीको", २५-४-१९१५।

कृपया मुझे तमिल-पुस्तकें अवश्य भेजें। मुझे तो पढ़ना शुरू करनेवालों और सुन्दरम् जैसे लोगोंके लिए पुस्तकें चाहिए। मुझे डॉ० पोप[1] की सब पुस्तकें चाहिए। कृपा करके इसपर जितनी जल्दी हो सके ध्यान दें।

और आप हमें वे ओढ़नेकी चद्दरें तो भेजेंगे ही?

कृपया अपनी माताजी और पत्नी एवं उन-सब मित्रोंसे जो हमें स्मरण करते हों यथायोग्य कहें।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (जी० एन० २२२८) की फोटो-नकलसे।

८०. आश्रम: आनुमानिक व्यय[2]

वैशाख वदी १३,
मंगलवार [मई ११, १९१५][3]

दादा
बा
मैं स्वयं
सुन्दरम्
नायकर
संतोक
रूखी
राधा
मणिलाल
रामदास
देवदास
काका
नारणजी
उनकी पत्नी

मगनभाई
उनकी पत्नी
उनका पुत्र
मगनलाल
शिवपूजन
शान्ति
नवीन
कुप्पु
फकीरी
वाला
चावडाकी लड़की
छोटालाल
नारणदास
पार्थ सारथी

शान्ति
रणछोड़
काकू
केशू
कृष्ण
प्रभुदास
राजंगम
रति
मगन
तीन अन्य तमिल

१. जॉर्ज उग्लो पोप (१८२०-१९०८); दक्षिण भारतमें मिशनरी कार्यकर्त्ता, १८३९-८१; ऑक्सफोर्ड युनिवर्सिटीमें तमिल तथा तेलुगुके प्राध्यापक, १८८४-९६; तमिल भाषा सम्बन्धी कुछ पुस्तकोंके लेखक तथा कुरल और तिरुवाचकम्के अनुवादक। देखिए खण्ड ८, पृष्ठ १३१।

२. “आश्रमके संविधानका मसविदा”, २०-५-१९१५ से पूर्व, भी देखिए।

३. यह विवरण अहमदाबादके सेठ मंगलदास गिरधरलालकी जानकारीके लिए तैयार किया गया था; देखिए “डायरी: १९१५”।

आरम्भमें संस्थामें चालीस लोग होंगे। कुछ समयमें इस संख्याके पचास हो जानेकी सम्भावना है।

हर महीने औसतन दस अतिथि आनेकी सम्भावना है।

इनमें तीन या पांच सपरिवार होंगे, इसलिए स्थानकी व्यवस्था ऐसी होनी चाहिए कि परिवारवाले लोग अलग रह सकें और शेष एक साथ।

इसको ध्यानमें रखते हुए तीन रसोईघर हों और मकान कुल ५०,००० वर्ग फुट क्षेत्रफलमें बने तो सब लोगोंके लायक जगह हो जायेगी।

इसके अलावा ३,००० पुस्तकें रखने लायक पुस्तकालय और अलमारियां चाहिए।

कमसे-कम पांच एकड़ जमीन खेती करनेके लिए चाहिए।

कमसे-कम तीस लोग काम कर सकें इतने खेतीके औजार चाहिए। इनमें कुदालियों, फावड़ों और खुरपोंकी जरूरत होगी।

बढ़ईगीरीके निम्नलिखित औजार भी होने चाहिए:

५ बड़े हथौड़े
३ बसूले
५ छोटी हथौड़ियां
२ एरन
३ बर्मे
१० छोटी-बड़ी छेनियां
४ रंदे
१ नापनी
४ रेतियां
४ छोटी-बड़ी बेधनियां
४ आरियां
५ छोटी-बड़ी सँड़सियां
२० स्क्रू कीलें—छोटी और बड़ी
१ मोंगरा (लकड़ीका हथौड़ा)

मोचीके औजार

मेरे अनुमानसे इन-सबपर कुल ५०० रुपया खर्च आयेगा।

रसोईके लिए आवश्यक सामानपर १५० रुपया खर्च आयेगा।

स्टेशन दूर होगा तो सामानको या मेहमानोंको लानेके लिए एक बैलगाड़ी या घोड़ा-गाड़ी चाहिए।

मैं खानेका खर्च १० रुपये मासिक प्रतिव्यक्ति लगाता हूँ। मैं नहीं समझता कि हम यह खर्च पहले वर्षमें निकाल सकेंगे; वर्षमें औसतन ५० लोगोंका खर्च ६,००० रुपये आयेगा।

मुझे मालूम हुआ है कि प्रमुख लोगोंकी इच्छा यह है कि अहमदाबादमें यह प्रयोग एक वर्ष तक किया जाये। यदि ऐसा हो तो अहमदाबादको ऊपर बताया गया सब

खर्च उठाना चाहिए। मेरी माँग तो यह थी कि अहमदाबाद मुझे पूरी जमीन और मकान सभी दे दे तो बाकी खर्च मैं कहीं औरसे या दूसरी तरह जुटा लूँगा। अब चूँकि विचार बदल गया है, इसलिए ऐसा लगता है कि एक वर्षका या इससे कुछ कम दिनोंका खर्च अहमदाबादको उठाना चाहिए। यदि अहमदाबाद एक वर्षके खर्चका बोझ उठानेके लिए तैयार न हो, तो ऊपर बताये गये खानेके खर्चका इन्तजाम मैं कर सकता हूँ। चूँकि मैंने खर्चका यह अनुमान जल्दीमें तैयार किया है, इसलिए यह सम्भव है कि कुछ मदें मुझसे छूट गई हों। इसके अतिरिक्त खानेके खर्चके सिवा मुझे स्थानीय स्थितियोंकी जानकारी नहीं है। इसलिए मेरे अनुमानमें भूल भी हो सकती है।

यदि अहमदाबाद सब खर्च उठाये तो विभिन्न मदोंमें खर्च इस तरह होगा:

किराया — बँगला और खेतकी जमीन

किताबोंकी अलमारियोंका खर्च

बढ़ईके औजार

मोचीके औजार

चौकेका सामान

एक बैलगाड़ी या घोड़ागाड़ी

एक वर्षके लिए खानेका खर्च: ६,०००

मेरा खयाल है कि हमें लुहार और राजके औजारोंकी भी जरूरत होगी। दूसरे बहुतसे औजार भी चाहिए; किन्तु इस हिसाबमें मैंने उनका खर्च और शिक्षण-सम्बन्धी सामानका खर्च शामिल नहीं किया है। शिक्षणके सामानमें पाँच-छः देशी हाथ करघोंकी आवश्यकता होगी।

मोहनदास करमचन्द गांधी

घरेलू सामान

४ पतीले — चालीस आदमियोंका खाना बनानेके योग्य।

२ छोटी पतीलियाँ दस आदमियोंके योग्य

३ पानी भरनेके लिए पीतल या ताँबेके कलशे

४ मिट्टीके घड़े

४ तिपाइयाँ

१ कढ़ाई दस रतल खाना पकाने योग्य

३ कलछियाँ

२ आटा गूँधनेकी परातें

१ पानी गर्म करनेका बड़ा पतीला

३ केतलियाँ

५ बाल्टियाँ या नहानेका पानी रखनेके बर्तन

५ पतीलोंके ढक्कन

५ अनाज रखनेके लिए बर्तन

३ तश्याँ

१० थालियाँ
१० कटोरियाँ
१० गिलास
१० प्याले
४ कपड़े धोनेके टब
२ छलनियाँ
१ पीतलकी छलनी
३ चक्कियाँ
१० चम्मच
१ कर्छी
१ हमामदस्ता — मूसली
३ झाड़ू
६ कुर्सियाँ
३ मेज
६ किताबें रखनेकी अलमारियाँ
३० दवातें
६ काले तख्ते
६ रैक
३ भारतके नक्शे
३ दुनियाके नकशे
२ बम्बई अहातेके नक्शे
१ गुजरातका नक्शा
५ हाथ-करघे
वढ़ईके औजार
मोचीके औजार
खेतीके औजार
४ चारपाइयाँ
१ गाड़ी
५ लालटेन
३ कमोड
१० गद्दे
३ चैम्बर पॉट
४ सड़ककी बत्तियाँ

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (एस० एन०

८१. पत्र : मगनलाल गांधीको

[अहमदाबाद]
वैशाख वदी ०)) गुरुवार [मई १३, १९१५][1]

चि० मगनलाल,

आज गुरुवार है। आजका लिखा पत्र तुम्हें सोमवार या रविवारको मिल जायेगा। यहीं बँगला[2] लेनेका निर्णय किया है। जमीन वगैरह फिर देखेंगे। बँगलेका किराया और औजारों आदिका खर्च अहमदाबाद देगा; और वर्तन आदिका भी। खानेका खर्च हम उठा लेंगे। मैं आज राजकोट जा रहा हूँ। ज्यादासे-ज्यादा मंगलवार तक अहमदाबाद वापस लौट आऊँगा। तुम वहाँसे सोमवारको रवाना हुए[3] तो मंगलवारकी सुवह दिल्ली पहुँच कर, बुधवारको अहमदाबाद पहुँच सकोगे। तारीख तय करके रवानगीका तार देना। कब पहुँचोगे यह तारमें लिखना। इसके साथ २०० रुपयेके नोट भेजता हूँ। यदि मैं भूलता नहीं तो तुम्हें १६ टिकट लेने होंगे।

अब पंडितको कलकत्ता भेज देना। फिर भी यदि तुम्हें ऐसा लगे कि उसे तुम्हारे साथ आना चाहिए तो वह आ जाये। किन्तु अपना किराया उसे स्वयं देना चाहिए। तुम्हें जिस दिन यह पत्र मिलेगा उस दिन मैं राजकोटमें रहूँगा, और तुम्हारे पहुँचनेके दिन अहमदाबादमें। तुम्हें सबसे अधिक सुविधाजनक गाड़ी दिल्ली होकर मिलेगी। लक्सर, सहारनपुर, दिल्ली, अजमेर, पालनपुर, और अहमदाबाद। तुम हरद्वारसे अहमदाबादका सीधा टिकट लोगे तो उससे पाँच रुपयेकी बचत होगी। किराया पहले सौ मीलका ढाई पाई प्रति मील और फिर दो पाई प्रति मील बैठता है। मेलमें इन्टर ही है। जिसमें तीसरा दर्जा भी होता है, वह एक्सप्रेस दिल्लीसे चलती है। और २७ से ३० घंटेमें अहमदाबाद पहुँचती है। ऐसा जान पड़ता है कि तुम्हें लक्सर, सहारनपुर और दिल्ली, तीन जगह गाड़ी बदलनी ही पड़ेगी। यदि वहाँ खजूर आदि अधिक बचे हों तो उन्हें खरीद कर ले आना ठीक होगा। गुरुकुलके लोगोंको ऐसा न लगे कि हम वहाँ भाररूप थे।

अब और कुछ तो लिखनेको नहीं है।

बापूके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५६७२) से।

सौजन्य : राधाबेन चौधरी

१. अहमदाबादमें बँगला किरायेपर लेनेके उल्लेखसे ऐसा प्रतीत होता है कि यह पत्र १९१५ में लिखा गया था। गुजरातमें कृष्ण पक्षकी १५ के स्थानमें ०)) लिखा जाता है।

२. आश्रमके लिए।

३. गुरुकुल काँगड़ी, हरद्वार।

८२. पत्र : वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको

अहमदाबाद
मई १४, १९१५

प्रिय श्री शास्त्रियर,[1]

मैं आपसे आपके स्वास्थ्यके सम्बन्धमें व्यक्तिगत चर्चा करना चाहता हूँ। मुझे इस सम्बन्धमें बहुत चिन्ता रहती है। मुझे विश्वास है कि आप समय रहते, अपने आहारको नियमित करके और जल-चिकित्साका आश्रय लेकर पूर्ण स्वस्थ हो सकते हैं। समाज और देशके प्रति आपका यह कर्त्तव्य है कि जब इतनी आसानीसे स्वास्थ्य-लाभ किया जा सकता है, तब आप स्वास्थ्य-लाभ कर लें। मेरी बताई चिकित्सामें आपको एक दिनके लिए भी सार्वजनिक कार्य रोकनेकी आवश्यकता न होगी। आवश्यकता केवल इस बातकी है कि चिकित्सा अत्यन्त नियमपूर्वक की जाये। इसका परिणाम थोड़े दिनोंमें ही दिखाई देने लगेगा। उसके लिए लम्बी चिकित्सा आवश्यक नहीं। नीचे चिकित्साकी तफसील देता हूँ:

दिनमें दो बार कमसे-कम बीस-बीस मिनट तक कटिस्नान; कटिस्नान भोजनके बाद तीन घंटे तक न किया जाये। प्रातः-सायं दो घंटे खुली हवामें धीरे-धीरे टहलना।

दिनमें केवल दो बार भोजन। शामका भोजन सूर्यास्तके पूर्व कर लिया जाये।

भोजनका प्रत्येक ग्रास धीरे-धीरे चबाया जाना चाहिए जिससे वह चिकना गाढ़ा द्रव होकर पेटमें जाये, ठोस लुगदीके रूपमें नहीं। आपने भोजन भली-भाँति चबाया है या नहीं, यह आपको सदा अपने मलसे मालूम हो जायेगा।

आहारमें ये चीजें हों — केले, आम, सन्तरे, जई, अंजीर (सूखे और ताजे), सुलताना (बिना बीजका मुनक्का), अंगूर, नीबू, इमली, पपीता, अनन्नास, आलू बुखारा। नारियल, मूंगफलियां, बादाम, पिस्ते, अखरोट और आवश्यकता हो तो जैतूनका तेल।

दिनमें केवल दो प्रकारके गिरीदार मेवे खाये जायें। दोनोंकी मात्रा दिन-भरमें चार औंससे अधिक न हो। आरम्भमें, अर्थात् पहले चार दिन गिरीदार मेवे लेना बिलकुल आवश्यक नहीं है; वे बादमें धीरे-धीरे भोजनमें शामिल किये जा सकते हैं।

नीबू या इमलीमें से कोई भी चीज ली जा सकती है। अंजीर, छुहारे और अन्य मेवे भलीभाँति धो लिये जायें और छः घंटे भिगोनेके बाद ही खाये जायें। वे जिस पानीमें भिगोये जायें वह पी लिया जाये।

यदि जैतूनका तेल लिया जाये तो प्रतिदिन एक औंससे अधिक न लिया जाये। अन्य फलोंके साथ प्रतिदिन मामूली बड़े नौ केले काफी होंगे।

प्रत्येक व्यक्ति अपने हिसाबसे मात्रा स्वयं कम-ज्यादा कर सकता है।

१. (१८६९–१९४६) विद्वान, राजनीतिज्ञ, भारत सेवक समाज (सर्वेन्ट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी) के अध्यक्ष (१९१५–२७)।

एक महीने तक नियमानुसार लगातार यह चिकित्सा जारी रखनेसे आपको निश्चय ही यह मालूम हो जायेगा कि पूर्ण स्वास्थ्य-लाभ इसी दिशामें चलनेसे होगा, किसी अन्य प्रकारसे नहीं। काफी, चाय, सोडावाटर और पान आदिका सेवन चिकित्साकालमें अवश्य ही त्याग दिया जाना चाहिए। बादमें आप अपने पुराने भोजनपर वापस आ सकते हैं। हाँ, इस चिकित्साके आधारपर कुछ फेरफार तो होगा ही।

कृपया इस सम्बन्धमें गम्भीरतासे विचार करें।

अपनी माताजी और पत्नीको मेरा अभिवादन कहिए।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (जी० एन० ६२८७) की फोटो-नकलसे।

८३. भाषण : लीमड़ीमें[1]

मई १९, १९१५

मानपत्रमें मेरे लिए प्रयुक्त विशेषण और वक्ताओं द्वारा की गई मेरी प्रशंसा दोनों ही अतिशयोक्तिपूर्ण हैं। मैंने तो केवल मातृभूमिके प्रति अपना कर्त्तव्य-भर किया है, इसके अतिरिक्त और कुछ नहीं।

[गुजरातीसे]
गुजराती, ३०–५–१९१५

८४. पत्र : नारणदास गांधीको

लीमड़ी
वैशाख सुदी ५, बुधवार [मई १९, १९१५][2]

चि० नारणदास,

मैं यहाँ एक दिनके लिए आया हूँ, क्योंकि ठाकुर साहबका आग्रह था। सन्तोक और लड़कियाँ मेरे साथ हैं। जमनादास फिलहाल राजकोटमें रहेगा।

रेवाशंकरभाईके यहाँ जो सामान पड़ा है वह और तुम्हारे पास तथा कल्याणदासके[3] पास जो सामान है उसे माल गाड़ीसे अहमदाबाद भेज देना। मुझे लगता है कि बिस्तरोंको

१. नागरिकोंकी ओरसे दिये गये मानपत्रके उत्तरमें; इस समारोहके अध्यक्ष लीमड़ीके ठाकुर साहब थे।

२. गांधीजी इस तारीखको अपने भतीजे लक्ष्मीदासके पुत्र सामलदास और मगनलाल गांधीकी पत्नी सन्तोकके साथ लीमड़ीमें थे।

३. कल्याणदास जगमोहनदास मेहता; इन्होंने गांधीजीके साथ दक्षिण आफ्रिकामें काम किया था। देखिए खण्ड ५, पृष्ठ ४८ और खण्ड ६, पृष्ठ ४७५।

तो टाटमें लपेटकर सीना पड़ेगा या कोई स्नेही मित्र जाये तो वह साथ ला सकता है। जिन वक्सोंमें ताले न हों उन्हें अच्छी तरहसे बाँधना। जिनमें काँचकी चीजें हों उनके वारेमें अधिक सावधानी रखना।

चि० मगनलालका तार आया है। इसमें उसने लिखा है कि वे सब गुरुवारको हरद्वारसे रवाना होंगे। इसलिए उन्हें शनिवार या रविवारको अहमदावाद पहुँचना चाहिए।

सामलदास मेरे साथ आया है। वह रहेगा या क्या करेगा, यह कह नहीं सकता।

आदरणीय खुशाल भाईसे वहुत वातें हुई हैं। मैं अपनेको सदा उनका ऋणी ही पाता हूँ। उन्होंने मुझे जितना सन्तोष दिया है नन्दकौर भाभी, गंगा भाभी और गोकी वहिनसे[1] मुझे उतना ही असन्तोष मिला है।

अधिक मिलनेपर।

वापूके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५६७४) से।
सौजन्य: नारणदास गांधी

८५. आश्रमके संविधानका मसविदा

[मई २०, १९१५ से पूर्व][2]

यह केवल एक कच्ची नियमावली है जो मित्रोंकी सम्मति जाननेके लिए छापी गई है।[3] यह समाचारपत्रोंमें प्रकाशनके लिए नहीं है।[4]

सत्याग्रहाश्रम ?[5]
देशसेवाश्रम ?
सेवा-मन्दिर ?

उद्देश्य

इस आश्रमका उद्देश्य आजन्म देश-सेवाकी शिक्षा प्राप्त करना और देश-सेवा करना है।

१. गांधीजीकी वड़ी वहिन रलियात वेन।

२. इस तिथिको आश्रमकी स्थापना की गई थी।

३. देखिए "पत्र: रणछोड़लाल पटवारीको", ५-६-१९१५ और "पत्र: पुरुषोतमदास ठाकुरदासको", ८-६-१९१५।

४. तीसरी आवृत्ति, जो ७ नवम्बर १९१५ को प्रकाशित हुई थी, के प्रारम्भिक वाक्य इस प्रकार थे: "इस आवृत्तिमें मित्रोंके सुझावों और अपने अनुभवके आधारपर कुछ परिवर्तन किये गये हैं"। ये परिवर्तन यहाँ पाद-टिप्पणियोंमें सूचित कर दिये गये हैं

५. तीसरी आवृत्तिमें इस शीर्षकके नीचे निम्न टिप्पणी दी गई है: (वैशाख वदी ६, गुरुवार, २० मई, १९१५ को अहमदावादमें स्थापित)

विभाग

आश्रमके तीन विभाग होंगे — व्यवस्थापक, उम्मीदवार और विद्यार्थी।

(१) व्यवस्थापक

व्यवस्थापकोंके विचारसे देश-सेवाकी शिक्षा प्राप्त करनेके लिए निम्नलिखित व्रतों और नियमोंका पालन करना आवश्यक है; और कुछ समयसे वे उनके पालनका प्रयत्न करते आ रहे हैं।

१. सत्य-व्रत

साधारण रीतिसे झूठ न बोलना ही इस व्रतका पालन करनेवालेके लिए काफी नहीं है। उसे यह समझ लेना है कि देश-हितकी नीयतसे भी किसीको धोखा नहीं दिया जा सकता । सत्यके लिए माता-पिता आदि गुरुजनोंके साथ कैसा व्यवहार करना चाहिए, यह जाननेके लिए उसे भक्त प्रह्लादके उदाहरणपर विचार करना चाहिए।

२. अहिंसा-व्रत

पशुओं और अन्य जीवोंकी हत्या न करना ही पर्याप्त नहीं है। इस व्रतका पालन करनेवालेको जानना चाहिए कि जो उसकी समझमें अन्यायी है उनकी भी हत्या नहीं की जा सकती। वह उनपर भी क्रोध न करे, दया करे। अर्थात् माता-पिता, सरकार अथवा कोई अन्य उसपर अत्याचार करे तो वह उसके अत्याचारका प्रतिकार करे; परन्तु उसे न तो मारे और न चोट पहुँचाये। सत्य और अहिंसाका पालन करनेवाले पर जब अत्याचार किया जाये तब सत्याग्रही बनकर दयाभावसे अत्याचारीको जीत ले। वह अत्याचारके अधीन न हो और जबतक अत्याचारीको जीत न ले तबतक स्वयं कष्ट झेलने और मृत्यु-दण्ड तक भोगनेको तैयार रहे।

३. ब्रह्मचर्य-व्रत

जबतक ब्रह्मचर्य-व्रतका पालन नहीं किया जाता तबतक पूर्वोक्त व्रतोंका पालन प्राय: असम्भव है। इस व्रतमें पर-स्त्रीपर कुदृष्टि न डालना ही पर्याप्त नहीं है। मनमें भी विषय-विकार न आना चाहिए। इस व्रतका पालन करनेवाला यदि विवाहित हो तो अपनी स्त्रीसे भी कामाचरण न करे, बल्कि उसे मित्र मानकर उसके साथ विशुद्ध सम्बन्ध रखे।

४. अस्वाद-व्रत

जीभ वशमें न हो तो पूर्वोक्त सब व्रत और विशेषकर ब्रह्मचर्य-व्रतका पालन करना कठिन है। इसलिए इसे एक स्वतन्त्र व्रत समझकर और यह जानकर कि भोजनकी आवश्यकता केवल शरीरके निर्वाहके लिए है, देश-सेवाकी इच्छा रखनेवाला व्यक्ति क्रमश: अपना आहार शुद्ध और निर्दोष बनाता जाये। विकार उत्पन्न करनेवाले सब पदार्थोंको वह एकदम या यथाशक्ति धीरे-धीरे त्याग दे।

५. अस्तेय-व्रत

स्थूल दृष्टिसे हम जिसे दूसरेकी वस्तु समझते हों उसको न चुराना ही इस व्रतके व्रतीके लिए पर्याप्त नहीं है। बल्कि प्रकृति सदा मनुष्यकी आवश्यकता-भरके लिए आहार

याकूब हसन और जी० ए० नटेसनके साथ

मुहैया करती है, अधिक नहीं। अपनी सच्ची आवश्यकतासे अधिक आहार और वस्त्रादिका उपयोग करना भी चोरी है, तो व्रतका पालन करनेवाला इसे समझते हुए इसके अनुसार आचरण करेगा।

६. अपरिग्रह-व्रत

अधिक वस्तुओंका संग्रह न करना ही पर्याप्त नहीं है, वल्कि शरीरके रक्षण और पोषणके लिए जिन वस्तुओंकी आवश्यकता न हो उनका संग्रह न करना चाहिए, जैसे कुर्सीके विना काम चल सकता हो तो उसको न रखे। इस प्रकार व्रतीको नित्य विचार करते हुए अपने जीवनको उत्तरोत्तर सरल वनानेका प्रयत्न करना चाहिए।

उपव्रत

उक्त व्रतोंमें से अन्य दो उपव्रत निकल आते हैं।[1]

१. स्वदेशी-व्रत

स्वदेशी-व्रतका पालन करनेवाला उन वस्तुओंका उपयोग कभी न करेगा जिनके निर्माणमें या जिनके निर्माताओं द्वारा असत्याचरणकी सम्भावना हो। उदाहरणार्थ मैंचेस्टर, जर्मनी या भारतके कारखानोंमें वने कपड़ेके निर्माणमें या उसके निर्माताओं द्वारा असत्याचरण नहीं किया जाता, सो नहीं कहा जा सकता। इसलिए इनका उपयोग वर्जित है। इसके अतिरिक्त कारखानोंमें कपड़ा वनानेवाले मजदूर वहुत कष्ट पाते हैं और अग्निका अत्यधिक प्रयोग होनेसे असंख्य जीवोंका नाश होता है। मशीनोंके काममें मज-दूरोंकी जो जानें जाती हैं और उस महाअग्निमें जो जीवोंका नाश होता है, वह अवर्ण-नीय है। इसलिए विदेशोंमें वना कपड़ा और कारखानोंमें मशीनोंसे वुना गया कपड़ा उक्त तीन प्रकारकी हिंसासे दूषित होनेके कारण वर्जित है। ध्यान देनेसे समझमें आ सकता है कि विदेशी कपड़ेके व्यवहारसे अस्तेय और अपरिग्रहके व्रत भंग होते हैं। हम रूढ़िगत प्रथाका अनुसरण करते हुए सौन्दर्य-वृद्धिके निमित्त अपने देशमें कम मेहनतसे वने कपड़ेका त्याग करके मशीनोंसे वुना मिलका कपड़ा पसन्द करते हैं। फिर कृत्रिम सौन्दर्यवृद्धि व्रह्मचर्यमें वाधक है, इसलिए इस व्रतके पालनार्थ भी ऊपर वताया गया मशीनोंका वुना कपड़ा पहनना वर्जित ठहरता है। शुद्ध स्वदेशी व्रतका व्रती इसी देशमें हाथ-करघोंपर वुना हुआ सादा कपड़ा पहनेगा और सो भी सादे ढंगसे सिला हुआ। इसका अर्थ यह है कि वह विदेशी काँट-छाँट और वटनोंका उपयोग भी त्याग देगा। दूसरी वस्तुओंके विषयमें भी ऐसा ही समझना चाहिए।

२. निर्भयता-व्रत

जो मनुष्य भयके वशीभूत हो जाता है वह सत्य आदि व्रतोंका पालन नहीं कर सकता। इसलिए व्यवस्थापक सदा ज्ञानपूर्वक निर्भयतासे व्रतका पालन करेंगे और राजा, प्रजा, जाति, कुटुम्व, चोर, लुटेरे, व्याघ्र आदि पशुओं तथा मृत्युके भयसे भी मुक्त होनेका प्रयत्न करेंगे। वे अपनी तथा दूसरोंकी रक्षा सत्याग्रह अर्थात् आत्म-वलसे करेंगे।

१. तीसरी आवृत्तिमें यह वाक्य हटा दिया गया था।

३. स्पर्श-भावना-व्रत[1]

रूढ़िके अनुसार हिन्दू धर्ममें ढेड़, भंगी आदि जातियाँ अन्त्यज, पंचम और अछूत कही जाती हैं और अस्पृश्य मानी जाती हैं। उनसे छू जानेपर अन्य जातियोंके हिन्दू अपनेको अपवित्र मानते हैं। उनसे अनजानमें छू जाना भी पाप समझते हैं। आश्रमके संस्थापकोंकी मान्यता है कि यह हिन्दू धर्मपर कलंक है। संस्थापक स्वयं कट्टर हिन्दू हैं; परन्तु वे समझते हैं कि जबतक हिन्दू लोग किसी भी जातिको अछूत मानते हैं तबतक वे पापका ही संचय करते हैं। इस तरहके व्यवहारके अनेक भयंकर परिणाम हुए हैं। इस पापसे मुक्ति पानेके लिए आश्रममें अस्पर्श जातिके सम्बन्धमें स्पर्श-भावना-व्रतका पालन होता है। इस नियमावलीकी तीसरी आवृत्ति प्रकाशित करते समय आश्रममें एक ढेड़ परिवार भी रहता था और अब भी रहता है। यह परिवार ठीक उसी तरह आश्रममें रहता है जैसे अन्य आश्रमवासी। इस व्रतमें भोजन-व्यवहारका समावेश नहीं होता। केवल अस्पृश्यता-दोषका निवारण ही अभीष्ट है।

वर्णाश्रम

आश्रममें वर्णाश्रम-धर्मका पालन नहीं किया जाता। जहाँ व्यवस्थापकोंको ही छात्रोंके माँ-बापोंका स्थान लेना होता है, और इसी तरह जहाँ आजन्म ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह आदि व्रतोंका पालन करना होता है वहाँ वर्णाश्रमके पालनकी गुंजाइश नहीं रहती। आश्रमवासियोंकी अवस्था एक प्रकारसे संन्यासियोंकी अवस्था है। अतएव उन्हें वर्णाश्रम-धर्मके पालनकी आवश्यकता नहीं रहती। तथापि यह आश्रम वर्णाश्रम-धर्मको पूर्णतया माननेवाला है। जातिबन्धनसे देशको हानि पहुँची है ऐसा नहीं लगता; उलटे अनेक लाभ-ही हुए जान पड़ते हैं। साथ-साथ भोजन करनेसे भ्रातृभावकी तनिक-भी वृद्धि होती है, यह माननेका कोई कारण नहीं है। वर्णाश्रम-व्यवस्था या जाति-बन्धनको आश्रमकी किसी प्रवृत्तिसे किसी प्रकारकी हानि न पहुँचे, इसके लिए यह निश्चित किया गया है कि यदि आश्रमवासी बाहर जानेपर अपना भोजन अपने हाथसे न पका सकें तो वे फलोंपर निर्वाह करनेके लिए बाध्य हैं।

स्वभाषा

व्यवस्थापकोंका विश्वास है कि कोई राष्ट्र अथवा समाज स्वभाषाका परित्याग करके उन्नति नहीं कर सकता। इसलिए सभी अपनी-अपनी भाषाका प्रयोग करेंगे। वे अपने अन्य भारतीय बन्धुओंसे घनिष्ट सम्बन्ध रखना चाहते हैं, इस कारण वे प्रमुख देशी भाषाओं और उन सबकी जननी संस्कृतका अध्ययन करेंगे।

शारीरिक श्रम

व्यवस्थापकोंका विश्वास है कि प्रकृतिने शारीरिक श्रम करना मनुष्यका कर्त्तव्य ठहराया है। मनुष्य-जातिकी आजीविकाका साधन शारीरिक श्रम ही है। उसे अपनी मानसिक और आत्मिक शक्तियोंका उपयोग तो परोपकारार्थ ही करना चाहिए। दुनियाकी आबादीका सर्वाधिक भाग खेतीसे ही निर्वाह करता है। इसलिए व्यवस्थापक स्वयं अपना

१ यह अनुच्छेद और वर्णाश्रम-सम्बन्धी अनुच्छेद तीसरी आवृत्तिमें जोड़े गये थे।

कुछ समय खेतीमें लगायेंगे और उस कामके अभावमें कोई दूसरी तरहका शारीरिक श्रम करेंगे।

बुनाईका काम

व्यवस्थापकोंके विचारसे देशकी गरीबीका मुख्य कारण देशी चरखों और हाथ-करघोंका नष्ट हो जाना है। इसलिए वे स्वयं देशी करघों द्वारा कपड़ा बुनेंगे और इस प्रकार यथाशक्ति उसके उद्धारका भरसक प्रयत्न करेंगे।

राजनीति

राजनीति, आर्थिक उन्नति आदि पृथक्-पृथक् विषय नहीं हैं; किन्तु धर्मको इन सबका मूल समझकर व्यवस्थापक राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक और लोक-व्यवहार-सम्बन्धी विषयोंका धर्म-निष्ठाके साथ अभ्यास करेंगे और करायेंगे। और इन विषयोंसे सम्बन्धित मामलोंमें यथा-सम्भव उत्साहपूर्वक योग देंगे।

(२) उम्मीदवार

जो लोग ऊपर बताये गये व्रतों और नियमोंका पालन तो करना चाहते हैं; किन्तु जिनमें ऐसा करनेका सामर्थ्य नहीं है वे आश्रममें उम्मीदवारोंके रूपमें प्रविष्ट हो सकते हैं। किन्तु उन्हें भी जबतक वे आश्रममें रहेंगे तबतक व्यवस्थापकोंके लिए पालनीय सब व्रतों और नियमोंका पालन करना होगा। जब उनमें इन व्रतोंके जीवनपर्यन्त पालन करनेकी शक्ति आ जायेगी तब वे भी व्यवस्थापक माने जायेंगे।

(३) छात्र

१. चार वर्षके या इससे अधिक आयुके लड़के-लड़कियाँ अपने माता-पिताकी स्वीकृतिसे भर्ती किये जा सकते हैं।[१]
२. माता-पिताको बच्चोंके सम्बन्धमें अपने सब अधिकार छोड़ देने होंगे।
३. अध्ययन समाप्त होनेसे पहले विद्यार्थी किसी भी कारण माँ-बापके पास न जा सकेगा।
४. विद्यार्थियोंको व्यवस्थापकोंके लिए पालनीय सब व्रतोंका पालन करना सिखाया जायेगा।
५. उन्हें धर्म, कृषि, बुनाई और पढ़ना-लिखना सिखाया जायेगा।
६. शिक्षण विद्यार्थियोंकी मातृभाषाओंके माध्यमसे दिया जायेगा और उसमें इतिहास, भूगोल, अंकगणित, बीजगणित, भूमिति, अर्थशास्त्र, आदि विषय होंगे। संस्कृत, हिन्दी और किसी एक द्रविड़ भाषाका शिक्षण अनिवार्य होगा।
७. अंग्रेजी दूसरी भाषाके तौर पर सिखाई जायेगी।
८. उर्दू, बँगला, तमिल, तेलगू, देवनागरी और गुजराती लिपियाँ सबको सिखाई जायेंगी।
९. व्यवस्थापकोंका विश्वास है कि समस्त पाठ्यक्रम १० वर्षमें पूरा हो जायेगा। वयस्क होने पर विद्यार्थियोंसे ये व्रत लेनेको कहा जायेगा।[२] तब जिन्हें आश्रमके उद्देश्य और नियम पसन्द न होंगे उन्हें उसे छोड़ देनेकी स्वतन्त्रता होगी।

१. तीसरी आवृत्तिमें इसे यों बदल दिया गया था: "बारह वर्षसे कम आयुके लड़के और लड़कियाँ यदि उनके माँ-बाप प्रविष्ट न हों तो प्रवेश न पा सकेंगे।"

२. यह वाक्य तीसरी आवृत्तिमें निकाल दिया गया था।

१०. उन्हें यह स्वतन्त्रता उस आयुमें पहुँचनेपर दी जायेगी जब उन्हें माँ-बापकी या अन्य संरक्षकोंके सहारेकी आवश्यकता न रहेगी।

११. विद्यार्थियोंको ऐसा सामर्थ्य देनेका प्रयास पहले ही किया जायेगा जिससे उन्हें स्वतंत्र होनेके समय कभी यह भय न रहे कि "मैं अपना गुजारा कैसे कर सकूँगा।"

१२. बड़ी आयुके लोग भी विद्यार्थियोंके रूपमें प्रविष्ट हो सकेंगे।

१३. विद्यार्थी प्रायः एक ही तरहकी और सादीसे सादी पोशाक पहनेंगे।

१४. भोजन सादा रखा जायेगा, लाल मिर्चोंका प्रयोग बिलकुल नहीं किया जायेगा और नमक, काली मिर्च और हल्दीके अतिरिक्त अन्य मसाले सामान्यतः काममें नहीं लाये जायेंगे। दूध, घी और दूधसे बननेवाले पदार्थ ब्रह्मचर्यमें बाधक हैं, दूधसे प्रायः क्षय आदि रोग होते हैं और उसमें माँस आदि पदार्थोंके समस्त गुण विशेष रूपसे होते हैं, इसलिए इन पदार्थोंका उपयोग बहुत कम किया जायेगा। भोजन तीन बार दिया जायेगा। उसमें सूखे और ताजे फलोंका उपयोग विशेष होगा। सब आश्रम-वासियोंको आरोग्य-शास्त्रका सामान्य ज्ञान कराया जायेगा।

१५. आश्रममें छुट्टियाँ नहीं होंगी; किन्तु हफ्तेमें डेढ़ दिन कार्यक्रम परिवर्तित कर दिया जायेगा और इस प्रकार प्रत्येक व्यक्तिको व्यक्तिगत कार्य करनेके लिए कुछ समय मिल जायेगा।

१६. सब लोगोंको अपनी-अपनी शारीरिक क्षमताके अनुसार वर्षमें कमसे-कम तीन महीने देशमें प्रायः पैदल यात्रा करनी होगी।

१७. *विद्यार्थियों या उम्मीदवारोंसे कोई मासिक व्यय लेनेका नियम नहीं रखा है। किन्तु* जिनके माँ-बाप समर्थ हों या जो स्वयं समर्थ हों उनसे जो कुछ वे दे सकेंगे उतना देनेकी अपेक्षा की जायेगी।

विविध

आश्रमकी व्यवस्था व्यवस्थापक मण्डलके हाथोंमें रहेगी। आश्रममें किसे प्रविष्ट किया जाये और किस वर्गमें किया जाये, यह तय करनेका अधिकार मुख्य व्यवस्थापकको होगा।

आश्रमका खर्च मुख्य व्यवस्थापकको प्राप्त धनसे तथा आश्रमपर थोड़ी-बहुत श्रद्धा रखनेवाले मित्रोंसे प्राप्त होनेवाली सहायतासे चलता है।

फिलहाल आश्रम अहमदाबादमें साबरमती नदीके किनारेपर स्थित दो मकानोंमें चल रहा है। ये मकान एलिसब्रिजके आगे सरखेजके रास्तेपर पड़ते हैं।

आशा है कि कुछ मासमें ही अहमदाबादके पास २५० एकड़ भूमि मिल जायेगी और तब आश्रम वहाँ चला जायेगा।

प्रार्थना

मुलाकातके लिए आश्रममें आनेवाले सज्जनोंसे प्रार्थना है कि वे भी जबतक आश्रममें रहें तबतक आश्रमके नियमोंका पालन करें। उनका आतिथ्य भली-भाँति करनेका प्रयत्न किया जायेगा। यथासम्भव कम चीजें रखना आश्रमका नियम है। इसलिए यहाँ आनेवाले सज्जन यदि अपने साथ अपनी रजाई, चादर, लोटा, थाली और कटोरी लेते आयेंगे तो कृपा होगी।

जो लोग अपने लड़कोंको आश्रममें भेजना चाहें उन्हें हमारी सलाह है कि पहले वे स्वयं आकर आश्रमको देख जायें। किसी भी लड़के या लड़कीको जाँचे बिना आश्रममें भर्ती नहीं किया जायेगा।

दैनिक कार्यक्रम[1]

(१) इस बातका प्रयत्न किया जाता है कि आश्रममें सब लोग प्रातः ४ बजे उठ जायें। पहला घंटा ४ बजे बजता है।

(२) ४.३० बजे उठना रोगियोंको छोड़कर बाकी सभीके लिए लाजिमी है और सभी ५ बजेके पहले स्नान कर लेते हैं।

(३) ५ से ५.३० : ईश्वर-भजन और थोड़ा-सा धार्मिक पाठ किया जाता है।

(४) ५.३० से ७ : सवेरेका फलाहार, जैसे केलेका।

(५) ७ से ८.३० : शारीरिक श्रम, जैसे पानी भरना, आटा पीसना, झाड़ू देना, कपड़ा बुनना, भोजन बनाना आदि।

(६) ८.३० से १० : पठन-पाठन।

(७) १० से १२ तक भोजन करना और बर्तन माँजना। भोजनमें पाँच दिन दाल, चावल, शाक और रोटी एवं दो दिन रोटी और फल रहते हैं।

(८) १२ से ३ : पठन-पाठन।

(९) ३ से ५ : सुबहकी तरह शारीरिक श्रम।

(१०) ५ से ६ : भोजन और बर्तन साफ करना। भोजन प्रायः सुबह जैसा ही होता है।

(११) ५.३० से ७ : सुबहकी तरह ईश्वर भजन।

(१२) ७ से ९ : स्वाध्याय और आश्रममें आनेवालोंसे मिलना आदि।

छोटे लड़के ९ बजेके पूर्व सो जाते हैं। दस बजे बत्तियां बुझा दी जाती हैं।

फिलहाल संस्कृत, गुजराती, तमिल, हिन्दी और अंकगणित विषय पढ़ाये जा रहे हैं। इतिहास और भूगोल भाषा-ज्ञानके अन्तर्गत आ जाते हैं।

आश्रममें वैतनिक शिक्षक और सेवक नहीं रखे जाते।

इस समय कुल मिलाकर आश्रममें पैंतीस व्यक्ति हैं। इनमें से चार व्यक्ति सपरिवार रह रहे हैं। शिक्षणका काम पाँच अध्यापकोंके सुपुर्द है। आश्रमके स्थायी सदस्योंमें से दो उत्तर भारतके, नौ मद्रास प्रान्तके और शेष गुजरात-काठियावाड़के हैं।

[गुजरातीसे]

छपी नियमावलियों (एस० एन० ६१८७ और एस० एन० ६१८९) की फोटो-नकलसे।

१. यह तीसरी आवृत्तिमें जोड़ा गया है।

८६. पत्र: वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको

अहमदाबाद
मई २०, [१९१५][1]

प्रिय श्री शास्त्रियर,

मैं एक घरेलू कामसे राजकोट गया था। वहाँसे अभी लौटा तो आपके दो पत्र मिले। यदि आप ठीक समझें तो मेरी रायमें आपको सर विलियमका आमन्त्रण मान लेना चाहिए। जो विचार श्रीमती बेसेंटका है सम्भवतः वही फीरोजशाह मेहताका होगा। मेरी दृष्टिसे तो इतना ही काफी है कि सर विलियम आपसे मिलना चाहते हैं और जिस विषयको प्रतिपादित करनेकी आपसे अपेक्षा की जाती है आप उससे परिचित हैं। मण्डलके अध्यक्षके रूपमें आपकी इतनी साख है और होनी भी चाहिए कि उससे आपको वह दर्जा और अधिकार मिल जाता है जिसकी आपको अपने कार्यमें आवश्यकता होगी।

और यदि आप जाते हैं तो मेरा खयाल है इसमें दो महीने तो लग ही जायेंगे। तब क्या ज्यादा ठीक काम किया जा सके इस दृष्टिसे आप इस अर्सेमें अपनी बीमारीसे छुटकारा नहीं पा सकते?

लगता है, नायकर और सुन्दरम् बहुत अच्छा काम कर रहे हैं।

कमसे-कम फिलहाल मैं यहाँ टिककर रहनेवाला हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

मैंने आपको जो पुस्तिका भेजी है उसमें परिवर्तन किया जा सकता है।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (जी० एन० ६२८९) की फोटो-नकलसे।

१. इसमें सर फीरोजशाह मेहताका (जिनका नवम्बर, १९१५ में स्वर्गवास हो गया था) उल्लेख है; इसलिए इसका वर्ष १९१५ निश्चित किया गया है।

८७. पत्र : उमियाशंकरको

अहमदावाद
वैशाख सुदी ६, शुक्रवार [मई २१, १९१५][1]

चि० उमियाशंकर,

तुम्हारा पत्र मुझे मिल गया है। मैं राजकोट और लीमड़ी होकर कल ही आया हूँ। मेरा श्री हुसैन तैयबजी के साथ ऐसा निजी सम्बन्ध नहीं है कि मैं उन्हें पत्र लिख सकूं। किन्तु छबीलदासको तुरन्त अर्जी देनी चाहिए अथवा उसकी ओरसे तुम अर्जी दे दो। तुम मेरा नाम लिखकर कहना कि मैं उसे अच्छी तरह जानता हूँ और प्रमाणित कर सकता हूँ। इसके बाद वे मुझसे पूछेंगे तो मैं उसके सम्बन्धमें कह सकूंगा।

तुम मुझे छोटूके बारेमें कुछ भेजनेवाले थे; उसका क्या हुआ।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० १६३५) से।
सौजन्य : सी० के० भट्ट

८८. पत्र : जी० ए० नटेसनको

अहमदावाद
मई २८, १९१५

प्रिय श्री नटेसन,

३,००० रुपयेके चेकके साथ आपका पत्र मिला। रसीद इस पत्रके साथ भेज रहा हूँ।

देखता हूँ, मेरी बंगलौरकी बातचीत बहुत तोड़-मरोड़ कर प्रस्तुत की गई है; और श्रीमती बेसेंटने भी मेरे साथ बिलकुल न्याय नहीं किया है। मैंने उसका विवरण परसों ही देखा है। वस्तुतः मैंने जो-कुछ कहा था वह तो उसकी व्यंग्यपूर्ण विकृति है। मैंने श्रीमती बेसेंटके पास प्रकाशनार्थ कोई भी स्पष्टीकरण नहीं भेजा। सुना है कि उन्होंने जो-कुछ प्रकाशित किया है उसे मेरे द्वारा भेजा गया स्पष्टीकरण कहा गया है। यदि आपने ये विवरण देखे हों तो मुझे उनकी प्रतिलिपि भिजवानेकी कृपा करें।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (जी० एन० २२२९) की फोटो-नकलसे।

१. गांधीजी राजकोट और लीमड़ीसे २० मईको लौटे थे।

८९. पत्र : मगनलाल गांधीको

वैशाख वदी ७
[जून ४, १९१५]

चि० मगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिल गया है। देखता हूँ कि तुम्हारे मनमें उथल-पुथल मची हुई है। मुझे लगता है कि दोष मेरा ही है। मैं एक साथ कई घोड़ोंकी सवारी किये हूँ, इसलिए अब सबपर से गिर जानेका भय है। अभी बिलकुल गिरा नहीं हूँ क्योंकि मुझमें उत्साह है और तीव्र सेवाभाव भी है। किन्तु यदि मैं सेवा छोड़कर सारे काम इसी प्रकार चलाता रहूँ तो सम्भव है, बहुत दिन कुछ-भी न चल सके। परन्तु तुम धीरज मत छोड़ना। मैं तुम सबको उचित अवसर आने पर स्वतन्त्र अनुभव प्राप्त करनेके लिए भिन्न-भिन्न स्थानोंमें भेजना चाहता हूँ। यह सब इसपर निर्भर है कि हमें सहायता कितनी मिलती है और हम अपने साथ कितने लोगोंको ले पाते हैं। मुझे इतनी तो आशा है कि मैं तुम सबकी आकांक्षाओंकी पूर्ति कर सकूँगा और इस बीचमें यह भी निश्चित रूपसे जानता हूँ कि तुम सबने अबतक जिस प्रकारका जीवन बिताया है वह व्यर्थ नहीं गया है, इतना ही नहीं, बल्कि तुमने बहुत-कुछ सीखा है।

मैं जानता हूँ कि तुमने पूर्ण अनासक्तिको प्राप्त नहीं कर लिया है। मैं स्वयं उस स्थिति तक नहीं पहुँचा हूँ और जानता हूँ कि तुम इस स्थितिसे भी नीचे हो। यदि हम व्रतों आदिका ढोल न पीटें तो जैसी दुर्दशा होती है वैसी न होगी। अब एक प्रश्न पूछता हूँ। क्या तुम विरक्तिकी स्थिति तक न पहुँचनेका अर्थ मुझे समझा सकते हो? मैं समझा सकता हूँ; जैसे मैं ब्रह्मचर्यका पालन करता हूँ, किन्तु सूक्ष्म रीतिसे नहीं। मैं यह नहीं कह सकता कि मेरी दृष्टिमें या मेरे मनमें कभी विकार नहीं आता।

२. मैं सत्यका पालन करता हूँ; किन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि मुझसे जाने-अनजाने कभी अतिशयोक्ति नहीं होती। मुझे जो अच्छा लगे वह कहूँ और जो अच्छा न लगे वह न कहूँ, इससे भी सत्य-व्रतके पालनमें दोष आता है।

३. स्वादको जीतनेका अथक प्रयत्न करता हूँ, फिर भी मुझे लगता है कि इन पाँच चीजोंको मैं बहुत स्वादसे खाता हूँ। किन्तु इस व्रतका और अन्य व्रतोंका पालन करते हुए उनमें दिन-प्रतिदिन और दृढ़ हो सकनेमें मेरा अटल विश्वास है। और मेरा इनके स्थूल पालनसे विचलित होना सम्भव नहीं है।[1]

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५६८५) से।
सौजन्य : राधाबेन चौधरी

१. यह पत्र अपूर्ण है।

९०. पत्र : रणछोड़लाल पटवारीको

अहमदाबाद

वैशाख वदी ८ [जून ५, १९१५][1]

आदरणीय श्री रणछोड़भाई,[2]

बहुत काम होनेसे पत्र जल्दी नहीं लिख सका; हरद्वारसे सब लोग तभी आनेवाले थे, इसलिए मैं न गोंडल आ सका और न [रोजकोटमें] रुक सका। यहाँ रहनेके लिए दो बँगले ले लिये हैं। [जमीन] लेनेकी कोशिश अब करेंगे। हमें अपना खानेके खर्चका प्रबन्ध खुद करना है। बर्तन और औजार आदि सामान अहमदावादने पूरा कर दिया है। अभी काम ठीक तेजीसे नहीं चला है, क्योंकि सामान बहुत देरीसे पहुँच रहा है।

क्या आप वहांसे किसी व्यक्तिको देशी करघेका काम सिखानेके लिए भेज सकते हैं? देशी करघा दिला सकते हैं? देशी करघेका बना कपड़ा जुटा सकते हैं?

कोई संस्कृत या गुजराती सिखानेवाला चरित्रवान् अध्यापक आपकी निगाहमें है? हम उसे वेतन देंगे। कुछ समयके लिए मिल जाये तो काम चल जायेगा।

इसके साथ संस्थाके संविधानका[3] मसविदा है। इसे पढ़ लें और अपना मत एवं सुझाव भेजें। इसकी तीन नकलें भेज रहा हूँ। अधिक चाहिए तो मँगा लें। [नाम] कौन-सा पसन्द है? अथवा कोई दूसरा सुझाते हैं?

भाई द्वारकादासका स्वास्थ्य अब कैसा है?

मोहनदासके प्रणाम

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यु० २७९६)से तथा जी० एन० ४११६) की फोटो-नकलसे।

१. हरद्वारसे मगनलाल और उनके साथियोंके अहमदाबाद आनेका और आश्रमके संविधानका उल्लेख होनेसे पत्र १९१५ में लिखा गया जान पड़ता है।

२. जीवन पर्यन्त गांधीजीके मित्र; पश्चिमी भारतकी कई रियासतोंके दीवान रहे।

३. देखिए "आश्रमके संविधानका मसविदा", २०-५-१९१५ से पूर्व।

९१. पत्र : कुँवरजी मेहताको

अहमदाबाद

वैशाख वदी ९ [जून ६, १९१५][1]

भाई श्री कुंवरजी[2]

आपका पत्र मिला। साथका कागज पढ़ जायें। इससे आपके तीनों प्रश्नोंका उत्तर मिल जायेगा। श्री गोखलेको मैं प्रथम कोटिका व्यक्ति मानता हूँ। दूसरोंको मैं नहीं आँक सकता। अवकाश होने पर यहाँ आ जायें। १० तारीखको मैं पूना जाऊँगा। वहाँसे १५ तक लौटूंगा।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (जी० एन० २६६१) की फोटो-नकलसे।

९२. पत्र : पुरुषोत्तमदास ठाकुरदासको

अहमदाबाद

वैशाख वदी ११ [जून ८, १९१५][2]

रा. रा.[3] श्री पुरुषोत्तमदासजी,[4]

आपका रेवाशंकर भाईके नाम लिखा हुआ पत्र मुझे मिला है। आपके उद्‌गारोंके लिए कृतज्ञ हूँ।

साथका मसविदा[5] पढ़नेपर आपको मेरी प्रवृत्तियोंके विषयमें कुछ मालूम हो जायेगा। यदि आप अपनी सम्मति भेजेंगे तो आभार मानूंगा।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५७००) से।
सौजन्य : रमणलाल सरैया

१. यह पत्र १९१५ में लिखा गया जान पड़ता है, क्योंकि गांधीजी १० जून, १९१५को अहमदाबादसे रवाना हुए थे और १६ जूनको पूनासे लौटे थे। देखिए "डायरी : १९१५"।

२. पत्रमें संविधानके मसविदेका उल्लेख होनेसे यह १९१५ में लिखा गया जान पड़ता है।

३. राजमान राजश्री; गुजरातीमें आदर सूचक सम्बोधन।

४. सर पुरुषोत्तमदास ठाकुरदास; अर्थशास्त्री और बम्बईके एक प्रमुख व्यवसायी।

५. देखिए "आश्रमके संविधानका मसविदा", २०-५-१९१५ से पूर्व।

९३. पत्र: रणछोड़लाल पटवारीको

अहमदाबाद
वैशाख बदी १२ [जून ९, १९१५][1]

आदरणीय रणछोड़भाई,

मुझे आपका पत्र मिला। आपकी सम्मतिके लिए आभारी हूँ। माँ-बापसे सम्बन्धित भाग लिखा तो बहुत स्पष्टतापूर्वक गया है फिर भी उसमें रद्दोबदल करूँगा। अन्य बातोंके सम्बन्धमें पत्र द्वारा चर्चा करनेके बजाय आशा करता हूँ कि हम जब मिलेंगे तब सब बातें होंगी। मैं जिसे सनातन धर्म मानता हूँ उसका पालन करते हुए अपने प्राणोंकी आहुति दे दूँगा।

मुझे तो गाढ़ा भी चाहिए और हाथ-बुना बारीक कपड़ा भी। इसीलिए वहाँसे और पालनपुरसे भेज देंगे तो अच्छा होगा। करघा और करघेका काम सिखानेवाले जितनी जल्दी भेजे जा सकें उतनी जल्दी भेजें।

मोहनदासके प्रणाम

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यु० २७१८)से तथा (जी० एन० ४११४) की फोटो-नकलसे।

९४. पत्र: वीरचन्द शाहको

गुरुवार [जून १०, १९१५ को या उसके लगभग][2]

भाई श्री वीरचन्द,[3]

आपका पत्र मिला। इसके साथ [आश्रमकी] योजना भेज रहा हूँ। पढ़कर लौटा दें। कुछ सम्मति देना चाहें तो वह भी लिखें। यदि भावनगरमें कोई ऐसे विद्वान् सज्जन हैं जिन्हें योजनाकी प्रतियाँ भेजना उचित हो तो उनके नाम भी लिख भेजें।

भाई दीपचन्द अभी यहीं हैं।

मोहनदास गांधीके वन्देमातरम्

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५७०१) से।
सौजन्य: प्रमोद वीरचन्द शाह

१. यह "पत्र: रणछोड़लाल पटवारीको", ५-६-१९१५ के बाद लिखा गया।

२. पत्रमें आश्रमकी योजनाका उल्लेख होनेसे यह पत्र उसी समय लिखा गया जान पड़ता है जिस समय "पत्र: रणछोड़लाल पटवारीको", ५-६-१९१५ और "पत्र: पुरुषोत्तमदास ठाकुरदासको", ८-६-१९१५ लिखे गये थे।

३. वीरचन्द पानाचन्द शाह; जैन विद्वान और दार्शनिक।

९५. पत्र : रणछोड़लाल पटवारीको

अहमदाबाद,
बैशाख बदी १३ [जून १०, १९१५][1]

आदरणीय श्री रणछोड़भाई,

कल बहुतसे कार्योंमें व्यस्त रहते हुए आपको पत्र लिखा था। मुझे लगता है कि कुछ बातोंका उत्तर मुझे अभी दे देना चाहिए। आज अभी कुछ फुरसत है और फिर शामकी गाड़ीसे पूना जा रहा हूँ; इसलिए कुछ जानकारी तो इसी समय लिखे देता हूँ।

कैसरे हिन्द पदक मिलनेपर[2] बधाई की क्या बात है। इसका दिया और ले लिया जाना बड़ी बात नहीं है। मुझे तो दूसरे ही ढंगका पदक लेना है, देखें वह कब मिलता है।

जो चीज विलायती आटा कहकर बेची जाती है वह प्रायः आटा नहीं होती, बल्कि दूसरी कई वस्तुओंका मेल होती है। उस आटेमें बहुत धोखाधड़ी है। संभव है फुटकर विक्रेताका इससे कोई सम्बन्ध न हो। हाथ-करघेपर बने कपड़ेकी बात तो एक उदाहरण-भर है। स्वदेशी-व्रत लेनेपर सब वस्तुएँ स्वदेशी ही काममें लेनी चाहिए। मैं यह कहनेकी अनुमति चाहता हूँ कि इस व्रतके पालनमें सुख अनुभव करना ही धर्म है।

अंक-गणितमें हिसाब लगाना और बही-खाता रखना भी अवश्य होगा।

यह बात नहीं है कि गुजराती गुजरातके बाहर जायेंगे ही नहीं। वे तो सारे देशमें घूमेंगे। उन्हें देशकी सेवा करनी है। यदि उन्हें मद्रासी न आयेगी तो वे मद्रासके लोगोंके साथ सम्बन्ध नहीं रख सकेंगे। अंग्रेजी भी केवल अंग्रेजी जाननेवालोंके ही कामकी है। शंकरने[3] भारतकी सब भाषाओंका अध्ययन किया था। वल्लभने[4] जो द्रविड़ देशवासी थे, गुजराती सीखी थी। इस समय मद्रासमें सैकड़ों गुजराती हैं जो तमिल जानते हैं। यूरोपकी विभिन्न जातियोंके लोग चार-पाँच यूरोपीय भाषाएँ जानते हैं। भाषाओंका यह ज्ञान प्राप्त करना बहुत आसान है। अंग्रेजी पढ़नेमें जो व्यर्थ समय जाता है, उसे बचा लें तो वह समय इन भाषाओंके अध्ययनके लिए पर्याप्त है।

शिक्षण ऐसा दिया जाये कि विद्यार्थी शिक्षणक्रम पूरा करनेके बाद देशसेवाका ही काम करे। बड़े होनेपर यदि विद्यार्थी आश्रम छोड़कर चले जाते हैं तो यह शिक्षणकी कमी समझी जायेगी। अवसर आनेपर विद्यार्थीको जानेमें स्वतन्त्रता है। किन्तु हम यह नहीं चाहते कि वे माँ-बापके पास जाकर सामान्य लोकजीवनके सागरमें डूब जायें।

१. यह "पत्र : रणछोड़लाल पटवारीको", ९-६-१९१५ को लिखे गये पत्रके दूसरे दिन लिखा गया था।

२. गांधीजीको यह पदक पूनामें २६ जूनको दिया गया था।

३. शंकराचार्य, आठवीं शताब्दीके एक दार्शनिक।

४. वल्लभाचार्य, पन्द्रहवीं शताब्दीके एक दार्शनिक।

मुझे ऐसा कटु अनुभव हुआ है कि अपवाद रखनेपर माँ-बाप जब चाहते हैं बीमार पड़ जाते हैं। विद्यार्थी जबतक ब्रह्मचारी हैं तबतक विवाहों आदिमें शामिल न हों। उनको नये वातावरणमें रखना चाहिए। मुझे ऐसा लगता है कि यदि ऐसा न किया गया तो उनके चरित्रका गठन न होगा।

पोशाक अभी तो एक ही रखी गई है, क्योंकि ऐसा करना कई कारणोंसे आवश्यक है।

मेरा खयाल है कि दूधके विषयमें मैंने बहुत गहरा विचार किया है। दूध हमारे मांसाहारी युगकी देन है। उसमें इतने अधिक दोष हैं कि उसको बिलकुल छोड़ देना ही उचित है। अनेक लड़कोंने कई वर्ष तक यह प्रयोग किया है। इसमें किसीके स्वास्थ्यको कोई हानि नहीं दिखाई दी। विशेष मिलनेपर विचार करेंगे।

आश्रमके उद्देश्यको क्षति न पहुँचे, उस हद तक मैं जन-साधारणकी भावनाका ध्यान रखनेका प्रयत्न करूँगा।

अभी तक चार शिक्षक मिले हैं। एक यहीं रहेंगे। दूसरे स्थानीय हैं। वे पढ़ानेके लिए आ जाते हैं। यदि शिक्षक चरित्रवान् न हों तो हमारे काम नहीं आ सकते।

मोहनदासके प्रणाम

फिलहाल तो कपड़े धोनेके लिए चर्बी-रहित देशी साबुनका उपयोग कर रहा हूँ। उसके स्थानमें किसी दूसरी चीजकी खोजमें हूँ।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यु० २७९२)से तथा (जी० एन० ४११७)की फोटो-नकलसे।

९६. पत्र : कोतवालको

अहमदाबाद
जेठ सुदी १ [जून १३, १९१५][1]

भाईश्री कोतवाल,

ऐसा लगता है कि आप मुझे भूल गये हैं। इसके साथ आश्रमके संविधानका मसविदा भेज रहा हूँ। उसे पढ़ लें और विचार करके अपनी सम्मति भेजें। अन्ना[2] अहमदाबाद आ गये हैं। आप भी फुरसत होनेपर आकर आश्रम देख जाइये।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (जी० एन० ३६०७) की फोटो-नकलसे।

१. आश्रमके संविधानके मसविदेका उल्लेख होनेसे यह पत्र १९१५ में लिखा गया जान पड़ता है। यद्यपि इस तारीखको गांधीजी पूनामें थे, उन्होंने यह पत्र अहमदाबादका ठिकाना देकर लिखा है, क्योंकि वे उसी दिन पूनासे अहमदाबादको रवाना होनेवाले थे।

२. गंगानाथ विद्यालय, बड़ौदाके अध्यापक हरिहर शर्मा। वे इन्हीं दिनों आश्रममें आकर गांधीजीके पास रहने लगे थे।

९७. पत्र : महात्मा मुन्शीरामको

अहमदाबाद

जेठ शुक्ल २ [जून १४, १९१५][1]

महात्माजी,

लड़के सब गुरुकुलसे आनेके बाद मैं सब व्यवस्था करनेकी जंजालमें पड़ गया; उसलीये आपको मैं पत्र अगाडी न लीख सका। लड़कोंकी पर आपने जो प्रेम बतलाया है वह मे कभी भूल नहि सकते है। मेरे लड़कों और साथीओंको आश्रय देकर मुझको आपका ऋणी बनाया है।

अमदावादमें हाल तो आश्रम खोल दीया है। उसकी नियमावली हिंदीमें बन रही है। तैयार होनेसे आपका अभिप्रायके लीये भेजी जायगी।

हरद्वारमें फेर आकर आपको साथ कुछ दिन रहनेकी बात मैं बीलकुल भूला नहि हुं। वखत मीलनेसे मैं जरूर पहोंचुंगा।

आपका कृपाकांक्षी,

मोहनदास गांधीके वन्देमातरम्

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल हिन्दी पत्र (जी० एन० २२०८) की फोटो-नकलसे।

९८. पत्र : जे० बी० पेटिटको[2]

अहमदाबाद

जून [१६][3], १९१५

प्रिय श्री पेटिट,

दक्षिण आफ्रिकी सत्याग्रहसे सम्बन्धित ३१ जनवरी १९१५ तकके आय-व्ययका ब्यौरा इस पत्रके साथ भेज रहा हूँ।

मुझे आशा थी कि हिसाब जल्दी प्रकाशित किया जा सकेगा परन्तु मेरी इच्छाके विपरीत इसमें देर हो गई। श्री गोखलेका विचार यह था कि ब्यौरेके साथ

१. पत्रमें जिन लड़कों और अध्यापकोंका उल्लेख है वे मगनलाल गांधीके साथ २३ मई, १९१५को गुरुकुल काँगड़ी, हरद्वारसे अहमदाबाद पहुँच गये थे; देखिए "डायरी: १९१५"। यद्यपि इस दिन गांधीजी बम्बईमें थे, उन्होंने अहमदाबादका पता सम्भवतः इसलिए लिख दिया होगा क्योंकि वे अगले दिन बम्बईसे अहमदाबादको रवाना होनेवाले थे।

२. हिसाबका यह मसविदा दक्षिण आफ्रिकी भारतीय कोषके मन्त्री, श्री जहाँगीर बोमनजी पेटिटको भेजा गया था। यह मसविदा पाद-टिप्पणीमें बताये गये परिवर्तनों और परिवर्धनोंके साथ ३१ अक्तूबर १९१५को प्रकाशित किया गया।

३. देखिए "डायरी: १९१५"।

बची रकमके खर्चके बारेमें एक वक्तव्य भी प्रकाशित किया जाये। चूंकि वे भारतमें मुख्य कार्यकर्त्ता थे और आन्दोलनसे अन्ततक उनका निकट सम्पर्क रहा, इसलिए मैंने उनसे और उनकी मार्फत आपकी समितिसे सलाह किये बिना कभी कुछ नहीं किया, उनका इरादा यह था कि हिसावको अन्तिम रूपसे प्रकाशित करनेसे पूर्व मैं आपकी समितिसे सलाह कर लूं। किन्तु निठुर कालने उन्हें हमसे छीन लिया, और इसलिए इसे प्रकाशित करनेमें और भी देरी हो गई तथा अब कहीं जनताके सामने इसका हिसाब पेश करना मुमकिन हो पाया है।

आयमें आपके भेजे हुए रुपयोंके सिवा मद्रास, रंगून, लन्दन और आफ्रिकाके विभिन्न भागों और सत्याग्रहियोंके स्कूल आदिसे मिली रकमें भी शामिल हैं। इस प्रकार पौंड २७,३२४–०–७ में से पौंड ८,४२४–०–७ की रकम हमें दूसरे स्थानोंसे मिली है।

रही खर्चकी बात, उसमें कुछ रकमोंके सम्बन्धमें स्पष्टीकरणकी आवश्यकता है। सहायताकी मदमें करीब ३,००० पौंड खर्च हुए हैं। इस सहायताका अर्थ है सत्याग्रहियों और उनके परिवारोंको दी गई सहायता और यह खर्च तो करते रहना पड़ेगा। संघर्षमें कुछ सत्याग्रहियोंने वीरगति पाई थी; और उनकी विधवा पत्नियोंके पास निर्वाहके लिए कुछ नहीं बच रहा था।

सत्याग्रहियोंके बच्चोंको और स्वयं कुछ सत्याग्रहियोंको भी सहायताकी आवश्यकता है।[1] फार्मके रख-रखाव और सुधारका अर्थ वह खर्च है जो फीनिक्स आश्रमके सम्बन्धमें किया गया है। श्री कैलेनबैकके टॉल्स्टॉय फार्मसे सत्याग्रहियोंको हटाकर यहाँ लानेके बाद इस आश्रमको सत्याग्रह फार्मका नाम दिया गया था। फीनिक्स आश्रममें १०० एकड़ जमीन है। यह 'इंडियन ओपिनियन'के छापेखानेके लिए खरीदी गई थी। यद्यपि कुछ वर्षोतक इसपर कानूनी स्वामित्व मेरा रहा था; किन्तु मैंने उस सम्पत्तिका व्यक्तिगत उपयोग कभी नहीं किया। किन्तु संघर्षके दिनोंमें मैंने इसका कानूनी स्वामित्व छोड़ दिया और अब इसपर न्यासियोंका अधिकार है, जो पंजीकृत किये हुए न्यास-पत्रके अनुसार इसका उपयोग सार्वजनिक उद्देश्योंके लिए करेंगे।[2] यह सम्पत्ति अब भी सत्याग्रहियों या उनके परिवारोंके रहनेके काम आ रही है। आश्रमके लोगोंको, जो वहाँ रहते हैं, कोई मजदूरी नहीं दी जाती; बल्कि वे 'इंडियन ओपिनियन' और अन्य साधनोंकी आयमें से अपने निर्वाह-भरके लिए रुपया ले लेते हैं। अखबार न तो कभी स्वावलम्बी रहा है और न हो सकता है। इसका अंग्रेजी विभाग मुख्यतः यूरोपीय लोगोंको जानकारी देनेके लिए है और वह उनमें निःशुल्क भेजा जाता है। यह सत्याग्रहके शस्त्रागारमें एक शक्तिशाली शस्त्र था, और अब भी वह हमारे दक्षिण आफ्रिकी भारतीय भाइयोंके विषयमें तथ्यों और सत्याग्रह आन्दोलनकी ठीक-ठीक जानकारी देनेवाला एकमात्र अखबार है। इसे किसी भी अर्थमें व्यावसायिक उद्योग नहीं कहा जा सकता। आश्रमको सहायताकी आवश्यकता अब भी होगी।[3]

१. यहाँ प्रकाशित पत्रमें यह जोड़ा गया है: "इनके लिए अब भी खर्च करना पड़ेगा"।

२. इसके बादके दो वाक्य प्रकाशित पत्रमें से निकाल दिये गये हैं।

३. प्रकाशित पत्रमें यह वाक्य इस प्रकार है: जिस सहायताका उल्लेख ब्यौरेमें किया गया है वह सहायता आश्रमको ही दी गई है।

तीसरी मद है वल्लिअम्मा भवन। इस संस्थाकी स्थापना वल्लिअम्मा नामकी एक १७ वर्षीय लड़कीकी स्मृतिमें हुई है। यह जेलमें ज्वरसे पीड़ित हो जानेके फलस्वरूप रिहा होनेके कुछ समय बाद ही चल बसी थी।[1] इस भवनका उपयोग मुख्यतः शिक्षा-सम्बन्धी कार्योंके लिए किया जायेगा। हमारे तमिल देशभाइयोंने सबसे अधिक कष्ट सहे हैं। जोहानिसबर्ग भारतीयोंका सबसे बड़ा केन्द्र है। सबसे अधिक सत्याग्रही वहींके थे और उनमें तमिल सबसे आगे थे। उक्त बालिका भी जोहानिसबर्गकी थी। सत्याग्रह-कोषमें से जोहानिसबर्गमें समाजकी सार्वजनिक आवश्यकताओंकी पूर्तिके लिए इस स्थायी भवनके बनाये जानेसे अधिक अच्छा इस धनका कोई उपयोग नहीं हो सकता था। इस संस्थाकी रजिस्ट्री ब्रिटिश भारतीय संघके अध्यक्ष श्री अहमद मुहम्मद काछलिया, थम्बी नायडू और पोलकके नाम कर दी जायेगी और यह उक्त उद्देश्योंके लिए प्रयुक्त होगी। इसपर सम्भवतः ४,००० पौंड व्यय होंगे। मुझे आशा है कि कोषका यह उपयोग आपकी समितिको पसन्द आयेगा और उन उद्देश्योंके सर्वथा अनुकूल होगा जिनके लिए यह धन दक्षिण आफ्रिका भेजा गया था — अर्थात् सत्याग्रहियोंको राहत देना और संघर्षको प्रोत्साहित करना। मेरी रायमें हमारे पास जो शेष धन बचा है वह श्री ए० एच० वेस्ट और मगनलाल खुशालचन्द गांधीके नाम अबतक की तरह न्यासके रूपमें जमा रहना चाहिए और उनको यह निर्देश दे दिया जाना चाहिए कि वे उस धनका उपयोग स्थानीय कानूनोंके न्यायपूर्ण प्रशासन प्राप्त करनेके उपायों, शेष निर्योग्यताओंको हटाने और सत्याग्रहियोंको राहत देने पर खर्च करें। जिन राहतोंका मैंने उल्लेख किया है यदि उनसे अधिक बातोंमें राहतकी आवश्यकता पड़ती है तो उस तरहके असाधारण खर्चके लिए सर्वश्री काछलिया, पारसी रुस्तमजी और अन्य सत्याग्रहियोंसे सहयोग ले लिया जाता है।[2]

लोगोंका जेल जाना तो बन्द हो गया है; किन्तु शेष निर्योग्यताओंको हटानेके लिए संघर्ष चल ही रहा है और अब मैं यहां इसके परिणामोंके सम्बन्धमें एक संक्षिप्त विवरण द रहा हूँ।[3] संघर्षके अन्तिम दौरमें लगभग २५,००० भारतीयोंने अर्थात् दक्षिण आफ्रिकाकी कुल भारतीय आबादीके छठे हिस्सेने सक्रिय भाग लिया। कुछ थोड़ेसे लोगोंको छोड़कर शेष समाजने नकद या चीज-वस्त या चन्दा देकर या समर्थनमें सभाएँ आदि करके संघर्षमें सहायता दी। जब १९०६में ट्रान्सवालमें प्रसिद्ध एशियाई

१. देखिए खण्ड १२, पृष्ठ ३५१-५२।

२. इस अनुच्छेदके स्थानपर निम्नलिखित अनुच्छेद प्रकाशित किया गया था: "जो रकम खर्च नहीं की गई उसमें से अधिकांश, अर्थात् २१५,००० रुपये तार द्वारा डर्बनसे मुझे भेज दिये गये थे और आपकी समितिकी इच्छाके अनुसार, यह रकम मैंने आपको दे दी है। मेरी समझमें इतनी बड़ी रकमकी इस बचतसे प्रकट होता है कि कोषका पैसा खर्च करते समय पूरी किफायत बरती गई है।

कदाचित् इस समय उस संघर्षका एक अत्यन्त संक्षिप्त विवरण देना आवश्यक है जिसको चलानेके लिए मातृभूमिने इतनी उदारतासे धन दिया था।"

३. प्रकाशित पत्रमें यह वाक्य इस प्रकार है: "यद्यपि वस्तुतः जेल जाना बन्द हो गया है, संघर्ष कदापि समाप्त नहीं हुआ है।"

पंजीयन विधेयक मंजूर किया गया तभीसे यह संघर्ष प्रारम्भ हुआ था। साल-दरसाल अस्थायी समझौते होते रहे और संघर्ष चलता रहा, और इसमें एशियाई पंजीयन अधिनियमके अतिरिक्त कई दूसरी बातें शामिल होती गई और उसका क्षेत्र [केवल ट्रान्सवाल नहीं रहा] समस्त दक्षिण आफ्रिका हो गया। [स्थायी] समझौतेके समय तक सत्याग्रहमें निम्नलिखित मुद्दे आ गये थे:

(१) एशियाई अधिनियम रद किया जाये।
(२) संघके कानूनमें से प्रवासके सम्बन्धमें प्रजातीय या रंग सम्बन्धी निर्योग्यता हटाई जाये।
(३) भारतीय पत्नियोंकी कानूनी निर्योग्यता दूर हो।
(४) तीन पौंडी वार्षिक व्यक्ति-कर, जो भूतपूर्व गिरमिटिया भारतीयोंको, उनकी पत्नियोंको और बड़े बच्चोंको देना पड़ता था, खत्म किया जाये।
(५) निहित अधिकारोंका उचित ध्यान रखते हुए वर्तमान कानूनोंका न्याययुक्त प्रशासन।

पिछले वर्षके समझौतेमें ये सब बातें आ गई हैं। इनके मान लिये जाने पर सत्याग्रहकी पूरी जीत मानी जा सकती है और मैं इतना कह सकता हूँ कि इससे अधिक इसलिए नहीं मिला है कि हमने इससे अधिक नहीं माँगा था और माँगा भी नहीं जा सकता था। क्योंकि यह सत्याग्रहका नियम ही है कि सत्याग्रहीको अपनी न्यूनतम और अधिकतम मांग स्थिर करनी होती है; और वह न उससे अधिक माँग सकता है और न उससे कम लेकर सन्तुष्ट हो सकता है।

किन्तु मेरे इस कथनका यह अर्थ बिलकुल नहीं है कि दक्षिण आफ्रिकामें अब और कुछ करनेको नहीं बचा या सब कुछ मिल गया है। हम केवल प्रवास-सम्बन्धी कानूनी निर्योग्यताओंके निवारणके लिए लड़े हैं; किन्तु अमलमें उनका प्रभाव अन्य जातियोंकी अपेक्षा हम पर अधिक हुआ है। हमने प्रशासनिक असमानताको स्वीकार करते समय वर्तमान स्थितियों और पूर्वग्रहोंका उचित खयाल रखा है।[1] हमने इसलिए संघर्ष किया कि ब्रिटिश संविधानके सिद्धान्त अक्षुण्ण रहें, ताकि आगे चलकर वे कभी-न-कभी यथासम्भव व्यवहारमें उतारे जा सकें। दक्षिण आफ्रिकामें अब भी कुछ कानून ऐसे हैं जो चिन्ताका कारण बने हुए हैं, उदाहरणार्थ १८८५का कानून ३ और केप और नेटालके व्यापारिक परवाना-कानून। प्रवासी-कानूनका अमल बिलकुल जैसा चाहिए वैसा नहीं है। किन्तु इनके लिए सत्याग्रह [न तो] किया गया [है] और न फिलहाल किया ही जा सकता है। वह केवल उन कष्टोंसे सम्बन्धित रहा है जो सामान्यतः सभी भारतीयोंको उठाने पड़ते हैं जिनसे उनके आत्म-सम्मान या अन्तःकरणको ठेस लगती है। हमारे[2] जिन कष्टोंका मैंने उल्लेख किया है किसी भी दिन उस [सत्याग्रह

१. प्रकाशित पत्रमें इन दोनों वाक्योंके स्थानपर निम्नलिखित वाक्य है: "हम केवल प्रवास सम्बन्धी कानूनी निर्योग्यताओंके निवारणके लिए लड़े हैं किन्तु अमलमें हमने वर्तमान परिस्थियों और पूर्वग्रहोंको ध्यानमें रखा है।"

२. प्रकाशित पत्रमें से 'हमारा' शब्द हटा दिया गया है।

करनेकी] स्थिति तक पहुँच आ सकते हैं। उस स्थितिके उत्पन्न होने तक प्रार्थनापत्र जैसे सामान्य उपाय काममें लाना सम्भव है और अभी वे ही काममें लाये जा रहे हैं। दक्षिण आफ्रिकासे प्राप्त पत्रोंसे मालूम होता है कि वहाँ हमारे कुछ देशवासियोंको भारी कष्ट उठाने पड़ रहे हैं। भारतमें उनके सम्बन्धमें अधिक चर्चा सुनाई नहीं पड़ती तो इसका कारण यह है कि इस समय साम्राज्यके ऊपर जो संकट छाया हुआ है, उसके ध्यानसे हमारे दक्षिण आफ्रिकी देशभाई असाधारण संयमसे काम ले रहे हैं।

इस संघर्षके फलस्वरूप सिद्धान्त निर्णीत हो गये हैं और वे निर्योग्यताएँ हट गई हैं जिनसे जातिका अपमान होता था। दक्षिण आफ्रिकामें बाहरसे पहुँचनेवाले ब्रिटिश भारतीयोंके साथ व्यवहारका प्रश्न एक बड़ा प्रश्न है और वह केवल वहीं तय किया जा सकता है; और[1] उन स्थानीय निर्योग्यताओंके प्रश्नपर जो अभीतक हटाई नहीं गई हैं, आपकी समितिको निरन्तर सावधान रहना पड़ेगा और हमारे दक्षिण आफ्रिकी देशवासियोंके कामोंमें पहलेकी तरह सहायता देनी होगी।

मुझे लगता है, बीस सालके अपने व्यक्तिगत अनुभवके आधारपर मुझे दृढ़तापूर्वक अपना यह विश्वास प्रकट कर देना चाहिए कि गिरमिटिया प्रथा एक ऐसी बुराई है जो सुधारी नहीं जा सकती, केवल समाप्त की जा सकती है। मालिकके चाहे जितने दयालु होनेसे भी सम्बन्धित व्यक्तियोंका नैतिक कल्याण नहीं होता। इसलिए मैं यह अनुभव करता हूँ कि आपकी समितिको अविलम्ब भारत सरकारसे प्रार्थना करनी चाहिए कि वह साम्राज्यके प्रत्येक भागमें इस प्रथाको पूरी तरह खत्म कर दे।

इसे खत्म करनेसे पहले मुझे यह अवश्य कहना चाहिए कि यदि उस महान् और धर्मपरायण देशभक्तके नेतृत्वमें, जिनकी मृत्युपर हम शोक मना रहे हैं, हमारी मातृभूमिने हमें इतनी खुलकर सहायता न दी होती और इस समय जो उदात्त पुरुष वाइसरॉय हैं उन्होंने अत्यन्त सहानुभूतिपूर्ण और दृढ़तापूर्ण रुख न अपनाया होता तो न तो आन्दोलन इतनी जल्दी समाप्त होता और न ही उसका परिणाम इतना सन्तोष-जनक होता।

मो० क० गांधी[2]

दक्षिण आफ्रिकी भारतीय सत्याग्रह-कोषका ३१ जनवरी, १९१५[3] तकका हिसाब

खर्च	पौं० शि० पें०
६ अप्रैल, १९१२को श्री रतन ताताको भेजे गये विवरणके अनुसार नामेकी बाकी रकम	४३– १– ३
सहायता	२,८६८–१०– १
कानूनी खर्च	२३५– २– ९
देशी-विदेशी तार	७०५–१५–१०

१. प्रकाशित पत्रमें वाक्य यहाँ समाप्त कर दिया गया है एवं 'और' शब्द निकाल दिया गया है।
२. यह प्रकाशित पत्रसे लिया गया है।
३. प्रकाशित पत्रमें आय और व्यय बराबर-बराबर स्तम्भोंमें दिये गये हैं।

आय	पौं० शि० पें०
इं० ओ० में सूचित प्राप्त-राशि	१,०५४–१७– ६
बम्बई	१८,२०१– ६– ८
मद्रास	४,०३५– ०– ०
रंगून	२,१३६– ०– ६
नैरोबी	१५०– ०– ०
जंजीबार	३३– ६– ८
लन्दन	३८६–११–१०
फार्म स्कूलकी फीसें वापस जमा	४९१–१०– ७
मालकी बिक्री	६७–१३–१०
जोहानिसबर्ग	६४–१७– ०
डर्बन दफ्तरके वापस जमा	१– १– ०
यात्रा-खर्चके वापस जमा	१–१५– ०
	२७,३२४– ०– ७

गांधीजी द्वारा संशोधित हस्तलिखित अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० ६२११) की फोटो-नकल और प्रकाशित पत्र (जी० एन० ८२२४) से भी।

९९. पत्र: नारणदास गांधीको

[जून १९, १९१५][1]

चि० नारणदास,

चि० सामलदासने पोरबन्दरसे लिखा है कि बा की गुजराती टीका-युक्त रामायण वहाँ राजकोटमें पड़ी है। यदि कहीं दिखाई दे तो उसे और मैंने जमनादासको पोपकी जो तमिल पुस्तकें दी थीं, उन्हें लेते आना। तुम्हारे बारेमें आदरणीय खुशालभाईको मैंने जो कुछ लिखा[2] है उस पर विचार करना। यदि आश्रमके सम्बन्धमें तुम्हारी श्रद्धा अविचल हो तो कूद पड़ो।

मोहनदासके आशीर्वाद

चि० नारणदास खुशालचन्द गांधी
मिडिल स्कूलके सामने
परा
राजकोट

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पोस्ट कार्ड (सी० डब्ल्यू० ५६७६) से।
सौजन्य : नारणदास गांधी

१. डाकखानेकी मुहरसे।
२. उपलब्ध नहीं है।

१००. पत्र : जनरल ट्रैफिक मैनेजरको

अहमदाबाद
[जून २८, १९१५][1]

जनरल ट्रैफिक मैनेजर
जी० आई० पी० रेलवे
बम्बई

महोदय,

मैं इसी २७ तारीखको तीसरे दर्जेका वापसी टिकट लेकर पूनासे बम्बई गया था और मैंने किरकीसे गत शनिवारकी शामको ४.४५ बजेकी गाड़ी पकड़ी थी। चूंकि मेरा टिकट केवल दादर तक का था और मैं विक्टोरिया टर्मिनस तक जाना चाहता था, इसलिए मैंने एक अधिकारीको सूचित कर दिया कि मैं अपने गन्तव्य स्थानसे आगे यात्रा कर रहा हूँ। मैंने दादरमें यह सूचना देनेका प्रयत्न किया था, किन्तु मैं परेलमें ही ऐसा कर सका। मुझे बादमें मालूम हुआ कि यह अधिकारी ब्रेकमैन था। उसने मुझसे कहा कि मैं बड़े गार्डको सूचना दूं। चूंकि उसका डिब्बा दूर था, इसलिए मैं यह सूचना नहीं दे सका। मस्जिदमें अधिकारियोंने मुझसे दादरसे वहाँतक का किराया वसूल कर लिया और मेरी आपत्तिके बावजूद सामान्य जुर्माना भी ले लिया। उन्होंने ब्रेकमैनसे भी पूछा कि क्या मैंने उसे विधिवत् सूचना दे दी थी। मस्जिदके अधिकारियोंने कहा कि वे मुझे जुर्मानेसे तभी छूट दे सकते हैं जब मैं गार्ड या स्टेशन मास्टरका प्रमाणपत्र प्रस्तुत करूँ। आप जानते ही हैं कि मैं प्रमाणपत्र प्रस्तुत करता तो गाड़ी छूट जानेका भय था। मैं जिस अधिकारीके पास इस जोखिमके बिना जा सकता था उससे मैंने प्रमाणपत्र माँगा। किन्तु उसने मुझे प्रमाणपत्र नहीं दिया। मैं इस घटनाकी ओर आपका ध्यान आकर्षित करता हूँ, क्योंकि मैंने प्रायः यह देखा है कि तीसरे दर्जेके यात्रियोंको अधिकतर अकारण ही दण्ड दिया जाता है। आप इस मामलेमें जाँच करेंगे तो मैं आभार मानूंगा। मेरी रायमें या तो स्टेशन मास्टरको यह हिदायत दे दी जाये कि जब यात्री कम्पनीके किसी रेल अधिकारीको जहाँतक टिकट है उससे आगे यात्रा करनेकी खबर दे दे तो स्टेशन मास्टर उससे जुर्माना वसूल न करे या इस आशयकी कड़ी हिदायत कर दी जाये कि सम्बन्धित अधिकारी तुरन्त प्रमाणपत्र दे दें। यदि ब्रेकमैनको प्रमाणपत्र देनेका अधिकार नहीं है तो क्या गार्डको तुरन्त यह सूचना देना भी उसका कर्त्तव्य नहीं है कि एक यात्री टिकट न होने पर भी आगे यात्रा कर रहा है और उसने सामान्य प्रमाणपत्र माँगा है?

१. यह तारीख जनरल ट्रैफिक मैनेजरके उत्तरसे ली गई है।

मैं इसके साथ किरायेकी और जुर्मानेकी रसीद भेज रहा हूँ।[1]

आपका आज्ञाकारी सेवक,

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० ६२००) की फोटो-नकलसे।

१०१. मणिलाल गांधीको लिखे पत्रका अंश[2]

[जुलाई ७, १९१५ के बाद][3]

[चि० मणिलाल],

...तुम्हारे तमिल पढ़नेका बन्दोबस्त कर दूंगा। कितना अच्छा हो यदि तुम जिस विषम स्थितिमें हो उससे कुछ दृढ़ बनकर निकलो। किन्तु सोच-समझकर दृढ़तर बनोगे तभी ठीक होगा। तुम्हारे पास जब पैसा खतम होने लगे तो मुझे सूचित करना। पत्र लिखते रहना। हिम्मत तनिक भी न हारना। गरीब लोग कैसा करते होंगे, यह बात याद रखकर काम चलाना।

बापूके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ९९) की नकलसे।
सौजन्य: सुशीलाबेन गांधी

१०२. भाषण: १५वें बम्बई प्रान्तीय सम्मेलन, पूनामें[4]

जुलाई ११, १९१५

सभापति महोदय, भाइयो और बहनो, श्रीमती रानडेने जो संवेदनापूर्ण शब्द कहे हैं उनके बाद मेरा कुछ और कहना कदाचित् धृष्टता होगी। वे मेरे गुरुके गुरुकी विधवा हैं, यह बात इस कार्यक्रमको अतिरिक्त गम्भीरता दे देती है। और सम्भव है मैं कुछ कहूँ तो उससे इस गम्भीरताको हानि पहुँचे। तथापि श्री गोखलेका शिष्य होनेके नाते यदि मैं कुछ व्यक्तिगत संस्मरण सुनाऊँ तो आशा है आप मुझे क्षमा करेंगे।

१. कार्यवाहक डिप्टी ट्रैफिक मैनेजर (कमर्शियल) ने इसका उत्तर १८ जुलाईको देते हुए लिखा था: "जाँचसे मुझे पता चला है कि आपने विक्टोरिया टर्मिनस तक यात्रा करनेकी सूचना दादरमें नहीं दी और चूँकि गाड़ीके कर्मचारियोंको सूचना देनेसे पूर्व आप परेल तक जा चुके थे, इसलिए आपसे जुर्माना ठीक ही वसूल हुआ है और आपको कोई राहत नहीं दी जा सकती।"

२. इस पत्रका पहला पृष्ठ उपलब्ध नहीं है।

३. मणिलाल जुलाई ७, १९१५ को मद्रास गये थे।

४. गांधीजीने श्रीमती रमाबाई रानडेके निम्नलिखित प्रस्तावका समर्थन किया था: यह सम्मेलन स्वर्गीय श्री गोपालकृष्ण गोखलेकी असामयिक मृत्युसे, जिसका चारों ओर दुःख मनाया जा रहा है, इस देश तथा साम्राज्यकी हुई महान् हानिपर अपना गहन शोक अभिव्यक्त करता है। अपने देशके लिए जीवन अर्पित करनेवाला ऐसा आत्मत्यागी और निष्ठावान देशभक्त तथा दूरदर्शी राजनीतिज्ञ आजतक नहीं हुआ।

कुछ वर्ष पहलेकी बात है 'क्रॉन्प्रिन्ज' नामक जहाजपर में गुरुदेव [श्री गोखले] के साथ यात्रा[1] कर रहा था। हमारे साथ श्री कैलेनबैक भी थे। आप एक जर्मन हैं[2] जो हम दोनोंके मित्र हैं। ध्यान रखना चाहिए कि सभी जर्मन शैतान नहीं होते और न सब जर्मन-सैनिक ही शैतान होते हैं।[3] श्री कैलेनबैक जर्मन भी हैं और सैनिक भी। परन्तु मुझे लगता है कि आज यूरोपकी भूमि पर श्री कैलेनबैक-सा कोई शुद्धमना व्यक्ति नहीं है। श्री गोखले उन्हें एक योग्य साथी मानते थे और उनके साथ [कोएट्स] चकतीका खेल खेला करते थे। श्री गोखलेने यह खेल उन्हीं दिनों इंग्लैण्डसे केपटाउनकी यात्रामें सीखा था। फिर भी उन्होंने श्री कैलेनबैकको उसमें हरा ही दिया होता मगर लगता है किसी प्रकार खेल बराबरी पर छूटा। और जहाँतक मुझे मालूम है, श्री कैलेनबैक दक्षिण आफ्रिकामें चकतीके अच्छेसे अच्छे खिलाड़ियोंमें से हैं। इसीके बाद हम लोग जब खाना खाने बैठे तब श्री गोखलेने इस खेलके परिणामकी चर्चा छेड़ी। उनका खयाल था कि मैं ऐसे *खेलोंमें दिलचस्पी नहीं लेता और उनके विरुद्ध हूँ।* उन्होंने मृदु शब्दोंमें मेरी भर्त्सना करते हुए कहा: "तुम जानते हो मैं यूरोपीयोंके साथ ऐसी प्रतियोगितामें क्यों पड़ना चाहता हूँ? मैं अपने देशकी खातिर कमसे-कम उतना तो अवश्य करना चाहता हूँ जितना वे अपने देशकी खातिर कर सकते हैं। सही हो या गलत; मगर कहा जाता है कि बहुत-से मामलोंमें हम उनके मुकाबिलेमें नहीं टिक सकते।" और फिर उन्होंने पूर्ण विनम्रताके साथ कहा: "मैं निश्चय ही इतना दिखा देना चाहता हूँ कि अगर हम [हर बातमें] उनसे बड़े नहीं तो उनके बराबर जरूर हैं।"

यह एक घटना हुई। उसी जहाजपर अपनी प्यारी मातृभूमिके बारेमें हममें जोरोंकी चर्चा हो रही थी। जैसे कोई पिता अपने बच्चेके लिए करता है वैसे ही उन्होंने मेरे लिए एक कार्यक्रम तय कर दिया ताकि जब कभी मुझे पुनः मातृभूमिको लौटनेका अवसर प्राप्त हो, मैं उसके अनुसार काम कर सकूँ। उसी सम्बन्धमें एक बात उन्होंने यह कही: "हम भारतीयोंमें चरित्रबल नहीं है; हमें राजनैतिक क्षेत्रमें धार्मिक उत्साहकी जरूरत है। हमें चाहिए कि हम प्राणपणसे और धार्मिक उत्साहके साथ गुरुदेवके इस भावका अनुसरण करें ताकि हम किसी बच्चेको भी राजनीतिकी शिक्षा देनेमें झिझकें नहीं। मेरा खयाल है कि हमें यह सिखाना भी कि जो कुछ भी हम करें, लगनसे करें, उनके जीवनके उद्देश्योंमें से एक था। हम नश्वर प्राणियोंके लिए इसका निर्दोष अनुकरण सम्भव नहीं है। वे जो-कुछ भी करते थे, पूरे धार्मिक उत्साहसे करते थे। उनकी सफलताका यही रहस्य था। उनका धर्म बाह्याडम्बर-मात्र नहीं था। वह तो उनका जीवन ही था। उन्होंने जिसे छुआ उसे कंचन कर दिया। जहाँ-कहीं भी वे जाते थे, उनके आसपासका वातावरण महक उठता था। जब वे दक्षिण आफ्रिकामें आये, वहाँके लोग स्फूर्तिसे भर गये। इसका कारण उनके भव्य धाराप्रवाह भाषण ही नहीं, बल्कि उनके चरित्रकी निष्ठा

१. दिसम्बर १९१२ में।

२. दक्षिण आफ्रिकामें गांधीजीके सहयोगी; सत्याग्रहके दिनोंमें इन्होंने अपना फार्म सत्याग्रहियोंके हवाले कर दिया था। देखिए खण्ड १० पृष्ठ २८०-८१ पा० टि०।

३. प्रथम महायुद्धके दिनोंमें जर्मनोंके विषयमें ऐसी बातें कही जाती थीं।

और वह धार्मिक भावना थी जिससे प्रेरित होकर वे काम करते थे। यद्यपि उनका स्वास्थ्य ठीक नहीं था तथापि जब उन्हें जनरल स्मट्ससे मिलना था तब लगभग वे सारी रात इसलिए जागते रहे थे कि अपने देशवासियोंके मामलेको पूरी तौरसे तैयार कर सकें। उनकी तैयारी देखकर बोअर सरकारके नेता चकित रह गये। और इसका परिणाम क्या हुआ? दक्षिण आफ्रिकी सरकारने उनसे वादा किया कि कुछ ही वर्षोंमें ३ पौंडी कर उठा दिया जायेगा। वह कर अब रद कर दिया गया है। और हमारे सैकड़ों देशभाइयोंको उससे होनेवाला कष्ट अब नहीं होगा। श्री गोखले अब संसारमें नहीं हैं, पर आपके और मेरे लिए यह सम्भव है कि हम अपने कामों द्वारा उनकी विचारधाराको अपने बीच जीवन्त रखें (हर्ष-ध्वनि)। हम कुछ प्रस्ताव पास करनेवाले हैं जिनके अनुसार हम लोगोंसे, जो जनताके चुने हुए प्रतिनिधि हैं या ऐसे लोग हैं जिन्होंने अपने-आपको जनताका प्रतिनिधि मान लिया है, कुछ काम करनेकी आशा की जायेगी। क्या हम अपने दायित्वको उन्हीं जैसी लगनके साथ नहीं निभायेंगे। जिस जनताका हम प्रतिनिधित्व कर रहे हैं वह हमें भाषणोंसे नहीं हमारे कामोंसे तोलेगी। तो फिर हमारा क्या कर्त्तव्य है? और अगर हम अपने गुरुके समान काम करनेको तैयार हों तभी हम इस प्रस्तावको पास करें। मैं इन शब्दोंके साथ बड़ी प्रसन्नतासे इस प्रस्तावका समर्थन करता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

१५ वें बम्बई प्रान्तीय सम्मेलनकी कार्यवाहीकी रिपोर्टसे: जुलाई १९१५।

१०३. पत्र: सुन्दरम्को

मंगलवार [जुलाई १३, १९१५ को या उसके बाद][1]

प्रिय सुन्दरम्,

मुझे तुम्हारा पत्र पाकर प्रसन्नता हुई। तुम जब चाहो तभी आ सकते हो। मैंने तुम्हें कदापि नहीं भुलाया है। तुम जबतक मद्रासमें रहो तबतक मणिलालको तमिल सीखनेमें सहायता देते रहो और जब वहाँसे निकलो तब उसके लिए कोई तमिल साथी ढूँढ़ देना। हम नित्य **मुत्ती नेरी**[2] गाते हैं, इसमें कभी नागा नहीं करते। देवदासने तमिल-में अच्छी प्रगति की है।

हृदयसे तुम्हारा
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (जी० एन० ३१८८) की फोटो-नकलसे।

१. ऐसा लगता है यह पत्र मणिलाल गांधीके ७ जुलाई १९१५ को मद्रास जानेके बाद लिखा गया था।

२. गांधीजीने मूल पत्रमें ये शब्द तमिल लिपिमें लिखे हैं। ये माणिक्यवाचागर कृत प्रसिद्ध भक्ति-गीतके पहले शब्द हैं।

१०४. पत्र : मणिलाल गांधीको[1]

अहमदाबाद
आषाढ़ सुदी ३ [जुलाई १५, १९१५][2]

चि० मणिलाल,

तुम्हारा पत्र मिल गया है। मैं तुम्हें मारा-मारा नहीं फिरने दूंगा, किन्तु हिम्मत मत हारो। तुम मेरे साथ भी लाचारों-जैसा बरतो, यह मुझे अच्छा नहीं लगता। तुम जो कठिनाइयां सामने हों, उन्हें सहन करो, यही वांछनीय है। मद्रासमें मच्छर तो सभी जगह हैं। पतला कपड़ा ओढ़कर सोना चाहिए। चेहरेपर थोड़ा-सा मिट्टीका तेल मल लिया जाये तो मच्छर नहीं आयेंगे। तुम बिलकुल खुली हवामें तो सोते ही होओगे; यदि नहीं तो अब सोने लगना। उसी मुहल्लेमें मैदान-जैसी खुली हवावाला कमरा मिले तो ले लेना।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ११२) से।
सौजन्य : सुशीलाबेन गांधी

१०५. पत्र : वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको

अहमदाबाद
जुलाई १६ [१९१५][3]

प्रिय श्री शास्त्रियर,

श्री ऐन्ड्रूज़के पत्रकी[4] प्रति आपकी जानकारीके लिए भेजी जा रही है। मेरा खयाल है कि सोसाइटी[5] पूर्णतः निषेध[6] करानेके लिए बड़े पैमानेपर एक आन्दोलन शुरू कर सकती है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

क्या आप मुझे तमिलका एक शिक्षक दे रहे हैं?

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (जी० एन० ६२९३) की फोटो-नकलसे।

१. यह पत्र अपूर्ण है।
२. मणिलाल ७ जुलाई, १९१५को मद्रास गये थे।
३. जिस पत्रके उत्तरमें यह भेजा गया था, उसमें चूँकि सी० एफ० ऐन्ड्रयूज़ने अपनी बीमारीका जिक्र किया था, इसलिए यह पत्र-व्यवहार शायद १९१५ में हुआ होगा।
४. यह पत्र ११ जुलाईको शिमलासे लिखा गया था, जहाँ ऐन्ड्रयूज़ बीमारीके बाद स्वास्थ्य-लाभके लिए रह रहे थे। यहाँ उस पत्रको प्रकाशित नहीं किया जा रहा है।
५. भारत सेवक समाज (सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी)।
६. भारतमें गिरमिटिया मजदूरोंकी भर्तीका।

१०६. पत्र: छोटालाल तेजपालको

[अहमदाबाद]
आषाढ़ सुदी ११ [जुलाई २२, १९१५][1]

भाई श्री छोटालाल,

मुझे तुम्हारा पत्र मिल गया है। किन्तु समय न मिलनेसे उसकी पहुँच नहीं दे सका। क्षमा करना।

तुम्हारे कष्टका कारण चुंगी-विभाग नहीं है। शुरूआत तो पुलिस-विभागसे हुई है। पुलिस पर मुकदमा चलाना सम्भव तो है; किन्तु मैं उसकी सलाह नहीं देता। फिलहाल तो मैं यही ठीक मानता हूँ कि उस सम्बन्धमें पुलिस-विभागको एक पत्र भेजा जाये। पत्र वहांके अपने किसी वकील मित्रसे भिजवाना ठीक होगा। तुम स्वयं भी भेज सकते हो। यदि तुम इस पत्रमें गुजराती भाषामें संक्षेपमें केवल तथ्य भी लिख दोगे तो काफी है। इससे [आगेकी कार्यवाहीके लिए] बुनियाद मिल जायेगी।

वीरमगांव सम्बन्धी कागजात फिलहाल मेरे पास रहने देना जरूरी है। मैं इस मामलेको छोड़ूंगा नहीं।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (जी० एन० २५९१) की फोटो-नकलसे।

१०७. मथुरादास त्रिकमजीको लिखे पत्रका अंश

अहमदाबाद
आषाढ़ सुदी १५ [जुलाई २६, १९१५]

छुआछूतका प्रश्न एक बहुत बड़ा प्रश्न है। मुझे लगता है कि हम एक वर्गको अस्पृश्य बनाये रखकर महापाप कर रहे हैं। एक वर्गको अस्पृश्य बना रखनेके कारण ही हम लोगोंमें कुछ अत्यन्त भयंकर रिवाज हैं। किसीके साथ न खाया जाये और किसीका स्पर्श न किया जाये, इन दोनों बातोंमें बहुत अन्तर है। अब तो अस्पृश्य कोई नहीं रहा है। हम ईसाइयों और मुसलमानोंको छूते हैं तो फिर अपने ही धर्मके लोगोंको क्यों न छुएँ? न्यायतः और व्यवहारतः अस्पृश्यताका समर्थन सम्भव नहीं रहा।

[गुजरातीसे]
बापुनी प्रसादी

१. वीरमगाँव सम्बन्धी कागजातका उल्लेख होनेसे यह पत्र या तो २२ जुलाई, १९१५ को या ११ जुलाई १९१६ को या १ जुलाई १९१७ को लिखा गया होगा। १ जुलाई १९१७ को गांधीजी मोतीहारीमें थे। वे ११ जुलाई, १९१६ को कहाँ थे, यह हमें मालूम नहीं। वे २२ जुलाई, १९१५ को अहमदाबादमें ही थे। फिर भी हो सकता है कि यह १९१६ में लिखा गया हो।

१०८. मथुरादास त्रिकमजीको लिखे पत्रका अंश

जुलाई २६, १९१५

तुम एम० ए० पास करनेका प्रयत्न कर रहे हो, मुझे तो यह शरीरका क्षय करनेके समान लगता है। यदि तुम्हें धन कमानेकी आवश्यकता न हो तो तुम संस्कृतका अच्छा अध्ययन करो और अन्य भारतीय भाषाएँ सीखो; यह आवश्यक है।

[गुजरातीसे]

बापुनी प्रसादी

१०९. पत्र : बाल गंगाधर तिलकको

अहमदाबाद
जुलाई २७ [१९१५][1]

प्रिय श्री तिलक,

मुझे आपका संक्षिप्त पत्र मिला। आपसे मेरी मुलाकातके सम्बन्धमें अपने नामका उपयोग करनेका अधिकार मैंने किसीको भी नहीं दिया है। आपने जिन बातोंका उल्लेख किया है, मैंने उनको पढ़ा तक नहीं है। हमारी बातचीत व्यक्तिगत थी और व्यक्तिगत ही रहनी चाहिए। आपके द्वारा भेजा हुआ भेंटका मसविदा कदाचित् उसके साथ न्याय नहीं करता। मैंने यह कभी नहीं कहा कि मैं कांग्रेसकी तरफसे या उसके द्वारा दिये गये अधिकारके आधार पर काम करता हूँ। मैं तो केवल मित्रोंकी ओरसे एक मित्र और प्रशंसकके रूपमें आपके पास गया था। मैं तो यह भी नहीं जानता कि कांग्रेस कल इस सम्बन्धमें क्या रुख अपनायेगी। मैंने तो आपके सामने विचारार्थ एक प्रस्ताव-भर रखा था।

मैं अखबारी विवादमें पड़ना नहीं चाहता। आशा है आप मेरी इस इच्छाका खयाल रखेंगे और कदापि भेंटका विवरण प्रकाशित न करेंगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

महात्मा, खण्ड १ में प्रकाशित गांधीजीके स्वाक्षरोंमें लिखित मूल अंग्रेजी पत्रकी प्रत्याकृतिसे।

१. यह पत्र १९१५ में लिखा गया प्रतीत होता है, क्योंकि गांधीजीने ११ जुलाईको पूनामें तिलकसे दो बार भेंट की थी।

११०. पत्र : छोटालाल तेजपालको

[अहमदाबाद]
आपाढ़ बदी ५ [जुलाई ३१, १९१५][1]

२ फरवरी, १९२० के 'टाइम्स' [ऑफ इंडिया] में निम्न पंक्तियाँ हैं:

हमारी इच्छा है कि परमश्रेष्ठ के आगमनके समय वीरमगांव चुंगी-नाका हटा दिया जाये। यह भारतके प्रशासनपर एक धब्बा है और इससे उस उद्देश्यकी पूर्त्ति भी बहुत कम होती है, जिसके लिए यह नाका बनाया गया है।

मुझे ये पंक्तियाँ खोजकर भेजनेमें देर हो गई है, आशा है आप मुझे इसके लिए क्षमा करेंगे।

मोहनदास करमचन्द

रा० रा० छोटालाल तेजपाल
रामचन्द्र मैंशन
सैंडहर्स्ट रोड
गिरगाँव
बम्बई

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (जी० एन० २५८६) की फोटो-नकलसे।

१११. पत्र : वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको

अहमदाबाद
अगस्त १ [१९१५?][2]

प्रिय श्री शास्त्रियर,

श्री राघवेन्द्र आपको यह पत्र देंगे। वे जिस योग्य सिद्ध हों उसी हैसियतसे सोसाइटीमें सम्मिलित होना चाहते हैं। वे विविध अनुभव प्राप्त व्यक्ति जान पड़ते हैं। मैं कुछ समयसे उन्हें संवाददाताके रूपमें जानता हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (जी० एन० ६२९०) की फोटो-नकलसे।

१. डाकखानेकी मुहरसे।

२. प्रतीत होता है कि यह पत्र गांधीजीने दक्षिण आफ्रिकासे लौटनेके बाद अपने भारत-वासके प्रारम्भिक वर्षोंमें लिखा था। वे १९१७, १९१८ या १९१९ में इस तारीखको अहमदाबादमें नहीं थे। १ अगस्त १९१६ को वे अहमदाबादमें थे या नहीं, सो हमें नहीं मालूम; किन्तु हम यह जानते हैं कि १९१५ में इस तारीखको वे वहाँ थे।

११२. पत्र : ए० एच० वेस्टको

अहमदावाद

अगस्त ३, १९१५

प्रिय वेस्ट,

तुम्हारे और छगनलालके लिए सत्याग्रह कोपका हिसाव[1] और मेरा तद्विषयक पत्र भेज रहा हूँ। पत्रसे सब स्पष्ट हो जायेगा। तुम वहाँ हिसावको प्रकाशित भी कर सकते हो। कुछ मुद्दोंमें यह मानकर कि उनकी जरूरत पड़ेगी, पहलेसे कुछ रकमें निर्धारित कर दी गई हैं। २,०२३ पौंडकी राशि वहांके विकासके लिए रखी गई है। इससे तुम खेतीको सुधार सकोगे, परन्तु याद रहे कि जरूरत पड़ने पर इसी जगहमें इस समय जितने सत्याग्रही हैं उससे अधिक रखे जाने हैं। यह तो स्पष्ट ही है कि जरूरत न हो तो यह रकम खर्च न की जाये।

फीनिक्स आश्रमके लिए निर्धारित ३,००० पौंडकी राशिमें 'इंडियन ओपिनियन' की सहायता भी शामिल है। इससे तुम पीड़ितोंके मामले सामने ला सकोगे और उनकी मदद भी कर सकोगे। तुम डर्बनमें कार्यालयकी एक शाखा भी खोल सकते हो और ऐसे प्रवासियोंके वारेमें जानकारी इकट्ठी कर सकते हो जो वड़ी कठिनाईमें पड़े हुए हों, और उन्हें मुफ्त सहायता भी पहुँचा सकते हो। तुम ऐसे मामलोंकी ख़बरें आदि देते रहनेके लिए लोगोंको नियुक्त भी कर सकते हो। यह खर्च उसी हालतमें मुनासिव माना जायेगा जब तुम पत्रका उपयोग स्थानीय लोगोंकी सहायताके लिए करोगे। सत्याग्रहियोंके सहायतार्थ निर्धारित रकमका अर्थ यहाँ और वहाँ दोनों ही जगह राहत देना है। मैं यहाँ विधवाओं और ऐसे ही अन्य लोगोंकी सहायता कर रहा हूँ। फीनिक्समें और अन्यत्र भी ऐसे लोग हैं। मैंने एक मोटा हिसाव लगाया है।

वलिअम्मा भवनपर, ४,००० पौंड तक खर्च किये जा सकते हैं।

सम्भव है कि फीनिक्सके लिए निर्धारित राशिके सम्बन्धमें कुछ चर्चा हो। किन्तु मैंने पूरे मामलेको जिस तरह निपटाया है उसके अतिरिक्त और कुछ नहीं कर सकता था। यदि तुम्हारे कामका परिणाम अच्छा निकला तो अन्तमें आलोचना वन्द हो जायेगी। यदि कुछ और अधिक जानकारी मिली हो तो मुझे देना। मैं इस पत्रकी नकल करा रहा हूँ ताकि यदि तुम अपने पत्र-व्यवहारमें इसका उल्लेख करो तो इसकी वातें मेरे सामने रहें।

हृदयसे तुम्हारा,

मेरी सलाहपर मगनलालने जो लिखा है वह मैंने पढ़ लिया है; मैं उससे सहमत हूँ। तुम भी मुझे उसके सम्वन्धमें अपने विचारोंसे अवगत कराना। यदि वहाँ हिसावके सम्वन्वमें कोई प्रश्न उठे तो तुम उसके विषयमें श्री पेटिटसे सलाह लेना।

हस्तलिखित मूल अंग्रेजी दफ्तरी प्रति (एस० एन० ६२१५) की फोटो-नकलसे।

१. देखिए "पत्र : जे० बी० पेटिटको", १६-६-१९१५।

११३. पत्र : बाल गंगाधर तिलकको

अहमदाबाद
अगस्त १७ [१९१५?][1]

प्रिय श्री तिलक,

गत सप्ताह आपका पत्र मिलते ही निर्देशानुसार मैंने तुरन्त आपको तार[2] कर दिया था। आशा है वह समय पर मिल गया होगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

महात्मा, खण्ड १ में प्रकाशित गांधीजीके स्वाक्षरोंमें लिखित मूल अंग्रेजी पत्रकी प्रत्याकृतिसे।

११४. पत्र : छोटालाल तेजपालको

अहमदाबाद
श्रावण सुदी ८ [अगस्त १८, १९१५][3]

भाई श्री छोटालाल,

मेरे लिए तो वही उपयुक्त समय होगा जब मैं स्वतन्त्रतासे काम कर पाऊँगा। इस वर्ष यह सम्भव नहीं होगा। सारी बुराइयोंकी जड़ एक ही है। किन्तु पुलिस अत्याचार न करती हो तब भी हम चुंगीके विरुद्ध हैं; इसलिए चुंगीकी वसूलीमें जो ज्यादतियाँ निहित हैं हमें उन्हींको सिद्ध करना चाहिए। यदि पुलिस देवता भी हो तो भी चुंगीका तो विरोध किया ही जाना चाहिए।

तुम्हारा व्यक्तिगत स्वार्थ नहीं है, यह मैं जानता हूँ।

'जैन हितेच्छु' तो मुझे मिला ही नहीं है। मैंने उसकी राह देखी थी।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (जी० एन० २५९२) की फोटो-नकलसे।

१. **महात्मा** में इसे १९१५-१६ का बताया गया है, हम नहीं जानते कि १७ अगस्त, १९१६ को गांधीजी कहाँ थे; किन्तु १७ अगस्त, १९१५ को वे अहमदाबादमें थे।

२. यह उपलब्ध नहीं है।

३. जान पड़ता है कि यह "पत्र : छोटालाल तेजपालको", ३१-७-१९१५, के बाद लिखा गया है।

११५. पत्र : नारणदास गांधीको

अहमदाबाद
श्रावण सुदी ११ [अगस्त २१, १९१५]

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला। मेरी समझमें तुम्हारा कर्त्तव्य सीधा-सादा है। तुम समय रहते सूचित कर चुके थे। अब वे तुम्हें केवल अपने स्वार्थके कारण रोक रखना चाहते हैं। किन्तु वे ऐसा नहीं कर सकते। सितम्बरमें भी तुम्हें उनके मुकदमेकी खातिर उन्हींके खर्चसे एक दो दिनके लिए जाना होगा।

निदेशक (डाइरेक्टर) सदा ही लोभी होते हैं और प्रश्नका एक ही पक्ष देखते हैं। उन्हें केवल अपना ही स्वार्थ दिखाई देता है। मेरा यह अभिप्राय मालूम हो जानेके बाद तुम्हें क्या करना है और क्या नहीं, यह निर्णय स्वयं तुम्हें करना होगा।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५६७७) से।
सौजन्य : नारणदास गांधी

११६. पत्र : वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको

अहमदाबाद
अगस्त २३, [१९१५][1]

प्रिय शास्त्रियर,

पत्रवाहक मणिलाल मेरा दूसरा बेटा है। वह अपने मद्रासमें रहनेका कारण बतायेगा। उसे वहाँ तमिल सीखने और हाथ-करघे पर कपड़ा-बुनाई सीखनेका अपना शिक्षण पूरा[2] करना है। कृपया उसका मार्गदर्शन करें। हनुमन्तराव अपनी समाज-सेवाकी शिक्षा मणिलाल पर आजमा सकते हैं।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (जी० एन० ६२९२) की फोटो-नकलसे।

१. इस वर्ष मणिलाल गांधी मद्रासमें थे।

२. वे मद्रासमें यह शिक्षण लेनेके लिए पहले भी गये थे। देखिए "पत्र : सुन्दरम्को", १३-७-१९१५ या उसके बाद।

११७. पत्र : माधुरीप्रसादको

अमदावाद
भाद्रपद शुक्ल १ [सितम्बर १०, १९१५]

रा० रा० माधुरीप्रसाद,

आपका और तोतारामजीका[1] खत मुझे मीला है। मैं दिलगीर हुं की मुझे फीरोजावाद जानेका हाल तुरतमें बीलकुल वखत नहिं है। इस आश्रमके काममें से मेरा छूटकारा न होने सकता है।

आपका,
मोहनदास गांधी

रा० रा० माधुरीप्रसाद
भारतीभुवन कार्यालय
फीरोजावाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल पत्र (जी० एन० २७६४) की फोटो-नकलसे।

११८. पत्र : वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको

अहमदावाद
सितम्बर १४, १९१५

प्रिय श्री शास्त्रियर,

मेरा खयाल है कि अखबारमें निकले वक्तव्यका तुरन्त उत्तर दिया जाना चाहिए। केपटाउनमें और अन्य अवसरोंपर उनकी मेरी जो बातचीत हुई थी उसे मैं बतानेके लिए तैयार हूँ। हस्ताक्षरकी बातपर विश्वास करना तबतक सम्भव नहीं है जबतक हम मूल प्रार्थनापत्रको ही न देख लें। जिस बातको उछालनेकी शरारतसे भरी हुई यह कोशिश की जा रही है, मैं नहीं जानता उसे क्या नाम दूँ।

मैं अपने जीवनमें एक महत्त्वपूर्ण कदम[2] उठाने जा रहा हूँ। आज इतना समय नहीं कि इस सम्बन्धमें लिखूँ। इसका सम्बन्ध कुछ हदतक परिया (अन्त्यजों) के प्रश्नसे है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (जी० एन० ६२८८) की फोटो-नकलसे।

१. तोतारामजी सनाढ्य जो फिजीमें २१ वर्ष रहे थे। उन्होंने अपने वहाँके जीवनके सम्बन्धमें एक पुस्तक लिखी है। वे बादमें साबरमती आश्रममें गांधीजीके साथ आ गये थे।

२. यहाँ अभिप्राय एक अन्त्यज दूदाभाईको आश्रममें लेनेके निर्णयसे है; देखिए "पत्र : श्रीनिवास शास्त्रीको", २३-९-१९१५।

११९. पत्र : नारणदास गांधीको

भाद्रपद सुदी ७, [सितम्बर १६, १९१५]

चि० नारणदास,

तुम समयपर आ जाओगे, यही सोचकर पत्र नहीं लिखा। तुम्हारे लिए दीर्घ जीवनकी कामना करूँ तो व्यर्थ है। तुम्हें इस जीवनमें आत्मदर्शन हो, यह कामना करता हूँ। उसके लिए तुम जो प्रयत्न कर रहे हो उसमें तुम्हें सफलता मिले; इसके लिए मेरे आशीर्वाद और मेरी मदद तुम्हें प्राप्त रहेगी।

तुम यहाँ बड़े कठिन समयमें आ रहे हो। ऐसे अवसरपर ही मैं तुम्हारी उपस्थिति चाहता था। मैं मानता हूँ कि तुम कठिनाईकी बात सुनकर घबराओगे नहीं। पत्नीकी ओरसे क्लेश हो तो वह तो दृढ़ रहनेसे ही दूर होगा। पत्नी या पति किसीको भी एक दूसरेके सद्-उत्साहको रोकनेका अधिकार नहीं है। जो प्रसंग आया है उसमें मैं बाह्यतः दुःख अनुभव करता हूँ; किन्तु आन्तरिक सुखका पार नहीं है। मुझे ऐसा लगता है कि भारतमें मेरा जीवन अब जाकर आरम्भ हुआ है।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५६७८) से।

सौजन्य: नारणदास गांधी

१२०. पत्र : वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको

अहमदाबाद

सितम्बर २३, [१९१५][1]

प्रिय श्री शास्त्रियर,

जब मैंने नायकरको आश्रममें लिया तब तो मेरी पत्नीने रोष प्रकट नहीं किया था। फिर मेरे सामने यह सवाल आया कि मैं आश्रममें एक वयस्क गुजराती ढेड़ और उसकी पत्नीको लूँ या न लूँ।[2] मैंने उसे आश्रममें लेनेका निश्चय किया और मेरी पत्नीने इसकी मुखालिफत की। आश्रमकी एक अन्य महिलाने उसका साथ दिया। आश्रममें खासी खलबली मच गई। अहमदाबादमें भी काफी खलबली मची हुई है। मैंने अपनी

१. नायकर, जिनका पत्रमें उल्लेख है, गांधीजीके साथ १९१५ में रहने लगे थे।

२. यहाँ श्री दूदाभाईका उल्लेख किया गया है। ये आश्रममें प्रविष्ट होनेवाले पहले "अछूत" थे और २६ सितम्बरको सपरिवार वहाँ आये थे, देखिए "डायरी : १९१५"। गांधीजीने उन्हें अमृतलाल ठक्करके सुझावपर प्रविष्ट किया था। इस घटनासे अहमदाबादके सामाजिक और धार्मिक जीवनमें एक खलबली पैदा हुई और लोगोंने आश्रमका बहिष्कार तक करनेका विचार किया।

पत्नीसे कह दिया है कि वह मुझे छोड़ सकती है और हम सद्भावपूर्वक अलग-अलग हो सकते हैं। यह कदम बड़े महत्त्वका है, क्योंकि इससे मैं दलित वर्गोंके साथ इतना सम्बद्ध हो जाता हूँ कि निकट भविष्यमें ही सम्भव है मुझे ढेड़ोंके मुहल्लेमें जाकर रहने और उन्हींके साथ जीवन-यापन करनेके विचारको कार्य-रूप देना पड़े। इसका प्रभाव मेरे पक्केसे-पक्के सहयोगियोंपर भी पड़ेगा। मैंने आपको कहानी मोटे रूपमें बता दी है। इसमें बड़ी बात कुछ नहीं है। यह मेरे लिए इसलिए महत्त्वपूर्ण है कि इससे मैं सामाजिक मामलोंमें भी सत्याग्रहकी क्षमता सिद्ध कर सकता हूँ। और जब मैं अन्तिम कदम उठाऊँगा तो उसमें स्वराज्य आदि भी समाविष्ट होंगे।

कृपया इसे डॉ० देवको और अन्य जिन सदस्योंको दिखाना चाहें, दिखा दें।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (जी० एन० ६२९१) की फोटो-नकलसे।

१२१. पत्र : मगनलाल गांधीको

अहमदाबाद
[सितंबर २६, १९१५ के पूर्व][1]

चि० मगनलाल,

मैंने श्री खुशालभाईको फिर पत्र[2] लिखा है। तुम वहाँ स्वस्थ रहकर काम करना। वही काम करना जिससे अन्तरात्मा प्रसन्न हो। संतोक लौटना चाहती हो तो कोई हर्ज नहीं। मद्रास जाये तो भी ठीक है। वह वहाँ आश्रमके सब नियमोंका पालन करती रहे, इतना काफी है। तुम्हें वहाँ रुकना हो तो रुक जाना। मद्रास जाना हो तो मद्रास चले जाना।

तुम्हारे नाम दो पत्र आये हैं। उन्हें अभी नहीं भेज रहा हूँ।

नारणदास निश्चिन्त रहे। उसे भविष्यके सम्बन्धमें श्रद्धावान् और निर्भय रहना चाहिए।

केशू बहुत जल्दी ठिकानेपर आ गया। आज तो वह खेल भी रहा है। उसके दो विषय मेरे पास हैं। इसलिए मैं उसकी स्थिति ज्यादा अच्छी तरह देखता रह सकूँगा। पुरुषोत्तमको[3] तो कुछ नहीं हुआ। वह तो पहले ही की तरह खाता-पीता है।

दूदाभाई रविवारको सवेरे आ जायेंगे।

१. दूदाभाई, जिनका इस पत्रमें उल्लेख है, रविवार २६ सितम्बर, १९१५ को सपत्नीक आश्रममें आये थे।

२. यह उपलब्ध नहीं है।

३. नारणदास गांधीका पुत्र।

ऐसा लगता है फीनिक्समें बहुत उलट-फेर हो रहा है।[1] छगनलाल बिलकुल अलग हो गया जान पड़ता है। इं० ओ० का दाम एक पैनी कर दिया गया है। मुझे लगता है उसने उतावलापन किया है। शायद इसका फल भी अच्छा निकले। विशेष तुम्हारे आनेपर। तुम्हें तो उद्विग्न होना ही नहीं चाहिए। भार उठानेवाले तो तुम्हीं हो।

बापूके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५६७९) से।
सौजन्य : नारणदास गांधी

१२२. पत्र : ए० एच० वेस्टको

अहमदाबाद
सितम्बर २६, [१९१५][2]

प्रिय वेस्ट,

तुम्हारा टाइप किया हुआ पत्र मिला।

जो परिवर्तन किये गये हैं वे मैंने देख लिए हैं। मैं उन्हें ठीक मानता हूँ। मुख्य बात यही है कि जैसे भी हो 'इंडियन ओपिनियन' को चालू रखा जाये। यदि तुम जनताकी, अर्थात् सत्याग्रह-कोषसे कुछ भी सहायता लिए बिना स्वतन्त्र रूपसे काम चला सको तो और भी अच्छा।

इसका यह अर्थ हुआ कि मैंने तुम्हें जो हिसाब[3] भेजा है उसमें संशोधन करना होगा। अच्छा हुआ कि मुझसे देर हो गई। नई योजनामें फेरफार करनेकी जरूरत है, इसे मैं जल्दी ही करूँगा।

इतनी बड़ी रकमको मैं तो अपने पास नहीं रखूँगा; यह न्यासको सौंप दी जायेगी।

प्रागजी[4] और इमाम साहबको[5] जो रुपया दिया गया है उसका एक हिस्सा सत्याग्रह-कोषके खाते नाम लिखनेके सम्बन्धमें मेरा खयाल यह है कि जिस बैठकमें यह मामला तय हुआ उसमें ये लोग मौजूद थे। फिर भी यदि वे आपत्ति करें तो यह रकम 'इंडियन ओपिनियन' की सहायताके रूपमें सत्याग्रह-कोषके नाम डाल दी जाये। दोनों अवस्थाओंमें रुपया आयेगा तो सत्याग्रह-कोषसे ही। चूँकि पूरी रकमको 'इंडियन ओपिनियन' के खर्चेमें डालना न्यायोचित न होता, इसलिए यह रकम राहत-खाते लिख

१. देखिए अगला शीर्षक।
२. यह वेस्टके २३ अगस्त १९१५ के पत्रके उत्तरमें लिखा गया था। वेस्टके पत्रपर गांधीजीने लिखा है: "उत्तर, २६ सितम्बर"।
३. देखिए, "पत्र : ए० एच० वेस्टको", ३-८-१९१५।
४. प्रागजी खण्डूभाई देसाई, दक्षिण आफ्रिकी सत्याग्रहमें भाग लेनेवाले एक सत्याग्रही।
५. इमाम अब्दुल कादिर बावजीर, मुस्लिम इमाम और सत्याग्रही, हमीदिया इस्लामिया अंजुमनके अध्यक्ष।

दी गई थी। यदि ये लोग सत्याग्रही न होते तो हम उनकी सेवाओंका उपयोग न कर सके होते। किन्तु यह तो हिसाब-किताब रखनेकी बात है। हर हालतमें मुझे इस खर्चका बचाव करना है।

जबतक छगनलाल शारीरिक दृष्टिसे ही असमर्थ न हो जाये तबतक उसका 'इंडियन ओपिनियन' से हटना अशुभ लक्षण है। फिर भी मुझे नाराज नहीं होना चाहिए। तुम लोग वहाँ मौकेपर हो; अतः सर्वोत्तम क्या है यह तो तुम्हीं जानते हो। हम जिन आदर्शोंपर चल रहे हैं वे तो हम सभीके समान आदर्श हैं और तुम अपने तरीकेके अनुसार ही चलोगे। फीनिक्सका न्यास इसीलिए बनाया गया है। मैं तो इतनी दूर हूँ, केवल सलाह ही दे सकता हूँ।

हिसाबकी जाँच करानेमें यदि ज्यादा खर्च होता है तो वह बेकार है। हमारी बहियोंमें सब लेन-देन दर्ज है। बैंकमें जमा रकमसे प्रकट है कि कोष आदिमें से कितना रुपया बचा है। फिर भी इस मामलेमें क्या करना चाहिए, यह भली-भाँति तुम्हीं जानते हो।

मैं जब रुपयेको संभाल ही नहीं रहा हूँ तब श्री रुस्तमजीकी चेतावनी अनावश्यक है। फीनिक्सके रुपयेके सम्बन्धमें न्यासी हैं ही और वे योजना बनानेवालोंकी मंजूरी लेकर आवश्यक कार्रवाई कर सकते हैं।

तुम्हारे उठाये मुद्दे अब खत्म हो गये। श्री पोलकके लिए निर्धारित राशि तबतक रखी जाये जबतक स्वयं उन्हें ऐसा न लगे कि वे इसके बिना काम चला सकते हैं।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (सी० डब्ल्यू० ४४२०) की फोटो-नकलसे।
सौजन्य: ए० एच० वेस्ट

१२३. भाषण: भारतीय गिरमिटिया मजदूरोंके सम्बन्धमें[1]

अक्तूबर २८, १९१५

श्रोताओंने बड़ी हर्ष-ध्वनिके साथ श्री गांधीका अभिनन्दन किया। श्री गांधीने कहा: गिरमिटिया मजदूरोंका प्रश्न इस समय बहुत ही सामयिक है, क्योंकि भारतके सच्चे और वास्तविक मित्र — सर्वश्री ऐन्ड्रयूज और पियर्सन फीजीमें एक सर्वेक्षण[2] कर रहे हैं। इस समय फीजी द्वीपोंमें ही गिरमिटिया भारतीयोंकी संख्या सबसे अधिक है। सर्वप्रथम इस प्रश्नके बारेमें भारतीयोंकी दिलचस्पी जाग्रत करनेका श्रेय सर्वश्री ऐन्ड्रयूज और पियर्सनको नहीं बल्कि दिवंगत राजनीतिज्ञ श्री गोखलेको ही है;

१. एम्पायर थियेटरमें जिला कांग्रेस कमेटीके तत्त्वावधानमें; सभाकी अध्यक्षता सर इब्राहीम रहीमतुल्लाने की थी।

२. फीजीमें गिरमिटिया श्रम सम्बन्धी उनके प्रतिवेदनमें इसके निष्कर्ष प्रकाशित हुए थे।

उन्होंने इस प्रश्नके सम्बन्धमें भारतीयोंको अपने दायित्वोंके महत्त्वसे परिचित कराया था। इस स्थलपर श्री गांधीने श्री गोखले द्वारा वाइसरॉयकी परिषद्में[1] प्रस्तुत किया गया वह प्रस्ताव[2] और उसके सिलसिलेमें दिया गया उनका भाषण पढ़कर सुनाया जिसमें उन्होंने गिरमिटिया प्रथाके सर्वथा उन्मूलनकी माँग की थी। श्री गांधीने उसकी विस्तृत टीका भी की। परिषद्के समक्ष प्रस्तुत श्री गोखलेका प्रस्ताव बहुमतसे अस्वीकृत कर दिया गया था, हालांकि परिषद्के सभी[3] गैर-सरकारी सदस्योंने उसके पक्षमें मत-दान किया था। कृपालु तथा सहृदय वाइसरॉय गिरमिटकी इस घृणित प्रथाको भारतीय संविधि-पुस्तिकासे हटानेके लिए चाहे जितना जोर लगाते, पर उसके मार्गमें एक भारी कठिनाई थी — लॉर्ड हार्डिज द्वारा भेजे दो आयुक्तों — सर्वश्री मैकनील और चिमन-लाल[4] — द्वारा तैयार किया गया प्रतिवेदन, जो दो मोटी-मोटी जिल्दोंमें था। उन्होंने कहा है कि सभी लोग उन जिल्दोंके नीरस पृष्ठोंमें शायद ही सिर खपाना चाहेंगे, लेकिन मेरे लिए वे बड़ा महत्त्व रखते हैं, क्योंकि मैं जानता हूँ कि गिरमिटिया वास्तवमें हैं क्या। पर मैं आपको बतलाता हूँ और आप इसपर विश्वास कीजिए कि प्रतिवेदनमें यह स्वीकार किया गया है कि यदि कुछ शर्तें पूरी की जायें तो गिरमिटिया श्रमको मौजूदा रूपमें ही बरकरार रहना चाहिए। श्री गांधीने कहा कि वे शर्तें ऐसी थीं जिनको पूरा करना असम्भव है और उन दो बड़े-बड़े आयुक्तोंने जो सिफारिशें कीं उनसे पता चलता है कि वास्तवमें पूरी गम्भीरताके साथ उनका यह मतलब नहीं हो सकता कि फीजी, जमैका, गायना तथा अन्य उपनिवेशोंमें मौजूद गिरमिट-प्रथा अपने वर्तमान रूपमें आवश्यकतासे एक मिनट भी अधिक बरकरार रहनी चाहिए। श्री गांधीने यहाँ पिछले आयोगका हवाला देते हुए कहा कि सर्वश्री मैकनील और चिमन-लालने जो त्रुटियाँ बतलाईं वे तो सभी जानते हैं। उनके प्रतिवेदनमें कोई भी नई चीज नहीं मिलती। परन्तु लगभग चालीस वर्ष पूर्व इंग्लैंडकी किसी लोक-कल्याणकारी संस्थाकी ओरसे गैर-सरकारी तौरपर एक जाँच कराई गई थी और उसकी पुस्तिकामें बिना किसी लाग-लपेटके सच्ची-सच्ची बातें बयान की गई थीं। इस प्रथाके अन्तर्गत होनेवाले कष्टोंका उसमें बड़ी जानदार भाषामें खाका खींचा गया था।

इसी सिलसिलेमें श्री गांधीने नेटालके प्रधानमंत्रीके एक वक्तव्यसे उद्धरण दिया, जिसमें उन्होंने कहा कि गिरमिट-प्रथा बड़ी ही अविवेकपूर्ण प्रथा है और वह जितनी

१. ४ मार्च, १९१२ को।

२. भारतमें गिरमिटिया मजदूरोंकी भर्ती बन्द करनेकी सिफारिश करते हुए; देखिए "गिरमिट या गुलामी?", दिसम्बर १९१५।

३. जिनकी संख्या २२ थी।

४. मैकनील और चिमनलालको भारत-सरकारने जमैका, ट्रिनीडाड, ब्रिटिश गायना और फीजीके ऐसे उपनिवेशोंकी परिस्थितिके बारेमें प्रतिवेदन तैयार करनेके लिए भेजा था, जहाँ तब भी गिरमिटिया प्रथाकी अनुमति थी। प्रथाकी त्रुटियों और श्रमिकोंकी दयनीय दशाके बावजूद, उन्होंने प्रथा बनाये रखनेकी सिफारिश की थी।

जल्दी समाप्त कर दी जाये, गिरमिटिया मजदूरों और मालिकोंके लिए उतना ही अच्छा होगा। लॉर्ड सेल्बोर्नने भी दक्षिण आफ्रिकाके उच्चायुक्तके पदसे यही बात कही थी: उनका कहना था कि यह प्रथा मजदूरोंसे ज्यादा तो मालिकोंके लिए बुरी है क्योंकि यह लगभग गुलामीकी प्रथा ही है। सर विलियम हंटरने[1] १८९५ में इस प्रथाका स्वयं अध्ययन करनेके बाद एक बड़ी सुन्दर पत्र-माला लिखी थी। उन्होंने उचित जाँच-पड़तालके बाद गिरमिट-प्रथाको गुलामी-प्रथासे एक बहुत मिलती-जलती अवस्था बतलाया था। एक स्थानपर उन्होंने इसके लिए "अर्ध-दासता" शब्दका प्रयोग किया था। श्री गांधीने कहा, यदि उन्होंने ऐसा कहकर गलतबयानी की, तो उस गलतबयानीमें लॉर्ड सेल्बोर्न भी भागीदार हैं। इन दो सुयोग्य सज्जनों, आयुक्तोंने भी इसी प्रथाके सिलसिलेमें प्रतिवेदन तैयार करते हुए इसे बरकरार रखनेके लिए कुछ शर्तें लगाना जरूरी समझा; शर्तें भी इस प्रकारकी जो पूरी की ही नहीं जा सकतीं। शर्तें थीं कि अनुपयुक्त प्रवासियोंको छाँट दिया जाये, उनमें स्त्रियोंका अनुपात ४० से बढ़ाकर ५० प्रतिशत कर दिया जाये। श्री गांधीने कहा कि मेरी समझमें नहीं आता कि "अनुपयुक्त प्रवासियोंको" छाँटनेसे उनका आशय क्या था। आयुक्तोंने स्वयं ही उनसे कहा था कि भारतमें मजदूर मिलना आसान नहीं है। भारत अपने बच्चोंको अर्द्ध-दास बननेके लिए देशसे बाहर भेजनेके लिए लालायित नहीं है। लॉर्ड सैंडरसनने[2] कहा था, भारतकी आर्थिक दशासे असन्तुष्ट होकर वहाँकी फाजिल आबादी देशसे बाहर चली गई थी। परन्तु उनको यह भी याद रखना चाहिए कि सन् १९०७ में मजदूरोंकी भर्तीके लिए ५०० भर्ती-परवाने जारी किये गये थे। स्थिति सामान्य नहीं है, इसका अनुमान क्या इसी बातसे नहीं लग जाता कि हर १७ मजदूरोंकी भर्तीके लिए एक भर्ती करनेवाला अपेक्षित है? इन गिरमिटिया मजदूरोंको भर्ती करनेके लिए भारतमें औपनिवेशिक सरकारोंके अपने ऐसे एजेंट भी मौजूद हैं। एक कुलीकी भर्ती करनेके लिए पच्चीस रुपये मिलते हैं और ये पच्चीस रुपये भर्ती करनेवाले और इन एजेंटोंमें बाँट लिये जाते हैं। श्री गांधीने विचार व्यक्त किया कि अपने इतने देशवासियोंको अर्द्ध-दास बन जानेके लिए भर्ती करानेवाले लोगोंकी मानसिक अवस्था अत्यन्त ही दयनीय होगी। भर्ती करानेवाले लोगों और एजेंटोंके कारनामे देखकर और उनकी कई गलतबयानियाँ पढ़नेके बाद हमें इस बातपर आश्चर्य नहीं होता कि हमारे हजारों-हजार देशवासी गिरमिटिया मजदूर बन रहे हैं। आयुक्तोंने बागानमें होनेवाली अनैतिकताओंका वर्णन कई पृष्ठोंमें किया है। इतना ही नहीं कि ६० पुरुषोंके बीच ४० स्त्रियाँ थीं, बल्कि उन्होंने कहा

१. (१८४०–१९००) एक इतिहासज्ञ, भारत सम्बन्धी मामलोंके अधिकारी विशेषज्ञ, **इंडियन एम्पायर**के लेखक; उन्होंने पच्चीस वर्षतक भारतमें नौकरी की थी। वह भारतीयोंकी भावनाओंके प्रति सहानुभूति रखते थे और लन्दनमें भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसकी ब्रिटिश समितिके एक सदस्य थे।

२. सम्राटके उपनिवेशों — जमैका, ट्रिनीडाड, ब्रिटिश गायना और फीजीकी परिस्थितिकी पड़तालके लिए इंग्लैंडमें ब्रिटिश सरकार द्वारा नियुक्त सैंडरसन समिति (१९०९) के अध्यक्ष सैंडरसन।

है कि ये पुरुष इन स्त्रियोंके साथ विवाह नहीं करते, इनको रखैलकी तरह रखते हैं और इन स्त्रियोंमें से अनेक वेश्याएँ हैं। श्री गांधीने कहा कि यदि मेरा बस चले तो ऐसे गिरमिटके लिए मैं अपने बच्चोंको देशके बाहर भेजनेसे मना कर दूँ। लेकिन हजारों स्त्री-पुरुष जा ही चुके हैं। भारतके लोग इसके बारेमें क्या सोचते हैं?

प्रतिवेदनमें रखी गई शर्तें ये हैं कि अध्यादेशोंसे सख्त किस्मकी व्यवस्थाओंको निकाल देना चाहिए और संरक्षकको मालिकोंपर नियन्त्रण रखना चाहिए। श्री गांधीने कहा कि जहाँतक इन मजदूरोंके संरक्षणके लिए बनाये गये विनियमोंका प्रश्न है, आप मेरी बातका यकीन करें कि उनमें कई बड़ी-बड़ी खामियाँ हैं, ऐसी कि उनका लाभ उठाकर उन विनियमोंकी व्यवस्थाओंको निष्फल बनाया जा सकता है। नियमोंका उद्देश्य मालिकोंको सभी प्रकारकी शक्तियोंसे सज्जित करना है। पूँजी श्रमके खिलाफ खड़ी हुई है और कृत्रिम रूपसे पूँजीको सहारा दिया जा रहा है, श्रमको नहीं।

श्री गांधीने भारतसे प्रवास करनेवालोंके संरक्षकोंकी भर्त्सना करते हुए कहा कि वे भी मालिकोंके ही वर्गके लोग हैं; और उन्हींमें उठते-बैठते हैं। तब क्या यह स्वाभाविक नहीं कि उनकी सहानुभूति मालिकोंके साथ ही रहे? और तब यह कैसे मुमकिन है कि वे मालिकोंके मुकाबिले मजदूरोंके साथ न्याय कर सकें? मेरे सामने ऐसे कई उदाहरण मौजूद हैं कि जब मजिस्ट्रेटोंने गिरमिटिया मजदूरोंके साथ न्याय किया है, परन्तु 'प्रवासियोंके संरक्षकों' से ऐसी आशा करना असम्भव है। मजदूरोंको तो बिलकुल हाथ-पैर बाँध कर मालिकोंके हवाले कर दिया गया है। यदि वे अपने मालिकके खिलाफ कोई अपराध करें तो उनको सबसे पहले तो जेल भुगतनी पड़ती है और वे जितने दिन जेल काटते हैं उनकी गिरमिटकी अवधिमें उतने दिन बढ़ा दिये जाते हैं और उनको फिरसे मालिकोंके यहाँ काम करने भेज दिया जाता है। आयुक्तोंने इन नियमोंके विरुद्ध कुछ भी नहीं कहा। यदि 'संरक्षक' कोई गलत फैसला दे तो उसे कोई गलत नहीं कह सकता, परन्तु यदि मजिस्ट्रेट वैसा करे तो उसकी आलोचना की जा सकती है। और आयुक्तोंने कहा है कि इन कैदियोंको अलग-अलग जेलोंमें रखा जाना चाहिए। परन्तु यदि इन सैकड़ों कैदियोंके लिए अलग-अलग जेल बनाये जायें तो औपनिवेशिक सरकारका दिवाला पिट जायेगा। सत्याग्रहियोंके लिए वह जेल नहीं बना पाई थी। और आयुक्तोंने यह भी कहा है कि गिरमिटिया मजदूरोंको एक निश्चित रकम किस्तोंमें अदा करने पर गिरमिटसे मुक्त होनेकी अनुमति दी जानी चाहिए। परन्तु उन्होंने तो ऐसा समझा जैसे गिरमिटिया एक स्वतन्त्र व्यक्ति हो। गिरमिटिया खुद-मुख्तार तो होता नहीं है। मैं ऐसी कई सुशिक्षित अंग्रेज लड़कियोंको जानता हूँ जिनको प्रलोभन देकर लाया गया था और जो गिरमिटिया न होनेपर भी अपने-आपको इस चक्करसे छुड़ा नहीं पाईं। तब फिर गिरमिटिया अपने-आपको कैसे स्वतन्त्र कर सकता है? आयुक्तोंने आगे कहा है कि भारतीयोंके बच्चोंके लिए प्राथमिक शिक्षाकी व्यवस्था करनेके सिलसिलेमें पैदा हुई विशेष आवश्यकताओंकी ओर ध्यान दिया जाना चाहिए।

श्री गांधीने कहा कि शिक्षाके क्षेत्रमें कुछ लोक-कल्याणकारी संस्थाएँ अवश्य ही कुछ काम कर रही हैं परन्तु वे कोई बड़ा ठोस काम नहीं कर रही हैं और न उनसे ऐसी आशा ही की जा सकती है। श्री बाल्फरने[1] गिरमिटिया मजदूरकी तुलना सैनिकसे की है। परन्तु सैनिक तो एक जिम्मेदार व्यक्ति होता है और वह ऊँचे पद तक पहुँच सकता है। दूसरी ओर गिरमिटिया मजदूर तो वही मजदूरका-मजदूर बना रहता है। उसके अपने कोई विशेषाधिकार नहीं होते। इतना ही नहीं उसकी निर्योग्यताएँ उसकी पत्नी और उसके बच्चेपर भी थोपी जाती हैं। गिरमिटिया भारतीय कभी भी मजदूरसे ऊँचे किसी ओहदेपर नहीं पहुँच सकता। और भारत वापस लौटनेपर वह अपने साथ लाता क्या है? लौटनेपर वह एक टूटी-फूटी नौका-जैसा रह जाता है; उसमें सभ्यताके कुछ कृत्रिम तथा ऊपरी चिह्न रह जाते हैं पर वह अपने पीछे कहीं अधिक मूल्यवान वस्तुएँ छोड़कर चला आता है। हो सकता है कि कुछ सिक्के भी वह अपने साथ ले आये। इस घृणित प्रथासे हमारे राष्ट्रीय आत्म-सम्मानकी हानि होती है, इसलिए इसे बरकरार नहीं रहने देना चाहिए।

यदि आप मेरी इन बातोंपर अच्छी तरह विचार करेंगे, तो आप इस प्रथाको एक वर्षके अन्दर-अन्दर हटानेका प्रयत्न करेंगे और हमारा यह राष्ट्रीय कलंक धुल जायेगा; गिरमिटिया मजदूरोंकी एक कहानी-भर रह जायेगी। श्री गांधीने कहा कि मैं चाहता हूँ कि उपनिवेशोंमें भारतीयोंके साथ होनेवाले दुर्व्यवहारका कारण दूर कर दिया जाये। इस प्रथाको कितना ही समर्थन दिया जाये, रहेगी तो वह दासतासे मिलती-जुलती एक प्रथा ही। वह पूर्ण दासतापर आधारित एक स्थिति तो बनी ही रहेगी और ऐसी स्थिति राष्ट्रीय उत्थान और प्रतिष्ठाके लिए बाधास्वरूप है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २९-१०-१९१५

१२४. मगनलाल गांधीको लिखे पत्रका अंश[2]

[अक्तूबर २८, १९१५के बाद][3]

. . . करनेसे पूरा पड़ जायेगा।[4] तेलके बिना काम चलाया जा सके तो यह बहुत महत्त्वपूर्ण फेरफार होगा। मैंने देखा है कि कुछ संस्थाओंमें तेल या घी कुछ नहीं दिया जाता।

१. आर्थर जेम्स बाल्फर (१८४८-१९३०); ब्रिटिश राजनीतिज्ञ, कंजरवेटिव नेता और प्रधानमन्त्री।

२. पत्रके पहले दो पृष्ठ उपलब्ध नहीं हैं।

३. तमिल-अध्यापकके उल्लेखसे लगता है कि यह पत्र तब लिखा गया जब मगनलाल गांधी मद्रासमें थे। मगनलाल २८ अक्तूबरको ही मद्रासके लिए रवाना हुए थे।

४. मूलमें यह वाक्य अस्पष्ट है।

फकीरीको[1] अहमदाबाद नहीं सुहाता। उसकी सार-सँभाल तो होनी ही चाहिए, इसलिए उसको कहाँ रखा जाये, यह विचार उठा। मुझे सूरतका अशक्ताश्रम बहुत अच्छा जान पड़ा, इसलिए उसको वहाँ रखा है। आज उसका पत्र आया है। वह लिखता है कि अभी तबीयत ठीक नहीं रहती।

मणिलाल चंचीको राजकोट छोड़ने गया है। उसकी माँकी इच्छा थी कि वह कलकत्ते जानेसे पहले उसे कुछ दिन राजकोटमें रखे। काका[2] यहीं हैं। रेवाशंकर[3] अपनी पत्नीको लेने गया है। मगनभाई[4] आज ही अपने लड़केकी व्यवस्था करने धर्मज गये हैं। दो नये सदस्य आश्रममें आये हैं। यह तय किया गया है कि एक वर्ष तक नये छात्र भर्ती न किये जायें। अन्नाकी[5] आशा छोड़ देना ही उचित है। दोनों नये सदस्य बड़ी आयुके हैं।

यहाँके लिए एक तमिल-शिक्षककी तलाश करना। वेतन देंगे। यदि वे चाहें तो आश्रमसे बाहर रह सकते हैं। रहन-सहन सादा होना चाहिए। गुरुकुलका सब कुछ पूरा हो चुकनेपर ही वहाँकी स्थितिका अन्दाज़ लगेगा।

बापूके आशीर्वाद

किचिनने[6] आत्महत्या कर ली है। इसके पीछे कारण था आर्थिक हानि।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५६९०) से।
सौजन्य : राधाबेन चौधरी।

१२५. पत्र : ए० एच० वेस्टको

अहमदाबाद,
अक्तूबर ३१, [१९१५][7]

प्रिय वेस्ट,

मुझे तुम्हारा आरोप-पत्र मिला। यदि तुम्हीं खुलकर न कहोगे तो कौन कहेगा? मैं तुम्हारी मैत्रीको केवल इसीलिए मूल्यवान् मानता हूँ कि तुम सदा वही बात कहते हो जो तुम्हारे मनमें होती है।

१. नायडू
२. कालेलकर
३. सोढा
४. पटेल
५. हरिहर शर्मा
६. हर्बर्ट किचिन, **इंडियन ओपिनियन**के संस्थापकोंमें से एक; ये थियोसॉफिस्ट थे। उन्होंने श्री नाजरकी अकाल मृत्युके बाद **इंडियन ओपिनियन**का सम्पादन किया था। वे कुछ समय तक गांधीजीके साथ रहे थे और बोअर-युद्धमें उन्होंने गांधीजीके साथ काम भी किया था। देखिए खण्ड ४, पृष्ठ ३५२
७. वेस्टको छगनलालके सम्बन्धमें दिये गये तारके उल्लेखसे यह पत्र १९१५ में लिखा गया जान पड़ता है।

अब उत्तर देता हूँ।

रकमें निर्धारित करनेके बारेमें मैं वहाँके किसी आदमीसे सलाह नहीं कर सका, क्योंकि मैं वहाँ नहीं था। फीनिक्सके लिए निर्धारित की गई रकमके बारेमें वहाँ हमने आपसमें बातचीत की थी। सहायताके लिए निर्धारित रकमके बारेमें किसीसे सलाह करनेकी जरूरत न थी, वलिअम्मा-भवनके लिए निर्धारित रकमकी बात वहाँ तय हो गई थी। यह तो वहाँ तय हो चुका था कि यदि पोलकको निर्धन अवस्थामें इंग्लैंड वापस जाना पड़े तो उसे खर्चके लिए १,००० पौंड दे देने चाहिए। किन्तु मैं यह नहीं कह सकता कि इसपर निश्चित रूपसे चर्चा हुई थी या नहीं। मेरी राय तो यह है कि यह खर्च भी ऐसा है जिसके सम्बन्धमें सलाह करना मैं आवश्यक नहीं मानता। यदि भारतीय समाजमें कोई आत्म-सम्मानका भाव है तो वह इन लोगोंको भूखा-नंगा वापस नहीं भेज सकता। यह सहायता विशुद्ध सत्याग्रहकी सहायता है। मैं इसे हिसाबके कागजमें प्रकाशित करनेकी बात स्वप्नमें भी नहीं सोचता। जिन सत्याग्रहियोंको सहायता दी गई है हम उनके नाम प्रकट करनेके लिए बाध्य नहीं हैं।

श्री पेटिटका वक्तव्य मुझसे सलाह लेनेके बाद प्रकाशित किया गया था। उनके कहनेसे मैंने अपना वक्तव्य देरसे निकाला। मैंने प्रत्येक रकम, जिसमें पोलक की १,००० पौंडकी रकम भी है, समितिको बता दी थी। तुमने और रुस्तमजीने जो असहमति प्रकट की है मैं श्री पेटिटका ध्यान उसकी ओर भी आकर्षित कर रहा हूँ।

तुम कहते हो कि तुम कोई ऐसा आर्थिक लाभ उठाना नहीं चाहते जो दोष-युक्त हो; और दी जाने पर सहायता स्वीकार नहीं करना चाहते हो। मैं तुम्हें बधाई देता हूँ। तुम जितने मजबूत रहो उतना अच्छा। मैंने जिन रकमोंको निर्धारित करनेका सुझाव दिया है उनका कारण हम सबकी कमजोरी है। किन्तु यदि तुम मजबूत हो तो मैं तुम्हें कमजोर नहीं करूँगा।

तुम कहते हो कि फीनिक्सके विकासके लिए रुपया कहीं दूसरी जगह से प्राप्त करके तुम्हारे पास भेजा जाना चाहिए। यह सम्भव नहीं हुआ। हमने जब वहाँ चर्चा की थी तब भी मनमें यह बात स्पष्ट थी कि यह रुपया सत्याग्रह-कोषमें से लिया जायेगा, क्योंकि हम फीनिक्स आश्रमको सत्याग्रही-फार्मके रूपमें चला रहे हैं और उसे उत्तरोत्तर संकटग्रस्त गिरमिटिया भारतीयोंका आश्रय-स्थान बनाना चाहते हैं, इसलिए यदि तुम्हें सहायता चाहिए तो यह केवल इस कोषसे ही दी जा सकती है।

यदि तुम यह निर्णय करो कि सहायता लेनी ही नहीं है तो मैं निश्चय ही उसका स्वागत करूँगा।

यह रुपया दक्षिण आफ्रिकाका नहीं है। उसपर यहाँकी समितिका नियन्त्रण है। उसने कहा कि जिन रकमोंको निर्धारित कर देनेके लिए कहूँ, उनके अतिरिक्त शेष रकम उसके खातेमें स्थानान्तरित कर दी जानी चाहिए। मैं अब कोई खास रकम निर्धारित नहीं करा रहा हूँ, किन्तु तुम लोग जो वहाँ हो, जब-जब चाहोगे तब-तब मैं तुम्हारे लिए धन संग्रह कर दूंगा। इसके बाद निधिपर यहाँकी समितिका पूर्ण नियन्त्रण हो जाता है। मैं मध्यस्थका काम करूँगा।

वहियोंके सम्बन्धमें तुम्हारा खयाल बिलकुल गलत है। हमारी वहियोंमें समस्त आय और व्यय दिखाया गया है। हमें हिसावकी जाँच करानेकी कोई आवश्यकता नहीं है। हमें किसीका कुछ देना नहीं है और किसीको भी हमें कुछ करनेके लिए कहनेका कानूनी हक नहीं है। हां, समिति कह सकती है। धन-दाता भी व्यक्तिगत रूपसे कह सकते हैं। उनका हम समाधान कर सकते हैं। अभीतक ऐसा एक पैसा भी खर्च नहीं किया गया है जो इस कोषकी मर्यादाके अन्तर्गत न आता हो।

सत्याग्रहियोंकी सहायताके अन्तर्गत पोलक, थम्बी और काछलिया भी आते हैं। मेरा खयाल है कि हमने काछलियाको जो ऋण दिया था वह वापस नहीं मिला। इसी प्रकार छगनलाल, मगनलाल और प्रागजी आदि भी राहतके अन्तर्गत आ जायेंगे। इसमें नायडूके और अन्य सत्याग्रहियोंके बच्चे तो आते ही हैं। मैं और मेरा परिवार इसके अन्तर्गत नहीं आयेंगे क्योंकि हमारा खर्च दूसरी तरहसे मिल जाता है। चूंकि मैं इस कोषका नियन्त्रक हूँ या रहा हूँ, इसलिए मेरी इच्छा यही रही है कि मैं अपने लिए सहायता लेनेसे बचा रहूँ। किन्तु यदि मुझे सहायता देनेवाला दूसरा कोई भी न होता तो मैं अपना और बच्चोंका खर्च इसमें से लेनेमें न झिझकता। और मैं यह बात लोगोंके सम्मुख स्पष्ट तो करता ही। चूँकि दूसरे सत्याग्रही मेरी आड़में हैं, इसलिए उनके सम्बन्धमें ऐसी सावधानी रखनी आवश्यक नहीं है।

चूँकि अब हमारे हाथमें रुपया नहीं रहा, इसलिए मुझे जमीनमें रुपया लगानेके तुम्हारे प्रस्तावपर विचार करनेकी जरूरत नहीं है।

मैंने छगनलालके सम्बन्धमें तुम्हें तार[1] दिया है। जान पड़ता है, वह टूटता जा रहा है। यदि यह सही हो तो उसे यहाँ भेज दिया जाये। और यदि प्रागजी और इमाम साहब कामको हाथमें न लेंगे तो मुझे किसीको यहाँसे भेजना होगा। मैं तो केवल इतना ही जानता हूँ कि तुम्हें गलियोंमें मजदूरी भी करनी पड़े फिर भी तुम्हें 'इं० ओ०' को चलाते रहना चाहिए। यदि तुम और सब छोड़कर निश्चयपूर्वक इस कार्यमें जुट जाओ तो अच्छा हो। किन्तु यदि तुम नहीं जुट सकते तो जबतक तुम फीनिक्समें अखबार निकालोगे तबतक तुम्हारा और तुम्हारे परिवारका भरण-पोषण हर हालतमें किया जायेगा।

मेरा खयाल है तुमने जितने महत्त्वपूर्ण मुद्दे उठाये थे, मैं उन सबका उत्तर दे चुका हूँ, मेरा अभिप्राय है, नई परिस्थितियोंको ध्यानमें रखते हुए। अब तुम सब पर विचार कर लो और तब मुझे अपना निर्णय बताओ। मुझे सत्याग्रहका ३१ जनवरी तक का हिसाब मिल चुका है। यदि छगनलाल वहाँ हो या यदि प्रागजी हिसाब तैयार कर सकें तो तुम मुझे इससे बादका हिसाब भेज दो।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (सी० डब्ल्यू० ४४२१) की फोटो-नकल से।
सौजन्य: ए० एच० वेस्ट

१. देखिए अगला शीर्षक।

१२६. पत्र : मगनलाल गांधीको

अहमदाबाद
आश्विन वदी ११ [नवम्बर ३, १९१५][1]

चि० मगनलाल,

मैंने तार[2] दिया था कि यदि चि० छगनलाल अबतक अच्छा न हुआ हो तो उसे यहाँ भेज दिया जाये। इससे खुशालभाई प्रसन्न हुए। उत्तर मिला है कि "छगनलालकी हालतमें सुधार"—वेस्ट। इससे लगता है कि छगनलाल जल्दी तो नहीं आयेगा। फिर भी लिख रहा हूँ कि यदि वहाँ छगनलालके बिना काम चल सकता हो तो वह यहाँ आ जाये।

सत्याग्रहके हिसाबकी छपाई लगभग पूरी हो चुकी है।

केशू खूब मौज करता है। उसे एक दिन ज्वर आ गया था। सब बच्चे मेरे पास ही सोते हैं। यह बहुत अच्छा हुआ है—कि उन्हें पढ़ाता भी मैं ही हूँ। नारणसामी[3] और पार्थ सारथीको[4] संस्कृतके अतिरिक्त सब विषय मैं पढ़ाता हूँ। मैं चाहता हूँ कि अभी तो वे मेरे ही पास रहें।

बा कुछ शान्त है; किन्तु मैं देखता हूँ कि वह मन-ही-मन कुढ़ती रहती है। छूतछातके बारेमें उसका आग्रह कुछ कम हो गया है।

अमृतलालभाई ठक्कर[5] इस समय आश्रममें हैं।

खुशालभाईने लिखा है कि जरूरत हो तो वे जमनादासको भेजनेको तैयार हैं। इसलिए मैंने उसे बुलाया है।[6]

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (एस० एन० ६२३९) की फोटो-नकल से।

१. यह भी १९१५ में लिखा गया जान पड़ता है; देखिए अगला शीर्षक।

२. उपलब्ध नहीं है।

३. और ४. आश्रमके सदस्य; देखिए "आश्रम : आनुमानिक व्यय", मई ११, १९१५

५. ठक्कर बापा (१८६९–१९५१); जिन्होंने अपना जीवन आदिवासियों और अछूतोंके उत्थानके लिए अर्पित कर दिया था।

६. पत्र अपूर्ण है।

१२७. पत्र: ए० एच० वेस्टको

अहमदाबाद
नवम्बर ५, १९१५

प्रिय वेस्ट,

मैं यह जिक्र करना भूल गया कि वलिअम्मा-भवनका विचार त्याग देना पड़ा है। मैंने देखा कि समितिको[1] यह विचार पसन्द नहीं है। यदि मैंने आग्रह किया होता तो वह उसे मंजूर कर लेती; किन्तु मैंने वहाँके भारतीय समाजकी अवस्था देखते हुए इसपर विशेष रूपसे आग्रह नहीं किया।

छगनलालके बारेमें तुम्हारा तार[2] मिल गया। अभी हालमें छगनलालके जो पत्र मिले हैं वे चौंकानेवाले हैं। मैंने अनुभव किया कि यदि उसका स्वास्थ्य अच्छा नहीं रहता तो यही अच्छा है कि उसे यहाँ भेज दिया जाये। उसने अपने पिछले पत्रमें लिखा है: "स्वस्थ होते हुए भी मैं मुक्त किया जा सकता हूँ, इतना ही नहीं, मेरे निवृत्त होनेसे राहत मिलेगी।" यदि वह मुक्त किया जा सकता हो तो उसे यहाँ भेज दिया जाये।

यदि तुम्हें यहाँसे सहायक चाहिए तो मैं लगभग ३ मास बाद भेज दूंगा।

मैंने यह तार[3] भी दिया था कि हिसाबकी जाँच करनेकी जरूरत नहीं है। अब विशेष रूपसे जाँच कराने से कुछ लाभ नहीं हो सकता। यदि हम यह तय करें कि लोगोंसे बिलकुल रुपया न लेंगे तो हमारी वहियाँ सीधी-सादी ही होंगी। तब तुम्हें 'इंडियन ओपिनियन' से और पुस्तकोंकी बिक्रीसे होनेवाले आय और खर्च दिखाने होंगे। पोलकके लिए जो रुपया छोड़ा गया है, वह उन्हींके लिए निर्धारित किया जा चुका है। यदि उसे तुम सँभालना नहीं चाहते तो वह अब यहाँ भेजा जा सकता है। किन्तु मुझे आशा है कि तुम सब लोग इस रकमके निर्धारणको आवश्यक समझोगे।

वलिअम्मा भवनकी भूमि रख ली जाये या बेच दी जाये; और उसका रुपया यहाँ भेज दिया जाये।

मगनलाल अपना तमिलका अध्ययन समाप्त करनेके लिए मद्रास गया है। उसकी पत्नी भी साथ गई है और फकीरी नायडू भी।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (सी० डब्ल्यू० ४४२२) की फोटो-नकलसे।
सौजन्य: ए० एच० वेस्ट।

१. दक्षिण आफ्रिकी भारतीय कोषकी समिति, देखिए "पत्र: जे० बी० पेटिटको", १६-६-१९१५।
२. देखिए पिछला शीर्षक।
३. उपलब्ध नहीं है।

१२८. पत्र : खुशालचन्द गांधीको

[अहमदाबाद
नवम्बर ८, १९१५][1]

आदरणीय भाईकी सेवामें,

पिछले वर्ष मैंने आपको बड़ा कष्ट दिया। किन्तु मैंने सब-कुछ शुद्ध भावसे देश, कुटुम्ब और आत्माके कल्याणके विचारसे ही किया था, इसलिए अपनेको क्षमाका पात्र मानकर मैं आपसे क्षमा चाहता हूँ। मैं आपके आशीर्वादका भूखा हूँ, क्योंकि यदि कुटुम्बमें बड़े-बूढ़ोंमें कोई मेरी बातको थोड़ा-बहुत समझता है तो वह आप ही समझते हैं। मैं अपनी भाभीजीके चरणोंमें शीश झुकाकर उनका आशीर्वाद भी माँगता हूँ और उनसे क्षमा चाहता हूँ।

मोहनदासके दण्डवत्

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५६८१) से।
सौजन्य : नारणदास गांधी

१२९. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

अहमदाबाद
कार्तिक सुदी ३, [नवम्बर १०, १९१५]

चि० मथुरादास,

मैं तुम्हारा [ठीक] पता तो भूल ही गया हूँ।

तुम्हारे कार्डसे पता चलता है कि तुम अभी मुझे भूले नहीं हो। तुमसे मुझे बड़ी आशा है। प्रभु उसको फलवती बनानेके लिए तुम्हें विशेष नैतिक बल दे।

मोहनदासके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुनी प्रसादी

१. डाकखानेकी मुहरसे।

१३०. पत्र : मगनलाल गांधीको

[अहमदाबाद]
शनिवार [नवम्बर १३, १९१५][1]

चि० मगनलाल,

चूँकि तुम पत्रोंपर पता गुजरातीमें लिखते हो, इसलिये वे 'डेड लेटर ऑफिस'से[2] होकर यहाँ आते हैं। यदि शहरका नाम अंग्रेजीमें लिख दिया करो तो पत्र समयपर पहुँच जायेंगे।

डॉक्टर देव[3] इस समय यहीं हैं। उन्हें तुम्हारा पत्र बहुत देरसे मिला। वे यात्रापर थे। अब उन्होंने कहा है कि तुम नगीन बाबूको लिख दो कि उन्हें आना हो तो वे आनेके आठ-दस दिन पहले सूचित कर दें। घरका प्रबन्ध डॉ० देव कर लेंगे। क्या मणिलालको सूतपर माँड़ चढ़ानेमें कठिनाई होती है?

इस समय कोई नया काम नहीं चल रहा है। प्रभुदासने[4] बढ़ईगिरी सीखना छोड़ दिया है। मैं चाहता हूँ वह अपना अधिकसे-अधिक समय करघेपर लगाये। हाजी इस्माइल मूसा भी यहीं आ गये हैं। आज रात डॉ० देवके सम्मानार्थ सभा की गई थी। काफी लोग आये थे। आशा है तुमने अपना तमिलका अध्ययन जारी रखा होगा। मुझे तुम्हारे लिए डॉक्टरसे[5] छात्रवृत्ति माँगनेकी आवश्यकता नहीं जान पड़ती। जमनादासका आना अभी तो रुक ही गया है। क्या श्री पेटिटको[6] लिखे गये पत्रकी नकल मैंने तुम्हें भेजी थी? यहाँ दो व्यक्ति नये हैं एक नारणदास पटेल और दूसरे बापूजी भगत। भगतके साथ उनका पौत्र भी है। दाना भी यहीं है। सब लोग अच्छी तरह काम कर रहे हैं। कृष्णस्वामी शर्मा आज आ गये हैं।

बापूके आशीर्वाद

भाई व्रजलालको कहना कि २५ रुपयेका मनीऑर्डर नहीं मिला है।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५६८०) से।
सौजन्य: राधाबेन चौधरी

१. डॉ० देवके सम्मानार्थ सभा, जिसका पत्रमें उल्लेख है, इसी तारीखको हुई थी।

२. इस कार्यालयमें अधूरे पतोंको ठीक करके पानेवालेको अथवा ठीक पता न लगनेपर प्रेषकके पास वापस भेजा जाता है।

३. भारत सेवक समाज (सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी), पूनाके मन्त्री।

४. छगनलाल गांधीके पुत्र।

५. डॉ० प्राणजीवन मेहता।

६. देखिए "पत्र: जे० बी० पेटिटको", १६-६-१९१५।

१३१. भाषण : फीरोजशाह मेहताके निधनपर[1]

नवम्बर १५, १९१५

इस प्रस्तावको प्रस्तुत करनेका काम मुझे सौंपा गया है। इससे मुझे सर फीरोजशाहके सम्बन्धमें अपने भाव प्रकट करनेका अवसर मिला है। सर फीरोजशाह बम्बई नगर-निगममें दहाड़नेवाले सिंह थे; और मुझे भी कई बार उनकी गर्जनाएँ सुननेके अवसर मिले हैं। सर जॉर्ज क्लार्क,[2] लॉर्ड हैरिस[3] और भारतके विभिन्न वाइसरायों और गवर्नरोंसे उन्होंने बहुत बार टक्करें ली थीं। ऐसे अग्रणी पुरुषके लिए समस्त देशमें शोक मनाया जाना कोई बड़ी बात नहीं है। किन्तु इस शोक प्रदर्शनमें हमारा स्वार्थ निहित है। वे जिस प्रकार जिये और जिस प्रकार मरे, उस प्रकार जीना और मरना हममें से कुछ अधिक लोग सीख जायें तो हमारे दुःख करने-जैसी कोई बात नहीं है। कुछ दिन पहले भारत माननीय श्री गोखलेकी मृत्युपर रुदन कर रहा था। हम अपने उन आँसुओंको अभी पोंछ भी न पाये थे कि हमारे ऊपर यह दूसरा भीषण आघात हो गया। इन दोनों महान् पुरुषोंकी एक दूसरेसे तुलना करना ठीक नहीं है। दोनोंने ही अपना-अपना कार्य अपने-अपने बुद्धिबलके अनुसार कर दिखाया है। श्री गोखले एक आत्मत्यागी पुरुष थे, इसलिए वे ऋषि कहे जाने योग्य थे। सर फीरोजशाहके लिए दो विशेषणोंका प्रयोग किया जा सकता है — वे बम्बई नगर-निगमके पिता थे और दूसरे वे बम्बईके ही नहीं बल्कि स्वयं लोगों द्वारा चुने हुए भारतके छत्रहीन राजा थे। उन्होंने भारतके सभी सार्वजनिक मामलोंमें प्रमुख भाग लिया था, और उनमें लोगोंकी ऐसी अटल श्रद्धा थी कि वे जो भी कहते थे लोग वह-सब करनेके लिए तैयार रहते थे। अकेले बम्बई नगरमें ही नहीं अपितु पूरे बम्बई इलाकेमें बुद्धि-बलके कारण उनके प्रति लोगोंका बहुत आदरभाव था। बम्बई इलाकेभरमें कोई उनके विरुद्ध खड़ा नहीं हो सकता था। यह कहनेमें तनिक भी अत्युक्ति नहीं है कि ऐसे समयमें जब भारतीय लोग महत्त्वपूर्ण राजनैतिक अधिकारोंकी आशा करते हैं, तब कोई ऐसा व्यक्ति नहीं रहा जो हमारी ओरसे सरकारसे बात करे। मैंने कहीं पढ़ा है कि जो व्यक्ति अपने मित्रके प्रति सच्चा प्रेम रखता है वह उसकी मृत्युके बाद उसे और भी अधिक चाहने लगता है। इसी प्रकार यदि सर फीरोजशाहके प्रति इस समय हमारा प्रेम उमड़ रहा है तो उसका कारण उनके गुण ही हैं। उनकी जीवितावस्थामें हमने उन्हें बहुत परेशान किया होगा और उनकी निन्दा-स्तुति भी की होगी; किन्तु अब

१. यह शोकसभा माननीय सर चीनूभाईकी अध्यक्षतामें प्रेमाभाई भवन, अहमदाबादमें की गई थी और गांधीजीने शोक-प्रस्ताव प्रस्तुत किया था।

२. जॉर्ज क्लार्क (लॉर्ड सीडनहम) बम्बईके एक भूतपूर्व गवर्नर।

३. लॉर्ड हैरिस, बम्बईके भूतपूर्व गवर्नर और दक्षिण आफ्रिकाकी कंसॉलिडेटेड गोल्डफील्ड्स कम्पनीके अध्यक्ष; देखिए, खण्ड ४, पृष्ठ ५५।

जब कि वे हमारे बीच नहीं रहे, हमें उनके दोष नहीं देखने चाहिए। हमने उनकी मृत्यु पर शोक प्रकट करनेके लिए जो यह सभा की है, सो तो हमने अपना एक कर्त्तव्य ही पूरा किया है। किन्तु हमें इतना करके ही बैठ न जाना चाहिए। सर फीरोजशाहकी इच्छा यह थी कि हम सभी उन्हींकी तरह लोक-सेवा करें; हम ऐसी सेवा करके ही उनके प्रति अपने कर्त्तव्यका पालन करेंगे। उनका नश्वर शरीर तो चला गया है; किन्तु उनका कार्य सदा जीवित रहेगा। उनकी लोक-सेवाकी उत्कंठा इतनी तीव्र थी कि वे अपने मुवक्किलोंके मुकदमे मुल्तवी करा देते थे, अपनी फीस छोड़ देते थे और अनेक असुविधाएँ सहते थे; किन्तु वे बम्बई नगर-निगमकी बैठकोंमें अवश्य उपस्थित होते थे। बम्बई नगर-निगमके कार्यको अधिक महत्त्वपूर्ण मानकर वे कभी-कभी धारासभामें भी नहीं जाते थे। उन्हें केवल राजनीतिक मामलोंमें ही गुंथा रहना पसन्द नहीं था। उनका यह सिद्धान्त था कि जिस कामको हाथमें लिया जाये उसे सफल बनाया जाये और उन्होंने इसी कारण बम्बई नगर-निगमके कामपर सबसे अधिक ध्यान दिया था। भारतमें ऐसा कोई शहर नहीं हैं जिसकी नगरपालिकाके कामकाजमें किसी सदस्यने इतनी अधिक दिलचस्पी ली हो जितनी बम्बई नगर-निगमके कामकाजमें सर फीरोजशाहने ली थी। बर्मिंघम नगरपालिकामें उसके अध्यक्ष श्री चैम्बरलेनने[1] जो कार्य किया है संसारमें सर्वत्र उसकी प्रशंसा हुई है। किन्तु ऐसे चार चैम्बरलेनोंके बराबर काम बम्बईके लिए अकेले सर फीरोजशाहने किया है। उनका सच्चा स्मारक तो यही है कि समस्त नगरपालिकाएँ उन्हींकी तरह काम करें। सर फीरोजशाहके दफ्तरमें रोज-मर्रा जो राजनैतिक चर्चाएँ चलती रहती थीं, उनसे बम्बईका लोकसमाज प्रभावित हुए बिना न रहता था। वे पारसीके बजाय भारतीय अधिक थे। और उनका विश्वास था कि सारे भारतीयोंकी जबतक एक जाति नहीं बनती तबतक वे संगठित नहीं होंगे। उनके दफ्तरमें जो चर्चाएँ होती थीं उनका मुख्य विषय उन उपायोंपर विचार करना ही होता था जिनका अवलम्बन करके निर्भय होकर अपने अधिकार प्राप्त किये जा सकते हैं। लोकसेवाके निमित्त उन्हें बहुत त्याग करना पड़ा था। उन्होंने एक बार मुझे एक मामलेमें बहुत अच्छी सलाह दी थी। एक बार किसीने मेरा अपमान किया। उसको लेकर मैं उसपर हर्जानेका दावा करनेवाला था। उस समय उन्होंने मुझे यह सलाह दी थी कि: "यदि तुम अपना और लोगोंका कल्याण करना चाहते हो तो इस अपमानको पचा जाओ और भविष्यमें भी जो अपमान हों उनको भी तुम्हें पचा जाना चाहिए। मुझे भी अनेक बार ऐसा करना पड़ा है।" इस सलाह [पर अमल करने]के कारण ही मुझमें कुछ काम करनेकी शक्ति आई है, यह मुझे स्वीकार करना चाहिए। हम आज उनका जो यशोगान कर रहे हैं वह इसलिए कि वे विवेक, बुद्धि, साहस और श्रद्धा आदि गुणोंके निधान थे। आज जिस महान् पुरुषके लिए अहमदाबाद शोक मना रहा है उसकी स्मृति चिरस्थायी बनानेके उद्देश्यसे एक सुझाव देनेकी इच्छा होती है। अहमदाबादका यह सार्वजनिक भवन लज्जाजनक रूपसे छोटा है। जिन शहरोंकी आबादी अहमदाबादकी आबादीसे चौथाई है, वहाँ भी

१. जोज़ेफ चैम्बरलेन, देखिए खण्ड १, पृष्ठ ३९२।

इससे बड़े भवन हैं। इसलिए मेरा निवेदन यह है कि अहमदाबादके लोग सर फीरोजशाहकी स्मृतिमें एक बड़ा भवन बनाएँ। सर फीरोजशाहके ठाठ-बाठको समझना भी आवश्यक है। भारतीय व्यवस्थापिका सभाके सदस्यके रूपमें उन्हें जो वेतन मिलता था उसे तो वे कलकत्तेमें ही खर्च कर डालते थे। खर्च करनेमें उनका हाथ बहुत खुला हुआ था; श्री गोखले और ईश्वरचन्द्र विद्यासागर[1] आदिका जीवन-सिद्धान्त एक था और सर फीरोजशाहका दूसरा; किन्तु वह था निर्दोष। ऐसे महान् व्यक्तिका स्मारक अहमदाबादमें स्थापित किया जाना चाहिए। मुझे आशा है कि अहमदाबादके लोग मेरी इस माँगका समर्थन करेंगे।

[गुजरातीसे]

प्रजाबन्धु, २१-११-१९१५

१३२. भाषण: अहमदाबादमें राजचन्द्र-जयन्तीके अवसरपर

नवम्बर २१, १९१५

गुजरातके ख्यातनामा दार्शनिक श्रीमद् राजचन्द्रकी[2] जन्म-वार्षिकी मनानेके लिए अहमदाबादके प्रेमाभाई हॉलमें २१ नवम्बर, १९१५ को आयोजित सभाके अध्यक्ष, गांधीजीने अपने भाषणके प्रारम्भमें महान दार्शनिककी जन्म-वार्षिकी मनानेके औचित्यपर प्रकाश डाला।

श्री गांधीने श्रीमद् राजचन्द्रके जीवनपर प्रकाश डालते हुए कहा कि उन्हें उनके व्यक्तिगत सम्पर्कमें आनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ था। उन्होंने कहा कि अपनी समझके मुताबिक तो मेरी पक्की राय यह है कि मृतात्मा भारतमें आधुनिक कालके सर्वोत्तम धार्मिक दार्शनिक थे।[3] सत्य-दर्शनमें वे अपना सानी नहीं रखते, आसक्तिका उनमें लेश भी नहीं था और उनका वैराग्य वास्तविक था। वे किसी भी संकीर्ण मतको नहीं मानते थे। वे समस्त विश्वको अपना घर मानते थे और संसारके किसी भी धर्मपर उनको आपत्ति नहीं थी। पश्चिममें टॉल्स्टॉय और रस्किन दो सबसे बड़े दार्शनिक हुए हैं, और मैं बिना किसी हिचकके कह सकता हूँ कि मृतात्मा उन दोनोंसे बड़े थे।

१. (१८२०-१८९१) बंगालके प्रसिद्ध शिक्षाशास्त्री और समाज-सुधारक।

२. आप गांधीजीके जीवनभरके मित्र और समर्थक, डॉ० प्राणजीवन मेहताके बड़े भाई श्री रेवाशंकर जगमोहन मेहताके दामाद थे। गांधीजी, डॉ० मेहताके कहनेपर, उनसे सबसे पहले १८९१ में मिले थे। उन दिनों वे एक व्यवसायी और कुशल जौहरीके रूपमें, कर्मयोगकी भावनासे, जीवन-यापन कर रहे थे। गांधीजीके परिपक्व मस्तिष्कपर सबसे पहले उनका ही प्रभाव पड़ा था, उतना-ही गहरा जितना कि बादमें रस्किन और टॉल्स्टॉयका पड़ा (देखिए **आत्मकथा** भाग २, अध्याय १, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद)।

३. यह वाक्य **गुजराती**, २८-११-१९१५ से लिया गया है, जिसमें कहा गया है: 'उनमें ज्ञान-वैराग्य और भक्ति, तीनों थीं।'

धार्मिक अनुभूतिके क्षेत्रमें वे उनसे कहीं आगे थे। मृतात्माकी निष्ठा बड़ी दिव्य थी; ऐसी निष्ठा सच्चे अर्थमें आत्माके साक्षात्कारसे ही उद्‌भूत हो सकती है। उन्होंने मेरे जीवनपर बड़ा गहरा प्रभाव डाला है। उनकी कृतियाँ बहुत उपयोगी और प्रामाणिक हैं और उनमें उदात्त भावना व्याप्त है। इन गुणोंके कारण उनमें एक ऐसी विलक्षणता आ गई है जिससे पाठकोंपर उनका प्रभाव पड़ता है।

श्री गांधीने भाषण समाप्त करते हुए आशा प्रकट की कि समारोहमें उपस्थित सभी लोग दिवंगत महात्माकी कृतियोंका अध्ययन करेंगे। उन्होंने कहा कि उनके अध्ययनसे लोगोंको कष्टोंके बीच एक राहत महसूस होगी।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २३-११-१९१५

१३३. एक पत्रका अंश[1]

[नवम्बर २६, १९१५ से पूर्व]

आश्रमका कामकाज तेजीसे चल रहा है। इस समय आश्रममें कुल ३३ लोग रहते हैं, जिनमें से तीन ढेड़ हैं। ढेड़ोंको लेकर परिस्थिति गम्भीर हो गई है। अहमदाबाद सनातन धर्मका सुदृढ़ केन्द्र माना जाता है। इसलिए यहाँ इस प्रश्नको लेकर बड़ी चर्चा हुई है। आरम्भमें तो ऐसा लगता था कि पूरे आश्रमका जातीय बहिष्कार कर दिया जायेगा; और यह सम्भावना अभीतक बनी हुई है। छात्रोंने संस्कृत, हिन्दी और तमिल भाषाओंके अध्ययनमें अच्छी प्रगति की है। उन्हें बढ़ईगिरीका काम और करघेपर कपड़ा बुननेका काम सिखाया जाता है। दो बढ़ई आश्रममें रख लिये गये हैं। हम कुछ ही दिनोंमें करघेपर अपने हाथोंसे बुना कपड़ा आपको भेजेंगे। लड़कोंने मेज आदि दूसरी चीजें भी बनाई हैं। अब वे पुस्तकें रखनेके लिए अलमारियाँ बना रहे हैं।

[गुजरातीसे]

प्रजाबन्धु, २६-१२-१९१५

१. फीनिक्समें प्राप्त गांधीजीका यह पत्र आंशिक रूपमें २६-११-१९१५ के **इंडियन ओपिनियन** में छापा गया था और वहाँसे **प्रजाबन्धु** में उद्धृत किया गया था।

१३४. भाषण : अहमदाबादके समारोहमें[1]

नवम्बर २८, १९१५

मैं यह जानता हूँ कि आप सब लोगोंकी प्रसन्नताके इस अवसरपर यदि मैं आपको पसन्द न आनेवाले विचार प्रकट करूँगा तो आपको दुःख होगा। फिर भी इस सम्बन्धमें अपने विचार मुझे आपको बताने ही चाहिए। एक प्रश्न यह उठता है कि मेरा इस समारोहमें आना उचित भी था या नहीं। और उससे भी बड़ा प्रश्न यह उठता है कि मुझे यहाँ भाषण देना चाहिए या नहीं। मैं यहाँ प्रेम-वश आ गया हूँ और प्रेम-वश ही बोलने खड़ा हुआ हूँ। आप सब लोगोंको बहुत प्रसन्नता हुई है और आप भाई नानालालका सम्मान कर रहे हैं, यह देखकर मुझे भी प्रसन्नता होनी चाहिए।

भाई नानालाल आई० सी० एस० होकर आ गये . . . परिश्रमके लिए उन्हें सम्मान देना ठीक है। किन्तु मैं यह नहीं चाहता कि उनके उदाहरणका अनुकरण करके अन्य विद्यार्थी भी उनके समान सनद लेकर नौकर बन जायें। अभी हमारे विद्यार्थियोंको सिविलियन बननेके आदर्शकी आवश्यकता नहीं है, बल्कि उस आदर्शकी आवश्यकता है जो श्री दादाभाई, श्री गोखले और श्री फीरोजशाह मेहताने रखा है। यदि मैं स्वर्गीय श्री गो० कृ० गोखलेके शब्दोंमें कहूँ तो अभी तो हमें चरित्र-गठनकी आवश्यकता है, बिल्लोंकी नहीं। भाई नानालालके पिताने ३०,००० रुपये खर्च करके उन्हें सिविलियन बनाया है।

मेरा खयाल है कि वे इस रुपयेका कोई अधिक अच्छा सदुपयोग कर सकते थे; और भाई नानालाल सामान्य साधन-सम्पन्न व्यक्ति रहे होते तो भी किसी अन्य रूपमें भारतकी अच्छी सेवा कर सकते थे। भारतमें सिविलियन तो बहुत आ चुके हैं और आगे भी आयेंगे; किन्तु इन्होंने लोगोंका कोई विशिष्ट हित किया हो, ऐसा नहीं लगता। भोजा भगत[2] मोची था, फिर भी उसने अपना धन्धा करते हुए ही अच्छी उन्नति की थी। इसी प्रकार अखा भगत[3] सुनार था; फिर भी उसने अपना काम करते हुए अपनी उन्नति की थी। कोई भी मनुष्य इसी प्रकार चाहे तो अपने धन्धेमें रहकर आत्मोत्थान कर सकता है। भाई नानालाल भी यदि अपना धन्धा करते हुए देश-सेवामें लग जाते तो वे देशका अधिक हित-साधन कर सकते थे। आपको बिल्लोंसे मोह है; इसलिए आपको लगता है कि बिल्ले लगाना बहुत बड़ी बात है। किन्तु मैं मानता हूँ कि बिल्लोंसे मनुष्यताका महत्त्व कम हो जाता है, मनुष्य स्वयं सत्त्वहीन हो जाता है। हमें अब बी० ए०, एम० ए०, बेरोनेट, के० सी० एस० आई०, सी० आई० ई०, सर,

१. श्री एन० सी० मेहता, जो भारतीय सिविल सर्विसमें ले लिये गये थे, के सम्मानमें।

२. एक गुजराती कवि (१७८५–१८५०)।

३. सत्रहवीं शताब्दीके अध्यात्मवादी कवि, जिनकी रचनाओंमें व्यंग्य, वेदान्त और बुद्धिवादका पर्याप्त पुट है।

माननीय आदि बिल्लोंकी आवश्यकता नहीं है, बल्कि इस समस्त लोकेषणासे ऊपर उठकर काम करनेवाले लोगोंकी आवश्यकता है। लोगोंको इस प्रकारकी शिक्षाकी आवश्यकता है जिसे पाकर चाहे जो व्यक्ति अपने विचार पूरी स्वतन्त्रतासे व्यक्त कर सके। इस समय हमारे देशमें चारों ओर इतना आतंक फैला हुआ है कि हम अपने विचार व्यक्त करनेमें भी अकारण डरते रहते हैं। हमें अब ऐसी शिक्षाकी आवश्यकता है जिससे यह भय नष्ट हो जाये, हमें सच्चा अभय प्राप्त हो। हमें बिल्लोंकी आवश्यकता नहीं है। मैं समझता हूँ कि आप लोगोंको मेरी यह बात बेसुरी लग रही होगी। किन्तु कुछ समय पहले भाई नानालालने मेरे कानमें यह बात कही थी: न जाने यहाँके लोगोंको परीक्षा पास करनेके सम्बन्धमें इतना मोह क्यों है? इस सम्बन्धमें मैं तो कुछ कह नहीं सकता; किन्तु क्या आप कुछ नहीं कह सकते? उनके इस कथनके कारण जो इतनी बात कहनी थी, वह मैंने कह दी है। उसमें से जो विचार जिसे उचित लगे उसे वह ग्रहण कर ले और जो व्यर्थ लगे उसे फेंक दे, अथवा उसे इसी जगह छोड़कर चला जाये। मुझे इसमें भी कोई आपत्ति नहीं है। मेरी कामना है कि भाई नानालालको अपने कर्त्तव्यका पालन करनेमें सफलता मिले अर्थात् वे सरकारकी नौकरी ठीक तरहसे बजायें और वे जिन लोगोंके ऊपर अधिकारी बनकर जानेवाले हैं उनपर अधिकारीके रूपमें रोब न जमाएँ, बल्कि भ्रातृभावसे काम लें। उन्हें यह समझना चाहिए कि लोग अधिकारियोंके गुलाम नहीं हैं, बल्कि अधिकारी ही जनताके चाकर हैं। प्रभु भाई नानालालको दीर्घायु करे और हम उनसे देश-सेवाके जिन कार्योंकी अपेक्षा रखते हैं उसे वे पूरी करें। यदि वे इस अपेक्षाको पूरा करेंगे तो मुझे प्रसन्नता होगी। यदि ऐसा न हो सका और उन्होंने भी अन्य लोगोंकी भाँति आचरण किया तो मैं उनसे उसका प्रायश्चित्त चाहूँगा और उक्त आचरण किये जानेकी जानकारी होनेपर मैं भी इस समारोहमें आने और भाषण देनेका प्रायश्चित्त करूँगा। आजीविकाका अच्छा साधन प्राप्त कर लेना ही पर्याप्त नहीं है; हमें भविष्यमें बहुत-कुछ करना है और इसलिए हमें इस समय ऐसे चरित्रकी, शिक्षणकी और ऐसे लोगोंकी आवश्यकता है जो उस कार्यको सम्पन्न करनेमें सहायक हों।

[गुजरातीसे]

खेड़ा वर्तमान, ८–१२–१९१५

१३५. गिरमिट या गुलामी ?[1]

सत्याग्रह आश्रम
अहमदाबाद

'गिरमिट' शब्द अंग्रेजीके 'ऐग्रीमेंट' शब्दका अपभ्रंश है। यह शब्द भाषामें से निकाला नहीं जा सकता। 'गिरमिट' शब्दसे जो अर्थ प्रकट होता है वह 'ऐग्रीमेंट' से नहीं होता। दूसरा शब्द भाषामें है ही नहीं। जिस दस्तावेजमें दस्तखत करके हजारों मजदूर भारतसे बाहर नेटाल आदि देशोंमें पाँच वर्षका करार करके जाते थे या अब जाते हैं, वह दस्तावेज मजदूरों और उनके मालिकोंमें गिरमिटके नामसे प्रसिद्ध है। इस गिरमिटके अन्तर्गत जानेवाले मजदूरोंका नाम गिरमिटिया है। हर साल भारतसे लगभग ऐसे १२,००० गिरमिटिये जाते हैं और वे मुख्यतः आस्ट्रेलियाके पास स्थित फिजी द्वीपमें या दक्षिण अमेरिकाके समीपके जमैका द्वीपमें या ब्रिटिश गायना, डच गायना और ट्रिनीडाडमें जाते हैं।

इस गिरमिटकी स्थितिको स्वर्गीय गोखलेने लगभग गुलामीकी हालत माना है; प्रख्यात इतिहासकार स्वर्गीय सर विलियम हंटरने भी इसका ऐसा ही वर्णन किया है और नेटालके एक भूतपूर्व मन्त्री श्री हैरी एस्कम्बने भी इसको ऐसी ही उपमा दी थी।

गिरमिट आधी गुलामी है, यह ठीक है। जैसे गुलाम पैसा देनेपर भी गुलामीसे छूट नहीं सकता, वैसे ही गिरमिटिये भी गिरमिटसे नहीं छूट सकते। यदि गुलाम काम नहीं करता तो उसे सजा दी जाती है। गिरमिटिया भी काम नहीं करता तो सजा पाता है। वह लापरवाही करता है, एक दिन कामपर नहीं जाता या ढिठाई करता है तो इनमें से किसी भी जुर्ममें उसे कैद काटनी पड़ती है। जैसे गुलामको एक मालिक दूसरेको बेच सकता है वैसे ही गिरमिटियेको भी एक मालिकके पाससे दूसरेके पास भेजा जा सकता है। जैसे गुलामके बाल-बच्चोंपर गुलामीका दाग लगता है वैसे ही गिरमिटियोंके बाल-बच्चोंपर भी उनके लिए खास तौरसे बनाये गये कानून लागू होते हैं। दोनोंकी हालतोंमें केवल इतना ही अन्तर है कि गुलामीकी हालत जिन्दगी-भर रहती है; किन्तु गिरमिटिये निश्चित अवधिके बाद छूट सकते हैं। विशेषतः यह स्मरण रखने योग्य है कि गिरमिटकी प्रथा गुलामी खत्म होनेपर उत्पन्न हुई और गुलामोंकी जगह गिरमिटिये भरती किये जाने लगे।

गिरमिटियोंके सम्बन्धमें यह सिद्ध हुआ है कि वे जिस देशमें जातेहैं वहाँ उन्हें नीति या धर्मकी शिक्षा नहीं दी जाती। वे प्रायः अविवाहित रहते हैं। गिरमिटियोंके प्रत्येक जहाजमें ४० प्रतिशत स्त्रियाँ ले जानेका नियम है। इन स्त्रियोंमें से कुछ चरित्रहीन होती हैं। ये प्रायः पुरुषोंसे विवाह नहीं करतीं। उनमें से २० प्रतिशत करना भी चाहें तो भी विवाह नहीं कर सकतीं। वहाँ ऐसी स्थिति होती है। ये लोग विदेशोंमें जाकर

१. यह लेख **समालोचक**में प्रकाशित हुआ था।

शराबी हो जाते हैं, स्त्रियाँ भी जो भारतमें बिलकुल शराब नहीं पीतीं, शराब पिये हुए नशेमें होश-हवास खोकर कई बार सड़कोंपर पड़ी हुई देखी जाती हैं।

इस अधम अवस्थाका अन्ततः जो लाभ माना गया है वह यह है कि इन लोगोंकी आर्थिक स्थिति सुधरती है। यदि आत्मा बेचकर आर्थिक स्थिति सुधरती हो तो भी सभी यह मानेंगे कि आत्मा नहीं बेची जानी चाहिए।

ऊपर जो स्थिति बताई गई है वह पचास वर्ष तक कैसे चलती रही; हममें से कोई भी इस स्थितिको सहन करनेके लिए तैयार नहीं होगा। तब हमने अपने भाइयोंको इस स्थितिमें कैसे सहन किया? इस प्रश्नको उठाकर हम यह कदापि नहीं चाहते कि लोग भूतकालके लिए शोक करें। किन्तु हम इससे यह तो समझ सकते हैं कि आज हमारा कर्त्तव्य क्या है। स्वर्गीय गोखलेने सन् १९१२ के मार्च मासमें बड़ी धारा-सभा (इम्पीरियल लेजिस्लेटिव कौंसिल) में यह प्रस्ताव प्रस्तुत किया था कि गिरमिटकी प्रथा बन्द करके भारतसे गिरमिटियोंका जाना रोक दिया जाना चाहिए। उस समय "२२ सदस्योंने यह भी निश्चय किया था कि जबतक गिरमिटकी प्रथा बन्द नहीं की जाती तबतक वे स्वयं इस प्रस्तावको प्रतिवर्ष प्रस्तुत करते रहेंगे।" उन लोगोंके चले जानेके बाद उनके संकल्पको पूरा करनेका दायित्व हमपर है। श्री ऐंड्रचूज और श्री पियर्सन फिजी गये हैं। वे वहाँ इसी कार्यको पूरा करनेके लिए गये हैं। इसलिए इस प्रश्नपर विचारपूर्वक चर्चा करके इसे अन्तिम रूपसे तय करवानेमें भाग लेना प्रत्येक शिक्षित भारतीयका कर्त्तव्य है, यह कहना उचित ही है।

यहाँ इससे अधिक विस्तारमें कहना सम्भव नहीं है; किन्तु जो इस प्रश्नका अध्ययन करना चाहते हैं उन्हें सुगमतापूर्वक पर्याप्त साहित्य मिल सकता है। इसमें मुख्य है, ऊपर बताये गये प्रस्तावपर धारा-सभामें हुई बहस, सैंडर्सन-समितिकी रिपोर्ट और गिरमिटियोंकी स्थितिपर श्री मैकनील और श्री चिमनलालका प्रतिवेदन। यदि कोई पत्र इस साहित्यपर अलग सम्पादकीय लेख लिखे तो वह अवश्य ही उपयोगी होगा।

[गुजरातीसे]
समालोचक, दिसम्बर, १९१५

१३६. भाषण : वीरमगाँवमें

दिसम्बर १, १९१५

मोहनदास करमचन्द गांधी आज पहली तारीखको १ बजेकी मेलसे वीरमगाँव पहुँचे। स्टेशनपर उनका स्वागत वीरमगाँवके लगभग २५ लोगोंने किया। करीब एक घंटा रुकनेके बाद श्री गांधी गाड़ीसे राजकोट चले गये।

गांधीने इस बीचमें वीरमगाँव स्टेशनपर एकत्रित लोगोंके सम्मुख एक भाषण दिया। इसमें उन्होंने कहा: मैं स्व० गोखलेके स्मारकके लिए धन-संग्रह करने राजकोट जा रहा हूँ। मेरी प्रार्थना है कि वीरमगाँवके लोग भी स्मारकके लिए धन दें।

श्री गांधीके साथ उनकी पत्नी और भारत सेवक समाज (सर्वेट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी) के एक सदस्य श्री चिन्तामन सखाराम देवले भी थे।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, १९१५, पृष्ठ ३१६

१३७. भाषण: गोंडलकी सभामें[1]

दिसम्बर ४, १९१५

गोखले ऐसे महान् पुरुष हुए हैं कि उनकी मृत्युपर भारतके ३३ करोड़ लोग शोक मना रहे हैं। मृत्युके समयतक उनके मनमें देश-सेवाका ही विचार व्याप्त था और 'सर्वेन्ट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी' उनका प्राण थी। अन्य लोगोंकी अपेक्षा मैं स्वर्गीय गोखलेके सम्पर्कमें अधिक आया हूँ। इसलिए मैं यह देख पाया हूँ कि वे एक बुद्धिमान व्यक्ति थे। वे जीना और मरना, दोनों ही बातें, जानते थे।

[गुजरातीसे]

प्रजाबन्धु, १२-१२-१९१५

१३८. भाषण: जैतपुरमें[2] गोखले-स्मारक-कोषके लिए

दिसम्बर ५, १९१५

हम यहाँ चन्दा लेनेके लिए ही नहीं आये हैं। यदि आपको स्वर्गीय गोखलेके जीवन-कार्यसे ऐसा लगे कि उन्होंने देश-सेवा की थी, इसलिए उनके स्मारकके लिए खोले गये कोषमें आपको कुछ देना चाहिए तो उसी हालतमें आप इस कोषमें कुछ रकम दें। रकम बादमें भी भेजी जा सकती है। हम यह नहीं चाहते कि आप संकोचमें आकर रुपया दें; आपकी इच्छा हो तभी दें।

[गुजरातीसे]

काठियावाड़ टाइम्स, ८-१२-१९१५

१. यह सभा गोखले-स्मारक-कोषके लिए चन्दा इकट्ठा करनेके लिए की गई थी। इसकी अध्यक्षता रियासतके दीवानने की

२. सौराष्ट्रका एक शहर

१३९. भाषण : भावनगरमें गोखले-स्मारक-कोषके लिए[1]

दिसम्बर ८, १९१५

भावनगरके लोगोंने कल और आज जो अपूर्व उत्साह दिखाया गांधीजीने उसपर बड़ी प्रसन्नता प्रकट की और उसके लिए हृदयसे लोगोंका आभार माना। उन्होंने विद्यार्थियों और युवकोंको बोधप्रद उपदेश दिया और भावनगरके लोगोंसे अपने स्वर्गीय गुरु माननीय श्री गोपाल कृष्ण गोखलेके स्मारक-कोषमें धन देनेकी अपील की। साथ ही उन्होंने भारत सेवक समाज (सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी) के उद्देश्य बताये और उससे देशको होनेवाले लाभोंकी चर्चा की। उन्होंने आगे कहा:

चार मास पूर्व मुझे यहाँ आनेके लिए भावनगरके लोगोंका निमन्त्रण मिला था। किन्तु उस समय कुछ विशेष स्थितियोंके कारण मैं नहीं आ सका। किन्तु मैं अब जब यहाँ आया हूँ तब मुझे लगता है कि उस समय यहाँ न आनेसे मेरे यहाँ आनेके उद्देश्योंकी हानि नहीं हुई, बल्कि लाभ ही हुआ है। उस वक्त यहाँ सर प्रभाशंकर पट्टणी मौजूद न होते; और आज जब मैं यहाँ आया हूँ तब वे यहाँ मौजूद हैं। यहाँ आनेपर उन सरीखे लोकप्रिय प्रशासकके शुभ करोंसे मुझे यहाँके लोगोंका मानपत्र ग्रहण करनेका सम्मान प्राप्त हुआ। इतना ही नहीं, मुझे पूर्ण विश्वास है कि स्वर्गीय माननीय श्री गोखलेके स्मारक-कोषमें भी, खास तौरसे मैं जिसके लिए यहाँ आया हूँ, अधिक उपलब्धि होगी।

[गुजरातीसे]

प्रजाबन्धु, १२-१२-१९१५

१४०. भाषण : भावनगरमें[2]

[दिसम्बर ९, १९१५]

आज मेरे जाति-बन्धुओंने मुझे यहाँ बुलाकर मेरे प्रति जो प्रेम प्रकट किया है, उसके लिए मैं सबका आभारी हूँ। जब मैं बम्बईमें जहाजसे उतरा था तब वहाँ भी मेरे मोढ़-बन्धुओंने मेरे प्रति प्रेमकी ऐसी ही अभिव्यक्ति की थी। मैं इस प्रेमके योग्य नहीं हूँ, क्योंकि मुझसे मोढ़ जातिकी कोई सेवा नहीं बन सकी। यहाँ तक कि कभी-कभी मेरे स्नेही और जाति-बन्धु मुझसे पूछते हैं, आपने मोढ़-जातिकी क्या भलाई की है? वे आक्षेप करते हैं: "आप स्वधर्म छोड़कर परधर्मपर चल रहे हैं।" मैं उन्हें केवल यही उत्तर देता हूँ कि मैं यथाशक्ति देशकी सेवा करता हूँ और चूँकि जाति उसके

१. राज्यके दीवान सर प्रभाशंकर पट्टणीकी अध्यक्षतामें दिये गये मानपत्रका उत्तर देते हुए।

२. मोढ़ जाति द्वारा दिये गये मानपत्रके उत्तरमें।

अन्तर्गत आ जाती है, इसलिए यह समझता हूँ कि इसमें उसकी सेवा भी आ गई। आप इस समय मेरे प्रति अनुपम प्रेम दिखा रहे हैं, किन्तु भाइयो, स्मरण रखें कि जब मैं कोई ऐसा कार्य करूँ जो आपको पसन्द न हो तब आप उसमें विघ्न न डालें। मैं उस स्थितिमें भी आपके आशीर्वादका भूखा रहूँगा। [चाँदीकी] तश्तरी और गुलदस्ता लेते हुए उन्होंने कहा: खेदकी बात है कि मेरे मित्र भी मुझे नहीं पहचानते। मैं ऐसी, चाँदी की चीज, साथ नहीं रख सकता। क्योंकि मैं अपरिग्रहके नियमको पालता हूँ। यदि मैं इन्हें अपने साथ रखूंगा तो इन्हें चोर चुराने आयेगा और तब मुझे इनकी रक्षा करनेके लिए हिंसा करनी पड़ेगी। उससे मेरी अहिंसाका नियम भंग होगा। इसलिए मैं तो इन्हें गलवा कर इनका पैसा आश्रमके लिए प्रयुक्त करूँगा। मैं सब सज्जनोंका और जाति-बन्धुओंका आभार मानता हूँ।

[गुजरातीसे]

प्रजाबन्धु, १९–१२–१९१५

१४१. भाषण: बगसरामें[1]

दिसम्बर १२, १९१५

मोहनदास करमचन्द गांधी आज १२ तारीखको बगासरा पहुँचे। वे हडाला होकर अमरेलीसे आये थे। उनके साथ हडालाके दरबार वाजसुरवाला, जैतपुरके बैरिस्टर देवचन्द उत्तमचन्द, उनके पुत्र और राजकोटके एक अन्य व्यक्ति भी थे। वकील छगनलाल गोर्धनने गांधीजीको मानपत्र भेंट किया।

गांधीजीने उत्तरमें कहा कि वे अब सरकारसे वीरमगाँवकी चुंगी-व्यवस्थाको रद करानेका शक्ति-भर प्रयत्न करेंगे।[2] जाहिरा तौरपर उनके काठियावाड़के दौरेका कारण गोखले-स्मारक-कोषके लिए चन्दा इकट्ठा करना था। उन्होंने सभामें कोई २५० रुपये इकट्ठे किये।

गांधीजी १५ सितम्बरको वडवान शहर और कैम्पमें गये। वहाँ उन्होंने सभाओंमें भाषण दिये और कोषमें चन्दा माँगा, वे उसी दिन १–१५ बजे दोपहरके बादकी गाड़ीसे ध्रांगध्रा गये।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्सट्रैक्ट्स १९१६, पृष्ठ १५

१. रतिलाल मोतीचन्दकी जिनिंग और वीविंग फैक्टरीमें आयोजित एक सभामें, जिसमें बगासराके अधिकांश लोग आये थे।

२. देखिए "भाषण: वीरमगाँवकी चुंगी नाकाबन्दीपर", २३–१०–१९१६ भी।

१४२. वा० गो० देसाईके पत्रका मसविदा[1]

[दिसम्बर २१, १९१५ से पूर्व][2]

मैं देखता हूँ कि सरकारी नौकरोंको दर्शकके रूपमें भी भारतीय राष्ट्रीय महासभा कांग्रेसके अधिवेशनोंमें जानेकी अनुमति नहीं है। मैं कांग्रेस-अधिवेशनमें दर्शक-रूपमें जाना चाहता हूँ। मैं अनुभव करता हूँ कि उक्त प्रतिबन्ध उनकी वैयक्तिक स्वतन्त्रतामें अनुचित हस्तक्षेप है। इसलिए यदि आप यह समझते हों कि गवर्नर महोदयने जिस अर्थमें सरकारी नौकर शब्दका प्रयोग किया है उस अर्थमें मैं सरकारी नौकर हूँ तो मैं इस पत्रके द्वारा नम्रतापूर्वक त्यागपत्र देता हूँ।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (सी० डब्ल्यू० ५६८६) से।

सौजन्य: वालजी गोविन्दजी देसाई

१४३. तार: वा० गो० देसाईको

दिसम्बर २१, १९१५

त्यागपत्र वापस लो, कांग्रेसमें जानेकी अनुमति मांगो।

प्राप्त अंग्रेजी तार (सी० डब्ल्यू० ५६८२) से।

सौजन्य: वालजी गोविन्दजी देसाई

१. प्रोफेसर वालजी गोविन्दजी देसाई; गुजरात कॉलेज, अहमदाबादमें कुछ काल तक अंग्रेजीके प्राध्यापक; आपने नौकरीसे त्यागपत्र दे दिया और गांधीजीके साथ शामिल हो गये। गांधीजीकृत **दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रहका इतिहास** और अन्य रचनाओंके अनुवादक।

२. स्पष्ट है कि यह मसविदा "तार: वा० गो० देसाईको", और "पत्र: वा० गो० देसाईको", २१-१२-१९१५ से पूर्व लिखा गया होगा।

१४४. पत्र: वा० गो० देसाईको

सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी
गिरगाँव
[बम्बई]
मंगलवार, दिसम्बर २१, १९१५

भाई श्री वालजी गोविन्दजी,

आपको आज तार[1] दिया था, मिला होगा। यहाँ आनेपर मालूम हुआ कि प्रत्येक सरकारी नौकर अपने अधिकारीकी अनुमति लेकर चला जा सकता है। इस तरहकी अनुमति लेना उचित लगता है। यदि अनुमति न दी जाये तो त्यागपत्र देना ठीक होगा। मैंने तारमें कहा है कि त्यागपत्र वापस ले लें। किन्तु वास्तवमें तो आपका पत्र त्यागपत्र माना ही नहीं गया है। फिर भी ऐसा लगता है कि नई स्थितिकी चर्चा रार्बर्ट्सनसे अवश्य करनी चाहिए।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५६८३) से।
सौजन्य: वालजी गोविन्दजी देसाई

१४५. भाषण: ११ वें भारतीय औद्योगिक सम्मेलनमें[2]

दिसम्बर २४, १९१५

श्री गांधीने प्रस्तावका[3] समर्थन करते हुए कहा: यदि हमारे देशके उद्योगोंमें काम करनेवाले लोग देशसे चले जायें और यदि कभी लौटें भी तो अत्यन्त दुर्बल और नीतिभ्रष्ट होकर, तो हम अपने उद्योगोंको कायम नहीं रख सकते। "हानिकर" और "अनैतिक" शब्द यों ही ऊटपटाँग नहीं चुन लिये गये हैं, बल्कि उनपर हमारे स्वर्गीय

१. देखिए "तार: वा० गो० देसाईको", २१-१२-१९१५।
२. सम्मेलन बम्बईमें हुआ था; इसके अध्यक्ष सर दोराबजी ताता और स्वागताध्यक्ष सर पेटिट थे।
३. प्रस्ताव इस प्रकार था: वाइसराय महोदय लॉर्ड हार्डिंजने भारतसे बाहरके भारतीय मजदूरोंके लिए जो कुछ किया है और भारत-मन्त्रीसे इसको [गिरमिट प्रथाको] रद करनेकी जो सिफारिश की है उसके लिए यह सम्मेलन उन्हें सादर धन्यवाद देता है और निवेदन करता है कि देशके अधिकतम हितकी दृष्टिसे भारतसे गिरमिटपर मजदूर ले जानेकी प्रथा अवांछनीय है। सम्मेलन यह भी अनुरोध करता है कि इसके अत्यन्त हानिकर और अनैतिक प्रभावोंको ध्यानमें रखते हुए यह प्रथा यथासम्भव शीघ्र समाप्त कर दी जाये।

देशवासी श्री गोखलेकी "पवित्र स्वीकृति" की मुहर लगी हुई है। उन्होंने अनुरोध किया था कि वे युद्धके चलते हुए भी इस प्रथाको रद करनेका आग्रह करें।

श्री के० एन० अय्यरने प्रस्तावका समर्थन किया। उन्होंने कहा कि चतुरसे-चतुर मानव भी इस प्रथामें सुधार नहीं कर सकता इसलिए इसे समाप्त कर दिया जाना चाहिए।

श्री मजुमदारने अनुमोदन करते हुए कहा कि मनुष्य इससे अधिक घृणित प्रथाका आविष्कार नहीं कर सकता।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २५-१२-१९१५

१४६. भाषण : बम्बई कांग्रेसमें भारत और उपनिवेशोंके सम्बन्धमें

दिसम्बर २८, १९१५

श्री मो० क० गांधी (बम्बई)ने २८ दिसम्बर १९१५ को राष्ट्रीय महासभा कांग्रेसके बम्बईमें किये गये ३० वें अधिवेशनमें भारत और उपनिवेश-सम्बन्धी प्रस्ताव प्रस्तुत किया।

उन्होंने कहा :

अध्यक्ष महोदय और मित्रो,

मुझे जो प्रस्ताव रखना है वह इस प्रकार है :

यह कांग्रेस खेद प्रकट करती है कि उपनिवेशीय राजनीतिज्ञोंकी उदारता और साम्राज्यीय घोषणाओंके बावजूद दक्षिण आफ्रिका और कनाडामें भारतीयोंको प्रभावित करनेवाले वर्तमान कानून न्यायपूर्वक और समभावसे अमलमें नहीं लाये गये हैं। कांग्रेसको विश्वास है कि स्वशासित उपनिवेश भारतीय प्रवासियोंको यूरोपीय प्रवासियोंके बराबरके अधिकार देंगे और साम्राज्य-सरकार भारतीयोंको वे अधिकार दिलानेके यथासंभव सभी उपाय काममें लायेगी, जिनसे भारतीय अभीतक अन्यायपूर्वक वंचित रखे गये हैं और जिसके परिणामस्वरूप उनमें व्यापक असन्तोष और अशान्ति उत्पन्न हो गई है।

मैं पत्रोंके संवाददाताओंसे यह अनुरोध करता हूँ कि वे 'समानरूपसे' (इक्वली)के स्थानमें 'न्यायपूर्वक' (इक्वीटेबली) शब्द कर लें, क्योंकि गत रात विषय समितिकी बैठकमें यही शब्द तय किया गया था।

मित्रो, यह भाग्यकी विडम्बना ही है कि जिस समय यह विराट कांग्रेस स्वशासित उपनिवेशों द्वारा अपनाये गये रुखपर खेद प्रकट कर रही है, उसी समय हमारे भारतीय भाइयों द्वारा दक्षिण आफ्रिकामें बनाया गया एक दल बीमारों और घायलोंकी सहायता करनेके लिए युद्धक्षेत्रके समीप पहुँच रहा होगा। दक्षिण आफ्रिकामें बनाये गये

इस दलके सम्बन्धमें मेरे पास पूरे तथ्य हैं। इनसे प्रकट होता है कि इसमें मध्यम वर्गके लोग हैं। 'टाइम्स ऑफ इंडिया'ने लिखा है कि ये लोग भी इसी राष्ट्रके अंग हैं जिसे भविष्यमें स्वायत्त शासन प्राप्त होना है। इस जबरदस्त दलमें भूतपूर्व गिरमिटियों, उनके बच्चों, छोटे-छोटे फेरीदारों, मेहनतकशों और व्यापारियोंमें से लोग आये हैं— ऐसे ही लोगोंसे यह दल बना है। किन्तु फिर भी उपनिवेशीय अपने रुखमें परिवर्तन करना आवश्यक नहीं समझते; और न मुझे यही तर्कसम्मत जान पड़ता है कि आगे कभी उनकी नीतिमें परिवर्तन होगा। आजकल यह सोचनेका रिवाज ही हो गया है कि चूँकि हमने इस अवसरपर सरकारके प्रति अराजभक्ति नहीं दिखाई है और युद्धमें अपना छोटा-सा हिस्सा अदा किया है, इसलिए हम उन अधिकारोंको प्राप्त करनेके हकदार हो जायेंगे, जिनसे हम अबतक वंचित रखे गये हैं। इससे ऐसा आभास होता है मानो हम इन अधिकारोंसे अबतक इस कारण वंचित रखे गये थे कि हमारी राजभक्ति सन्दिग्ध रही है। किन्तु मित्रो, यह बात नहीं है। हमें इन अधिकारोंसे वंचित रखनेके कारण दूसरे ही हैं; और हमें ये कारण-ही बदलने होंगे। इनमें से कुछके पीछे अमिट पूर्वग्रह हैं और कुछके पीछे आर्थिक हेतु। हमें इनकी जाँच करनी होगी; ये पूर्वग्रह मिटाने होंगे।

दक्षिण आफ्रिका, कनाडा और अन्य स्वशासित उपनिवेशोंमें हमारे देशके लोग जिन कष्टोंसे पीड़ित हैं, वे कष्ट क्या हैं? दक्षिण आफ्रिकामें १९१४ के समझौतेसे ठीक उतना ही मिला है जितनेके लिए सत्याग्रही लड़ रहे थे, उससे अधिक नहीं; संघर्ष ब्रिटिश भारतसे प्रवासके सम्बन्धमें कानूनी समानता पुनः प्राप्त करने और कुछ अन्य बातोंके लिए किया जा रहा था। यह कानूनी समानता पुनः प्राप्त हो गई है। दूसरी बातें भी मान ली गई हैं। किन्तु आन्तरिक झगड़े फिर भी बने हुए हैं। दुर्भाग्यसे पिछले तीस वर्षोंसे ही इस अधिवेशनकी प्रमुख भाषा अंग्रेजी चली आती है; यदि ऐसा न होता तो हमारे मद्रासी मित्रोंने उत्तर भारतकी कोई भाषा अवश्य सीख ली होती और तब दक्षिण आफ्रिकासे आये हुए बहुतसे लोग आपको हमारी अपनी किसी भाषामें वे सब कठिनाइयाँ बता सकते जिनका आज भी हमें दक्षिण आफ्रिकामें सामना करना पड़ता है। ये कठिनाइयाँ भूमि-सम्पत्तिके स्वामित्वके सम्बन्धमें हैं; उन लोगोंके सम्बन्धमें हैं जो दक्षिण आफ्रिकाके अधिवासी होनेके बाद फिर दक्षिण आफ्रिकामें आते हैं; उन अधिवासियोंके बच्चोंके प्रवेशके सम्बन्धमें हैं; और व्यापारिक परवानोंके सम्बन्धमें हैं। दूसरे शब्दोंमें ये कठिनाइयाँ आजीविकासे सम्बन्धित हैं। अन्य कठिनाइयाँ भी हैं; मैं अभी उन्हें नहीं गिनाऊँगा। कनाडामें उन वीर सिखोंके लिए जो वहाँके अधिवासी हो गये हैं अपने स्त्री-बच्चोंको बुलाना सम्भव नहीं है। (शर्म-शर्मकी आवाजें) कनाडामें यही कठिनाई है। कानून एक ही है; किन्तु उसका अमल लज्जाजनक रूपसे असमान है। मुझे लगता है कि भारतके द्वारा साम्राज्यको दी गई जिस उत्तम सहायताकी बात कही जाती है उसके कारण कानूनका यह असमान अमल बदला नहीं जायेगा।

तब इन कठिनाइयोंको कैसे दूर किया जाये? मैं विस्तारमें नहीं जाना चाहता; किन्तु कांग्रेसका प्रस्ताव यह है कि यह कठिनाई उपनिवेशीय राजनीतिज्ञोंकी न्याय-भावनाको जगाकर और साम्राज्य-सरकारसे अनुरोध करके दूर की जा सकती है। मुझे लगता है कि कांग्रेस और कुछ कर भी नहीं सकती है। लॉर्ड हार्डिजने कुछ ही मास

पहले भारतीय पत्रकारों और भारतके लोकसेवी राजनयिकोंसे सानुरोध प्रार्थना की थी कि वे उन्हें कोई ऐसा सम्मानजनक समाधान प्राप्त करनेमें सहायता दें जिससे भारतकी प्रतिष्ठा बनी रहे और साथ ही स्वशासित उपनिवेशोंको कोई परेशानी भी न हो। लॉर्ड हार्डिज़ अभीतक उत्तरकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। कांग्रेसने ऐसा कोई उत्तर नहीं दिया है और न वह दे ही सकती है। यह उत्तर तो साम्राज्य-नागरिक संघ (इम्पीरियल सिटिजनशिप एसोसिएशन) सरीखी विशेषज्ञ, यदि उनके लिए मुझे इस शब्दके प्रयोगकी अनुमति दें तो, संस्थाएँ ही दे सकती हैं। कांग्रेसने उनको रास्ता दिखा दिया है। अब उन्हें परस्पर विरोधी दावोंकी जाँच करके निर्णय करना और लॉर्ड हार्डिज़को समझौतेका एक मोटा आधार देना उनका काम है। अवश्य ही यह समझौता ऐसा होना चाहिए जिससे उपनिवेशी सरकारें सन्तुष्ट हो सकें और इस प्रस्तावमें दी गई उचित माँगोंकी कोई क्षति न हो। इतना कहते हुए मैं इस प्रस्तावको प्रस्तुत करता हूँ (जोरकी तालियाँ)।

[अंग्रेजीसे]

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके तेरहवें अधिवेशन (बम्बईकी) रिपोर्टसे; पृष्ठ ६२–४

१४७. रतनसी सोढाको लिखे पत्रका अंश[1]

[१९१५][2]

राजकोट पत्र लिखकर चि० रेवाको[3] मुझे सौंप दो। किन्तु मुझे तुमसे ऐसा करनेकी आशा नहीं है। क्योंकि मेरा खयाल है कि जहाँ कुछ बातोंमें तुम मजबूत हो, वहाँ कुछ बातोंमें बहुत-ही कमजोर हो।

छोटूके[4] लिए सूट भेजनेकी बिलकुल जरूरत नहीं है। जिन कपड़ोंकी जरूरत होती है, मैं यहीं बनवाता हूँ। यदि तुम कुछ रुपया बचा सको तो छोटूके लिए भेजना।

मोहनदासके यथायोग्य

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ३४२०) से।
सौजन्य: रेवाशंकर सोढा

१. पत्रका केवल अन्तिम पृष्ठ ही उपलब्ध है।
२. पत्र १९१५ में लिखा गया जान पड़ता है। निश्चित तिथि निर्धारित नहीं की जा सकती।
३. रतनसीका पुत्र रेवाशंकर।
४. रतनसीका दूसरा पुत्र।

१४८. डायरी : १९१५[1]

जनवरी ९, शनिवार,[2] माघ वदी ८

बम्बई पहुँचा।[3] श्री गोखलेसे भेंट।

जनवरी १३, बुधवार

माउंट पेटिटमें सभा।[4]

जनवरी १४, बृहस्पतिवार

गवर्नरसे मुलाकात।

जनवरी १५, शुक्रवार

महिलाओंकी ओरसे अभिनन्दन। राजकोटके लिए रवाना।

जनवरी १६, शनिवार

रात वांकानेरमें। छोटू साथ हो लिया। उमियाशंकर मिलनेके लिए आये।

जनवरी १७, रविवार

सवेरे राजकोट पहुँचा। मानपत्र आदि।[5]

जनवरी १८, सोमवार

ठाकुर साहबसे मुलाकात की।

जनवरी २१, बृहस्पतिवार

राजकोटसे रवाना। जेतपुर पहुँचा। अभिनन्दनपत्र — रात-भर रहा — शुक्ल साथ आये।

जनवरी २२, शुक्रवार

जेतपुरसे विशेष गाड़ीमें रवाना। धोराजीमें[6] अभिनन्दनपत्र। पोरबन्दर पहुँचा। देवचन्द पारेख साथ आये।

१. गांधीजीके स्वाक्षरोंमें, गुजरातीमें लिखित यह डायरी अधिकांशत: उनके विविध कार्यों और क्रियाकलापोंका मोटा-मोटा लेखा-जोखा है। इससे, गांधीजी जिस आश्रमकी स्थापनाका विचार कर रहे थे उसके सम्बन्धमें १९१५ की अवधिके दौरान हुई प्रगतिका भी कुछ अन्दाज लग जाता है।

२. डायरीके हर पन्नेपर अंग्रेजी तारीखके अलावा विक्रम, हिजरी, शक और पारसी सम्वत्की तिथियाँ भी छपी हुई हैं। यहाँ केवल अंग्रेजी तिथियाँ ही दी गई हैं।

३. देखिए "भेंट: बॉम्बे क्रॉनिकल के प्रतिनिधिको", ९-१-१९१५।

४. इसे जनवरी १२ की टीपमें होना चाहिए। देखिए "भाषण: बम्बईके सार्वजनिक स्वागत-समारोहमें", १२-१-१९१५।

५. देखिए "राजकोटके नागरिकों द्वारा भेंट किये गये मानपत्रका उत्तर", १५-१५-१-१९६५।

६. देखिए "दरबारगढ़में भेंट किये गये मानपत्रका उत्तर", २२-१-१९१५।

Saturday 20th February 1915.

Friday 9th April 1915.

'डायरी : १९१५' से

— गांधी स्मारक निधिके सौजन्यसे

काश्मीरी टोपी पहने हुए

जनवरी २४, रविवार

मोढ़ जातिकी ओरसे अभिनन्दन।[1]

जनवरी २५, सोमवार

पोरबन्दरमें मानपत्र।[2] महिलाओंकी ओरसे भी।

जनवरी २६, मंगलवार

गोंडल पहुँचा। पटवारीके यहाँ ठहरा। पोरबन्दरसे रणछोड़, शांति तथा गोकुल-दास साथ हो लिये।

जनवरी २७, बुधवार

ठाकुर साहबसे मिलने गया। मानपत्र[3] — अनाथाश्रम देखने गया।

जनवरी २८, बृहस्पतिवार

नागजी स्वामीके साथ भेंट की।

जनवरी २९, शुक्रवार

स्लेडन साहबसे मिला।

जनवरी ३०, शनिवार

राजकोटमें महिलाओंकी ओरसे मानपत्र। बा को श्रीमती स्लेडनसे मिलाने ले गया।

जनवरी ३१, रविवार

नागजी स्वामीका भाषण सुननेके लिए गया। फुलीको १,६५० रुपये देकर उसकी पूरी रकम चुका दी। [उसने] सूद पर उठानेका निश्चय किया। पैसे शुक्लने दिये। उसने फुलीका खर्च स्वयं उठाना तय किया है। गंगाभाभीको २० रुपये तथा बहनको १० रुपये प्रति मासके हिसाबसे आजसे देने आरम्भ किये जायेंगे। फुलीको ब्याजके साढ़े आठ रुपये दिये। गोकीबेनको महीनेके लिए ८ रुपये दिये। गंगाभाभीको १४ रुपये दिये।

फरवरी १, सोमवार

राजकोट छोड़ा। अहमदाबाद पहुँचा। सेठ मंगलदासके[4] यहाँ ठहरा। साथ आये गोकुलदास मोदी, बेचरभाई, रणछोड़, हरिलाल, शान्ति, काकू, छोटू तथा जमनादास।

१. जनवरी २५ की टीपके अन्तर्गत होना चाहिए। देखिए "पोरबन्दरके मोढ़-समाज द्वारा भेंट किये गये मानपत्रका उत्तर", २५-१-१९१५।

२. देखिए "पोरबन्दरमें नागरिकों द्वारा भेंट किये गये मानपत्रका उत्तर", २५-१-१९१५।

३. देखिए "गोंडलकी रसशालामें भेंट किये गये मानपत्रका उत्तर", २७-१-१९१५।

४. अहमदाबादके उद्योगपति।

फरवरी २, मंगलवार

अहमदाबादमें मानपत्र।[1] बापूभाईसे उनके घर मिला। मियाखाँ और पटवारीके यहाँ गया। महिलाओंकी ओरसे अभिनन्दन — अहमदाबादमें स्थायी रूपसे बसनेके सम्बन्धमें नेताओंसे बातचीत। जमनादास बम्बई गया।

फरवरी ३, बुधवार

जमीन देखने गया। अम्बालालभाईके[2] यहाँ भोजन। मोढ़-समाजकी ओरसे मानपत्र। सन्ध्याको क्लबमें चाय-जलपान। रातको आशाराम भाईके यहाँ अखंडानन्दसे[3] मिला।

फरवरी ४, बृहस्पतिवार

अहमदाबादसे निकला। हरिलाल तथा गोकुलदास वहीं रहे। बम्बई रातको पहुँचा।

फरवरी ५, शुक्रवार

पटवारीसे मुलाकात। जाति-प्रबन्धके सम्बन्धमें चर्चा।

फरवरी ६, शनिवार

भगवानलालसे मिला। उसे मोदीके सम्बन्धमें २,९०० रुपये देकर पूरी रकम अदा की। मोदीके साथ सारा हिसाब-किताब खत्म कर दिया। ६,००० रुपये हुए। उसमें दोनों भाइयोंका हिसाब आ गया। घरसे सम्बन्धित कागजात शुक्लको भेजे। पटवारीके साथ फिर भेंट।

फरवरी ७, रविवार

अन्त्यजोंकी शाला[4] देखने गया। अमृतलाल[5] तथा केसरीप्रसाद कल रात घर रहे। उनके साथ बातचीत की। रातको पूनाके लिए रवाना।

फरवरी ८, सोमवार

गोकुलदास सहित पूना आया। [सर्वेंट्स ऑफ इंडिया] सोसाइटीमें दाखिल होनेके सम्बन्धमें बातचीत हुई।

फरवरी ११, बृहस्पतिवार

प्रोफेसर कर्वेकी संस्था आदि देखीं। श्री तिलकके यहाँ गया।

१. देखिए "अहमदाबादमें नागरिकोंके मानपत्रका उत्तर", २-२-१९१५।

२. अहमदाबादके एक उद्योगपति।

३. एक संन्यासी; धार्मिक और नैतिक शिक्षापर कम दामकी पुस्तकें प्रकाशित करनेवाली एक प्रकाशन संस्था, सस्तुं साहित्य वर्धक कार्यालय अहमदाबादके संस्थापक।

४. देखिए "भाषण: मिशन स्कूल, बम्बईमें", ७-२-१९१५।

५. सम्भवतः अमृतलाल वी० ठक्कर, भारत सेवक समाजके सदस्य तथा दलित वर्गों और आदिवासियोंके उत्थान-कार्यमें सक्रिय कार्यकर्ता।

फरवरी १३, शनिवार

सार्वजनिक सभा[1]—महिलाओं और आम लोगोंकी। श्री गोखले मूर्छित[2]।

फरवरी १४, रविवार

बम्बई गया। गोकुलदास, कुंजरू और देवधर[3] साथ आये। बलवन्तराय भी साथ थे। सवेरे ४ बजेसे श्री गोखलेके साथ बातचीत। सनातन धर्म नीति-मण्डलकी[4] सभाकी अध्यक्षता। नाटकशालामें गया। सोराबजीकी बहनके साथ मुलाकात।

फरवरी १५, सोमवार

रॉबर्ट्सनसे भेंट। कपोल छात्रावासमें[5] गया। बोलपुर रवाना—नगीनदासके साथ।

फरवरी १६, मंगलवार

रास्तेमें।

फरवरी १७, बुधवार

बर्दवानमें ऐन्ड्रयूज और सन्तोक बाबू आये। ख्रिस्तीके घर गया। बोलपुर रातको पहुँचा। ठेठ पुराने ढंगके अतिथि-सत्कारका आनन्द मिला।[6]

फरवरी १८, बृहस्पतिवार

ऐन्ड्रयूजके साथ बातचीत।

फरवरी १९, शुक्रवार

ऐन्ड्रयूजके साथ और बातचीत।

फरवरी २०, शनिवार

राजनैतिक गुरुके[7] स्वर्गवासका तार मिला। बोलपुरसे रवाना। जे० बी०[8] तार दिया। बर्दवान तक ऐन्ड्रयूज साथ आये। खूब बातचीत हुई। शिक्षकोंसे सुधारोंके सम्बन्धमें वार्तालाप। ट्रेनमें कष्ट।[9] मगनलाल, नगीनदास तथा बा साथ आये।

फरवरी २१, रविवार

रास्तेमें।

१. देखिए "भाषण: पूनाकी सार्वजनिक सभामें", १३-२-१९१५।
२. देखिए आत्मकथा भाग ५, अध्याय २; (द्वितीय आवृत्ति)।
३. जी० के० देवधर, भारत सेवक समाजके सदस्य और बादमें अध्यक्ष।
४. देखिए "भाषण: बम्बईमें छात्रोंके पुरस्कार-वितरणमें", ५-२-१९१५।
५. देखिए "भाषण: कपोल छात्रावास, बम्बईमें", १७-२-१९१५।
६. देखिए "भाषण: शान्तिनिकेतनके स्वागत-समारोहमें", १७-२-१९१५।
७. देखिए "तार: ह० ना० कुंजरूको" तथा "तार: करसनदास चितलियाको", २०-२-१९१५।
८. जोहानिसबर्ग। देखिए "तार: ट्रान्सवाल ब्रिटिश भारतीय संघको", २०-२-१९१५।
९. इसे २१ फरवरीकी टीपमें होना चाहिए। देखिए "पत्र: पूर्व भारतीय रेलवेके मुख्य ट्रैफिक मैनेजरको", २३-२-१९१५।

फरवरी २२, सोमवार

दोपहरके समय कल्याण पहुँचा। श्री कोलसे मिला। रातको पूना पहुँचा। [सर्वेन्ट्स ऑफ इंडिया सोसाइटीके] सदस्योंसे थोड़ी वातचीत।

फरवरी २३, मंगलवार

सदस्योंके साथ लम्बी वातचीत। महात्माजी, रणछोड़भाई आदिको पत्र लिखे।

फरवरी २५, बृहस्पतिवार

शिन्देके साथ भंगियोंके वारेमें वातचीत।

फरवरी २६, शुक्रवार

उसी विषयपर सदस्योंके साथ वार्ता।

फरवरी २७, शनिवार

मराठी पढ़ना शुरू किया। भंगियोंके प्रश्नके सम्बन्धमें छानबीन।

फरवरी २८, रविवार

नदीमें तिलांजलि दी।[1] मगनलाल वम्बई गया।

मार्च ३, बुधवार, चैत्र वदी २

पूनामें सार्वजनिक सभा। गवर्नर अध्यक्ष। प्रथम प्रस्ताव[2] मैंने रखा। रातकी गाड़ीसे वम्बई रवाना।

मार्च ४, बृहस्पतिवार

सवेरे वम्बई पहुँचा। जहाँगीर पेटिट तथा नरोत्तमदाससे मिला। वम्बईसे रातको निकला। तापीदास, मूलजी तथा उनकी पत्नी साथ आये।

मार्च ५, शुक्रवार

रास्तेमें फकीरी बीमार।

मार्च ६, शनिवार

शान्तिनिकेतन पहुँचा। गुरुदेवसे मुलाकात।

मार्च ७, रविवार

ऐन्ड्र्यूजके साथ गुरुदेवके घर गया। हरिलालके साथ वातचीत हुई। गुरुदेवने व्याख्यान दिया।

मार्च ८, सोमवार

गुरुदेव कलकत्ते गये। ऐन्ड्र्यूजके साथ उनके व्यवहारके सम्बन्धमें वातचीत हुई। रातको शिक्षकोंसे मिला। शिक्षणके विषयमें चर्चा की।

१. देखिए आत्मकथा, भाग ५, अध्याय ६, (द्वितीय आवृत्ति)।
२. देखिए "भाषण: गोखलेके निधनपर आयोजित शोकसभामें", ३-३ १९१५।

मार्च ९, मंगलवार

स्वास्थ्य-सफाई समितिके साथ सब कुछ देखा। गन्दगीकी सीमा न थी।

मार्च १०, बुधवार

शिक्षकोंसे वार्ता। लड़कोंसे मुलाकात। स्वयं रसोई बनानेका प्रयोग आरम्भ। सवेरे फलाहार। शामको मन्दिरमें भाषण।

मार्च ११, बृहस्पतिवार

ऐन्ड्रयूज और सरोद बाबूके बीच गरमागरमी। ऐन्ड्रयूजने क्षमा माँगी। रातको कलकत्ता जानेके लिए निकला। हरिलाल और रामदास साथ आये। गुरुदेवसे स्टेशनपर मिला। लड़कोंके लिए ऐन्ड्रयूजको २०० रुपये दिये। दत्तात्रेयसे[1] रुपया लिया।

मार्च १२, शुक्रवार

कलकत्ते पहुँचा। बहुत भीड़। भूपेन बाबूके यहाँ ठहरा। गुजराती मण्डलकी ओरसे मानपत्र।[2]

मार्च १३, शनिवार

मारवाड़ियोंकी सभा। कासिम बाजारमें[3] सभा। मोतीबाबूके साथ मुलाकात। भूपेन बाबूके यहाँ पार्टी। हरिलालने अलग होनेका अन्तिम निश्चय किया।

मार्च १४, रविवार

रामदास, राजंगम, छगन आदिके साथ रंगूनके लिए रवाना। [जहाज पर] अपार गन्दगी और भीड़।[4]

मार्च १५, सोमवार

बहुत-से पत्र लिखे।

मार्च १६, मंगलवार

विशेष पत्र लिखे।

मार्च १७, बुधवार

रंगून पहुँचा। जलूस आदि, सदाकी भाँति।

मार्च १८, बृहस्पतिवार

डॉक्टरके[5] साथ घूमा-फिरा। शामको उनके यहाँ पार्टी थी।

१. दत्तात्रेय बालकृष्ण कालेलकर।
२. देखिए "मोढ-मण्डल, कलकत्ता द्वारा दिये गये मानपत्रका उत्तर", १२-३-१९१५।
३. देखिए "भाषण : कलकत्ताके स्वागत-समारोहमें", १३-३-१९१५।
४. देखिए "पत्र : बी० आई० एस० एन० कम्पनीके एजेंटगणको", १९-३-१९१५।
५. डॉ० प्राणजीवन मेहता।

मार्च १९, शुक्रवार

वगीचेमें गया। पत्र लिखे। मालवीयको गोखले मेमोरियलके वारेमें तार दिया। हिन्दु-मुस्लिम-एकता बढ़ानेके लिए पैसा खर्च करनेका सुझाव दिया।

मार्च २०, शनिवार

वगीचा देखने गया। पत्र लिखे। पैदल ही गया—आया।

मार्च २१, रविवार

मुल्ला दाऊद और जमाल सेठके यहाँ गया। जमाल सेठ घरपर नहीं थे। विलायतकी डाक लिखी। चेटीका मन्दिर देखने गया।

मार्च २२, सोमवार

सेनसे मुलाकात। पोपटभाईके यहाँ भोजन।

मार्च २३, मंगलवार

अन्नाने वताया कि उसका इरादा मेरे साथ शामिल होनेका है। मैंने उसे एक वार फिर विचार करके सुवह वात करनेके लिए कहा। उससे कोतवालकी तथा मगनलालकी प्रतिज्ञाकी चर्चा की। सार्वजनिक सभा—मानपत्र।

मार्च २४, बुधवार

अन्नाने फिर अपनी दृढ़ इच्छा प्रकट की और तुरन्त ही साथ हो जानेकी उत्सुकता दिखाई। लेकिन डॉक्टरने अस्वीकार कर दिया। गार्डन-पार्टी।

मार्च २५, बृहस्पतिवार

मूँगफलीकी मिल देखने गया। साँझको जमालके वगीचेमें। उसके साथ सुधारोंके विषयपर वातचीत।

मार्च २६, शुक्रवार

रंगूनसे रवाना। पोपटभाई साथ आये।

मार्च २७, शनिवार

स्टीमरमें।

मार्च २८, रविवार

शामको कलकत्ते पहुँचा। श्री दासके यहाँ ठहरा।

मार्च २९, सोमवार

हिन्दू सभाकी ओरसे मानपत्र। श्री हॉलैंडसे भेंट। श्री दासके यहाँ समारोह।

मार्च ३०, मंगलवार

नेशनल कालेजके शिक्षकोंसे मुलाकात। भारतीय संघ (इंडियन एसोसिएशन) के सदस्योंके साथ विचार-विमर्श। श्रीमती रायसे भेंट। श्री एच० वोससे मुलाकात। कुमारवावूसे भेंट।

मार्च ३१, बुधवार

विद्यार्थियोंसे दो शब्द।[1] श्री लायन अध्यक्ष थे। बोलपुर रवाना। मारवाड़ियोंने बोलपुर जानेके लिए ३०० रुपये दिये। रातको बोलपुर पहुँचा। प्राणलाल मेरे साथ आया।

अप्रैल १, बृहस्पतिवार, वैशाख वदी १

एक बीमार लड़केको देखने गया। ऐन्ड्रयूजकी कष्टमय स्थिति समझी। गुरुदेवके साथ मुलाकात।

अप्रैल २, शुक्रवार

ऐन्ड्रयूजके सम्बन्धमें गुरुदेवसे बातचीत। बादमें शिक्षकोंके साथ। अन्तमें शिक्षकोंके सम्मुख ऐन्ड्रयूजसे बातचीत। कुँजरूकी ओरसे तार कि हम सबको ५ तारीख तक हरद्वार पहुँच जाना चाहिए। नेपाल बाबूकी सार-संभाल।

अप्रैल ३, शनिवार

गुरुदेवकी अध्यक्षतामें लड़कोंके साथ अन्तिम बार बातचीत। मगनलाल तथा रामदासको बोलपुरमें रसोईके काममें मदद देनेके लिए रखा। बाकीको लेकर हरद्वारके लिए रवाना। शंकर पण्डित साथ आये।

अप्रैल ४, रविवार

रेलगाड़ीमें।

अप्रैल ५, सोमवार

शामको हरद्वार पहुँचा। सरवननायके बगीचेमें ठहरे। काली-कमलीवाले बाबा रामनाथसे मुलाकात।

अप्रैल ६, मंगलवार

सवेरे गुरुकुल देखने गया। एक स्वयंसेवक साथ आया। महात्माजीसे भेंट। उनकी बैलगाड़ीमें वापस आया। जमनादास मेरे साथ था, वह गुरुकुलमें रुक गया। लड़के ऋषिकेश गये। अखंडानन्द, पडियार आदि मिले। मूलजी, तापीदास – गुरुकुलमें।

अप्रैल ७, बुधवार

ऋषिकेश गया। लक्ष्मण झूलेकी यात्रा। लटकता पुल देखा। स्वर्गाश्रम देखा। अनेक विचार आये। मंगलनाथजी से मुलाकात। शिखासूत्रके[2] विषयमें चर्चा। स्वामी नारायणसे भेंट।

अप्रैल ८, बृहस्पतिवार

ज्वालापुर महाविद्यालय देखने गया। हिन्दू सभा देखी। ऋषिकुलके दर्शन। गुरुकुलके विद्यार्थियोंकी ओरसे अभिनन्दन।[3] रावजीभाई आये। कोतवाल भी आये।

१. देखिए "भाषण : विद्यार्थी-भवन, कलकत्तामें", ३१-३-१९१५।
२. देखिए आत्मकथा, भाग ५, अध्याय ७ (द्वितीय आवृत्ति)।
३. देखिए "गुरुकुल काँगड़ीमें दिये गये मानपत्रका उत्तर", ८-४-१९१५।

अप्रैल ९, शुक्रवार

हिन्दुस्तानमें २४ घंटेमें पाँच ही वस्तुओंका, और वह भी सूर्यास्तसे पहले, आहार करनेका व्रत लिया। पानी पाँच वस्तुओंमें शामिल नहीं। इलायची आदि पाँच वस्तुओंमें आती है। मूंगफली तथा उसके तेलको एक ही वस्तु मानूँगा। रावजीभाईने दूध और दूधसे बने पदार्थों [को न लेने]का व्रत लिया।

अप्रैल १०, शनिवार

उक्त व्रत आजसे लिया—देखिए पिछली तारीख। दूसरी संस्थाएँ देखीं। थारसीमलसे ऋषिकेश जाते समय मुलाकात हुई। वह निकट सम्पर्कमें आता जा रहा है।

अप्रैल ११, रविवार

मोहिनी आश्रम गया। रामकृष्ण मिशन देखा। दिल्ली जानेके लिए रवाना हुआ। सोसाइटीके सदस्योंके साथ विचार-विमर्श।

अप्रैल १२, सोमवार

दिल्ली पहुँचा—बा और . . . भाई[१]—तथा कोतवाल, रावजीभाई तथा देवधर भी साथ थे। देवधरके अलावा सब अलग हो गये। श्री आलबट और श्री वैस्टनसे मुलाकात। कुतुब-मीनार देखी। अनेक विचार।

अप्रैल १३, मंगलवार

सुबह कॉलेजके विद्यार्थियोंकी सभा। सुलतानसिंहके यहाँ गया। श्री और श्रीमती हेलीसे मिला। किला देखा। अनेक विचार आये। शामको सार्वजनिक सभा। मुहम्मद अलीका भाषण।

अप्रैल १४, बुधवार

सवेरे वृन्दावन जानेके लिए दिल्लीसे प्रस्थान किया। वृन्दावन दोपहरको पहुँचा। प्रेम महाविद्यालय, ऋषिकुल, गुरुकुल, रामकृष्ण मिशन देखने गया। शहरकी गन्दगी।[२] रातको मथुरा वापस आया और मद्रासकी गाड़ी पकड़ी।

अप्रैल १५, बृहस्पतिवार

रेलमें।

अप्रैल १६, शुक्रवार

रेलमें। पुलिसकी निगरानी और सवालात।

अप्रैल १७, शनिवार

शामको मद्रास पहुँचा। स्टेशनपर लोगोंकी बहुत भीड़। लोगोंने स्वयं गाड़ी खींची।[३] श्रीमती बेसेंटसे भेंट। श्री नटेसनके साथ ठहरा।

१. यहाँ पढ़ा नहीं जाता।
२. देखिए **आत्मकथा**, भाग ५, अध्याय ७ (द्वितीय आवृत्ति)।
३. देखिए "भाषण: मद्रास पहुँचनेपर", १७-४-१९१५।

अप्रैल १८, रविवार

लोगोंसे मिलना आरम्भ किया।

अप्रैल १९, सोमवार

बहुत लोगोंने मिला।

अप्रैल २०, मंगलवार

बहुत लोगोंने मिला।

अप्रैल २१, बुधवार

दक्षिण आफ्रिकी लीगकी ओरसे मानपत्र।[1]

अप्रैल २२, बृहस्पतिवार

कृष्णस्वामी शर्मा। शिक्षण मैट्रिक्यूलेशन तक। १९०७में परीक्षा पास की। तमिल, तेलुगु जानता है। समस्त 'भगवद्गीता' कण्ठस्थ है। तीन वर्ष जेलमें बिताये। 'हिन्दू नेशन' के उप-सम्पादक। अखंड ब्रह्मचर्य, सत्य, अहिंसा, अपरिग्रह, अस्तेयका व्रत लिया है। और हमेशा देशसेवा करनेका विचार रखता है। कांजीवरम्‌में जमीन तथा घर है। उनसे २०० रुपयेकी वार्षिक आमदनी होती है। कॉस्मोपोलिटन क्लबमें।

अप्रैल २३, शुक्रवार

महाजन सभाकी ओरसे अभिनन्दन।[2] तैयबजीके घर सोया।

अप्रैल २४, शनिवार

मुस्लिम लीगकी बैठक।[3] वकीलोंके साथ भोजन।[4]

अप्रैल २५, रविवार

बोरा-भाइयोंके यहाँ भोजन। सोशल सर्विस लीग।[5] स्त्रियोंकी सभा। आर्य-वैश्य सभा।[6]

अप्रैल २६, सोमवार

श्री सुब्रह्मण्यम,[7] पादरी तथा एस० श्रीनिवास आयंगारके यहाँ बैठकें।

अप्रैल २७, मंगलवार

श्री नाडमनके यहाँ उत्सव। यंगमेन्स क्रिश्चियन एसोसिएशनका समारोह।[8] विद्यार्थियोंकी ओरसे मानपत्र।

१. देखिए "भाषण: मद्रासके स्वागत-समारोहमें", २१-४-१९१५।
२. देखिए "मद्रासकी महाजन-सभा और कांग्रेसके मानपत्रका उत्तर", २३-४-१९१५।
३. देखिए "भाषण: मद्रास मुस्लिम लीगके स्वागत-समारोहमें", २४-४-१९१५।
४. देखिए "भाषण: मद्रासके कानून-पेशा लोगों द्वारा दिये गये भोजमें" २४-४-१९१५।
५. देखिए "भाषण: सोशल सर्विस लीग, मद्रासकी सभामें", २५-४-१९१५।
६. देखिए "भाषण: आर्य-वैश्य महासभा, मद्रासके स्वागत-समारोहमें", २५-४-१९१ ।
७. देखिए "भाषण: मद्रासके भारतीय ईसाइयोंके स्वागत-समारोहमें" २६-४-१९१५।
८. देखिए "भाषण: वाई० एम० सी० ए०, मद्रासमें", २७-४-१९१५।

अप्रैल २८, बुधवार

पाचयप्पा कॉलेजके शिक्षकोंके साथ बातचीत। श्रीमती बेसेंटके यहाँ समारोह। अलूरी रामराजने मेरे साथ होनेका निश्चय किया। आयु २९ वर्ष, माँ-बाप मर गये हैं, भाषा तेलगू। तमिलका ज्ञान नहीं। बी० ए० है, संस्कृत जानता है, दो बड़े भाई हैं। ब्रह्मचारी है, और रहा है। १५ वर्ष से निरामिष है। छः व्रत लेनेको[1] तैयार है। आनेके लिए रेल-भाड़ेकी आवश्यकता नहीं। जुलाई महीनेमें आयेगा।

अप्रैल २९, बृहस्पतिवार

रामराजके साथ सुबह बातचीत हुई। उसने बुधवारकी टीपमें लिखे हुए व्रत लिये। कृष्णमाचारी वरदाचारी। उम्र २५ . . . ६ वर्षसे विवाहित है, माँ-बाप नहीं, किसीका भरण-पोषण नहीं करना पड़ता। मेट्रिक्यूलेशनकी परीक्षा पास की है। तीन वर्षसे नौकर है। वेंकटापर सेतुराम अय्यर, आयु ३३, विवाह १८८९, तीन बच्चे, लड़का ७ वर्ष, लड़कियाँ ९ और २ वर्षकी आयुकी। बाप जीवित हैं। किसीका भरण-पोषण नहीं करना पड़ता। दोनोंके पास जमीन-जायदाद है। मेट्रिक्यूलेशन पास है। थोड़ी संस्कृत जानता है। गोविन्ददासके यहाँ पार्टी।[2]

अप्रैल ३०, शुक्रवार

सवेरे मायावरम् पहुँचा। वहाँसे घोड़ागाडीमें ट्रंकेवार गया। रास्तेमें सेमनारकोइल रुका। शामकी सभा ट्रंकेवारमें हुई।[3] पंचम [समाज] की ओरसे अभिनन्दन।[4]

मई १, शनिवार

सवेरे रामापुरम् और तेलियाड़ी गया। साँझको मायावरम् जानेके लिए निकला। वहाँ मानपत्र।[5] मायावरम्में एक हजार खड्डियाँ हैं, वे स्त्रियोंके लिए माल तैयार करते हैं। रातको मद्रासकी गाड़ी ली। सलवानका लड़का नायकर साथ आया।

मई २, रविवार

मद्रास पहुँचा। पंचम लोगोंके सम्बन्धमें नटे[सन] के साथ बातचीत। विद्यार्थियोंके साथ मुलाकात।

मई ३, सोमवार

श्री शास्त्रियरके यहाँ भोजन करने गया। शामको नेलौरके लिए प्रस्थान। नेलौरमें दीवान बहादुर रामचन्द्र रावके यहाँ रहा। नायकर तथा अदा साथ थे। श्री सी० श्रीनिवास आयंगारने ५०० रुपये दिये। वह रकम नटेसनको सौंप दी।

१. सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य, अस्वाद, अस्तेय व अपरिग्रह व्रत।
२. देखिए "मद्रासके गुजरातियोंके मानपत्रका उत्तर", २९-४-१९१५।
३. देखिए "भाषण: ट्रंकेवारके स्वागत समारोहमें", ३०-४-१९१५।
४. देखिए "ट्रंकेबारमें दक्षिण भारतीय दलित-वर्ग संघके मानपत्रका उत्तर", ३०-४-१९१५।
५. देखिए "भाषण: मायावरमके स्वागत-समारोहमें", १-५-१९१५।

मई ४, मंगलवार

सदा बीमार पड़ गये। [मैं] फलाहारसे ऊब गये, पका हुआ खाना खाया और नमकको भी लिया। सम्मेलनमें गया। 'प्रह्लाद-आख्यान' तेलगूमें देखा।

मई ५, बुधवार

सम्मेलनमें गया।[1] सोशल कांफ्रेंसमें भी भाग लिया। सनातन धर्मका सम्मेलन भी था।

मई ६, बृहस्पतिवार

दोनों सम्मेलनोंमें गया। स्वदेशी कपड़ा देखा। हमारे बारेमें प्रस्ताव।[2] उसका उत्तर। फिर रातको विद्यार्थियोंकी ओरसे मानपत्र। उसका उत्तर।[3]

मई ७, शुक्रवार

सवेरे विदाई, मद्रास पहुँचा। लीगकी बैठक।[4] और सगुण विलास सभाकी ओरसे हरिश्चन्द्र नाटक। सुन्दरम् साथ आया। बंगलोरके लिए रवाना। . . . शर्माका ढोंग। उसको आनेके लिए मना किया। एक विद्यार्थीने दस रुपये दिये। गोकुलदासने १,००० रुपयेकी हुंडी दी।

मई ८, शनिवार

सवेरे बंगलोर पहुँचा। बहुत धूमधाम। नटेसन साथ थे। गुरजूकी पत्नी मिली। उसे २० रुपये देनेका प्रबन्ध किया। ढाई सालके लिए उसे १० रुपया महीना देनेका निश्चय किया है। श्री गोखलेकी प्रतिमाका अनावरण।[5] सार्वजनिक सभा।[6] दीवान साहबसे मुलाकात।

मई ९, रविवार

रास्तेमें।

मई १०, सोमवार

बम्बई पहुँचा। सोसाइटीमें ठहरा। मणिको १,००० रुपयेकी हुंडी दी। बम्बईसे प्रस्थान।

मई ११, मंगलवार

अहमदाबाद आया। अदाने अपने रेल-भाड़ेके ५० रुपये दिये। अहमदाबाद तकके रु० ६६–७–० हुए। जीवनलालके साथ मकान देखने गया। खर्च आदिका तखमीना[7] लगाकर सेठ मंगलदासको दिया।

मई १२, बुधवार

सेठ मंगलदासके साथ बातचीत की। उन्होंने अपनी खाँसीके इलाजके लिए उपवास आरम्भ किया।

१. देखिए "भाषण: नेलौरमें", ५–५–१९१५।
२. देखिए "भाषण: नेलौरमें" ५–५–१९१५ की पादटिप्पणी ४।
३. देखिए "भाषण: नेलौरमें आयोजित छात्रोंकी सभामें", ६–५–१९१५।
४. देखिए "वक्तव्य: भारतीय दक्षिण आफ्रिकी संघ, मद्रासकी सभामें", ७–५–१९१५।
५. देखिए "भाषण: बंगलौरमें", ८–५–१९१५।
६. देखिए "बंगलौरके नागरिकोंको उत्तर", ८–५–१९१५।
७. देखिए "आश्रम: आनुमानिक व्यय", ११–५–१९१५।

मई १३, बृहस्पतिवार

सेठसे २०० रुपये लेकर मगनलालको भेजे। उसको आनेका तार दिया। सेठकी इच्छासे एक दिन और रुका। डॉक्टर माधवलालसे मुलाकात हुई।

मई १४, शुक्रवार

अहमदाबादसे प्रस्थान।

मई १५, शनिवार

राजकोट आया। रणछोड़भाईसे मुलाकात।

मई १६, रविवार

राजकोटमें बिताया।

मई १७, सोमवार

भाभी, शामलदास, गोकुलदास तथा माणिकलाल आये। पंडितसे मिला।

मई १८, मंगलवार

शामलदास तथा गंगाभाभीने मुखतारनामेपर हस्ताक्षर किये। मगनलालको तथा लीमड़ी तार किया।

मई १९, बुधवार

लीमड़ी पहुँचा। शामलदास साथ है। सन्तोक और लड़कियाँ भी।[1] सवेरे ठाकुर साहबसे भेंट की। जुलूस निकला। शामको तथा दोपहरको ठाकुर साहबके साथ शिक्षा आदिके सम्बन्धमें लम्बी बातचीत हुई।

मई २०, बृहस्पतिवार

सुबहको अहमदाबाद पहुँचा। सामान मँगाया। नये घरमें कलश रखा और विधिपूर्वक गृहप्रवेश किया।

मई २१, शुक्रवार

नानालाल कवि[2] और अन्य मिलने आये। फेफड़ोंके बाहरी भागपर बहुत सूजन आ गई है।

मई २२, शनिवार

सूजन कम है। नये घर गया। लड़कोंके रवाना होनेका तार मिला। कुँजरूको तार किया।

मई २३, रविवार

मगनलाल आदि आये।

मई २४, सोमवार

शामलदास, शान्ति, रणछोड़ और काकु राजकोट गये।

मई २५, मंगलवार

शालाका कुछ काम आरम्भ किया। डॉक्टर महादेवप्रसाद तथा भोगीलाल कंथारियाको पढ़ाना शुरू किया।

१. देखिए "पत्र: नारणदास गांधीको", १९-५-१९१५।

२. नानालाल दलपतराम पटेल (१८७७-१९४६); गुजरातके एक प्रसिद्ध कवि।

मई २६, बुधवार

जीवनलालभाईकी ओरसे पट्टियाँ आदि प्राप्त हुईं। रणछोड़भाई तथा नानालाल आये। नटेसनका पत्र मिला और १,००० रुपये भी। भाई नानालालने ३०० रुपये दिये।

मई २७, बृहस्पतिवार

छगनलाल मास्टर आये। एक रुपया दे गये। माधवदास आया और अपने पुत्र वृजलालको छोड़ गया। शराफके पास जमा करवानेके लिए १,४५० रुपये भाई नानालालको दिये।

मई २८, शुक्रवार

पोपटभाई तथा उनकी धर्म बहन गंगाबेन आये। पूंजाभाईके यहाँसे सामान आया। श्री नटेसनकी ओर से रु० ३,०००का चेक मिला।[1] मणिलाल कोठारी आये।

मई २९, शनिवार

रायचन्दभाईके शिष्य मनसुखभाई मिले। फिर दर्द शुरू हुआ। उपवास किया। नारण-दासकी पत्नी आई।

मई ३०, रविवार

मंगलदास सेठसे मिला। रायचन्दभाईकी पुण्य-तिथिमें सम्मिलित हुआ। पोपटभाईने १०० रुपये दिये। रणछोड़भाईने दस और मनसुखभाईने एक रुपया दिया। प्रोफेसर राममूर्ति आये।[2]

मई ३१, सोमवार

सब लोग राममूर्तिका खेल देखने गये। मगनलाल मगनभाईकी देख-भाल करनेके लिए पीछे रहा। विट्ठलराय आये और थोड़ा सामान भी। बाकी यथावत्।

जून १, मंगलवार

मगनभाईको अभी बुखार है लेकिन कम। और इसके अतिरिक्त राममूर्तिका प्रदर्शन देखनेके लिए मुझे जाना पड़ा। लड़कोंमें झूठ दिखाई दिया। इससे उपवास आरम्भ किया। झूठ स्वीकार कर लिया गया तथा साँझको उपवास तोड़ा। मगनलाल सामान लाया। केशवलालभाईकी ओरसे २५ रुपये मिले।

जून २, बुधवार

हरिभाई सपरिवार आये।

जून ४, शुक्रवार

लीमड़ीके अध्यापक रणछोड़ आये। राजकोटकी राजमाताकी ओरसे १०० रुपये प्राप्त हुए। केसर-ए-हिन्द पदककी सूचना।

जून ५, शनिवार

अम्बालाल, दलपतभाई, जमियतराम शास्त्री, भाई शंकर, नानाभाई आदिसे मिलने गया। पोपटभाई आ गये। मानिकलालने ३,००० रुपये रखे। मगनलाल, मगनभाई तथा मणिलालने सत्य-व्रत लिया।

१. देखिए "पत्र: जी० ए० नटेसनको", २८–५–१९१५।

२. प्रसिद्ध व्यायाम-विशारद।

जून ६, रविवार

वाघरिओंकी पाठशालाके लड़के आये। पोपटभाईके यहाँ सवेरे कीर्तनमें गया। पोपटभाईने लड़कोंके लिए आम, पूरी आदि भेजे। माधवजी शास्त्री तथा गिरिजाशंकरने विद्यार्थियों और शिक्षकोंको पढ़ाना आरम्भ किया।

जून ७, सोमवार

हीरजी भीमजी चावडा आये। लीमड़ीके अध्यापक कल चले गये। मगनभाईकी पत्नी वापस आ गई।

जून ८, मंगलवार

अम्बालाल, उसकी पत्नी और लड़का आश्रम देखने आये। बा सख्त बीमार।

जून १०, बृहस्पतिवार

चावडा आये। अम्बालाल थक गया और चला गया। रावजीभाई आये। पोपटलाल गया। अन्ना और उसकी पत्नी आये। सुन्दरम् और मैं पूना जानेके लिए मेलसे रवाना।

जून ११, शुक्रवार

बम्बई पहुँचा। काका साथ थे। श्री पेटिटसे मिला। पूना पहुँचा। सुन्दरम् साथ है।

[रु० आ०पा०]

९	८	०	दो व्यक्तियोंका रेलका किराया
०	१५	०	सवारी खर्च, पेटिटके यहाँ जाने और आनेका
५	१०	६	पूनाके लिए किराया
०	८	०	सवारी

जून १२, शनिवार

श्री शास्त्रियरका भाषण।

जून १३, रविवार, जेठ सुदी १

संक्षिप्त रिपोर्ट मैंने सदस्योंके सामने रखी। पूना छोड़ा।

[रु० आ० पा०]

०	६	०	डाक-टिकट
२	११	०	पूनासे बम्बई
०	११	०	ट्राम और टाँगा
०	४	०	कोलाबाके लिए टिकट
२०	११	६[1]	[जून ११ और १३ तारीखके अन्तर्गत दी गई टीपोंकी कुल जमा रकम]
०	१४	०	बाँदराका किराया
०	४	०	विविध
२१	१२	६[2]	[कुल जमा रकम]

१. ठीक संख्या २०–९–६ है।

२. ठीक संख्या २१–१३–६ है।

जून १४, सोमवार

घाटकोपर उतरा। रतनचन्दजी साधुसे मिला। श्री पेटिटका टेलीफोन। हाजीभाई तथा देवकरणदाससे मिला।

जून १५, मंगलवार

श्री रतन तातासे मिला। श्री नटराजनके घर बाँदरामें मातमपुरसीके लिए गया। बम्बईसे प्रस्थान किया। नारणदास साथ आया।

जून १६, बुधवार

अहमदाबाद पहुँचा। श्री पेटिटको आँकड़ों तथा पत्रका मसविदा भेजा।[1]

जून १७, बृहस्पतिवार

मगनभाईके ससुर आये। वैद्य जटाशंकर आया। बा की जाँच की।

जून १८, शुक्रवार

पोपटलाल लीमड़ीको रवाना।

जून १९, शनिवार

नारणदास देशको रवाना हुआ।

जून २०, रविवार

कुछ जानने योग्य नहीं।

जून २१, सोमवार

माणेकलालने दस रुपये दिये।

जून २२, मंगलवार

नर्मदाशंकरको पढ़ाना शुरू किया। मंगलदास तथा पोपटभाई आ गये।

जून २३, बुधवार

नया कुछ नहीं।

जून २४, बृहस्पतिवार

गवर्नरका पत्र। पदकके सम्बन्धमें। उनको कल तार भेजा।

जून २५, शुक्रवार

पदक प्राप्त करनेके लिए पूना रवाना। पंडित माधवजी संस्थामें रहनेके लिए आये। धोराजीवाले झवेरचन्दके भतीजे भी आये।

[रु०	आ०	पा०]	
६	७	०	अहमदाबादसे बम्बई

१. देखिए "पत्र : जे० बी० पेटिटको", १६-६-१९१५।

जून २६, शनिवार

सवेरे बम्बई पहुँचा। वहाँसे पूना गया। वहाँ लल्लूभाई मिले। पदक मिला। पट्टणी[1] मुझे किरकी स्टेशन तक पहुँचा गये। शास्त्रियरके साथ नियमावलीपर चर्चा।

[रु० आ० पा०]

२	७	०	बम्बईसे पूना
०	२	६	मस्जिद बन्दरसे बोरी बन्दर[2]
२	०	०	वैराग्य प्रकरण, अभंग और डाक-टिकट
११	०	६	जून २५ और २६की कुल जमा रकम
१	४	०	केले और मजदूरोंका खर्च
०	१	०	स्टेशनपर कुलीको

जून २७, रविवार

बम्बई पहुँचा। मस्जिद बन्दरके स्टेशन मास्टरसे बातचीत। भाड़ेके सम्बन्धमें मुझे पहचाननेके बाद उसने माफी माँगी। डाक छोड़ी: पोलक, शास्त्रियर, प्रागजी, कुमारी श्लेसिन, लैंगडेल स्मिथ।

जून २८, सोमवार

अहमदाबाद वापस। फड़के आया।

[रु० आ० पा०]

२	०	०	डाक टिकटोंका खर्च 'जो पहले नहीं दिया था'

जून २९, मंगलवार

बापूभाई दौलतराय मिलकर आये।

[रु० आ० पा०]

०	११	०	बिस्तरकी मजदूरी
०	०	६	विविध
१५	०	०[3]	[जून २५, २६, २८ और २९की टीपोंके अन्तर्गत दिये गये हिसाबकी कुल जमा रकम]
५	१	०	रोकड़ बाकी
२०	५	०[4]	पूना-यात्राका हिसाब

जुलाई ४, रविवार

आरोग्यके विषयपर महादेवप्रसादका भाषण। मैं अध्यक्ष था।

१. सर प्रभाशंकर पट्टणी, दीवान, भावनगर।

२. इसे अगली तारीखकी टीपमें होना चाहिए।

३. इसे १५-२-० होना चाहिए।

४. इसे २०-२-० होना चाहिए।

जुलाई ५, सोमवार

अमृतलाल ठक्कर आये। मगनभाई आये। रमणभाई आश्रम देखनेके लिए आये। हरिलाल, मूलचन्द तथा त्र्यम्बकलालने पढ़ाना शुरू किया।

जुलाई ६, मंगलवार

नारणदास रातको आया।

जुलाई ७, बुधवार

विहारवाले स्वामी आये। गुरुकुलके चन्द्रमणि आये। मगनलाल वीरमगाँव गया और वापस आया। अमृतलाल ठक्कर गये। मणिलाल गया।

जुलाई ९, शुक्रवार

पूना जानेके लिए निकला। हाथीभाई गये। नारणदास साथ आया।

जुलाई १०, शनिवार

पूना पहुँचा। सम्मेलन[1] आरम्भ हुआ।

जुलाई ११, रविवार

सवेरे और दोपहरको श्री तिलकसे मिला।[2] अखंडानन्द तथा दयालजीके साथ अनेक विषयोंपर बातचीत।

जुलाई १२, सोमवार

अनाथ विद्यार्थियोंके आश्रमको देखने गया। पूनासे प्रस्थान। भाजेकरके साथ बातचीत। भाई शंकर आश्रममें आये।

जुलाई १३, मंगलवार

अहमदाबाद पहुँचा। नागजी स्वामीसे मुलाकात।

जुलाई १४, बुधवार

नागजी स्वामी आश्रममें रहनेके लिए आये। सवेरे व्याख्यान दिया।

जुलाई १५, बृहस्पतिवार

नागजी स्वामी गये। श्री प्रेटसे[3] मिलने गया। बहुत बातचीत हुई। सहायता करनेका वचन दिया।

जुलाई १६, शुक्रवार

भाई शंकर व्यसनोंके कारण बीमार पड़ गये हैं।

१. बम्बई प्रान्तीय सम्मेलन, पूना। देखिए "भाषण: १५ वें बम्बई प्रान्तीय सम्मेलन, पूनामें", ११-७-१९१५।

२. देखिए "पत्र: बा० गं० तिलकको", २७-७-१९१५।

३. कमिश्नर, उत्तरी क्षेत्र।

जुलाई १७, शनिवार

प्रातःप्रार्थना करनेसे पहले स्नान करना आरम्भ किया। बा ने देवाकी धोती धोई। धोते हुए पकड़े जानेपर झूठ बोली। मैं क्रोधको वशमें नहीं कर सका। बहुत बुरा-भला कहा। यदि देवाका रूमाल-तक भी धोये तो चौदह दिन उपवास रखनेका व्रत लिया है। ईश्वर सहायक हो। भाई शंकर ओझा अपने व्यसनको न छोड़नेके कारण चले गये।

जुलाई १९ सोमवार

अनेक भद्र पुरुषोंसे मुलाकात। श्यामलाल आया।

जुलाई २०, मंगलवार

शिवसिंह परमारने सहायताके लिए आना शुरू किया। रेवाशंकरभाई आये।

जुलाई २१, बुधवार

कलेक्टर श्री पेन्टरसे मिल आया। मंगलदास सेठसे मुलाकात।

जुलाई २२, बृहस्पतिवार

रेवाशंकरभाई गये।

जुलाई २४, शनिवार

वाडीलालकी खड्डी देखने गया। मिस्त्रीने काम शुरू किया। तीस दिनोंके ४० रुपय ठहराये हैं।

जुलाई २५, रविवार

न्यायाधीश कैनेडीसे मिला।

जुलाई २६, सोमवार

श्यामलालका भाई आया। नानालाल कवि तथा उसके परिवारकी स्त्रियाँ मिलनेके लिए आईं। मणिलालने वाडीलालकी खड्डीमें जाना आरम्भ किया। बढ़ई आज नहीं आया।

जुलाई २७, मंगलवार, श्रावण बदी १

बढ़ईने छुट्टी ली। वनमाली आया। उसका लड़का साथ है।

जुलाई २८, बुधवार

मंगल दाखिल हुआ।

जुलाई २९, बृहस्पतिवार

कृष्णस्वामी शर्मा आये।

जुलाई ३०, शुक्रवार

वनमाली गया।

जुलाई ३१, शनिवार

माणिकलालने सबको भोज दिया।

अगस्त १, रविवार

पंडितजीने वेतनकी माँग की। जुलाई महीनेसे लेकर दिसम्बर तक उनको २० रुपये प्रतिमास देना निश्चित किया। इसके बदले वे तीन घंटे देंगे और शारदाबेन ढाई घंटे, ऐसा निश्चित हुआ। महिलाएँ पूंजाभाईके यहाँ गईं। प्रोफेसर स्वामी नारायण आये हुए थे। मंगल भाग गया।

अगस्त २, सोमवार

जमनादास आया। हरिलाल और मंचकलालने आश्रममें रहना शुरू किया।

अगस्त ३, मंगलवार

मनसुखलाल आया। पूंजाभाई तथा एक और यहीं सोये। अदा बीमार पड़ गये। जान पड़ता है, कर्नाटीमें ठीक नहीं उतरे। बादमें सम्हल गये।

अगस्त ४, बुधवार

कृष्णराव आये। मनसुखलालने प्राकृतिक उपचार आरम्भ किया।

अगस्त ५, बृहस्पतिवार

जमनादास सूरत गया।

अगस्त ६, शुक्रवार

कृष्णरावने आश्रम छोड़ा। शिवरामन आया।

अगस्त ७, शनिवार

बाबू अथवा माधवन् आया। जेठालाल और उसका भाई पुरुषोत्तम आये।

अगस्त ८, रविवार

अमरसिंह आया। जीवनलालभाई, मोतीलाल सेठ आदिसे उनके घर मुलाकात। विक्रम-सिंह अपने पुत्रको लेकर आया।

अगस्त ९, सोमवार

अमरसिंह गया। सर सुब्रह्मण्यम्की ओरसे १०० रुपये प्राप्त हुए। पंडित दस दिनके लिए गया।

अगस्त १०, मंगलवार

एक बार फिर कुछ गम्भीरताके साथ तमिल पढ़ना आरम्भ किया। गोमतीबेनने आभू-षण उतार डालनेका निश्चय किया।

अगस्त ११, बुधवार

पुरुषोत्तम भाग गया। केशु, कृष्ण और नवीन ध्यान नहीं देते थे, इससे कल उनको प्रदोषका व्रत रखनेके लिए कहा और स्वयं रखनेका निश्चय किया।

अगस्त १२, बृहस्पतिवार

मनसुखलालने २५० रुपयेमें गोमतीबेनके आभूषण रखे।

अगस्त १३, शुक्रवार

मोहन सोनी आया।

अगस्त १४, शनिवार

करुणाशंकर[1] मास्टर आदि मिलनेके लिए आये।

अगस्त १५, रविवार

करुणाशंकर मास्टर आदि मिलनेके लिए आये।

अगस्त १६, सोमवार

पालनपुरसे करीमभाई सालवाला आये।

अगस्त १७, मंगलवार

मूलचन्द परमारने सूचना भेजी कि वे पढ़ाने नहीं आ सकते। रतनसिंह परमारने तनख्वाह माँगी और मना कर दिये जानेपर आना बन्द कर दिया।

अगस्त १८, बुधवार

आज पाँच विभाग लिये। मगनभाई बीमार पड़ गये। मगनभाईने पार्थसारथीके अपराधके लिए एकाशन किया।

अगस्त १९, बृहस्पतिवार

अब्दुल करीम सेठ आये। अन्नाने व्रत लिया: ब्रह्मचर्य, सत्य, छः वस्तुएँ ही लेनेका प्रण तथा दूध और उससे बने पदार्थोंका परित्याग। गत रात्रि [भागवतका] एकादश स्कंध पढ़ा।

अगस्त २०, शुक्रवार

जमनादास और पार्वती आये।

अगस्त २१, शनिवार

पुरुषोत्तम पटेल और उसका भाई आये। सुन्दरम्ने अपनी भूल स्वीकार की।

अगस्त २२, रविवार

जमनादास गया।

अगस्त २३, सोमवार

जमना और पुरुषोत्तम आये।

अगस्त २४, मंगलवार

पुरुषोत्तम [और] भाई वापस धर्मज गये।

अगस्त २५, बुधवार

वा आदि स्त्रियाँ मंगल सेठके यहाँ गईं।

१. एक अध्यापक; करुणाशंकर गुजरातमें डॉ० मेरिया मॉण्टेसरी शिक्षण-पद्धति प्रचलित करनेके लिए उत्तरदायी थे।

अगस्त २६, बृहस्पतिवार

जमना गया।

अगस्त २८, शनिवार

मिस्त्रीने काम आरम्भ किया। तीस दिनके लिए ४५ रुपये पगार देना तय किया।

अगस्त ३०, सोमवार

छगनलालका पत्र और हुंडी आये।

अगस्त ३१, मंगलवार

सुन्दरम्‌का बुखार नहीं उतरता।
रामदासकी दुर्बलता भी चिन्ताका कारण है।

सितम्बर ४, शनिवार

दादाभाई जयन्ती। प्रेमाभाई हॉलमें भाषण। ब्रजलाल और हीरजी चावडा आये। कृष्ण-स्वामीको उसकी माँकी बीमारीके सम्बन्धमें तार। अन्ना और मामा बड़ौदा गये।

सितम्बर ५, रविवार

कृष्णस्वामी मद्रास गया।

सितम्बर ६, सोमवार

अन्ना और मामा आये।

सितम्बर ७, मंगलवार

त्र्म्बकलाल और हरिलाल वापस आये।

सितम्बर ९, बृहस्पतिवार

हाईकोर्टके वकील अमृतलाल आये।

सितम्बर १०, शुक्रवार

करीमभाई पालनपुरसे वापस आये।

सितम्बर ११, शनिवार

दूदाभाई[1] बम्बईसे आये। बहुत झगड़ा हुआ। सन्तोकने खाना नहीं खाया, इसी कारण मैंने भी भोजन नहीं किया। ब्रजलालने बीड़ी पी इससे उपवास आरम्भ किया।

सितम्बर १२, रविवार

श्री प्रैट और अडवानी मुलाकातके लिए आये। भाईचन्दजीको देखने गया। नागजी स्वामीसे मिला। सर चीनुभाईसे[2] भेंट की। मुझपर उपवासका खासा असर हुआ है।

१. सामान्यतः अछूत माने जानेवाले वर्गके एक सदस्य, इनके आश्रममें प्रवेश पानेपर काफी झगड़ा हुआ था। देखिए "पत्र: वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको", २३-९-१९१५।

२. अहमदाबादके प्रमुख नागरिक और उदारमना समाज-सुधारक।

सितम्बर १५, बुधवार

दूदाभाई अपनी पत्नीको लेने गये। हरिलाल आया। कमिश्नरके यहाँ आयोजन था, उसमें गया।

सितम्बर १६, बृहस्पतिवार

चंची और नानाभाई आये। पंडित गया। नवीन गये।

सितम्बर १७, शुक्रवार

शानसे एक रुपया और रंगूनसे सात रुपये आये। डेविस और अम्बालाल सेठ आ गये।

सितम्बर १८, शनिवार

नीछाभाई आये।

सितम्बर १९, रविवार

ऐन्ड्रयूजकी अगवानी करनेके लिए अहमदाबादसे प्रस्थान। हरिलाल साथ आया। नानाभाई गये।

सितम्बर २०, सोमवार

ऐन्ड्रयूज और पियर्सन आये। समितिकी बैठक। मुझसे अध्यक्ष-पदके लिए कहा गया। सब लोग ढेड़ोंके मकान देखनेके लिए गये। अहमदाबाद जानेके लिए तीनों निकले।

सितम्बर २१, मंगलवार

अहमदाबाद पहुँचे। नेता आये हुए थे। घरमें, वहन आदि आये। अच्छी सभा हुई। दोनों भाई रातको विदा हुए। चुनीलाल आये।

सितम्बर २२, बुधवार

चुनीलाल तथा दयालजी विदा हुए।

सितम्बर २४, शुक्रवार

मगनलाल तथा सन्तोक और अन्य लड़कियाँ बम्बई गये।

सितम्बर २६, रविवार

दूदाभाई तथा उनकी पत्नी आये।

सितम्बर २७, सोमवार

काका, गणाजी तथा एक विद्यार्थी आये। व्रजलाल राजकोट गया। माणेकलाल दो-तीन घंटेके लिए आया।

सितम्बर २८, मंगलवार

देशपांडे आये। शामको वापस गये। गुणाजी भी गये।

सितम्बर २९, बुधवार

बम्बई गया। रास्तेमें देवभाभी और जमनादास साथ थे। देवभाभीके साथ लम्बी बातचीत।

सितम्बर ३०, बृहस्पतिवार

वम्बई पहुँचा। नारणदासके साथ वार्तालाप। नटराजनके यहाँ गया। उसके साथ लम्बी वातचीत हुई। नारणजीके यहाँ फलाहार। हरखचन्दके स्वास्थ्यकी परीक्षा की। समितिकी वैठक। वलिअम्मा-हॉलके मामलेको श्री तातापर छोड़ा। वम्वईसे प्रस्थान किया।

अक्तूबर १, शुक्रवार

अहमदावाद आया। प्रोफेसर वालजी रहनेके लिए आये।

अक्तूबर ३, रविवार

जोइतराम गया। मगनलाल और सन्तोक वापस आये।

अक्तूबर ४, सोमवार

प्रकाशानन्द आये। मिस्त्री (वढ़ई) आने लगा।

अक्तूबर ५, मंगलवार

देवभाभी आई। जमनादास साथ है। कलेक्टरकी अध्यक्षतामें अकालके सम्वन्धमें एक सभा हुई। मैं गया था। प्रस्ताव पेश किये गये।

अक्तूबर ६, बुधवार

देवभाभी और जमनादास गये।

अक्तूबर ७, बृहस्पतिवार

भाई वालजीने १५ रुपये दिये। श्री पेटिटको १,५०० रुपयेका चेक भेजा।

अक्तूबर ८, शुक्रवार

डाह्याभाईने आठ रुपये दिये। आज फिर आवेश आया और वा पर नाराज हुआ। इस कुटेवकी दवा ढूंढ निकालनेमें-ही छुटकारा है।

अक्तूबर ९, शनिवार

व्रजलाल भाग गया। जोइतराम आया, वह नहीं रह सकता।

अक्तूबर १०, रविवार

सोजित्रा गया। वहाँका छात्रालय देखा। खड्डी आदि देखीं। पेटलादमें भी एक खड्डी देखी। कविके भाई रास्तेमें मिले। मूलचन्द परमारके साथ आश्रममें आये।

अक्तूबर ११, सोमवार

हरखचन्द आया। जेकीवेन[1] आश्रममें रहनेसे इनकार करती है। जोइतराम तथा परमार गये।

अक्तूबर १२, मंगलवार

मणिलाल और करीमभाई पालनपुर गये। हरखचन्द गया।

१. जयकुँवर, डॉ० प्राणजीवन मेहताकी सुपुत्री।

अक्तूबर १७, रविवार

माडगाँवकर आये। सन्तोक राजकोट गई। व्रजलालका छोटाभाई आज यहाँ रहा।

अक्तूबर १९, मंगलवार

दयालजी और उनके विद्यार्थी सूरतसे आये।

अक्तूबर २२, शुक्रवार

मणिलाल पालनपुरसे वापस आया। लड़के सरखेज गये।

अक्तूबर २३, शनिवार

व्रजलाल आया।

अक्तूबर २४, रविवार

दयालजी और उनके विद्यार्थी गये।

अक्तूबर २५, सोमवार

रेवाशंकर आया।

अक्तूबर २६, मंगलवार

विट्ठलजी दवे और उनके पुत्र आये।

अक्तूबर २७, बुधवार

शामको ५–३० बजेकी गाड़ीसे मगनलाल, सन्तोक, राधा, रुखी, व्रजलाल, फकीरी और मैं बम्बई जानेके लिए रवाना हुए।

अक्तूबर २८, बृहस्पतिवार

मगनलाल आदि मद्रास जानेके लिए रवाना हुए। एम्पायरमें[१] भाषण।

अक्तूबर २९, शुक्रवार

अहमदाबाद वापस आया। कल रात कपोल [से] एक लड़का और जगजीवनदास मेहता आये। कल रात ही वापस चले गये।

अक्तूबर ३०, शनिवार

दयालजी, उनकी माँ और उनके मित्र आये। बड़ौदाके पांडुरंग नामक एक विद्यार्थीने आश्रममें दाखिल होनेकी तीव्र इच्छा प्रगट की। रातको रहा।

अक्तूबर ३१, रविवार

पांडुरंग गया और सबसे मिलनेके बाद वापस आनेके लिए कह गया। वर्धासे जमनालाल [बजाज] तथा डॉक्टर बेन्जामिन मिलनेके लिए आये।

नवम्बर १, सोमवार

दयालजी सवेरे रवाना हुए।

१. देखिए "भाषण: भारतीय गिरमिटिया मजदूरोंके सम्बन्धमें", २८–१०–१९१५।

नवम्बर २, मंगलवार

अमृतलाल ठक्कर रातको आये। डोककी पुस्तकका एक प्रकरण पूरा किया।

नवम्बर ३, बुधवार

कणवी नारणजी सवेरे आये।

नवम्बर ४, बृहस्पतिवार

श्री पेंटर मिलनेके लिए आये। शारदाबेन[1] आश्रम देखनेके लिए आई थी।

नवम्बर ५, शुक्रवार

भाई अमृतलाल ठक्कर आये।

नवम्बर ६, शनिवार

अमृतलाल गये। इंदुलाल याज्ञिक आये।[2]

नवम्बर ७, रविवार

इंदुलाल गये। बापुजी अपने पौत्र बेचर और चतुरके साथ आये।

नवम्बर ८, सोमवार

बाघरी स्कूलके १२५ से भी अधिक लड़के आये। उनको फलाहार कराया। मणिलाल तथा पूंजाभाई हर एकने पाँच रुपये दिये।

नवम्बर ९, मंगलवार

वालजी वापस आये।

नवम्बर १०, बुधवार

ब्रजलाल वोरा आया।

नवम्बर ११, बृहस्पतिवार

डॉक्टर देव आये। ब्रजलाल बम्बई गया।

नवम्बर १३, शनिवार

सेठ इस्माइल मूसा और उनके मित्र आये। डॉक्टर देवसे मिलनेके लिए आज एक समारोहका आयोजन किया था। प्रोफेसर आनन्दशंकर[3] आदि आये थे।

१. एक सामाजिक कार्यकर्त्री; विद्यागौरी नीलकण्ठकी बहन, देखिए "भाषण: भारतीय महिला विश्वविद्यालयपर", २३-२-१९१६।

२. एक सक्रिय राजनैतिक कार्यकर्त्ता; 'नवजीवन' के प्रारम्भकर्त्ता। गांधीजीने, बादमें, इसे अपने हाथमें ले लिया था।

३. प्रोफेसर आनन्दशंकर बापुभाई ध्रुव (१८६९-१९४२) संस्कृतके विद्वान् और साहित्यकार; उप-कुलपति, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय (१९२०-१९३७)।

नवम्बर १४, रविवार

नारणजी गये। सर फीरोजशाहके[1] सम्बन्धमें एक सभामें सम्मिलित हुआ।

नवम्बर १५, सोमवार

इस्माइल सेठ तथा उनके मित्र गये। गोविन्दराव पाटिलके यहाँ गुजरात सभाकी बैठक हुई। उसमें धाराएँ आदि बनाई गईं।

नवम्बर १६, मंगलवार

पेशाब करते समय तीव्र जलनका अनुभव किया।

नवम्बर १७, बुधवार

जलन और भी बढ़ गई। नायकरकी माँ और उसका भाई आये।

नवम्बर १८, बृहस्पतिवार

सवेरे कुछ नहीं खाया। बहुत खून जाता है।

नवम्बर १९, शुक्रवार

अभी दर्द जारी है।

नवम्बर २१, रविवार

राजचन्द्र जयन्ती।[2] दर्द कम है। नायकर और उसकी माँ गये।

नवम्बर २२, सोमवार

जयन्तीके सिलसिलेमें आश्रममें एक अन्य सभा हुई।

नवम्बर २३, मंगलवार

डॉक्टर आये। मक्खनलाल गुप्ता आया।

नवम्बर २४, बुधवार

मामा राजकोट आदि जानेके लिए निकले।

नवम्बर २५, बृहस्पतिवार

डॉक्टर राजकोट गये। वालजी राजकोटसे आये।

नवम्बर २६, शुक्रवार

पाटीदार बोर्डिंगका चन्दूलाल पूरा दिन बिताकर गया।

नवम्बर ३०, मंगलवार

श्री देवले,[3] चिन्तामणि सखाराम आये।

१. इसे १५ नवम्बरकी टीपमें होना चाहिए, देखिए "भाषण: फीरोजशाह मेहताके निधनपर", १५-११-१९१५। **प्रजाबन्धु** द्वारा दी गई यह तारीख, नवम्बर ११, १९१५ के **गुजराती**में छपी रिपोर्टसे निश्चित कर ली गई है।

२. देखिए "भाषण: अहमदाबादमें राजचन्द्र जयन्तीके अवसरपर" २१-११-१९१५।

३. भारत सेवक समाजके सदस्य। देखिए "भाषण: वीरमगाँवमें", १-१२-१९१५।

दिसम्बर १६, बृहस्पतिवार

वीरमगाँव पहुँचा। ध्रांगध्रा छोड़ा। मोढ़ समाजकी ओरसे मानपत्र। वीरमगाँवमें सभा। डॉक्टर वीरमगाँवमें मिले। अदाने साथ छोड़ दिया। बम्बई गये। देवचन्दभाई गये। साँझको अहमदाबाद पहुँचा।

दिसम्बर १७, शुक्रवार

देवले और गोपालजी रवाना हुए।

दिसम्बर १८, शनिवार

बापुजीको आश्रम छोड़नेके लिए कहा।

दिसम्बर १९, रविवार

पोपटभाईके यहाँ मैंने और डॉक्टरने भोजन किया। उनमें और पूंजाभाईमें तनाव देखनेमें आया।

दिसम्बर २०, सोमवार

देवचन्दभाई अ . . . भाई, परमानन्द दास, चन्दुलाल आदि आये। बम्बई जानेके लिए विद्यार्थियों सहित निकला।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (जी० एन० ८२२१) से।

सौजन्य : गांधी स्मारक निधि

१४९. भाषण : सालेजमें[1]

जनवरी १, १९१६

आप मुझे जो सम्मान दे रहे हैं मैं उसके योग्य नहीं हूँ; मैं बैरिस्टर हूँ इसलिए इतना तो समझ सकता हूँ। किन्तु जो अज्ञानी होकर भी श्रद्धापूर्वक काम करते हैं, वे सम्मानके योग्य हैं। जिनमें श्रद्धा है उन्हें सम्मान देना चाहिए।

[गुजरातीसे]

गुजरात मित्र अने गुजरात दर्पण, ९-१-१९१६

१. यह भाषण गुजरातके सालेज नामक स्थानमें दिया गया था; सालेज दक्षिण आफ्रिकामें गांधीजीके सहयोगी प्रागजी देसाईका जन्म-स्थान।

१५०. भाषण : सूरतमें[1]

जनवरी २, १९१६

मुझे जो उद्घाटन-कार्य करना है, उसे मैंने इसी क्षण कर दिया है, ऐसा समझना चाहिए। यह मन्दिर जैसा सुन्दर है, आशा है वैसी ही सुन्दरता यहाँके मन्दिरवासियोंमें और यहाँ आनेवालोंके मनमें उत्पन्न होगी एवं यहाँके आर्यसमाजियों और उनके प्रेमियोंकी कीर्त्ति तो ऐसी होगी कि कदाचित् मन्दिर गिर भी जाये, वह उसके बाद भी बनी रहेगी। मेरी कामना है कि यह मन्दिर उन्नति करे और इसकी उन्नतिसे इस मन्दिरमें जो लोग आयें उनकी उन्नति हो।

[गुजरातीसे]

गुजरात मित्र अने गुजरात दर्पण, ९-१-१९१६

१५१. भाषण : सूरत आर्यसमाजके वार्षिकोत्सवमें

जनवरी २, १९१६

आपने आर्यसमाज मन्दिरके उद्घाटनकी रस्म अदा करनेके लिए मुझे यहाँ बुलाया है, इसके लिए मैं आपका आभारी हूँ। साथ ही मुझे इस उत्सवका अध्यक्ष बनानेके लिए मैं आर्यसमाज और सूरतके लोगोंका उपकार मानता हूँ। मैं आपको यह सूचित करना चाहता हूँ कि मैं आर्यसमाजी नहीं हूँ। इस बातको यह समाज और अन्य लोग भी जानते हैं। किन्तु मैं आर्यसमाजसे द्वेष भी नहीं रखता। मैं जिस तरह आर्यसमाजका सदस्य नहीं हूँ उसी प्रकार मैं किसी अन्य संस्थाका भी सदस्य नहीं हूँ। भारतमें इस तरहकी अन्य बहुत-सी संस्थाएँ हैं और वे यथाशक्ति सेवा करती हैं; किन्तु इस संस्थाके प्रति मेरे मनमें बहुत आदर-भाव है। मेरा हरद्वार गुरुकुलमें भाई श्री मुन्शीरामसे अच्छा सम्बन्ध हो गया है। वहाँ मेरे पुत्र और अन्य मित्र रहे थे।[2] और वहाँ उनको जो लाभ हुआ और उनको जो स्नेह मिला, वह भुलाया नहीं जा सकता। उसके कार्यके बारेमें मैं ही नहीं समस्त भारत जानता है। आर्यसमाजके संस्थापक स्वामी दयानन्द[3] एक असाधारण पुरुष हुए हैं और उनका मुझपर प्रभाव पड़ा है, यह मुझे स्वीकार करना चाहिए। मैं इस समाजके सम्बन्धमें अनेक स्थानोंमें

१. आर्यसमाज-मन्दिरका उद्घाटन करते हुए।

२. गुरुकुलमें फीनिक्सका एक दल कुछ समय तक रहा था और उसने १९१५ के कुम्भ मेलेमें भारत सेवक समाज (सर्वेंट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी) के स्वयंसेवक दलके साथ सहयोग भी किया था। बादमें गांधीजी भी इस दलमें शामिल हो गये थे देखिए **महात्मा** खण्ड १, पृष्ठ १९९।

३. (१८२४-१८८३); समाज-सुधारक और आर्यसमाजके प्रवर्त्तक।

चर्चा कर चुका हूँ। यदि इसमें कुछ परिवर्तन कर दिया जाये तो मेरे विचारसे यह समाज अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हो सकता है। एक बात तो यह है कि इस समाजके कुछ वक्ता वाद-विवाद करके कार्य-सिद्धिके लिए उत्साह प्राप्त करते हैं। किन्तु यह उद्देश्य वाद-विवादोंमें पड़े बिना भी सिद्ध हो सकता है। मैंने इस सम्बन्धमें हरद्वारमें बातचीत की थी और मैं आज यहाँ भी यही बात कहता हूँ। यह समाज जो कुछ करता है वह हिन्दू धर्मके कार्यसे भिन्न नहीं है। यदि आप देखें तो ब्रह्मसमाज, सिख-सम्प्रदाय, आदि विभिन्न समाजोंमें हिन्दू धर्मके ही तत्त्व समाविष्ट मिलेंगे केवल नामका ही भेद है। जैसे किसी बस्तीकी जन-गणनाकी जाती है तब विभिन्न लोगोंके नामोंकी तालिका बनाई जाती है उसी प्रकार इन संस्थाओंकी गिनती भी सार्वजनिक हितकी ही दृष्टिसे की जाती है। मूल तत्त्वोंकी खोज करें तो पता चलेगा कि किसी भी संस्थाके मूलतत्त्व हिन्दू धर्मके मूल तत्त्वोंसे भिन्न नहीं हैं। इस समय जो चर्चा चल रही है उससे इतना तो जान पड़ता है कि एक समय आयेगा जब समस्त हिन्दू संस्थाएँ हिन्दू धर्मके अन्तर्गत ही मानी जायेंगी। भारतमें हिन्दू, पारसी, मुसलमान आदि विभिन्न धर्म हैं फिर भी जब देश-सेवा करनेका प्रश्न आता है तब सब एकत्र हो जाते हैं। इससे आप देखेंगे कि धर्म-भावना तो सभीमें है। यह याद रखना चाहिए कि धर्म-भावनाके बिना कोई भी बड़ा कार्य नहीं हुआ है और न कभी भविष्यमें होगा। अब मुझे यहाँ कुछ विचार प्रकट करने हैं। उन्हें मैं प्रकट करूँगा। इससे मेरा स्वार्थ भी सधेगा और जो कार्य मुझे करना है वह भी सम्पन्न होगा। मुझे आज भाषणके लिए अभी आधा घंटा और फिर शामको एक घंटा दिया गया है। कुल मिलाकर डेढ़ घंटा हुआ। किन्तु इतने समय तक बोलना और उसे आपके मनपर अंकित करना मेरी शक्तिके बाहर है। मैं यह पसन्द करता हूँ कि भाषणके लिए कमसे-कम समय हो। भाषणोंका मुझे अच्छा अनुभव प्राप्त है। मैं गत ३० वर्षोंसे बहुत भटका हूँ। मैंने देखा है कि जहाँ बहुत अधिक बोला जाता है वहाँ काम बहुत कम किया जाता है। यह आरोप समस्त भारतपर किया जाता रहा है। ऐसा आरोप यूरोपीय अथवा पाश्चात्य लोग करते हैं; हम इस आरोपके योग्य नहीं हैं। इस तरहकी आलोचना एक कांग्रेस अधिवेशनमें भी की गई थी कि हम केवल भाषणों और प्रवचनोंसे तृप्त हो जाते हैं। हम इस स्थितिसे कब मुक्त होंगे? हम इस दृष्टिसे अत्यधिक दोषी हैं। और इसी कारण हमारी स्थिति विषम हो गई है। आप जानते हैं कि भारतमें बहुत भूख है और उसकी यह भूख आध्यात्मिक भोजनकी रही है। ऐसे सम्मेलनोंमें दिनके सात या आठ घंटे केवल भाषण सुननेमें ही निकल जायें तो फिर काम कब हो सकता है? हमने अपने जीवनका जितना समय भाषण सुननेमें बिताया है यदि उतना ही समय काम करनेमें लगाया होता तो आज भारतमें कितना काम हो चुका होता। हमने जितना समय भाषण सुननेमें गँवाया है उतना समय गणित करनेमें लगाया होता तो मेरा खयाल है कि आज भारत स्वराज्यकी सीढ़ियों-पर पहुँच गया होता। ऐसे सभा-मण्डपोंमें बैठकर भाषण और प्रवचन सुननेसे हमें स्वराज्य कभी नहीं मिलेगा। स्वराज्य तो आत्म-त्याग करने और योग्यता प्राप्त

करनेसे मिलेगा। मैं कांग्रेसमें और हरद्वारमें जहाँ भी गया, मैंने इस सम्बन्धमें चर्चा की है एवं आज जब यहाँ आपके सम्मुख बोलनेका अवसर मिला है, उसी बातको फिर आपके सम्मुख रखा है। मुझे जहाँ भी बोलनेका अवसर मिलता है वहाँ मैं अपनी बात संक्षेपमें ही कहता हूँ और आगे भी संक्षपमें ही कहूँगा। इसीलिए मैं अन्य वक्ताओंसे निवेदन करता हूँ कि वे भी ऐसा ही करें। सम्मेलनोंमें भाषणोंके लिए सात-सात घंटेका कार्यक्रम रखा जाता है। यदि यहाँ एकत्रित लोगोंको एक-एक कुदाली और फावड़ा दे दिया जाये और उनसे उतने ही समय तक वहाँकी जमीन खुदवाकर उसमें कुछ बो दिया जाये तो अगले वर्ष निश्चय ही अच्छी फसल होगी। यदि मैं आर्यसमाजके प्रतिनिधियोंको शहरमें ले जाऊँ और वहाँकी गन्दी जगहोंको उनसे साफ करवाऊँ तो सूरतके लोग उन्हें अवश्य ही धन्यवाद देंगे। हम पाश्चात्य लोगोंको देखते हैं कि वे भाषण देनेकी अपेक्षा काम करनेका अधिक प्रयत्न करते हैं। यदि आप लोग उनका अनुकरण करना चाहते हैं तो आप उनके गुणोंका अनुकरण करें। आप ऐसा करेंगे तो बहुत कुछ सीख सकेंगे। किन्तु यदि आप उनके विदेशी आचार-विचार ग्रहण करेंगे तो आप औंधे मुँह गिरेंगे। यदि हम आजका कार्यक्रम सात घंटेके बजाय चार घंटेका कर लें और इस प्रकार बचे हुए तीन घंटोंका उपयोग किसी कर्त्तव्य-कर्मके करनेमें लगायें तो यह अधिक उपयोगी होगा। यदि केवल भाषण सुननेसे कोई काम होता हो और हमारे कष्ट दूर होते हों तब तो फिर अनेक स्थानोंमें भागवतका पारायण होता है और उसे सुननेके लिए भी बहुतसे श्रोता जाते हैं। किन्तु प्रायः कई लोग वहाँ बैठे-बैठे ऊँघते रहते हैं। यदि केवल सुननेसे सब कुछ मिल जाये तो फिर अन्य कुछ कर्त्तव्य-कर्म करनेकी आवश्यकता नहीं रहती। ब्राह्मण कथा-पुराण बाँचते हैं उसीसे हमारा उद्धार हो जाये। इस प्रकार भारतके लोगोंको सुनने-सुनाने और अपना बखान करनेका बहुत चाव है। इसमें वे बिलकुल बौरा जाते हैं। इसके बजाय यदि मौन रखा जाये तो उससे बहुत-कुछ प्राप्त किया जा सकता है। [केवल] बोलनेसे किसी तरह भी गहरा विचार नहीं हो सकता। किन्तु यदि आप कोई कार्य करें तो उसपर कुछ-न-कुछ चर्चा होगी और उसमें से लोग सार-असार ग्रहण कर सकेंगे। इसलिए मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि आप कृपा करके प्रत्येक उपलब्ध क्षणका उपयोग कर्त्तव्य-कर्म करनेमें करें। एक महात्माने कहा है कि यदि कभी आपके मस्तिष्कमें एक साथ बहुतसे विचार उत्पन्न हों तो उनसे भ्रमित न हों। आप उनपर तुरन्त अमल न करें। उन्हें एक रात मनमें डाले रहें और उनपर मनःपूर्वक अच्छी तरह तर्क-वितर्क करें एवं उसके बाद जो निकम्मे जँचें उन्हें छोड़कर बाकीके सम्बन्धमें अपनी पत्नीसे वाद-विवाद और विचार-विनिमय करें। इस प्रकार जो विचार निकम्मे हों उन्हें काट-छाँटकर अलग कर लें और अन्तमें जो विचार शेष रहे उसे अपने अन्तःकरणसे परख-कर यदि सत्य लगे तो उसपर अमल करें और संसारके सम्मुख रखें। उसपर अमल करते समय आपके ऊपर चाहे जितने प्रहार किये जायें, आप डरें नहीं। इस प्रकार परिपक्व विचार-ही अमलके योग्य हो सकता है। परिपक्व विचारको अमलमें लानेसे व्यर्थ समय नष्ट नहीं होता। मैं विनयपूर्वक कहूँगा कि प्रत्येक कार्यको प्रारम्भ करनेसे पूर्व उसपर

विचार करना आवश्यक है। यदि मैं आपसे यह कहूँ, ऐसा करना चाहिए और ऐसा ही करो तो यह मेरी धृष्टता होगी। इसके अतिरिक्त केवल कहनेसे उसपर अमल नहीं होता। इसलिए मैं आपसे आज जो-कुछ कहता हूँ वह तो केवल अपने अनुभवकी बात कहता हूँ। अतः मेरी विनम्र प्रार्थना है कि इसमें जो सत्य हो आप उसीको स्वीकार करें। आप पाश्चात्य देशोंका अनुकरण करें, इसकी अपेक्षा तो यह अधिक लाभप्रद होगा कि वे जो कुछ आपके सम्मुख रखें, आप उसको अस्वीकार कर दें। यदि आप विचार करेंगे तो आपको पता चलेगा कि यूरोपमें लोगोंको हमारे देशकी तरह भाषण सुननेका अवकाश नहीं है। उन्होंने जितनी उन्नति की है उतनी उन्नति करनेके लिए हमें सरकारसे कुछ अधिकार माँगने और लेने होंगे। इन अधिकारोंको प्राप्त करनेके लिए हमें संघर्ष करनेकी आवश्यकता होगी। इस समय आप लोग मुझे जो सम्मान दे रहे हैं वह, मैंने भारतीयोंके अधिकारोंकी प्राप्तिके लिए सरकारसे जो संघर्ष किया था और उस सम्बन्धमें जो कष्ट उठाये थे, उनको दृष्टिमें रखकर दिया जा रहा है; और मैं यह बात जानता हूँ। इन अधिकारोंकी प्राप्तिके लिए हमें योग्य बननेकी आवश्यकता है। इसलिए आप उनके योग्य बननेके लिए पढ़ें, उनपर विचार करें और फिर उनका अनुसरण करके, सचाईके रास्तेपर चलते हुए सरकारसे लड़नेके योग्य बनें। यदि इस कर्त्तव्य-पालनमें इस समाजके प्रतिनिधि पहल करेंगे तो यह बहुत लाभप्रद बात होगी। यह कहकर मैं आपसे अपना स्थान ग्रहण करनेकी अनुमति लेता हूँ।

अपने बादके वक्ताओंके भाषणोंमें कही गई कुछ बातोंका उत्तर देते हुए गांधीजीने कहा :

आज आपने मेरी एक छोटीसी प्रार्थनाको मानकर लम्बे-लम्बे भाषण न देकर मेरे लिए बहुत सुविधा कर दी है; किन्तु इतना ही काफी नहीं है। यदि आप मुझे यह आश्वासन देंगे कि आप सदा ऐसा ही करेंगे तो मुझे अधिक प्रसन्नता होगी। पण्डित रामचन्द्रने अपने भाषणमें मुझसे एक गम्भीर प्रश्न किया है। उन्होंने मुझसे यह बतानेका अनुरोध किया है कि आर्यसमाजका कार्यक्रम किस प्रकार अधिक उपयोगी और लोकप्रिय बनाया जा सकता है। यह प्रश्न यहीं नहीं उठाया गया है। मैं जब हरद्वारमें था तब भी इस प्रश्नपर चर्चा की गई थी। इस समय इतना समय नहीं है कि मैं इस प्रश्नका उत्तर दे सकूँ; इसलिए यदि पण्डितजी अहमदाबादमें मेरे स्थानपर आयें तो मैं उनसे इस विषयमें विचार-विमर्श करूँगा। इसी प्रकार इस मामलेमें जो विरोधी हैं उनकी राय भी लेनी होगी। मेरे स्वर्गीय गुरु श्री गोखलेने मुझे यह स्पष्ट आदेश दिया था कि मैं ऐसे विवादोंमें न पड़ूँ, इसलिए मैं इस विवादमें नहीं पड़ता। किन्तु यह विवाद किसी दूसरेका नहीं है। मैं इस समाजके लोगोंको अपना मित्र मानता हूँ, इसलिए मुझे उन्हें सलाह देनी है। मैं घन और निहाईके बीच ठुक-पिटकर निकला हूँ, इसलिए अपना अनुभव अपने मित्रोंको बताना मेरा धर्म है। हमें भारतकी उन्नतिके लिए दिन-प्रतिदिन प्रयत्न करते रहना चाहिए।[1]

१. गुजरात मित्र अने गुजरात दर्पणसे ।

बालकृष्ण नामक एक वक्ताने गांधीजीकी विवादोंसे बचनेकी सलाहका विरोध किया था। उनके तर्कोंका उत्तर देते हुए गांधीजीने कहा :

अपने गुरु श्री गोखलेके निर्देशके अनुसार मैं किसीके साथ वाद-विवादमें नहीं पड़ना चाहता। नया वर्ष आरम्भ हो रहा है, अतः मैं उनके इस निर्देशका स्मरण पुनः करता हूँ। चूँकि यह प्रश्न उठा है, इसलिए मैं इतना ही कहता हूँ कि यह प्रश्न बहुत ही नाजुक है और इसी कारण विचार-विमर्शके बिना इसका उत्तर नहीं दिया जा सकता। मेरे मनमें किसीके प्रति पक्षपात नहीं है। यदि मैं यह अनुभव करूँ कि मैं समाजका सदस्य बनकर भारतकी अधिक सेवा कर सकता हूँ तो मैं उसका सदस्य बन जाऊँगा और जब मैं ऐसा अनुभव करूँगा तब तुरन्त सार्वजनिक रूपसे वैसा कहूँगा। फिलहाल, मैं श्री बालकृष्णको कोई उत्तर नहीं दे सकता। किन्तु यदि वे किसी समय अहमदाबाद आयें तो मैं इस सम्बन्धमें उनसे बातचीत करूँगा। और उनका परितोष करूँगा।[1]

[गुजरातीसे]

गुजरात मित्र अने गुजरात दर्पण, ९-१-१९१६

गुजराती, ९-१-१९१६

१५२. भाषण : सूरतमें अंग्रेजीके स्थानके बारेमें[2]

जनवरी ३, १९१६

यह बहुत आश्चर्यकी बात है कि अंग्रेजीमें भाषण देनेवाले छात्र यह भी नहीं सोचते कि वे जिन लोगोंके सम्मुख भाषण दे रहे हैं वे उनके भाषणको समझ सकेंगे या नहीं। वे यह विचार भी नहीं करते कि जो अंग्रेजी समझ सकते हैं उन्हें उनकी यह टूटी-फूटी अशुद्ध अंग्रेजी सुनकर अच्छा लगेगा या बुरा। नवयुवक अपनी मातृभाषासे पराङ्मुख होकर विदेशी भाषाके ऐसे प्रगाढ़ अनुरागी हो जायें, सचमुच यह खेद-जनक स्थिति है। देशमें नवयुगका आरम्भ विदेशियोंके संसर्गसे हुआ है। ऐसा कहनेवाले लोग अपने नये विचार अपने पास-पड़ोसके लोगोंको समझानेकी कितनी चिन्ता करते हैं? उन्हें यह अवश्य देखना चाहिए कि जिस भाषाको उनके माता-पिता नहीं जानते, जिस भाषाको उनके भाईबन्द नहीं समझ सकते और जिस भाषाको उनके नौकर-चाकर, स्त्री-पुरुष या सगे-सम्बन्धी भी नहीं समझते उस भाषामें बड़बड़ करनेसे नवयुग पास आयेगा या दूर खिसकेगा? कुछ लोगोंका यह भी खयाल है कि अंग्रेजी हमारे देशकी भाषा है और आगे-पीछे यही भाषा देशके सब लोगोंकी भाषा बन जायेगी। किन्तु यह खयाल मुझे सही नहीं जान पड़ता। मुट्ठी-भर अंग्रेजी पढ़े लोगोंको ही हम अपना देश मान लें तो कहना पड़ेगा कि हम देश शब्दका अर्थ नहीं समझते। मुझे तो यह विश्वास है कि तीस करोड़ लोग अंग्रेजीके जानकार हो जायेंगे और अंग्रेजी

१. गुजरातीसे।
२. जैन छात्र-पुस्तकालयके उद्घाटनके अवसरपर।

देशकी भाषा बन जायेगी, यह असम्भव ही है। जिन लोगोंको कोई नया ज्ञान या नया विचार प्राप्त करनेका सौभाग्य मिला है उन्हें अपने विचार अपने सम्बन्धियों और अपने देशवासियोंको [उनकी अपनी भाषामें] अवश्य समझाने चाहिए। जो युवक यह कहते हों कि वे अपने विचारोंको अपनी भाषामें ठीक-ठीक व्यक्त नहीं कर सकते उन युवकोंके सम्बन्धमें मैं तो यही कहूँगा कि वे अपनी मातृभूमिके लिए भार-स्वरूप हैं। किसी भी माँके सपूतको यह शोभा नहीं देता कि उसकी मातृभाषामें अपूर्णता हो तो उसे दूर करनेके बजाय वह उसका अनादर करने लगे और उसकी ओरसे मुँह फेरकर बैठ जाये। यदि हमारी वर्तमान पीढ़ी अपनी मातृभाषाकी उपेक्षा करेगी तो भावी पीढ़ियोंको उसके व्यवहारपर खेद प्रकट करना पड़ेगा। वह भावी पीढ़ियोंकी निन्दासे कभी बच नहीं सकेगी। आशा है, यहाँ बैठे हुए समस्त छात्र यह प्रतिज्ञा करेंगे कि वे अपने घरमें अंग्रेजीमें बातचीत नहीं करेंगे, विशेष आवश्यकता होगी तभी ऐसा करेंगे।

बच्चोंके माता-पिताओंको भी थोड़ा सावधान रहना चाहिए और जमानेकी बाढ़में वह नहीं जाना चाहिए। हमें अंग्रेजी भाषाकी आवश्यकता है; किन्तु अपनी भाषाका नाश करनेके लिए नहीं। हमारे समाजका सुधार हमारी अपनी भाषासे ही हो सकता है। हमारे व्यवहारमें सरलता और उत्कृष्टता भी हमारी अपनी भाषासे ही आयेगी। छात्रों और उनके माता-पिताओं सभीको अपनी भाषाका विस्तृत ज्ञान रखनेकी कोशिश करनी चाहिए। आज मुझसे जिस पुस्तकालयका उद्घाटन कराया जा रहा है वह पुस्तकालय यदि हमारी भाषाको परिपुष्ट करनेके बजाय क्षीण करनेवाला सिद्ध हो तो मुझे इस स्थितिका ज्ञान होनेपर अवश्य ही खेद होगा।

[गुजरातीसे]

गुजराती, १६–१–१९१६

१५३. भाषण: युवक-मण्डल, सूरतमें[1]

जनवरी ३, १९१६

हृदयसे हृदय मिल जानेपर अधिक क्या कहा जा सकता है? मैं जब दक्षिण आफ्रिकामें था, तभी मुझे कई लोगोंने कहा था कि जब आप भारत जायेंगे तब आपके काममें दूसरे लोग चाहे मदद न करें; किन्तु वहाँ एक पाटीदार[2] युवक-मण्डल है वह अवश्य सर्वप्रथम सहायता करेगा। इसलिए भारत आनेपर जल्दीसे-जल्दी इस संस्थासे मिलनेकी मेरी इच्छा थी; मुझे इससे मिलकर बहुत सन्तोष हुआ है। मण्डल मेरी कितनी सहायता करेगा यह तो समय आनेपर ही मालूम होगा; किन्तु निश्चय ही उसमें चरित्रशील व्यक्ति हैं।

[गुजरातीसे]

गुजराती, ९–१–१९१६

१. सूरत जिला पाटीदार युवक-मण्डल द्वारा दिये गये मानपत्रका उत्तर देते हुए।
२. गुजरातकी एक खेती-पेशा जाति।

१५४. भाषण: सूरत आर्यसमाजके उत्सवमें[1]

जनवरी ३, १९१६

भाइयो और वहनो,

मुझे आज यहाँ दो वजे पहुँचना था, किन्तु मैं उस समय नहीं पहुँच सका। आप इसके लिए मुझे क्षमा करें। मैं जहाँ जाता हूँ, मेरी स्थिति विपम हो जाती है। एक या दो दिन ही मेरा मुकाम होता है, इसी समयमें मुझे वहुतसे लोगोंसे मिलना होता है और वहुत-सी जगहें देखनी होती हैं; इसलिए मैं सदा वक्तकी पावन्दी नहीं रख पाता। फिर मैं किसीसे मिलनेसे इनकार भी नहीं कर सकता। कल मुझे एक विपयपर भापण देनेके लिए कहा गया था; किन्तु उस विपयपर वोलना ठीक नहीं लगा। आज भी मुझे उसी विपयपर वोलनेके लिए कहा गया है इसलिए आपकी इच्छाके अनुसार मैं उसीपर जो थोड़ेसे विचार व्यक्त कर सकूँगा, आपके सामने रखूँगा। भारतमें हमें आज सभी लोग भयभीत दिखाई देते हैं, यहाँतक कि वाप वेटेसे और वेटा वापसे खुलकर वातचीत नहीं कर सकता। इसीलिए आज सच वोलना कठिन हो गया है। जवतक भयकी यह स्थिति रहती है तवतक सत्य वोलना कठिन है। प्रत्येक व्यक्तिको सदा यही भय वना रहता है कि उसकी वात दूसरे व्यक्तिको प्रिय लगेगी या नहीं। यह स्थिति जवतक कायम रहेगी तवतक सत्य नहीं वोला जा सकता। जवतक भयकी यह स्थिति है तवतक हम पिछड़े हुए ही रहेंगे और हमें उसके दुष्परिणामोंका ही सामना करना होगा। वर्तमान वातावरणको देखते हुए ऐसा जान पड़ता है कि लोग कुछ करनेके लिए उत्सुक हैं। किन्तु यह कुछ क्या हो? मुझे कहना चाहिए कि कोई भी काम करो, उसमें आनेवाले कष्ट तो सहने ही होंगे; किसी कामको हाथमें लेनेसे पूर्व हमें यह निश्चय करना होगा कि हमें किस मार्गका अवलम्बन करना चाहिए। और तव हमें निर्भय होकर उस मार्गपर चल पड़ना चाहिए। हमें तो एक सिपाहीसे भी भय लगता है। हम स्टेशन मास्टरसे भी डरते हैं। हमें यह डर क्यों लगता है? वे अधिकारी अवश्य हैं; किन्तु एक तरहसे देखें तो वे हमारे नौकर हैं, क्योंकि वे लोगोंके पैसेसे नौकर रखे गये हैं। तव हमने जिन्हें नौकर रखा है उनसे हमें डरना किसलिए चाहिए? भीरुताका यह आरोप निडर हुए विना नहीं हटेगा। सच कहें तो डरनेवाला व्यक्ति स्वयं ही डरता है; उसको कोई डराता नहीं है। यदि आप वाघ जैसे हिंस्र पशुके सम्मुख निडर होकर खड़े हो जायें तो वह आपके साथ खेलने लगेगा; किन्तु यदि आप डरकर भागें तो वह आपको मार डालेगा। उदाहरणार्थ, यदि आप कुत्तेके भौंकनेपर भागेंगे तो वह आपके पीछे लगेगा और यदि निडर होकर उसके सम्मुख खड़े हो जायें तो वह दुम हिलाने लगेगा। वास्तवमें देखें तो अधिकारी हमारे नौकर हैं। उनसे हमें डरना नहीं चाहिए। किन्तु साथ ही उनसे

१. उत्सवके दूसरे दिन।

अशिष्ट व्यवहार भी न करना चाहिए। नम्रतापूर्ण व्यवहार तो नौकरोंसे भी करना चाहिए। हमें सत्यके मार्गपर चलते हुए निर्भय रहना चाहिए। डरपोक स्वयं डरता और दूसरोंको डराता है। यह स्थिति [व्यक्तियोंमें ही नहीं] कुटुम्ब और समाजमें भी देखी जाती है। तब हम सुधार करनेकी आवाज कहाँ उठायें? यदि कोई व्यक्ति अपनी जातिमें सुधार करना चाहता है तो वह दूसरे लोगोंके सम्मुख सिर्फ उनकी चर्चा करता है, और कहता है, इन सुधारोंको करनेकी आवश्यकता तो है; किन्तु भाइयो, आप हमारी जातिके लोगोंको तो जानते हैं। वे लोग आसमान सिरपर उठा लेंगे। किन्तु इस प्रकार डरकर बैठ रहना तो हमारे पौरुषकी कमी ही है; अपनी बेटीके दु:खको जितना हम अनुभव करते हैं उतना जातिके लोग नहीं कर सकते। मैं अपनी जातिका व्यवहार जानता हूँ। घर-घर मिट्टीके चूल्हे हैं। सभी जातियोंमें माँ-बाप अपनी लड़कियोंके सम्बन्धमें बहुत भयभीत हैं। इस सम्बन्धमें आवश्यक सुधार करने ही चाहिए। यदि ऐसा नही किया जाता है तो आर्यसमाज जैसी संस्थाओंका क्या अर्थ है? अखा कविने कहा है: "सुतर आवे तेम तू रहे, ने जेमतेम करीने हरीने लहे" हमें जैसे बने अपने कामके माध्यमसे हरिको प्राप्त करना है। हम जबतक आत्माको नहीं चीन्हते, तबतक हरिको प्राप्त नहीं कर सकते। यह देश बोलनेमें सबसे आगे और कर्त्तव्यमें सबसे पीछे है; किन्तु देशपर से यह आक्षेप हटाना जरूरी है। मुझे दक्षिण आफ्रिकामें अनुभव हुआ है कि वक्ता सभा-सम्मेलनोंमें खुलकर जीभका प्रयोग करते थे। वे अपने भाषणोंमें जेल जानेका निश्चय बताते; किन्तु जब कसौटीपर चढ़नेका समय आता तो वे निकल भागते। बोलते वक्त रंग अलग होता है और काम करते वक्त अलग। काम करते वक्त भय आकर हृदयमें पैठ जाता है; इसलिए वे जबतक भयको हृदयसे निकाल नहीं देते तबतक आर्थिक या धार्मिक उन्नति कभी नहीं कर सकते। जब भय निकल जायेगा तभी भारतमें सच्चा जीवन बिताना सम्भव होगा। भारतमें ३० करोड़ लोग रहते हैं। इनमें से कुछ लोग भी आगे आयें तो वे बाकीके लोगोंका नेतृत्व कर सकते हैं। एक खरे सिक्केका मूल्य हजारों खोटे सिक्कोंसे अधिक होता है। इतना कहकर मैं अपना स्थान ग्रहण करनेकी अनुमति चाहता हूँ। मैं यह कहना चाहता हूँ कि मुझे अभी दूसरी जगह जाना है, इसलिए कृपा करके मुझे जानेकी अनुमति दे दें और उत्सवका कार्य जारी रखें।

[गुजरातीसे]

गुजरात मित्र अने गुजरात दर्पण, ९-१-१९१६

१५५. भाषण: सूरतके स्वागत-समारोहमें[1]

जनवरी ३, १९१६

भाइयो और बहनो,

आज यहाँ मैं अपनी प्रशंसा सुन-सुनकर थक गया हूँ और मुझे विश्वास है कि समय अधिक हो जानेसे आप भी ऊब गये होंगे। इसलिए आपकी इच्छा लम्बा भाषण सुननेकी नहीं होगी। आप सब लोग 'नहीं, नहीं' कहते हैं, यह तो ठीक है। और मैं समझता हूँ कि यह तो भारतकी संस्कृतिका द्योतक है। आपने मेरी पत्नीके सम्बन्धमें जो भाव प्रकट किये हैं उनके लिए मैं बहुत आभारी हूँ। मेरे सम्बन्धमें और मेरी पत्नीके सम्बन्धमें जो भाव व्यक्त किये जाते हैं उनका कारण जहाँतक मैं जानता हूँ, यह है कि महान् आत्मा श्री गोखलेने भारतमें मेरे सम्बन्धमें जो भाव व्यक्त किये थे[2] वे यहाँ अभीतक गूँज रहे हैं। दक्षिण आफ्रिकामें जेल जानेवाले अकेले व्यक्ति सिर्फ हम दो ही न थे, बल्कि बहुतसे दूसरे लोग भी जेलमें गये थे। वनिता-विश्रामकी[3] एक १७ वर्षीय युवती भी जेल गई थी और उसका पति भी जेल गया था। उसका पति जेलमें बीमार हो गया और इस संसारसे विदा हो गया। भारतमें जो व्यक्ति सामने पड़ जाये उसका सम्मान करनेकी प्रथा ही बन गई है। भारतमें जागृति उत्पन्न करनेकी आवश्यकता है। इस देशमें जबतक जागृति न होगी तबतक प्रगति नहीं हो सकती। देशमें जागृति उत्पन्न करनेके लिए उसके सम्मुख कोई कार्यक्रम रखा जाना चाहिए। अब इस सम्बन्धमें प्रश्न यह उठता है कि लोगोंमें जागृति कैसे उत्पन्न हो और समझ कैसे आये। मेरे पास इसकी एक कुंजी यह थी कि मुझे जिन लोगोंसे काम लेना था मैंने पहले उनकी भाषा सीखी। मैंने उन्हें उनकी भाषामें अपनी स्थिति बताई और उनसे उस स्थितिमें उपयुक्त व्यवस्था पूछी। इसीसे उन्हें मेरी स्थितिका भान हुआ और वे मेरी सहायता करने लगे। दूसरी एक बात यह है कि मैं जब जेलसे आया तब मुझे एक पत्र मिला; उसमें मुझसे प्रश्न किया गया था कि सभी नेतागण चले गये हैं; अब आप अकेले क्या करेंगे? किन्तु आश्चर्यकी बात है बिना किसी नेताके २०,००० लोग उत्साहमें भरकर उठ खड़े हुए। मुझे इसका अनुभव है। सब चले जायें तब भी क्या होता है? इसलिए यदि आप भारतके हितका कार्य करना चाहते हैं तो भारतके ३० करोड़ लोगोंको प्राथमिक शिक्षा दीजिये। प्राथमिक शिक्षासे मेरा तात्पर्य वर्तमान प्राथमिक शिक्षासे नहीं है, बल्कि इस समय जिस ज्ञानकी आवश्यकता है उस ज्ञानसे है। आप उन्हें वह ज्ञान दीजिए। उन्हें यह ज्ञान दीजिए कि भारतमें गरीबी क्यों बढ़ती जाती है। गरीब, बिना पढ़े-लिखे लोगोंको जानना चाहिए कि उनके हाथसे सब काम निकलते जा रहे हैं; गरीबी आनेका कारण यही

१. जिला वकील संघके तत्त्वावधानमें आयोजित।

२. जब गांधीजी दक्षिण आफ्रिकामें थे तब।

३. एक कन्या-पाठशाला।

है। गरीबी आनेसे लोग भीरु हो जाते हैं; इसलिए वे सिपाही-जैसे छोटे राज-कर्मचारीसे भी डरते हैं। आज भारतमें भयकी स्थिति ऐसी है कि बेटा बापसे और बाप बेटेसे भयभीत रहता है। इस स्थितिके निवारणके लिए यथार्थ ज्ञान उत्पन्न किया जाना चाहिए। मुझे यह ज्ञान सन् १८९६ में स्वर्गीय श्री गो० कृ० गोखलेकी सलाहसे मिला था। सूरत वीरोंका नगर है। वह नर्मद[1] कविके आशीर्वादसे अमर है। इस नगरपर आग और बाढ़के अनेक बार संकट आये हैं। फिर भी यह निष्पक्ष होकर चल रहा है। इसी सूरत नगरसे गये हुए श्री अहमद मुहम्मद[2] और सोराबजी शापुरजी[3] दक्षिण आफ्रिकामें बहुत ही वीरतापूर्वक लड़ते हुए अनेक बार जेल गये थे; किन्तु फिर भी उन्होंने हिम्मत नहीं हारी। ऐसे-ऐसे वीर लोग सूरतके ही हैं। इस सूरत नगरके प्रति मेरे मनमें बहुत आदर-भाव है। मैं जब भारतमें आया तब मैं सर्वप्रथम सूरत ही आनेवाला था, किन्तु कुछ अकल्पनीय संयोगोंके कारण यहाँ नहीं आ सका। आज सूरतके लोगोंने मेरे ऊपर जो प्रेम-वर्षा की है उसके लिए मैं उनका अत्यन्त आभारी हूँ। मैं आशा करता हूँ कि जब-जब मुझे आपसे काम पड़ेगा तबतब आप मेरे प्रति ऐसा ही प्रेम दिखायेंगे और मुझे सहायता देंगे। मैं जो-कुछ कमाकर लाया हूँ उस सबको यहाँ खर्च नहीं करूँगा। क्योंकि मैं बनिया हूँ। मैंने यह कमाई जहाँ की है इसे वहींकी भलाईके लिए खर्च करूँगा। मैं आपसे अपने लिए धन नहीं माँगता। मैं आपसे अगर कुछ माँगता हूँ तो वह स्वर्गीय श्री गोखलेके स्मारकके निमित्त बनाये कोषमें देनेके लिए। मैं काठियावाड़के नगरोंमें से तेरह-चौदह हजार रुपया इकट्ठा कर लाया हूँ। सूरत नगरसे भी मुझे एक अच्छी रकम मिलनेकी आशा है। जहाँतक मैंने सुना है, इस सम्बन्धमें सूरतने कुछ नहीं किया है। मैंने आज जिला-जज श्री अडवानीसे भेंट की थी और इस सम्बन्धमें चर्चा की थी। उन्होंने बताया, इस सम्बन्धमें यहाँ अभीतक कुछ नहीं किया गया है। किन्तु यदि कुछ किया जाये तो अच्छा हो। मैं इस कार्यको बढ़ावा देना चाहता हूँ और इसमें अपनी ओरसे ५० रुपयेकी रकम देता हूँ। यह काम कितना उपयोगी है, यह बात आप सभी लोग जानते हैं। श्री गोखले अपने पीछे हमें जो कुछ विरासतमें दे गये हैं उसको कायम रखना आवश्यक है। इसीलिए छोटे-बड़े सभी जिसे जितना उचित लगे उतनी रकम इस कोषमें दें। सूरतके सम्बन्धमें कहा गया है कि वह सुस्त है; किन्तु जब वह जग जाता है तो दूसरा कोई नगर जितना कर सकता है उतना कर दिखाता है। अन्तमें सूरतके लोगोंने मेरे प्रति जो प्रगाढ़ प्रेम दिखाया है उसके लिए एक बार फिर उपकार मानता हूँ और अपना स्थान ग्रहण करनेकी अनुमति चाहता हूँ।

[गुजरातीसे]

गुजरात मित्र अने गुजरात दर्पण, ९-१-१९१६

१. गुजरातके प्रथम आधुनिक कवि नर्मदाशंकर लालशंकर दवे।

२. काछलिया।

३. अडाजानिया; पारसी समाजसेवक और सत्याग्रही जो दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रहमें जेल गये और निर्वासित किये गये, देखिए खण्ड ११, पृष्ठ ६, पा० टि० १।

१५६. भाषण: सूरतके मुहम्मडन असोसिएशनमें[1]

जनवरी ३, १९१६

इस समारोहसे मुझे दक्षिण आफ्रिकाकी याद आ जाती है। वहाँ हिन्दू, पारसी और मुसलमान सभी एक हो गये थे। मैं भारतमें सभी स्थानोंमें घूमा हूँ। इस भ्रमणमें मैंने हिन्दुओं और मुसलमानोंके बीच जो भाईचारेकी भावना देखी, वह मुझे यहाँ सूरतमें भी दिखाई देती है। यहाँ मुझे अपने दक्षिण आफ्रिकाके पुराने साथी मिले। इनमें से अब्दुल कादिर बावजीरने मेरे साथ रहकर बहुत कष्ट उठाये थे। मैं इस सम्बन्धमें बोलूं तो बहुत समय निकल जायेगा, किन्तु इतना समय है नहीं। इसलिए मैं आपको संक्षेपमें यह बताऊँगा कि मैं जब भारतमें आया तब मेरी इच्छा यह थी कि मैं हिन्दू-जाति और मुसलमान जातिकी सेवा समान रूपसे करूँ। हमें भारतमें जो काम करने हैं वे तभी सफल होंगे जब यह समझा जाने लगेगा कि हिन्दू, मुसलमान और पारसी भाई सभी एक हैं, बड़ी जातियोंको झगड़ना नहीं चाहिए। ऐसा समझ लिया जाये तो अधिक अच्छा हो। दोनों जातियोंके नेताओंको यह समझना चाहिए कि वे एक ही जातिके हैं और वैसा समझकर तदनुसार आन्दोलन करना चाहिए। इन जातियोंमें भाईचारा बढ़नेसे आपकी उत्साह-वृद्धि हो सकेगी। दक्षिण आफ्रिकामें हिन्दू और मुसलमान भाई-भाईकी तरह रहते हैं। यदि कोई उचित संघर्ष आरम्भ किया जाये तो उसमें समाज बिना किसीके सहयोगके भी जीत सकता है। खुदाका नाम-भर लेनेसे हमारा उद्धार हो सकता है। यदि हम दोनों जातियोंके लोग हिलमिलकर चलेंगे तो हमें जो कुछ मिलना चाहिए वह हमें अवश्य ही मिलेगा। इसलिए हमें मनमें डर रखकर नहीं, बल्कि सदा समभाव रखकर चलना है। अन्तमें मैं मानपत्रमें और मौखिक रूपसे की गई प्रशंसाके लिए आभार मानता हूँ और चाहता हूँ कि मैं हिन्दू और मुस्लिम जाति-में कोई भेद न मानूं एवं ईश्वर मुझे ऐसी सद्बुद्धि दे कि मैं इन दोनों जातियोंकी सेवा करता रहूँ। मैं यह भी चाहता हूँ कि इसके लिए आप भी यही प्रार्थना करें।

[गुजरातीसे]

गुजरात मित्र अने गुजरात दर्पण, ९-१-१९१६

1. सैयदपुरा मुहम्मडन असोसिएशन और इस्लामिया पुस्तकालय द्वारा भेंट किये गये मानपत्रके उत्तरमें।

१५७. भाषण: कठोड़में[1]

जनवरी ४, १९१६

जिन-जिन जगहोंमें सत्याग्रहियोंने जन्म लिया है उन-उन जगहोंको मैं तीर्थ-स्थान मानता हूँ, इसलिए मैं इस स्थानको तीर्थ मानकर ही यहाँ आया हूँ। स्वर्गीय श्री हुसेन दाऊद[2] जैसे लोग देशमें हों तो भारतका बहुत हित-साधन हो सकता है। यदि आप उनके उदाहरणका अनुकरण करेंगे तो आप बहुत-कुछ कर सकेंगे। मैं सूरतमें कलेक्टर श्री हडसनसे मिलने गया था। मैंने उनसे कहा कि वे दक्षिण आफ्रिका जानेवाले लोगोंकी सहायता करें। इसपर श्री हडसनने कहा कि जो लोग झूठ बोलकर झूठे प्रमाणपत्र ले जाना चाहते हैं वे उनकी सहायता कैसे कर सकते हैं। इसलिए मैं आपसे कहता हूँ कि आप ऐसा न करें। दक्षिण आफ्रिकामें जाकर कुछ लड्डू नहीं मिल जायेंगे। भारतमें ईमानदारीसे जो-कुछ मिल सके वही प्राप्त करना उचित है। आपने मुझे इस समय जो सम्मान दिया है उसे मैं सार्थक तभी मानूंगा जब मुझे दूसरी बार यहाँ आनेपर ऐसा जान पड़े कि मैंने जो कुछ कहा था आपने उसपर अमल किया है।

अन्तमें गांधीजीने हिन्दुओं और मुसलमानोंसे मिलकर काम करनेको कहा।

[गुजरातीसे]

गुजरात मित्र अने गुजरात दर्पण, ९-१-१९१६

१५८. भाषण: मोटा वराछामें[3]

जनवरी ४, १९१६

मैं यहाँ अपने एक पुराने मित्रसे मिलनेके लिए आया हूँ। मैंने सभी जगह अपनी यह हार्दिक इच्छा प्रकट की है कि हिन्दुओं और मुसलमानोंको संगठित होना चाहिए। मैं यह आशा करता हूँ कि ये दोनों जातियाँ मेरी सहायता करेंगी। जब मैं बैलगाड़ीमें बैठकर कठोरसे यहाँ आया था तब मुझे जल्दी थी। जल्दी आना था इसलिए मुझे स्वार्थवश बैलोंको पिरानीसे मारना ठीक लगा; किन्तु हिन्दू धर्ममें यह कहा गया है कि गाय और बैलको मारना नहीं चाहिए। इस्लामकी धर्म-पुस्तकमें भी दया-भाव रखनेका विधान है। मुझे लगा कि बैलोंको आर लगी पिरानीसे मारना निर्दयता है। इंग्लैंडमें यह दण्डनीय अपराध है। किन्तु यहाँ इसपर कोई सजा नहीं दी जाती। दोनों जातियोंके धर्मग्रन्थोंका आदेश है कि तुच्छ जीवोंके प्रति भी निर्दयता नहीं बरतनी

१. गुजरातमें सूरतके समीप एक छोटा कस्बा। नेटाल भारतीय संघके अध्यक्ष श्री दाऊद मुहम्मदका जन्मस्थान।

२. दाऊद मुहम्मदका पुत्र, जिससे गांधीजी बहुत स्नेह करते थे। देखिए खण्ड १२, पृष्ठ २१५-१७। उसकी अंतिम इच्छा थी कि गांधीजी कभी कठोड़ अवश्य जायें।

३. गुजरातमें सूरतके समीपका एक गाँव

चाहिए। मुझे भी ईश्वरके सम्मुख इसके लिए उत्तर देना पड़ेगा। यदि आप पिरानीमें से आर निकाल देंगे तो बादमें जब कभी मैं यहाँ आऊँगा मुझे उससे सन्तोष होगा। किन्तु यदि तबतक भी आपने आर न निकाली तो मैं बैलगाड़ीमें बैठनेकी अपेक्षा पैदल आना अधिक पसन्द करूँगा। निर्बल प्राणियोंपर प्रहार न करना चाहिए। ध्यान रखना चाहिए कि हम अपनेपर प्रहार करनेवालेको बुरा-भला कहते हैं। अन्तमें आपने मेरे प्रति जो प्रेमभाव दिखाया है, उसके लिए मैं कृतज्ञता प्रकट करता हूँ।

[गुजरातीसे]

गुजरात मित्र अने गुजरात दर्पण, ९-१-१९१६

१५९. भाषण : नवसारीमें[1]

जनवरी ५, १९१६

सज्जनो, मुझे दुःख है कि मैं कल आपकी सेवामें उपस्थित न हो सका और आप सबको निराश लौटना पड़ा।[2] हम सत्याग्रही, निश्चित किये हुए प्रत्येक कामको कर सकते हैं; किन्तु आकस्मिक घटनाके आगे कोई वश नहीं चलता। अस्तु, आप सब लोग मेरे प्रति इतना प्रेम और सम्मानका भाव रखते हैं, इसलिए मैं आप सबका उपकार मानता हूँ। मैंने दक्षिण आफ्रिकामें जो सेवा की है उसके लिए मेरे सहायकों और फकीरा कोलीको[3] सम्मान देना उचित है। वहाँ मेरा काम नये बनाये गये कानूनों-को स्पष्ट करना और अपने देशबन्धुओंको समझाना एवं उनमें सत्याग्रह द्वारा फेरफार कराना था। मेरा यह प्रयत्न बहुत कुछ सफल हुआ है। मैं वहाँ लोगोंको अच्छे रास्ते-पर चला सकता था। भारतमें मुझे दूसरा ही ढंग दिखाई देता है। यदि लोगोंको कुछ कष्ट-सहनके लिए कहा जाये तो वे डरकर चले जायेंगे; किन्तु मैं ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि मुझमें अपने देशबन्धुओंकी सेवा करनेकी शक्ति आये। नवसारी यहाँके पारसी लोगोंका बहुत ऋणी है। यह छोटी-सी जाति सभी कार्योंमें भाग लेती है। मैं उसे बधाई देता हूँ। आफ्रिकामें यह जाति गेहुँओंमें कंकड़ोंकी तरह बहुत अल्प-संख्यामें है; किन्तु इसने वहाँ बहुत वीरतापूर्वक काम किया है। हमारा पारसी रुस्तमजी-को[4] विशेष रूपसे श्रेय देना उचित है।[5] मैं कोली-जाति और अन्य लोगों द्वारा दिये गये सम्मानके लिए बहुत उपकार मानता हूँ।

१. यह भाषण नवसारीमें, जो गुजरातका एक तटवर्ती नगर है, कोलियों द्वारा दिये गये मानपत्रके उत्तरमें दिया गया था।

२. अखबारोंमें छपी खबरके अनुसार गांधीजीकी बैलगाड़ी उलट गई थी और इस दुर्घटनाके कारण उनकी गाड़ी छूट गई थी।

३. वे कुछ वर्ष गांधीजीके साथ रहे थे।

४. नेटालके एक दानी, व्यापारी और समाजसेवक, देखिए खण्ड ९, पृष्ठ २९७।

५. यहाँ **टाइम्स ऑफ इंडियाकी** खबरमें ये शब्द और जोड़े गये हैं, "मैं दादू पारसी जनरल अस्पतालके कामसे बहुत सन्तुष्ट हूँ। और पारसी-समाजसे इस संस्थाको पर्याप्त सहायता देनेका अनुरोध करता हूँ।"

अन्तमें उन्होंने मानपत्रके साथ चांदीका जो डिब्बा था उसे लेनेसे इनकार किया और कहा :

मैं ऐसी कीमती चीजें अपने पास नहीं रखता। किन्तु मैं इसे बेचकर इसके पैसेका किसी परोपकारके काममें प्रयोग करूँगा।[1]

[गुजरातीसे]

गुजरात मित्र अने गुजरात दर्पण, ९-१-१९१६

१६०. पत्र : वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको

अहमदाबाद
जनवरी १३, १९१६

प्रिय श्री शास्त्रियर,

आपने पहलेसे ही मेरे कदमका अनुमान लगा लिया। मैंने कांग्रेस-सप्ताहमें अपना निष्कर्ष आपके समक्ष रखनेकी सम्भावना डॉक्टर देवको बताई थी। परन्तु वह नहीं हो सका। चूँकि सदस्योंने अब उस प्रश्नपर विचार आरम्भ कर दिया है, इसलिए मैं जिस निष्कर्षपर पहुँचा हूँ उसे जाहिर करना शायद आवश्यक नहीं रहा। वे लोग मुझे सदस्य मनोनीत न करके ठीक ही कर रहे हैं। स्वतंत्र रूपसे काम करते रहनेपर हम लोगोंके बीच सहयोगकी सम्भावना है, परन्तु सदस्य बना लिये जानेपर मेरे बाधा बननेकी सम्भावना अधिक जान पड़ती है। अनेक मुद्दोंपर समिति (सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी) के काम करनेके तरीकोंमें और मेरी कार्य-प्रणालीमें जमीन-आसमानका अन्तर है।

हम लोगोंका, एक ही गुरुका शिष्य होना हमारे बीच कभी न टूटनेवाली मैत्रीका परिचायक है; हाँ, यह बात जरूर है कि हम लोग उनके कार्यको जुदा-जुदा दृष्टिकोण सामने रखकर किया करेंगे।[2]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

लेटर्स ऑफ राइट ऑनरेबल श्री० वी० एस० श्रीनिवास शास्त्री

१. डिब्बा सभास्थलमें ही नीलाम किया गया और वह कोली-जातिकी ओरसे ही १४५ रुपयेमें खरीद लिया गया।

२. गांधीजीने अपनी **आत्मकथा** में लिखा है, "जब मुझे सदस्य बनानेके सम्बन्धमें समितिके सदस्योंके बीच इतना बड़ा मतभेद पैदा हो गया था, तब मुझे यह साफ नजर आने लगा कि सदस्यताके लिए दिया गया अपना प्रार्थनापत्र वापस माँग लेना और मेरी सदस्यताका विरोध करनेवालोंको नाजुक स्थितिसे बचा लेना मेरे लिए सबसे अधिक ठीक होगा। इसीमें मैंने श्री गोखले तथा समितिके प्रति वफादारी देखी... सदस्यताका प्रार्थनापत्र वापस माँग लेनेके परिणामस्वरूप मैं सच्चे अर्थमें समितिका सदस्य बन गया।" भाग ५, अध्याय ६।

१६१. पत्र : सोंजा श्लेसिनको[1]

अहमदाबाद
जनवरी १६, १९१६

प्रिय बेटी,

तुमने आखिर मेहरबानी करके पत्र लिखा। मेरा सालमें छः पत्र लिख भेजना तुम्हारी निगाहमें कोई बड़ी बात नहीं है। क्या तुम लिखती हो? खैर जितने भी लिख दो उन्हींको गनीमत समझूंगा।

श्रीमती बेसेंटके संवाददाताने यह लिखा है कि मैंने बेतुकी और बेढंगी बातें कह डाली थीं, परन्तु तुम्हें कमसे-कम इतना तो कहना था कि गांधीने ऐसी कोई बात नहीं कही। उस निन्दापूर्ण विवरणको [दूसरे पत्रोंसे लेकर] प्रकाशित करनेकी भूलके कारण नटराजनने[2] क्षमा-याचना की थी। जो-कुछ मैंने कहा था उसका मतलब बिलकुल दूसरा था। मैंने अपने इस कथनके समर्थनमें कि पुरुष अपनी काम-वासनाकी तृप्तिके लिए स्त्रीका उपयोग करके उसके प्रति सदा अन्याय करता रहता है, एक गुजराती कहावत सुनाई थी।

क्रोधके बारेमें मेरे द्वारा जिस प्रकारका व्रत लिये जानेका उल्लेख तुमने मेरे सम्बन्धमें किया है, वह सत्य है। और यदि मैंने ऐसा व्रत लिया होता तो, तुम्हारे इस खयालसे मैं सहमत हूँ कि दूसरोंपर जाहिर हो जानेके कारण उसका महत्त्व जाता रहता।

मेरी व तुम्हारी राय इस सम्बन्धमें एक जैसी है कि पोलकने जो काम गत १८ महीनोंमें किया है वह उनके भारतमें किये गये कामसे भी बढ़-चढ़कर है। यदि थम्बी[3] आते तो मुझे अवश्य प्रसन्नता होती। परन्तु सत्याग्रह-कोषकी रकमसे उनका ऋण चुकाना उचित नहीं है।

जेकी अपने पिताके साथ रहती है। घरके काम-काजमें वह बिलकुल रम गई है।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें लिखित अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० ६२६२) की फोटो-नकलसे।

१. सोंजा श्लेसिन; एक यहूदी स्टेनो-टाइपिस्ट; जिन्होंने अनेक वर्षोंतक गांधीजीके निजी सचिवकी तरह काम किया; बादमें वे **इंडियन ओपिनियन** के लिए भी लिखने लगी थीं। भारतीय प्रश्नके प्रति उनके दिलमें गहरी दिलचस्पी थी।

२. कामाक्षी नटराजन: सम्पादक, **इंडियन सोशल रिफॉर्मर**, बम्बई।

३. नायडू, दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रह-संघर्षके दिनोंके एक प्रमुख सत्याग्रही।

१६२. भाषण : बावलामें[1]

जनवरी १७, १९१६

उत्सवका अन्तिम दिन मुझे मानपत्र देनेके लिए रखा गया होगा, इसकी मुझे कल्पना भी नहीं थी। मुझे बावलामें[2] जितना रुपया दिया गया है, उतना मुझे किसी दूसरी जगहसे नहीं मिला; किन्तु मुझे अब कदाचित् इस तरह पैसा लेना पड़ेगा, जिसका सदा सदुपयोग किया जायेगा। मैंने अभी इस देशमें कोई भी काम नहीं किया है, फिर भी मेरे प्रति बेहद प्रेम दिखाया जा रहा है। आत्माको उन्नत किये बिना देशकी सेवा नहीं की जा सकती। शरीरसे लड़नेवाले व्यक्तिको भी शरीरका ममत्व छोड़ना पड़ता है और यदि कोई रोग हो तो हमें आत्माके निमित्त देहका त्याग करना पड़ता है।

उन्होंने देशसेवाकी भावना जागृत करनेकी आवश्यकता बताई और अन्तमें कहा :

मानपत्रके डिब्बे जैसी चीजोंको रखनेके लिए मेरे पास कोई पेटी-पिटारा नहीं है; इसलिए मैं इसको बेचकर पैसेका उपयोग आश्रममें करूँगा। यदि लोग ऐसी चीजें देनेके बजाय पैसा दें तो उससे बहुत सुविधा होगी।

[गुजरातीसे]

प्रजाबन्धु, २३-१-१९१६

१६३. महात्मा गोखलेका जीवन-सन्देश[3]

[फरवरी ४, १९१६ से पूर्व]

यत् करोषि यदश्नासि यज्जुहोषि ददासि यत्।
यत् तपस्यसि कौन्तेय तत् कुरुष्व मदर्पणम्॥[4]

"हसतां-रमतां प्रकट हरि देखुं रे,
मारुं जीव्युं सफल तव लेखुं रे;

१. जन-हितार्थ कार्यालयके उत्सवके तीसरे दिन गांधीजीको एक मानपत्र दिया गया था। उसीके उत्तरमें उन्होंने यह भाषण दिया।

२. अहमदाबाद जिलेका एक कस्बा।

३. यह लेख पहले **भगिनी-समाज पत्रिका** में प्रकाशित किया गया था; देखिए, "पत्र : करसनदास चितलियाको", ४-२-१९१६ भी।

४. **गीता**, ९-२७।

मुक्तानंदनो नाथ विहारी रे,
ओधा! जीवनदोरी अमारी रे।"[१]

श्रीकृष्ण भगवान्ने अर्जुनसे जो शब्द कहे, वे मानो भारत-माताने महात्मा गोखलेसे कहे हों और उन्होंने उन शब्दोंको शिरोधार्य कर लिया हो — ऐसा आचरण स्वर्गीय महात्माका था। उन्होंने जो-कुछ किया, जो-कुछ भोगा, जो-कुछ त्याग किया, जो-कुछ दान दिया, जो-कुछ तपस्या की, वह सब भारत-माताको अर्पण कर दिया था, यह सर्वमान्य बात है।

कवि मुक्तानन्दने श्रीकृष्णके प्रति उद्धवके[२] जिस मनोभावका चित्रण किया है, वही मनोभाव महात्मा गोखलेका भारतके प्रति था।

ऐसे उदात्त व्यक्तिके जीवनका संदेश क्या था? उन्होंने क्या विरासत छोड़ी है? इस प्रश्नका उत्तर भी महात्मा गोखले हमें बता गये हैं। उन्होंने अपने अवसानके समय भारत सेवक समाज (सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी) के उपस्थित सदस्योंको बुलाकर ये शब्द कहे: "तुम मेरी जीवनी लिखनेमें समय न लगाना, मेरी मूर्तियाँ खड़ी करनेमें समय न बिताना, यदि तुम भारतके सच्चे सेवक हो तो हमने जो उद्देश्य निश्चित किये हैं उनकी पूर्तिमें अर्थात् भारतकी सेवामें अपना जीवन खपा देना।"

इस सेवाके बारेमें भी उनके मनोभाव हमारे पास हैं। कांग्रेसको टिकाये रखनेका काम तो है ही, भाषणों और लेखों द्वारा जनसमाजके सामने देशकी सच्ची स्थिति रखनेका काम भी है और प्रत्येक भारतवासीको शिक्षण देनेका कार्य भी है ही। लेकिन यह सब किसलिए किया जाये और किस प्रकार किया जाये? इन सबका उत्तर ढूँढ़ें तो गोखलेका दृष्टिकोण हमारी समझमें आ जायेगा। भारत सेवक समाजका विधान तैयार करते हुए उन्होंने लिखा है कि इस समाजके सदस्योंका कर्त्तव्य भारतके राजनीतिक जीवनको धार्मिक बनाना है। इस एक-ही बातमें सब-कुछ आ जाता है। उनका जीवन धार्मिक था। मेरी अन्तरात्मा इस बातकी साक्षी देती है कि उन्होंने जिस समय जो काम किया, केवल धार्मिक वृत्तिसे ही किया। २० वर्ष पूर्व इन महात्माके विचार कभी-कभी नास्तिक-जैसे लगते थे। एक बार उन्होंने कहा था, "जो श्रद्धा रानडेमें[३] थी, वह मुझमें नहीं है; हो तो कितना अच्छा हो!" लेकिन उस समय भी मुझे उनके कार्योंमें धार्मिक वृत्ति दिखाई देती थी। यह कहना अनुचित नहीं कि अपने आस्तिक होनेके प्रति यह शंका ही उनकी धार्मिक वृत्ति सूचित करती है। जो पुरुष सदाचारमय साधु जीवन

१. गुजराती छंद कवि मुक्तानन्दका है। इसमें गोपी उद्धवजीसे कहती है:

हम हँसते खेलते भगवान्को प्रत्यक्ष देखें,
तभी हम अपने जीवनको सफल मानेंगी।
हमारे स्वामी तो विहारी भगवान् कृष्ण हैं,
हे उद्धव! वे ही हमारी जीवन डोर हैं।

२. यहाँ "गोपियों" के चाहिए।

३. महादेव गोविन्द रानडे, (१८४२–१९०१); प्रसिद्ध भारतीय न्यायाधीश, समाज-सुधारक, ग्रन्थकार और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके संस्थापकोंमें से एक।

बिताता है, जिसकी वृत्तियाँ सादी हैं, जो सत्य की मूर्ति है, जो विनम्र है, जो सत्यका ही स्वरूप है, जिसने अहंकारका आत्यन्तिक त्याग किया है, वह पुरुष स्वयं जाने या न जाने, धर्मात्मा ही है। महात्मा गोखले ऐसे पुरुष थे, यह मैं लगभग २० वर्षके उनके समागमके अपने अनुभवमें देख सका था।

सन् १८९६ में नेटालके गिरमिटियोंके प्रश्नकी चर्चा मैंने भारतमें चलाई थी। उस समय मैं भारतके नेताओंको केवल नामसे ही जानता था। उस मौकेपर मैं पहले-पहल कलकत्ता, बम्बई, पूना और मद्रासमें रहनेवाले नेताओंके सम्पर्कमें आया था। तब महात्मा गोखलेकी ख्याति श्री रानडेके शिष्यके रूपमें थी और वे फर्ग्युसन कॉलेजके लिए अपना जीवन अर्पण कर चुके थे। उस समय मैं केवल एक अनुभवहीन युवक था। पूनामें, हमारी पहली मुलाकातके समय हम दोनोंके बीच प्रेमकी जो गाँठ बँधी, वह दूसरे किसी नेता और मेरे बीच नहीं बँधी। महात्मा गोखलेके विषयमें मैंने जो-कुछ सुना था, उसको मैंने प्रत्यक्ष देखा है; लेकिन उनकी स्नेहपूर्ण मुखाकृतिका मेरे मनपर जो असर पड़ा, उसे मैं अबतक भी नहीं भूल सका हूँ। मैंने तुरन्त जान लिया कि वे धर्म की मूर्ति हैं। उस समय मुझे रानडेके भी दर्शन हुए थे, लेकिन मैं उनके अन्तरमें प्रवेश नहीं कर सका। इतना ही जान सका कि वे गोखलेके गुरु हैं। वे आयु और अनुभवमें मुझसे बहुत बड़े थे, इस कारणसे या और किसी कारणसे मैं जितना गोखलेको पहचान सका, उतना रानडेको नहीं।

सन् १८९६ के उपर्युक्त समागमके बाद गोखलेका राजनीतिक जीवन मेरे लिए आदर्श रूप बन गया। उसी समय वे मेरे हृदयमें मेरे राजनीतिक गुरुके रूपमें आसीन हो गये। उन्होंने सार्वजनिक सभाकी[1] त्रैमासिक पत्रिकाका सम्पादन किया, फर्ग्यूसन कॉलेजमें शिक्षण देकर कॉलेजकी शोभा बढ़ाई, और वेल्बी-कमीशनके[2] सामने गवाही देकर अपन सच्चे मूल्यसे भारतको परिचित किया। उन्होंने लॉर्ड कर्जन[3] पर अपनी योग्यताकी ऐसी गहरी छाप डाली कि किसी अन्यसे न डरनेवाले लॉर्ड कर्जन भी उनसे डरते थे। उन्होंने केन्द्रीय धारासभामें बड़े-बड़े कार्य सम्पादित करके भारतका नाम उज्ज्वल किया। अपने जीवनको खतरेमें डालकर उन्होंने लोक-सेवा आयोग (पब्लिक सर्विस कमीशन) में सेवा की। ये और ऐसे अनेक कार्य उन्होंने किये, जिनका वर्णन मेरी बनिस्बत दूसरे लोग ज्यादा अच्छी तरह कर चुके हैं। इसके सिवाय यह कहना कठिन है कि इन कार्योंसे जिसे मैंने उनके जीवनका सन्देश माना है और जिसका मैंने ऊपर वर्णन किया है, उसका स्पष्ट अनुमान किया जा सकता है। इसलिए मैंने स्वयं जो कुछ देखा है और उनके सन्देशके प्रमाणस्वरूप जो वस्तु हमारे सामने मौजूद है, उसको देकर यह लेख पूरा करना चाहता हूँ।

१. इसकी स्थापना १८७० में श्री रानडे और गणेश वासुदेव जोशीने की थी और यह उन दिनों भारतकी एक प्रमुख राजनैतिक संस्था थी। (खण्ड २, पृष्ठ ४२०–२१)।

२. शाही-कमीशन जो १८९४ में भारतके सैनिक-व्ययको इंग्लैंड और भारतके बीच विभक्त करनेके प्रश्नपर विचार करनेके लिए नियुक्त किया गया था।

३. (१८५९–१९२५); भारतके वाइसराय, १८९९–१९०५।

हमारी सत्याग्रहकी लड़ाईसे वे इतने अधिक प्रभावित हुए कि उन्होंने अपना स्वास्थ्य खराब होनेपर भी दक्षिण आफ्रिकाकी यात्रा करनेका निश्चय किया। सन् १९१२ में वे दक्षिण आफ्रिका गये। वहाँके भारतीयोंने उनका राजसी स्वागत किया। वे केपटाउनमें उतरे, उसके दूसरे ही दिन वहाँके टाउन हॉलमें सभा की गई। वहाँके मेयर सभाके अध्यक्ष थे। गोखलेका स्वास्थ्य सभाओंमें भाग लेने और भाषण देने योग्य कदापि नहीं था। लेकिन उनके स्वास्थ्यपर बेहद जोर डालनेवाले जो अनेक कार्यक्रम तय किये जा चुके थे, उन्होंने उनमें कोई परिवर्तन नहीं किया। निश्चित कार्यक्रमके अनुसार वे टाउन हॉलकी सभामें उपस्थित हुए। पहली ही बार उन्होंने गोरोंके मन जीत लिये। सबके मनपर यह छाप पड़ी कि कोई दिव्य पुरुष दक्षिण आफ्रिकामें आया है। श्री मेरीमैनने,[1] जो दक्षिण आफ्रिकाके महान् नेता माने जाते हैं और जो उदार-चित्त और चरित्र-शील पुरुष हैं, गोखलेके साथ अपनी मुलाकातमें उनसे ये शब्द कहे थे: "महोदय, आप-जैसे पुरुषोंके हमारे देशमें आनेसे हमारे देशका वातावरण पवित्र होता है।"

महात्मा गोखले अपने प्रवासमें ज्यों-ज्यों आगे बढ़े, त्यों-त्यों यह अनुभव दृढ़से दृढ़तर होता गया। कुछ समयके लिए तो कई जगह गोरे और कालेके बीचका भेद मिट गया। हर जगह केप टाउन-जैसी सभाएँ हुईं। गोरे और भारतीय उनमें एक कतारमें बैठते और महात्मा गोखलेको समान मान देकर गौरवान्वित होते। जोहानिसवर्गमें उनके सम्मानमें एक दावत दी गई थी। उसमें लगभग ३०० प्रसिद्ध गोरे आये थे। अध्यक्ष-पद वहाँके मेयरने ग्रहण किया था। जोहानिसवर्गके गोरे किसीके तेजसे चौंधियानेवाले नहीं हैं। उनमेंसे कुछ लोग करोड़पति होनेके साथ-साथ मनुष्योंको पहचाननेवाले भी हैं। वे महात्मा गोखलेके साथ हाथ मिलानेमें परस्पर स्पर्धा-सी करते थे। इसका कारण एक ही था। श्रोतावर्गने महात्मा गोखलेके भाषणमें भारतके प्रति उनके अपार प्रेमके साथ-साथ उनकी न्यायदृष्टि भी देखी। उन्होंने देखा कि वे अपने देशके प्रति मान-सम्मान तो पूरा-पूरा चाहते हैं, लेकिन दूसरे देशके प्रति अपमान नहीं चाहते। अपने देशके बारेमें अधिकारोंकी रक्षाके लिए वे जितने तत्पर थे, उतनी ही उनकी यह आकांक्षा भी थी कि ऐसा करते हुए दूसरे देशके अधिकारोंको धक्का न पहुँचे। इस कारण उनके भाषणोंमें सबको स्वाभाविक माधुर्यका अनुभव होता था।

महात्मा गोखले स्वयं यह मानते थे कि दक्षिण आफ्रिकामें उनका सबसे अच्छा भाषण[2] जोहानिसवर्गमें हुआ था। भाषणने पौन घंटेसे भी अधिक समय लिया। फिर भी श्रोताओंमें से कोई ऊब उठा हो, ऐसा मुझे नहीं लगा। उन्होंने इस भाषणकी तैयारी छः दिन पहले शुरू कर दी थी। उन्होंने आवश्यक इतिहास और आवश्यक आँकड़ोंको जाननेके बाद भाषण देनेसे एक दिन पहले रातको जागकर उसकी भाषा भी ठीक कर ली। परिणाम वह हुआ जो मैंने बताया। उनके भाषणसे गोरों और उनके देशभाइयों — दोनोंको संतोष हुआ।

१. (१८४१–१९२५); दक्षिण आफ्रिका संघ-विधान-परिषद्के सदस्य।
२. सन् १९१२ में।

दक्षिण आफ्रिकाकी राजधानी प्रिटोरियामें जनरल बोथा और जनरल स्मट्ससे मिलनेके पहले भेंटकी तैयारीमें उन्होंने जो लगन और सावधानी दिखाई, उसे मैं जन्म-भर नहीं भूल सकता। मुलाकातके पहले दिन उन्होंने मुझसे और श्री कैलेनबैकसे बारीकीसे तमाम पूछताछ की। वे स्वयं सुबह तीन बजे उठ गये और हम दोनोंको भी उठा दिया। दिया हुआ साहित्य उन्होंने पढ़ लिया था। अब वे मुझसे तर्क-वितर्क करके यह जान लेना चाहते थे कि मुलाकातकी उनकी तैयारी पूरी हो चुकी है या नहीं। मैंने नम्रतासे कहा, "इतनी ज्यादा मेहनत करनेकी जरूरत नहीं। हमें फिलहाल कुछ नहीं भी मिला, तो हम लड़ लेंगे। परन्तु अपनी सुविधाके लिए हम आपकी बलि देना नहीं चाहते।" किन्तु जिन्होंने अपने सारे कार्योंमें अपनी आत्मा उँड़ेल देनेकी आदत बना ली हो, वे मेरे इन शब्दोंपर क्यों ध्यान देते? उनके तर्क-वितर्कका मैं क्या वर्णन करूँ? उनकी सावधानीकी मैं कितनी प्रशंसा करूँ? ऐसे परिश्रमका एक ही परिणाम हो सकता था। मन्त्रिमण्डलने महात्मा गोखलेको वचन दिया कि संसदके आगामी अधिवेशनमें एक कानून पास करके सत्याग्रहियोंकी माँग स्वीकार कर ली जायेगी और गिरमिटिया मजदूरोंपर लगाया हुआ तीन पौंडी वार्षिक कर रद कर दिया जायेगा।

इस वचनकी पूर्ति निर्धारित समयपर नहीं की गई। तब क्या महात्मा गोखले चुप बैठे रहे? एक क्षण भी नहीं। मेरा यह विश्वास है कि १९१३ में इस वचनकी पूर्ति करवानेके लिए उन्होंने जो घोर परिश्रम किया, उससे उनकी जीवनावधि कमसे-कम १० वर्ष तो जरूर घट गई होगी। उनके डॉक्टरोंने तो ऐसा ही माना है। उस वर्ष उन्होंने भारतको जगानेके लिए तथा दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रहियोंके सहायतार्थ पैसे इकट्ठे करनेके लिए जो कड़ा परिश्रम किया, उसकी कल्पना करना कठिन है। यह महात्मा गोखलेका ही प्रताप था कि दक्षिण आफ्रिकाके प्रश्नने सारे देशको हिला दिया था। मद्रासमें लॉर्ड हार्डिंज़ने जो ऐतिहासिक भाषण[1] दिया था वह भी महात्मा गोखलेका ही प्रताप था। उनसे जिनका घनिष्ट परिचित था वे लोग इस बातको जानते हैं कि दक्षिण आफ्रिकाके प्रश्नकी चिन्तामें बीमार हो जानेपर भी उन्होंने अन्त-तक आराम नहीं किया। दक्षिण आफ्रिकासे आधी रातको पत्रों जैसे लम्बे-लम्बे तार आते, वे उन्हें उसी समय पढ़ते, उसी समय उनके जवाब तैयार कराते, उसी समय लॉर्ड हार्डिंज़को तार भिजवाते और उसी समय उनपर अखबारोंके लिए वक्तव्य देते।

१. २४ नवम्बर १९१३ को मद्रास महाजन सभा और मद्रास प्रान्तीय सम्मेलन समितिके मानपत्रोंके उत्तरमें दिया गया भाषण। इसमें उन्होंने कहा था:

अभी हालमें आपके दक्षिण आफ्रिकावासी देशबन्धुओंने उन कानूनोंके विरुद्ध, जिन्हें वे विद्वेषजनक और अन्यायपूर्ण मानते हैं, सत्याग्रह आरम्भ किया है; वे कानूनकी अवज्ञा कर रहे हैं। हम, जो उनके संघर्षको दूरसे देख रहे हैं, उनसे सहमत हुए बिना नहीं रह सकते। उन्होंने इन कानूनोंको निश्चयपूर्वक यह जानकर तोड़ा है कि उनको भंग करनेकी सजा क्या है। और वे साहसपूर्वक और धैर्यपूर्वक उस सजाको भुगतनेके लिए तैयार हैं। इस सम्बन्धमें भारत उनसे गहरी सहानुभूति रखता है। उनसे भारत ही नहीं बल्कि वे सब लोग भी सहानुभूति रखते हैं जो मेरी तरह भारतीय तो नहीं हैं, किन्तु जिनकी इस देशके लोगोंके प्रति सहानुभूतिपूर्ण भावनाएँ हैं।

उस प्रश्नपर ध्यान देनेमें उनका खाना-पीना और सोना सब छूट जाता; और बादमें तो वे दिन-रातका फर्क ही भूल गये। ऐसी अनन्य निःस्वार्थ भक्ति कोई धर्मात्मा पुरुष ही कर सकता है।

हिन्दू मुसलमानके सवालके विषयमें भी उनकी दृष्टि केवल धार्मिक ही होती थी। एक बार हिन्दुत्वका दावा करनेवाला एक व्यक्ति साधु-वेशमें उनके पास आया। वह चाहता था कि मुसलमानोंको नीचा माना जाये और हिन्दुओंको बढ़ाया जाये। स्वर्गीय महात्मा गोखले, जब उसकी इस चालमें न फँसे, तब उसने उनपर यह आरोप लगाया कि उनमें हिन्दुत्वका अभिमान नहीं है। महात्मा गोखलेने भौंहें चढ़ाकर हृदय-भेदी स्वरमें उत्तर दिया, "आप जैसा कहते हैं वैसा करनेमें ही यदि हिन्दुत्व हो, तो मैं हिन्दू नहीं हूँ। आप मेरे सामनेसे चले जायें।" यह सुनकर वह तथाकथित संन्यासी इस सच्चे संन्यासीको छोड़कर चला गया।

महात्मा गोखलेमें निर्भयताका गुण बहुत बड़ी मात्रामें था। धर्मनिष्ठामें इस गुणका लगभग प्रथम स्थान है। लेफ्टिनेंट रैंडके[1] खूनके बाद पूनामें भय फैल गया था। उस समय महात्मा गोखले इंग्लैण्डमें थे। उन्होंने पूनाके पक्षमें वहाँ जो भाषण किया, वह जगद्विख्यात है। उसमें कही हुई कुछ बातें बादमें सिद्ध नहीं की जा सकीं। अतः थोड़े समय बाद जब वे भारत लौटे, उन्होंने अंग्रेज सैनिकोंसे, जिनपर उन्होंने आक्षेप किये थे, क्षमा माँगी। क्षमा माँगनेसे भारतके कुछ वर्गोंके लोग नाराज भी हुए। कुछ लोगोंने महात्मा गोखलेको यह सलाह दी कि उन्हें सार्वजनिक क्षेत्रमें काम करना छोड़ देना चाहिए। कुछ अज्ञानी भारतीय उनपर भीरुताका आरोप लगानेमें भी नहीं हिचकिचाये। इन सभीको उन्होंने गम्भीर और मीठी भाषामें एक ही उत्तर दिया, "जो [देशसेवाका] कार्य मैंने किसीकी आज्ञासे अपने हाथमें नहीं लिया, उसे मैं किसीकी आज्ञासे छोड़ भी नहीं सकता। यदि मैं अपना कर्त्तव्य पालन करते हुए लोकमतको अपनी तरफ रख सकूँ तो मैं उसे अच्छा मानूँगा, परन्तु यदि मैं इतना भाग्यशाली न रहूँ तो उसे भी अच्छा ही मानूँगा।" कार्य करनेको ही उन्होंने अपना धर्म माना था। कार्य करते हुए लोकमतपर उसका क्या असर होगा, इसका विचार उन्होंने कभी स्वार्थदृष्टिसे किया हो ऐसा मुझे अनुभव नहीं हुआ। मेरी ऐसी मान्यता है कि यदि उन्हें देशके लिए सूलीपर चढ़ना पड़ता तो भी उनमें इस कार्यको निडरतापूर्वक और हँसते-हँसते करनेकी शक्ति थी। मैं जानता हूँ कि बहुत बार जिस स्थितिमें से वे गुजरे थे उसमें से गुजरनेके बजाय सूलीपर चढ़ना उनके लिए बहुत आसान था। वे अनेक बार ऐसी विकट स्थितिमें फँसे थे, किन्तु उन्होंने कभी हार नहीं मानी।

इन सारे उदाहरणोंसे सार यह निकलता जान पड़ता है कि यदि इस महान् देशभक्तके जीवनसे हमें कुछ लेना हो तो उनकी धार्मिक वृत्तिका अनुकरण करना चाहिए। हम सब केन्द्रीय धारासभामें प्रवेश नहीं कर सकते; उसमें प्रवेश करनेसे सदा

१. १८९७ में पूनामें प्लेग सम्बन्धी कार्य करते हुए डब्ल्यू० सी० रैंड, आई० सी० एस०, और लेफ्टिनेंट एयर्स्टकी हत्या कर दी गई थी और इस सम्बन्धमें दामोदर हरि चापेकर और उनके भाईको प्राणदण्ड दिया गया था।

देशसेवा होती ही है, ऐसा भी हमने हमेशा नहीं देखा। हम सब लोग सेवा आयोगमें नहीं जा सकते, और जानेवाले सब देशभक्त ही नहीं होते। हम सब उनके जैसे विद्वान् नहीं हो सकते, और सारे विद्वान् देशसेवक होते हैं ऐसा भी हमारे अनुभवमें नहीं आता। परन्तु हम सब निर्भयता, सत्यपरायणता, धैर्य, नम्रता, न्यायबुद्धि, सरलता, दृढ़ता आदि गुणोंका अपनेमें विकास करके देशके हितमें उनका उपयोग कर सकते हैं। यह धार्मिक वृत्ति है। राजनीतिक जीवनको धर्ममय बनाया जाये, इस महावाक्यका यही अर्थ है। इस तरह आचरण करनेवालेको हमेशा मार्ग सूझेगा। वह स्वर्गीय महात्मा गोखलेकी विरासतमें हिस्सेदार होगा। ऐसी निष्ठासे काम करनेवालेको जिन दूसरी विभूतियोंकी आवश्यकता होगी वे उसे प्राप्त होंगी, ऐसा ईश्वरीय वचन है; और महात्मा गोखलेका जीवन इसका ज्वलन्त प्रमाण है।

[गुजरातीसे]

महात्मा गांधीनी विचारसृष्टि

१६४. पत्र: करसनदास चितलियाको

काशीजी
शुक्रवार, फरवरी ४, १९१६

भाई श्री करसनदास,

इसके साथ एक नया लेख[1] लिखकर भेजता हूँ। इससे अधिक या अच्छा लिखनेकी शक्ति फिलहाल तो है नहीं। पिछले लेखसे तो यह अच्छा ही है। मेरी लिखावट पढ़नेमें कठिनाई हो तो नारणदास गांधी अथवा कल्याणदाससे सहायता ले लें। प्रूफ भिजवा देंगे तो संशोधन कर दूँगा। मैं ११ तारीखको सवेरे बम्बई पहुँचूँगा। मैं वहाँ सम्भवत: अहमदाबाद होकर जाऊँगा।

मोहनदासके वन्देमातरम्

[गुजरातीसे]

बापूजीनी शीतल छायामां

१. देखिए पिछला शीर्षक।

१६५. भाषण : काशी नागरीप्रचारिणी सभामें

फरवरी ५, १९१६

काश्मीरके महाराजाधिराजके सभापतित्वमें काशी नागरीप्रचारिणी सभाके २२वें वार्षिकोत्सवमें श्री गांधीने निम्नलिखित भाषण दिया :

महाराजा तथा भाइयो,

मैं बहुत शर्मिदा हूँ कि आप लोगोंके सामने हिन्दीमें अच्छी तरह नहीं बोल सकता। आप जानते हैं कि मैं दक्षिण आफ्रिकामें रहता था। वहीं अपने हिन्दी भाइयोंके साथ काम करते-करते थोड़ी-बहुत हिन्दी सीख सका हूँ, इसलिए आप लोग मेरी भूलोंको क्षमा करेंगे।

मैं नहीं जानता था कि मुझे इस सभामें बोलना पड़ेगा। मैं व्याख्यान देनेके लायक भी नहीं हूँ। मुझसे कहा गया कि कुछ कहो। यद्यपि कुछ कहना मेरी शक्तिके बाहर है तो भी दो-चार बातें मैं आपको सुनाता हूँ जो इस समय मेरे खयालमें आई हैं। आप शायद यह नहीं जानते कि मेरे साथ तीस-पैंतीस स्त्री-पुरुष हैं। उन सबकी प्रतिज्ञा है कि बराबर हिन्दीका अभ्यास करेंगे। मैंने इस सभाके साथ पत्र-व्यवहार भी किया था। मुझे कुछ पुस्तकें दरकार थीं जो मिल नहीं सकीं। सभाने जो-कुछ किया है उसके लिए उसे धन्यवाद और मुबारकबाद देता हूँ और ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि उसके सदस्य बढ़ते चले जायें। जो पुस्तकें मुझे नहीं मिली हैं वह उन सबको तैयार करानेका प्रयत्न करे। इसके पदाधिकारियोंमें सब एम० ए०, बी० ए०, एलएल० बी० हैं। जो अंग्रेजीमें उन पुस्तकोंको पढ़ चुके हैं। इस सभाके जो अधिकारी वकील हैं उनसे मैं पूछता हूँ कि आप अदालतमें अपना काम अंग्रेजीमें चलाते हैं या हिन्दीमें। यदि अंग्रेजीमें चलाते हैं तो मैं कहूँगा कि हिन्दीमें चलायें। जो युवक पढ़ते हैं उनसे भी मैं कहूँगा कि वे इतनी प्रतिज्ञा करें कि हम आपसका पत्र-व्यवहार हिन्दीमें करेंगे।[1]

साहित्य-विहीन जातिको स्वतंत्रता नहीं मिल सकती, इसलिए लोगोंको चाहिए कि वे अंग्रेजीके उच्च विचार और नये खयाल सब लोगोंके सामने रखें। कल डॉक्टर जगदीशचन्द्र बसु व्याख्यान देंगे। यदि वे बँगलामें व्याख्यान देंगे तो मेरा कोई झगड़ा नहीं है, पर यदि वे अंग्रेजीमें दें तो उनसे मेरा झगड़ा है। नागरीप्रचारिणी सभाका कर्त्तव्य है कि जो पुस्तकें डॉक्टर जगदीशचन्द्र बसुने अंग्रेजीमें लिखीं हैं उनका वह हिन्दीमें अनुवाद करे। जर्मनीमें जो विद्वत्तापूर्ण पुस्तकें तैयार होती हैं अंग्रेजीमें दूसरे ही सप्ताह उनका अनुवाद हो जाता है; इसीसे वह भाषा प्रौढ़ है। हिन्दीमें भी ऐसा ही होना चाहिए। लोगोंको अपनी भाषाकी असीम उन्नति करनी चाहिए, क्योंकि सच्चा गौरव

१. इलाहाबादके अंग्रेजी दैनिक **लीडर** के ७-२-१९१६ के अंकमें प्रकाशित समाचारमें कहा गया है कि यहाँ गांधीजीने उर्दूका अभ्यास करनेकी बात भी कही थी।

उसी भाषाको प्राप्त होगा जिसमें अच्छे-अच्छे विद्वान् जन्म लेंगे। और उसीका सारे देशमें प्रचार भी होगा। यदि तमिलमें अच्छे-अच्छे विद्वान् पैदा होंगे तो हम भी तमिल ही बोलने लग जायेंगे। जिस भाषामें तुलसीदास जैसे कविने कविता की हो वह अवश्य पवित्र है और उसके सामने कोई भाषा नहीं ठहर सकती। हमारा मुख्य काम हिन्दी सीखना है; पर तो भी हम अन्य भाषाएँ भी सीखेंगे। अगर हम तमिल सीख लेंगे तो तमिल बोलनेवालोंको भी हिन्दी सिखा सकेंगे।

महात्मा गांधी

१६६. भाषण: बनारस हिन्दू विश्वविद्यालयमें[1]

फरवरी ६, १९१६

दोस्तो, यहाँ आते हुए मुझे रास्तेमें बहुत देर लग गई। मैं इसके लिए क्षमा-याचना करता हूँ। आप मुझे खुशीसे माफ भी कर देंगे क्योंकि इस देरीके लिए न मैं जिम्मेदार हूँ न कोई और आदमी (हँसी); सच कहो तो मैं पिंजरेका जानवर हूँ और मेरी देखरेख करनेवाले लोग अत्यधिक ममताके कारण जीवनके एक महत्त्वपूर्ण पहलू अर्थात् शुद्ध संयोगकी बातको भूल जाते हैं। इस बार भी हम लोग, मैं, मेरे निरीक्षक और मुझे उठाकर चलनेवालोंको एकके-बाद-एक जिन दुर्घटनाओंका सामना करना पड़ा, उसकी पूर्व कल्पना करके तो कोई इन्तजाम नहीं किया गया था; इसलिए इतनी देरी हो गई।

दोस्तो, अभी-अभी जो महिला भाषण देकर बैठी हैं उनकी अद्भुत वाक्शक्तिके प्रभावमें आकर आप लोग कृपया इस बातपर विश्वास न कर लें कि जो विश्वविद्यालय अभी तक पूरा बना और उठा भी नहीं है वह कोई परिपूर्ण संस्था है; और अभी जो विद्यार्थी यहाँ आये तक नहीं हैं वे शिक्षा-सम्पादन करके यहाँसे एक महान् साम्राज्यके नागरिक होकर निकल चुके हैं। मनपर ऐसी कोई छाप लेकर आप लोग यहाँसे न जायें, और जिनके सामने आज मैं बोल रहा हूँ वे विद्यार्थीगण तो एक क्षणके लिए भी इस बातको मनमें जगह न दें कि जिस आध्यात्मिकताके लिए इस देशकी ख्याति है और जिसमें उसका कोई सानी नहीं है उस आध्यात्मिकताका सन्देश बातें बघार कर दिया जा सकता है। अगर आपका ऐसा कुछ खयाल हो तो मेहरबानी करके मेरी इस बातपर भरोसा कीजिए कि आपका वह खयाल गलत है। मुझे आशा है कि किसी-न-किसी दिन भारत संसारको यह सन्देश देगा; किन्तु केवल वचनोंके द्वारा वह सन्देश कभी नहीं दिया जा सकेगा। मैं भाषणों और तकरीरोंसे ऊब गया हूँ। अलबत्ता पिछले दो दिनोंमें यहाँ जो भाषण दिये गये उन्हें मैं इस तरहकी

१. बनारस हिन्दू-विश्वविद्यालयके उद्घाटन-समारोहपर ४-२-१६ को दिया गया भाषण। भाषणका सम्पादन गांधीजीने बादमें किया और लिखा — "सम्पादनमें मैंने कुछ ऐसे शब्दोंको हटा दिया है जो मुद्रित अवस्थामें भाषणके प्रवाहमें आड़े आ सकते थे।"

तकरीरोंसे अलग मानता हूँ; क्योंकि वे जरूरी थे। फिर भी मैं यह कहनेकी धृष्टता कर रहा हूँ कि हम भाषण देनेकी कलाके लगभग शिखरपर जा पहुँचे हैं और अब आयोजनोंको देख लेना और भाषणोंको सुन लेना ही पर्याप्त नहीं माना जाना चाहिए; अब हमारे मनोंमें स्फुरण होना चाहिए और हाथ-पाँव हिलने चाहिए। पिछले दो दिनोंमें हमें बताया गया कि अगर भारतीय जीवनकी सादगी कायम रखनी है तो हमें अपने हाथ-पाँव और मनकी गतिमें सामंजस्य लाना आवश्यक है। वैसे यह भूमिका हुई। मैं कहना यह चाहता हूँ कि मुझे आज इस पवित्र नगरमें, इस महान् विद्यापीठके प्रांगणमें अपने ही देशवासियोंसे एक विदेशी भाषामें बोलना पड़ रहा है। यह बड़ी अप्रतिष्ठा और शर्मकी बात है। पिछले दो दिनोंमें यहाँ जो भाषण दिये गये यदि उनमें लोगोंकी परीक्षा ली जाये और मैं परीक्षक होऊँ तो निश्चित है कि ज्यादातर लोग फेल हो जायें। क्यों? इसलिए कि इन व्याख्यानोंने उनके हृदय नहीं छुए। मैं गत दिसम्बरमें राष्ट्रीय महासभाके अधिवेशनमें मौजूद था। वहाँ बहुत अधिक तादादमें लोग इकट्ठा हुए थे। आपको ताज्जुब होगा कि बम्बईके वे तमाम श्रोता केवल उन भाषणोंसे प्रभावित हुए जो हिन्दीमें दिये गये थे। ध्यान दीजिए यह बम्बईकी बात है, बनारसकी नहीं, जहाँ सभी लोग हिन्दी बोलते हैं। बम्बई प्रान्तकी भाषाओं[1] और हिन्दीमें उतना फर्क नहीं है जैसा अंग्रेजी और भारतीय भाषाओंमें है; और इसलिए वहाँके श्रोता हिन्दीमें बोलनेवालेकी बात ज्यादा आत्मीय भावसे समझ सके। मुझे आशा है कि इस विश्वविद्यालयमें विद्यार्थियोंको उनकी मातृभाषाके माध्यमसे शिक्षा देनेका प्रबन्ध किया जायेगा। हमारी भाषा हमारा ही प्रतिबिम्ब है और इसलिए यदि आप मुझसे यह कहें कि हमारी भाषाओंमें उत्तम विचार अभिव्यक्त किये ही नहीं जा सकते तब तो हमारा संसारसे उठ जाना अच्छा है। क्या कोई व्यक्ति स्वप्नमें भी यह सोच सकता है कि अंग्रेजी भविष्यमें किसी भी दिन भारतकी राष्ट्रभाषा हो सकती है? ("नहीं, नहीं" की आवाजें) फिर राष्ट्रके पाँवोंमें यह बेड़ी किस लिए? जरा सोचकर देखिए कि अंग्रेजी भाषामें अंग्रेज बच्चोंके साथ होड़ करानेमें हमारे बच्चोंपर कितना वजन पड़ता है। पूनाके कुछ प्रोफेसरोंसे मेरी बात हुई। उन्होंने बताया कि चूँकि हर भारतीय विद्यार्थीको अंग्रेजीके मारफत ज्ञान-सम्पादन करना पड़ता है, इसलिए उसे अपनी जिन्दगीके बेश-कीमती बरसोंमें से कमसे-कम छः वर्ष अधिक जाया करने पड़ते हैं। हमारे स्कूलों और कॉलेजोंसे निकलनेवाले विद्यार्थियोंकी संख्यामें इस छः का गुणा कीजिए और फिर देखिए कि राष्ट्रके कितने हजार वर्ष बरबाद हो चुके हैं। हम पर आरोप लगाया जाता है कि हममें पहल करनेका माद्दा नहीं है। हो भी कैसे सकता है? यदि हमें एक विदेशी भाषापर अधिकार पानेके लिए जीवनके अमूल्य वर्ष लगा देने पड़ें तो फिर और हो क्या सकता है? और तो और हम इसमें भी सफल नहीं हो पाते। श्री हिगिनबॉटमने श्रोताओंको जितना प्रभावित किया क्या कल और आज बोलनेवालोंमें एक भी अन्य वक्ता उतना प्रभावित कर सका? यह उन बोलनेवालोंका कसूर नहीं

१. तब बम्बई प्रान्तमें सिंध, कच्छ, काठियावाड़, सौराष्ट्र और महाराष्ट्रका बहुत-सा भाग आ जाता था। सिन्धी, गुजराती, मराठी उन दिनों वहाँकी प्रायः समानरूपसे महत्त्वपूर्ण भाषाएँ थीं।

था। सामग्री तो उनके भाषणोंमें भरपूर थी; लेकिन उनके भाषणोंने हमारा मन नहीं पकड़ा। कहा जाता है कि आखिरकार भारतके अंग्रेजीदाँ ही देशका नेतृत्व कर रहे हैं और वे ही राष्ट्रके लिए सब-कुछ कर रहे हैं। अगर इससे विपरीत बात होती तो वह और भी भयानक होती; क्योंकि हमें शिक्षाके नामपर केवल अंग्रेजी शिक्षा ही तो मिलती है। शिक्षाका कुछ-न-कुछ परिणाम तो निकलता ही है। किन्तु मान लीजिए हमने पिछले पचास वर्षोंमें अपनी-अपनी भाषाओंके जरिए शिक्षा पाई होती; तो हम आज किस स्थितिमें होते? तो आज भारत स्वतंत्र होता; तब हमारे पढ़े-लिखे लोग अपने ही देशमें विदेशियोंकी तरह अजनबी न होते बल्कि देशके हृदयको छूनेवाली वाणी बोलते; वे गरीबसे-गरीब लोगोंके बीच काम करते और पचास वर्षोंकी उनकी उपलब्धि पूरे देशकी विरासत होती। (तालियाँ) आज तो हमारी अर्धांगिनियाँ भी हमारे श्रेष्ठ विचारोंकी भागीदार नहीं हैं। प्रो० बसु[1] और प्रो० राय[2] तथा उनके शानदार आविष्कारोंको ही लीजिए। क्या यह लज्जाकी बात नहीं है कि जनताका उनसे कुछ लेना-देना नहीं है?

अब हम दूसरी बात लें।

कांग्रेसने स्वराज्यके बारेमें एक प्रस्ताव पास किया है। यों तो मुझे विश्वास है कि अखिल भारतीय कांग्रेस और मुस्लिम लीग अपना कर्त्तव्य करेंगी और कुछ-न-कुछ ठोस सुझावोंके साथ सामने आयेंगी; किन्तु जहाँतक मेरा सवाल है मैं स्पष्ट रूपसे यह बात स्वीकार करना चाहता हूँ कि मुझे इस बातमें उतनी दिलचस्पी नहीं है कि वे क्या-कुछ कर पाती हैं, जितनी इस बातमें है कि विद्यार्थी-जगत् क्या करता है या जनता क्या करती है। कोई भी कागजी कार्रवाई हमें स्वराज्य नहीं दे सकती। धुआँधार भाषण हमें स्वराज्यके योग्य नहीं बना सकते। वह तो हमारा अपना आचरण है जो हमें उसके योग्य बनायेगा। (तालियाँ)। सवाल यह है कि हम अपनेपर किस प्रकार राज्य करना चाहते हैं? मैं आज भाषण नहीं देना चाहता, श्रव्यरूपमें सोचना चाहता हूँ। यदि आज आपको ऐसा लगे कि मैं असंयत होकर बोल रहा हूँ तो कृपया मानिए कि कोई आदमी जोर-जोरसे बोलता हुआ सोच रहा है और वही आप सुन पा रहे हैं। और यदि आपको ऐसा जान पड़े कि मैं शिष्टाचारकी सीमाका उल्लंघन कर रहा हूँ तो कृपया उस स्वच्छन्दताके लिए आप मुझे क्षमा करेंगे। कल शाम मैं विश्वनाथके दर्शनोंके लिए गया था। उन गलियोंमें चलते हुए मेरे मनमें खयाल आया कि यदि कोई अजनबी एकाएक ऊपरसे इस मन्दिरपर उतर पड़े और यदि उसे हम हिन्दुओंके बारेमें विचार करना पड़े तो क्या हमारे बारेमें कोई छोटी राय बना लेना उसके लिए स्वाभाविक न होगा? क्या यह महान् मन्दिर हमारे अपने आचरणकी ओर उँगली नहीं उठाता? मैं यह बात एक हिन्दूकी तरह बड़े दर्दके साथ कह रहा हूँ। क्या यह कोई ठीक बात है कि हमारे पवित्र मन्दिरके आसपासकी गलियाँ इतनी गन्दी हों? उसके आसपास जो घर बने हुए हैं वे बे-सिलसिले और चाहे-जैसे हों। गलियाँ टेढ़ी-

१. सर जे० सी० बोस, एफ० आर० एस०; वनस्पतिशास्त्री।
२. सर पी० सी० रॉय, रसायनशास्त्री।

मेढ़ी और सँकरी हों। अगर हमारे मन्दिर भी कुशादगी और सफाईके नमूने न हों तो हमारा स्वराज्य कैसा होगा? चाहे खुशीसे चाहे लाचारीसे अंग्रेजोंका बोरिया-बसना बँधते ही क्या हमारे मन्दिर पवित्रता, स्वच्छता और शान्तिके धाम बन जायेंगे?

मैं कांग्रेसके अध्यक्षसे इस बातमें सहमत हूँ कि स्वराज्यकी बात सोचनेके पहले हमें बड़ी मशक्कत करनी पड़ेगी। हमारे यहाँ हर शहरके दो हिस्से होते हैं; बस्ती खास और छावनी। बस्तीको अक्सर एक बदबूदार गन्दी कोठरी समझिए। यह ठीक है कि हम शहरोंकी जिन्दगीके आदी नहीं हैं। लेकिन जब शहरी जिन्दगीकी हमें जरूरत ही है तो उसे हम अपने लापरवाह ग्राम्य-जीवनका प्रतिबिम्ब तो नहीं बना सकते। बम्बईकी जिन गलियोंमें भारतीय रहते हैं वहाँ राहगीरको यह धुकधुकी लगी ही रहती है कि कहीं कोई ऊपरकी मंजिलसे उनपर पीक न छोड़ दे। यह बड़ी विचारणीय परिस्थिति है। मैं काफी रेल-यात्रा करता हूँ। तीसरे दर्जेके यात्रीकी तकलीफोंपर ध्यान जाता है। किन्तु इन सभी तकलीफोंकी जिम्मेदारी रेलवेके अधिकारियोंके ऊपर नहीं मढ़ी जा सकती। यह जानते हुए भी कि डिब्बेका फर्श अकसर सोनेके काममें बरता जाता है हम उसपर जहाँ-तहाँ थूकते रहते हैं। हम जरा भी नहीं सोचते कि हमें वहाँ क्या फेंकना चाहिए, क्या नहीं; और नतीजा यह होता है कि सारा डिब्बा गन्दगीका अवर्णनीय नमूना बन जाता है। जिन्हें कुछ ऊँचे दर्जेका माना जाता है, वे अपनेसे कम भाग्यशाली अपने भाइयोंके साथ डाँट-डपटका व्यवहार करते हैं। विद्यार्थी-वर्गको भी मैंने ऐसा करते पाया है। वे भी [गरीब] सहयात्रियोंके साथ [कुछ अच्छा] व्यवहार नहीं करते। वे अंग्रेजी बोल सकते हैं और नारफॉक जाकिटें पहने होते हैं और इसलिए वे अधिकार जताकर डिब्बेमें घुस जाते हैं और बैठनेकी जगह ले लेते हैं। मैंने हर अँधेरे कोनेको मशाल जलाकर देखा है; और चूँकि आपने मुझे बातचीत करनेकी यह सुविधा दी है, मैं अपना मन आपके सामने खोल रहा हूँ। स्वराज्यकी दिशामें बढ़नेके लिए हमें बिलाशक ये सारी बातें सुधारनी चाहिए। अब मैं आपको दूसरी जगह ले चलता हूँ। जिन महाराजा महोदयने[1] कलकी हमारी बैठककी अध्यक्षता की थी। उन्होंने भारतकी गरीबीकी चर्चा की। दूसरे वक्ताओंने भी इस बातपर बड़ा जोर दिया। किन्तु जिस शामियानेमें वाइसरॉय द्वारा शिलान्यास-समारोह हो रहा था वहाँ हमने क्या देखा। एक ऐसा शानदार प्रदर्शन, जड़ाऊ गहनोंकी ऐसी प्रदर्शनी, जिसे देखकर पेरिससे आनेवाले किसी जौहरीकी आँखें भी चौंधिया जातीं। जब मैं गहनोंसे लदे हुए उन अमीर-उमरावोंको भारतके लाखों गरीब आदमियोंसे मिलाता हूँ तो मुझे लगता है कि मैं इन अमीरोंसे कहूँ, "जबतक आप अपने ये जेवरात नहीं उतार देतें और उन्हें गरीबोंकी धरोहर मानकर नहीं चलते तबतक भारतका कल्याण नहीं होता। (हर्षध्वनि और तालियाँ) मुझे यकीन है कि सम्राट् अथवा लॉर्ड हार्डिंज सम्राट्के प्रति वास्तविक राजभक्ति दिखानेके लिए किसीका गहनोंके सन्दूक उलटकर सिरसे पाँवतक सजकर आना जरूरी नहीं समझते। अगर आप चाहें तो मैं जानकी

१. दरभंगाके सर रामेश्वर सिंह (१८६०-१९२९); इन्होंने बनारस हिन्दू विश्वविद्यालयकी स्थापनामें मालवीयजीकी सहायता की थी।

बाजी लगाकर महाराज जॉर्ज पंचमका सन्देशा आपको लाकर दे दूँ कि वे यह नहीं चाहते। भाइयो, जब कभी मैं सुनता हूँ कि कहीं, फिर वह ब्रिटिश भारतमें हो चाहे हमारे बड़े-बड़े राजाओं और नवाबों द्वारा शासित रजवाड़ोंमें, कोई बड़ा भवन उठाया जा रहा है तो मेरा मन दुखी हो जाता है और मैं सोचने लगता हूँ, "यह पैसा तो किसानोंके पाससे इकट्ठा किया गया पैसा है।" हमारे ७५ प्रतिशतसे भी अधिक लोग किसान हैं; कल श्री हिगिनबॉटमने अपनी प्रवाहमयी वाणीमें कहा, "ये ही वे लोग हैं जो एकके दो दाने करते हैं।" यदि हम इनके परिश्रमकी सारी कमाई दूसरोंको उठाकर ले जाने दें तो कैसे कहा जा सकता है कि स्वराज्यकी कोई भी भावना हमारे मनमें है। हमें आज़ादी किसानके बिना नहीं मिल सकती। आज़ादी वकील और डॉक्टर या सम्पन्न जमींदारोंके वशकी बात नहीं है।

अब अन्तमें उस बातका थोड़ा-सा विवेचन करना मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूँ, जिसने आज दो-तीन दिनोंसे हमारे मनोंको उद्विग्न कर रखा है। श्रीमान् वाइसरॉयके यहाँके रास्तोंसे निकलनेके समय हम सब लोग बड़ी ही चिन्तामें थे। स्थान-स्थानपर खुफिया पुलिसके लोग नियत थे। हम दंग रह गये। हमारे मनमें बार-बार यह प्रश्न उठता था कि हम लोगोंके प्रति इतने अविश्वासका क्या कारण है? इस प्रकार मरणान्तक-दुःख भोगते हुए जीनेकी अपेक्षा क्या लॉर्ड हार्डिंजके लिए सचमुच ही मर जाना अधिक श्रेयस्कर नहीं है! परन्तु एक बलशाली सम्राट्के प्रतिनिधि इस प्रकार मर भी नहीं सकते। मृतककी भाँति जीना ही वे शायद जरूरी समझते होंगे। पर दूसरा प्रश्न यह है कि खुफिया पुलिसका जुआ हमारे सिरपर लादनेका क्या कारण है? हम क्रुद्ध होते हों, बड़बड़ाते हों, हाथ-पैर पटकते हों, या और जो-चाहे-सो करते हों, पर फिर भी यह नहीं भूलना चाहिए कि भारतमें अराजक दलकी उत्पत्तिका कारण उतावलेपनका नशा है। मैं खुद भी अराजक ही हूँ; पर दूसरे वर्ग-का। हमारे यहाँ अराजकोंका एक वर्ग है जिससे यदि मुझे मिलनेका अवसर मिले तो मैं उनसे स्पष्ट कह दूँगा कि "भाइयो! यदि भारतको अपने विजेताओंपर विजय प्राप्त करनी हो तो आपकी अराजकताके लिए यहाँ जगह नहीं है।" यह भीरुताका लक्षण है। यदि आपका ईश्वरपर विश्वास हो और यदि आप उसका भय मानते हों तो फिर आपको किसीसे डरनेका कोई कारण नहीं है; फिर चाहे वे राजा-महाराजा हों, वाइसरॉय हों, खुफिया पुलिस हों अथवा स्वयं सम्राट् हों। अराजकोंके स्वदेश-प्रेमका मैं बड़ा आदर करता हूँ। वे जो स्वदेशके लिए आनन्दपूर्वक मरनेके लिए प्रस्तुत रहते हैं उनकी मैं इज्जत करता हूँ। पर मैं उनसे पूछता हूँ कि क्या किसीकी जान लेना प्रतिष्ठाका कार्य है? क्या छुरेसे हत्या करनेके फलस्वरूप जो मृत्यु दंड प्राप्त होता है उसे किसी भी प्रकार गौरवपूर्ण माना जा सकता है? मैं कहता हूँ 'नहीं'। कोई धर्मग्रन्थ ऐसे उपायका अवलम्बन करनेकी अनुमति नहीं देता।

यदि मुझे इस बातका विश्वास हो जाये कि अंग्रेजोंके रहते हुए इस देशका कदापि उद्धार न होगा — उन्हें यहाँसे निकाल ही देना चाहिए — तो उनसे अपना बोरिया-बिस्तर समेटकर यहाँसे चलते होनेकी प्रार्थना करनेमें मैं कभी आगा-पीछा न करूँगा और मुझे विश्वास है कि अपनी इस दृढ़ धारणाके समर्थनमें मैं मरनेको भी तैयार रहूँगा;

ऐसा मरण ही मेरी सम्मतिमें प्रतिष्ठाका मरण है। बम फेंकनेवाला गुप्त-रूपसे षड्यंत्र करता है। वह बाहर निकलनेसे डरता रहता है और पकड़े जानेपर अपने अयोग्य और अतिरिक्त उत्साहका प्रायश्चित भोगता है। ये लोग कहते हैं कि यदि हम लोग ऐसी कार्रवाइयाँ न करते, यदि हमारे कुछ साथी बहुतोंको बमका निशाना न बनाते तो बंगभंगके सम्बन्धमें . . .। (इस स्थानपर श्रीमती बेसेंटने गांधीजीसे भाषण शीघ्र समाप्त करनेके लिए कहा।) मि० लॉयन्सकी अध्यक्षतामें बंगालमें भी मैंने यही बात कही[1] थी। मेरा खयाल है कि मैं जो-कुछ कह रहा हूँ वह बिलकुल ठीक है। मुझे अपना भाषण बन्द करनेको कहा जायेगा तो मैं बन्द कर दूँगा। (अध्यक्षको सम्बोधित कर) महाराज, मैं आपकी आज्ञाकी प्रतीक्षा कर रहा हूँ। यदि आपकी समझमें मेरी इन बातोंसे देश और साम्राज्यको हानि पहुँच रही है तो मुझे अवश्य चुप हो जाना चाहिए। (कहिए, कहिएका शोर; अध्यक्षने गांधीजीसे अपना मतलब साफ तौरपर बतलानेको कहा) मैं अपना मतलब स्पष्ट करता हूँ। मैं सिर्फ (फिर गड़बड़) मित्रो, इस गड़बड़से आप रुष्ट न हों। श्रीमती बेसेंटको मेरा चुप हो जाना उचित जान पड़ता है, इसका कारण यह है कि भारतपर उनका बहुत अधिक प्रेम है और वे समझती हैं कि युवकोंके सामने इस प्रकारकी स्पष्ट बातें कहकर मैं अनुचित काम कर रहा हूँ। पर यदि ऐसा हो तो भी मेरा कहना है कि मुझे भारतको उस अविश्वाससे मुक्त करना है जो राजा और प्रजा, सभीके मनमें उत्पन्न हो गया है। यदि अपने साध्यको प्राप्त करना हो तो परस्परकी प्रीति तथा विश्वासपर स्थापित साम्राज्यसे ही हमारा काम चलेगा और अपने-अपने घरोंमें बैठे-बैठे दायित्व-हीन ढंगसे यही बातें कहनेकी अपेक्षा क्या इस विद्यालयके प्रांगणमें खड़े होकर उन्हें खुले तौरपर कहना अधिक अच्छा नहीं है? मेरा तो खयाल है, इन बातोंको पूरी स्पष्टतासे कहना ही अधिक अच्छी बात है। पहले भी मैंने ऐसा ही किया है और उसका परिणाम बड़ा ही उत्तम हुआ है। मैं यह भी जानता हूँ कि आज ऐसी कोई बात नहीं है जिसकी विद्यार्थियोंमें चर्चा न होती हो या जिसे वे न जानते हों। इसीलिए मैंने यह आत्म-निरीक्षण आरम्भ किया है। अपने देशका नाम मुझे बड़ा ही प्यारा है। इसीसे मैंने आप लोगोंके साथ विचार-विनिमयकी इतनी चेष्टा की है और आप लोगोंसे मेरी नम्रतापूर्वक प्रार्थना है कि अराजकताको भारतमें बिलकुल स्थान न मिलने दीजिए। राज्यकर्ताओंसे आपको जो-कुछ कहना हो उसे खुलकर साफ शब्दोंमें कह दीजिए, और यदि आपका कथन उन्हें बुरा लगे तो उसके परिणामस्वरूप जो कष्ट मिलें उन्हें भोगनेके लिए तैयार रहिए। आप उन्हें गालियाँ न दीजिए। जिस सिविल-सर्विसपर निन्दाकी बेहद बौछार की जाती है एकबार उसके एक अधिकारीसे मुझे वार्तालाप करनेका अवसर मिला था। इन लोगोंसे मेरा कुछ बहुत हेलमेल नहीं है, तथापि उसकी बातचीतका ढंग प्रशंसनीय था। उसने पूछा — क्या आपका भी ऐसा ही खयाल है कि हम सभी सिविल-सर्विसवाले बुरे होते हैं और जिन लोगोंपर शासन करनेके लिए हम यहाँ आते हैं उनपर हम केवल अत्याचार ही करना चाहते हैं? मैंने कहा — "नहीं,

१. देखिए "भाषण: विद्यार्थी भवन, कलकत्तामें", ३१-३-१९१५।

नहीं, मैं ऐसा नहीं मानता।" इसपर उसने कहा कि "तो फिर जब कभी आपको मौका मिले आप हम अभागे सिविल-सर्वेंटोंके पक्षमें लोगोंके सामने दो शब्द कहनेकी कृपा करें।" वे दो शब्द मैं यहाँ कहनेवाला हूँ। इंडियन सिविल-सर्विसके बहुत-से लोग निःसन्देह उद्धत, अत्याचार-प्रिय और अविवेकी होते हैं। इसी तरहके और कितने ही विशेषण उन्हें दिये जा सकते है। यह सब कुछ मुझे स्वीकार है। यही नहीं, मैं यह भी मानता हूँ कि कुछ वर्षों तक हमारे देशमें रहकर वे और भी ओछी मनोवृत्तिके बन जाते हैं। पर इससे क्या सूचित होता है? यहाँ आनेके पहले यदि वे सभ्य और सत्पुरुष थे, पर यहाँ आकर यदि वे नीति-भ्रष्ट हो गये तो क्या इसको हमारे ही चरित्रका प्रतिबिम्ब नहीं कहना चाहिए? (नहीं, नहीं) आप लोग खुद ही विचार करें कि एक मनुष्य जो कल तक भला आदमी था, मेरे साथ रहनेपर खराब हो जाये तो उसके इस अधःपतनके लिए कौन उत्तरदायी होगा? वह या मैं? भारतमें आने-पर खुशामदकी जो हवा उन्हें चारों ओरसे घेर लेती है वही उनके नीतिच्युत होनेका कारण है। ऐसी हालतमें कोई भी व्यक्ति नीतिच्युत हो सकता है। कभी-कभी अपने दोष स्वीकार करना भी अच्छा होता है।

यदि किसी दिन हमें स्वराज्य मिलेगा तो वह अपने ही पुरुषार्थसे मिलेगा। वह दानके रूपमें कदापि नहीं मिलनेका। ब्रिटिश-साम्राज्यके इतिहासपर दृष्टिपात कीजिए। ब्रिटिश-साम्राज्य चाहे जितना स्वातंत्र्य-प्रेमी हो, फिर भी स्वतन्त्रता-प्राप्तिके लिए स्वयं उद्योग न करनेवालोंको वह कभी स्वतंत्रता देनेवाला नहीं है। आप चाहें तो बोअर-युद्धसे कुछ शिक्षा ले सकते हैं। कुछ ही वर्ष पहले जो बोअर लोग साम्राज्यके शत्रु थे, वही अब उसके मित्र हैं।

(इस समय फिर गड़बड़ शुरू हुई और श्रीमती बेसेंट उठकर चल दीं। उनके साथ और भी कई बड़े-बड़े लोग उठकर चलते बने। और व्याख्यानका अन्त यहाँ हो गया।)

[अंग्रेजीसे]

स्पीचेज ऐंड राइटिंग्ज ऑफ महात्मा गांधी

१६७. महाराजा दरभंगाको लिखे पत्रका अंश[1]

फरवरी ७, १९१६

वाइसरॉय महोदयके बनारस पधारनेके विषयमें कुछ शब्द कहनेका मेरा उद्देश्य केवल यही था कि हिंसा-मूलक और तथाकथित अराजकतापूर्ण सभी कृत्योंके विरुद्ध में अपने उन विचारोंका, जिन्हें मैं पक्की तौरपर माने हुए हूँ और जिनमें फेरफारकी

१. काशी हिन्दू विश्वविद्यालयके उस समारोहमें जिसके अध्यक्ष महाराजा दरभंगा थे, ६ फरवरी १९१६ को गांधीजीने जो भाषण दिया था उसके कुछ विचारोंसे खिन्न होकर उपस्थित राजा-महाराजा और कुछ अन्य लोग भी उठकर चले गये थे तथा सभा भंग हो गई थी। उसी घटनाके विषयमें महाराजा दरभंगाको गांधीजीने अपना मंशा स्पष्ट करते हुए जो पत्र लिखा उसका यह अंश **पायनियर**के "हिन्दू युनिवर्सिटी, ए रिमार्केबल इन्सिडेंट" शीर्षक एक लेखमें उद्धृत किया गया था।

गुँजाइश नहीं है, इजहार कर सकूँ। मुझे, तथा हममें से और भी बहुत लोगोंको इस बातपर बहुत ही लज्जा मालूम हुई कि एक अत्यन्त शरीफ वाइसरॉयकी जानकी हिफाजतके लिए, उस समय जब कि वे इस पवित्र नगरीमें हमारे विशिष्ट और सम्मानित अतिथि थे, असाधारण सतर्कतासे काम लेना जरूरी समझा गया था। मेरे जीवनका लक्ष्य अपने देशके लिए अधिकसे-अधिक स्वतंत्रता-प्राप्तिके विचार प्रचारित करना और इसकी प्राप्तिके निमित्त किये जानेवाले कामोंमें मदद पहुँचाना जरूर है, परन्तु किसी भी मनुष्यके प्रति भले ही उस व्यक्तिकी ओरसे हमारे उत्तेजित होनेके अनन्त कारण उपस्थित किये गये हों; हिंसाका प्रयोग करके कदापि नहीं। मेरे भाषणका मुख्य उद्देश्य यह था कि [हमारे देशके] नवयुवकोंके दिलोंमें मेरी यह सलाह घर कर जाये।

[अंग्रेजीसे]

पायनियर, ९-२-१९१६

१६८. भेंट : बनारसकी 'घटना' के सम्बन्धमें ए० पी० आई० को

फरवरी ९, १९१६

श्री गांधीसे, जो कल तीसरे पहर बनारससे बम्बई पहुँचे, एक संवाददाताने बनारसकी उस घटनाका हाल जानना चाहा जिसमें उनको [एक सभामें] अपना भाषण पूरा नहीं करने दिया गया था। श्री गांधीने उत्तरमें कहा कि मुझे न यह मालूम है कि मेरे किन शब्दोंपर आपत्ति उठाई गई थी; और न श्रीमती बेसेंटने ही मेरे भाषणके आपत्तिजनक अंशकी ओर संकेत किया था। उन्होंने तो अध्यक्ष महोदयसे केवल इतना ही कहा था कि मुझे और आगे न बोलने दिया जाये। उस दिनकी सभामें दिये गये भाषणके उस अंशमें जो अराजकतासे सम्बन्ध रखता है लगभग वे ही बातें दुहराई गई थीं जिन्हें मैंने गतवर्ष कलकत्तेमें श्री लॉयन्सके सभापतित्वमें आयोजित एक सभामें कहा था।[1] श्रीमती बेसेंटके मुझे न बोलने देनेकी बातपर श्रोताओंने मुझसे अपना भाषण जारी रखनेका आग्रह किया, परन्तु मैंने उत्तर दिया कि मैं अब अध्यक्ष महोदयकी अनुमति पानेपर ही बोलूंगा। उस सभामें उपस्थित सज्जनोंसे मैंने श्रीमती एनी बेसेंट द्वारा उठाई गई आपत्तिपर रोष न करनेको — यद्यपि वे ऐसा करनेके इच्छुक हो रहे थे — कहा, और यह भी कहा कि जिस किसीके दिलको मेरे विचारोंसे दुःख पहुँचा हो, उसे अध्यक्षसे इसपर निर्णय माँगनेका हक है।

श्री गांधीने आगे कहा :

महाराजा दरभंगा [अध्यक्ष] से अनुमति पानेपर ही मैंने आगे बोलना शुरू किया था। महाराजाने यह अनुमति कुछ देर तक मामलेपर गौर करके तथा मुझसे

१. देखिए "भाषण : विद्यार्थी भवन, कलकत्तामें", ३१-३-१९१५।

अपनी बातें संक्षेपमें व्यक्त करनेकी ताकीद करके दी थी। किन्तु जब मैं पुनः बोलने खड़ा हुआ, तो मुझे सभा-मंचपर कुछ खलबलो-सी दीख पड़ी। मैंने यह भी देखा कि श्रीमती बेसेंट समीप बैठे हुए राजाओंसे कानाफूसी कर रही हैं; वे उनसे यह कह रही थीं कि मैं न तो अपने शब्द वापस ले रहा हूँ और न उनके सम्बन्धमें कोई सफाई पेश कर रहा हूँ। उन्होंने उनसे यह भी कहा कि उन लोगोंका वहाँ बैठे रहना अब ठीक नहीं है।[1] दूसरी चीज जो मेरी निगाहमें आई वह यह थी कि राजा लोग एक-एक करके उठकर चल दिये थे, अध्यक्ष महोदयने भी सभा-मण्डप छोड़ दिया; और मैं अपना भाषण समाप्त न कर पाया।

श्री गांधीसे जब यह पूछा गया कि क्या आप अपने उस दिनके भाषणका कोई अंश वापस लेना चाहते हैं, तब उन्होंने स्पष्ट रूपसे कहा कि मैंने प्रत्येक शब्द भली-भाँति सोच-विचार कर ही कहा था:

इसके अनन्तर श्री गांधीने कहा:

इस बातकी तो कल्पना भी नहीं की जा सकती कि मैं कभी हिंसात्मक तरीकोंका समर्थन करूँगा। मैं [उस सभामें] भाषण देनेको तैयार भी न था। मित्रोंके जोर डालनेपर मुझे बोलना पड़ा था, क्योंकि लोगोंका यह खयाल था कि देशके विद्यार्थी-समाजपर मेरा थोड़ा-बहुत प्रभाव है। मुझसे हिंसात्मक तरीकोंपर अपने विचार व्यक्त करनेको कहा गया; दुर्भाग्यसे कुछ भावुक युवकोंने हिंसाको अपना सिद्धान्त बना रखा है। और नवयुवकोंके इसी ध्येयके कारण हमें अपने सम्मानित अतिथिकी जानकी हिफाजतके लिए असाधारण सावधानियाँ बरते जानेका लज्जाजनक दृश्य देखना पड़ा। मेरे उस व्याख्यानमें शुरूसे आखिर तक कहीं भी हिंसात्मक कृत्योंका समर्थन न था। हाँ, मैंने उन भ्रमित नवयुवकोंकी देशभक्तिकी भावनाकी सराहना जरूर की थी। मैंने तो यह स्पष्ट कर ही दिया था कि हिंसात्मक कार्य और भी अधिक निन्द्य इस कारण है कि आगे चलकर इस कृत्यसे जो क्षति होगी वह कभी पूरी न की जा सकेगी। मेरे पूरे भाषणका उद्देश्य खुद हम लोगोंकी त्रुटियोंका अवलोकन करना तथा यह दिखाना था कि अपनी अनेक कठिनाइयोंके लिए हम स्वयं ही उत्तरदायी हैं। मेरा दृढ़ विश्वास है कि यदि श्रीमती एनी बेसेंट जल्दबाजीसे भरा और विवेकहीन खलल न डालतीं तो कुछ भी गड़बड़ी न होती और मेरा पूरा भाषण सुननेवालेके मनमें मेरे अभिप्रायके विषयमें किसी प्रकारका सन्देह न रहने पाता।

श्री गांधीसे यह पूछे जानेपर कि क्या यह सच है कि पण्डित मदनमोहन मालवीयने[2] उस घटनाके पश्चात् सभासे क्षमा माँगी थी, उन्होंने कहा:

मालवीयजीने सभामें भाषण अवश्य दिया था, परन्तु उनके भाषणमें मुझे क्षमा-याचना प्रतीत नहीं हुई। उन्होंने इतना ही कहा था कि गांधीजी मेरे विशेष आग्रहसे

१. न्यू इंडिया, (१०–२–१९१६) में ए० पी० आई० के प्रतिनिधिको दी गई भेंटके इस विवरणके अतिरिक्त श्रीमती बेसेंटका यह वक्तव्य भी छापा गया था: "मैंने राजाओंसे सभा-भवन छोड़कर चले जानेको नहीं कहा था।" देखिए परिशिष्ट १।

२. (१८६१–१९४६); बनारस हिन्दू-युनिवर्सिटीके संस्थापक; शाही परिषदके सदस्य; दो बार भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके अध्यक्ष चुने गये।

सभामें बोले थे और उनके भाषणका एकमात्र उद्देश्य यह दिखाना था कि हिंसात्मक तरीके कितने आत्मघातक होते हैं।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १०-२-१९१६

१६९. भाषण : मद्रासमें 'स्वदेशी' पर[1]

फरवरी १४, १९१६

मैंने बड़ी झिझकके साथ आपके सामने बोलना स्वीकार किया। और विषयके चुनावमें भी बड़ी मुश्किल गुजरी। मैंने जो विषय चुना है वह बहुत नाजुक और कठिन है। नाजुक इसलिए कि स्वदेशीके सम्बन्धमें मेरी धारणाएँ जरा विशिष्ट ढंगकी हैं और कठिन इसलिए कि अपने विचारोंकी ठीक-ठीक अभिव्यक्तिके लिए भाषापर जैसे अधिकारकी जरूरत होती है वैसा अधिकार मुझे नहीं है। निःसन्देह मेरे भाषणमें आपको बहुत-सी खामियाँ दिखाई देंगी किन्तु मुझे आपकी उदारतापर भरोसा है — खासकर तब, जब मैं आपसे कह रहा हूँ कि मैं जो-कुछ बोलूँगा, उसके अनुसार या तो यथाशक्ति चल रहा हूँ या चलनेकी तैयारी कर रहा हूँ। आपने पिछले महीने भाषणोंकी जगह पूरा एक हफ्ता प्रार्थनाके लिए दिया, यह जानकर मुझे ढाढ़स होता है। मैंने पूरे मनसे प्रार्थना की है कि मैं जो-कुछ कहनेवाला हूँ वह फलप्रद हो और मुझे विश्वास है आप भी मेरे कथनकी सफलताके लिए प्रार्थना करेंगे।

बहुत सोचनेके बाद मैंने स्वदेशीकी एक परिभाषा निश्चित की है और शायद मेरा अभिप्राय इसके द्वारा सर्वाधिक स्पष्ट हो जाता है। स्वदेशी वह भावना है जो हमें दूरके बजाय अपने आसपासके परिवेशके ही उपयोग और सेवा तक सीमित रखती है। उदाहरणके लिए यदि धर्मको लें तो इस परिभाषाको सार्थक बनानेके लिए, मुझे अपने पूर्वजोंसे प्राप्त धर्मका ही पालन करना चाहिए। अपने समीपवर्ती धार्मिक परिवेशका उपयोग इसी तरह हो सकेगा। यदि वह मुझे सदोष जान पड़े तो मुझे चाहिए कि मैं उसके दोषोंको हटाकर उसकी सेवा करूँ। इसी तरह राजनीतिके क्षेत्रमें मुझे स्थानीय संस्थाओंका उपयोग करना चाहिए और उनके जाने-माने दोषोंका परिमार्जन करके उनकी सेवा करनी चाहिए। आर्थिक क्षेत्रमें मुझे निकट-पड़ोसियों द्वारा उत्पादित वस्तुओंका ही उपयोग करना चाहिए और यदि उन उद्योग-धन्धोंमें कहीं कोई कमी हो तो मुझे उन्हें ज्यादा सम्पूर्ण और सक्षम बनाकर उनकी सेवा करनी चाहिए। मुझे लगता है कि यदि ऐसे स्वदेशीको व्यवहारमें उतारा जाये तो इससे स्वर्णयुगकी अवतारणा हो सकती है। और जिस प्रकार हम स्वर्णयुगकी अवतारणाकी दिशामें अपने प्रयास-मात्र इसीलिए बन्द नहीं कर देते कि वह हमारे युगमें अवतरित नहीं हो पायेगा, उसी प्रकार

१. मिशनरी-सम्मेलनमें दिये गये इस भाषणका पाठ २१-६-१९१६ के **यंग इंडिया**में छपा था।

हमें स्वदेशीकी दिशामें भी अपने प्रयास-मात्र इसलिए बन्द नहीं कर देने चाहिए कि वह अभी कई पीढ़ियों तक अप्राप्य ही रहेगा।

अब हम, ऊपर स्वदेशीकी जिन तीन शाखाओंका उल्लेख किया गया है, उनका थोड़ा विवेचन करें। हिन्दू-धर्म अपनी बुनियादमें निहित इसी स्वदेशीकी भावनाके कारण स्थितिशील और फलस्वरूप अत्यन्त शक्तिशाली बन गया है। चूँकि वह धर्मान्तरणकी नीतिमें विश्वास नहीं करता इसलिए वह सबसे ज्यादा सहिष्णु है, और आज भी वह अपना विस्तार करनेमें उतना ही समर्थ है, जितना भूतकालमें था। कहा जाता है कि उसने बौद्ध-धर्मको खदेड़कर भारतसे बाहर कर दिया। यह ठीक नहीं है। उसने उसे आत्मसात् कर लिया। स्वदेशीकी भावनाके कारण हिन्दू अपने धर्मका परिवर्तन करनेसे इनकार करता है। इसका अर्थ यह नहीं है कि वह अपने धर्मको सर्वश्रेष्ठ मानता है। कारण यह है कि वह जानता है कि उसमें नये सुधारोंका समावेश करके उसे पूर्ण बनाया जा सकता है। और मैंने हिन्दुत्वके विषयमें जो-कुछ कहा है, वह मेरे विचारसे संसारके सभी बड़े-बड़े धर्मोंपर लागू है। हाँ, हिन्दूधर्मके बारेमें यह विशेष रूपसे सही है। यहाँ वह बात आ जाती है जिसे कहनेकी मैं कोशिश कर रहा हूँ। भारतमें काम करनेवाली बड़ी-बड़ी मिशनरी संस्थाओंने भारतके लिए बहुत कुछ किया है और अब भी कर रही हैं, और भारत इसके लिए उनका ऋणी है। किन्तु मैंने जो-कुछ कहा है, उसमें यदि कोई सार हो तो क्या यह ज्यादा अच्छा न होगा कि वे परोपकारका अपना काम जारी रखते हुए धर्मान्तरणका काम बन्द कर दें? क्या ईसाइयतकी भावनाके पोषणकी दृष्टिसे यह अधिक अच्छी बात न होगी? मैं आशा करता हूँ कि आप मेरे इस कथनको अशिष्टता नहीं मानेंगे। मैंने हृदयपूर्वक और विनम्रतासे यह सुझाव सामने रखा है। इसके सिवा आप मेरी बात ध्यानसे सुनें, इसका मुझे कुछ अधिकार भी है। मैंने 'बाइबिल' को समझनेका प्रयत्न किया है। मैं उसे अपने धर्मशास्त्रोंमें गिनता हूँ। मेरे हृदयपर जितना अधिकार 'भगवद्गीता' का है, लगभग उतना ही अधिकार 'सरमन ऑन द माउन्ट' का भी है। 'लीड, काइन्डली लाइट' तथा अन्य अनेक प्रेरणा-स्फूर्त प्रार्थना-गीत मैं किसी ईसाई धर्मावलम्बीसे कम भक्तिके साथ नहीं गाता हूँ। मैं विभिन्न सम्प्रदायोंके प्रसिद्ध ईसाई मिशनरियोंके सम्पर्कमें आया हूँ और उनसे प्रभावित भी हुआ हूँ। उनमें से अनेक आज भी मेरे मित्र हैं। इसलिए आप कदाचित् स्वीकार करेंगे कि मैंने यह सुझाव किसी पूर्वग्रह-ग्रस्त हिन्दूकी तरह नहीं दिया है, बल्कि धर्मके एक ऐसे विनम्र और निष्पक्ष विद्यार्थीके नाते दिया है, जिसका ईसाइयतकी ओर बड़ा झुकाव है। क्या यह सम्भव नहीं है कि "सारी दुनियामें जाओ" — इस सन्देशकी वास्तविक भावनाको समझे बिना उसका संकीर्ण अर्थ किया गया है? मैं अपने अनुभवसे कहता हूँ कि इससे कोई इनकार नहीं करेगा कि ज्यादातर धर्म-परिवर्तनका तो धर्मसे नाम-मात्रका ही सम्बन्ध होता है। कुछ तो हृदयके बजाय पेटकी खातिर इस ओर प्रेरित होते हैं। और हर धर्मान्तरणके कारण कुछ-न-कुछ कटुता पैदा होती ही है, जो मेरी समझमें टाली जा सकती है। मैं फिर अनुभवके बलपर कहता हूँ कि जिसे 'नया जन्म' (न्यू बर्थ) कहा जाता है, हृदय-परिवर्तनकी वह घटना हर महान् धर्ममें सम्भव है। मैं जानता हूँ कि मैं एक बड़ी नाजुक-सी बात

कह रहा हूँ। फिर भी मैं अपने भाषणके इस भागके अन्तमें हिम्मतके साथ यह कहना चाहता हूँ कि इस समय यूरोपमें जो भयानक काण्ड चल रहा है, उससे तो यही प्रकट होता है कि शान्तिके पुत्र, नाजरथके यीशुके सन्देशपर यूरोपमें लगभग किसीने कान नहीं दिया और सम्भव है कि अब उसपर पूर्वसे प्रकाश डालना पड़े।

मैंने धार्मिक बातोंमें आपसे सहायताकी प्रार्थना की है और एक विशिष्ट अर्थमें आप ही यह सहायता दे सकते हैं। किन्तु मैं आपसे राजनीतिक क्षेत्रमें भी सहयोगकी प्रार्थना करता हूँ। मैं यह नहीं मानता कि धर्मका राजनीतिसे कोई वास्ता नहीं है। धर्म-रहित राजनीति शवके समान है, जिसे दफना देना ही उचित है। सच तो यह है कि आप अपने तरीकेसे चुपचाप राजनीतिको काफी प्रभावित करते हैं। और मुझे ऐसा लगता है कि यदि राजनीतिको धर्मसे विच्छिन्न कर देनेका प्रयत्न नहीं किया गया होता, जैसा कि आज भी किया जा रहा है, तो जिस हदतक राजनीतिका पतन हुआ दिखाई पड़ रहा है, वह उस हदतक न गिरती। यह तो कोई नहीं कह सकता कि देशके राजनैतिक जीवनकी हालत अच्छी है। स्वदेशीकी भावनाकी खोज करते हुए मुझे देशकी पुरानी संस्थाएँ, ग्राम पंचायतें आदि बहुत आकृष्ट करती हैं। वास्तवमें भारत एक गणतन्त्र है और यही कारण है कि उसपर आजतक जो प्रहार हुए हैं, उन्हें वह बर्दाश्त कर सका है। राजाओं और नवाबोंने, चाहे वे भारतीय रहे हों या विदेशी, प्रजासे सिर्फ कर ही वसूला है; और इससे अधिक प्रजासे उनका कोई और सम्बन्ध शायद ही रहा हो। और प्रजाने "राजाका अंश राजाको" दे देनेके बाद शेष बातोंमें ज्यादातर अपनी मर्जीके मुताबिक ही काम किया है। वर्ण-व्यवस्थाके विशाल संगठनके द्वारा समाजकी केवल धार्मिक ही नहीं, राजनीतिक आवश्यकताओंकी भी पूर्ति हो जाती थी। गाँवके लोग अपना आन्तरिक काम-काज जाति संगठनके द्वारा चलाते थे और उसीके द्वारा ही शासकोंके अत्याचारोंका मुकाबला करते थे। जिस राष्ट्रने जाति-संगठनके द्वारा अपनी संगठन-शक्तिका ऐसा अच्छा परिचय दिया हो, उसकी अद्भुत संगठन-क्षमतासे इनकार करना सम्भव नहीं। जिसने पिछले वर्ष हरद्वारका कुम्भ मेला देखा हो, वह आसानीसे समझ सकता है कि जो संगठन बिना किसी विशेष प्रयासके सहज ही लाखों तीर्थ-यात्रियोंके खान-पानकी उत्तम व्यवस्था कर सकता है, वह कितना कौशलपूर्ण होगा। और इसपर भी यह कहनेका फैशन चल पड़ा है कि हममें संगठन-शक्ति नहीं है। हाँ, मेरा खयाल है, जो लोग नई परम्पराओंमें पोषित हुए हैं, उनके बारेमें यह बात एक हदतक ठीक है। स्वदेशीकी भावनासे लगभग घातक रूपसे विच्छिन्न हो जानेके कारण हमें भयंकर विघ्न-बाधाओंसे गुजरना पड़ा है। हम शिक्षित वर्गके लोगोंने विदेशी भाषाके माध्यमसे शिक्षा-दीक्षा पाई है। इसलिए जनतापर हमारा असर नहीं हुआ। हम जनताका प्रतिनिधित्व करना तो चाहते हैं, पर कर नहीं पाते। वे अपने अंग्रेज हुक्कामोंको जितना जानते हैं, उससे अधिक हमें भी नहीं जानते। वे न उनसे खुलते हैं, न हमसे। उनकी आकांक्षाएँ हमारी नहीं हैं, और इसलिए दोनोंके बीच दरार है। और इसलिए आप जो देखते हैं वह वास्तवमें संगठनकी कमी न होकर प्रतिनिधि (रिप्रेजेंटेटिव) और प्रतिनिधित (रिप्रेजेंटेड) में पारस्परिक सामंजस्यका अभाव है। यदि पिछले पचास वर्षोंमें हमारी शिक्षा-दीक्षा अपनी-अपनी भाषाओंके माध्यमसे हुई होती तो हमारे बड़े-

बूढ़े, नौकर-चाकर और आस-पासके लोग सभी हमारे ज्ञानसे लाभान्वित होते, 'रामायण' और 'महाभारत' की तरह किसी बसु या रायके आविष्कार घर-घरकी निधि होते। अभी तो स्थिति यह है कि जहाँतक जनताका सम्बन्ध है, ये आविष्कार विदेशी वैज्ञानिकों द्वारा किये गये आविष्कारों-जैसे ही हैं। यदि ज्ञानकी सभी शाखाओंकी शिक्षा देशी भाषाओंमें हुई होती तो मैं यह बात निःसंकोच कह सकता हूँ कि हमारी इन भाषाओंकी आश्चर्यजनक समृद्धि हुई होती। ग्राम-सफाई आदिके प्रश्न कबके हल हो चुके होते। ग्राम-पंचायतें एक विशिष्ट रूपसे जीवन्त शक्तियोंके रूपमें काम करती होतीं; और भारत, उसकी जरूरतोंको देखते हुए उसे जैसा स्वराज्य चाहिए, वैसे स्वराज्यका उपभोग करता होता तथा उसे अपनी पवित्र भूमिपर संगठित हत्या-काण्डके दृश्य देखनेकी नदामत न उठानी पड़ती। अब भी बहुत देर नहीं हुई है — बात बन सकती है। और इसमें यदि आप लोग चाहें तो किसी भी अन्य संस्था अथवा संस्थाओंसे अधिक मदद पहुँचा सकते हैं।

अब मैं स्वदेशीकी अन्तिम शाखाको लूँगा। जनताकी जबरदस्त गरीबीकी जड़में ज्यादातर तो आर्थिक और औद्योगिक जीवनमें हमारा "स्वदेशी" से बुरी तरह विच्छिन्न हो जाना है। यदि बाजारमें देशके बाहरकी एक भी चीज न मँगाई जाती तो भारतमें आज घी-दूधकी नदियाँ बहतीं। किन्तु यह हमारे भाग्यमें नहीं था। हमें लोभ था और इंग्लैंडको भी। इंग्लैंड और भारतका सम्बन्ध गलत आधारपर स्थित था। लेकिन आज वह जिस उद्देश्यसे यहाँ रह रहा है, उसके सम्बन्धमें उसे कोई भ्रम नहीं है। उसकी घोषित नीति तो यह है कि भारतको जनताकी धरोहर मानकर उसीकी भलाईके लिए उसका कारोबार चलाना है। यदि यह सच हो तो लंकाशायरको राहसे हट जाना चाहिए। और यदि "स्वदेशी" का सिद्धान्त सही है तो लंकाशायरको उससे कोई हानि नहीं होगी, भले ही प्रारम्भमें उसे कुछ धक्का लगे। मैं स्वदेशीकी कल्पना बदलेके भावसे किये गये बहिष्कारके रूपमें नहीं करता। मैं तो उसे एक ऐसा धार्मिक सिद्धान्त मानता हूँ जिसका पालन हर एकको करना चाहिए। मैं अर्थशास्त्री नहीं, किन्तु मैंने कुछ ग्रन्थ पढ़े हैं, जिनसे ज्ञात होता है कि इंग्लैंड आसानीसे अपनी जरूरतकी सभी चीजें पैदा करके स्वावलम्बी राष्ट्र बन सकता है। सम्भव है, यह बात बिलकुल हास्यास्पद लगे, और इसके गलत होनेका शायद सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि इंग्लैंड बाहरसे अधिकतम माल मँगानेवाले देशोंमें आता है। किन्तु भारत जबतक अपने हितोंकी रक्षा करने योग्य नहीं हो जाता तबतक लंकाशायर अथवा अन्य किसी देशके लिए उसका जीना गलत है। और वह अपने हितोंकी रक्षा तभी कर सकता है जब वह — अपने प्रयत्नसे या दूसरोंकी मदद लेकर — अपनी आवश्यकताकी सारी वस्तुएँ अपने ही क्षेत्रमें पैदा करे। उसे उस पागलपन-भरी विनाशकारी स्पर्धाके बवंडरमें पड़नेकी न जरूरत है और न उसे उसमें खींचा जाना चाहिए, जो पारस्परिक लड़ाई-झगड़े, ईर्ष्या-द्वेष और अन्य अनेक बुराइयोंको जन्म देती है। किन्तु उसके बड़े-बड़े करोड़पति सेठोंको इस विश्व-व्यापी प्रतिस्पर्धामें पड़नेसे रोकेगा कौन? निःसन्देह कानूनसे काम नहीं चलेगा। अलबत्ता, लोकमतका बल और उचित शिक्षा इस दिशामें बहुत-कुछ कर सकते हैं। हाथ-करघा उद्योग मरणासन्न है। पिछले साल अपने दौरोंमें मैं जितने बुनकरोंसे मिल सकता था, खास तौरसे मिला। मेरा

मन यह देखकर बहुत दुःखी हुआ कि ये किस तरह हिम्मत हार बैठे हैं और किस तरह कुटुम्बके-कुटुम्ब इस धन्धेको, जो किसी समय बड़ा सम्मानित और तरक्कीपर था, छोड़ बैठे हैं। अगर हम स्वदेशीके सिद्धान्तका पालन करें, तो हमारा और आपका यह कर्त्तव्य होगा कि हम अपने उन पड़ोसियोंकी तलाश करें जो हमारी जरूरतें पूरी कर सकते हैं, और अगर कुछ ऐसे पड़ोसी हैं जिनके पास अच्छे धन्धोंका अभाव है, तो उन्हें सिखायें कि वे किस तरह अच्छा काम करके हमारी आवश्यकताकी पूर्ति कर सकते हैं। यदि ऐसा हो, तो भारतका हर गाँव स्वावलम्बी और स्वयंपूर्ण इकाई बन जायेगा। वह दूसरे गाँवोंसे उन्हीं चीजोंका विनिमय करेगा जो उस जगह पैदा नहीं की जा सकतीं। मुमकिन है, सुननेमें यह सब मूर्खतापूर्ण लगे। तो सुनिए, भारत मूर्खताओंका देश है। क्या यह मूर्खता नहीं है कि जब कोई रहमदिल मुसलमान साफ-सुथरा पानी पिलानेको तत्पर है तब भी प्याससे अपना गला सूखने दिया जाये? किन्तु, हजारों हिन्दू ऐसे हैं जो मरना पसन्द करेंगे, लेकिन किसी मुसलमान गृहस्थका दिया पानी नहीं पियेंगे। ये मूर्ख व्यक्ति, यदि इन्हें एक बार विश्वास दिला दिया जाये कि उनके धर्मका आदेश यह है कि वे भारतमें ही बने कपड़े पहनें और भारतमें ही उत्पन्न अन्न खायें तो दूसरा कोई भी अन्न खाने, दूसरा कोई भी वस्त्र पहननेसे इनकार कर देंगे। लॉर्ड कर्जनने चाय पीनेका फैशन शुरू किया और आज यह हत्यारी बूटी सारे राष्ट्रको निगल लेनेपर उतारू है। यह लाखों स्त्री-पुरुषोंका हाजमा बिगाड़ चुकी है, और उनकी तंगदिलीको बढ़ा रही है। यदि लॉर्ड हार्डिज़ "स्वदेशी" का फैशन चला दें, तो लगभग सारा भारत शपथपूर्वक विदेशी मालका बहिष्कार कर दे। 'भगवद्गीता' में एक श्लोक[1] है, जिसका यदि भावानुवाद करें तो अर्थ यह होता है कि जन-समुदाय श्रेष्ठोंका अनुसरण करता है। यदि समाजका विचारवान अंश स्वदेशीका व्रत ले ले तो भले ही प्रारम्भमें लोगोंको काफी परेशानी उठानी पड़े किन्तु यह बुराई आसानीसे दूर की जा सकती है। जीवनके किसी भी क्षेत्रमें हस्तक्षेप मुझे नापसन्द है। उसके सम्बन्धमें ज्यादासे-ज्यादा यही कहा जा सकता है कि दूसरी बुराइयोंकी तुलनामें वह कम बुरी है। फिर भी मैं विदेशी मालपर सख्त प्रतिबन्धक महसूलको सहन करूँगा; बल्कि उसका स्वागत करूँगा — उसकी वकालत तक करूँगा। नेटाल ब्रिटिश उपनिवेश है। उसने एक-दूसरे ब्रिटिश उपनिवेश मॉरिशसकी चीनीपर महसूल लगाकर अपने चीनी उद्योगकी रक्षा की। ब्रिटेनने भारतपर कर-मुक्त व्यापार लादकर भारतके साथ अन्याय किया है। इससे भले ही उसे जीवन मिला है, किन्तु भारतको तो मृत्यु ही मिली है।

प्रायः कहा जाता है कि भारत आर्थिक क्षेत्रमें 'स्वदेशी' का अवलम्बन कर ही नहीं सकता। जो यह आपत्ति उठाते हैं वे 'स्वदेशी'को जीवनका नियम नहीं मानते। उनके लेखे वह केवल एक देशभक्तिपूर्ण प्रयत्न है और यदि उसमें कुछ ज्यादा आत्म-निग्रह करना पड़े तो उसे छोड़ा भी जा सकता है। जैसा कि ऊपर बताया गया है, 'स्वदेशी' एक धार्मिक नियम है और इसका पालन करते हुए किसे क्या शारीरिक

१. यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः ।
स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते ॥ ३-२१ ॥

कष्ट होता है इसका कोई विचार नहीं किया जा सकता। इसके अन्तर्गत अगर पिन या सुईसे इसलिए वंचित रहना पड़े कि वे चीजें भारतमें नहीं बनतीं तो कोई परेशानी नहीं जान पड़नी चाहिए। स्वदेशीका व्रत लेनेवाला ऐसी हजारों चीजोंके बिना काम चलाना सीख लेगा, जो आज उसे आवश्यक लगती हैं। इसके सिवा, जो लोग असम्भव कहकर स्वदेशीको मनसे खारिज कर देते हैं वे यह भूल जाते हैं कि आखिरकार स्वदेशी एक आदर्श है और उसे निरन्तर प्रयत्न करते रहकर ही प्राप्त किया जा सकता है। और यदि हम जो चीजें देशमें नहीं बनतीं, उनका उपयोग कुछ अवधिके लिए स्वीकार करके कुछ चीजोंकी हदतक भी स्वदेशीकी सीमा मान लें तो भी वह उद्देश्यकी दिशामें बढ़ना ही कहलायेगा।

अब मुझे स्वदेशीके विरुद्ध एक और आपत्तिका उत्तर देना है। आपत्ति उठानेवालोंका कथन है कि यह एक अत्यन्त स्वार्थपूर्ण सिद्धान्त है; सभ्यताके नैतिक विधानमें इसकी कोई गुंजाइश नहीं हो सकती। उनकी समझमें स्वदेशीका पालन असभ्यताके युगकी ओर लौट जाना है। मैं इस कथनकी विस्तृत व्याख्या नहीं करना चाहता। मैं तो इतना ही निवेदन करूँगा कि नम्रता और प्रेमके विधानके अनुरूप अगर कोई सिद्धान्त है तो वह 'स्वदेशी' का सिद्धान्त ही है। जब मैं अपने कुटुम्बकी सेवा करनेमें भी समर्थ नहीं हूँ, तब सारे भारतकी सेवा करनेपर कमर कसनेका विचार धृष्टता है। इससे तो अच्छा यही होगा कि मैं अपना प्रयत्न अपने कुटुम्बकी सेवा तक ही केन्द्रित रखूँ, और ऐसा समझूँ कि परिवारकी सेवा द्वारा मैं पूरे देशकी या यों कहिए कि, पूरी मानवताकी सेवा कर रहा हूँ। इसीमें नम्रता है और इसीमें प्रेमकी भावना है। कार्यका औचित्य आपके उद्देश्यसे निश्चित होगा। परिवारकी सेवा मैं उससे दूसरोंको होनेवाले कष्टोंकी परवाह किये बिना भी कर सकता हूँ। उदाहरणके लिए, मैं कोई ऐसा काम पा जाऊँ जिसमें लोगोंसे पैसा ऐंठनेकी गुंजाइश हो, और इस तरह अपनी जेब भी गर्म करूँ और कुटुम्बकी अनेक गैरवाजिब जरूरतोंको पूरा करने लगूँ। यह न तो कुटुम्ब-की सेवा होगी और न देशकी। परिवारकी सेवाका दूसरा तरीका यह होगा कि मैं यह समझ लूँ कि प्रभुने मुझे हाथ-पाँव दिये हैं, ताकि मैं उनके बलपर अपने आश्रितोंके लिए और अपने लिए रोटी कमाऊँ। तब मैं अपने और जिनसे सीधा सम्बन्ध रख सकता हूँ उनके जीवनको एकदम सादा बना लूँगा। इस अवस्थामें मैं अपने कुटुम्बकी सेवा बिना किसी औरको कष्ट दिये कर सकूँगा। यदि हर आदमी जीवनकी इस पद्धतिका अनुसरण करे तो अनायास ही आदर्श स्थितिकी स्थापना हो जाये। उस स्थितिको सभी लोग साथ ही प्राप्त नहीं कर लेंगे। किन्तु हममें से जो लोग इसके सत्यको समझकर उसे जीवनमें उतारेंगे, वे उस शुभ दिनको पास लानेमें बड़े सहायक होंगे। इस जीवन-पद्धतिमें दिखाई यह देता है कि मैं केवल भारतकी ही सेवा कर रहा हूँ, फिर भी इतना तो है ही कि मैं किसी दूसरे देशको हानि नहीं पहुँचाता। मेरी देशभक्ति वर्जनशील भी है और ग्रहणशील भी। वर्जनशील इस अर्थमें है कि मैं सम्पूर्ण नम्रताके साथ अपना ध्यान केवल अपनी जन्मभूमिकी सेवामें ही लगाता हूँ, और ग्रहणशील इस अर्थ में है कि मेरी सेवामें स्पर्धा या विरोधका भाव बिलकुल नहीं है। "अपनी सम्पत्तिका उपभोग इस तरह करो कि उससे तुम्हारे पड़ोसीको कोई कष्ट न पहुँचे"—यह केवल कानूनका

ही सिद्धान्त नहीं है, बल्कि जीवनका भी एक महान् सिद्धान्त है। यह अहिंसा अथवा प्रेमके सम्यक् आचरणकी कुंजी है। आप लोग एक महान् धर्मके संरक्षक हैं। अतः यह आपका कर्त्तव्य है कि समाजके सामने इस नई जीवन-पद्धतिका उदाहरण पेश करें, और अपने वचन और कर्मसे लोगोंको बताएँ कि घृणापर आधारित देशभक्ति "मारक" है तथा प्रेमपर आधारित देशभक्ति "तारक" है।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २८–२–१९१६

१७०. भाषण : आश्रमके व्रतोंपर[1]

फरवरी १६, १९१६

अध्यक्ष महोदय तथा मित्रो,

मैं कई बार कह चुका हूँ कि स्वयं अपनी वाणी सुननेका मुझे चाव नहीं है। और निस्सन्देह इस समय भी मेरी वैसी ही मनःस्थिति है।

विद्यार्थियोंके प्रति मेरे मनमें प्रेम है, मेरे मनमें उनके लिए आदर भी है और उन्हें मैं भावी भारतकी आशा मानता हूँ, मैंने उन्हींके विचारसे यहाँ भाषण देनेका निमन्त्रण स्वीकार किया था। मैं किस विषयपर बोलूँ यह तय नहीं कर पाया था। यहाँ किसी सज्जनने मुझे एक पर्ची भेजी है जिसमें लिखा है कि क्या आप कृपया बनारसकी घटनासे विद्यार्थियोंको अवगत करायेंगे? (हर्ष ध्वनि) खेद है कि मैं इन महाशय तथा उन अन्य लोगोंकी जो ऐसा चाहते हैं इच्छा पूरी नहीं कर सकूँगा। मेरे खयालसे तो उस घटनाको कोई भी महत्त्व नहीं दिया जाना चाहिए। ऐसा तो हुआ ही करता है, इसलिए उस घटनाके बारेमें कुछ न कहकर आज मैं आपके सामने उस विषयपर अपने हृदयके उद्‌गार प्रकट करूँगा जिसे मैं सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण और बहुमूल्य मानता हूँ।[2]

पिछले वर्ष अनेक विद्यार्थी मुझसे यहाँ बात करने आये थे। उनसे मैंने कहा था[3] कि मैं भारतमें किसी जगह एक संस्था, आश्रमकी स्थापना करने जा रहा हूँ। आज आपको मैं उसीके बारेमें बतानेवाला हूँ। मैं अनुभव करता हूँ, और अपने सार्वजनिक जीवनमें मैंने सदा इस बातका अनुभव किया है कि हमें इस समय सबसे ज्यादा जरूरत चरित्र-गठनकी है। सभी राष्ट्रोंको इसकी आवश्यकता है परन्तु फिलहाल हमें इसकी जरूरत सबसे ज्यादा है। इसके सिवा किसी दूसरी चीजसे हमारा काम नहीं चल सकता। महान् देशभक्त श्री गोखलेका भी यही कहना था। (तालियाँ) आप जानते हैं उन्होंने अपने अनेक भाषणोंमें कहा है कि यदि हमारी माँगके पीछे चरित्र-बल नहीं होगा तो

१. माननीय रेवरेंड जी० पिटेनरिग, मद्रास क्रिश्चियन कॉलिजकी अध्यक्षतामें वाई० एम० सी० ए० ऑडीटोरियममें दिया गया था।

२. यह अनुच्छेद हिन्दू, १६–२–१९१६ से उद्धृत किया गया है।

३. देखिए "भाषण : गोखले क्लब, मद्रासमें", २०–४–१९१५।

हम कुछ भी प्राप्त नहीं कर सकेंगे — कुछ भी प्राप्त करनेके अधिकारी नहीं बनेंगे। इसीलिए उन्होंने भारत सेवक समाज[1] नामक महान् संस्थाकी स्थापना की थी और जैसा कि आपको मालूम है उक्त संस्थाकी परिचय-पत्रिकामें श्री गोखलेने खूब सोच-विचारकर यह कहा कि हमें देशके राजनैतिक जीवनमें धार्मिकताका समावेश करना है। आप जानते हैं कि वे प्रायः यह भी कहा करते थे कि हमारा औसत चरित्र अनेक यूरोपीय देशोंके औसत चरित्रसे घटकर है। उन्हें मैं गर्वके साथ अपना राजनीतिक गुरु मानता हूँ; मैं नहीं कह सकता कि उनके इस कथनका कोई वास्तविक आधार है या नहीं; तथापि इसमें शक नहीं कि भारतके शिक्षित-वर्गकी हदतक इसमें बहुत-कुछ सचाई है। हम शिक्षित-वर्गवालोंने प्रमादवश चरित्रकी अवहेलना की हो सो बात नहीं है, हम परिस्थितियोंके शिकार हुए हैं। कुछ भी हो, मैंने जीवनके इस सिद्धान्तको मान लिया है कि यदि हमारे कामोंको धर्मका बल प्राप्त नहीं है तो हम चाहे जितने बड़े हों, हम सच्ची उन्नति नहीं कर सकेंगे। किन्तु आप तत्काल पूछेंगे, धर्म है क्या? मेरा उत्तर होगा, वह धर्म नहीं जो संसारके धर्म-ग्रंथोंको पढ़नेके पश्चात् प्राप्त होता है। वास्तवमें वह धर्म बुद्धि-ग्राह्य नहीं है, हृदय-ग्राह्य है। यह हमारे बाहरकी कोई चीज नहीं है, इस तत्त्वको तो हमें अपने अन्तरसे उद्भूत और विकसित करना पड़ेगा। यह सदा हमारे अन्तरमें स्थित है; कुछको इसकी चेतना होती है, कुछको नहीं होती। तथापि वह वहाँ स्थित है। यदि हम कोई काम सही ढंगसे करना चाहते हैं और यदि उसे स्थायी बनाना चाहते हैं तो चाहे बाहरी मददसे, चाहे आन्तरिक विकाससे, किसी भी तरह क्यों न हो, हमें धर्मकी इस मूल प्रवृत्तिको जाग्रत करना ही होगा।

हमारे धर्मशास्त्रोंने जीवनके कुछ ऐसे सिद्धान्त प्रस्तुत किये हैं जिन्हें स्वयं प्रमाणित सत्य मानकर हमें स्वीकार कर ही लेना होगा। शास्त्रोंका कहना है कि इन सिद्धान्तोंके अनुसार आचरण किये बिना धर्मका स्थूल स्वरूप भी नहीं समझा जा सकता। पिछले अनेक वर्षोंसे इन शास्त्रीय अनुशासनोंमें अविचल श्रद्धा रखकर और उनके अनुसार आचरणका प्रयत्न करनेके बाद मुझे यह जरूरी जान पड़ा कि जो लोग मेरे इस विचारसे सहमत हैं उनका संस्था-स्थापनार्थ सहयोग प्राप्त करें। हमने आश्रमका सदस्य बननेकी इच्छा करनेवाले व्यक्तिके लिए जो आचार-नियम बनाये हैं, आज मैं उन्हें आपके सामने रखना चाहता हूँ। इन आचार-नियमोंमें से पहले पाँच यम कहलाते हैं। यमोंमें सर्वप्रथम आता है:

सत्यका व्रत

सत्यका स्वरूप जैसा हम साधारणतया समझते हैं वह उससे भिन्न है। हमने तो समझ रखा है कि यथाशक्ति झूठका सहारा न लेना ही सत्य है। अर्थात् हमारी धारणाका सत्य, वह सत्य नहीं है जिसका पालन 'ईमानदारी सर्वोत्तम नीति है' के विचारसे किया जाता हो। इस कहावतमें तो यह छुपा हुआ है कि यदि किसी परिस्थितिमें ईमानदारी सर्वोत्तम नीति-कौशल न लगे तो हम उससे हट सकते हैं, जबकि सत्यके व्रतका अर्थ तो यह है कि हमें अपना सारा जीवन किसी भी कीमतपर सत्यसे

१. सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी।

ही अनुशासित रखना है। इस परिभाषाको सम्यक् सिद्ध करनेके लिए मैंने प्रह्लादके विश्रुत दृष्टान्तका सहारा लिया है। सत्यके लिए वह अपने पिताका भी विरोध करनेमें नहीं हिचका; साथ ही उसने ईंटका जवाब पत्थरसे देकर अपनी रक्षा नहीं की; बल्कि वह जिसे सत्य समझता था उसकी रक्षामें पिताके प्रहारोंका अथवा पिताकी आज्ञासे दूसरोंके द्वारा किये गये प्रहारोंका प्रत्युत्तर दिये बिना, मरनेको तैयार हो गया। उसने किसी भी प्रकारका प्रत्याक्रमण नहीं किया, इतना ही नहीं, उसपर जो-जो अत्याचार किये गये उन सभीको उसने हँसते-हँसते स्वीकार किया; फल यह हुआ कि अन्तमें सत्यकी विजय हुई। प्रह्लादने अत्याचारोंको कुछ इसलिए शिरोधार्य नहीं किया था कि उसे अपने जीते-जी किसी दिन सत्यके सिद्धान्तकी अमोघता सिद्ध करनेका अवसर प्राप्त हो जायेगा। ऐसा हुआ जरूर; किन्तु यदि इन अत्याचारोंको सहन करते हुए उसकी मृत्यु भी हो जाती तो भी वह सत्यसे विचलित नहीं होता। मैं सत्यका ऐसा ही व्रती होना चाहता हूँ। कल एक घटनापर मेरा ध्यान गया। वैसे वह घटना छोटी ही है। किन्तु इन छोटी-छोटी बातोंसे हवाका रुख मालूम हो जाता है। घटना यों हुई —मेरे एक मित्र मुझसे एकान्तमें बातचीत करना चाहते थे—और हमारी एकान्तमें गोपनीय बातचीत हो रही थी। इतनेमें एक अन्य मित्र आ पहुँचे और उन्होंने विनम्रतापूर्वक पूछा, 'मैं खलल तो नहीं डाल रहा हूँ?' जिनसे बातें हो रही थीं उन मित्र महाशयने कहा, 'नहीं, यहाँ गोपनीय कुछ नहीं है।' मुझे थोड़ा अचम्भा हुआ। क्योंकि उन्होंने मुझे एकान्तमें खींचा था और मुझे मालूम था कि इन मित्रके लेखे तो बातचीत अवश्य गोपनीय थी। किन्तु उन्होंने तत्काल विनम्रताके कारण, जिसे मैं फाजिल विनम्रता कहूँगा, यह कह दिया कि कोई गोपनीय बात नहीं हो रही है, आप आ सकते हैं। मैं आपसे कहना चाहता हूँ कि यह मेरी सत्यकी परिभाषामें नहीं बैठता। मेरा खयाल है कि अत्यन्त विनयपूर्वक किन्तु फिर भी साफ तौरपर उन्हें यह कहना था: "जी हाँ, फिलहाल जैसा कि आप कह रहे हैं, आनेसे खलल होगा।" यदि वे सज्जन होते तो उन्हें इस कथनसे कोई नाराजी न होती। और जबतक अन्यथा सिद्ध न हो जाये तबतक सभीको सज्जन मानकर ही चलना चाहिए। इसपर आप मुझसे कह सकते हैं कि इस घटनासे तो आखिर राष्ट्रका सौजन्य प्रकट होता है। मेरी समझमें यह आवश्यकतासे अधिक सौजन्य है। यदि हम केवल नम्रतावश ऐसा करते रहें तो राष्ट्र पाखण्डियोंसे भर जायेगा। यहाँ मुझे एक अंग्रेज मित्रसे अपनी बातचीतकी याद आ गई। उनका तब हमारे देशसे बहुत परिचय नहीं हो पाया था। वे एक कॉलेजके प्रिंसिपल हैं और भारतमें अनेक वर्षोंसे हैं। हम विभिन्न बातोंपर परस्पर विचार-विनिमय कर रहे थे। उन्होंने मुझसे पूछा कि क्या आप यह मानते हैं कि मनमें 'ना' हो तो भी भारतीयोंको ज्यादातर अंग्रेजोंकी तरह 'ना' कहनेका साहस नहीं होता। और मुझे कहना पड़ा कि "हाँ, आपका कहना ठीक है।" जिस आदमीसे हम बात कर रहे हैं उसकी भावनाका खयाल करके हम हिम्मतके साथ साफ तौरपर 'ना' कहनेमें हिचकते हैं। आश्रममें नियम रखा गया है कि परिणामकी चिन्ता किये बिना यदि हमारे मनमें 'ना' है तो हमें 'ना' ही कहना चाहिए। यह हुआ पहला नियम। अब हम अहिंसाके सिद्धान्तके बारेमें कहेंगे।

अहिंसाका व्रत

अहिंसाका शाब्दिक अर्थ होता है "न मारना"। किन्तु मेरे लेखे उसका अर्थ बहुत व्यापक है। यदि मैं उसका अर्थ केवल "न मारना" करता तो यह शब्द मुझे जिन ऊँचे, अनन्त ऊँचे मनोमय लोकों तक ले जाता है उन तक मैं कभी न पहुँच पाता। 'अहिंसा'का वास्तवमें यह अर्थ है कि आप किसीका मन न दुखायें, जो अपनेको आपका शत्रु मानता है उसके बारेमें भी कोई अनुदार विचार मनमें न रखें। इस बातमें जो सावधानी है कृपया उसपर ध्यान दें। मैंने 'आप जिसे अपना शत्रु समझते हैं', नहीं कहा; 'जो आपको अपना शत्रु समझता है' कहा है। क्योंकि जो व्यक्ति अहिंसाके सिद्धान्तका पालन करता है उसके लिए तो किसीको अपना शत्रु माननेकी गुंजाइश ही नहीं है—वह शत्रुका अस्तित्व मानता ही नहीं है। किन्तु ऐसे लोग हो सकते हैं जो उसे अपना शत्रु मानें; इसमें तो उसका कोई वश नहीं है। इसलिए इस बात-पर जोर दिया गया है कि ऐसे व्यक्तियोंके प्रति भी कोई दुर्भावना न रखी जाये। यदि हम घूँसेका जवाब घूँसेसे देते हैं तो हम अहिंसाके सिद्धान्तसे च्युत हो जाते हैं। मैं तो इससे भी आगे आता हूँ। यदि हम किसी मित्र अथवा तथाकथित किसी शत्रुके किसी कामपर आक्रोश भी करते हैं तो इस सिद्धान्तपर खरे नहीं उतरते। किन्तु जब मैं यह कहता हूँ कि हमें आक्रोश नहीं करना चाहिए तो उसका यह अर्थ नहीं है कि हमें [किसी गलत बातके आगे] सिर झुकाकर रह जाना चाहिए। आक्रोश न करनेसे मेरा तात्पर्य यह है कि हम ऐसी इच्छा न करें कि हमारे अथवा किसी औरके कामके जरिए या कहिए ईश्वरीय सत्ताके द्वारा भी शत्रुको नुकसान पहुँचे या वह हमारे मार्गसे हटा दिया जाये। यदि ऐसा खयाल भी हमारे मनमें हो तो हम अहिंसाके सिद्धान्तसे हटते हैं। जो आश्रममें प्रवेश लेना चाहते हैं उन्हें यह अर्थ स्वीकारना पड़ता है। इसका यह अर्थ कदापि नहीं नहीं है कि हम इस सिद्धान्तका पूर्ण रूपसे पालन कर लेते हैं। यह आदर्श है; हमें इस तक पहुँचना है; यह ऐसा आदर्श है जिसे यदि हममें वैसी शक्ति हो तो हमें इसी क्षण प्राप्त करना है। किन्तु यह रेखागणितका कोई साध्य नहीं है जिसे हम रट लें। न यह गणितके कठिन प्रश्न हल करना है—यह इनको हल करनेसे कई गुनी कठिन बात है। गणितके कठिन प्रश्नोंको हल करनेमें आपमें से अनेक आधी-आधी रात तक जागे हैं। किन्तु इस आदर्शको अपने जीवनमें उतारनेके लिए इतनेसे काम नहीं चलेगा आपको अनेक रातें जागकर काटनी होंगी, मनोमंथन और अन्तर्वेदनाके जाने कितने प्रसंगोंसे गुजरना होगा; और तब कहीं आप इस आदर्श तक, या यह कहना ज्यादा ठीक होगा कि इस आदर्शके समीप, पहुँच सकेंगे। इस सिद्धान्तपर मैं इससे अधिक कुछ नहीं कहूँगा कि जो व्यक्ति इस सिद्धान्तकी प्रभावकारी शक्तिमें विश्वास रखता है, वह अपनी मंजिलके एकदम समीप आते-आते समस्त संसारको अपने चरणोंके समीप खड़ा पायेगा। यह नहीं कि वह सारे संसारको अपने पाँवोंपर पड़ा हुआ देखना चाहता है, किन्तु यह फल है अवश्यभावी। यदि आप अपना प्रेम, अपनी अहिंसावृत्ति, इस प्रकार व्यक्त करें कि उसकी आपके कथित शत्रुपर अमिट छाप पड़ सके तो वह भी प्रेमका बदला प्रेमसे देगा। इसीसे दूसरा विचार यह निकलता है कि इस सिद्धान्तमें संगठित रूपसे

की गई हिंसाकी, हत्याओंकी, फिर वे लुक-छिपकर नहीं, दिन-दहाड़े ही क्यों न की जायें, गुंजाइश नहीं है। और अपने देशके लिए अथवा अपने प्रिय आश्रितोंके मानकी रक्षाके लिए भी इसके अन्तर्गत किसी तरहकी हिंसाका कोई स्थान नहीं है। ऐसी मान-रक्षा कोई मान-रक्षा भी नहीं है। अहिंसाका यह सिद्धान्त कहता है कि जो व्यक्ति ऐसा अनाचार करता है, हम अपने आपको उसके हाथोंमें सौंपकर अपने आश्रितोंके मानकी रक्षा करें। और इसके लिए हाथा-पाईसे कहीं अधिक शारीरिक और मानसिक साहसकी जरूरत है। सम्भव है आपमें कुछ शारीरिक शक्ति हो — साहस मैं नहीं कहूँगा — और आप उस शक्तिका उपयोग भी करें। किन्तु उस शक्तिके चुक जानेपर क्या होता? सामनेवाला व्यक्ति क्रोध तथा आवेशसे भरा होता है, उसकी हिंसाका मुकाबला हिंसा द्वारा करके आप उसका रोष और अधिक बढ़ा देते हैं; वह आपको मौतके घाट उतारकर आपके आश्रितोंपर टूट पड़ता है और शेष क्रोध इस प्रकार शान्त करता है। किन्तु यदि आप प्रत्याक्रमण न करें, अपने आश्रितों और प्रतिद्वन्द्वीके बीच दृढ़तासे खड़े रहें, वह जो वार करता है, उसका प्रत्युत्तर दिये बिना उन्हें सहते रहें तो क्या होगा? मैं निश्चयपूर्वक कहता हूँ कि उसकी सारी हिंसा आपपर बरस कर चुक जायेगी और आपके आश्रित अक्षत रहेंगे। जीवनकी इस पद्धतिमें देशभक्तिकी वह कल्पना भी नहीं है जिसके बलपर आज यूरोपमें होनेवाले युद्धोंका समर्थन किया जाता है। फिर आता है —

ब्रह्मचर्य-व्रत

जो लोग राष्ट्रकी सेवा करना चाहते हैं या जो धार्मिक जीवनकी सच्ची झाँकी देखना चाहते हैं वे विवाहित हों या अविवाहित, उन्हें संयमका जीवन बिताना चाहिए। विवाह केवल एक स्त्री और एक पुरुषको पास-पास लाता है और वे विशिष्ट प्रकारसे जन्म-जन्मान्तरोंके लिए कभी न बिछुड़नेवाले मित्र बन जाते हैं; किन्तु मेरे खयालसे विवाह सम्बन्धी हमारी धारणामें वासनाएँ हों ही यह जरूरी नहीं है। कुछ भी हो आश्रममें आनेवालोंसे यही कहा जाता है। मैं इसपर अधिक नहीं कहूँगा। इसके बाद है —

अस्वाद-व्रत

अपनी पशु-प्रवृत्तियोंको सुगमतासे वशमें करनेकी अभिलाषा रखनेवाला व्यक्ति अपनी स्वादेन्द्रियपर काबू पा ले तो ऐसा कर सकता है। मेरी समझमें यह बहुत ही कठिन व्रत है। मैं अभी विक्टोरिया होस्टल देखकर आ रहा हूँ। मैंने वहाँ देखा — देखकर दुःख होना था, किन्तु अब इसकी आदत पड़ गई है इसलिए दुःख तो नहीं हुआ — कि वहाँ बहुत-से रसोई-घर हैं; जातिभेदके कारण नहीं, स्वाद-भेदके कारण। जो व्यक्ति देशके जिस भागसे आया है उसके लिए इनमें उसी अंचलमें प्रचलित मसालोंको उसी परिमाणमें डालकर भोजन बनानेकी व्यवस्था है। और इसलिए केवल ब्राह्मणोंके भी अलग-अलग भोजनालय और रसोई-घर हैं — जिनमें विभिन्न समुदायोंकी बारीक रुचियोंके अनुकूल भोजन परोसा जाता है — आप सोचें, यह जीभपर अधिकार न होकर उसकी दासता है। मैं कहना चाहता हूँ कि यदि हम अपना मन इस आदतसे

विरत नहीं करते, चाय और कॉफीकी दूकानों और तमाम रसोई-घरोंकी तरफसे अपनी आँखें बन्द नहीं कर लेते, जबतक हम स्वास्थ्यको ठीक बनाये रखनेके लिए जो भोजन आवश्यक है उसीसे सन्तुष्ट नहीं होते और जबतक उत्तेजक, उष्ण और दाह-कारी मसालोंसे, जिन्हें हम भोजनमें मिला लिया करते हैं, छुटकारा पानेको तैयार नहीं हो जाते, तबतक इस तरह प्राप्त होनेवाली अनावश्यक, बिलकुल फाजिल, उत्तेजक स्फूर्तिका संयमन करना हमारे लिए सम्भव नहीं होगा। यदि हम ऐसा नहीं करते तो हम अपनी शक्ति और हमें दी गई पवित्र धरोहरका भी अपव्यय करते रहेंगे। इस प्रकार खाने-पीने और विषयोंके सेवनमें डूबकर हम पशुओंसे भी पतित हो जायेंगे। आहार और विहार तो पशु भी करते हैं किन्तु क्या आपने किसी घोड़े या गायको जीभके स्वादके पीछे पड़ा हुआ देखा है? क्या आप इसे सभ्यता अथवा वास्तविक जीवनका लक्षण मानते हैं कि हम अपने व्यंजनोंकी संख्या इतनी बढ़ाते चले जायें कि हम यह तक न जान पायें कि हम क्या कर रहे हैं और नये-नये व्यंजनोंकी तलाशमें बिलकुल दीवाने होकर मसालेदार चटपटे भोजनोंका विज्ञापन छापनेवाले अखबारोंके पीछे दौड़ते फिरें?

अस्तेय-व्रत

मैं कहना चाहता हूँ कि हम [सब] एक अर्थमें चोर हैं। जिस चीजकी मुझे तत्काल जरूरत नहीं है अगर मैं उसे लेकर रख लेता हूँ तो किसीको उससे वंचित कर रहा हूँ। मैं यह कहनेका साहस करूँगा कि यह प्रकृतिका एक मौलिक और निरप-वाद नियम है कि हमारी रोजमर्राकी जरूरतोंके लिए वह पर्याप्त चीजें पैदा करती रहती है और यदि हम जितना आवश्यक है, अपने लिए केवल उतना ही लिया करें तो संसारमें दारिद्र्य हो ही नहीं, कोई आदमी यहाँ भूखा न मरे। किन्तु जबतक विषमता है तबतक [समझ लीजिए] चोरी चल रही है। मैं समाजवादी नहीं हूँ और जिनके पास जायदाद आदि है, उनसे उसे छीन नहीं लेना चाहता; तथापि मैं यह अवश्य कहना चाहता हूँ कि जो अँधेरेमें उजाला देखना चाहते हैं उन्हें व्यक्तिगत रूपसे यह नियम मानना चाहिए। मैं किसीका कुछ छीनना नहीं चाहता। वह तो अहिंसाके व्रतसे च्युत होना कहलायेगा। यदि मुझसे किसीके पास ज्यादा है तो हो; किन्तु जहाँतक मेरे जीवनके अनुशासनका सम्बन्ध है मैं निश्चित रूपसे कह सकता हूँ कि मुझे जितनेकी जरूरत है मुझमें उससे कुछ भी ज्यादा रखनेकी हिम्मत नहीं है। भारतमें तीन करोड़ लोगोंको एक वक्त ही खाकर सन्तोष करना पड़ता है। और इसमें भी एक रूखी-सूखी रोटी और एक चुटकी नमकसे ज्यादा कुछ नहीं होता। जबतक तीन करोड़ लोगोंको आजसे बेहतर खाना और कपड़ा नहीं मिलता तबतक आपको और मुझे, सच कहें तो, किसी चीजपर कोई हक नहीं है। हम लोगोंको वस्तु-स्थितिका अधिक ज्ञान है इसलिए हमें अपनी जरूरतोंमें काट-छाँट करनी चाहिए, यहाँ तक कि स्वेच्छासे भूख सहन करनी चाहिए ताकि इन लोगोंको भोजन और कपड़ा मिल सके, उनका पोषण हो सके। इसके बाद इसीके फलस्वरूप 'असंग्रह' व्रत आता है।

स्वदेशी-व्रत

अब मैं स्वदेशी व्रतपर आता हूँ। आप स्वदेशीनिष्ठ जीवन और भावनासे परिचित हैं। यदि हम अपने पड़ोसीके बजाय अपनी जरूरतोंको पूरा करनेके लिए किसी बाहरके आदमीसे सौदा-पत्ता करें तो मेरा कहना है कि यह जीवनके एक पवित्र नियमका उल्लंघन है। अगर कोई व्यक्ति बम्बईसे आकर यहाँ आपको बर्तन बेचना चाहे और आपके पड़ोसमें ही मद्रासमें पला-पनपा कोई व्यापारी है, तो आपका बम्बईके व्यापारीसे लेन-देन करना उचित नहीं है। स्वदेशीके बारेमें मेरा ऐसा खयाल है। यदि मद्राससे आपके पास कोई हुनरमन्द नाई आये तो उसे छोड़कर आपको अपने गाँवके नाईको आश्रय देना चाहिए। अगर आपको लगे कि गाँवके नाईको मद्रासके नाईके समान कुशल होना चाहिए तो आप उसे वैसा काम सिखवा दें। अगर चाहें तो बिला शक उसे मद्रास भेजें ताकि वह अपना धन्धा [अच्छी तरह] सीख ले। यदि आप यह न करके दूसरे नाईसे काम लेते हैं तो यह उचित नहीं है, इसका नाम है स्वदेशी। इसीलिए यदि हम देखते हैं कि अनेक चीजें भारतमें नहीं बनतीं तो हमें उनके बिना काम चलानेकी कोशिश करनी चाहिए। सम्भव है हमें ऐसी बहुत-सी वस्तुओंके बिना रहना पड़े जिन्हें हम जरूरी समझते हैं; किन्तु विश्वास कीजिए एक बार मन तैयार कर लेनेपर 'पिलग्रिम्स प्रोग्रेस' नामक पुस्तकके यात्रीकी तरह आपको अपने कन्धोंसे बहुत-सा बोझ उतर गया-सा जान पड़ेगा। यह यात्री अपने कन्धोंपर जबर्दस्त बोझा ढो रहा था। किसी एक क्षण ऐसा हुआ कि अनजाने वह बोझीला सामान कहीं गिर गया और उसे लगा कि जब उसने यात्रा शुरू की थी तब से वह अब अपेक्षाकृत मुक्त है। इसी तरह जैसे ही आपने यह 'स्वदेशी व्रत' अपनाया कि आपको हल्केपनका अनुभव हुआ।

अभय-व्रत

फिर हमारे यहाँ अभय व्रत भी है। भारतके अपने समूचे दौरेमें मैंने देखा कि भारत, उसका शिक्षित समुदाय, पंगु बना देनेवाले भयसे ग्रस्त है। हम सार्वजनिक रूपसे अपने ओठ सिये हुए हैं; अपना निश्चित मत खुले तौरपर प्रकट नहीं करते; हम अकेलेमें उनकी चर्चा करते हैं; चारदीवारीमें बन्द होकर हम चाहे जैसी बातें कर लेते हैं किन्तु उन्हें सार्वजनिक रूप नहीं देते। यदि हमने मौन-व्रत लिया होता तो मुझे कुछ नहीं कहना था। किन्तु जब हम सार्वजनिक रूपसे कुछ कहते हैं तो वह सब कहते हैं जिसमें सचमुच हम भरोसा नहीं रखते। शायद भारतमें भाषण करनेवाले हरएक जननायकका यही हाल है। इस परिस्थितिमें मेरा यह कथन है कि एक ही सत्ता, यदि उसके लिए सत्ता शब्दका प्रयोग ठीक हो, ऐसी है जिससे हमें डरना है और वह है ईश्वर। ईश्वरसे डरें तो आदमीसे डर नहीं रहेगा — वह चाहे जितना बड़ा क्यों न हो। और आप किसी भी रूपमें सही सत्यके व्रतका पालन करना चाहते हैं तो अभय उसकी अनिवार्य परिणति है। इसलिए 'भगवद्गीता' में अभयको[1] ब्राह्मणका

१. अभयं सत्त्वसंशुद्धिर्ज्ञानयोगव्यवस्थितिः।
दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाध्यायस्तप आर्जवम् ॥ १६-१ ॥

प्रथम अनिवार्य गुण माना गया है। हम फलके डरसे सत्य कहते हुए भय करते हैं। जो व्यक्ति परमात्मासे डरता है वह निःसन्देह किसी लौकिक परिणामका भय नहीं मानेगा। धर्मको समझने और भारतके भाग्यके कर्णधार बननेकी आकांक्षा करनेके पहले क्या आप यह नहीं मानते कि हमें अभयको अपना स्वभाव बना लेना चाहिए? या जैसे हम दूसरोंसे भयभीत हैं उसी प्रकार अपने देशवासियोंको डराते-दबाते रहना हमारा कर्त्तव्य है? इस तरह यह समझमें आ जाता है कि "अभय-व्रत" कितना जरूरी है। हाँ एक व्रत और है: यह है

स्पर्श-भावनाका व्रत

आज हिन्दू धर्मपर एक अपरिमार्जनीय कलंक लगा हुआ है। मैं इस बातको नहीं मानता कि वह अनादि कालसे चला आ रहा है। मेरी समझसे अस्पृश्यताका यह शर्मनाक, जघन्य और अभिभूत करनेवाला भूत हमपर अपने जातीय इतिहासके उस कालमें सवार हुआ होगा जब हम कालचक्रकी गतिमें पतनकी पराकाष्ठा तक पहुँच चुके थे। और तबसे वह अबतक हमपर सवार है। मेरी समझमें यह एक अभिशाप है और जबतक यह अभिशाप बना है तबतक सिवा यह माननेके कि इस पुण्यभूमि भारतमें हमें जो भी कष्ट सहने पड़ रहे हैं वे इस अमोचनीय बड़े पापकी सजा है और कोई चारा नहीं है। समझमें नहीं आता कि धन्धेकी बिनापर किसीको अस्पृश्य कैसे माना जा सकता है? आप जो विद्यार्थी हैं और आधुनिक शिक्षा पा रहे हैं यदि आप भी इस पापके भागी हुए, इससे तो यही अच्छा होता आप निरक्षर ही रह जाते।

इसमें कोई शक नहीं है कि हमारे सामने एक बड़ी भारी कठिनाई है: वह यह कि इस बातको अच्छी तरह समझकर भी कि संसारमें एक भी व्यक्तिको अछूत नहीं माना जाना चाहिए, आप अपने कुटुम्ब और आसपासके लोगोंको यह बात प्रभावकारी ढंगसे समझा नहीं सकते। क्योंकि आपने एक विदेशी भाषाके माध्यमसे सोचा है और आपकी सारी शक्ति उसीमें लग गई है। और इसलिए हमने आश्रममें यह नियम भी बनाया है कि हमारी

शिक्षाका माध्यम देशी भाषाएँ

होंगी। यूरोपमें प्रत्येक संस्कृत व्यक्ति अपनी भाषाके सिवा अन्य भाषाएँ भी सीखता है—तीन या चार। यूरोपमें लोग जैसा करते हैं, भारतमें भी भाषाओंकी समस्याको हल करनेके लिए, हमने आश्रममें जितनी बने उतनी भारतीय भाषाएँ अवश्य सीखनेकी बात तय की है। और मैं यकीन दिलाना चाहता हूँ कि इन भाषाओंको सीखनेमें जो दिक्कत होगी वह अंग्रेजीमें निष्णात होनेके प्रयत्नके मुकाबलेमें कुछ भी नहीं है। हम

अहिंसा सत्यमक्रोधस्त्यागः शान्तिरपैशुनम् ।
दया भूतेष्वलोलुप्त्वं मार्दवं ह्रीरचापलम् ॥ २ ॥
तेजः क्षमा धृतिः शौचमद्रोहो नातिमानिता ।
भवन्ति संपदं दैवीमभिजातस्य भारत ॥ ३ ॥

अंग्रेजी भाषामें निष्णात तो हो ही नहीं पाते, कुछ अपवादोंको छोड़ दें तो यह हमारे लिए अभीतक सम्भव नहीं हुआ है। हम अपने मनकी बात जितनी स्पष्टतासे अपनी मातृभाषामें व्यक्त कर सकते हैं उस तरह अंग्रेजीमें नहीं कर सकते। भला हमने बचपनमें जो सीखा है उसे स्मृतिसे पोंछ डालना सम्भव कैसे होगा? किन्तु जब हम विदेशी भाषाके माध्यमसे अपना प्रौढ़ जीवन—जैसा कि हम उसे कहा करते हैं—शुरू करते हैं तब सचमुच हम यही करते हैं। इससे हमारे जीवनमें दरार पड़ जाती है; इसका हमें बहुत-बड़ा मूल्य चुकाना पड़ेगा। अब आप समझ जायेंगे कि शिक्षण और अस्पृश्यतामें क्या सम्बन्ध है। शिक्षणके व्यापक होते जानेके बावजूद आज भी अस्पृश्यताकी भावना जैसीकी-तैसी बनी हुई है। शिक्षणके कारण हमने इस पापकी भयानकताको देख लिया है किन्तु हम भयभीत भी हैं और इसलिए इस विचारको हम अपने घरोंमें नहीं ले जा पा रहे हैं। हमें अपने कुटुम्बियों तथा कुटुम्बकी परम्पराके प्रति एक अन्ध श्रद्धा है। आप कहते हैं: "यदि मैं कहूँ कि अब कमसे-कम मैं इस पापका भागी नहीं रहना चाहता तो मेरे माता-पिता देह छोड़ देंगे।" मेरा कहना है कि प्रह्लादने कभी यह नहीं सोचा कि अगर वह विष्णुके नामके पवित्र वर्णोंका उच्चारण करेगा तो उसके पिता देह छोड़ देंगे। बल्कि उसने तो सारा घर, इस कोनेसे उस कोने तक, पिताजीकी पवित्र उपस्थितिमें भी उस नामके भजनसे गुंजा रखा था। इसी प्रकार हम अपने आदरणीय माता-पिताकी उपस्थितिमें अस्पृश्यताको हटा सकते हैं। यदि इससे कुछको जबरदस्त धक्का लगे और वे प्राण छोड़ दें तो मेरे खयालसे इसमें विपत्ति कुछ भी नहीं है। इस तरहके कुछ जबरदस्त धक्के शायद जरूरी हों। पीढ़ी-दर-पीढ़ी चलनेवाली इन रूढ़ियोंको आग्रहके साथ चलाते जानेमें ऐसी घटनाएँ सम्भव हैं। किन्तु इससे बड़ा नियम निसर्गका है और उस बड़े नियमका उचित पालन करते हुए मुझे और मेरे माता-पिताको यह त्याग करना चाहिए।

और अब हम हाथ-बुनाईपर आते हैं

आप प्रश्न कर सकते हैं, "हमें हाथसे काम लेनेकी क्या जरूरत है?" और कह सकते हैं कि "हाथका काम तो वे करें जो निरक्षर हैं। मैं तो साहित्य और राजनीतिके प्रबन्ध पढ़नेमें व्यस्त रह सकता हूँ।" मेरी समझमें हमें श्रमके गौरवको समझना चाहिए। यदि कोई नाई या चमार कॉलेजमें पढ़ने लगे तो उसे हजामत करने या जूते बनानेका धन्धा नहीं छोड़ना चाहिए। मेरे लेखे हजामत करनेका धन्धा भी चिकित्साके धन्धेके बराबर है।

और अन्तमें इन सब नियमोंके अनुरूप चल चुकनेपर—उसके पहले नहीं—आप आ सकते हैं

राजनीति

के क्षेत्रमें और फिर जितना चाहें उतना उससे खिलवाड़ कर सकते हैं। और निःसन्देह आप गोता नहीं खायेंगे। धर्मसे अछूती राजनीति बिलकुल निरर्थक है। यदि विद्यार्थी-वर्ग इस देशके राजनैतिक-मंचपर भीड़ लगाने लगे, मेरा खयाल है, यह जरूरी नहीं है कि उससे राष्ट्रीय विकास अवश्य होगा ही, किन्तु इसका यह अर्थ

नहीं है कि आप अपने विद्यार्थी-जीवनमें राजनीतिका अध्ययन ही न करें। राजनीति हमारे जीवनका एक अंग है; हमें अपने राष्ट्रकी संस्थाओंका ज्ञान होना चाहिए और अपने राष्ट्रीय विकासको तथा अन्य बातोंको समझते रहना चाहिए। यह बचपनसे ही प्रारम्भ किया जा सकता है। इसीलिए हमारे यहाँ आश्रममें हर बालकको देशकी राजनैतिक संस्थाओंको समझनेकी शिक्षा दी जाती है और बताया जाता है कि देशमें किस प्रकार नई भावनाओं, नई महत्त्वाकांक्षाओं और नई जिन्दगीकी लहरें उठ रही हैं। किन्तु हमें धर्मके निष्कम्प और अमोघ प्रकाशकी भी आवश्यकता है — उस धर्मके जो केवल बुद्धिको ही नहीं छूता, हृदयपर अमिट छाप डाल देता है। पहले हमें इसीके साक्षात्कार धार्मिक चेतनाकी आवश्यकता है। जहाँ यह साक्षात्कार हुआ, मुझे लगता है जीवनका भण्डार हमारे लिए खुल जाता है और तब फिर विद्यार्थी और अन्य सभी लोगोंका कर्त्तव्य हो जाता है कि वे इस परिपूर्ण जीवनमें हाथ बँटायें ताकि जब वे बड़े हों, विद्यालयोंको छोड़कर बाहर जायें, तब वे उचित रूपसे जीवनके साथ जूझनेके योग्य होकर आयें — आज तो यह होता है कि उनका राजनैतिक जीवन बहुत हदतक उनके विद्यार्थी-जीवन तक सीमित रहता है; जैसे ही वे विद्यालयोंसे निकले और विद्यार्थी नहीं रहे कि सब कुछ भूलकर नगण्य वेतनपर नगण्य नौकरियाँ ढूंढ लेते हैं; तब न कोई महत्त्वाकांक्षा बचती है, न ईश्वरका ध्यान। तब उनका उस ताजी हवा, उज्ज्वल प्रकाश तथा सच्ची और शक्तिशाली स्वतंत्रतासे कुछ लेना-देना नहीं रह जाता जो मेरे द्वारा आपके सामने प्रस्तुत इन नियमोंके पालनसे प्राप्त होती है।

उपसंहार

मैं यहाँ आप लोगोंसे यह नहीं कह रहा हूँ कि आप लोग बड़ी संख्यामें आश्रम पहुँचने लगें; वहाँ स्थानका अभाव है। परन्तु मैं कहता हूँ कि आप लोग अकेले खुद और सामूहिक रूपसे भी उस आश्रमका जीवन व्यतीत कर सकते हैं। जो नियम मैंने आप लोगोंके समक्ष प्रस्तुत किये हैं उनमें से अपने लिए आप जो-कुछ भी पसन्द कर लेंगे और उसपर अमल करेंगे तो मैं उतनेसे ही सन्तुष्ट हो जाऊँगा। परन्तु यदि आप यह सोचते हैं कि उपरोक्त बातें किसी पागल मनुष्यके उद्गारमात्र हैं तो आप मुझे बता देनेमें संकोच न करें और आपके निर्णयको मैं पूर्ण सद्भावनाके साथ और बिना किसी प्रकारके आश्चर्यकी भावनाके स्वीकार करूँगा। (जोरकी तालियाँ)[1]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन रिव्यू, फरवरी १९१६

१. यह अनुच्छेद **न्यू इंडिया**, १६-२-१९१६ से लिया गया है।

१७१. भाषण: सोशल सर्विस लीग, मद्रासमें[1]

फरवरी १६, १९१६

आज आपने मुझसे समाज-सेवाके बारेमें बोलनेको कहा है। यदि मैं आज आप-जैसे प्रबुद्ध श्रोता-समाजके अनुरूप भाषण न दे सकूँ तो आप मानिए कि मैंने बिना सोचे-समझे जल्दीमें जो बहुत सारे काम स्वीकार कर लिये, यह उसीका परिणाम है। इच्छा तो यह थी कि आपके सामने क्या कहना है, इसपर मैं, थोड़ा ही सही, सोच लूँ, किन्तु वह सम्भव नहीं हुआ। लेकिन जैसा हमारी अध्यक्षाने[2] कहा है, हम लोगोंको जरूरत कामकी है, भाषणोंकी नहीं। इसलिए यदि आजकी इस संध्याके भाषणके बाद आपको लगे कि बहुत-कुछ सुननेको नहीं मिला तो इससे आपका, अगर हो भी तो, कोई खास नुकसान नहीं होगा।[3]

मित्रो, धरित्रीपर दूसरी किसी भी सेवाकी तरह ही समाज-सेवाकी भी एक अनिवार्य शर्त है — और वह है योग्यता; जो वैसी सेवा करना चाहते हैं, उनमें उसे करनेकी समुचित योग्यता। इसलिए आज हम अपने आपसे यह सवाल करेंगे कि हममें से जो लोग इस तरहकी सेवामें लगे हैं उनमें और जो इस तरहकी सेवा करना चाहते हैं उसमें ऐसी योग्यता है या नहीं; क्योंकि आप इस बातपर मुझसे सहमत होंगे कि समाज-सेवक यदि बात बना सकते हैं तो बिगाड़ भी सकते हैं; और सेवाका उद्देश्य चाहे कितना भी अच्छा क्यों न हो, यदि सेवकोंमें उस विशिष्ट सेवाकी योग्यता नहीं है तो वे सेवा करनेके प्रयासमें सेवा नहीं, कुसेवा ही करेंगे। हम इन योग्यताओंपर विचार करें।

मेरा खयाल है, इस सम्बन्धमें मुझे, आज सवेरे वाई० एम० सी० ए० हॉलमें मैंने विद्यार्थियोंके सामने जिन योग्यताओंका वर्णन किया,[4] उन्हींको लगभग दुहरा देना चाहिए। सो इसलिए कि वे सभी स्थानों और अवसरोंपर लागू होती हैं और सभी तरहके कामके लिए जरूरी हैं, खासकर हमारे प्यारे वतनके राष्ट्रीय जीवनमें आजकल जिस समाज-सेवाकी आवश्यकता है उसके लिए। मेरी तो यह धारणा है कि हमें एक हाथमें सत्य और दूसरेमें अभयकी जरूरत है। यदि हम सत्यकी मशाल न लिये हों तो आगे कहाँ कदम रखें यह नहीं सूझेगा और अगर हम अभयको न अपनायें तो हम लोगोंको जो सन्देश देना चाहेंगे वह उचित अवसरपर नहीं दे सकेंगे। यदि हमारे मनमें यह अभय न हो तो जब परीक्षा की घड़ी, परीक्षाकी अन्तिम घड़ी, आयेगी, तब हम खरे नहीं उतर सकेंगे। और ऐसी घड़ियाँ लोगोंके जीवनमें उतनी अधिक नहीं आतीं, जितनी

१. समाज-सेवा संघ, मद्रास; मद्रास क्रिश्चियन कॉलिजमें आयोजित संघकी वार्षिक सभामें।
२. श्रीमती ह्वाइटहेड, जिन्होंने सभाकी अध्यक्षता की थी।
३. यह अनुच्छेद नटेसनके **स्पीचेज़ ऐंड राइटिंग्ज़ ऑफ महात्मा गांधी**से लिया गया है।
४. देखिए पिछला शीर्षक।

वे सोचते हैं। वे तो यदाकदा और सौभाग्यवश ही आती हैं। लेकिन मैं आपको यहाँ यह भी याद दिला देना चाहता हूँ कि ये दोनों गुण हममें कुछ इस तरहसे भी विकसित किये जा सकते हैं, जिससे हमें भी और हम जिनके सम्पर्कमें आयें उन्हें भी हानि उठानी पड़े। मैं एक अटपटी-सी बात कह रहा हूँ; क्योंकि आखिर सत्यसे हानि कैसे हो सकती है? लेकिन इस कथनके साथ ही मैं आपसे अनुरोध करूँगा कि आप जरा इस दृष्टिसे भी सोचिए कि जो सत्य हमें प्राप्त होता है वह हमेशा विशुद्ध सत्य नहीं हुआ करता, अलबत्ता हम उसे बराबर सत्यके नामसे जानते हैं।[1] आपको उस अनुपम ग्रंथ 'रामायण'के रावण और राम तथा इन्द्रजित् और लक्ष्मणके दृष्टान्त स्मरण होंगे। लक्ष्मण और इन्द्रजित् दोनोंके गुण समान थे। दोनोंने तप किया था, दोनोंने एक हदतक आत्म-नियन्त्रणकी शक्ति प्राप्त की थी। इसलिए इन्द्रजित्को जीतना अत्यन्त कठिन कार्य था। किन्तु, हम देखते हैं कि इन्द्रजित्के पास जो-कुछ था, वह निकम्मा साबित हुआ, जब कि लक्ष्मणके पास जो-कुछ था, वह न केवल उनके लिए और वे जिस पक्षसे लड़ रहे थे उसके लिए, बल्कि हमारे लिए भी बड़े कामका साबित हुआ; क्योंकि वे हमारे लिए एक ऐसी निधि छोड़ गये हैं, जिसे हम सँजोकर रखते हैं, जिसके मूल्यको हम पहचानते हैं। तब फिर लक्ष्मणके पास कौन-सा अतिरिक्त गुण था? लक्ष्मण दैवी शक्तिकी प्रेरणापर चलते थे। उन्हें धर्मका बोध था। उनका जीवन सिद्धान्तसे निर्देशित होता था, उनके जीवनका आधार धर्म था, जब कि इन्द्रजित्के जीवनका आधार अधर्म था। इन्द्रजित् नहीं जानता था कि वह कहाँ जा रहा है। धर्महीन जीवनका दूसरा नाम सिद्धान्त-हीन जीवन है, और बिना सिद्धान्तका जीवन बिना पतवारकी नौकाके समान है। जिस प्रकार बिना पतवारकी नौका और उसका माँझी इधर-उधर भटकते फिरेंगे और उन्हें अपनी मंजिल कभी नहीं मिलेगी, उसी प्रकार जिस व्यक्तिको धर्मका बल प्राप्त नहीं है, जिसकी धर्ममें गहरी आस्था नहीं है, वह इस तूफानी संसार-सागरमें इधरसे उधर भटकता रह जायेगा, किन्तु उसे अपनी मंजिल कभी भी नहीं मिल पायेगी। अतः प्रत्येक समाजसेवीको मेरा सुझाव है कि वह इस भ्रममें न रहे कि वह धर्मके बोध और दैवी प्रेरणा द्वारा शुद्धीकृत इन दो गुणोंके बिना अपने देशभाइयोंकी सेवा कर सकेगा। इन दो गुणोंसे युक्त होते हुए भी हम गलतियाँ तो करेंगे किन्तु तब वे गलतियाँ ऐसी नहीं होंगी जिनमें से हमें कोई अपयश लगे, अथवा हम जिस उद्देश्यके लिए प्रयत्नशील हों उसे या हम जिन जन-समुदायोंकी सेवा करना चाहते हों उन्हें कोई क्षति पहुँचे।

हमारी अध्यक्षाने मुझे बिशपके घरके अहातेके ठीक पीछे स्थित अन्त्यजोंके गाँवमें ले जानेकी कृपा की थी। वहाँ उन्होंने मुझे यह भी बताया कि जब इस संघने उस छोटे-से गाँवमें अपना कार्य आरम्भ किया, उससे पहले उसकी क्या अवस्था थी। उस गाँवको देखनेके बाद मैं तो कहूँगा कि वह सफाई और सुव्यवस्थाका आदर्श प्रस्तुत करता है, और वह मद्रासके अधिकसे-अधिक आबाद और केन्द्रस्थ क्षेत्रोंसे भी बहुत

१. यह वाक्य नटेसन द्वारा प्रकाशित स्पीचेज़ ऐंड राइटिंग्ज़ ऑफ महात्मा गांधीसे लिया गया है।

ज्यादा साफ-सुथरा है। यह, निस्सन्देह, समाज-सेवा संघ द्वारा सम्पादित एक कीर्तिकर कार्य है; और यदि संघ मद्रास [शहर] के भीतरी हिस्सोंमें प्रवेश करके इसी प्रकारका काम करे तो आज मुझे मद्रासमें जो चन्द अरुचिकर चीजें देखनेको मिली हैं, वे जब मैं इस शहरमें दूसरी बार आऊँगा तब नहीं मिलेंगी। (हर्षध्वनि) ये चीजें हमारे सामने एक स्पष्ट समस्याके रूपमें खड़ी हैं और हमें इनका निराकरण करना ही है। जब हमारे अन्त्यज भाइयोंपर समझाने-बुझानेका असर हो सकता है तब हम क्या यह कहें कि तथाकथित उच्चतर वर्गके लोगोंपर इन बातोंका इतना असर नहीं होगा और वे नागरिक जीवन व्यतीत करनेके लिए अपरिहार्य स्वास्थ्य-नियमोंका पालन नहीं कर सकते? हम रोग-संक्रमणसे बचते हुए बहुत-कुछ कर सकते हैं; किन्तु ज्यों ही हम भीड़-भाड़से भरी गलियोंमें पहुँच जाते हैं, जहाँ मुश्किलसे साँस लेनेको हवा मिल पाती है, त्योंही जीवनकी स्थिति बदल जाती है। वहाँ हमें एक नये ढंगके नियमोंका पालन करना है, जो वहाँ पहुँचते ही तुरन्त अपना असर डालने लगते हैं। किन्तु, क्या हम ऐसा करते हैं? आज हम मद्रासके, बल्कि निरपवाद रूपसे भारतके प्रत्येक नगरके — केन्द्रस्थ — हिस्सोंको जिस अवस्थामें पाते हैं, उसके लिए नगरपालिकाओंको जिम्मेदार ठहराना बेकार है। संसारकी कोई भी नगरपालिका किसी जन-समुदाय विशेषकी पीढ़ी-दर-पीढ़ी चली आ रही आदतोंपर काबू नहीं पा सकती। यह ऐसा कार्य है जो धैर्यपूर्ण प्रयत्नों और दैवी प्रेरणापर चलनेसे ही सिद्ध हो सकता है। और इन दो सनातन अस्त्रोंके हाथोंमें आ जानेपर भी इसे समाज-सेवा संघ जैसी संस्थाएँ ही सिद्ध कर सकती हैं। हम एक नये जीवन, नये स्वप्नकी अनुभूतिसे स्पन्दित हो रहे हैं और यह हमारे राष्ट्रीय गौरवकी वृद्धि करेगा तथा हमें प्रगतिके पथपर आगे ले जायेगा। यदि हम यह सोचते हों कि इस संघके-जैसे स्वेच्छया प्रयत्नों बिना ही नगरपालिकाएँ बड़े-बड़े नगरोंमें सफाईकी दृष्टिसे सुधार करनेकी समस्या हल कर लेंगी तो यह लगभग बेकार ही है। इसका मतलब यह नहीं कि मैं नगरपालिकाओंको उनके दायित्वोंसे मुक्त किये दे रहा हूँ। इसके बाद भी उनके लिए बहुत-कुछ करना शेष रह जाता है। अभी कुछ ही दिन हुए, मुझे बम्बई नगरपालिकाकी कार्रवाईकी रिपोर्ट पढ़कर बड़ा दुःख हुआ। रिपोर्टमें वर्णित शोचनीय तथ्य यह है कि नगरपालिकाने बहुत ही महत्त्वपूर्ण विषयोंकी उपेक्षा करके अपना अधिकांश समय सर्वथा नगण्य बातोंकी चर्चामें लगाया।[1] जबतक स्वयं जनता और भी सुधारकी माँग नहीं करती तबतक नगरपालिकाएँ कुछ खास नहीं कर पायेंगी। भारतकी एक आदर्श रियासतके अधिकारियों तथा अन्य लोगोंकी यह शिकायत थी कि उनके निरन्तर चौकस और प्रयत्नशील रहनेके बावजूद आम जनताको, उसने जो रास्ता अपना रखा है और जो बातें उसके जीवनका अंग बन गई हैं, उनसे विमुख कर पाना सम्भव नहीं हो पा रहा है। फिर भी, उस रियासतमें प्रगतिके स्पष्ट चिह्न दिखाई पड़ते थे और वहाँके दीवानने मुझसे भरोसेके साथ कहा कि यदि समाज-सेवा संघकी मूल्यवान् सहायता प्राप्त नहीं

१. यह वाक्य नटेसन द्वारा प्रकाशित **स्पीचेज़ ऐंड राइटिंग्ज़ ऑफ महात्मा गांधीसे** लिया गया है।

हुई होती तो लोगोंने जितना किया, वे उसका आधा भी नहीं कर पाते। अधिकारियोंके आतंकसे कोई लाभ होनेवाला नहीं है। मैं एक प्रसिद्ध सन्तकी इस वाणीसे सहमत हूँ कि "लोगोंको तलवारके जोरपर परहेजगार वनाया जाये, इससे अच्छा तो उन्हें शरावी रहने देना ही है।" यदि किसी व्यक्तिको प्रेमपूर्वक समझाया-बुझाया जाता है, उसे कुमार्गसे विमुख करनेके लिए जो भी प्रयत्न उचित हैं, किये जाते हैं और तव भी वह यही मानता है कि उसे पी-पीकर अपनी जान ही दे देनी है, तो मेरा खयाल है हमें उसे वैसा करनेके लिए स्वतन्त्र छोड़ देना चाहिए। हम इस सम्बन्धमें कुछ कर ही नहीं सकते; एक वुराईके निराकरणके लिए दूसरी वुराईका सहारा नहीं ले सकते। सम्बन्धित व्यक्तिको शारीरिक क्षति पहुँचानेसे कोई लाभ नहीं होगा। ऐसा करनेसे सम्भव है, वह कुछ समयके लिए पीना वन्द कर दे, किन्तु वह वार-वार अपनी पुरानी आदतको अपनायेगा। यदि कोई शरीरसे संयम करे और उसका मन उसमें सहयोग न दे तो उस संयमका कोई महत्त्व नहीं है। हिन्दुओंके पवित्रतम तीर्थस्थान काशीकी गलियाँ गन्दी हैं। ऐसी ही गन्दगी [मन्दिरके] गर्भगृहमें भी देखी जा सकती थी, जहाँ वहुत अधिक शोरगुल हो रहा था। ऐसे स्थानोंमें तो पूरी सुव्यवस्था, शान्ति, नीरवता, भद्रता और विनम्रता होनी चाहिए। किन्तु दुःखके साथ कहना पड़ता है कि इन सवका वहाँ सर्वथा अभाव था। पुरोहितगण भक्तोंसे एक रुपयेसे कमका दान स्वीकार नहीं करते। अतीत कालमें काशी-विश्वनाथकी यह स्थिति नहीं रही होगी। जव लोग रेलगाड़ियोंसे लाखोंकी संख्यामें काशी पहुँचते हैं और वहाँ आकर अपने आपको एक परिवर्तित परिवेशमें पाते हैं, तव सुव्यवस्थित प्रगतिकी एक अनिवार्य अपेक्षा यह होगी कि वे इस वदली हुई अवस्थाके अनुकूल व्यवहार करें। जो वात काशी-विश्वनाथके लिए सही है, वही वात हमारे अधिकांश पवित्र मंदिरोंपर लागू होती है। और यह एक ऐसी समस्या है, जिसके निराकरणके लिए समाज-सेवा संघको आगे आना चाहिए। यह कोई सरकार अथवा नगरपालिकाकी समस्या नहीं है। आप लोग स्कूल जाते ही मन्दिरोंको भूल जाते हैं। अपने-आपको इस कार्यके उपयुक्त वनानेके लिए हमें शिक्षा-पद्धतिमें आमूल परिवर्तन करना चाहिए। आज हम वहुत ही विचित्र स्थितिमें हैं, और मैं आपसे सच कहता हूँ, आज हमारे सामने जो विपादपूर्ण नाटक अभिनीत किया जा रहा है, उसके लिए अगली पीढ़ी हमारे नामपर थूकेगी। यह ऐसी वात है, जिसपर हमें सोचना है और जिसका निराकरण ढूँढ़ना है। यह कार्य दुष्कर है, किन्तु तव इस कार्यको सम्पादित करनेका पुरस्कार भी उतना ही वड़ा है।

मैंने जैसे-तैसे आपके सामने कुछ विचार प्रस्तुत किये हैं, और मुझे आशा है कि वे आपके अन्तस्तलको छुयेंगे और हृदयको प्रेरित करेंगे। आप जवतक इस महाचक्रको खींचनेके लिए अपना कंधा नहीं लगा देते और आवश्यक सुधार लानेके लिए अपनी शक्ति-भर अधिकसे-अधिक प्रयत्न नहीं करते तवतक आपको कदापि सन्तुष्ट होकर वैठना नहीं है।

अव जो विद्यार्थी तृतीय श्रेणीमें यात्रा करते हैं उनसे एक वात कहना चाहूँगा। आप उन लोगोंपर रौव न जमायें जो आपके वस्त्रोंको देखकर भ्रमवश अपने-आपको आपसे

निम्नतर श्रेणीका मान लेते हैं। यदि आपने ऐसा किया तो आप समाज-सेवाके अयोग्य माने जायेंगे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १७-२-१९१६

१७२. श्रीमती बेसेंटको उत्तर

[फरवरी १७, १९१६ से पूर्व]

श्री मो० क० गांधीने हमें लिखा है:

"न्यू इंडिया" में श्रीमती बेसेंटने बनारसकी घटनाका जो उल्लेख किया है तथा अन्यत्र भी उसकी जो चर्चा की गई है, उसके कारण, चाहे मैं कितना ही अनिच्छुक क्यों न होऊँ, मेरे लिए उस सम्बन्धमें फिरसे कुछ कहना आवश्यक हो गया है। श्रीमती बेसेंट मेरे इस कथनसे इनकार करती हैं कि उन्होंने राजाओंके कानमें कुछ कहा था।[1] मैं तो केवल इतना ही कह सकता हूँ कि यदि मैं अपने कानों और अपनी आँखोंपर भरोसा कर सकता हूँ तो मुझे, जो-कुछ मैंने पहले कहा है, उसपर अड़े रहना चाहिए। सभापति महाराजा दरभंगाके दूसरी ओर कुछ लोग अर्धवृत्त बनाकर बैठे हुए थे, और श्रीमती बेसेंट उस अर्धवृत्तकी बाईं ओर बैठी हुई थीं। उनकी बगलमें कमसे-कम एक या शायद, दो राजे बैठे हुए थे। जब मैं बोल रहा था, उस समय श्रीमती बेसेंट मेरे पीछे थीं। जब महाराजा उठे तब श्रीमती बेसेंट भी उठ खड़ी हुईं। राजाओंके मंच छोड़नेसे पहले-ही मैंने बोलना बन्द कर दिया था। श्रीमती बेसेंट मंच-पर आसपासके लोगोंसे इस घटनाके सम्बन्धमें बातें कर रही थीं। मैंने बहुत धीरेसे उनसे कहा कि आप बीचमें बिना कुछ बोले चुपचाप बैठी रह सकती थीं और यदि मेरा व्याख्यान आपको पसन्द नहीं था तो उसकी समाप्तिपर कह सकती थीं कि मैं इन विचारोंसे सहमत नहीं हूँ। लेकिन उन्होंने कुछ गरम होकर कहा, "जब आप अपने भाषणके द्वारा श्रोताओंपर ऐसी छाप डाल रहे थे, मानो मंचपर उपस्थित हम सब लोग आपके विचारोंसे सहमत हों, तब हम चुपचाप कैसे बैठे रह सकते थे? जो बातें आपने कही थीं वे आपको नहीं कहनी चाहिए थीं।" इस घटनाका जो विवरण वे देती हैं, उसके अनुसार तो वे मेरे प्रति चिन्ता-भावसे प्रेरित होकर ही मेरे भाषणके बीचमें बोल पड़ी थीं। किन्तु, श्रीमती बेसेंटका उक्त उत्तर इस बातसे मेल नहीं खाता है। मैं सिर्फ इतना कहूँ कि यदि उनका उद्देश्य केवल मुझे बचाना-ही था तो वे चुपचाप एक पुरजा पहुँचा दे सकती थीं अथवा धीरेसे मेरे कानमें अपनी सम्मति कह दे सकती थीं। और फिर यदि मेरा बचाव करना-ही उनका अभीष्ट था तो उन्हें राजाओंके साथ उठकर हॉलसे बाहर चले जानेकी क्या पड़ी थी? और

१. देखिए परिशिष्ट १।

उनके हॉलसे उठकर चले जानेके सम्बन्धमें मैं तो कहता हूँ कि वे राजाओंके साथ ही चली गईं थीं।

अपने भाषणोंमें मैंने जो-कुछ कहा, उसे लें तो मैं अभी यह नहीं जान पाया हूँ कि उसमें ऐसी कौन-सी बात थी, जो इतनी आपत्तिजनक मालूम हुई कि वे बीचमें ही बोल पड़ीं। वाइसरॉय महोदयके आगमन तथा उनकी सुरक्षाके लिए किये गये आवश्यक प्रबन्धके सम्बन्धमें बोलनेके बाद मैंने यह दिखलाया कि किसी हत्यारेकी मृत्यु श्रेयस्कर कदापि नहीं होती और कहा कि अराजकताके विचार हमारे शास्त्रोंके विरुद्ध हैं और भारतमें उनके लिए कोई स्थान नहीं है। फिर मैंने कहा कि श्रेयस्कर मृत्यु इससे बिलकुल अलग चीज है। ऐसी मृत्युका आलिंगन करनेवाले लोग इतिहासमें अपने विश्वास के लिए प्राण देनेवाले लोगोंके रूपमें समादृत होते हैं। लेकिन जब कोई बम फेंकनेवाला अनेक प्रकारके षड्यंत्र रचकर मरता है, तब उसे क्या मिल सकता है? उसके उपरान्त मैंने लोगोंकी इस भ्रमपूर्ण धारणापर विचार आरम्भ किया कि यदि बम फेंकनेवालोंने बम न फेंके होते तो बंग-भंग आन्दोलनके सिलसिलेमें हमें जो-कुछ मिला वह न मिलता। लगभग इसी समय श्रीमती बेसेंटने सभापति महोदयसे मेरा भाषण बन्द करा देनेका अनुरोध किया। व्यक्तिशः मैं यह चाहता हूँ कि मेरा सारा भाषण[1] प्रकाशित कर दिया जाये, जिसके विचार-प्रवाहकी दिशासे यह बात पर्याप्त रूपसे स्पष्ट हो जाती है कि मैं विद्यार्थियोंको हिंसात्मक कार्रवाई करनेके लिए भड़का ही नहीं सकता। ऐसा करना मेरे लिए सम्भव ही नहीं है। वास्तवमें उसमें मेरा अभिप्राय यह था कि हम कठोर आत्म-निरीक्षण करें।

मैंने अपना भाषण इस बातसे आरम्भ किया कि मैं अंग्रेजीमें बोलूँ, यह श्रोताओंके लिए भी और मेरे लिए भी लज्जाजनक है। मैंने कहा कि अंग्रेजी भाषा शिक्षाका माध्यम बन गई है, जिससे देशको बड़ी भारी हानि पहुँची है और मैं समझता हूँ, मैंने सफलतापूर्वक यह समझाया कि यदि गत पचास वर्षोंसे हम लोगोंको उच्चतर ज्ञानकी शिक्षा देशी भाषाओंमें ही मिलती तो इस समय तक हम लोग अपने लक्ष्यके बिलकुल निकट पहुँच गये होते। इसके बाद मैंने स्वशासन-सम्बन्धी उस प्रस्तावका जिक्र किया जो कांग्रेसमें पास हुआ था और दिखलाया कि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी तथा भारतीय मुस्लिम लीग जिस समय अपने भावी-शासन-विधानका मसविदा तैयार करें उस समय उनका यह कर्त्तव्य भी है कि वे अपने कार्योंसे अपने-आपको स्वराज्यके योग्य बनायें। और यह दिखलानेके लिए कि हम लोग अपने कर्त्तव्यसे कितना पीछे रहते हैं, मैंने लोगोंका ध्यान काशी-विश्वनाथके भव्य मन्दिरके आसपास भूलभुलैयाकी तरह बनी गलियोंकी गन्दगी तथा हाल ही में बने उन राजसी भवनोंकी ओर आकृष्ट किया, जिनका निर्माण करते समय गलियोंकी चौड़ाई या सिधाईका कोई विचार नहीं रखा गया है। इसके बाद मैंने श्रोताओंको शिला-न्यासके दिनके चाक-चिक्यपूर्ण दृश्यका स्मरण दिलाया, और कहा कि यदि उस दृश्यको किसी ऐसे अजनबीने देखा होता, जिसे भारतके बारेमें कोई जानकारी नहीं

१. देखिए "भाषण: बनारस हिन्दू विश्वविद्यालयमें", ६-२-१९१६।

हो, तो वह मनपर यह गलत छाप लेकर जाता कि भारत संसारके सर्वाधिक सम्पन्न देशोंमें से एक है; क्योंकि उस दिन हमारे सरदार-सामन्तोंने ऐसे ही बहुमूल्य आभूषण धारण कर रखे थे। और मैंने महाराजाओं तथा राजाओंकी ओर मुड़कर विनोदपूर्वक कहा कि आप लोगोंके लिए यह आवश्यक है कि जबतक हम लोग अपने आदर्शोको सिद्ध न कर लें तबतक आप लोग इस सम्पत्तिको जातिकी थाती समझकर अपने पास रखें; और मैंने उन जापानी सामन्तोंके कार्यका उदाहरण दिया;[1] जिन्होंने आवश्यकता न होनेपर भी अपनी सम्पत्ति और उन जमींदारियोंका परित्याग कर देनेमें अपना परम सौभाग्य माना, जो उनके वंशमें पीढ़ी-दर-पीढ़ी चली आ रही थीं। इसके उपरान्त मैंने श्रोताओंसे अनुरोध किया कि आप जरा इस अप्रतिष्ठाजनक बातपर विचार कीजिए कि जब वाइसरॉय महोदय हमारे पूज्य अतिथि हों, तब हम लोगोंसे ही उनकी सुरक्षाका प्रबन्ध किया जाये। और मैं यह दिखलानेका प्रयत्न कर रहा था कि इस एहतियाती कार्रवाईके लिए भी दोषी हम ही हैं; क्योंकि इसकी आवश्यकता इसीलिए हुई कि भारतमें संगठित रूपसे राज-पुरुषोंकी हत्याओंकी प्रणाली शुरू हो गई है। इस प्रकार एक ओर मैं यह दिखलानेका प्रयत्न कर रहा था कि विद्यार्थी किस प्रकार समाजको उसके जाने-माने दोषोंसे मुक्त करानेके लाभदायक कार्यमें सहायक सिद्ध हो सकते हैं और दूसरी ओर उन्हें हिंसात्मक तरीकोंके विचार तक से दूर रहनेके लिए समझा रहा था।

मुझे बीस वर्षके सार्वजनिक जीवनका अनुभव है और इस बीच मैंने बीसियों बार बड़े ही अशान्त और क्षुब्ध श्रोताओंके सामने व्याख्यान दिये हैं। अतः मैं दावा कर सकता हूँ कि मुझे अपने श्रोताओंकी नब्ज पहचाननेका कुछ अनुभव है। मैं ध्यानपूर्वक यह देखता जा रहा था कि मेरे व्याख्यानके प्रति लोगोंकी क्या प्रतिक्रिया है; और निश्चय ही मैंने यह नहीं देखा कि विद्यार्थियोंपर उसका कोई प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। सच तो यह है कि दूसरे दिन सवेरे उनमें से कुछ लोगोंने मुझसे आकर कहा कि वे मेरी बातोंको पूरी तरह समझ गये थे और उनका उनपर काफी प्रभाव पड़ा था। उनमें से एक बड़ा तार्किक था। उसने तो मुझसे जिरह ही कर डाली। किन्तु जब मैंने अपने भाषणके दौरान जो तर्क पेश किये थे, उन तर्कोंपर और भी प्रकाश डाला तो वह उनसे कायल प्रतीत हुआ। मैंने समस्त दक्षिण-आफ्रिका, इंग्लैण्ड तथा भारतवर्षमें हजारों विद्यार्थियों और अपने अन्य देशभाइयोंके सामने भाषण किये हैं; और मैं दावा करता हूँ कि उस दिन सन्ध्याके समय लोगोंके सामने मैंने जो तर्क उपस्थित किये थे उन्हीं तर्कोंके आधारपर मैंने बहुत-से लोगोंको अराजकतावादी तरीकोंके समर्थनसे विमुख किया है।

और अब अन्तमें बम्बईके श्री एस० एस० सेटलूरकी बात लीजिए। उन्होंने भी 'हिन्दू' में उस घटनाके सम्बन्धमें लिखा है और उनका रुख भी मेरे प्रति कोई मैत्रीपूर्ण नहीं है। मेरा खयाल है उन्होंने कई बातोंमें अनुचित रूपमें, मेरी धज्जियाँ उड़ा देनेका प्रयत्न किया है। श्री सेटलूरने सभाकी पूरी कार्रवाई अपनी आँखोंसे देखी थी। किन्तु, मैं देखता हूँ कि उसका जो विवरण वे देते हैं, वह श्रीमती बेसेंटके विवरणसे भिन्न है।

१. भाषणके उपलब्ध विवरणमें यह उदाहरण नहीं मिलता है।

उनका खयाल है कि मेरे भाषणकी लोगोंपर जो आम छाप पड़ी, वह यह नहीं थी कि उन्हें मैं अराजकताके लिए उत्तेजित कर रहा था; बल्कि यह कि मैं गैर-सैनिक नौकरशाहोंका पक्ष-पोषण कर रहा था। श्री सेटलूरने मेरी जो आलोचना की है, वह यही सिद्ध करती है कि यदि वे सही हैं तो निश्चय ही मैंने किसी प्रकार हिंसात्मक कार्रवाईको उत्तेजना देनेका अपराध नहीं किया, बल्कि मेरा अपराध यह था कि मैंने राजाओंके हीरे-जवाहरातके आभूषणों आदिका उल्लेख किया।

श्रीमती बेसेंटके साथ तथा मेरे साथ भी पूरा-पूरा न्याय हो, इस उद्देश्यसे मैं नीचे लिखा सुझाव देना चाहूँगा। वे कहती हैं कि मेरे जिस वाक्यने राजाओंको उठकर चल देनेको बाध्य कर दिया, उसे उद्धृत करके वे अपना बचाव नहीं करना चाहतीं; क्योंकि उससे तो शत्रुओंका ही हित होगा। उनके इससे पहलेके कथनके अनुसार मेरा व्याख्यान खुफिया पुलिसके हाथमें पहुँच चुका है; इसलिए जहाँ तक मेरे बचावका सवाल है, उनकी यह क्षमाशीलता किसी कामकी नहीं है। अतः क्या यह अधिक अच्छा न होगा कि यदि उनके पास मेरा व्याख्यान हो तो वे या तो उसे शब्दशः प्रकाशित करवा दें अथवा व्यक्तकिये गये ऐसे विचारोंको ही प्रकाशित करवा दें, जिनके कारण, उनकी रायमें, उन्हें हस्तक्षेप करने तथा महाराजाओंको उठकर चले जानेके लिए बाध्य होना पड़ा।

तो मैं अपने इस वक्तव्यको अपनी पहलेवाली बात दोहरा कर ही समाप्त करता हूँ;[1] वह यह कि यदि श्रीमती बेसेंट बीचमें ही बाधा न उपस्थित करतीं तो मैं कुछ ही मिनटोंमें *अपना व्याख्यान समाप्त कर देता और तब अराजकता-सम्बन्धी मेरे विचारोंके* विषयमें किसी प्रकारका भ्रम उत्पन्न न होता।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १७–२–१९१६

१७३. पत्र : 'न्यू इंडिया'को, बनारसकी 'घटना'के सम्बन्धमें

[मद्रास]
फरवरी १७, १९१६

आजके अपने सम्पादकीय लेखमें आपने कहा है कि मैंने ईसाई धर्म-प्रचारकोंके कहनेसे बनारसवाली घटनाका उल्लेख फिरसे किया है। मैं निवेदन करना चाहता हूँ कि मेरे वक्तव्यके[2] प्रकाशनमें ईसाई-प्रचारकोंका जरा भी हाथ न था और न मैंने किसी मिशनरीसे इस सम्बन्धमें बातचीत-ही की है।

[अंग्रेजीसे]

न्यू इंडिया, १८–२–१९१६

१. देखिए "भेंट : बनारसकी 'घटना'के सम्बन्धमें ए० पी० आई०को", ९–२–१९१६।
२. देखिए पिछला शीर्षक।

१७४. भाषण: देशी-भाषाओं और शिक्षापर[1]

[फरवरी १७, १९१६]

श्री ए० एस० राजमने अपने संक्षिप्त भाषणमें इस विषयको सभाके समक्ष प्रस्तुत किया . . .

उसके अनन्तर गांधीजीने वाद-विवादको समाप्त करते हुए अपने विचार व्यक्त किये। हमारे स्कूलों और कॉलेजोंमें देशकी भाषाओंको शिक्षाका माध्यम बनानेसे कदापि जाति-भेदकी समस्या खड़ी न होगी। हम एक ही राष्ट्र हैं, अंग्रेजोंके आनेके पूर्व भी हम एक ही राष्ट्र थे और हम लोगोंका धर्म भी एक ही था। इतिहास-सम्बन्धी पुस्तकोंसे स्पष्ट है कि हमारे संतगण धार्मिक सम्मेलनोंके लिए देशके एक कोनेसे दूसरे कोनेको यात्रा किया करते थे और इस कारण लोगोंमें भाईचारेकी भावना सदा विद्यमान रहा करती थी। जनसाधारणके कल्याण तथा देशकी वास्तविक उन्नतिके लिए सम्बन्धित अधिकारियोंको चाहिए कि शीघ्र ही इस समस्याका कोई हल निकालें। देशी भाषाओंको शिक्षाका माध्यम बनानेके खिलाफ उठाये गये एतराज बिलकुल बे-बुनियाद हैं। सबसे अच्छा तो यह होगा कि लोग खुद इस मामलेको हाथमें ले लें और देशके लोगोंको देशी-भाषाओंके माध्यमसे शिक्षित करें। उस दशामें स्वयं राजकाज चलानेवालेको समुचित प्रशासनके हितमें देशकी भाषाएँ सीखनी ही पड़ेंगी।

[अंग्रेजीसे]

न्यू इंडिया, १८-२-१९१६

१७५. भाषण: पूनामें गोखलेकी बरसीके अवसरपर

फरवरी १९, १९१६

इसी मासकी उन्नीसवीं तारीखको किर्लोस्कर थियेटर पूनामें श्री गोखलेकी बरसी मनानेके सम्बन्धमें एक सभा हुई। सभामें लगभग दो हजार व्यक्ति उपस्थित थे और अध्यक्षता श्री एच० डब्ल्यू० वाडिया, बार-एट-लॉने की।

श्री गांधीने, जो दक्षिण सभाके निमन्त्रणपर पूना आये थे, अपने भाषणमें यह आशा प्रकट की कि गोखलेकी बरसी ढंगसे मनाई जायेगी; उनके प्रति श्रद्धा रखनेवाले तथा उसे व्यक्त करनेके इच्छुक सज्जनोंको चाहिए कि वे उन कामोंमें से एकाध काम

१. फरवरी १६, १९१६ को संध्या-समय मद्रासके ऐंडर्सन हॉलमें "क्रिश्चियन कॉलिज एसोसिएटेड सोसाइटीज"के तत्वावधानमें संयुक्त वाद-विवादकी व्यवस्था की गई थी। वाद-विवादका विषय था "क्या हमारे स्कूलों और कॉलिजोंमें देशी-भाषाएँ शिक्षाका माध्यम रखी जायें?" सभाके अध्यक्ष गांधीजी थे।

उठा लें जिन्हें श्री गोखलेने प्रारम्भ किया था और वे अपने कामका सिंहावलोकन भी करते रहें।

शाही परिषद् (इम्पीरियल कौंसिल) और पब्लिक सर्विस कमीशनके सदस्यकी हैसियतसे उन्होंने जो कार्य किया है उससे उनकी महान् योग्यता और देशभक्तिका परिचय मिलता है। उन्होंने अपने स्वास्थ्यकी परवाह न करते हुए दक्षिण आफ्रिकाके मामलेमें बड़ा परिश्रम किया और मुझे लगता है कि इस कामने उनकी जीवनावधिके दस वर्ष कम कर दिये। उनके सभी कामोंके पीछे जबरदस्त धर्म-भावना रहा करती थी। भारत सेवक समाज (सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी) को स्थापित करनेका कारण भी यही था कि वे देशके राजनैतिक जीवनमें धर्मभावनाको दाखिल करना आवश्यक मानते थे। एक बार श्री गोखलेने मुझसे यह कहा था कि मेरे मनमें कभी-कभी, जो राजनैतिक कार्य आजकल किया जा रहा है, उसकी उपयोगिताके बारेमें सन्देह उत्पन्न हो जाता है और मैं बहुत निराश और खिन्न हो जाता हूँ। परन्तु ऐसी घड़ियोंमें, शाश्वत सत्तामें अपनी आन्तरिक निष्ठाके कारण उनकी रक्षा हो जाती थी और मेरे खयालसे इसी प्रकारके विश्वासके बलपर वे निराशाके सभी क्षणोंमें अविजित रहते हुए निरन्तर कार्य करते रहते थे।[1]

श्री गांधीने आगे चलकर कहा कि मैं श्री गोखलेकी इच्छाके अनुसार पिछले वर्ष देशमें घूमता रहा। और चूँकि अब वे मेरा पथ-प्रदर्शन करनेके लिए मौजूद नहीं हैं, मैं समझ नहीं पाता कि मैं सही रास्तेपर हूँ या गलत रास्तेपर। मैंने अपनी यात्रामें यह देखा है कि लोगोंमें देशभक्तिकी भावना तो उमड़ रही है परन्तु 'भय'का भूत भी सर्वत्र छाया हुआ है। मैंने यह भी देखा कि धार्मिक सत्ताकी जबरदस्त ताकत समाज-सेवाके मार्गमें बाधक बन रही है और राजनैतिक सत्ता राजनैतिक सेवाक्षेत्रमें हमें आगे नहीं बढ़ने देती। हम लोग परिस्थितियोंके गुलाम हैं सही; परन्तु इसमें दोष हमारा ही है। हम जो विचार आपसमें व्यक्त किया करते हैं उन्हें सबके सामने व्यक्त करनेका हमें साहस ही नहीं होता। हमारी धर्म-सम्बन्धी स्वतन्त्रता पण्डितों और पुरोहितोंने हथिया रखी है और राजनीतिके मामलोंमें भी हम लोग अपने खयालातका इजहार करनेसे डरा करते हैं। यह एक शोचनीय परिस्थिति है और इस बातकी द्योतक है कि हम लोगोंमें चरित्र-बलकी कमी है। जबतक हमारे मनसे यह भय चला नहीं जाता तबतक हम अपने उत्तरदायित्वको निबाहनेके पात्र नहीं हो सकते। हमारे पराक्रमी पूर्वज तत्त्वतः हमारे बीच विद्यमान हैं। यदि हम राष्ट्रके स्वर्गीय महापुरुषोंके प्रति निष्ठा और निश्चलता, दयालुता तथा देशभक्ति आदि गुणोंको अपना लें तो हमारा राष्ट्र संसारके राष्ट्रोंमें अपना प्राप्य पद ग्रहण कर लेगा।

सभाके अध्यक्ष महोदयने श्री गांधीको उनके व्याख्यानके लिए धन्यवाद देनेके अनन्तर कहा कि मैं श्री गांधीके द्वारा व्यक्त की गई उम्मीदों और अन्देशोंके बारेमें

१. यह अनुच्छेद बॉम्बे क्रॉनिकल, २१-२-१९१६ से लिया गया है।

कुछ भी कहना नहीं चाहता; मैं तो केवल इतना ही कहूँगा कि मैं उनसे सहमत नहीं हूँ। मुझे राजनीतिका बहुत-काफी अनुभव प्राप्त है। मैं भारतके लिए उज्ज्वलसे उज्ज्वल भविष्यकी आशा कर रहा हूँ। . . .

माननीय आर० पी० परांजपेने प्रस्ताव रखा कि सभा श्री गांधी और अध्यक्ष महोदयके प्रति कृतज्ञता प्रकट करती है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २१–२–१९१६

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, १९१६, पृष्ठ १३०

१७६. भाषण : भारतीय महिला विश्वविद्यालयपर[1]

फरवरी २३, १९१६

जो सज्जन आपके सम्मुख भाषण देनेवाले हैं उन्हें सभी लोग जानते हैं इसलिए मुझे उनका विशेष परिचय देनेकी आवश्यकता नहीं जान पड़ती। उन्होंने अभी हालमें भारतीय महिलाओंके विश्वविद्यालयकी स्थापना करनेका जो कार्य हाथमें लिया है वह विभिन्न देशी भाषाओंका जीर्णोद्धार करनेका कार्य ही है। उनकी स्त्री-शिक्षाकी योजनाके अनुसार वे आगामी जून मासमें परीक्षालय और विद्यालयकी स्थापना करेंगे। इस कार्यमें यथाशक्ति सहायता देना हमारा कर्त्तव्य है। कहा जाता है कि इस समय हमारे समाजको पक्षाघात हो गया है। यह आरोप बहुत-कुछ ठीक है। क्योंकि हम जितनी तीव्र गतिसे आगे बढ़ रहे हैं उतनी तीव्र गतिसे अपनी अर्धांगिनियोंको हम आगे नहीं बढ़ा सकते। इसका मुख्य कारण हमारी अपनी स्थिति ही है। प्रो० कर्वे ने हमारे स्त्री-वर्गकी दशा सुधारनेके उद्देश्यसे ही यह काम हाथमें लिया है। और इसे वे बड़ी तीव्र गतिसे कर रहे हैं। मुझे कहना चाहिए कि उनका उत्साह अनुपम है। यदि मैं उनका परिचय श्री गोखलेके शब्दोंमें दूं तो वे साकार सत्य हैं; इसलिए हमारा विश्वास है कि उनके हाथोंसे जो काम हो रहा है उस काममें चाहे हमारी आशाके अनुरूप सफलता न भी मिले तो भी उससे हानि तो किसी भी प्रकारकी न होगी। उन्होंने अपने जीवनके २० वर्ष फर्ग्युसन कॉलेजकी सेवामें विताये हैं और वे २० वर्षसे विधवाश्रम चलाते हैं। अब अपनी आयुके ५९ वें वर्षमें उन्होंने यह कार्य हाथमें लिया है। इससे उनके त्याग और उत्साहकी परिसीमा सूचित होती है। पूनामें जैसी आत्म-त्यागकी भावना दिखाई देती है वैसी गुजरातमें नहीं। यह हमारे लिए लज्जाकी बात है। इसलिए हमें प्रो० कर्वेके जीवनसे बहुत शिक्षा लेनी है।

१. अहमदाबादमें उक्त महिला-विश्वविद्यालयके संस्थापक प्रो० धों० के० कर्वेने (१८५८–१९६२) एक सार्वजनिक सभामें भाषण दिया था सभाके अध्यक्षकी हैसियतसे पहले प्रस्तावना करते हुए और अन्तमें उपसंहार करते हुए गांधीजीने ये शब्द कहे थे।

कार्रवाई समाप्त करते हुए गांधीजीने कहा :

सौ. विद्यागौरीका[1] भाषण कुछ टिप्पणी करनेके योग्य है। हम स्त्रियों और पुरुषोंके समान अधिकार स्वीकार कर लेंगे; किन्तु चूँकि उनकी स्थिति और उनके कर्त्तव्योंमें भिन्नता है, इसलिए मेरी मान्यता है कि उनकी शिक्षामें भी भिन्नता होनी चाहिए। उन्नत देशोंमें स्त्रियोंको बहुत ऊँची शिक्षा दी जाती है; परन्तु उन्हें आखिर पुरुषोंके समान कर्त्तव्योंका पालन नहीं करना पड़ता; और हमारे यहाँ स्त्रियोंको आजीविका उपार्जित करनेके सम्बन्धमें पुरुषोंके मुकाबलेमें स्पर्धा नहीं करनी पड़ती। हम इस सम्बन्धमें जो सहायता करते हैं वह व्यर्थ नहीं जायेगी। हम जब अपने यहाँ स्कूल या कॉलेजकी स्थापना करेंगे तब हमें अपनी दी हुई रकममें से बदलेमें कुछ मिलेगा ही। इसलिए मेरा आग्रह है कि इस संस्थाको जितनी हो सके उतनी सहायता देनी चाहिए।

[गुजरातीसे]

प्रजाबन्धु, २७-२-१९१६

१७७. पत्र : छगनलाल गांधीको

अहमदाबाद

माघ वदी ५ [फरवरी २३, १९१६][2]

चि० छगनलाल,

मैं मद्रासमें चि० मगनलाल और जमनादाससे एवं बम्बईमें आदरणीय खुशालभाई आदिसे मिलकर अभी-अभी यहाँ आया हूँ। सन्तोक और दोनों लड़कियाँ मेरे साथ वापस आ गई हैं, क्योंकि वहाँ उनका काम समाप्त हो गया था और मगनलालको मद्रास प्रान्तमें भ्रमण करना था। मैंने मगनलालको यह सलाह दी है कि वह अपना तमिलका अध्ययन पूरा करके-ही यहाँ आये। उसने मुझे बताया है कि उसने बुनाईका काम तो अच्छी तरह सीख लिया है। जमनादास और उसकी बहू अभी वहीं रहेंगे। जमनादासका स्वास्थ्य तो अभी बिलकुल पहले-जैसा नहीं है। बाकी सब ठीक है।

खुशालभाई और हम सब चाहते हैं कि तुम अब यहाँ आकर रहो।[3] तुम वहाँ धंधा कर लो यह तो अनुचित जान पड़ता है। घर और खेतीका जैसा ठीक लगे वैसा करना। यहाँसे अभी किसीको भेजना सम्भव नहीं दिखता। अभी तो कोई बुलाया भी नहीं गया है। बल्कि भाई प्रागजीने लिखा है कि वहाँ किसीको भेजेंगे तो भगाको छुट्टी देनी पड़ेगी।

१. एक समाज-सेविका, श्रीमती विद्यागौरी आर० नीलकंठ।

२. गांधीजी मद्राससे १९१६ में इसी दिन लौटे थे। मगनलाल गांधी, जिनका पत्रमें उल्लेख है, उस समय वहीं थे।

३. दक्षिण आफ्रिकासे।

तुम्हें यहाँ आनेसे घबराना नहीं चाहिए। स्वभावतः मेरी इच्छा तुम्हें साथ रखनेकी ही होगी। किन्तु यदि तुम अलग ही व्यवस्था करना चाहोगे तो कर दूँगा। यहाँ आ जानेपर सब ठीक हो जायेगा।

खुशालभाई और देव भाभीका[1] मन बम्बईमें लग गया जान पड़ता है। मेरा उनका पूर्वजन्मका जबरदस्त लेन-देन है। हम चचेरे भाई हैं, वे ऐसा अनुभव भी नहीं होने देते।

काशीमें गया हुआ[2] इस सबके सम्बन्धमें अपने विचार लिखूँ तो पन्नेके-पन्ने भर जायें; किन्तु इतना समय नहीं है। तुम जब यहाँ आओगे तब सब मालूम हो जायेगा।

मोहनदासके आशीर्वाद

इमाम साहबके[3] पिताजी गुजर गये हैं। उन्हें सहानुभूतिका पत्र लिख देना।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५६९२) से।
सौजन्य: नारणदास गांधी

१७८. गिरमिट-प्रथा

अनेक कारणोंसे गिरमिट-प्रथाका प्रश्न आज एक ज्वलन्त प्रश्न बना हुआ है — श्री ऐन्ड्रयूज और श्री पियर्सन, जिन्हें भारत अपनी मातृभूमिकी भाँति ही प्यारा लगने लगा है, हालमें भारतके हितके लिए फीजी द्वीप गये हुए थे। यह काम उन्होंने स्वेच्छासे हाथमें लिया था। अपना काम समाप्त करके अब वे लौट आये हैं। उन्होंने जो रिपोर्ट पेश की है वह शीघ्र ही प्रकाशित होने जा रही है। मालवीयजीने इम्पीरियल कौंसिलमें एक प्रस्ताव प्रस्तुत करनेकी सूचना भेजी है। यदि वह प्रस्ताव वहाँ पास हो गया तो भारत-सरकारके लिए गिरमिट-प्रथाको बन्द कर देना अनिवार्य हो जायेगा। पाठकोंको स्मरण होगा कि यह काम स्वर्गीय श्री गोखलेने १९१२ में उठाया था। श्री मालवीयजीका यह प्रस्ताव[4] उसी शृंखलाकी एक कड़ी है। श्री गोखलेने (इम्पीरियल कौंसिलमें) उस समय उत्कटताके साथ और आँकड़े प्रस्तुत करते हुए इस प्रथाको बन्द कर देनेके सम्बन्धमें प्रस्ताव उपस्थित किया था। परन्तु अधिक सरकारी वोटोंके कारण वह प्रस्ताव गिर गया था। नैतिक विजय तो श्री गोखलेकी ही हुई थी। गिरमिट-प्रथाकी मौतकी घंटी तो तभी बज चुकी थी, जिस समय उनका प्रस्ताव परिषद्के सामने लाया गया

१. छगनलालकी माताजी।

२. आशय बनारस हिन्दू विश्वविद्यालयमें दिये गये गांधीजीके भाषण और उससे सम्बन्धित घटनासे है। देखिए "भाषण: बनारस हिन्दू विश्वविद्यालयमें", ६-२-१९१६।

३. इमाम अब्दुल कादिर बावजीर।

४. मार्च १९१६ में पंडित मदनमोहन मालवीयने शाही परिषद्में इस आशयका एक प्रस्ताव पेश किया था कि गिरमिट-प्रथा बन्द कर दी जाये।

था। प्रथाको बन्द करनेमें अपनेको असमर्थ देखकर भारत सरकारने गोखलेजीका प्रस्ताव पास तो नहीं होने दिया, परन्तु उसकी समझमें यह जरूर आ गया कि निकट भविष्यमें उसे यह प्रथा बन्द करनी ही होगी; इसमें बहुत विलम्ब नहीं किया जा सकता। श्री मालवीयके द्वारा प्रस्तुत किये जानेवाले प्रस्तावसे मालूम होता है कि श्री ऐन्ड्रयूज और पियर्सनकी रिपोर्टमें गिरमिट-प्रथाको बन्द कर दिये जानेकी सिफारिश की गई है। लॉर्ड हार्डिंजकोयह ठीक ही लगेगा कि वे अपने अत्यन्त महत्त्वपूर्ण शासन-कालके आखिरी दिनोंमें चलते-चलते इस बहुत पुरानी और सर्व-विदित शिकायतको दूर करनेका महत्त्वपूर्ण कार्य अवश्य करते जायें।

निम्नलिखित पंक्तियोंमें मैं अपने कुछ व्यक्तिगत अनुभव और गिरमिट-प्रथाके प्रश्न-पर अपने कुछ विचार व्यक्त करनेका प्रयत्न करूँगा। आँकड़ोंके लिए पाठकोंको चाहिए कि वे श्री गोखलेके उपरोक्त भाषण तथा सर्वश्री ऐन्ड्रयूज व पियर्सनकी शीघ्र ही प्रकाशित होनेवाली रिपोर्टका अवलोकन करें।

निस्सन्देह गिरमिट-प्रथा गुलामी-प्रथाका अवशेष मात्र है। १८९५ में स्वर्गीय सर विलियम हंटरका ध्यान इस प्रथाकी ओर आकृष्ट किया गया। तब सबसे पहले उन्हींने इस प्रथाको "दासतासे ही मिलती-जुलती" प्रथा बतलाया। कानून अंशतः प्रायः अपने समयके लोकमतको प्रतिबिम्बित करते हैं। किन्तु, दासताको मिटानेसे सम्बन्धित कानून वास्तवमें लोकमतसे आगे ही नहीं, बल्कि बहुत आगे बढ़ा हुआ था। जैसा हर नये कानूनके बारेमें हुआ करता है, वैसा ही इस कानूनके सम्बन्धमें भी हुआ। जो गुलाम रखते थे, इस कानूनसे असन्तुष्ट होकर, उन्होंने गिरमिट-प्रथाका सहारा लिया और इस कानूनको बहुत-कुछ प्रभावहीन बना दिया। जो जुआ अबतक काले-काले हब्शियोंकी गर्दनपर था वह अब रंगदार भारतीयोंके कन्धोंपर आ गया। अलबत्ता बोझको एकके कन्धेसे दूसरे कन्धेपर रखते हुए कुछ कम जरूर करना पड़ा, उसका रूप-रंग और आवरण भी बदल दिया गया; परन्तु मूल तत्त्व तो वे ही बने रहे। इस प्रथाके भयंकर रूपका स्पष्ट दर्शन तो तब हुआ जब यह अभिशाप दक्षिण आफ्रिका-पर उतरा और वहाँकी सोनेकी खदानोंमें काम करनेके लिए चीनसे गिरमिटिया मजदूर लाये गये। स्वर्गीय सर हेनरी कैम्बेल बेनरमैनने[1] ब्रिटिश-द्वीप-समूहके कोने-कोनेमें जाकर इस प्रथाको निन्द्य ठहराते हुए जोरदार व्याख्यान दिये थे। तब उनका काम वोट पानेकी चाल नहीं थी। उन्होंने कहा कि दक्षिण आफ्रिकाको इस कुप्रथासे मुक्त करानेके निमित्त जो भी त्याग करना पड़े थोड़ा है। जोहानिसबर्गके बड़े-बड़े करोड़पतियोंने चीनी गिरमिटिया मजदूरोंको बनाये रखनेके लिए जमीन–आसमान एक कर दिया। उन्होंने कहा हमें वक्त चाहिए। किन्तु लोकसभा (हाउस ऑफ कामन्स) ने उनकी एक नहीं सुनी। खदानोंके मालिकोंको लेनेके देने पड़ गये। मानव-जातिके हित-साधनका ध्यान सर्वोपरि हो उठा। खदानोंके बन्द हो जानेकी नौबत आ गई किन्तु संसदने परवाह न की। श्री चेम्बरलेनको[2] लाखों रुपयोंका दिया गया वचन जहाँका-तहाँ रह गया। सदनमें

१. सर हेनरी कैम्बेल बेनरमैन, इंग्लैंडके प्रधानमन्त्री (१९०५–१९०८)।

२. जोज़ेफ़ चेम्बरलेन (१८३६–१९१४), अंग्रेज राजनीतिज्ञ और उपनिवेश-सचिव (१८९५–१९०२)।

इसकी हँसी हुई। चीनी गिरमिट-प्रथाके बन्द करनेसे सम्बन्धित कानून पास किये जानेके छः महीनेके अन्दर ही प्रत्येक चीनी गिरमिटिया अपना बोरिया-बसना लेकर आफ्रिकासे चला गया। खानोंमें इस पलटेसे मार गई। उन्होंने जिन्दा रखनेके अन्य उपाय ढूंढ़ निकाले। अब खानोंके मालिक और उस कानूनका विरोध करनेवाले अनुदारदलीय सदस्य दोनों ही यह मानने लगे हैं कि गिरमिट-प्रथाका उठा दिया जाना बहुत कल्याण-कर साबित हुआ, इसके लिए वे प्रशंसाके पात्र अवश्य हैं।

भारतीय गिरमिटिया प्रथा चीनी गिरमिटिया प्रथासे कम गिरानेवाली नहीं है। इसके अलावा इसे चलानेका कारण यह है कि उसके कड़ुएपनको अनजाने ही क्यों न हो, कहीं अनुकूलताके साथ, भारतकी मदद दी गई है। इन दो वर्गोंके बीच मुख्य अन्तर यह है कि चीनी लोग अपने साथ एक भी स्त्री नहीं लाते थे जब कि भारतीय गिरमिटियोंके साथ १०० पीछे ४० औरतें अवश्य ही रहा करती थीं। अगर चीनी गिरमिटिया यहां रह जाते तो वे समाजकी बुनियादको खोखली कर देते। भारतीय गिरमिटिये इस अनाचारको अपने तक ही सीमित रखते हैं। अभारतीयोंके लिए यह बात महत्त्वहीन हो सकती है। परन्तु हम भारतीयोंको इसका बड़ा अफसोस है कि हमने इस दुराचारको अपने बीच इतने दिनों तक टिकने दिया। अनाचारोंमें स्त्री-सम्बन्धी कमजोरी सबसे ज्यादा है और इसका कोई इलाज नजर नहीं आ रहा है। इसलिए इस मामलेपर कुछ अधिक बारीकीसे विचार करना चाहिए। ये सब स्त्रियां पत्नियां ही हों, सो बात नहीं है। मजदूर भरतीमें पुरुष और स्त्रियां एक साथ ठूंस दिये जाते हैं। विवाह तो स्वांग ही समझिए। डरबनमें उत्प्रवासी संरक्षकके कार्यालयमें जाकर मर्द और औरतके केवल यह बयान देनेसे कि हम दोनों पति-पत्नी हैं, शादी वैध मान ली जाती है। स्वभावतः तलाक रोजमर्राकी घटना है। शेष बातें हम पाठकोंकी कल्पनाशक्तिके लिए छोड़ देते हैं। एक बात बिल्कुल निश्चित है कि इस प्रथासे भारतकी कोई नैतिक उन्नति नहीं हो रही है। और निश्चित है कि यहां आनेके बाद गिरमिटिया मजदूर पैसेकी दृष्टिसे चाहे जितना सम्पन्न क्यों न हो जाये, गिरमिटसे मुक्त होनेतक उसका जो नैतिक पतन होता है, पैसेकी यह सम्पन्नता उसके इस नैतिक पतनकी पूर्ति नहीं कर सकती।

इस प्रथाको जारी रखनेके पक्षमें एक और बहुत जोरदार दलील है। यह नहीं कहा जा सकता कि भारतमें अंग्रेजों और भारतीयोंके बीच बहुत अच्छे सम्बन्ध हैं। औसत अंग्रेज औसत भारतीयकी अपेक्षा अपनेको अच्छा मानता है और भारतीय भी सामान्य-तया इसे बर्दाश्त करता रहता है। इस प्रकारकी परिस्थिति दोनोंके लिए पतनकारी है और यह ब्रिटिश साम्राज्यके स्थायित्वके लिए एक खतरेकी बात है। कोई कारण नहीं है कि भारतीयोंको अंग्रेज अपना भाई समझना न सीखें और भारतीय यह सोचना बन्द कर दें कि वे अंग्रेजोंसे डरते रहनेके लिए पैदा हुए हैं। बहरहाल, हमारे बीचके अस्वाभाविक सम्बन्ध उस समय और भी विकृत होकर सामने आते हैं जब किसी भार-तीयको गिरमिटिया होकर गोरे मालिकके नीचे काम करना पड़ता है। इसलिए जबतक भारतमें अंग्रेजों और हमारे बीचका सम्बन्ध सही पायेपर आधारित नहीं किया जाता,

तबतक भारतीय मजदूरोंका दूरस्थ देशोंमें भेजा जाना मालिक और नौकर दोनोंके लिए हानिकारक हुए बिना नहीं रह सकता; फिर चाहे वे दूरस्थ देश ब्रिटिश साम्राज्यके अन्तर्गत हों या उसके बाहर और भले ही शर्तनामेमें अवधिका कोई बन्धन न हो। नेटालमें भारतीय मजदूरोंके अनेक मालिक वैसे बहुत दयालु हैं; मुझे उन्हें जाननेका सौभाग्य प्राप्त हुआ है। और यद्यपि वे मजदूर उनके ही आदमी थे। परन्तु वे अपने मवेशियोंके साथ जितना अच्छा व्यवहार करते हैं उससे बेहतर अपने मजदूरोंके साथ नहीं करते, कर नहीं सकते। मैं इन शब्दोंका प्रयोग किसी अनुदार भावनासे नहीं कर रहा हूँ। कृपालुसे-कृपालु मालिक भी अपने वर्गके दोषोंसे मुक्त नहीं हैं। वह सहज भावसे सोचता है कि भारतीय मजदूर मुझसे कमतर और मेरी बराबरीका कभी हो ही नहीं सकता। सभी जानते हैं कि कभी कोई गिरमिटिया भारतीय फिर वह चाहे जितना होशियार और स्वामिभक्त क्यों न रहा हो, अपने स्वामीकी पेढ़ीका मालिक नहीं बन पाया। परन्तु मैं भारतीय स्वामीकी गद्दी सँभालनेवाले भारतीय नौकरोंकी भाँति अपने स्वामियोंकी गद्दी सँभालनेवाले अंग्रेज नौकरोंको जानता हूँ। उत्तरोत्तर सम्बन्धोंके सुधरनेके लिए अंग्रेज दोषी नहीं है। यह स्पष्ट करना कि यदि ऐसा है भी तो कौन, कितना दोषी है, अथवा इस परिस्थितिके कारण क्या हैं, यह बताना इस लेखकी परिसीमामें नहीं आता। मुझे इस बातका जिक्र यह दिखानेके लिए करना पड़ा कि अन्य कारणोंका खयाल न किया जाये तो भी यह साफ है कि एक राष्ट्रकी हैसियतसे गिरमिटिया मजदूर-प्रथा स्पष्टतः हम लोगोंके लिए इतनी पतनकारी है कि उसे हर हालतमें बन्द कर दिया जाना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

लीडर, २५-२-१९१६

१७९. भाषण: स्वागत-समारोहमें[1]

फरवरी २६, १९१६

हैदराबादमें श्री गांधीका शानदार स्वागत हुआ। इस अवसरपर एक बहुत बड़ा जुलूस निकाला गया। जुलूसमें लगभग सात हजार व्यक्ति उपस्थित थे; उनके आगे-आगे बम्बई धारासभाके दो मुसलमान सदस्य माननीय भुरग्री और माननीय गुलाम-हुसेन चल रहे थे; जुलूसमें पचास गाड़ियाँ थीं। जुलूस जिन सड़कोंसे होकर जा रहा था उन सड़कोंपर अपार भीड़ थी और अनेक स्थानोंपर उन्हें मालाएँ पहनाई गई थीं; इन कारणोंसे गांधीजीको अपने ठिकानेपर पहुँचनेमें ३ घंटे लग गये। सभामें उनको नन्दनरों एक मनोहर मंजूषामें रखकर प्रशंसात्मक शब्दोंसे भरा हुआ एक मान-पत्र भेंट किया गया। उस सभामें श्री गांधीको छोड़कर सब वक्ताओंने अंग्रेजीमें भाषण दिया था, गांधीजीने हिन्दीमें ही बोलना उचित समझा।

उन्होंने कहा : मेरे राजनैतिक गुरु स्वर्गीय श्री गोखलेने मुझे एक वर्ष तक केवल घूमकर देशकी स्थितिका अध्ययन करनेको कहा था और व्याख्यान आदि न देनेकी हिदायत दी थी। वह एक वर्ष पूरा हो चुका है और अब मैं बोल सकता हूँ। आजकल भारतके लिए स्वराज्यकी चर्चाका जोर है। इलाहाबादमें कांग्रेस और (मुस्लिम) लीगके नेतागण उसकी योजना करने जा रहे हैं। परन्तु ऐसे कितने व्यक्ति हैं जो यह जानते हैं कि जरूरत किस चीजकी है? बटन दबाते ही स्वराज्य न तो दिया जा सकता है और न लिया ही जा सकता है। हम स्वराज्यके लिए जिस हद तक अपनेको तैयार करें उसी हद तक पा सकेंगे। हमें कुछ शर्तें पूरी करनी हैं; हम उन्हें पूरा कर सकते हैं। उनमें से एक शर्त यह है कि हम हृदयसे स्वदेशी अपनायें। स्वराज्य और स्वदेशीका चोली-दामनका साथ है। दूसरे, हमारा नीति-मन्त्र यह होना चाहिए — "मनुष्यसे नहीं ईश्वरसे डरो, फिर वह मनुष्य चाहे राजा हो, चाहे पुरोहित, चाहे मौलवी।" फिर, हमें चाहिए कि हम अपने दलित और निर्धन वर्गके लोगोंको मनुष्य समझें। श्री गांधीने श्रोताओंको याद दिलाते हुए कहा : "हम अपने नेताओंको जिन सद्गुणोंसे विभूषित मानते हैं उनको अपने जीवनमें उतारना ही उनका समुचित आदर करना है।" तदुपरांत श्री गांधीने श्रोताओंसे भारत सेवक समाज (सर्वेन्ट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी) के लिए चन्दा एकत्रित करनेको कहा।

उनका भाषण समाप्त होनेपर लोगोंने उत्साहपूर्वक तालियाँ बजाईं। अन्तमें 'वन्देमातरम्' तथा प्रख्यात संगीताचार्य विष्णु दिगम्बरका[1] एक राष्ट्रीय गीत हुआ। श्रोताओंने खड़े होकर गीत सुने।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २९-२-१९१६

१८०. भाषण : हैदराबाद, सिंधमें

फरवरी २७, १९१६

२७ फरवरी, १९१६को हैदराबाद (सिन्ध)के होम्स्टैड हॉलमें एकत्रित विशाल जन-समूहके समक्ष श्री गांधीने स्व० श्री गोखलेके चित्रका अनावरण किया। उपस्थित व्यक्तियोंमें [हैदराबादके] जिलाधीश भी थे।

श्री गांधीने अपना भाषण हिन्दुस्तानीमें दिया। वे बोले, "श्री गोखलेके महान् कार्य और उनकी सफलताका सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण आधार उनका चरित्रबल था। यदि उद्देश्य स्वार्थ-परायणता अथवा सत्ता न होकर कर्त्तव्य-परायणता हो तो सार्वजनिक कार्यकर्ता ही नहीं, वरन् शासनके अधिकारीगण, व्यापारी लोग, दफ्तरोंके बाबू, मेहनत मजदूरी करनेवाले कुली, इत्यादि भी देशका उत्थान और उसकी सेवा कर सकते हैं।

1. विष्णु दिगम्बर पलुस्कर (१८७२-१९३१); प्रसिद्ध गायक तथा गांधर्व महाविद्यालयके संस्थापक।

कर्त्तव्यनिष्ठा तथा सेवा करनेकी लगनका अभाव ही हम लोगोंकी संकटमय स्थितिका कारण है। श्री गोखलेने चारित्र्य-बल बढ़ानेके उद्देश्यसे ही भारत सेवक समाज (सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी)की स्थापना की थी। वे राजनैतिक जीवनमें आध्यात्मिकताका समावेश चाहते थे। वे चाहते थे [कि] नेता लोग प्रशंसाके पीछे न दौड़कर कर्त्तव्य पालन करें।

यदि मैं श्री गोखलेके सद्‌गुणोंका अनुकरण न करूँ तो मैं उनके चित्रका अनावरण करनेके अयोग्य माना जाऊँगा। और यदि आप लोग ऐसा न करें तो आप अपनेको इस उत्सवमें भाग लेनेके अयोग्य सिद्ध करेंगे।[1]

भाषण समाप्त करनेके पूर्व श्री गांधीने भारत सेवक समाजको आर्थिक सहायता देनेकी अपील की।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २९-२-१९१६

१८१. भाषण: हैदराबादमें चेचकके टीकेपर

फरवरी २८, १९१६

दिनमें श्री गांधी नारीशाला, नवलराय हीरानन्द अकादमी, नवविद्यालय हाईस्कूल तथा कुंदनमल गर्ल्स स्कूल गये; तीसरे पहर वे हीराबागमें स्थित श्री पी० सी० मांकडके मकानपर गये, जहाँ हैदराबादमें बसे हुए गुजराती तथा दक्षिणी लोग एकत्रित हुए थे। वहाँ श्री गांधीको मानपत्र भेंट किया गया और उन्हें मालाएँ पहनाई गईं। उसके पश्चात् वे दीवान थावूमल बेलाराम तथा उनके भाइयोंके साथ मोटरमें बैठकर सेन्ट्रल जेल गये। जेलके अधीक्षकसे प्रार्थना की गई कि वे श्री गांधीको जेलके अन्दरका भाग देखनेकी अनुमति दें। परन्तु अधीक्षकने बिना किसी शिष्टाचारके इनकार कर दिया। इसके बाद श्री गांधी होम्स्टेड हॉल गये। वहाँ उन्होंने टीके लगवानेके सम्बन्धमें अपने विचार संक्षेपमें व्यक्त किये। उन्होंने कहा: मैंने इस विषयपर खास तौरसे गौर नहीं किया; थोड़ा बहुत सोचा है। मेरा खयाल है चूँकि टीकेकी दवाई गौको अत्यन्त पीड़ा पहुँचाकर तैयार की जाती है, इसलिए टीका लगाना हिन्दू-धर्मके मौलिक सिद्धान्त — अहिंसा — का हनन करता है। कट्टर हिन्दू टीका लगवानेसे इस कारण इनकार करते हैं कि बाहमें दिये गये इंजेक्शनका वही अर्थ है जो मुखसे पी हुई दवाई-का होता है। टीका लगानेकी व्यवस्था केवल इसी कारण आपत्तिजनक नहीं है बल्कि इसलिए भी कि इससे संक्रामक रोगोंके फैलनेकी आशंका रहा करती है। जो लोग टीका नहीं लगवाते, उन्हें चेचक निकल ही आती हो सो बात नहीं है। और न यही

1. ये शब्द गुजराती (५-३-१९१६) से लिये गये हैं।

सच है कि वे सब लोग जिन्हें यह रोग हो जाता है, मर ही जाते हैं। लोग टीका लगवायें या न लगवायें यह उनकी मर्जीकी बात है। परन्तु यदि किसी जगह टीका लगवाना कानूनन अनिवार्य बना दिया जाये और यदि कोई व्यक्ति धर्म-सम्बन्धी कारणोंसे टीका न लगवाना चाहे, तो उसका साथ प्रत्येक भारतीयको देना चाहिए क्योंकि किसी एक बातके बारेमें हुक्म मानना अनिवार्य हो जाये तो दूसरी बातके विषयमें भी अनिवार्य रूपसे हुक्म मानना पड़ेगा।[1]

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्समें उद्धृत १–३–१९१६ के 'सिंध जरनल' के उद्धरणसे।

१८२. भाषण: कराचीमें नागरिकों द्वारा दिये गये मानपत्रके उत्तरमें[2]

फरवरी २९, १९१६

मैं भारतके विभिन्न हिस्सोंमें घूम रहा हूँ। अपनी इस यात्राके दौरान मैंने सारे भारतमें सभी जगहोंपर अपने प्रति लोगोंका विशेष स्नेह देखा। सभी धर्मों और जातियोंके भाई मुझपर अपना अनुराग जाहिर करते हैं। लेकिन मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं है कि यह असाधारण स्नेह मेरे प्रति न होकर दक्षिण आफ्रिकामें हमारे उन सब शानदार भाई-बहनोंके प्रति उचित श्रद्धांजलि है जिन्होंने मातृभूमिकी सेवा करते हुए जबरदस्त कष्ट उठाये, बलिदान किये और जेल तक गये। निःसन्देह आपकी मेरे प्रति इतनी ममता इसी विचारके कारण है। उन्होंने लड़ाई जीती और 'करो या मरो' के उन्हींके दृढ़ संकल्पके कारण इतनी सफलता मिली। इसलिए मैं मानता हूँ, मेरी तारीफमें जो-कुछ भी कहा जाता है वह वास्तवमें उनकी तारीफ है।

भारतके अपने दौरेके दरम्यान एक बातसे मैं बहुत प्रभावित हुआ और वह है भारतीय जनताका जागरण। लोगोंके मन एक नई आशासे भर गये हैं; उन्हें लगता है कि ऐसी कोई बात होने जा रही है जिससे भारत माताका सिर ऊँचा हो जायेगा। आशाकी इस भावनाके साथ-साथ मैंने यह भी देखा कि लोगोंमें केवल सरकारका ही नहीं, जातियोंके सरपंचों और पुरोहितोंका डर भी फैला हुआ है। [illegible] है कि हमारे मनमें जो-कुछ है हम उसे जाहिर नहीं कर पाते। सरकार [illegible]

भावना बनी है तबतक सच्ची उन्नति नहीं होगी, हो ही नहीं सकती। आप जानते हैं कि कांग्रेसके पिछले अधिवेशनमें स्वराज्यके बारेमें एक प्रस्ताव पास किया गया था। इस ध्येयको पानेके लिए आपको, मुझे, हम सभीको काम करना है, उसमें लगे रहना है। उस प्रस्तावके अनुसार कांग्रेस और मुस्लिम लीगकी समितियाँ जल्दी ही एक साथ बैठकर जो उचित समझेंगी, निश्चित करेंगी। किन्तु स्वराज्यकी प्राप्ति इसपर मुनहसिर नहीं है कि वे क्या कहते या करते हैं बल्कि इसपर मुनहसिर है कि हम और आप क्या करते हैं। यहां कराचीमें व्यापार ही प्रमुख है; यहाँ बहुतसे बड़े-बड़े व्यापारी हैं। मैं उनसे दो-चार बातें कहना चाहता हूँ। यह समझना गलत है कि व्यापारमें मातृभूमिकी सेवा करनेकी गुंजाइश नहीं है। याद रखिए हमारे देशका भला हमारे ही हाथमें है, दूसरोंके हाथमें नहीं; और कुछ मामलोंमें तो पढ़े-लिखे लोगोंसे भी ज्यादा वह व्यापारियोंके हाथमें है, क्योंकि मैं तो बहुत जोरसे ऐसा अनुभव करता हूँ कि हम जबतक 'स्वदेशी' को नहीं अपनाते तबतक स्वराज्य नहीं आता। (तालियाँ)। और इस दिशामें भारतीय व्यापारी बहुत-कुछ कर सकनेकी हालतमें हैं। एक समय देशमें 'स्वदेशी' की लहर आई। किन्तु मैंने सुना है कि वह आन्दोलन बहुत हदतक इसलिए बैठ गया कि भारतीय व्यापारियोंने विदेशी वस्तुओंको स्वदेशीके नामसे लोगोंके गले मढ़ दिया। भारतीय व्यापारी यदि व्यापारमें सीधे-सच्चे रहें तो वे देशके पुनर्जीवन और उत्थानकी दिशामें बहुत-कुछ कर सकते हैं। इसलिए व्यापारियोंको अपने व्यापार-व्यवहारमें दृढ़ताके साथ जिसे हिन्दू धर्म और मुसलमान ईमान कहते हैं उसका पालन करना चाहिए। तभी भारत ऊँचा उठेगा। दक्षिण आफ्रिकामें हमारे व्यापारियोंने संघर्षमें मूल्यवान सहयोग दिया; फिर भी कुछ व्यापारी कमजोर पड़ गये, जिससे संघर्ष कुछ थोड़ा लम्बा हो गया। शिक्षित-वर्गका कर्त्तव्य यह है कि वह व्यापारियोंसे और गरीब जनतासे बिना भेदभावके मिले। तभी हम सबके प्रिय उद्देश्यकी दिशामें चलना कम दुःखदायी होगा। (देर तक तालियाँ)।

[अंग्रेजीसे]

स्पीचेज एँड राइटिंग्ज ऑफ महात्मा गांधी

१८३. भाषण: कराचीमें गोपाल कृष्ण गोखलेपर

फरवरी २९, १९१६

मंगलवार, २९ फरवरी १९१६को खालिकदीना भवन, कराचीमें गोखलेजीके चित्रका अनावरण करते समय गांधीजीने निम्नलिखित भाषण दिया:–

हैदरावाद, सिन्धमें भी मुझसे श्री गोखलेके चित्रका अनावरण करनेको कहा गया था; वहाँ मैंने अपने-आपसे और उपस्थित लोगोंसे एक सवाल पूछा था। वही इस समय आपसे और खुदसे पूछ रहा हूँ। प्रश्न यह है: मुझे श्री गोखलेके चित्रका अनावरण करने और आपको इस आयोजनमें शामिल होनेका क्या अधिकार है? वैसे किसी चित्रका अनावरण करना या उसके समारोहमें शामिल होना अपने आपमें कोई बड़ी या महत्त्वपूर्ण वात नहीं है। किन्तु समारोहसे सम्वन्वित यह प्रश्न वास्तवमें महत्त्वपूर्ण है कि क्या सचमुच आपके और मेरे हृदयोंपर इतना असर हुआ है कि इस महापुरुषके उज्ज्वल उदाहरणका अनुकरण करनेके लिए हम और आप आतुर हैं? यदि हमने उनके मार्गका अनुसरण नहीं किया तो इस आयोजनका कोई वास्तविक अर्थ नहीं वचता। और अगर हमने उनका अनुसरण किया तो हम वहुत-कुछ प्राप्त कर सकेंगे। इसमें शक नहीं कि हममें से हरएक व्यक्ति उतनी सफलता नहीं प्राप्त कर सकता जितनी श्री गोखलेने शाही परिषद्में पाई थी। किन्तु जिस प्रकार उन्होंने विना एक क्षणका अवकाश लिए पूरे मनसे मातृभूमिकी सेवा की, वैसा करना तो हम सवके हाथकी वात है। मुझे उम्मीद है कि आप लोग यहाँसे जानेके वाद उनके विचारोंके अनुसार काम करनेकी वात मनमें जमाये रहेंगे और इस प्रकार आप उनके प्रति अपना आदर व्यक्त करेंगे।

आप जानते हैं कि स्वयं श्री गोखले भारत सेवक समाजकी स्थापनाको अपनी सवसे वड़ी कृति मानते थे। वे यह संस्था छोड़कर गये हैं; अव यह हमारा काम है कि हम उसको सहारा देकर उसके श्रेष्ठ कार्यको आगे वढ़ायें। सवसे अच्छा तो यह होगा कि हम 'समाज' में शामिल हो जायें। किन्तु तव सवाल उठता है कि हम उसके योग्य हैं या नहीं। और यदि उसमें शामिल होनेकी हमारी परिस्थिति नहीं है तो हम सव दूसरा काम यह कर सकते हैं कि उसे आर्थिक सहायता दें और उसकी निधिको भर दें।

[अंग्रेजीसे]

'स्पीचेज ऐंड राइटिंग्ज ऑफ महात्मा गांधी'

१८४. भाषण: कराचीमें[1]

फरवरी २९, १९१६

आज गुजराती भाइयोंने मेरा जो सम्मान किया है उसके लिए मैं उनका वहुत आभारी हूँ। मैं जहाँ गया वहाँके गुजराती लोगोंने मेरा ऐसा ही सम्मान किया। यद्यपि सभी लोग मेरे अपने हैं, किन्तु गुजराती भाई मेरे विशेष अपने हैं। इसलिए मेरी इच्छा है कि मैं अपने गुजराती भाइयोंकी विशेष सेवा कर सकूं; किन्तु चूंकि मुझे समस्त भारतमें घूमना होता है, इसलिए यदि मैं अपना सारा समय गुजरातमें ही लगा दूं तो यह ठीक नहीं कहा जायेगा। मैंने देखा है कि गुजराती भाई कलकत्ता, मद्रास, वंगाल आदि स्थानोंमें व्यापारके निमित्त फैल गये हैं। दक्षिण आफ्रिकामें भी व्यापारीवर्गमें वड़ा भाग गुजरातियोंका ही है। कराचीमें गुजरातियोंकी आवादी ऊपर वताये गये सभी स्थानोंकी अपेक्षा अधिक है; चूंकि कराची सिन्ध प्रदेशके अन्तर्गत है, इसलिए यहाँ सिन्धियोंकी आवादी अधिक है, तिसपर भी पहली निगाहमें ऐसा ही लगता है कि कराचीमें सिन्धियोंकी अपेक्षा गुजरातियोंकी आवादी अधिक है।

गुजरातमें तीन जातियां हैं — गुजराती हिन्दू, गुजराती पारसी और गुजराती मुसलमान। ये तीनों ही प्रायः व्यापारके उद्देश्यसे देशके विभिन्न भागोंमें फैल गये हैं। अव व्यापारियोंका सच्चा धर्म पैसा कमाकर जमा करना और जैसे-वने-वैसे लोगोंको लूटपाट कर धनी हो जाना नहीं है। ऐसे तो पिंडारी लोग भी लोगोंको लूट-मारकर मालदार हो जाते थे। व्यापारमें धोखा-धड़ी करनेमें और थप्पड़ मारकर पैसा छीन लेनेमें मुझे तो कोई अन्तर नहीं दिखता। व्यापारीवर्गको सचाईके रास्तेपर चलकर व्यापार करना चाहिए। उन्हें लोगोंको दवाने या कुचलनेका काम नहीं करना चाहिए। मैं यह नहीं कहता कि आप व्यापारमें ऐसा ही करते होंगे। जहाँ पाप किया होगा, वहाँ प्रभुका डर भी रखा होगा और किसी मनुष्यपर दया भी की होगी। व्यापारियोंका मुख्य काम यह है कि वे दयापूर्ण व्यवहार करें और अपने भीतर दया-भाव वढ़ायें। यदि हम पढ़-लिखकर डॉक्टर या वकील हो जायें तो यह पढ़ना-लिखना नहीं हुआ। हमें व्यापारको निर्मल करनेका प्रयत्न करना चाहिए। इसका एक प्रत्यक्ष उदाहरण सर दोराव[2] और रतन ताता हैं। सर दोराव अपने लड़कोंको डॉक्टर या वकीलका धन्धा नहीं सिखाते। ऐसे डॉक्टर तो उनके घरमें सत्तरह-सौ होंगे। किन्तु उन्होंने इस देशके व्यापारको निर्मल करनेमें भाग लिया है; आप उसीका अनुकरण करें। भारतमें उनकी तुलनामें ठहरनेवाला कोई मनुष्य नहीं है। वर्मिघमके श्री चेम्बरलेन भी सच्चे व्यापारी थे, यद्यपि वे अब मर चुके हैं; किन्तु व्यापारिक जगत्में उनका स्मरण अभीतक किया

जाता है। व्यापारी लोग कहेंगे, हम तो व्यापारका काम करते हैं; हम कोई दूसरी खटपट नहीं करते। किन्तु ऐसा नहीं सोचना चाहिए। उन्हें आसपासके वातावरणको ध्यानमें रखकर काम करना चाहिए। हिन्दुओं, मुसलमानों और पारसियों — सभीके धर्मग्रन्थोंमें लिखा हुआ है कि व्यापारियोंको व्यापारके साथ-साथ लोगोंकी सेवा भी करनी चाहिए। अकालके दिनोंमें चीजोंके दाम इतने ऊँचे कर देना कि लोग नेस्त-नाबूद हो जायें, सच्चे व्यापारीका काम नहीं है। इससे तो लोगों और व्यापारियों दोनोंकी ही अवनति होती है। स्वदेशी आन्दोलनकी विफलता व्यापारियोंके कारण ही हुई है। इसका दोष सभी लोग बम्बई अहातेके ऊपर डालते हैं। वहांके लोगोंने पैसा इकट्ठा करनेके उद्देश्यसे ही स्वदेशी माल बेचनेमें दिलचस्पी नहीं ली। जिस प्रकार क्षत्रियका कर्त्तव्य मारना नहीं है, उसी प्रकार व्यापारीका काम भी पैसा इकट्ठा करना नहीं है।

[गुजरातीसे]

गुजरात मित्र अने गुजरात दर्पण, १२–३–१९१६

१८५. भाषण : कराचीके स्वागत-समारोहमें[1]

मार्च २, १९१६

प्रत्येक मनुष्यको अपनी मातृभाषामें ही शिक्षा मिलनी चाहिए और विदेशी भाषाको ऐच्छिक विषयका स्थान दिया जाना चाहिए। जीवनपर मातृभाषाका जो प्रबल प्रभाव पड़ता है, वह किसी अन्य भाषाका नहीं पड़ सकता।

[गुजरातीसे]

गुजराती, १२–३–१९१६

१८६. भेंट : कराचीमें पत्र-प्रतिनिधियोंसे[2]

मार्च २, १९१६

मैंने अपने भ्रमणमें यह देखा कि पूनामें सार्वजनिक हलचल बहुत अधिक है। यह ठीक है कि सार्वजनिक हलचल मद्रासमें भी काफी है किन्तु वहाँ इसका कारण विद्यार्थियोंकी अधिकता है। पूनामें मैंने यह देखा कि वहाँ कुछ लोग ऐसे हैं जो जनताके आदमी (नेता) बन सकते हैं। मद्रासमें ऐसा नहीं लगता। समस्त भारतमें केवल पूनामें ही ऐसे लोग हैं जिनमें से मुझे लगता है कि बहुत-से व्यक्ति भविष्यमें जनताका प्रतिनिधित्व कर सकते हैं। बम्बईमें भी स्थिति ठीक है किन्तु वहाँकी सार्वजनिक हलचल दो-एक सज्जनोंपर ही निर्भर है। बाहरके लोग सिन्धपर यह आरोप

१. कराची बन्धु-मण्डल द्वारा आयोजित।

२. कराचीकी गुजराती पत्रिका **पारसी संसार**के प्रतिनिधिसे।

लगाते हैं कि सिन्धी लोग सुस्त हैं। मैं इस बातको नहीं मानता। अन्य प्रान्तोंके समान ही इस प्रान्तमें भी सार्वजनिक कार्यका उत्साह है। मुझे लगता है कि बम्बईकी अपेक्षा सिन्ध सार्वजनिक कार्यके प्रति उत्साहमें आगे निकल जायेगा।

[गुजरातीसे]
गुजराती ११–३–१९१६
गुजरात मित्र अने गुजरात दर्पण, १२–३–१९१६

१८७. वादिन[1] स्वागत-समारोहमें उत्तर

मार्च ३, १९१६

अभिनन्दनका उत्तर देते हुए श्री गांधीने सर सैयद अहमदखाँकी कही हुई बातको दोहराया। उन्होंने कहा कि भारतको चाहिए कि वह अपनी दोनों आँखोंसे देखे; अर्थात् मुसलमान और हिन्दू दोनोंकी नजरसे देखे। अगर उसने ऐसा न किया तो वह काना कहलायेगा।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, १९१६, पृष्ठ १४८–५०

१८८. पत्र : मगनलाल गांधीको

शनिवार [मार्च ११, १९१६][2]

चि० मगनलाल,

यह पत्र[1] आया है। इसके साथ एक विज्ञापन है; उसे भेजनेकी जरूरत नहीं है। मैं १४के बजाय १५ को रवाना होऊँगा। देवदास और प्रभुदास दोनोंको ले जानेका विचार किया है। रामदास तो साथ होगा ही।

तुम्हें तमिलका पूरे उत्साहसे अध्ययन कर डालना चाहिए। शिवरामन चला गया है। अब तमिलकी बिलकुल उपेक्षा हो रही है। इसलिए मुझे लगता है कि हममें से ही कोई जल्दी तैयार हो जाये तभी काम चलेगा। मेरी निगाह अब तुमपर ही है। किसी तमिलको तमिल सिखानेके लिए वहाँ भेजनेका विचार भी उठता रहता है। ऐसा लग रहा है कि अप्पा तो अब नहीं आयेगा।

सोयाबीन भारतमें होती है। उसके दाने सिन्धके खेतोंमें देखे थे। यदि बीजकी आवश्यकता हो तो वहाँके लोग बेचते हैं।

क्या जमनादासका स्वास्थ्य अबतक बिल्कुल ठीक हो चुका है? क्या वह भी तमिल पढ़ता है? रेवरेंड साइमन और लाजरससे मिलना। मेरा खयाल है कि ईसाइयोंमें से कोई न कोई पढ़ानेवाला मिल जायेगा। यदि तुमने काफी प्रगति की हो तो अखबार पढ़नेका अभ्यास करना। लगता है, कृष्णस्वामी वहीं रहता है। वह पश्चात्ताप तो करता है। उससे कुछ मदद मिल सकती है या नहीं यह भी देखना।

बापूके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५६९३) से।
सौजन्य : राधाबेन चौधरी

१८९. भाषण : गुरुकुलके अछूतोद्धार सम्मेलनमें

मार्च १८, १९१६

यदि नानकचन्द यह न कह गये होते कि अछूतोंके गोत्र वे ही हैं जो दूसरे राजपूतोंके हैं, तो भी हम उन्हें अछूत न समझते, क्योंकि सबसे प्रेम करना हमारा कर्त्तव्य है। श्री शंकरन् नायरने मुझसे कहा था कि अछूतोंके साथ असमानताका व्यवहार करनेके कारण भारत हमारे हाथसे चला गया। मैं भी ऐसा विश्वास करता हूँ। जब कोई और हमारे साथ वैसा ही अपमानजनक व्यवहार करेगा तब हम इसे समझेंगे। सच कहें तो हमने वास्तवमें भयानक पाप किया है। अपनी अन्तरात्मा और अपने कल्याणके लिए हमें पश्चात्ताप करना ही चाहिए और अपनेको फिर पहले ही जैसा निष्पाप बना लेना चाहिए। हमें प्रायश्चित्त करना चाहिए। प्रायश्चित्त क्या है? इस पापका व्यावहारिक हल क्या है, यह मैं आपको तत्काल ही बता सकता हूँ। सबसे पहले तो हमको निश्चित रूपसे यह जान लेना चाहिए कि उनके साथ समानताका व्यवहार, उनके बच्चोंको अपने स्कूलोंमें लेना आदि हमें उनकी नहीं बल्कि अपनी मुक्तिके विचारसे करना है। हम केवल ईसाई प्रचारकोंका अनुकरण करते हैं; किन्तु जो लोग इस समस्याके हलमें सक्रिय भाग ले रहे हैं उन्हें मैं सुझाव देता हूँ कि वे इस समस्यापर अधिक गम्भीरता तथा सच्चाईके साथ विचार तथा व्यवहार करें और तब देखें कि इसके लिए क्या करना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
वैदिक मैगजीन, अप्रैल-मई, १९१६

१९०. भाषण : गुरुकुलके पुरस्कार-वितरण समारोहमें

मार्च २०, १९१६

मैं देखता हूँ, इन ग्रामीण पाठशालाओंमें शिक्षाका स्तर एक जैसा नहीं है। कुछ तो धनिकोंकी पाठशालाओंके समान ही अच्छा कार्य कर रही हैं, किन्तु कुछमें बहुत ही अपर्याप्त शिक्षा दी जाती है। अछूतोंके प्रति न्याय करनेके लिए हमें अपने बच्चे हरिजनोंकी पाठशालाओंमें भेजने ही चाहिए और ध्यान रखना चाहिए कि उनके शैक्षणिक स्तरमें गिरावट न आने पाये। किन्तु एक बात और है। शिक्षा ऐसी न हो कि वह इन ग्रामीण कार्यकर्त्ताओंको, अस्वास्थ्यकर नगरोंमें खानसामा, कारखानोंके मैले-कुचैले मजदूर और निम्न श्रेणीके बाबू या मुन्शी बना दे। उनकी शिक्षा ऐसी हो कि वे अपने पिताओंके पेशे अधिक वैज्ञानिक ढंगसे तथा अधिक कुशलतासे अपना सकें। पाठशालाको ग्रामीण जीवन, ग्रामीण शिल्प, खुली हवा, आजादी तथा अपने लोगोंकी सेवाके प्रति आकर्षण उत्पन्न करना चाहिए।[1]

[अंग्रेजीसे]

वैदिक मैगज़ीन, अप्रैल-मई, १९१६

१९१. भाषण : गुरुकुलके वार्षिक उत्सवमें

मार्च २०, १९१६

गुरुकुल काँगड़ीके वार्षिक उत्सवमें मार्च २०, १९१६ को गांधीजी ने भाषण दिया था; यह उसका उन्हींके द्वारा बादमें तैयार किया हुआ विवरण है :

मैं भाषणका केवल वही अंश यहाँ लिखनेकी बात सोच रहा हूँ जो मेरी रायमें लिखने लायक है। यदि कहीं आवश्यक हुआ तो कुछ जोड़नेकी बात भी सोचता हूँ। स्मरण रहे कि भाषण हिन्दीमें दिया गया था। महात्मा मुन्शीरामजी ने मेरे बच्चोंको दो भिन्न अवसरोंपर आश्रय दिया और उनके साथ पितृवत् व्यवहार किया, इसलिए मैंने पहले उन्हें धन्यवाद दिया। फिर इस बातकी ओर लोगोंका ध्यान खींचा कि भाषणोंका समय बीत चुका है और कामका समय आ गया है। मैंने यह भी कहा कि मैं आर्यसमाजके प्रति कृतज्ञ हूँ। मैं प्रायः उसके कामोंसे प्रेरणा लेता रहा हूँ। समाजके सदस्योंमें मैंने उत्कट आत्मत्यागकी भावना देखी है। अपनी भारत-यात्राके दौरान, मैं ऐसे अनेक आर्यसमाजी भाइयोंसे मिला हूँ जो उत्तम देश-सेवा कर रहे हैं। इसलिए मैं महात्माजीका आभारी हूँ कि उन्होंने मुझे आप लोगोंके बीच आनेका अवसर दिया।

साथ ही यह कह देना भी उचित होगा कि मैं बिलकुल सनातनी हूँ। मेरी दृष्टिमें हिन्दू-धर्ममें सब-कुछ आ जाता है। इसकी आदर्श छायामें सभी तरहके विभिन्न विचारोंको आश्रय मिल जाता है और मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं है कि आर्य-समाज और सिख तथा ब्रह्म-समाज भले ही अपने आपको हिन्दुओंसे अलग वर्गमें रखना चाहें, किन्तु वे सब बहुत जल्दी हिन्दू-धर्ममें लीन हो जायेंगे और उन्हें अपनी परिपूर्णता भी इसीमें मिलेगी। मानवकी अन्य सभी संस्थाओंकी तरह हिन्दू-धर्ममें भी दोष और कमियाँ हैं। [इसलिए] प्रत्येक कार्यकर्त्ताके लिए उनके सुधारार्थ जुटनेकी भरपूर गुंजाइश तो यहाँ है, किन्तु इससे टूटकर अलग हो जानेका कोई कारण नहीं है।

निर्भयताकी भावना

अपनी इस यात्राके दौरान मुझसे सभी जगह यह पूछा गया है कि भारतकी तात्कालिक आवश्यकता कौन-सी है। मैंने जो उत्तर अन्य स्थानोंपर दिया है, मेरी समझमें यहाँ भी उसे दोहराना ही सबसे अच्छी बात होगी। मोटे तौरपर कहा जा सकता है कि उचित धार्मिक भावना हमारी सबसे बड़ी और तात्कालिक आवश्यकता है। वैसे यह ठीक है कि यह उत्तर बहुत स्थूल है और इससे किसीको पूरा सन्तोष नहीं मिल सकता। और फिर यह ऐसा उत्तर भी है जो किसी भी परिस्थितिमें दिया जा सकता है। इसलिए मैं कहना तो चाहता हूँ कि हमारी धार्मिक भावना सुप्त है, और हम लोग इसी कारण हमेशा भयभीत बने रहते हैं। हम लौकिक और अलौकिक दोनों प्रकारकी सत्ताओंसे डरते हैं। अपने पुरोहितों और पण्डितोंके सामने हम मनकी बात खुलकर नहीं कह पाते। राजसत्तासे भी हम थरथर काँपते रहते हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि हमारा यह आचरण उनके और हमारे, दोनोंके लिए अकल्याणकारी है। हमारे आध्यात्मिक, शैक्षणिक अथवा राजनीतिक शिक्षकों या शासकोंकी यह इच्छा कभी नहीं रही होगी कि हम सत्यको उनसे छिपाते रहें। लॉर्ड विलिंग्डनने अभी बम्बईकी एक सभामें व्याख्यान देते हुए कहा कि हम लोग किसी बातको अस्वीकार करनेकी इच्छा मनमें रखते हुए भी 'ना' कहते हुए हिचकिचाते हैं; उन्होंने श्रोताओंसे निर्भयताकी भावनाका विकास करनेको कहा। निःसन्देह निर्भयताका अर्थ दूसरोंके सम्मान या भावनाकी उपेक्षा करना नहीं है। मेरी विनम्र रायमें यदि हम कोई टिकाऊ और सच्चा काम करना चाहते हैं, तो निर्भयता उसकी सबसे बड़ी और जरूरी शर्त है। निर्भयताका गुण धार्मिक चेतनाके बिना प्राप्त नहीं किया जा सकता। हम भगवान्से डरना सीखें तो हमारा आदमीसे डरना खत्म हो जाये। अगर हम इस तथ्यको समझ लें कि हमारे भीतर दिव्य अंश है और हम जो-कुछ करते हैं या सोचते हैं, वह उसका साक्षी है और वही दिव्य अंश हमारी रक्षा करता है, हमें सच्ची राह बतलाता है, तो यह बात बिलकुल साफ हो जाती है कि हम भगवान्के भयके सिवाय धरतीपर किसी अन्य भयको माननेसे इनकार कर देंगे। जो राजाओंका भी राजा है, यदि हमारी निष्ठा उसमें दृढ़ है तो यह बड़ीसे-बड़ी राजभक्तिसे भी ऊँची चीज है और साथ ही यह हर प्रकारकी राजभक्तिका एक सुचिन्तित आधार भी है।

स्वदेशीका अर्थ

निर्भयताकी भावनाका भली प्रकार विकास कर चुकनेके वाद हम देखेंगे कि सच्ची स्वदेशीकी भावनाके विना मुक्ति सम्भव नहीं है। 'सच्ची स्वदेशी भावना' उस स्वदेशी भावनासे भिन्न है, जिसे हम अपनी सुविधाके अनुसार पालना चाहते हों। मेरे लेखे स्वदेशीका वड़ा गहरा अर्थ है। मैं तो उसे अपने धार्मिक, राजनीतिक और आर्थिक जीवनपर लागू करना चाहता हूँ। वह अवसर-विशेषपर स्वदेशी कपड़ा पहन लेने तक ही सीमित नहीं है। इतना तो हमें हर समय करना ही है और सो भी ईर्ष्या अथवा वदलेकी भावनासे नहीं, बल्कि इसलिए कि अपने प्रिय देशके प्रति यह हमारा कर्त्तव्य है। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि अगर हम विदेशमें वना हुआ कपड़ा पहनते हैं, तो हम स्वदेशीका उल्लंघन करते हैं। किन्तु यदि हम देशी कपड़ेको विलायती ढंगसे सिलवा लेते हैं, तो भी हम उसका उल्लंघन करते हैं। आखिरकार वातावरणसे पहरावेका कुछ-न-कुछ सम्वन्ध तो होता ही है। हमारी पोशाक शोभा और सुरुचिमें 'कोट' या 'पैंट'से कई गुना वढ़कर है। जव मैं किसी भारतीयको पाजामेके ऊपर कमीज और कमीज़पर विना नेकटाईके वास्कट पहने हुए देखता हूँ और देखता हूँ कि उसके पल्ले हवामें उड़ते चले जा रहे हैं, तो मुझे अच्छा नहीं लगता। धर्मके क्षेत्रमें स्वदेशी हमें अपने गौरवशाली अतीतका मूल्यांकन करना सिखाती है और सिखाती है आधुनिक कालमें उसका सुधरा हुआ आचरण। यूरोपमें चारों ओर जो अशान्ति फैली हुई है, उससे स्पष्ट हो जाता है कि आधुनिक सभ्यता अशिव और अन्धकारमय शक्तियोंका प्रतिनिधित्व करती है; जव कि प्राचीन अर्थात् भारतीय सभ्यता मूलत: दैवी शक्तियोंका प्रतिनिधित्व करती है। आधुनिक सभ्यता मुख्य रूपमें भौतिकतावादी है जव कि हमारी सभ्यता प्रधान रूपसे आध्यात्मिक है। आधुनिक सभ्यता भौतिक नियमोंकी खोजमें लगी हुई है और मानवीय प्रतिभाको उत्पादन और विनाशके साधनोंकी खोजमें जुटाये हुए है; और हमारी सभ्यता मुख्य रूपसे आध्यात्मिक नियमोंकी खोजमें लगी हुई है। हमारे शास्त्रोंमें स्पष्टत: यह कहा गया है कि सत्य-जीवनके लिए सत्यका ठीक-ठीक पालन, पवित्र आचरण, प्रत्येक जीवके प्रति अहिंसाकी भावना, किसी औरके धनकी इच्छा न रखना और दैनिक जीवनके लिए जो आवश्यक है केवल उसीका संचय नितान्त आवश्यक वातें हैं। उन्होंने यह भी कहा है कि इन वातोंके विना आत्म-तत्त्वका ज्ञान असम्भव है। हमारी सभ्यताने दृढ़तापूर्वक यह कहनेका साहस किया है कि अहिंसाका समुचित और सम्पूर्ण विकास सारे संसारको हमारे चरणोंमें लाकर डाल देता है। सक्रिय रूपमें अहिंसाका अर्थ है पवित्रतम प्रेम और करुणा। इस वचनका उच्चारण करनेवाले महापुरुषने अनन्त उदाहरण देकर इसे प्रमाणित कर दिया है।

अहिंसाका सिद्धान्त

राजनीतिक जीवनमें इसके परिणामोंपर नजर डालिए। हमारे शास्त्रोंमें जीवन-दानसे वड़ा कोई दान नहीं है। सोचकर देखें कि अगर हम अपने शासकोंको उनके जीवनकी ओरसे विलकुल निश्चिन्त कर दें, तो हमारे और उनके सम्वन्ध कितने अच्छे हो सकते हैं। अगर उन्हें इस वातका विश्वास हो जाये कि हमारी भावना उसके

कामोंके प्रति कैसी ही क्यों न हो, हम उनके शरीरको अपने ही शरीरकी तरह रक्षणीय मानेंगे, तो बहुत जल्दी पारस्परिक विश्वासका वातावरण निर्मित हो जायेगा और दोनों एक-दूसरेसे बिलकुल खुलकर बातचीत करेंगे और इस तरह जो समस्याएँ हमें आज विचलित किये हैं उनमें से अनेक सम्मानास्पद और न्यायोचित ढंगसे सुलझ जायेंगी। याद रखना चाहिए कि अहिंसाके आचरणमें दूसरेसे भी वैसे ही आचरणकी अपेक्षा रखना आवश्यक नहीं है; सच पूछो तो अपनी आखिरी मंजिलोंमें अहिंसाकी प्रतिक्रिया अहिंसाके सिवा और कुछ होना असम्भव है। हममें से बहुतोंका और मेरा भी यह विश्वास है कि हमें अपनी सभ्यताके जरिए संसारको सन्देश देना है। ब्रिटिश सरकारके प्रति मेरी राजनिष्ठाका कारण बिलकुल स्वार्थमय है। मैं ब्रिटिश कौमकी मारफत अहिंसाका जबरदस्त सन्देश सारी दुनियामें फैलाना चाहता हूँ, किन्तु यह तो तभी सम्भव है जब हम अपने कथित विजेताओंपर विजय प्राप्त कर लें और मेरे आर्य-समाजी भाइयो, मेरी समझमें इस महान् कार्यके लिए आप लोग खास तौरपर उपयुक्त माने गये हैं। आपका दावा है कि आपने शास्त्रोंका बारीकीसे अध्ययन किया है। आप आँखें बन्द करके किसी भी विचारको स्वीकार नहीं करते और अपने विचारके अनुसार आचरण करनेमें भी आप बिलकुल नहीं डरते। मेरी समझमें अहिंसाके सिद्धान्तको कम कूतने या उसकी सीमा निर्धारित करनेकी कोई जरूरत नहीं है। तब फिर आइए, हम इसके तात्कालिक परिणामोंकी चिन्ता न करते हुए इसे अपने आचरणमें उतारें। इसके तात्कालिक परिणाम आपकी निष्ठाकी शक्तिको कसौटीपर कसेंगे। यदि आप इसका आचरण करें, तो आप भारतको गुलामीसे छुड़ा लेंगे, इतना ही नहीं, आप मानव-जातिकी बड़ीसे बड़ी सेवा भी करेंगे। और आपका यह कहना भी ठीक होगा कि ऐसी सेवाके लिए ही स्वामी दयानन्दने जन्म लिया था। स्वदेशी एक नितान्त सक्रिय शक्ति है और इसका उपयोग सतत् जाग्रत रहकर आत्म-निरीक्षण करते हुए निरन्तर करते रहना चाहिए। आलसी व्यक्ति इसका आचरण नहीं कर सकता। यह तो उनके आचरणके योग्य है जो सत्यके लिए अपना जीवन खुशीसे न्यौछावर कर सकते हैं। स्वदेशीके और भी अनेक पहलुओंपर विस्तारसे विचार किया जा सकता है; किन्तु अपनी समझमें मैंने जो कुछ कहा है, उससे आप मेरा मतलब समझनेमें समर्थ हो सकेंगे। मैं यही आशा करता हूँ कि आप लोग जो भारतके एक विशिष्ट सुधारवादी दलके प्रतिनिधि हैं, मेरी बातको अच्छी तरह कसौटीपर कसे बिना त्याज्य नहीं मान लेंगे; और अगर मेरी बात आपको जँच गई है तो आपके द्वारा किये हुए कामोंको देखते हुए, मैं आशा करता हूँ, कि आप उन शाश्वत तत्त्वोंको अपने जीवनमें स्थान देंगे जिनकी मैंने आपसे अभी बात की है; और तदनुसार आप सारे भारतवर्षमें जुट जायेंगे।

आर्य-समाजका कार्य

मैं उपर्युक्त विवरणके अन्तमें वह बात भी कहना चाहता हूँ जो मैंने वहाँके श्रोताओंसे नहीं कही। मैं अबतक दो बार गुरुकुल जा चुका हूँ। आर्य-समाजके अपने भाइयोंसे कुछ प्रमुख मतभेद होते हुए भी मन-ही-मन मैं उनकी बड़ी इज्जत करता हूँ; और आर्य-समाजकी गतिविधिका सर्वश्रेष्ठ परिणाम कदाचित् गुरुकुलकी स्थापना और

उसके परिचालनमें दिखाई पड़ता है। यह ठीक है कि महात्मा मुन्शीरामकी प्रेरणादायक उपस्थिति ही उसकी शक्तिका अधिष्ठान है, किन्तु यह संस्था सच्चे अर्थोंमें एक स्व-शासित, प्रजातन्त्रीय और राष्ट्रीय संस्था है; किसी भी प्रकारकी सरकारी सहायता या आश्रयसे वह बिलकुल मुक्त है। उसका कोष कुछ लक्ष्मीपुत्रोंके दानके बलपर सम्पन्न नहीं हुआ है। तमाम गरीब लोग साल-दर-साल काँगड़ीकी यात्रा करते हैं। वे यथा-शक्य इस राष्ट्रीय महाविद्यालयके संचालनकी दिशामें प्रसन्नतापूर्वक जो-कुछ देते हैं, यह कोष उसीसे सम्पन्न हुआ है। प्रत्येक वार्षिक उत्सवपर बहुत बड़ी संख्यामें लोग यहाँ आते हैं और यहाँ उनके रहने और खाने-पीनेकी जो सुचारु व्यवस्था होती है, वह संगठनकी जबरदस्त शक्तिकी परिचायक है। सबसे अधिक आश्चर्यकी बात तो यह है कि इन आये हुए लोगोंमें लगभग १,००० आदमी, स्त्री और बच्चे होते हैं और उनका प्रबन्ध एक भी पुलिसके सिपाही या फौजी किस्मकी किसी शक्तिकी सहायताका तमाशा खड़ा किये बिना हो जाता है। आये हुए लोग और संस्थाके प्रबन्धकोंके बीच काम करनेवाली शक्ति केवल पारस्परिक प्रेम और आदरकी शक्ति है। गुरुकुल-जैसी बड़ी संस्थाके जीवनमें १४ वर्षकी अवधि कोई लम्बी अवधि नहीं है। पिछले दो या तीन वर्षोंमें जो स्नातक यहाँसे निकले हैं, वे क्या-कुछ करके दिखाते हैं, सो तो अभी देखना है। जनता तो व्यक्ति या संस्थाओंको उनके द्वारा प्रस्तुत परिणामोंसे ही परखती है। जनता एक सख्त मुनसिफ है और वह अपने मनमें असफलताओंकी गुंजा-इश नहीं रखती। इसलिए अन्ततोगत्वा सभी सार्वजनिक संस्थाओंकी तरह गुरुकुलके कामकी जाँच भी जनता ही करेगी। इस प्रकार जो विद्यार्थी इस महाविद्यालयसे पढ़कर निकले हैं और जिन्होंने जीवनके कंटकाकीर्ण पथपर पाँव रखा है, उनके कन्धोंपर बहुत बड़ी जिम्मेदारी है। उन्हें सावधानीसे काम लेना चाहिए। और जो इस जबरदस्त प्रयोगकी शुभ-कामना करते हैं, वे यह बात सोचकर आश्वस्त रह सकते हैं कि फलका वृक्षके अनुरूप होना जीवनका अकाट्य सिद्धान्त है। वृक्ष तो सुन्दर और हरा-भरा है तथा एक महात्मा पुरुष उसे सींच रहा है; इसलिए फल कैसा होगा, यह चिन्ता करना व्यर्थ है।

औद्योगिक शिक्षण

गुरुकुलका हितेच्छु होनेके नाते मैं उसकी समिति और अभिभावकोंको एक-दो सुझाव देनेकी धृष्टता करना चाहता हूँ। आत्मनिर्भर और स्वावलम्बी बननेके लिए गुरुकुलके बालकोंको कोई ठोस औद्योगिक शिक्षण दिया जाना चाहिए। मेरे विचारमें तो हमारे देशमें चूँकि ८५ प्रतिशत लोग किसान हैं और १० प्रतिशत लोग उनकी जरूरतको पूरा करनेवाले धन्धोंमें लगे हुए हैं इसलिए खेती और बुनाईका खासा-अच्छा व्यावहारिक ज्ञान यहाँके प्रत्येक तरुणके शिक्षणका एक भाग होना चाहिए। अगर उसे औजारोंका उचित उपयोग आ जाये, अगर वह एक लकड़ीका तख्ता सीधा-सीधा चीर सके और गुनियेका सही उपयोग करके ऐसी दीवार उठा सके जो बिलकुल सीधी हो और जो इस कारण गिर नहीं सकती, तो इसमें बुराईकी कोई बात नहीं है। जो बालक यह सब काम करनेमें समर्थ हो जायेगा, वह जीवन संघर्षमें कभी निराश

नहीं होगा और धन्धेकी समस्या उसके लिए कोई समस्या न होगी। इसके सिवाय स्वास्थ्य और सफाईके नियम तथा शिशु-पालन भी गुरुकुलके विद्यार्थियोंकी शिक्षाका एक आवश्यक अंग होना चाहिए। यहाँ मेलेमें सफाईकी जो व्यवस्था होती है, उसमें अभी बहुत कसर है। यह बात मक्खियोंकी भरमारसे स्पष्ट हो जाती है। मक्खियाँ मानो अदम्य स्वास्थ्य निरीक्षिकाएँ हैं। वे हमें लगातार हिदायतें देती रहती हैं कि सफाईके मामलेमें अभीतक सब-कुछ सम्पूर्ण नहीं किया गया है। उनकी भरमारसे यह स्पष्ट हो जाता है कि जूठन और मल्पर ठीक ढंगसे मिट्टी नहीं डाली गई है। मुझे यह सोचकर बड़ा दुःख हुआ कि हम इस स्वर्ण अवसरको यों ही खो दिया करते हैं। इस अवसरपर आनेवाले यात्रियोंको सफाईके पदार्थ-पाठ पढ़ाये जा सकते हैं। किन्तु यह काम शुरू तो गुरुकुलके विद्यार्थियोंसे ही होना चाहिए। यदि ऐसा हो, तो व्यवस्थापक लोगोंके पास वार्षिक उत्सवके समय ३०० सीखे-सिखाये स्वास्थ्य शिक्षक मौजूद रहें। अन्तमें एक महत्त्वपूर्ण बात और। बच्चोंके माता-पिता और संस्थाकी समिति अपने बच्चोंको यूरोपीय वेश-भूषा और आधुनिक विलासकी सामग्री मुहैया करके उन्हें नकल करना न सिखाये। अपने परवर्ती जीवनमें ये चीजें उनके मार्गमें बाधा डालनेवाली बनेंगी और ब्रह्मचर्यके विरोधमें जायेंगी। यह दुष्ट प्रवृत्ति सभी लोगोंमें फैल रही है और उन्हें तो इससे लड़ना ही चाहिए। हम उनकी वासनाओंको बढ़ाकर इन प्रवृत्तियोंके विरुद्ध संघर्षको और कठिन न बनायें।

[अंग्रेजीसे]

स्पीचेज ऐंड राइटिंग्ज ऑफ महात्मा गांधी

१९२. भाषण : आर्य-समाज भवन, हरद्वारमें

मार्च २३, १९१६

आर्यसमाज भवनमें शामको दयानन्द आंग्ल वैदिक स्कूलके विद्यार्थी ले जाये गये और श्री गांधीने अस्वस्थ होनेके कारण छोटा-सा भाषण दिया।

श्रोताओंसे श्री गांधीने अपने विश्वासके मुताबिक आचरण करनेका आग्रह किया और कहा कि मार्गदर्शक या शासकोंका अनुसरण करनेमें हमें उनके बाहरी व्यवहार-की नकल नहीं करनी चाहिए। उनका रहन-सहन, उनकी पोशाक अथवा रीति-रिवाज, जैसे मांस खाना आदि हमारे आदर्श नहीं बन सकते। उन्होंने विद्यार्थियोंसे कहा कि उन्हें अपनी आत्माके प्रति सच्चा बनना चाहिए और वे तभी देशके प्रति सच्चे बन सकेंगे।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, १९१६, पृष्ठ २४३-४

१९३. पत्र : जे० बी० पेटिटको

मार्च ३०, १९१६

प्रिय श्री पेटिट,

मुझे आपका पत्र और इसके साथ सत्याग्रह संघर्षके खर्चके लिए ६०० रुपयेका चेक मिला। इसके लिए मेरा धन्यवाद स्वीकार करें।

आपने जो विवरण माँगा है, सो साथ में भेज रहा हूँ। यह सूची अन्तिम सूची नहीं है। उदाहरणके लिए विधवाओंको कभी-कभी यात्राका खर्च देना जरूरी हो जाता है। वैसे यह खर्च जरूरी होनेपर ही दिया जाता है। अभी दो ही महीने पहले ऐसा खर्च करना पड़ा था।

इमाम साहबके पिताजीका अभी-अभी देहान्त हो गया है और इसलिए उन्हें ३०० रुपये दिये गये थे। उन्होंने अपना सब-कुछ तो खो ही दिया, उनके अबतक के मित्र भी उनसे बहुत नाराज हो गये हैं। फलस्वरूप वे जो व्यापार करते थे, सो खत्म हो गया है। आजकल वे यहाँ रहते हैं। जबतक वे समर्थ नहीं हो जाते, बीच-बीचमें उन्हें मदद देते रहना जरूरी हो सकता है।

मगनलाल गांधी और उसके भाई मेरे भतीजे हैं। वे राष्ट्रीय शिक्षाके लिए मेरी देखरेखमें शिक्षित हो रहे हैं। एक भाई[1] जो मुक्त है, कमा रहा है। किन्तु वह अपने माता-पिताका पूरा बोझ उठानेके लायक नहीं कमा पाता।

मगनभाई पटेलका मामला भी ऐसा ही समझिए। इसके सिवा वह हमेशा बीमार रहता है। फिर सोराबजी अडाजानियाका[2] मामला है। उन्हें एक मित्रसे कुछ मदद मिलती है, किन्तु आकस्मिक परिस्थितियोंके कारण उन्हें कुछ और मददकी, अन्दाजन ५०० रुपये तक, जरूरत पड़ सकती है।

जिन सत्याग्रहियोंके खर्चकी हमें यहाँ व्यवस्था करनी है, उन सभीके नाम ऊपर आ गये हैं। दक्षिण आफ्रिकामें हमें कितने पैसेकी जरूरत पड़ेगी, इसका विवरण मिलते ही ठीक अन्दाज लगाकर मैं आपको सूचित करूँगा।

१. नारणदास।

२. सोराबजी शापुरजी अडाजानिया; "पारसी होते हुए भी पूर्णतया भारतीय"; उन्होंने संघर्षके दूसरे दौरकी नींव रखी और अनेक बार शिक्षित भारतीयोंके अधिकारोंकी जाँच करनेके विचारसे ट्रान्सवालमें प्रवेश किया और सन् १९१८ में सबसे अधिक सजा भोगी। १९०९ में उन्हें निर्वासित भी किया गया। सन् १९१२ में डॉक्टर मेहताके खर्चपर गांधीजीने उन्हें बैरिस्टरी पढ़नेके लिए इंग्लैंड भेजा। इंग्लैंडमें रहते हुए श्री गोखलेने उन्हें भारत सेवक समाज (सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी)में सम्मिलित होनेका आमन्त्रण दिया। ट्रान्सवाल लौटकर आनेपर उन्होंने भारतीय समाजके हितमें सार्वजनिक काम किया और जोहानिसबर्गमें ही कम उम्रमें उनका देहान्त हो गया।

यह कहनेकी तो कोई आवश्यकता ही नहीं है कि मैं जो सूचना आपको दे रहा हूँ, वह गोपनीय है। इसका सम्बन्ध कुछ ऐसे समाज-सेवी व्यक्तियोंसे है, जो मेरे आग्रहपर सहायता स्वीकार कर रहे हैं। हमारा नियम रहा है कि जो लोग भरण-पोषणके लिए सहायता लेते हैं, उनके नाम कभी जाहिर न किये जायें। दक्षिण आफ्रिकामें कुछ घनिष्ठ सहयोगियोंको छोड़कर केवल श्री गोखले ही ऐसे व्यक्ति थे जिन्हें इस सहायताकी बात ज्ञात थी। समितिको सूचना देनेपर मुझे कोई आपत्ति नहीं है। किन्तु उसके बाहर यह बात किसीको मालूम नहीं होनी चाहिए।

हृदयसे आपका,

	आयु	रु०	
आयामल	३५	१५	जीवन पर्यन्त
अरुलमायी	३५	१०	जीवन पर्यन्त
नारणसामी	१४	१५	१० [वर्ष]
पुरो	१२	१५	”
बाला	१०	१५	”
शिवपूजन	२०	१५	”
शिवप्रसाद	५	१५	१५ वर्ष
मगनभाई	२८	१५	५ वर्ष
रेवाशंकर	१८	१५	१० वर्ष
छोटम	७	१५	१५ [वर्ष]
मगनलाल	२५		
जमनादास	२०	१५	५ [वर्ष]
इमाम साहेब	४०		
सोराबजी	३५		

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० ६३०६) की फोटो-नकल से।

१९४. गुजरात वर्नाक्यूलर सोसाइटीकी सदस्यताका प्रार्थनापत्र[1]

[अहमदाबाद
अप्रैल १४, १९१६ से पूर्व][2]

अवैतनिक मन्त्री
गुजरात वर्नाक्यूलर सोसाइटी
अहमदाबाद

महोदय,

मेरी इच्छा है कि मैं गुजरात वर्नाक्यूलर सोसाइटीका आजीवन-सदस्य बनूँ। आशा है, आप मेरा नाम समितिमें प्रस्तुत करके मुझे आजीवन-सदस्य बना लेंगे।

इसके साथ आजीवन-सदस्यताकी फीसके २५ रु० (अंक पच्चीस रुपये) भेजे हैं। प्राप्त होनेपर पहुँच देनेकी कृपा करें।

नाम: मोहनदास करमचंद गांधी
हस्ताक्षर: मोहनदास करमचंद गांधी
उम्र: ४६ वर्ष
शिक्षा: बैरिस्टरी पर्यन्त
पता (स्थायी) सत्याग्रह आश्रम
(वर्तमान) कोचरबके पास
अहमदाबाद

मैं-निर्वाह मात्र लेकर शिक्षकका काम करता हूँ। इसलिए मेरा खयाल है कि मैं तीस रुपये मासिकसे कम वेतन पानेवाला माना जाऊँगा। इस कारण २५ रुपये भेजे हैं।[3]

[गुजरातीसे]
बुद्धिप्रकाश, जनवरी-मार्च १९४८

१. यह प्रार्थनापत्र छपे फार्ममें भर कर दिया गया था।

२. प्रार्थनापत्रके साथ भेजी गई २५ रुपयेकी रकम इस तारीखमें सोसाइटीकी बहियोंमें जमा है। १९ तारीखको प्रबन्ध-समितिने अपनी एक बैठकमें विशेष प्रस्ताव पास करके गांधीजीको आजीवन-सदस्य मनोनीत किया। रकम लौटा दी गई थी।

३. छपे फार्मकी पाद-टिप्पणीमें कहा गया है कि स्त्रियाँ और ३० रुपयेसे कम मासिक वेतन पानेवाले अध्यापक २५ रु० देनेपर आजीवन-सदस्य बनाये जायेंगे। साधारण आजीवन-सदस्यताका शुल्क ५० रु० था।

१९५. भाषण : शोक-सभामें[1]

[अहमदाबाद]
अप्रैल १६, १९१६

श्री पाटिल अहमदाबाद के रत्न थे। यदि अहमदाबादने उन्हें परखा होता तो आज यह सभा-भवन खचाखच भरा होता। जब मुझे बम्बईसे अहमदाबाद आनेका आमन्त्रण मिला तब एक मित्रने मुझसे कहा कि चूंकि आमन्त्रण-पत्रपर श्री पाटिलके भी हस्ताक्षर हैं, इसलिए अहमदाबाद जानेमें कोई हर्ज नहीं। कहनेका मतलब यह है कि वे अपनी बातके पक्के और विनम्र थे। दूसरी एक बात यह कि वे इतनी अल्पायुमें गुजर गये। इस सम्बन्धमें मेरा सुझाव यह है कि राजनैतिक नेताओंकी मृत्यु इतनी अल्प आयुमें क्यों हो जाती है, इसकी जांच की[2] जानी चाहिए। मेरे खयालसे इसका कारण यही है कि वे अपने स्वास्थ्यकी चिन्ता नहीं करते।

[गुजरातीसे]
प्रजाबन्धु, २३–४–१९१६

१९६. पत्र : 'प्रजाबन्धु' को[3]

सत्याग्रह आश्रम
अहमदाबाद
चैत्र वदी २, गुरुवार, अप्रैल २०, १९१६

सम्पादक
'प्रजाबंधु'
महोदय,

मैं प्रस्तुत पत्र यह मानकर लिख रहा हूँ कि भाई गोविन्दराव अप्पाजी पाटिलकी कम उम्रमें मृत्यु हो जानेसे मेरे मनमें जो बहुतसे विचार उत्पन्न हुए और हो रहे हैं, उनमें से कुछको आप पाठकवृन्दके सम्मुख रखनेकी अनुमति देंगे।

मैंने मृत व्यक्तिकी उम्रके आगेका विशेषण जान-बूझकर लगाया है। ५० वर्षसे नीची उम्र कम उम्र ही मानी जानी चाहिए; भाई गोविन्दराव ५० वर्षसे कम उम्रमें ही चले गये। यह बड़े दुःखकी बात है कि उत्तम नेताओंकी अकाल मृत्यु हो जानेसे

१. स्थानीय वकील और समाज-सेवी श्री गोविन्दराव अप्पाजी पाटिलके निधनपर अहमदाबादमें आयोजित।

२. देखिए अगला शीर्षक।

३. मूल शीर्षक "हम अल्पायुमें क्यों मर जाते हैं?" था।

हम उनकी आयुके परिपक्व भागका लाभ नहीं उठा पाते। मुझे ऐसा जान पड़ता है कि हम कुछ मिथ्याभिमानसे पीड़ित हैं। लगता है, नेताओंका थोड़ा-बहुत बीमार रहना हमने, और उन्होंने भी, एक गुण मान लिया है। इसी प्रकार यदि वे कम उम्रमें ही हमें छोड़कर चले जाते हैं, तो हम इसका उल्लेख एक बड़ी विशेषताके रूपमें करते हैं। मुझे लगता है कि नेता और अन्य लोग भी, किन्तु मुख्यतः नेता, बीमार होना या बीमार रहना पाप समझें, भले ही उनकी यह बीमारी लोक-सेवा करते हुए ही क्यों न आई हो। स्वर्गीय न्यायमूर्ति तैलंगसे[1] लेकर यदि गोविन्द राव तक नेताओंपर निगाह डालें तो हमें मालूम होगा कि इनमें से ज्यादातरकी बीमारी ऐसी थी जो अच्छी हो सकती थी। हम अपने स्वास्थ्यकी रक्षा कैसे करें यह जानना हम सबका कर्त्तव्य है; और नेताओंका तो और भी अधिक है।

मेरा अनुभव यह है कि हममें से बहुत-से लोग अपने बचपनमें ही अपनी मृत्युके बीज स्वयं ही बो लेते हैं और एक हदतक अज्ञान-वश और असंयत प्रेमके कारण हमारे माँ-बाप ही ऐसे बीज बोते हैं। हम बचपनमें विवाह हो जानेसे अथवा विवाह हुए बिना ही प्रायः स्थूल ब्रह्मचर्यका भी त्याग कर देते हैं। हमारे आहारके पदार्थ प्रायः स्वादकी दृष्टिसे चुने जाते हैं अथवा उद्देश्य केवल शरीरमें चर्बी बढ़ाना होता है। जिन्हें मानसिक शक्तिका उपयोग अधिक करना है और जिनका कामकाज बैठे रहनेका है उनके आहारके पदार्थोंमें और उनसे भिन्न लोगोंके आहारके पदार्थोंमें अन्तर होना चाहिए। किन्तु उनके आहारके पदार्थ इस दृष्टिसे कभी नहीं चुने जाते। मुझे विश्वास है कि मानसिक शक्तिका उपयोग करनेवाले लोगोंके लिए अहमदाबाद-जैसी जलवायुमें अधिक घी खाना अन्तमें स्वास्थ्यके लिए अवश्य हानिकर सिद्ध होगा। उन्हें दालोंका उपयोग बहुत कम करना चाहिए। जिन्हें शारीरिक श्रम करना है उन्हें दालोंका उपयोग अधिक करना चाहिए। उनका काम इसके बिना नहीं चल सकता। किन्तु जिन लोगोंको शारीरिक श्रम कम करना होता है उनके लिए दालोंका अधिक उपयोग करना विषवत् है। हमारे लगभग सभी विद्यार्थी कब्जकी शिकायत करते हैं, क्योंकि उनके आहारमें मसाले और दाल-जैसी चीजें बहुत होती हैं और उनका परिणाम तो यही होता है। फिर अंडीका तेल, एपसम सॉल्ट या फ्रूट सॉल्ट लेकर पेट खराब कर लेते हैं; और अन्तमें मृत्युके मुखमें चले जाते हैं। जो तत्त्व ताजे फलोंमें होते हैं वे हमें अपने सामान्य आहारमें से नहीं मिल सकते और यदि हम अपने सामान्य आहारके बजाय सप्ताहमें किसी एक दिन ताजे फलोंका नियमपूर्वक उपयोग करें तो कब्ज चला जायेगा और शरीरका रक्त शुद्ध हो जायेगा। मैं आहारमें एक साथ कोई परिवर्तन करनेपर जोर नहीं देता। मैं जानता हूँ कि इस बातको जन-समाज स्वीकार नहीं करेगा किन्तु अपने स्वास्थ्यमें सुधारके उद्देश्यसे लोग मसालोंका उपयोग सावधानीसे कर सकते हैं और ताजे फल खा सकते हैं। कोई भी यह नहीं कहेगा कि इसके लिए कोई बहुत बड़ी बात करनी पड़ती है। हमें कॉफी, चाय, कोको आदिकी आदत हो गई है, यह तो सचमुच अत्यन्त भयंकर है। मेरा खयाल है कि जिन्हें चाय पीनी ही हो वें यह

१. बम्बई उच्च न्यायालयके; भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके एक संस्थापक।

अवश्य ही खोजें कि चाय पीनेवाले देशोंमें लोग क्या करते हैं, वे किस प्रकार चाय तैयार करते हैं। किन्तु हमने ऐसा कुछ नहीं किया। मैं समझता हूँ कि जिस प्रकार हम चायका समूचा विप पी जाते हैं उस प्रकार किसी अन्य देशके लोग नहीं पीते। चीनी लोग चायकी पत्तियोंको आधा मिनटसे अधिक देर तक उबलते पानीमें नहीं रहने देते। वे पानीमें पत्तियाँ डालते ही उन्हें छानकर तुरन्त बाहर निकाल लेते हैं। चायके इस पानीके रंगसे ही यह प्रमाण मिलता है कि उसमें टेनीन बहुत कम आ पाया है। इस पानीमें घासके पत्तोंसे ज्यादा पीलापन नहीं आना चाहिए। उसका लाल रंग बिलकुल न हो पाना चाहिए। करोड़ों चीनी ऐसी ही चाय पीते हैं। वे उसमें दूध कभी नहीं डालते। चीनी लोग तो यह तक नहीं जानते कि गाय दुहना किसे कहते हैं। वे अपनी चायमें शायद ही कभी दूध डालते हों। यदि निर्दोप चाय बन सकती है तो ऐसे ही जैसे कि ऊपर बताया है। बहुत ही अनुभवी और प्रसिद्ध डॉक्टर कैंटलीका यही कहना है। वे यह मानते हैं कि चीनी लोग चाय इसलिए पीते हैं कि वह पानी पीनेका सरलतम उपाय है। जबतक पानी उबल न जाये तबतक उसमें चायका रंग नहीं आ सकता। इसलिए चीनी जहाँ भी जाते हैं वहाँ सादा पानी पीनेके बजाय चायका ही उपयोग करते हैं, अर्थात् वह परीक्षित पानी ही पीते हैं।

हम जिस प्रकार आहारके सम्बन्धमें लापरवाह हैं उसी प्रकार व्यायामके सम्बन्धमें भी। हम रेंगते-रेंगते मनमौजी चालसे एक-दो मीलका चक्कर लगा आयें, यह व्यायाम नहीं है। बिलियर्डकी गेंदको सौ बार डंडेसे मारनेमें भी व्यायाम नहीं होता। जिस कमरेकी हवा गंदी है उसमें व्यायाम करनेका परिणाम भी हानिकर ही होगा। ऐसी विपम स्थितिमें जब व्यायाम नहीं किया जा सकता, हमारे लिए भ्रमण सर्वोत्तम व्यायाम है; किन्तु वह व्यायाम तभी कहा जा सकता है जब हम एक साथ छः मील सुबह घूमें और उतना ही शामको घूमें। भ्रमणकी क्रिया तेजीसे — चार मील प्रति घंटेकी चालसे की जानी चाहिए। थोरोने जब अपनी सर्वोत्तम पुस्तक लिखी तब वह प्रतिदिन आठ मील भ्रमण करता था। टॉल्स्टॉयने प्रमाणित किया है कि जिन दिनों उन्होंने सर्वोत्तम पुस्तकें लिखीं उन दिनों भी वे पर्याप्त व्यायाम करनेसे पूर्व लिखनेके लिए नहीं बैठते थे। वे नित्य खेतमें काम किया करते थे। जो व्यक्ति यह कहता है कि उसे मुवक्किलोंके कामसे या जनताके कामसे एक घड़ी भी फुरसत नहीं मिलती और वह इसलिए व्यायाम नहीं कर पाता, उसके इस कथनमें सूक्ष्म गर्व है। वह यह सोचता है कि यदि वह काम न करे तो जनता अभीकी-अभी असहाय हो जाये। इसी खयालकी झलक इसमें मिलती है। भारतके पितामह दादाभाईने[1] स्वास्थ्यके सामान्य नियमोंका पालन किया है, उनके व्यायाम आदि कार्योंमें कभी विघ्न नहीं पड़ा। इसीका फल है कि हम उन्हें आज जीवित देख रहे हैं। यदि प्राचीन ऋपियोंकी भाँति हमारे ये आधुनिक ऋषि भी शतायु हों तो इसमें आश्चर्यकी कोई बात न होगी। हम 'गीता' के एक सिद्धान्तको भंग कर रहे हैं, इसलिए उसके भयंकर परिणाम भोग रहे हैं। 'गीता' में कहा गया है

१. दादाभाई नौरोजी।

कि जो व्यक्ति यज्ञ किये विना खाता है, वह चोर[1] है; और यज्ञका सच्चा अर्थ तो खेतमें किया हुआ शारीरिक श्रम है। हम अपना भोजन पचानेके लिए खेतमें नित्य चार घंटे कुदाली लेकर खोदें और अन्य नियमोंका पालन करें तो अकाल मृत्युकी संख्या कम हो जायेगी।

हम जब बीमार होनेमें लज्जा अनुभव करेंगे तब अवश्य ही स्वास्थ्य लाभ करेंगे और मेरा विनीत अभिप्राय यह है कि जो पुरुष या स्त्री सार्वजनिक काम करते हुए अपने स्वास्थ्य ठीक रखनेके नियमोंकी खोज करेंगे वे देशकी बहुत बड़ी सेवा करेंगे।

आपका
मोहनदास करमचन्द गांधी

[गुजरातीसे]
प्रजाबन्धु, २३–४–१९१६

१९७. पत्र : गंगाधरराव देशपाण्डेको[2]

[अप्रैल २९, १९१६ से पूर्व][3]

बेलगाँव जाने और सम्मेलनमें भाग लेनेसे मुझे मौतके सिवा और कोई रोक नहीं सकता।[4]

[अंग्रेजीसे]
माझी जीवन कथा

१९८. भाषण : बेलगाँवमें

अप्रैल ३०, १९१६

खोटीबीस बाड़ा, रविवार पेठ, बेलगाँवमें रात्रिके समय एक सभा हुई जिसमें लगभग एक हजार आदमी श्री गांधीका भाषण सुननेके लिए आये। विषय था 'दलित वर्ग'। अधिकांश श्रोतागण लिंगायत और अछूत थे। आर० एस० शिवमूर्ति स्वामी कनाबारगी अध्यक्ष थे। . . .

श्री गांधी खड़े हुए और उन्होंने कहा चूँकि मेरी तबीयत अच्छी नहीं है, मैं केवल एक मिनटमें अपनी बात कहूँगा। उन्होंने लोगोंकी प्रान्तीय सम्मेलनको

१. भगवद्गीता, ३–१२।

२. गंगाधरराव बालकृष्ण देशपाण्डे (१८७०–   ); कर्नाटकके प्रसिद्ध राजनीतिक कार्यकर्त्ता जो 'कर्नाटक केसरी' के नामसे प्रसिद्ध हैं।

३. गांधीजी बम्बई प्रान्तीय सम्मेलनमें भाग लेनेके लिए इसी तारीखको बेलगाँव पहुँचे थे।

४. गांधीजीने सम्मेलनमें उपस्थित होना स्वीकार कर लिया था; किन्तु बादमें अफवाह उड़ी कि वे कदाचित् वहाँ न जायें। गांधीजी ने यही प्रश्न किये जानेपर उक्त जवाब दिया था।

बेलगाँवमें बुलानेसे सम्बन्धित आपत्तियोंकी निन्दा की और बताया कि सम्मेलनका मुख्य उद्देश्य दो राजनीतिक दलोंको पास-पास लाना है।[1] भारतको स्वराज्य दिया ही जाना चाहिए और सभी वर्गोंको सम्मिलित मोर्चा बनाकर यह माँग पेश करनी चाहिए। यदि स्वराज्य मिलता है, तो उसमें किसी एक वर्गकी प्रधानता नहीं होगी। यदि हुई तो वह स्वराज्य नहीं कहला सकेगा। अगर कोई एक दल या वर्ग दूसरोंके सिरपर बैठना चाहता है, तो मैं स्वयं इसका विरोध करूँगा। मेरे लेखे उच्च और निम्न वर्गमें कोई अन्तर नहीं है। कोई आदमी भंगी या नाई हो जानेसे घृणाका पात्र नहीं हो सकता। और न कोई ब्राह्मण होनेसे आदरका पात्र बन सकता है। उन्होंने कहा कि मेरा धर्म तो मुझे समाज या सम्प्रदायका भेद माने बिना सभी व्यक्तियोंको समान समझनेकी शिक्षा देता है। जबतक हम लोगोंमें इस तरहके अन्तर बने हुए हैं, स्वराज्य नहीं मिल सकता। उन्होंने वचन दिया कि इस तरहके तमाम भेदोंको दूर करनेका वे भरसक प्रयत्न करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, पृष्ठ ३३०

१९९. भाषण : बम्बई प्रान्तीय सम्मेलन, बेलगाँवमें[2]

मई १, १९१६

श्री गांधीने हिन्दुस्तानीमें निम्न भाषण दिया :

मैं इस अर्थमें बाहरी आदमी हूँ कि मैं नेशनलिस्ट पार्टी या अन्य किसी दलका सदस्य नहीं हूँ। मेरे मनमें ऐसी कोई इच्छा नहीं है कि मैं भाषण सुनूँ या भाषण दूँ; किन्तु चूँकि मैं राष्ट्रकी सेवा करना चाहता हूँ, इसीलिए यह अनुभव करता हूँ कि उन समस्त संस्थाओंका, जिन्हें मैं देख सकूँ, अध्ययन करना मेरा कर्त्तव्य है। इसी कारण मैं बेलगाँवके इस सम्मेलनमें आया हूँ। चूँकि मैं इन दोनों बड़े दलोंमें मेल-मिलापके युगका आरम्भ देखना चाहता था, मैं यहाँ आनेके लिए उत्सुक था। मैं विश्वास करता हूँ कि बेलगाँवमें इन दोनों दलोंमें मेल-मिलाप हो जायेगा। मेरे लिए यह बहुत ही प्रसन्नताकी बात है कि इस सम्मेलनमें ऐक्यकी नींव डाली जा रही है।

१. देखिए अगला शीर्षक।

२. यह सम्मेलन २९ अप्रैलसे १ मई तक हुआ था और इसमें बम्बई, मध्यप्रान्त और बरारके प्रमुख नेशनलिस्ट आये थे। यह १६ जनवरी १९१६ की पूनाकी उस बैठकके बाद हुआ था जिसमें दो वर्ष पुरानी उन राजनैतिक संस्थाओंके, जो १९१५ में कांग्रेस संविधानमें संशोधन होनेके बाद कांग्रेससे स्वतः सम्बद्ध हो जाती थीं, प्रतिनिधियोंकी संख्याके परिसीमन सम्बन्धी प्रश्नका समाधान स्थगित कर दिया गया था।

मैं श्री तिलक द्वारा प्रस्तुत प्रस्तावका[1] हार्दिक समर्थन करता हूँ। मैं विश्वास करता हूँ कि मुझसे स्वीकृत रिपोर्टके सम्बन्धमें रखे गये प्रस्तावका शब्दशः समर्थन करनेकी आशा नहीं की जायेगी। इतना ही काफी होना चाहिए कि मैं प्रस्तावकी मुख्य भावनासे सहमत हूँ। यदि इस प्रस्तावको भाषा देना मेरे हाथमें होता तो मैं उसके कुछ वाक्यांश सम्भवतः निकाल देता। श्री तिलकके भाषणमें वे सभी बातें हैं जो वांछित हैं और यदि वे प्रस्तावकी भावना और अपने कथनके अनुसार काम करेंगे, जिसकी मुझे पूरी आशा है, और समस्त नेशनलिस्ट दल भी उसी प्रकार काम करेगा तो मुझे निश्चय है कि भावी ऐक्य मातृभूमिके लिए एक वरदान सिद्ध होगा। इसी कारण मैं श्री बैप्टिस्टासे, जिनकी भावना बहुत-कुछ वकीलों-जैसी जान पड़ती है, असहमत हूँ। यदि आप इस प्रश्नपर वकीलोंकी भावनासे विचार करेंगे तो आप सदा दोष ही देखते रहेंगे। आवश्यकता इस बातकी है कि राष्ट्रीय प्रश्नपर सामान्य जनोंकी दृष्टिसे विचार किया जाये। आप तब उन लोगोंके, जो अभी कुछ पहले तक आपके विरोधी थे, भूलों और दोषोंकी उपेक्षा करेंगे; बल्कि सदा यही देखेंगे कि दोनों किन बातोंपर सहमत हैं और किन बातोंमें उनके विचार मिलते-जुलते हैं। दोनों दल यदि पूर्ण सचाई और निःस्वार्थ भावसे सदा देश और उसके कार्यका ही खयाल करते हुए, दलका या व्यक्तिगत लाभका विचार छोड़कर, कांग्रेसमें वापस आ जायें तो ईश्वर सदा आपके साथ होगा और ईश्वर साथ होगा तो समस्त संसारका विरोध होनेपर भी राष्ट्र प्रगति कर सकेगा। . . .

[अंग्रेजीसे]

बंगाली, ३–५–१९१६

१. तिलकका प्रस्ताव, जो सर्वसम्मतिसे स्वीकृत हो गया, इस प्रकार था:

यह सम्मेलन सर्वश्री वेलवी, बैप्टिस्टा और तिलककी रिपोर्टोंको स्वीकार करता है और चूँकि वर्तमान परिस्थितियोंमें हमारी मातृभूमिके हितकी दृष्टिसे एकता वांछनीय है इसलिए यह सम्मेलन कांग्रेसके संविधानको पिछले अधिवेशनमें किये गये संशोधनके साथ, यद्यपि संशोधन बहुत ही असन्तोषजनक है, स्वीकार करता है और इस सम्बन्धमें कांग्रेसकी ओरसे आगे काम करनेके लिए निम्न सज्जनोंकी एक समिति नियुक्त करता है: एस० खापर्डे, जे० बैप्टिस्टा, डी० वी० वेलवी, बा० गं० तिलक और नृ० चिं० केलकर (मन्त्री)। देखिए बम्बई सरकारकी **सोर्स मैटीरियल फॉर ए हिस्ट्री ऑफ दी फ्रीडम मूवमेंट इन इंडिया**, खण्ड २, पृष्ठ २४०–१।

२००. पत्र : जैन बोर्डिंग हाउस, भावनगरके छात्रोंको[1]

अहमदाबाद
वैशाख सुदी ११ [मई १३, १९१६][2]

मैं चायकी जगह काममें लानेके लिए गेहूँका चूर्ण भेजता हूँ। यह कैसे बनाया जाता है, इसकी विधि मेरी स्वास्थ्य-सम्बन्धी पुस्तकमें[3] दी गई है। पुस्तक अभी-अभी सस्तुं-साहित्य-वर्धक कार्यालयने[4] प्रकाशित की है। मेरा विश्वास है कि आप उसे पढ़ लेंगे, इसलिए विधि यहाँ नहीं लिखता।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें पोस्ट कार्डपर लिखित मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५७०३) से।

सौजन्य : प्रमोद वीरचन्द शाह

२०१. पत्र : कोटवालको

अहमदाबाद
वैशाख वदी ४ [मई २१, १९१६][5]

भाईश्री कोटवाल,

आपका एक भी पत्र अनुत्तरित नहीं रहा है। मैंने यह नियम नहीं रखा कि आश्रमकी घटनाओंके सम्बन्धमें स्वतः लिखूँ, इसलिए फकीरीके विषयमें लिखनेका खयाल नहीं आया। फकीरीकी मृत्यु गौरवशाली थी।

अन्ना फिलहाल तो हाथसे चला ही गया है। उसने सूचित किया है कि वह एक-दो वर्ष तो नहीं आ सकता पीछे जो भी हो। आश्रमके नियमोंका पालन करनेमें कठिनाई होनेसे मगनभाई जा रहे हैं। मामा[6] यहीं हैं।

आपको नौकरी मिल गई। इससे जितना प्रसन्न हूँ उतना ही अप्रसन्न भी। आप बड़े लोभमें पड़ गये हैं। मैं चाहता हूँ कि आप इससे छुटकारा पा जायें। इसका एक ही रास्ता है। आप नौकरीमें केवल परमार्थका ध्यान रखें, एक भी सुख न भोगें

१. वीरचन्द शाहने लिखकर पूछा था कि चायकी जगह क्या लिया जा सकता है। इसीके उत्तरमें।

२. डाकखानेकी मुहरसे।

३. आरोग्यके सम्बन्धमें सामान्य ज्ञान, देखिए, खण्ड ११।

४. अहमदाबादमें भिक्षु अखण्डानन्द द्वारा स्थापित प्रकाशन-संस्था।

५. अन्ना और मगनभाई पटेल, जिनका पत्रमें उल्लेख है, इस समय आश्रमसे चले गये थे।

६. मामासाहब फडके; गंगानाथ विद्यालय, बड़ौदाके एक अध्यापक, जो अन्ना (हरिहर शर्मा)के साथ ही गांधीजीके पास आये थे।

और जितना हो सके शुद्ध परोपकार करें। इससे हृदयमें कुछ शान्ति रहेगी। भरतके जीवनपर बारम्बार विचार करें।

यह निश्चित समझें कि एक भी घड़ी ऐसी नहीं जब मुझे आपका खयाल न आता हो।

मोहनदासके वन्देमातरम्

भाई श्यामजी सहाय अपनी पत्नी सहित आ सकते हैं। दूसरे विद्यार्थियोंके आनेसे भी कोई हानि नहीं। इन्दौर तो जब जा सकूँ तब ठीक है।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (जी० एन० ३६०९) की फोटो-नकलसे।

२०२. पत्र: वीरचन्द शाहको

अहमदाबाद
वैशाख बदी ६ [मई २५, १९१६]

प्रिय श्री वीरचन्द पानाचन्द शाह

आपने प्रश्न[1] ठीक ही पूछे हैं।

मेरे हृदयमें क्षोभ [कभी-कभी] होता होगा।

मेरे मनमें कभी-कभी यह क्षुद्र विचार आता है कि यदि ऐसा न होता, ऐसा होता तो ठीक होता। पश्चात्ताप बहुत बार होता है।

बुद्धिमें पक्षपात भी आ जाता होगा, किन्तु ऐसा इतना कम होता होगा कि उसका स्मरण मुझे नहीं आता।

मैं जैसा सोचता हूँ उसके अनुसार समस्त कार्य नहीं कर पाता।

मैं अपनी अपूर्णताएँ प्रतिक्षण देखता हूँ और उन्हें दूर करनेका प्रयत्न प्रतिक्षण करता हूँ।

विशेष पूछना हो तो पूछें।

मोहनदास गांधीके वन्देमातरम्

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५७०२) की फोटो-नकलसे।
सौजन्य: प्रमोद वीरचन्द शाह

१. श्री शाहने अपने २० मई, १९१६ के पत्रमें ये प्रश्न पूछे थे:
(१) क्या आपके हृदयमें कभी क्षोभ होता है?
(२) क्या आपको कभी ऐसा खयाल होता है कि यदि ऐसा न होता, ऐसा होता तो ठीक होता? क्या आपको कभी पश्चात्ताप होता है?
(३) क्या आपमें कभी पक्षपात-बुद्धि आती है?
(४) आप जैसा सोचते हैं, क्या उसके अनुसार कार्य कर सकते हैं (दूसरोंपर निर्भर कार्य नहीं, किन्तु अपने मनमें निश्चय किये हुए कार्य और आपसे सम्बन्धित कार्य)?
(५) क्या आपको अपने भीतर किसी खास तरहकी अपूर्णता दिखाई देती है? यदि दिखाई देती है तो क्या आप उसे दूर करनेका प्रयत्न करते हैं?

२०३. भाषण: अहमदाबादके जाति-सम्मेलनमें[1]

जून ४, १९१६

सम्मेलन और भाषण इस सबसे मैं थक गया हूँ और अपनी आवाज सुनते-सुनते भी ऊब उठा हूँ। जब भगवान् बुद्धने संसारका उद्धार करनेका विचार किया तब उन्होंने सम्मेलन बुलाकर सर्वसम्मतिसे प्रस्ताव पास नहीं करवाया था और न ईसा मसीहने ही ऐसा किया था। किन्तु हम तो इतने बड़े नहीं हैं, अतः मुझे लगता है कि उस कार्यको करनेके लिए जितना मनोबल चाहिए उतना मनोबल हममें न होनेके कारण हमें सामान्य सम्मेलन बुलाने पड़ते हैं। चूँकि समस्त देशमें ऐसा ही किया जाता है; इसलिए मैं यह नहीं कहता कि केवल आप ही ने ऐसा किया है।

इस सम्मेलनका आरम्भ और कामका ढंग कुछ अनोखा है। किन्तु मेरा विश्वास है कि वह उपयोगी है। यहाँ जो काम हो रहा है वह लम्बे-लम्बे भाषणोंसे नहीं हो रहा है बल्कि मुझे यह देखकर प्रसन्नता होती है कि यहाँके लोग प्रसंगानुकूल और विषयपर कायम रहकर बोलते हैं। हमने संक्षेपमें और प्रसंगानुकूल बोलनेकी आदत गुजराती व्यापारियोंके वातावरणमें से सीखी होगी। हमारी जातियोंमें जो परिवर्तन इस समय हो रहे हैं उनसे हमने यह समझा होगा कि जातियाँ कर्म और अधिकारके बलपर उन्नत या अवनत होती हैं। चाँपानेरी बनिए कभी वैश्य थे। पीछे वे धन्धेसे घांची (तेली) हो गये। अब भारतके जाति-संगठनमें विशेष शिक्षा लेकर और उन्नति करके उनका फिर वैश्य हो जाना और उससे भी अधिक ऊँचा उठ जाना अथवा घांचीसे भी नीचा हो जाना अशक्य नहीं है। अन्त्यजको धिक्कारनेका हमारा पाप समस्त हिन्दू-जातिको गिराता है। मेरे साथ दूदाभाई ढेड़ रहते हैं और जो यहाँ भी आये हैं, उन्होंने एक बार एक बहनसे पानी माँगा। उस बहनने पूछा, तुम्हारी जाति क्या है? तब दूदाभाईने उत्तर दिया: 'मैं तो ढेड़ हूँ। उस बहनने कहा: तुम ढेड़ नहीं हो सकते। तुम तो अच्छे कपड़े पहने हो, साफ-सुथरे हो और ढेड़-जैसे नहीं दिखते। लो पानी पियो।' यह कहकर उसने पानी पिला दिया। किन्तु दूदाभाईने पानी पीकर उस बहनको फिर कहा: मैं तो ढेड़ ही हूँ और तुमको धोखा नहीं देना चाहता। इसपर उस बहनने उनपर गालियोंकी झड़ी लगा दी। दूदाभाईने उन गालियोंको सह लिया। इस तरह उन्होंने अपने शौर्य और मनोबलका परिचय दिया। इसी तरह हमारे लाखों हिन्दू भाई ढेड़ लोगोंका तिरस्कार करते हैं और जबतक इस स्थितिमें सुधार नहीं होता तबतक दक्षिण आफ्रिकामें और अन्यत्र जो गोरे हमारा तिरस्कार करते हैं हम उनके सम्मुख यह सिद्ध न कर सकेंगे कि हम इस व्यवहारके सर्वथा अयोग्य हैं। आज मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि मेरे इस विचारमें कोई भूल हो और उसे आपमें से कोई भी भाई मुझे बताये तो मैं उस भूलको नम्रता-पूर्वक

१. जाति-संघोंके सम्मेलन अहमदाबादमें।

अवश्य सुधारूँगा। किन्तु इसके साथ ही मैं यह प्रतिज्ञा भी करता हूँ कि अन्त्यजोंके सम्वन्धमें आपकी जो अनुचित मान्यता है उसको भी मैं आपसे छुड़वाकर ही दम लूँगा।

[गुजरातीसे]

गुजराती, ११-६-१९१६

२०४. भाषण : जाति-प्रथाके सम्बन्धमें[1]

जून ५, १९१६

मैं भारतमें अपना कर्त्तव्य सीखनेके लिए आया हूँ। उस कर्त्तव्यको सीखनेमें मुझे कितना समय लगेगा, यह मैं अभी नहीं कह सकता। अभी मैं आपके सम्मुख वोलनेके लिए खड़ा हुआ हूँ, इसमें भी मेरा हेतु कुछ सीखना ही है। मैं इस विषयकी तैयारी नहीं कर सका हूँ; फिर भी मुझे अपने विचार प्रकट करनेका यह अवसर मिला है, इसके लिए मैं आपका आभारी हूँ। अखबारवाले मेरे भाषण छापते हैं; किन्तु कई बार उसे समझनेमें भूल होनेसे मेरा आशय उलटे रूपमें सामने आ जाता है। और मुझ जैसे स्वमताग्रहीको यह वात ठीक नहीं लगती। इसलिए पत्रकारोंसे मेरा निवेदन है कि वे मेरे भाषणोंका वृत्तान्त छापनेसे पूर्व मुझे दिखा लें। यदि वे ऐसा करेंगे तो वहुत ठीक होगा। इस सम्मेलनकी कलकी कार्रवाईसे मैं बहुत प्रसन्न हुआ हूँ, क्योंकि उसमें भाषण संक्षिप्त और उपयोगी हुए हैं। मैं तो यह मानता हूँ कि हमारे लिए अब सम्मेलन करनेका समय निकल गया और अव कुछ काम करके दिखानेका और मौन धारण करनेका समय आ गया है, क्योंकि कार्य कर दिखानेके वाद जो-कुछ कहा जायेगा उसका असर लोगोंपर दूसरा ही होगा। बुद्ध, ईसा, मुहम्मद आदि अवतारी पुरुषों और मार्टिन लूथरने भी ऐसा ही किया था। जाति-प्रथाके सम्वन्धमें मैंने वहुत विचार किया है[2] और मुझे ऐसा जान पड़ा है कि हिन्दू समाजका काम जातियोंके विना नहीं चल सकेगा। वह तो जाति-वन्धनसे ही टिका हुआ है। समस्त संसारकी रचना ही जाति-व्यवस्था अथवा वर्ण-व्यवस्थापर हुई है। हमारी वर्ण-व्यवस्था संयमके उद्देश्यसे अर्थात् त्याग-वृत्तिसे स्थापित की गई है। पश्चिमकी वर्ण-व्यवस्था और हमारी वर्ण-व्यवस्थामें भेद है। फिर भी सर्वत्र वर्ण-व्यवस्था तो है ही। जवतक मनुष्यमें आसुरी-वृत्ति और दैवी-वृत्ति वर्तमान है तवतक जातिभेद रहेगा। इस रचनाका उन्मूलन करके एक जाति वनानेका प्रयत्न व्यर्थ है। जातियाँ भी जन्मती और मरती हैं। श्री लायलने अपनी पुस्तकमें लिखा है कि हिन्दुओंमें जातियाँ जनमी और मरी हैं। इतना ही नहीं, वल्कि वाहरसे भी अन्य लोग हिन्दुओंमें आये हैं। फिर भी हिन्दुओंने उन्हें ईसाइयोंकी तरह हिन्दू वनाया हो, ऐसा देखनेमें नहीं आता। अन्य धर्मों और अन्य सम्प्रदायोंके लोग दीर्घकालमें हिन्दू वने हैं। किसी जातिका ऊँचा या नीचा होना उसके कार्यपर

१. सम्मेलनके दूसरे दिन, देखिए पिछला शीर्षक।

२. देखिए "हिन्दुओंमें जाति-प्रथा", पृष्ठ ३०३-५।

आधारित रहा है, धर्मग्रन्थोंपर नहीं। यह न समझ लेना चाहिए कि जाति-व्यवस्था, खान-पानकी एकता और परस्पर विवाह-सम्बन्धपर आधारित रही है। खान-पानकी एकता और परस्पर विवाह-सम्बन्धपर मैत्री निर्भर होती तो जर्मन और अंग्रेज आपसमें न लड़ते। काठियावाड़के राजपूतोंमें खान-पान और परस्पर विवाह-सम्बन्ध हैं; किन्तु फिर भी उनमें पारस्परिक लड़ाइयोंका अन्त नहीं। इसके बावजूद जाति-बन्धनमें एक अच्छाई है। पुत्री और पिता स्वभावतः एक ही समुदायमें रहना चाहते हैं। इसीसे जाति अथवा समुदायका स्वभावतः निर्माण होता है; किन्तु जातियोंमें जो खराबी आ गई है वह समय रहते दूर की जानी चाहिए। अब कन्याओं, विधवाओं और विधुरों आदिसे सम्बन्धित लौकिक प्रश्नोंपर चर्चा करनेकी आवश्यकता है। इसके लिए विचार-शक्तिकी आवश्यकता तो है, किन्तु उसका सम्बन्ध अक्षर-ज्ञानसे नहीं है। हमारे देश में छः करोड़ अस्पृश्य या अन्त्यज हैं। इनकी दशा सुधारनेकी आवश्यकता है; क्योंकि हिन्दू-जातिके माथेपर यह एक भारी कलंक है जिसके लिए भारतको बहुत बड़ा प्रायश्चित्त करना पड़ेगा।

मेरे आफ्रिकामें किये गये संघर्षमें गोरे लोग मुझसे कहते थे, "जब तुम अपने अस्पृश्योंके प्रति दुर्व्यवहार करते हो तब तुम्हें हमसे सद्व्यवहारकी माँग करनेका क्या अधिकार है?" इस दलित-वर्गका उद्धार अनिवार्य रूपसे आवश्यक है। इस सम्बन्धमें श्री गोखले और सर शंकरन् नायरका[1] भी यही मन्तव्य था। पंजाबके लोगोंको जब स्थानीय ढेड़ोंकी जरूरत पड़ती है तब वे उनके साथ अच्छा व्यवहार करते हैं, किन्तु जब काम निकल जाता है तब वे फिर पूर्ववत् व्यवहार आरम्भ कर देते हैं। उनका यह आचरण धर्मकी भावनाके विरुद्ध है। उनके साथ सदा अच्छा व्यवहार करना चाहिए और हम जिस कार्यको धर्म-भावसे करेंगे उस कार्यमें हमें अवश्य सफलता मिलेगी।

[गुजरातीसे]

प्रजाबन्धु, ११-६-१९१६

१. सर चेट्टियार शंकरन् नायर (१८५७-१९३४); भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके अध्यक्ष, १८९७; मद्रास उच्च न्यायालयके न्यायाधीश, वाइसरॉयकी कार्यकारिणीके सदस्य नियुक्त, १९१५; (पंजाबमें मार्शल-लॉ जारी रखनेके प्रश्नपर त्यागपत्र, १९१९); अपनी पुस्तक **गांधी ऐंड अनार्की** में गांधीपर आक्षेप; इस पुस्तकके सम्बन्धमें पंजाबके तत्कालीन लेफ्टिनेंट गवर्नर ओडायरने इनपर मुकदमा चलाया; और इन्हें ३ लाख रुपया हर्जाना देना पड़ा।

२०५. पत्र : नरहर शम्भूराव भावेको[1]

[अहमदाबाद
जून ७, १९१६ के बाद][2]

आपके पुत्र विनोबा[3] मेरे पास हैं। आपके पुत्रने इतनी अल्प आयुमें इतनी आत्मिक उच्चता और वैराग्य-भावना प्राप्त कर ली है जितनी मैंने धैर्यपूर्वक इतना परिश्रम करके इतने वर्षोंमें प्राप्त की है।

[मो० क० गांधी]

[अंग्रेजीसे]

लाइफ ऑफ विनोबा, पृष्ठ ८

२०६. पत्र : ए० एच० वेस्टको

अहमदाबाद
जून १५ [१९१६][4]

प्रिय वेस्ट,

अब हम यह मानकर ही चलें कि हिसाबके बारेमें हममें मतभेद है। मैं तो इतना ही चाहता हूँ कि पिछले प्रकाशित हिसाबकी तारीखके बादका सत्याग्रहका खर्च और बैंकमें जमा रकम मुझे लिख भेजो। निश्चय ही यह सब तुम्हारी बहियोंमें मौजूद है। यदि तुम यह कहो कि हमारे बही-खातोंमें सत्याग्रहका हिसाब नहीं है तो मुझे परेशानी होगी। मगर मैं जानता हूँ कि ऐसा नहीं है। ये रकमें मुझे लिख भेजो।

यह हुई काम-काजकी बात। बातचीतकी शैलीमें लिखा तुम्हारा पत्र मिल गया है। मैंने तुम्हें जिस रूपमें जाना है, तुम्हारा वही रूप उसमें ओतप्रोत है। इसमें मुझे कभी सन्देह नहीं रहा है कि तुम अपनी स्पष्टवादितासे अधिकारियोंमें प्रवेश पा सकोगे। प्रतिरोधके तुम्हारे नये ढंगसे उन्हें पहले-पहल शायद धक्का लगता है; किन्तु बादमें वे प्रसन्न ही होते हैं। लोग 'जी हजूरों' से ऊब भी जा सकते हैं। लोग उस कामको पसन्द करें या न करें, वे उसे चाहें या न चाहें; तुम उसे जारी रखो। पसन्द किये जानेकी राह देखनेकी जरूरत नहीं है। तुम जो-जो पत्र भेजना चाहो, अवश्य भेज देना। मैं उन सबको

१. आचार्य विनोबाके पिता, जो उस समय बड़ौदामें थे।

२. विनोबा गांधीजीसे कोचरब आश्रममें जून ७, १९१६ को मिले थे।

३. विनोबा भावे (१८९५-) भूदान आन्दोलनके प्रणेता, सर्वोदयी नेता और सन्त।

४. चूँकि पत्रमें सत्याग्रहके हिसाबका उल्लेख है, इसलिए यह १९१५ या १९१६ का लिखा हो सकता है। १९१५ में १५ जूनको गांधीजी अहमदाबादमें नहीं थे।

पढ़नेका वचन देता हूँ। यह मत सोचना कि मैंने दक्षिण आफ्रिकाको अपने दिमागसे निकाल दिया है। ऐसा कैसे हो सकता है? मैं दक्षिण आफ्रिकाका, अर्थात् वहाँ बनाये गये मैत्री सम्बन्धोंका, बहुत ऋणी हूँ। मुझे जब कभी उदासी घेरती है, वहाँ काम करनेवाले मित्रोंको याद करके बड़ी तसल्ली होती है। मैं समान रूपसे तुम्हारी सफलताओं और असफलताओं दोनोंके बारेमें जाननेके लिए उत्सुक हूँ।

क्या तुम्हारा छोटा-सा स्कूल चल रहा है? ग्रेनी[1] कैसी हैं? क्या वे अभीतक पहलेकी तरह ही चुस्त हैं? उनका खयाल आने और उनके कामके ढंगकी बात सोचने-भरसे स्फूर्ति मिलती है। मैं अभी प्रार्थनाके समय आश्रमके सदस्योंको 'पिल्ग्रिम्स प्रोग्रेस' पढ़कर सुना रहा हूँ। मुझे अक्सर श्रीमती वेस्टके मधुर स्वरका खयाल आता है, और मैं चाहता हूँ कि वे हमें 'व्हेन आई सर्वे द वन्डरस क्रॉस'[2] गीत गा कर सुनायें! हम जब-कभी अपने प्रिय भजन गाते हैं तब मेरे सम्मुख समस्त फीनिक्स आश्रमका चित्र आ जाता है।

तुम सबको स्नेह,

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (सी० डब्ल्यू० ४४१९) की फोटो-नकलसे।
सौजन्य : ए० एच० वेस्ट।

२०७. भाषण : समाचारपत्र-कानूनके विरोधमें[3]

जून २४, १९१६

शनिवार २४ जून १९१६ को इंडियन प्रेस असोसिएशनके तत्त्वावधानमें एम्पायर थियेटरमें समाचारपत्रोंकी स्वतन्त्रताको कायम रखने और १९१० के समाचारपत्र-कानूनका[4] विरोध करनेके लिए बम्बईके नागरिकोंकी एक सार्वजनिक सभा हुई। इसकी अध्यक्षता 'बॉम्बे क्रॉनिकल' के सम्पादक श्री बी० जी० हॉर्निमैनने की।

१. ए० एच० वेस्टकी सास, जिन्हें फीनिक्समें सब लोग ग्रेनी (दादी) कहते थे और वस्तुतः वैसा ही मानते भी थे। देखिए **दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रहका इतिहास**, अध्याय २३।

२. एक ईसाई गीतकी प्रथम पंक्ति; पूरा गीत आश्रम भजनावलीमें संगृहीत है।

३. इसका एक संक्षिप्त विवरण २९-६-१९१६ के **बॉम्बे क्रॉनिकल** में प्रकाशित हुआ था।

४. विधान-संहितामें १९०८ का समाचारपत्र-कानून १९१० में सम्मिलित किया गया था। इसके द्वारा सरकार नये छापेखानों और अखबारोंसे २,००० रुपये तककी और पुराने छापेखानों और अखबारोंसे ५,००० रुपये तककी जमानतें माँग सकती थी। १९१४ में प्रथम महायुद्ध आरम्भ हुआ तो इस कानूनका दुरुपयोग किया गया और कलकत्ता उच्च न्यायालयके प्रधान न्यायमूर्तिने इसकी निन्दा की।

सभामें उपस्थिति बहुत थी और श्रोताओंमें हिन्दू, दक्षिणी और गुजराती तथा स्त्रियोंकी संख्या भी खासी थी। इनमें प्रमुख माननीय श्री चिमनलाल सीतलवाडकी पत्नी थीं और उनके साथ उनकी पुत्रियाँ और पुत्र-वधुएँ भी आई थीं।

सभामें सर्वश्री गांधी, हॉर्निमैन और जमनादास डी० धरमसीका स्वागत तालियोंकी गड़गड़ाहटसे किया गया। ऊपरकी गैलरीमें बैठे एक श्रोताने अलगसे तालियाँ बजाकर श्री गांधीके स्वागतका आग्रह किया।

श्री मो० क० गांधीने अपना भाषण गुजरातीमें देते हुए कहा कि अपनी मातृभूमिके प्रति निष्ठा प्रकट करनेका सच्चा तरीका देशकी भाषामें बोलना ही है।

श्री गांधीने कहा:

अध्यक्ष महोदय, प्यारी वहिनो और भाइयो,

मैं देखता हूँ कि इस सभामें कई लोग गुजरातीमें मेरे भाषण शुरू करनेपर हँस पड़े हैं। (हँसी)। आप जानते ही हैं कि हम स्वराज्य लेना चाहते हैं, और मैं सोचता हूँ कि स्वराज्य मिलनेपर हमें अपना सब काम-काज गुजराती भाषामें ही करना चाहिए। (हँसी)। आशा है, इस सम्वन्धमें आप मुझसे सहमत होंगे। जिन करोड़ों लोगोंके हितार्थ हमें स्वराज्य चलाना होगा, उनसे अंग्रेजी भाषामें व्यवहार करना असम्भव है, क्योंकि वे अंग्रेजी बिलकुल नहीं जानते। बेशक यह बात ठीक है कि इस सभामें हमें जिन लोगोंके सामने बोलना है उनमें अधिकांश लोग अंग्रेजी भाषा जानते हैं। उनसे अपनी देशी भाषामें भाषण देनेका साहस करनेके लिए मैं क्षमा-याचना करता हूँ। (हँसी)। यह कहा जा सकता है कि इस सभा-भवनमें जो लोग अंग्रेजी जानते हैं, उनके अतिरिक्त मराठी जाननेवाले लोग भी कम नहीं हैं। मैं जानता हूँ कि यहाँ मराठी-भाषी लोग हैं; किन्तु मैं उनसे सादर कहना चाहता हूँ कि अव वे गुजराती सीख लें जिससे उन्हें जव मेरा गुजराती भाषण सुननेका अवसर आये तव वे उसे थोड़ा-वहुत समझ सकें। (हँसी)

मुझे जो प्रस्ताव सौंपा गया है वह इस तरह है:

महामहिम सम्राट्के राजभक्त और कानूनका पालन करनेवाले भारतीय प्रजाजनोंकी यह सभा विश्वास करती है कि एक स्वस्थ और प्रगतिशील राज्यके लिए स्वतन्त्र सार्वजनिक पत्रोंका होना पहली आवश्यक शर्त है और यह वात सभ्य लोगोंके उचित राजनीतिक और नैतिक विकासके लिए जरूरी है; एवं सार्वजनिक जीवनके समस्त विभागोंमें स्वतन्त्रताका प्रवेश और उसका कायम रखा जाना लोगोंके उत्थान और सन्तोष तथा सरकार और लोगोंके पारस्परिक विश्वासकी अचूक गारंटी है। इसलिए यह सभा सरकारसे प्रार्थना करती है कि इस देशके समाचारपत्रोंको विचार प्रकट करनेकी पूरी स्वतन्त्रता दी जाये; उनपर केवल सामान्य कानून और दण्डका अंकुश रहे; और दण्ड उन्हें उचित रूपसे मुकदमा चलाने और अपराध सिद्ध होनेके वाद ही दिया जाये। (तालियाँ)

(श्री गांधीने प्रस्तावका स्पष्टीकरण गुजरातीमें किया)।

अबतक यह प्रेस-कानून ऊँचे दर्जेकी पत्रकारिताकी हदतक निर्दोष और निरापद माना जाता था; वस्तुतः सरकारने जब इस कानूनको मंजूर किया तब वाइसरॉय और गवर्नर जनरलकी परिषद्के सदस्योंको यही वचन दिया गया था। सदस्योंने ऐसा वचन लेकर ही इस कानूनको स्वीकार किया था। उन्हें यह आश्वासन दिया गया था कि इस कानूनका प्रयोग केवल अपराधी पत्रकारोंके विरुद्ध ही किया जायेगा। किन्तु 'न्यू इंडिया' के मामलेमें अब जो-कुछ घटित हुआ है उससे कहा जा सकता है कि यह वचन एक भ्रम था। सरकार द्वारा श्रीमती एनी बेसेंटपर किये गये आक्रमणने इस कानूनके सच्चे स्वरूपके सम्बन्धमें हमारा भ्रम दूर हो गया है। (हर्ष ध्वनि)। जब इस कानूनके अन्तर्गत प्रतिष्ठित पत्रकारोंपर जुल्म किया जा रहा है तब हम इससे सुरक्षित कैसे रह सकते हैं? कहा यह जाता है कि इस समय हमारी सरकार संकटकी स्थितिमें है। तो यह भी स्मरण रहे कि हम, देशके लोग भी यह कहते हैं कि जो सरकारके लिए संकटकी घड़ी है वह हमारे लिए भी संकटकी घड़ी है। (तालियाँ)। फिर भी यदि इस घड़ीमें भी सरकार हमें इन सख्त कानूनोंके शिकंजेमें जकड़ रखनेको आमादा है, तो महायुद्धके बाद हमारी क्या हालत होगी। तब क्या हमारा भविष्य इन देवताओंकी मुट्ठीमें ही है। (हँसी)। क्या हम अपनी इस स्थितिको उदासीन होकर सहन करनेके अतिरिक्त और कुछ नहीं कर सकते हैं? हम इसे ही अपना कर्त्तव्य मान लें और यह सोचकर हिम्मत रखें कि हमारी वर्तमान अवस्था भविष्यमें सुधरेगी अवश्य, सुधरनी चाहिए। मैं इन सभाओं और प्रस्तावोंमें विश्वास नहीं करता। (हँसी)। सभाएँ करना और उनमें प्रस्ताव पास करना केवल समयकी बरबादी है। किन्तु हम और कर भी क्या सकते हैं? हम पराधीन लोग किसी मामलेमें अपनी राय दर्ज करानेके अलावा अन्य कुछ नहीं कर सकते। इसीलिए मैं आपका निमन्त्रण पाकर यहाँ आया हूँ। मैं यह अनुभव करता हूँ कि इस मामलेमें कुछ किया जाना चाहिए, कुछ ऐसा किया जाना चाहिए जिससे हमारी शिकायत सरकारके कानों तक पहुँच सके। (तालियाँ)। हम इस विषयमें अपनी भावनाएँ प्रकट करनेकी दृष्टिसे यहाँ जो-कुछ भी कहें, यह एक असंदिग्ध तथ्य है कि हम इस अत्याचारपूर्ण कानूनके कारण अपने मनोंमें वस्तुतः जितना अनुभव करते हैं उसका सौवाँ भाग भी व्यक्त नहीं कर सकते। क्या हम अखबार पढ़ते हैं? हाँ, हम अखबार पढ़ते हैं; किन्तु क्या आपको निश्चय है कि आप सम्पादकके वास्तविक विचार पढ़ते हैं? मैं समझता हूँ, नहीं। लेखकोंके स्वतन्त्र विचार प्रकाशित नहीं किये जाते। जो-कुछ प्रकाशित किया जाता है, वह कुछ और ही होता है। इसलिए यह कहा जा सकता है कि अखबारोंमें प्रकाशित लेखोंका अर्थ उलटा लगाना ठीक है। (हँसी)। मैं कोई अत्युक्ति नहीं कर रहा हूँ। मैं स्वयं कई वर्षोंतक एक अखबारका सम्पादक रहा हूँ; इसलिए अपने निजी अनुभवसे कह सकता हूँ कि सम्पादकको अपने कर्त्तव्यका पालन करते हुए भिन्न-भिन्न मुश्किलोंमें से गुजरना पड़ता है। समाचारपत्रों पर कुछ नियन्त्रण रखना आवश्यक है, मैं इस बातसे इनकार नहीं करता; किन्तु यह याद रखना चाहिए कि इस नियन्त्रणको कायम रखनेमें विवेक और मर्यादाको न भुला देना चाहिए। मेरी लड़ाई तो अमर्यादित नियन्त्रणके विरुद्ध

है। सरकारी अधिकारियोंको तुच्छसे कारणोंको लेकर लोगोंके अपने विचार प्रकट करनेके अधिकारपर नियन्त्रण नहीं करना चाहिए। (तालियाँ)। नियन्त्रण लगानेका अर्थ होता है लोगोंको मिथ्या या भ्रामक विचारोंमें आसक्त होनेके लिए प्रोत्साहन देना। इससे लोग मेरी सरकारके शत्रु बनते हैं।(हँसी)। मेरी सच्ची भावनाएँ दबाई जाती हैं; मैं उन्हें स्वतन्त्रतापूर्वक व्यक्त नहीं कर सकता। मैं जो-कुछ अनुभव करता हूँ उससे उलटा लिखता हूँ। ऐसे कानूनोंके कारण हमारे देशके ३० करोड़ लोगोंका हमारे शासकोंके प्रति विशुद्ध प्रेम नहीं हो सकता। भारतमें शुद्ध न्याय किया जाना चाहिए। (तालियाँ)। सरकार हमारे लिए न्यासी या संरक्षक-रूप है। सच कहूँ तो मुझे 'न्यासी' शब्द पसन्द नहीं है। भारतकी अवस्था अब बचपनकी अवस्था नहीं है, इसलिए उसे न्यासी या संरक्षककी आवश्यकता नहीं है। भारत संसारका एक प्राचीनतम देश है। वह एक अत्यन्त अनुभव-सम्पन्न देश है। क्या भारतके लोगोंके लिए यह कहना उचित है कि वे अनुभव-शून्य हैं या बचपनकी अवस्थामें हैं? नहीं। हम भारतीयोंको संरक्षककी आवश्यकता नहीं है। हमारे लिए तो उतना ही आवश्यक है कि सरकार हमें शुद्ध न्याय दे। हम भारतीय लोग जिस तरह धूर्ततापूर्ण कार्यवाहियोंसे मुक्त हैं, विचारोंमें भी उतने ही उदार हैं। हम निराश जरूर हैं। किन्तु हम अराजभक्तिका अपराध कभी न करेंगे। इन स्थितियोंमें सरकारसे प्रार्थना करता हूँ कि जो-कुछ उचित और न्यायसंगत हो, वह सब किया जाये। यदि वह ऐसा करेगी तो इन सभाओंकी कोई आवश्यकता न रहेगी। (तालियाँ और हँसी)। यह तो मेरी सर्व सामान्य प्रार्थना हुई है। समाचारपत्रोंके लेखकोंकी ओरसे मेरी सरकारसे विशेष प्रार्थना है कि "सम्भ्रान्त सम्पादकों और पत्र-स्वामियोंको तंग न किया जाये।" मैं यह भी कहता हूँ: "हमसे वैसा ही उदारतापूर्ण व्यवहार कीजिएगा जैसा आप इंग्लैंडके लोगोंसे करते हैं। हम भारतीय मक्कारोंकी कौम नहीं हैं।" (हँसी)। हम शिक्षित, शिष्ट और सभ्य लोग हैं"। (तालियाँ)। मैं अपने समाचारपत्रोंके लेखक बन्धुओंसे कहता हूँ, "जो कुछ आपको कहना है, खुल्लमखुल्ला कहिए"। (तालियाँ)। यह हमारा कर्त्तव्य है। हमें अपने ऊपर निर्भर रहना चाहिए और अपने कष्टोंके बारे में खूब लिखना चाहिए। किन्तु हमें यह न भूल जाना चाहिए कि हमें यह कार्य शिष्टता और संयमकी मर्यादाओंके भीतर रहकर करना है। जब कभी हमारे सम्मुख राजनैतिक संकट आये, तब हम जो-कुछ अनुभव करते हैं और कहना चाहते हैं उसे यथा-सम्भव स्पष्ट शब्दोंमें कहनेसे हमें कदापि न झिझकना चाहिए। (तालियाँ)। इस प्रकार साफ बात कहने और अपने कार्यका समर्थन सचाईसे करनेपर यदि सरकार हमें दण्ड दे तो ठीक है, उसे दण्ड देने दीजिए। (तालियाँ और हँसी)। यदि परिणाम अधिकसे-अधिक खराब हो तो भी आप क्या कर सकते हैं? ज्यादासे-ज्यादा यह होगा कि वे हमारे शरीरोंको ले लेंगे। (हँसी)। बहुत अच्छा, यदि वे हमारे शरीरोंको ले लेंगे तो हमारी आत्माएँ मुक्त हो जायेंगी। (तालियाँ और जोरकी हँसी)।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, १९१६, पृष्ठ ५०६

२०८. पत्र: सी० एफ० ऐन्ड्रयूजको

अहमदाबाद
जून ३०, [१९१६]

प्रिय चार्ली,

तोतारामको वहां रखना बेकार है। मैं उनसे मिल चुका हूँ। वे सहायक नहीं होंगे। गिरमिट प्रथाको तो समाप्त होना ही है क्योंकि वह अपने-आपमें एक बुरी प्रथा है और गुलामीका अवशेष है। यदि यह आज ही समाप्त की जा सके तो बिना किसी भी स्वार्थका खयाल किये इसे समाप्त कर देना चाहिए।

सस्नेह,
मोहन

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (सी० डब्ल्यू० ५७३४) से।
सौजन्य: राजमोहिनी रुद्र, इलाहाबाद।

२०९. रेलके यात्री[1]

[जुलाई २६, १९१६ से पूर्व][2]

इस बातमें किसीको सन्देह नहीं है कि रेलके यात्रियोंको बहुत तकलीफें उठानी पड़ती हैं। इनमें से बहुत-सी तकलीफोंका उपाय स्वयं हमारे ही हाथमें है। भारतमें चारों ओर एकताकी लहर उठ रही है। उसका उपयोग करनेसे बहुत-सी तकलीफें दूर हो सकती हैं। इस लेखमें उन्हें दूर करनेके सम्बन्धमें कुछ सुझाव दिये जाते हैं। हमारी प्रार्थना है कि जिनके हाथमें यह लेख पहुँचे वे इसे ध्यानपूर्वक पढ़ें और जो लोग स्वयं न पढ़ सकते हों उन्हें पढ़कर सुनायें। पाठक सहज ही समझ सकते हैं कि कागज और छपाईका खर्च किसी परोपकारी पुरुषने दिया होगा। पर इसे समझते हुए भी मुफ्त मिलनेके कारण लेखको तुच्छ मानना उचित नहीं है।

कर्मचारियोंसे मेरा यह कहना है:

यदि आप स्टेशन-मास्टर हैं तो आप यात्रियोंके बहुत-से दुःख दूर कर सकते हैं। स्वयं मुसाफिरोंसे नम्रताका व्यवहार करते हुए आप अपने मातहतोंके सम्मुख वैसा ही करनेका आदर्श रख सकते हैं।

यदि आप टिकिट बाबू हैं तो आप यह बात सहज ही सोच सकते हैं कि आप पहले और दूसरे दर्जेके मुसाफिरोंको जितना समय देते और उनका जितना ध्यान रखते

१. यह १९१६-१७ में पुस्तिका-रूपमें प्रकाशित हुआ था और गुजरातमें मुफ्त बाँटा गया था।
२. इस पुस्तिकाका संक्षिप्त रूप २६-७-१९१६ को **काठियावाड़ टाइम्स** में छापा गया था।

हैं, गरीबोंको भी आपको उतना ही समय देना और उनका भी उतना ही ध्यान रखना चाहिए।

गरीबोंपर ही रेलोंका अस्तित्व अवलम्बित है और आपकी तनखाहोंका बहुत-कुछ दारोमदार उनसे प्राप्त पैसेपर ही है।

कितने ही टिकट बाबू गरीबोंको गालियाँ देते हैं, उनको 'तू' कहकर सम्बोधित करते हैं, और इतनेपर भी जहाँतक उनका बस चलता है उन्हें देरसे टिकट देते हैं। इसमें कोई बड़प्पन नहीं है। माँगनेवालोंको समयपर टिकट देनेसे उनका बहुत-सा समय बच जाता है और किसीका कुछ नुकसान भी नहीं होता।

यदि आप सिपाही हों तो आपको घूस खानेसे दूर रहना चाहिए, गरीबोंको धक्के न देनेका निश्चय करना चाहिए और उनपर कृपादृष्टि रखनी चाहिए। इतना समझ लेना चाहिए कि आप जनताके नौकर हैं, उसके स्वामी नहीं उनको कठिनाइयोंसे बचाना आपका कर्त्तव्य है। आप यदि स्वयं उन्हें कठिनाइयोंमें डालने लगे तो यह अन्याय ही है।

मुझे शिक्षित यात्रियोंसे यह कहना है:

आप लोग पढ़े-लिखे हैं और कुछ हद तक यह चाहते हैं कि दूसरे लोग आपको देशभक्त समझें। यदि आप अपने देशप्रेमका उपयोग उन अपढ़ और गरीब यात्रियोंका भला करनेमें करें जिनसे आपका साथ हो जाया करता है तो आप अनायास देश-सेवा करेंगे।

उदाहरणार्थ किसी यात्रीपर कोई अत्याचार किया जा रहा हो तो आप अनेक प्रकारसे उसकी सहायता कर सकते हैं। आप सामान्यतः तीसरे दर्जेमें यात्रा न करते हों तो भी अनुभव प्राप्त करनेके लिए तीसरे दर्जेमें यात्रा करें। इसीसे तीसरे दर्जेके यात्रियोंका बड़ा उपकार हो सकता है।

अपनी सच्ची सामाजिक स्थिति प्रकट न करते हुए टिकट लेने जाकर उनके सम्पर्कमें आयेंगे तो उन्हें टिकट लेनेमें जो कष्ट सहन करने पड़ते हैं उनका इलाज आप सहज ही मालूम कर सकेंगे। उस दशामें आपको जो सुविधाएँ मिलेंगी वे कुछ ही कालमें सर्व-साधारणको भी मिल जायेंगी।

कभी-कभी तो शिक्षित लोग स्वयं ही तीसरे दर्जेके यात्रियोंपर अत्याचारका कारण बन जाते हैं। वे चाहते हैं कि उन्हें खास तौरपर जल्दी टिकट मिल जायें। वे अपने लिए गाड़ीमें खास सुविधा प्राप्त कर लेते हैं। जितना चाहिए उससे अधिक स्थान घेर लेते हैं और इससे गरीबोंको कष्ट मिलता है। शिक्षितोंको चाहिए कि वे अत्याचारके ऐसे साधन बनना एकदम छोड़ दें।

स्टेशनों अथवा गाड़ियोंमें जो दोष दिख पड़ें उनके विषयमें अधिकारियोंसे लिखा-पढ़ी करना आप लोगोंका कर्त्तव्य है।

मैं सर्वसामान्य यात्रियोंको यह सुझाव देता हूँ:

आप शिक्षित-अशिक्षित धनी-निर्धन, किसी भी वर्गके क्यों न हों; पर यदि आप निम्न सुझावोंको ध्यानमें रखें तो यात्रियोंकी ७५ प्रतिशत कठिनाइयाँ क्षण-मात्रमें दूर हो जायें।

(१) स्टेशन या गाड़ीमें प्रवेश करते समय सवसे पहले वैठनेका बलपूर्वक प्रयत्न करनेके वजाय यदि आप यह सोचकर कार्य करें कि सबसे पीछे रहनेमें भी कोई हानि नहीं है तो आपको तनिक भी कष्ट न पहुँचेगा और आपके संयमसे दूसरोंको लाभ होगा।

(२) गाड़ीमें वैठनेपर इस वातका ध्यान रखना चाहिए कि उसमें जितने मनुष्योंकी गुंजाइश लिखी है उतने मनुष्योंको उसमें वैठनेका उतना ही अधिकार है जितना कि आपको; इसलिए यदि आप दूसरोंके वैठनेमें बाधा डालेंगे, तो रेलवेका कानून तोड़ेंगे और झूठ बोलकर नीतिके नियम भंग करेंगे।

(३) तीसरे दर्जेके यात्रीको जितना असवाव अपने साथ ले जानेका अधिकार है यदि आप भी उतना ही असबाब अपने साथ रखेंगे तो दूसरे लोग आरामसे बैठ सकेंगे। यदि आप इससे अधिक असबाब अपने साथ ले जानेमें समर्थ हों तो उसे ब्रेकमें रखवा दें और उसका किराया दे दें।

(४) आपका असवाब ऐसा होना चाहिए जो बेंचके नीचे या ऊपरके पट्टेपर आसानीसे आ जाये।

(५) यदि आप धनाढच हों और आपका परोपकारका विचार न हो तो अपने आरामके लिए आपको पहले या दूसरे दर्जेका ही टिकट लेना चाहिए। सिर्फ कंजूसीके कारण तीसरे दर्जेका टिकट लेनेसे आप गरीवोंपर भाररूप वनेंगे। यदि कदाचित् आपकी इच्छा ऊँचे दर्जेमें वैठनेकी न हो तो आपको अपनी अमीरीका इस प्रकार उपयोग कभी न करना चाहिए, जिससे आप और आपका असवाब आपके साथी मुसाफिरोंके कष्टका कारण हो।

(६) आपको याद रखना चाहिए कि ऐसे सब यात्रियोंको जिनकी यात्रा अधिक लम्बी हो, सोनेकी कुछ सुविधा पानेका अधिकार है; इसलिए आपके हिस्सेमें जितने समय सोना आये, आपको उतना ही सोना चाहिए।

(७) यदि आप सिगरेट पीते हों तो आप दूसरोंका विचार कर उनकी अनुमतिसे इस तरह सिगरेट पियें कि उन्हें कष्ट न हो।

(८) यदि आप फर्शपर पैर रखनेकी जगह थूकेंगे तो उससे गंदगी फैलेगी। उससे कभी-कभी रोग भी पैदा हो सकते हैं; स्वच्छताके नियमोंका पालन करनेवाले अनेक यात्रियोंके लिए यह कुटेव असह्य रूपसे कष्टप्रद होती है।

(९) रेलमें संडासको सावधानीसे काममें लेनेसे सभी यात्रियोंकी सुविधामें वृद्धि होगी। उसे लापरवाहीसे काममें लेकर आप अपने वादमें आनेवाले यात्रियोंका कुछ भी विचार नहीं रखते।

(१०) यात्राके समय आप ब्राह्मण हैं, दूसरा वैश्य अथवा शूद्र है; आप हिन्दू हैं दूसरा मुसलमान; आप वम्बईके निवासी हैं, दूसरा मद्रासका आदि भेदभावोंको मनमें स्थान देकर द्वेषकी सृष्टि करनेके वदले यदि आप यह मानकर भ्रातृभावसे वरतें कि हम सब भारत-माताके पुत्र हैं और संयोगसे एकत्र हुए हैं तो आपकी वह घड़ी सुखसे वीतेगी और भारतकी शोभा बढ़ेगी।

[गुजरातीसे]

महात्मा गांधीनी विचारसृष्टि

२१०. भाषण : दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रहके रहस्यपर[1]

जुलाई २७, १९१६

संक्षेपमें सत्याग्रहका रहस्य 'जीवनके तत्त्वकी खोज करना' हो सकता है। हम इसी खोजके लिए लड़ रहे हैं। यह बात हमने किसीसे प्रकट-रूपसे नहीं कही थी। यदि हम ऐसा कहते तो वहाँवाले हमारी खिल्ली ही उड़ाते । हमने अपने आन्दोलनका गौण हेतु ही प्रकट किया था, जो यह था कि वहाँ की सरकार हमको नीचे दर्जेका और हीन मानकर इस देशसे निकालनेके लिए नये-नये कायदे-कानून गढ़ रही है। उन कानूनोंको अंगीकार न करके अपना शौर्य प्रकट करना उचित है। मान लीजिए कि सरकारने इस आशयका कानून बना दिया कि काले आदमी पीली टोपी पहना करें। एक बार रोममें यहूदियोंके लिए ऐसा ही कानून बनाया गया था। इसी तरह यदि वहाँकी सरकार भी हमारे साथ ऐसा ही व्यवहार करने लगे और हमारे लिए कोई ऐसा कानून बनाने लगे जिसका हेतु हमारा अपमान करना जान पड़े तो हमें सरकारको स्पष्टरूपसे जता देना चाहिए कि हम इस कानूनको नहीं मानेंगे। एक अल्पवयस्क बालक बापसे कहता है कि तुम हमें उलटी पगड़ी पहनकर दिखाओ। बाप समझता है कि लड़का हमें इस प्रकार देखकर हँसना चाहता है और सहर्ष उसके हुक्मकी तामील कर देता है। पर जब कोई और आदमी बदनीयतीसे वही बात कहता है तब वह साफ जवाब देता है, "भाई, जबतक हमारे धड़पर सिर है तबतक तुम हमारा यह अपमान नहीं कर सकते। इसलिए पहले तुम हमारा सिर उतार लो; फिर जिस तरह चाहते हो उसे उलटी-सीधी पगड़ी पहनाओ।" इसी तरह वहाँकी सरकार हिन्दुस्तानियोंको नीच समझकर उनके साथ गुलामोंका-सा बर्ताव करती तथा जहाँतक हो सके उन्हें अपने देशोंमें आनेसे रोकना चाहती थी। और अपनी इस इच्छाकी पूर्त्तिके लिए ही वह नये-नये कायदे-कानून गढ़ने लगी। जैसे — हिन्दुस्तानियोंके नाम अलग रजिस्टरमें दर्ज करना, चोरों और डकैतोंकी तरह उनकी अँगुलियोंके निशान लेना, उन्हें राज्यके किसी एक विशेष क्षेत्रमें ही बसनेपर विवश करना, निश्चित सीमासे उनके बाहर निकलनेका निषेध करना, उनके लिए खास रास्तोंसे चलने और रेलके खास डिब्बोंमें सवार होनेका नियम बनाना, विवाहका प्रमाणपत्र न होनेपर उनकी स्त्रियोंको रखेल मान लेना, प्रति व्यक्ति हर साल ४५ रुपयेका कर वसूल करना आदि-आदि। मूल रोग एक ही होनेपर भी बहुधा वह शरीरमें भिन्न-भिन्न रूपोंमें प्रकट हुआ करता है। इसी तरह मुख्य रोग, जैसा कि पहले कह चुके हैं, दक्षिण-आफ्रिकाकी सरकारकी बुरी नीयत थी और उल्लिखित सब कायदे-कानून उसके भिन्न-भिन्न स्वरूप थे। इसलिए इन सभी कानूनोंके खिलाफ लड़नेके लिए हमें तैयार होना पड़ा।

१. यह कोचरब आश्रममें प्रार्थनाके बाद एक प्रश्नके उत्तरमें दिया गया था ।

अन्याय-अत्याचारके प्रतिकारके दो प्रकार हैं। एक है अन्याय करनेवालेका सिर तोड़ना और ऐसा करते हुए अपना भी सिर तुड़वाना। संसारमें सभी शक्तिमान् लोग इसी तरीकेका अवलम्बन करते हैं। प्रत्येक स्थानपर युद्ध होता है, लाखों करोड़ों मनुष्य मारे जाते हैं और इसके परिणामस्वरूप राष्ट्रकी उन्नति तो नहीं होती, पर हाँ, अवनति अवश्य होती है। युद्ध क्षेत्रसे लौटकर आये हुए सैनिक विवेक-शून्य हो जाते हैं और उनकी चरित्र और स्वभावमें अनेक दुर्गुण होने लगते हैं। इसके उदाहरणके लिए दूर नहीं जाना होगा। बोअर-युद्धमें जिस समय ब्रिटिश-सरकार मेफेकिंगमें विजयी हुई उस समय समस्त इंग्लैंड, विशेषकर लन्दन शहर यहाँ तक उन्मत्त हो गया कि छोटे-बड़े सभी पुरुष स्त्री-पुरुष मतवाले हो गये। उन्होंने भरपेट शराबें पी, भरपेट उछल-कूद की और दुकानोंमें शराबकी एक बूँद भी बाकी न रहने दी। इन चार दिनोंका वर्णन करते हुए 'टाइम्स' ने लिखा था कि "उन दिन लोगोंने जिस रीतिसे बिताये उसका वर्णन शब्दों द्वारा नहीं हो सकता, केवल इतना ही कहा जा सकता है कि 'द इंग्लिश नेशन वेंट अमेफे-किंग।'[1] विजयी राष्ट्र घमंडके कारण मदोन्मत्त हो जाता है, ऐश-आराममें रहनेका आदी हो जाता है, और युद्धके बाद देखनेमें शान्ति दिख पड़ती है सही; परन्तु कुछ ही दिनों बाद यह बात निश्चित रूपसे मालूम होने लगती है कि युद्धका अंकुर नष्ट नहीं हुआ, बल्कि पहलेसे कहीं अधिक पुष्ट और बलवान् हो गया है। युद्ध द्वारा विजय प्राप्त करके कोई देश न कभी सुखी हुआ है और न होगा। वह देश ऊपर नहीं उठता, नीचे और गिरता है। वास्तवमें उस राष्ट्रकी जीत नहीं, हार होती है। और फिर यदि सफलता न मिली या उद्देश्य असफल हुआ तो ऐसे युद्धसे दोनों पक्षोंको भयंकर हानि होती है।

परन्तु अन्यायके विरुद्ध लड़नेकी जो दूसरी रीति है उसमें अपनी गल्तीका नुकसान स्वयं खुद ही उठाना पड़ता है; दूसरा पक्ष उससे बिल्कुल बचा रहता है। यह दूसरी रीति 'सत्याग्रह' है। इस उपायका अवलम्बन करनेवालेको दूसरेका सिर नहीं फोड़ना पड़ता, केवल अपना ही सिर तुड़वाना पड़ता है। स्वयं ही सब यातनाएँ सहते हुए मरनेके लिए तैयार रहना पड़ता है। दक्षिण आफ्रिकाकी सरकारके अत्याचारी कानूनोंका मुकाबला करनेमें हमने इसी उपायका अवलम्बन किया था। हमने उक्त सरकारको कहला भेजा कि "हम तुम्हारे अत्याचारी नियमोंके सामने कभी सिर न झुकायेंगे! जिस तरह दो हाथोंके बिना ताली नहीं बजती, दो आदमियोंके बिना झगड़ा नहीं होता, उसी तरह दो पक्षोंके बिना राज्यका अस्तित्व भी नहीं रहता। जबतक हम अपने-आपको तुम्हारी प्रजा मानते हैं तभीतक तुम हमारे राजा—हमारी सरकार—हो। हम प्रजा नहीं तो तुम राजा भी नहीं। जबतक तुम्हारी चेष्टा हमें न्याय और प्रेमसे चलानेकी रहेगी तभीतक हम ऐसा होने देंगे। पर यदि तुम छलसे हमारा शासन करना चाहो तो यह असम्भव है। दूसरे मामलोंमें तुम जो-चाहे-सो करो, पर हमारे लिए बनाये गये कानूनोंमें तुमको हमारा मत लेना ही पड़ेगा, हमारी सलाहके बिना तुम हमें अनुचित रीतिसे दबा रखनेके लिए जो कानून बनाओगे वे तुम्हारी

1. अंग्रेज जातिको मेफेकिंग-उन्माद हो गया।

पुस्तकोंमें ही रह जायेंगे। हम कदापि उनका पालन न करेंगे। इसके लिए हमें तुम जो चाहो सो सजा दो, हम उसे सहने के लिए तैयार हैं। जेल भेज दो तो उसे स्वर्ग मानकर हम उसमें रहेंगे। फाँसीपर चढ़नेके लिए कहो तो हँसते हुए चढ़ जायेंगे। हमपर दुःखोंकी जितनी वर्षा करो, सबको शान्तिपूर्वक सहन करेंगे, पर तुम्हारे एक रोएँको भी कष्ट न पहुँचायेंगे। हम आनन्दपूर्वक मर जायेंगे, तुमको स्पर्श तक न करेंगे पर इन हड्डियोंमें जान रहनेतक हमसे तुम्हारे मनमाने कानूनोंका पालन होना असम्भव है।"

आरम्भ यों हुआ कि एक रविवारकी सन्ध्याको जोहानिसवर्गमें एक पहाड़ीपर मैं और हेमचन्द्र नामके एक और सज्जन बैठे हुए थे। उस दिनकी याद मुझे इतनी ताजा है कि मानो यह कलकी बात हो। मेरे पास सरकारी 'गजट' रखा हुआ था। उसमें भारतवासियोंसे सम्बन्ध रखनेवाले उल्लिखित कई कानूनोंके पास होनेकी बात लिखी हुई थी। उसे पढ़ते ही मेरा सारा शरीर गुस्सेसे काँप उठा। मैंने मनमें कहा —हें! सरकारने हम लोगोंको क्या समझ रखा है? मैंने उसी दम 'गजट' के उस अंशका जिसमें उक्त कानूनोंका उल्लेख था, अनुवाद कर डाला और उसके नीचे लिखा कि "मैं कभी इन कानूनोंकी सत्ता अपने ऊपर न चलने दूँगा।" यह लेख तत्क्षण ही फीनिक्सके 'इंडियन ओपिनियन' पत्रमें छपनेके लिए भेजा गया। उस समय मैंने स्वप्नमें भी यह सोचा नहीं था कि इस काममें कोई भी भारतवासी अपूर्व वीरता प्रकट करेगा अथवा सत्याग्रहका आन्दोलन इतना जोर पकड़ेगा। मैंने यह बात उसी क्षण हिन्दुस्तानी भाइयोंपर प्रकट की, जिससे बहुतेरे सत्याग्रह करनेपर तैयार हो गये। पहले युद्धमें लोग यह समझकर सम्मिलित हुए कि थोड़े ही दिनों तक कष्ट सहनेसे हमारा उद्देश्य सिद्ध हो जायेगा। दूसरे युद्धके समय आरम्भमें थोड़े ही लोग सम्मिलित हुए पर पीछे बहुतसे लोग आ मिले। बादमें श्री गोखलेके वहाँ पहुँचने पर दक्षिण-आफ्रिकाकी सरकारसे समझौतेका वचन पाकर यह लड़ाई बन्द की गई। परन्तु पीछे सरकारने दगाबाजी की और अपना वचन पूरा करनेसे इनकार कर दिया। इसपर तीसरा सत्याग्रह युद्ध आरम्भ करना पड़ा। उस समय गोखलेने मुझसे पूछा था कि आन्दोलनमें कितने आदमी सम्मिलित होंगे? मैंने लिखा कि ३० से ६० आदमी तक सम्मिलित होंगे। परन्तु मुझे इतने साथी भी न मिले। हम १६ आदमियोंने ही मुकाबिला शुरू किया। हमने दृढ़ निश्चय कर लिया था कि जबतक सरकार अपने अत्याचारी कानूनोंको रद न करेगी अथवा कोई और समाधानकारक समझौता न करेगी तबतक हम हरएक दण्ड भुगतेंगे, पर सिर न झुकायेंगे। हमें इस बातकी बिलकुल आशा न थी कि हमें बहुतसे साथी मिलेंगे। पर एक मनुष्यके भी निःस्वार्थपूर्वक सत्य और देश-हितके लिए आत्म-समर्पण करनेके लिए तैयार होनेका परिणाम अवश्य ही होता है। देखते-ही-देखते बीस हजार मनुष्य आन्दोलनमें सम्मिलित हो गये; उनको रखनेके लिए जेलोंमें जगह न रही और समस्त भारतका खून खौलने लगा। बहुतसे लोग कहते हैं कि यदि लॉर्ड हार्डिंज बीच-बचाव न करते तो समझौता होना असम्भव था। पर ये लोग यह सोचना भूल जाते हैं कि उक्त लॉर्ड साहबने मध्यस्थता क्यों की। दक्षिण-आफ्रिकाकी अपेक्षा कनाडाके हिन्दुस्तानी कहीं अधिक दुःख पा रहे थे। वहाँ

उन्होंने मध्यस्थता क्यों नहीं की? जिस स्थानपर हजारों स्त्री-पुरुषोंका आत्मवल एकत्र हो, जिस स्थानपर असंख्य नर-नारी प्राणोंको हथेलीपर लिये हुए हों, वहाँ कौनसी वात असम्भव है? मध्यस्थता करनेके सिवा लॉर्ड हार्डिंजके लिए कोई उपाय ही न. था। और ऐसा करके उन्होंने अपनी वुद्धिमत्ता प्रकट की। इसके वाद जो कुछ हुआ उसे आप जानते ही हैं, अर्थात् दक्षिण आफ्रिकाकी सरकारको मजबूर होकर हमारे साथ समझौता करना पड़ा। इन वातोंसे सिद्ध हुआ कि हम हरएक चीजको विना किसीको चोट पहुँचाये केवल आत्मवलसे — सत्याग्रहसे — प्राप्त कर सकते हैं। शस्त्रसे युद्ध करनेवालेको शस्त्र तथा दूसरोंकी सहायताका अवलम्वन लेना पड़ता है। सीधे-सादे रास्तेको छोड़कर टेढ़ी-मेढ़ी पगडंडियाँ ढूंढ़नी पड़ती हैं। सत्याग्रही जिस मार्गसे युद्ध करता है वह सरल होता है; उसे किसीकी प्रतीक्षा भी नहीं करनी पड़ती। वह अकेला भी लड़ सकता है, हाँ, उस दशामें फल अवश्य कुछ-देरसे मिलेगा। आफ्रिका-के आन्दोलनमें यदि मुझे वहुतसे साथी न मिलते तो उसका नतीजा इतना ही होता कि आज आप लोग मुझे अपने वीचमें वैठा हुआ न देख सकते। शायद मेरी सारी आयु वहाँ लड़ने ही में खर्च होती। पर इससे क्या होता? जो फल मिला वह कुछ देरसे मिलता। सत्याग्रहके युद्धमें केवल अपनी ही तैयारी दरकार है। हमें पूर्ण संयमशील होना चाहिए। इस तैयारीके लिए यदि गिरि-गुफाओंमें रहनेकी आवश्यकता हो तो वहाँ भी जाकर रहना चाहिए।[1]

इस तैयारीमें जो समय लगेगा उसे समयकी व्यर्थ वर्वादी न समझना चाहिए। ईसाने जगत्का उद्धार करनेके लिए निकलनेसे पूर्व चालीस दिन जंगलमें रहकर अपनी तैयारी की थी और वुद्धने भी वैसी ही तैयारी करनेमें वरसों लगाये थे। यदि उन्होंने इस प्रकार तैयारी न की होती तो वे कदाचित् ईसा और वुद्ध न हुए होते। वैसे ही यदि हम अपने शरीरको सत्यके पालन और परोपकारके निमित्त अनुकूल वनाना चाहते हों तो हमें पहले ब्रह्मचर्य, अहिंसा, सत्य आदि गुणोंको विकसित करके अपनी आत्मिक उन्नति करनी चाहिए। उसके वाद ही यह कहा जा सकता है कि हम सच्ची देशसेवा करनेके योग्य हो गये।

संक्षेपमें सत्याग्रहके संघर्षका हेतु लोगोंमें से कायरता निकालकर पौरुष भरना और सच्चे मनुष्यत्वको विकसित करना था और वहाँकी सरकारसे संघर्ष उसका कार्यक्षेत्र था।

महात्मा गांधी

१. इसके वादके दो अनुच्छेद गुजराती विवरणसे अनूदित हैं जो इस हिन्दी विवरणकी अपेक्षा संक्षिप्त-रूपमें मिलता है। मूल भाषण गुजरातीमें ही दिया गया था।

२११. पत्र : एच० एस० एल० पोलकको

अहमदावाद
अगस्त ८, १९१६

प्रिय श्री पोलक,

पत्र-वाहक श्री कुंवरजी वी० मेहतासे मैं एक सार्वजनिक कार्यकर्त्ताके रूपमें परिचित हूँ। ये अपना समय मुख्यतः पाटीदार समाजकी सेवामें लगाते रहे हैं। ये दक्षिण आफ्रिकामें अपने समाजके[1] लिए वहाँके पाटीदारोंसे रुपया इकट्ठा करनेके उद्देश्यसे आ रहे हैं। कृपया संघमें प्रवेश करनेमें उनकी सहायता करें।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्री एच० एस० एल० पोलक
बॉक्स ६५२२
जोहानिसवर्ग

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (जी० एन० २६६४) की फोटो-नकलसे।

२१२. पत्र : कुंवरजी मेहताको

अहमदावाद
[अगस्त ८, १९१६]

भाई श्री कुंवरजी,

साथमें जो पत्र[2] है उसका उपयोग कर लें।

मोहनदास गांधीके वन्देमातरम्

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (जी० एन० २६६४) की फोटो-नकलसे।

१. पाटीदार-मण्डल।
२. देखिए पिछला शीर्षक।

२१३. पत्र: जे० बी० पेटिटको

[अहमदाबाद]
अगस्त १९, १९१६

प्रिय श्री पेटिट,

आपका ११ तारीखका पत्र मिला। उत्तर देनेमें कुछ दिन लग गये, क्योंकि आज ही मुझे कुछ मिनटोंके लिए हिसाब जाँचनेका अवकाश मिला। इसके परिणाम-स्वरूप मुझे लगता है कि मदद प्राप्त करनेवाले सत्याग्रहियोंके लिए कमसे-कम १५,००० रुपयोंकी आवश्यकता होगी।

हिसाबकी जाँच करते समय मुझे मालूम हुआ कि मैंने सत्याग्रह कोषसे जो रकम निकाल ली है वह तो उसमें जमा रकमसे ५०० रुपयेसे भी अधिक है। कृपया इस हिसाबमें जमा करानेके लिए १,००० रुपयेका चैक भेजकर मुझे अनुगृहीत करें?

मुझे अवशिष्ट रकम दक्षिण आफ्रिकासे नहीं मिली।[1] जैसा कि मैं आपको पहले ही सूचित[2] कर चुका हूँ अभी वहाँ भुगतान करना शेष है। उन लोगोंको यह बतानेमें कुछ देर लगेगी कि दक्षिण आफ्रिकामें उन्हें कितनी रकमकी आवश्यकता होगी।

हृदयसे आपका,

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० ६३२०) से।

२१४. पत्र: ए० एच० वेस्टको

अहमदाबाद
सितम्बर १४, १९१६

प्रिय वेस्ट,

मुझे तुम्हारा पत्र मिला और उसके साथ ही रुस्तमजीको भेजे गये पत्रकी नकल भी मिली। तुम जानते हो कि मेरा हृदय तुम्हारे साथ है। मैं तुम्हारे पत्रके बारेमें कुछ नहीं कहूँगा, केवल इतना ही कहूँगा कि तुम्हें इतना दुःख हुआ, यह जानकर मुझे दुःख होता है। मैं जानता हूँ कि यह पत्र लिखनेके बाद सदाकी भाँति तुम्हारे चेहरेपर प्रसन्नता तथा मनमें दार्शनिकों जैसी शान्ति फिर लौट आई होगी। कुछ भी हो, इतना ही कहना है कि अपनी मासिक आवश्यकतानुसार तुम स्वयं रुपया निकाल सकते हो। कृपया निःसंकोच होकर तुम इसका उपयोग करो। वहाँ तुम्हारे पास निधि है। तुम्हारे लिए तथा तुम जो खर्च करते हो उसके लिए, मैं स्वयं जवाबदेह रहूँगा। तुम इस निधिका उपयोग करते हो, इसमें मुझे कोई बुराई नजर नहीं आती। संघर्षके

१. देखिए अगला शीर्षक।
२. देखिए "पत्र: जे० बी० पेटिटको", ३०-३-१९१६।

लिए ही निधि भेजी गई है। तुम और थोड़ेसे अन्य लोग संघर्ष चला रहे हो, इस संघर्षको अवश्यमेव कायम रखना होगा। इसलिए आशा है कि इस कार्यके औचित्यके बारेमें तुम मेरे साथ फिरसे जिरह नहीं करोगे। इमाम साहबकी समझमें बात ठीक तरहसे आती जा रही है।

श्री पेटिटने शेष निधिके बारेमें मुझसे कई बार पूछा है। वहाँ अब शेष निधि कितनी है? जिस तारीख तकका हिसाब दिया जा चुका है उससे आगेके खर्चकी रकमें भी जरूर भेज देना। तुमने जो क्षति वहाँ उठाई है उसकी पूर्त्तिके बाद जो रकम शेष बचेगी उसे ही हम वापस करेंगे।

यह सोचना ही दुःखजनक है कि पोलक दक्षिण आफ्रिका छोड़ रहे हैं। उनका बड़ा आधार रहा है। खादीके काममें हम बहुत व्यस्त हैं। इसलिए अधिक, बादमें। सस्नेह,

तुम्हारा,

मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी प्रति (सी० डब्ल्यू० ४४२३) की फोटो-नकलसे।
सौजन्य: ए० एच० वेस्ट

२१५. पत्र: श्रीमती ए० एच० वेस्टको

अहमदाबाद
सितम्बर १४, १९१६

प्रिय श्रीमती वेस्ट,

आपने पत्र लिखकर मुझे मेरे वादेकी याद दिलाई, यह ठीक ही किया है। मैं आपको कभी भी नहीं भूला। अन्य कर्त्तव्योंमें अत्यधिक व्यस्त रहनेके कारण मैं नियमितरूपसे पत्र लिखनेमें असमर्थ रहा हूँ।

मेरा हृदय हमेशा आप सभीके साथ है। आपको मेरी सहानुभूति और सहायता उपलब्ध है। मैं इस बातमें आपसे पूर्णरूपसे सहमत हूँ कि आपके पास अपने निर्वाहके लिए पर्याप्त होना चाहिए। अधिकार अल्बर्टके अपने हाथमें है; मैं उन्हें लिख रहा हूँ कि वे उसका उपयोग करें।

अल्बर्टको लिखे मेरे पत्रसे[1] आपको और अधिक जानकारी होगी। आशा है उत्तरमें मुझे अवश्यमेव आनन्दसे भरा पत्र मिलेगा। मैं आपसे कहूँगा कि आप इस बातकी परवाह न करें कि श्री रुस्तमजी या अन्य लोग क्या कहते हैं।

हृदयसे आपका,

मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (सी० डब्ल्यू० ४४२४) की फोटो-नकलसे।
सौजन्य: ए० एच० वेस्ट

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२१६. अहिंसाके विषयमें लाला लाजपतरायको उत्तर[1]

अक्तूबर १९१६

अहिंसाके सम्बन्धमें मैंने जो कुछ कहा था यदि उसका ज्ञान लाला लाजपतरायने[2] पहलेसे प्राप्त कर लिया होता तो उन्हें वह आलोचना[3] करनेकी आवश्यकता न पड़ती, जो कि उन्होंने 'मॉडर्न रिव्यू' के गत जुलाई मासकी संख्यामें प्रकाशित कराई है। लालाजीका यह पूछना बिलकुल ठीक है कि जो बातें मेरी कही हुई बतलाई जाती हैं वे वास्तवमें मेरी कही हुई हैं या नहीं। वे कहते हैं कि वे बातें यदि मेरी कही हुई न हों तो मुझे चाहिए कि मैं उनका खण्डन करूँ। पहली बात तो यह है कि जिनमें मेरी कही हुई बातें अथवा उनपर की हुई टीकाएँ प्रकाशित हुई हैं मैंने अभीतक वे समाचारपत्र ही नहीं देखे हैं। और दूसरी बात यह है कि मेरे व्याख्यानों-के सम्बन्धमें समाचारपत्रोंमें प्रकाशित होनेवाली रिपोर्टोंमें जो-जो भूलें हो जायें उनकी सब भूलोंका मैं खण्डन भी नहीं कर सकता। बहुतसे गुजराती समाचारपत्रों तथा दूसरे सामयिक पत्रोंमें लालाजीका लेख उद्धृत या अनुवादित किया गया है, अतः मुझे भी अपना पक्ष स्पष्ट रूपसे सामने रख देना चाहिए। लालाजीके प्रति समादर रखते हुए भी मुझे पहले तो उनकी इस बातका खण्डन करना चाहिए कि अहिंसाके सिद्धान्त-की अतिके कारण ही भारतका अधःपतन हुआ है।

इस विश्वासका कोई ऐतिहासिक आधार नहीं है कि हमारे पुरुषोचित गुण अहिंसाके अति-आचारके कारण समाप्त हो गये। पिछले १,५०० वर्षोंमें एक राष्ट्रकी तरह हमने अपनी शारीरिक वीरताके पर्याप्त प्रमाण दिये हैं; किन्तु भीतरी मतभेदोंने हमें एक-दूसरेसे दूर रखा और देशप्रेमकी जगह हमारा स्वार्थ अधिक प्रबल रहा। अर्थात् हम धर्म-भावनाके बजाय अधर्म-भावनासे परिचालित होते रहे।

कापुरुषताका लांछन जैनोंपर किस हदतक सिद्ध किया जा सकता है सो मैं नहीं जानता। मैं उनकी वकालत नहीं करूँगा। मेरा जन्म वैष्णव कुलमें हुआ और बचपनसे मुझे अहिंसाकी शिक्षा दी गई। मैं जिस तरह संसारके सभी महान् धर्म-ग्रंथोंसे धर्मके बारेमें लाभान्वित हुआ उसी तरह जैन धर्म-ग्रन्थोंसे भी हुआ। दार्शनिक श्रीमद्

१. **मॉडर्न रिव्यू** कलकत्ताके अक्तूबर १९१६ के अंकमें गांधीजीके पत्रके रूपमें प्रकाशित।

२. (१८६५–१९२८) समाज सुधारक, लेखक और राजनीतिज्ञ; १९०७ में ब्रिटिश सरकार द्वारा देशनिकाला दिया गया; जन सेवक समाज (सर्वेंट्स ऑफ पीपल्स सोसाइटी) के संस्थापक; १९२० में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके अध्यक्ष; साइमन कमीशनके बहिष्कारके हेतु किये गये प्रदर्शनके समय पुलिसकी लाठियोंसे घायल, और बादमें उसीके कारण देहावसान।

३. यह लेख 'अहिंसा परमो धर्मः—एक सत्य है या सनक?' शीर्षकसे छपा था। देखिए परिशिष्ट २।

राजचन्द्र कविकी[1] जीवन्त संगतिका मुझपर बड़ा ऋण है — वे जन्मसे जैन थे। इस प्रकार यद्यपि मेरे अहिंसा सम्बन्धी अपने विचार संसारके ज्यादातर धर्मोंके अध्ययनका परिणाम है तथापि अब उनका आधार ये शास्त्र-वचन नहीं हैं। वे मेरे जीवनका एक भाग हो गये हैं और यदि किसी दिन अचानक मुझे यह पता भी लग जाये कि मैंने उक्त धार्मिक ग्रंथोंका जो अर्थ समझा था, उनका वह अर्थ नहीं है तो भी मैं अहिंसाके विषयमें वही सोचूँगा जो मैं यहाँ प्रस्तुत करने जा रहा हूँ।

हमारे शास्त्रोंके उपदेशका आशय कुछ ऐसा है कि जो व्यक्ति सचमुच अहिंसाका पूरी तरह आचरण करता है, संसार उसके चरणोंमें आ झुकता है। अपने आसपासके वातावरणपर उसका ऐसा प्रभाव पड़ता है कि सर्प और अन्य विषैले जन्तु भी उसे पीड़ा नहीं पहुँचाते। सेंट फ्रांसिस ऑफ असीसीके विषयमें ऐसी बात प्रसिद्ध है।

निषेधार्थक रूपमें अहिंसाका अर्थ होता है, शरीर या मनसे किसी जीवित प्राणीको पीड़ा न पहुँचाना। इसलिए अहिंसा किसी दुष्कर्मीको न चोट पहुँचा सकती है न उसके प्रति दुर्भावना रखकर उसे मानसिक पीड़ा दे सकती है। किन्तु इस कथनमें वे कष्ट शामिल नहीं हैं जो अत्याचारीको दुर्भावनासे नहीं, मेरी स्वाभाविक चेष्टासे होते हैं। यदि मुझे लगे कि कोई व्यक्ति किसी बच्चेपर प्रहार करने ही वाला है, तो अहिंसा मुझे उस बच्चेको उस व्यक्तिके सामनेसे झपटकर अलग कर देनेसे नहीं रोकती। यदि मैं उस बालकका किसी भी रूपमें अभिभावक हूँ तब तो अहिंसाके समुचित आचरणका यह तकाजा है कि मैं अत्याचारीके सामनेसे उस बच्चेको हटाऊँ। इसलिए दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रहियोंका यह कर्त्तव्य था कि वहाँकी संघ-सरकार उनके प्रति जो अत्याचार करना चाहती थी वे उसका प्रतिरोध करें। उनके मनमें सरकारके प्रति कोई दुर्भावना नहीं थी। और कभी सरकारको उनकी मददकी जरूरत पड़ी, तो उन्होंने मदद देकर यह जाहिर भी किया। "उनके प्रतिरोधका स्वरूप मृत्यु तक का कष्ट उठाकर सरकारकी आज्ञाओंकी अवहेलना करना था।" अहिंसाका अर्थ जान-बूझकर स्वयं कष्ट भोगना होता है; हम जिसे अत्याचारी मानते हैं उसे जान-बूझकर कष्ट पहुँचाना नहीं।

अपने भावात्मक रूपमें अहिंसाका अर्थ होता है, प्रेम और उदारताकी पराकाष्ठा। यदि मैं अहिंसा-व्रती हूँ तो मुझे अपने शत्रुको प्यार करना चाहिए। यदि कोई शत्रु अथवा अपरिचित व्यक्ति मेरा बुरा करता है तो मुझे उससे भी वही बरताव करना चाहिए जो मैं, मुझसे बुरा व्यवहार करनेवाले अपने पिता या पुत्रके साथ करूँगा। इस सक्रिय अहिंसामें सत्य और अभय अनिवार्य रूपसे आ जाते हैं। चूँकि हम अपने प्रियको धोखा नहीं दे सकते इसलिए न हम उससे डरते हैं न उसे डराते हैं। जीवनकी भेंट सबसे बड़ी भेंट है। जो व्यक्ति वास्तवमें जीवन-भेंट कर देता है वह सारी शत्रुताको निरस्त कर देता है। वह सम्मानपूर्ण समझौतेका रास्ता खोल देता है। और जो व्यक्ति स्वयं निर्भय नहीं है, यह भेंट देनेमें असमर्थ है। इसलिए उसे स्वयं तो निर्भय होना ही चाहिए। इस तरह अहिंसा और कायरताका संग नहीं हो सकता। अहिंसाके पालनके लिए साहसकी पराकाष्ठाकी अपेक्षा है। सिपाहीके गुणोंमें यह सर्वाधिक सिपाहियाना

१. देखिए "भाषण : अहमदाबादमें राजचन्द्र जयन्तीके अवसरपर", २१-११-१९१५।

गुण है। जनरल गॉर्डनके[1] एक प्रसिद्ध पुतलेमें उनके हाथमें केवल छड़ी दी गई है। यह अहिंसाकी दिशामें काफी बड़ा कदम है। किन्तु जो वीर अपनी रक्षाके लिए छड़ीकी भी सहायता लेता है वह उस हदतक वीरता खो देता है। सच्चा सिपाही तो वह है जो गोलियोंकी बौछारमें अविचलित रहकर मरना जानता है। मूरोंने उस समय इसी प्रकारका साहस दिखाया जब फ्रांसीसी तोपची उनपर दनादन गोले दागते चले जा रहे थे और वे 'अल्लाह' के नारे लगाते हुए तोपोंके सामने बढ़ते चले जा रहे थे। अलबत्ता यह साहस निराशासे उत्पन्न साहस था। अम्बरीपका साहस प्रेमसे उत्पन्न था। फिर भी मूरोंके साहस, मरनेकी तत्परताने तोपचियोंके हृदय जीत लिये। उन्होंने गोले दागना बन्द कर दिया और जोर-जोरसे टोपियाँ हिलाकर अपने अबतकके शत्रुओंका मित्रोंकी तरह स्वागत किया। इसी प्रकार किसी छोटे-मोटे व्यक्तिगत स्वार्थके बदले अपना सम्मान बेचनेके बजाय दक्षिण आफ्रिकी सत्याग्रही हजारोंकी तादादमें मरनेके लिए तैयार थे। यह थी भावात्मक रूपमें अहिंसा। अहिंसा कभी सम्मानका सौदा नहीं करती। कोई असहाय बालिका अहिंसाके किसी अनुयायीके संरक्षणमें जितनी सुरक्षित है उतनी उसके संरक्षणमें नहीं जो शस्त्रकी शक्ति टिकने तक उसकी रक्षा करनेको तैयार है। पहली परिस्थितिमें अत्याचारीको संरक्षककी लाशपर से उस तक गुजरना होगा; दूसरी परिस्थितिमें उसका संरक्षकको काबूमें ले आना काफी है। क्योंकि वहाँ धारणा यह है कि यदि संरक्षक शारीरिक शक्तिकी हदतक पूरा संघर्ष कर चुका हो तो उसकी कर्त्तव्य-भावना तुष्ट हो जायेगी। पहली परिस्थितिमें, संरक्षकने अपनी आत्माको अत्याचारीके शरीरके मुकाबलेमें खड़ा किया है — सम्भावना तो यह है कि प्रतिद्वन्द्वीकी आत्मा जागेगी और हम कल्पना नहीं कर सकते कि इसके सिवाय किसी अन्य परिस्थितिमें बालिकाके सम्मान-रक्षाकी अधिक सम्भावना होगी — यदि स्वयं बालिका भी साहसका परिचय दे तो और बात है।

आज हम यदि कापुरुष हैं तो उसका कारण यह नहीं है कि हमें वार करना आता है बल्कि कारण यह है कि हम मरनेसे डरते हैं। वह व्यक्ति जैनधर्मके प्रवर्त्तक महावीर या गौतमबुद्ध अथवा वेदोंका अनुयायी नहीं है जो स्वयं तो मृत्युसे डरकर किसी वास्तविक या काल्पनिक भयके सामनेसे भाग खड़ा होता है और मनमें यह मानता है कि कोई अन्य व्यक्ति सम्बन्धित अत्याचारीका नाश करके खतरेका परिहार कर दे। वह निःसन्देह अहिंसाका अनुयायी नहीं है जो व्यापारमें धोखा देकर किसी व्यक्तिको घुला-घुलाकर मारता है, या जो हथियार उठाकर कुछ गायोंकी रक्षा करता है और कसाईको मार डालता है या जो देशके तथाकथित लाभकी आशामें शासनके कुछ अधिकारियोंकी हत्या करनेमें नहीं हिचकता। इन सारे कृत्योंकी जड़में घृणा, कायरता और भय है। गाय अथवा देशके प्रति प्रेमकी यह भावना एक धूमिल-सी चीज है और इसका मकसद अपने दम्भकी तुष्टि या अन्तर्वेदनाको सहलाना है।

१. खार्तूमके लॉर्ड गॉर्डन (१८३३–८५), अंग्रेज प्रशासक व सैनिक; सूडानके गवर्नर जनरल। देखिए खण्ड ८, पृष्ठ १०४।

मेरी विनम्र रायमें अहिंसा लौकिक और अलौकिक सभी बुराइयोंके लिए रामबाण है। इसके आचरणमें अति सम्भव ही नहीं है। अभी तो इसका आचरण हो ही नहीं रहा है। अहिंसा दूसरे सद्गुणोंके आचरणका स्थान नहीं ले लेती, बल्कि उनका आचरण अहिंसाके प्रारम्भिक रूपके पालनके लिए भी आवश्यक कर्त्तव्य हो जाता है। महावीर और बुद्ध और इसी प्रकार टॉल्स्टॉय सिपाही थे। अलबत्ता उन्होंने अपने पेशेको अधिक गहराई और वास्तविकताके साथ देखा और सत्य, सुख और सम्मानसे पूर्ण पवित्र जीवनके रहस्यको समझा। हम भी इन गुरुजनोंके पथपर चलें और अपने इस देशको फिर एक बार देव-भूमि बना दें।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

मॉडर्न रिव्यू, अक्तूबर १९१६

२१७. आधुनिक शिक्षा

हमें आज सभी लोगोंके मुँहसे 'शिक्षा' शब्द सुनाई पड़ता है। सभी स्कूल-सरकारी और गैर-सरकारी — छात्रोंसे भरे हुए हैं। कॉलेजोंमें जगह नहीं मिलती। गुजरात कॉलेजसे कितने ही उम्मेदवारोंको निराश लौट जाना पड़ा। शिक्षाके सम्बन्धमें इतना मोह होनेपर भी यह प्रश्न शायद ही किसीके मनमें आता हो कि शिक्षाका अर्थ क्या है और हमें अबतक जो शिक्षा मिलती रही है उससे लाभ हुआ है या हानि अथवा परिश्रमके अनुरूप लाभ हुआ है या नहीं। जैसे शिक्षाके अर्थके सम्बन्धमें कम विचार किया गया दिखाई देता है, वैसे ही उसके उद्देश्यके सम्बन्धमें कहा जा सकता है। मुख्य उद्देश्य तो यही दिखाई देता है कि हम शिक्षा प्राप्त करके किसी नौकरीके योग्य हो जायें। विभिन्न धन्धा करनेवाली जातियोंके लोग शिक्षा प्राप्त करनेके बाद अपना धन्धा छोड़कर नौकरी ढूंढ़नेमें लग जाते हैं। और नौकरी मिल जाती है तो वे अपनेको कुछ ऊँचा चढ़ा हुआ मानते हैं। हम अपने स्कूलोंमें राज, लुहार, बढ़ई, दर्जी, मोची आदि जातियोंके बालकोंको पढ़ते देखते हैं। किन्तु वे पढ़कर अपने पुश्तैनी धंधेको उन्नत करनेके बजाय उसे नीचा धन्धा मानकर छोड़ देते हैं और दफ्तरमें क्लर्की करनेमें अपनी प्रतिष्ठा मानते हैं। माता-पिता भी इसी तरह सोचते हैं। हम लोग इस प्रकार जाति-भ्रष्ट और कर्त्तव्य-भ्रष्ट होकर गुलाम बनते जा रहे हैं। अपनी भारत-यात्रामें सभी ओर मैंने यही स्थिति देखी है और इससे मेरा हृदय बहुत बार रो उठा है।

शिक्षा हमारा साध्य नहीं है, बल्कि साधन है। जिस शिक्षासे हम चरित्रवान् बन सकें, वही सच्ची शिक्षा मानी जा सकती है। कोई भी यह नहीं कह सकता कि स्कूलोंकी शिक्षासे चारित्र्य प्राप्त किया जा सकता है। स्कूलोंमें चरित्रको बिगाड़ लेनेके अनेक उदाहरण हमें मिल जायेंगे। एक निष्पक्ष अंग्रेज लेखकने कहा है कि जबतक भारतके स्कूलों और घरोंमें सामंजस्य न होगा, तबतक छात्र दोनों दीनोंसे भ्रष्ट ही होते रहेंगे।

हमारे युवकोंको घरमें माँ-बापसे और अपने आस-पासके वातावरणसे जिस प्रकारका ज्ञान मिलता है, स्कूलोंमें उससे उल्टा मिलता है। स्कूलोंमें आचार-व्यवहार हमारे घरोंके आचार-व्यवहारसे प्रायः भिन्न ही होता है। हमारी पाठ्य-पुस्तकोंसे जो कुछ शिक्षा [illegible] तो पुस्तकोंमें छपा हुआ बैंगन ही समझिए, जिसका हम अपने सांसारिक व्यवहारमें कोई उपयोग नहीं कर सकते। हमें स्कूलोंमें क्या पढ़ाते हैं, इस सम्बन्धमें हमारे माँ-बाप उदासीन रहते हैं। हम मानते हैं कि बहुत-सा अध्ययन केवल परीक्षा देनेके उद्देश्यसे किया गया कठिन श्रम ही होता है। हम परीक्षा देनेके बाद जल्दी-से-जल्दी उसे भूल जानेका प्रयत्न करते हैं। कुछ अंग्रेज लेखक यह आरोप लगाते हैं कि हम लोग नकलची हैं। यह बात नितान्त अर्थ-रहित नहीं है। एक अंग्रेज आलोचकने तो हमें सोख्ता कागजकी उपमा दी है। उसका मतलब है कि जैसे सोख्ता कागज फालतू स्याहीको सोख लेता है वैसे ही हम उनकी सभ्यताकी अनावश्यक बातों अथवा उनके दोषोंको ही ग्रहण करते हैं। हमें मानना चाहिए कि कुछ अंशोंमें हमारी ऐसी ही दशा हुई है। इस दशाके कारणोंपर विचार करते हुए मुझे तो ऐसा लगता है कि अंग्रेजीके माध्यमसे शिक्षा देना ही मूल दोष है। मैट्रिक तक की शिक्षा समाप्त करनेमें सामान्यतः बारह वर्ष लगते हैं। इन वर्षोंमें हमें अत्यन्त सामान्य ज्ञान मिलता है। किन्तु हमारा मुख्य प्रयत्न उस ज्ञानका समन्वय अपने व्यवहारसे करनेका या उसे व्यवहारमें लानेका नहीं होता, बल्कि किसी तरह अंग्रेजी भाषापर अधिकार प्राप्त करनेका होता है। विद्वानोंका मत यह है कि यदि सब लोगोंको मैट्रिक तक का ज्ञान मातृ-भाषाके माध्यमसे दिया जाये तो कमसे-कम पाँच वर्ष बच जायेंगे। इस प्रकार इन हमारे छात्रोंको मैट्रिक तक पढ़ानेमें लोगोंके पचास हजार वर्षोंकी हानि हुई। यह अत्यन्त गम्भीर निष्कर्ष है। इतना ही नहीं, हम इस प्रकार अपनी भाषाओंको निकम्मी बना रहे हैं। मैं प्रायः यह बात सुनता हूँ कि गुजरातीकी भाषा समृद्ध नहीं है; मुझे यह सुनकर क्रोध आता है। गुजराती संस्कृतकी प्यारी बेटी है। यदि यह सचमुच है तो इसमें भाषाका दोष नहीं है, बल्कि हम लोगोंका है जो इसके उपासक हैं। हमने इसकी उपेक्षा की है और उसे भुला दिया है। तब इसमें [illegible], कहाँसे आये? हम और हमारे परिवारोंके बीच व्यवधान उत्पन्न हो गया है। हमारे माँ-बापों, हमारी कुटुम्बियों, हमारे [illegible] [illegible]

उपेक्षा करते चले जाते हैं। कुछ लोगोंके मनमें तो अपनी मातृभाषाके प्रति तिरस्कार तक का भाव पैदा हो जाता है। हमारी अंग्रेजी, उच्चारण और व्याकरणकी दृष्टिसे अशुद्ध होती है; फिर भी हम अपना सारा व्यवहार अंग्रेजीमें ही करते हैं। हमने अभी अपनी भाषाओंमें विविध विज्ञानोंके पारिभाषिक शब्द नहीं गढ़े हैं और अंग्रेजी भाषामें आये हुए शब्दोंको हम भली-भाँति समझते नहीं हैं। कॉलेजका अध्ययन समाप्त होते-होते हमारी बुद्धि कुंठित हो चुकती है और शरीर अशक्त हो जाते हैं। दवाओंकी शीशियाँ हमसे जीवनभरके लिए चिपक जाती हैं। फिर भी लोग यह मानते हैं, और हम भी यही मानते हैं, कि लोगोंकी शोभा हमसे ही है, हम उनके संरक्षक हैं और उनका भविष्य हमारे ही हाथोंमें है।

यदि गुजरातके युवक कॉलेजोंसे निकलकर गम्भीरतापूर्वक विचार करके लोगोंकी संरक्षकता स्वीकार करेंगे तो मैं उन्हें बहुत साहसी मानूँगा। मैंने यद्यपि यहाँकी शिक्षा-पद्धतिका यह अति निराशाजनक चित्र खींचा है, फिर भी इस निराशामें पुष्ट आशाका बीज भी मौजूद है। इस लेखका आशय यह नहीं है कि अंग्रेजी भाषा किसीको पढ़नी ही नहीं चाहिए। जैसा रूसमें किया गया है और दक्षिण आफ्रिकामें और जापानमें किया जाता है, वैसा हम भी करें। जापानमें थोड़-से गिने-चुने लोगोंने अंग्रेजीका उच्च ज्ञान प्राप्त किया है और फिर यूरोपकी सभ्यतामें जो-कुछ ग्रहण करने योग्य है उसे जापानी भाषामें प्रस्तुत करके लोगोंके लिए सुलभ कर दिया है। इस प्रकार वे लोगोंको अंग्रेजी भाषाका ज्ञान प्राप्त करनेके व्यर्थ प्रयत्नसे बचा लेते हैं। अब हममें से बहुत-से लोग अंग्रेजीका ज्ञान प्राप्त कर चुके हैं। वे चाहें तो इसे बढ़ा लें और जिन्हें शरीर-सम्पत्ति अच्छी मिली हो एवं जिनका मानसिक उत्साह भी मन्द न हुआ हो वे अंग्रेजीमें और भाषाओंमें दिये गये लोक-हितकारी विचारोंको गुजराती भाषामें व्यक्त करें। हम अपनी शिक्षा-पद्धतिको सतत् प्रयत्नके द्वारा बदल सकते हैं और नये विज्ञानों एवं नये विचारोंका ज्ञान केवल गुजराती भाषाकी मार्फत दे सकते हैं। चिकित्सा-विज्ञान, नौका-विज्ञान या विद्युत्-विज्ञानका पूर्ण ज्ञान गुजराती भाषाके माध्यमसे नहीं दिया जा सकता, ऐसी कोई बात नहीं है। अंग्रेजी भाषा जाननेके बाद ही शरीरके विभिन्न अवयवोंका ज्ञान मिल सकता है अथवा तभी जीवित मनुष्यकी अस्थियोंका आपरेशन किया जा सकता है, ऐसा कोई अकाट्य तर्क नहीं है।

भारतमें कमसे-कम ८५ प्रतिशत लोग खेतीका धन्धा करते हैं, १० प्रतिशत लोगोंका धन्धा कारीगरी है। इस १० प्रतिशतमें ज्यादातर लोग कपड़ा बुननेका काम करते हैं एवं शेष पाँच प्रतिशत लोग विभिन्न धन्धे करते हैं। यदि पिछले वर्गके लोग सच्ची लोक-सेवा करना चाहते हैं तो उन्हें शेष ९५ प्रतिशत लोगोंके धन्धोंका कुछ ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। ९५ प्रतिशत लोग अपने पैतृक धन्धे करते हैं। उनका कर्त्तव्य है कि वे अपने-अपने धन्धोंका अच्छा ज्ञान प्राप्त करें। यदि यह खयाल ठीक हो तो खेती और बुनाई इन दो धन्धोंका ज्ञान हमारे स्कूलोंमें बचपनसे ही देनेकी व्यवस्था की जानी चाहिए। खेती करने और कपड़ा बुननेका अच्छा ज्ञान दिया जा सके ऐसी स्थिति लानेके लिए हमारे स्कूल, कस्बों और शहरोंके घनी आबादीवाले भागोंमें नहीं, बल्कि ऐसी जगहोंमें होने चाहिए जहाँ बड़े-बड़े खेत (फॉर्म) बनाये जा सकें और शिक्षा खुली हवामें दी जा

सकें। इन स्कूलोंमें छात्रोंके खेल-कूदके अन्तर्गत खेतोंमें हल चलाना आदि होना चाहिए। यह खयाल बिलकुल गलत है कि बालकों और युवकोंके जीवन फुटबाल और क्रिकेटके बिना नीरस हो जायेंगे। हमारे किसानोंके बालकोंको क्रिकेट खेलनेकी सुविधा नहीं मिलती; किन्तु फिर भी उनके जीवन निरानन्द या अलमस्तीसे खाली हों, ऐसा नहीं है। शिक्षण-पद्धतिमें ऐसा परिवर्तन कोई कठिन बात नहीं है। यदि ऐसा लोकमत बन जाये तो सरकारको यह परिवर्तन करना ही होगा। ऐसा लोकमत तैयार होनेसे पूर्व जिन लोगोंको ऊपर बताई गई शिक्षा-पद्धति पसन्द हो उन्हें प्रयोग करके देखना चाहिए। यदि लोग उनके प्रयत्नका शुभ परिणाम देखेंगे तो वे अपने-आप ही वैसा करनेकी इच्छा करेंगे। मेरी समझमें ऐसे प्रयोगोंके लिए ज्यादा खर्चेकी जरूरत नहीं है। किन्तु मैंने यह लेख व्यावसायिक दृष्टिसे नहीं लिखा है। इसे लिखनेका मुख्य हेतु यह है कि इस लेखको जो भी पढ़ें वे सच्ची शिक्षा क्या है, यह खोज करें और यदि इस खोजमें इस लेखसे कुछ सहायता मिले तो इसे लिखनेका प्रयत्न सफल माना जायेगा।

[गुजरातीसे]

समालोचक, अक्तूबर १९१६; तथा **प्रॉब्लम ऑफ एजुकेशन** से भी।

२१८. हिन्दुओंमें जाति-प्रथा[1]

मेरे खयालसे हिन्दू-समाज-रूपी इमारत जो अबतक खड़ी रह सकी है, इसका कारण जाति-प्रथाकी नींवपर उसका रचा जाना है। सर विलियम हंटरने अपनी पुस्तक 'भारतका इतिहास' में लिखा है कि हमें भारतमें जाति-प्रथा प्रचलित होनेसे ही निर्धनोंका कानून (पॉपर्स लॉ) नहीं बनाना पड़ा है। यह विचार मुझे ठीक जान पड़ता है। जाति-प्रथामें स्वराज्यका बीज निहित है। भिन्न-भिन्न जातियाँ सेनाके डिवीजनोंकी भाँति हैं। सेनानायक प्रत्येक सैनिकको नहीं पहचानता। पर उसके डिवीजनके मुख्य अधिकारीके द्वारा वह उससे लाभ ले लेता है; इसी तरह जाति-प्रथाको साधन बनाकर हम समाज-सुधारका कार्य सुगमतासे कर सकते हैं और अपने धार्मिक, व्यावहारिक, नैतिक और राजनीतिक चक्रोंको जिस प्रकार चाहें प्रवर्तित कर सकते हैं।

जाति-प्रथा नितान्त स्वाभाविक प्रथा है। इस देशमें उसे धार्मिक स्वरूप दे दिया गया है; अन्य देशोंमें उसकी उपयोगिता अच्छी तरह ध्यानमें नहीं आई। इससे वहाँ उक्त प्रथाका स्थूल रूप ही कायम रहा और फलतः उससे अधिक लाभ नहीं पहुँचा। मेरे ऐसे विचारोंके कारण जाति-प्रथाका मूलोच्छेद करनेके लिए जो प्रयत्न किया जा रहा है उसका मैं विरोधी हूँ।

परन्तु जाति-प्रथामें जो दोष दीख पड़ते हैं वे जरूर दूर किये जाने चाहिए। ऐसा करनेके लिए हमें पहले जाति-प्रथाके वास्तविक रूपका ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। मैं

१. यह लेख मूलतः एक मराठी मासिक पत्रिका **भारत सेवक**के अक्तूबर, १९१६ के अंकमें प्रकाशित हुआ था।

पहले कह चुका हूँ कि जातिको हमने धार्मिक स्वरूप दिया है; अर्थात् जाति केवल संयम रखनेका साधन है। जाति हमारे भोगोंकी परिसीमा निश्चित करती है, अर्थात् उसके बाहर भोग भोगनेका हमें अधिकार नहीं है। अन्य जातियोंके लोगोंके साथ हमारा रोटी-बेटीका सम्बन्ध नहीं हो सकता। इस योजनासे अनाचारमें कमी होना बहुत सम्भव है। सहभोजसे एकता बढ़ती है, यह बात अनुभवके विरुद्ध है। इससे मित्रता बढ़ती होती तो यूरोपमें वर्तमान महायुद्ध क्यों छिड़ता? सबसे अधिक झगड़े तो सम्बन्धियोंमें ही होते हैं। भोजनको व्यर्थ ही हमने इतना महत्त्व दिया है। भोजन-क्रिया उतनी ही गन्दी है जितनी कि शौच-क्रिया। अन्तर इतना ही है कि शौच-क्रियाके अनन्तर हमें शान्ति मिलती है और यदि जीभ वशमें न रखी जाये तो भोजनके बाद हमें बेचैनी होती है। जिस तरह हम लोग शौच आदि क्रियाएँ एकान्तमें करते हैं उसी तरह भोजन आदि क्रियाएँ भी जो हममें और पशुओंमें सामान्य हैं, हमें एकान्तमें ही करनी चाहिए। यदि यह वाक्य सत्य है कि "भोजन केवल शरीर चलानेके लिए है" तो स्पष्ट है कि इस सम्बन्धमें जितना कम आडम्बर किया जाये उतना ही अच्छा है।

जो बात भोजनके सम्बन्धमें कही गई है वही विवाहके सम्बन्धमें भी कही जा सकती है। जाति-विशेषका बाहरवालोंसे विवाह-सम्बन्ध न करना संयम ही है। और संयम सदा सुखद ही होता है। सम्बन्धके जालको जितना ही फैलायेंगे उतना ही संकट बढ़ता जायेगा। इसीलिए मुझे अपने ही वर्गके लोगोंमें वर-वधू ढूँढ़नेमें कोई द्वेष नहीं जान पड़ता। इंग्लैंडके "ब्ल्यू ब्लड" (अतिजातिवादी सिद्धान्त) का रहस्य भी यही है। लॉर्ड सेलिसबरी[1] कहते थे कि वे एलिजाबेथके वंशज हैं। यह बात उन्हें और ब्रिटिश जनता दोनोंको अभिमान करने योग्य लगती थी।

इस प्रकार भोजन और विवाह-सम्बन्धी बन्धन साधारणतः प्रशंसनीय हैं। इसमें अपवाद हैं और रहेंगे। यह बात हिन्दू-समाजने जाने या अनजाने स्वीकार की है। परन्तु वस्तुतः सोचें तो इसमें कोई अपवाद नहीं है। मैंने भंगीके साथ भोजन किया और इसीमें अपने विचारानुसार विशेष संयम समझा तो इस सम्बन्धमें जातिको कुछ नहीं करना है अथवा अपनी जातिमें अपने योग्य वधू न मिले तथा अविवाहित रहनेकी अवस्थामें विषय-लम्पट हो जानेकी सम्भावना हो, उस स्थितिमें यदि मैं किसी और जातिकी स्वानुरूप कन्यासे विवाह कर लूँ तो इसमें भी संयम होगा और इसलिए मेरा यह कार्य जाति-प्रथाके मूल तत्त्वोंके विरुद्ध नहीं होगा। पर इस कार्यमें, जो साधारण नियमका अपवाद है, मेरा उद्देश्य इन्द्रिय-दमन है; यह सिद्ध करनेकी जिम्मेदारी मुझपर है और यह मेरे भावी आचरणसे सिद्ध होगा। परन्तु जातिके सम्पूर्ण अधिकार मुझे न मिलें तो भी मुझे सन्तुष्ट रहकर जाति-सम्बन्धी अपने कर्त्तव्योंका पालन करते रहना चाहिए।

भोजन और विवाह-सम्बन्धी लाभोंके अतिरिक्त जातिप्रथासे और भी कितने ही लाभ हैं। उसमें प्राथमिक शिक्षाका साधन तैयार है। प्रत्येक जाति अपने भीतर शिक्षाकी व्यवस्था कर सकती है। संसद (पार्लमेंट) के निर्वाचनकी साधन-सामग्री भी उसमें प्रस्तुत है। प्रत्येक प्रतिष्ठित जाति अपने प्रतिनिधि निर्वाचित करेगी। झगड़े

१. (१८३०–१९०३); इंग्लैंडके प्रधान-मन्त्री, १८८५-६, १८८६–९२ और १८९५–१९०२।

निपटानेके लिए पंचायतें-अदालतें भी मौजूद हैं। हरएक जाति अपने-अपने झगड़ेका फैसला कर ले। यदि युद्धके लिए सेना खड़ी करनी हो तो जितनी जातियाँ हैं उतनी पल्टनें हमारे पास तैयार हैं। जाति-संस्थाकी जड़ भारतमें इतनी गहराई तक पहुँच चुकी है कि मेरे खयालसे उसे उखाड़नेकी अपेक्षा उसीमें सुधार करनेका प्रयत्न करना प्रशंसनीय जान पड़ता है। कुछ लोग कह सकते हैं कि जाति-प्रथा-सम्बन्धी पूर्वोक्त बातोंको सत्य मानें तो कहना पड़ेगा कि जातियोंकी संख्यामें जितनी वृद्धि हो उतना ही अच्छा है और यदि कभी ऐसा हो तो दस-दस लोगोंकी एक जाति बन जायेगी। यह विचार ठीक नहीं है। जातिकी उत्पत्ति अथवा नाश व्यक्ति अथवा समूह-विशेषकी इच्छापर अवलम्बित नहीं है। उसकी उत्पत्ति, नाश तथा संस्कार हिन्दू-समाजकी आवश्यकतानुसार हुआ है और अब भी होता है। हिन्दू-जाति प्रथा जड़ या निर्जीव प्रथा नहीं है, वह जीवित प्रथा है और अपने ही नियमके अनुसार अपना काम कर रही है। आज दुर्दैववश उसमें आडम्बर, ढोंग, विषय-लम्पटता, कलह आदि दोष दीख पड़ते हैं। पर इससे लोगोंमें चरित्र-बलका अभाव-मात्र सिद्ध होता है। इससे जाति-प्रथा दोषपूर्ण सिद्ध नहीं हो सकती।

[गुजरातीसे]

महात्मा गांधीनी विचारसृष्टि

२१९. भाषण : बम्बई प्रान्तीय सम्मेलन अहमदाबादमें[1]

अक्तूबर २१, १९१६

स्वागत समितिने सम्मेलनके आजके अधिवेशनके अध्यक्षपद ग्रहणके लिए [श्री. मुहम्मदअली जिन्नासे] प्रार्थना करनेका सम्मान मुझे दिया है, इसके लिए मैं उसका कृतज्ञ हूँ। कुछ दिन पूर्व जब मैं दिल्लीमें था तब मैंने वहाँ दीवाने-आम और दीवाने-खासमें[2] एक फारसी बैंत[3] पढ़ा था जिसका अर्थ यह है कि "यदि पृथ्वीपर स्वर्ग कहीं है तो वह यहीं है, यहीं है, यहीं है।" इस बैंतको पढ़कर मेरे मनमें जो भाव उत्पन्न हुआ वही भाव मेरे मनमें इस समय उत्पन्न हो रहा है। ये शब्द राज्यमद और धनमदके परिणाम थे। इस पृथ्वीपर ऐसा स्वर्ग नहीं हो सकता, क्योंकि काल-प्रवाहमें वह स्थान भी विनष्ट हो जायेगा। किन्तु हमें जो यह अवसर प्राप्त हुआ है, यदि हम इसका सदुपयोग करें तो हम निःसन्देह कभी सूक्ष्म स्वर्ग प्राप्त कर सकते हैं। आज यहाँ गर्म दल और नर्म दलके नेता मिले हैं। यह हमारे लिए कम गर्वकी बात नहीं है। भारत ऐसा देश है जो समशीतोष्ण कटिबन्धमें आता है। हम चाहते हैं कि

१. अक्तूबर २१, २२ और २३ को श्री मुहम्मद अली जिन्नाकी अध्यक्षतामें सम्पन्न।
२. दिल्लीके लाल किलेमें।
३. अगर फिरदौस बर रूए जमीं अस्त।
हमीं अस्तो हमीं अस्तो हमीं अस्त। –फिरदौस

सम्मेलनमें से एक ऐसा समशीतोष्ण दल उत्पन्न हो जो हमें जो-कुछ चाहिए वह सब दिला सके। अहमदावाद एक व्यापारिक नगर है और वह सभी कार्योंमें व्यावसायिक वृद्धि दिखाता है, यह स्वाभाविक है। उसने यह सोचा कि हमें ऐसा अध्यक्ष चाहिए जो इन दोनों दलोंके वीच शोभा पाये। इसलिए उसने एक विद्वान् मुसलमान सज्जनको चुनना ठीक समझा। अहमदावादने यह वुद्धिमत्ता पहली वार ही नहीं दिखाई है। उसने पहले भी अनेक वार यह वुद्धिमत्ता दिखाई है। हमारे अध्यक्ष श्री जिन्ना एक अच्छे वकील हैं। वे धारासभाके सदस्य हैं, इतना ही नहीं, वल्कि देशकी सबसे बड़ी इस्लामी संस्थाके अध्यक्ष हैं। उन्होंने एक छोटे-से सम्मेलनका अध्यक्ष-पद स्वीकार करके हमारे ऊपर वहुत उपकार किया है। इसलिए मुझे जो प्रसन्नता हुई है वह आपको भी हुई होगी। आप सभी लोगोंमें सभीके प्रति अपनेपनकी भावना होनी चाहिए। गर्म, नर्म, सूरती या काठियावाड़ी या अहमदावादी, हिन्दू या मुसलमान ये सभी हमारे हैं, ऐसा हम कहते हैं। हमारे अन्तरमें भी यही भावना होनी चाहिए। यदि हम ऐसा करें तो मुसलमान और अन्य लोग इस हदतक हमारे प्रेमके वश हो जायेंगे कि हमें पशु-रक्षाके निमित्त वड़ी-वड़ी संस्थाएँ नहीं वनानी पड़ेंगी; वल्कि मुसलमान भाई स्वयं ही अपने हिन्दू भाइयोंकी धार्मिक भावनाओंका खयाल करके पशु-वध वन्द कर देंगे। यदि हम अपनी भावना ऐसी वना लेंगे तो इस अवसरका और इस हलचलका लाभ हमें स्वतः ही मिल जायेगा। मैं जानता हूँ कि अध्यक्षका काम तलवारकी धारपर चलनेके समान दुष्कर है। मेरी इच्छा है कि उन्हें जो-जो महान् अधिकार प्राप्त हैं वे उनका पूरा लाभ अवश्य उठायें। मेरी ईश्वरसे प्रार्थना है कि वह उन्हें इस सम्मेलनके कार्यका संचालन करनेके लिए उपयुक्त दृढ़ता, ज्ञान और शक्ति दे।

[गुजरातीसे]

गुजराती, २९–१०–१९१६

२२०. भाषण: भारत प्रतिरक्षा कानूनके बारेमें

अक्तूबर २२, १९१६

अहमदावादमें हुए वम्बई प्रान्तीय सम्मेलनमें गांधीजीने २२ अक्तूबर १९१६ को निम्नलिखित प्रस्ताव पेश किया:

भारत प्रतिरक्षा कानूनका अमल किस प्रकार हो रहा है यह श्रीमती वेसेंट तथा अन्य लोगोंके हालके मामलोंसे प्रकट होता है। इस स्थितिको यह सम्मेलन गम्भीर चिन्ता तथा आशंकाकी दृष्टिसे देखता है और सरकारसे साग्रह अनुरोध करता है कि भारत प्रतिरक्षा कानूनके सम्बन्धमें भी उसी प्रकारके संरक्षण दिये जायें जिस प्रकारके संरक्षण इंग्लैंडमें साम्राज्य प्रतिरक्षा कानूनके सम्बन्धमें दिये गये हैं। यह सम्मेलन सादर प्रार्थना करता है कि श्रीमती एनी वेसेंटपर इस इलाकेकी सीमामें प्रवेश करनेके बारेमें जो प्रतिबन्ध लगाया गया है उसे सरकार जल्दीसे-जल्दी रद कर देनेकी कृपा करे।

गुजरातीमें बोलते हुए श्री गांधीने कहा : मेरे विचारमें श्रीमती एनी बेसेंट
केवल यही अपराध है कि वे सक्रिय रूपसे भारतमें स्वराज्यका आन्दोलन च
रही थीं, और यदि सरकारने उनपर इसी कारण प्रतिबन्ध लगाया है तो भूत
वाइसराय लॉर्ड हार्डिजपर भी इस इलाकेमें प्रवेश करनेपर प्रतिबन्ध लगाना उतना
उचित है, क्योंकि सर्वप्रथम यह प्रश्न उन्होंने उठाया था। इसके अलावा तीन अ
कारण हैं जिनके लिए हमें श्रीमती बेसेंटका साथ देना चाहिए। वे कारण ये हैं-
वीरता, दया और स्वार्थ। सरकारने वस्तुतः एक स्त्रीपर हाथ उठाया है, इसलि
अपनी वीरताके लिए प्रसिद्ध राष्ट्रके रूपमें हमें इस अपमानके निवारणके लिए शक्ति
प्रयत्न करना चाहिए। इसके बाद दयाका सवाल आता है। हमें सरकारपर द
आती है, क्योंकि वर्तमान कानूनके अन्तर्गत अपराधी व्यक्तिको ठीक मार्गपर लान
सभी अधिकार प्राप्त होनेपर भी उसने अपने इन अधिकारोंका प्रयोग एक महिल
विरुद्ध करना आवश्यक समझा है। अन्तमें यह प्रश्न स्वार्थका प्रश्न इसलिए है
हम श्रीमती बेसेंटको अपने इलाकेमें लाना चाहते हैं, क्योंकि उनसे अच्छा आन्दो
कोई भी नहीं चला सकता। यह तथ्य महत्त्वपूर्ण है कि सरकारी आदेशमें कोई का
नहीं दिया गया। मैं इस प्रस्तावकी स्वीकृतिके लिए हार्दिक अनुरोध करता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २४-१०-१९१६

२२१. प्रस्ताव : अहमदाबादमें गिरमिट-प्रथापर

अक्तूबर २३, १९

अहमदाबादमें बम्बई प्रान्तीय सम्मेलनके तीसरे और अन्तिम दिन, २३ अक्तूब
१९१६को गांधीजीने निम्नलिखित प्रस्ताव पेश किया :

यह सम्मेलन सरकारसे साग्रह अनुरोध करता है कि वह गिरमिट-प्रथाको जल्दी
जल्दी हटाये, क्योंकि यह प्रथा गुलामीका ही एक रूप है जो सामाजिक तथा राजनीति
दृष्टिसे मजदूरोंको पतित बना देती है और देशके आर्थिक तथा नैतिक हितोंके लिए ब
ही हानिप्रद है।

श्री गांधीने प्रस्ताव पेश करते हुए गुजरातीमें भाषण दिया और इस समय
विभिन्न कठिनाइयाँ सामने हैं उनपर प्रकाश डाला।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २४-१०-१९१६

२२२. भाषण : वीरमगाँव चुंगी-नाकेके सम्बन्धमें[1]

अक्तूबर २३, १९१६

गांधीजीने निम्न प्रस्ताव पेश किया :

यह सम्मेलन सरकारका ध्यान उस असुविधा, कठिनाई और परेशानीकी ओर आकर्षित करता है जो काठियावाड़से ब्रिटिश प्रदेशमें आनेवाले लोगोंको जकातके कारण उठानी पड़ती है। इसमें विशेषरूपसे वीरमगांवमें रेलवे स्टेशनपर जकात वसूल करनेका जो तरीका है और उसे जिस सख्तीसे वरता जाता है उसकी ओर वह सरकारका ध्यान विशेष रूपसे खींचता है एवं सरकारसे व्यग्रतापूर्वक प्रार्थना करता है कि वह जकात लेनेकी इस प्रथाको हटा दे।[2]

इस प्रस्तावको पेश करते हुए गांधीजीने कहा :

काठियावाड़के लोगोंपर दो सरकारोंका शासन है। वे देशी राजाओंकी प्रजा हैं और देशी राजा ब्रिटिश सरकारके अधीन हैं। इस जकातका उद्देश्य मूलतः विदेशोंसे आनेवाले मालको चुंगी दिये विना आनेसे रोकना है। उसको रोकनेकी व्यवस्था वन्दरगाहोंमें कर दी गई है; तव फिर लोगोंपर यह कर किस लिए लगाया जाना चाहिए। राजपुरकी चुंगी-चौकीके सम्वन्धमें श्रीयुत गोकुलदास पारेखने एक आवेदन दिया था। इस जकातसे स्त्रियोंको वहुत कष्ट सहना पड़ता है और अव इस कष्टको सहते-सहते वारह वर्ष हो गये।

[गुजरातीसे]

काठियावाड़ टाइम्स, १-११-१९१६

२२३. पत्र : अजितप्रसादको

अहमदावाद

नवम्वर १, १९१६

प्रिय श्री अजितप्रसाद,

मुझे खूब याद है कि मैं आपसे वम्वईमें मिला था।

मैंने पण्डित अर्जुनलालके सम्वन्धमें वर्षके प्रारम्भमें कार्रवाई की थी, किन्तु तभी मुझे मालूम हुआ कि उनके खिलाफ सरकारके पास निश्चित प्रमाण हैं। तवसे मेरा उत्साह मन्द पड़ गया है। मामलेमें आगे कदम उठानेसे पहले मैं उसपर आपसे वातचीत करना चाहता हूँ। आपका यह तर्क ठीक है कि हम विना शर्त छोड़ देनेकी नहीं, वल्कि

१. अहमदावादमें २१, २२ और २३ अक्तूवरको हुए वम्वई प्रान्तीय राजनैतिक सम्मेलनमें।
२. वॉम्वे सीक्रेट एव्स्ट्रैक्ट्स १९१६, पृष्ठ ९०७ से उद्धृत।

उचित रूपसे मुकदमा चलानेकी माँग करते हैं; किन्तु अपील सर्वाधिक प्रभावकारी तो केवल तभी बन सकती है जब सम्बन्धित पक्ष बिलकुल निरपराध हो। यदि मैं कांग्रेसके अधिवेशनमें लखनऊ आया तो हम सम्पूर्ण मामलेपर बातचीत करेंगे।

हृदयसे आपका
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी प्रति (जी० एन० १००) की फोटो-नकलसे।

२२४. भाषण: बढवानमें[1] राजचन्द्र जयन्तीके अवसरपर

नवम्बर ९, १९१६

श्रीयुत राजचन्द्रने परम वैराग्यमय जीवन बिताया था। इस सभामें दो प्रकारके लोग दिखाई देते हैं। एक वर्ग वह है जो श्रीयुत राजचन्द्रको पूज्य दृष्टिसे देखता है और दूसरा वह है जो केवल तमाशबीनके रूपमें यहाँ आया है। इस जयन्तीकी सफलता मुख्यतः पहले वर्गपर निर्भर है। श्रीयुत राजचन्द्रके प्रति जो पूज्य-भाव रखते हों, उन्हें अपना यह भाव व्यवहारमें परिणत करके दिखाना चाहिए। यदि उनके अनुयायी अपना व्यवहार अच्छा बनाकर दिखायेंगे तो समाजपर उसका बहुत असर होगा। धर्म आचारपर निर्भर है। यदि आप अपना आचार सुधार सकेंगे तो आप समाजको सुधार सकेंगे। श्रीयुत राजचन्द्रने मेरे मनपर बहुत गहरा असर डाला है। इसलिए मुझे उनके अनुयायियोंको कहना चाहिए कि श्रीयुत राजचन्द्रके नामको कायम रखना आपके ऊपर निर्भर है। आपको इन मूल पुरुषके आचार-विचारका निर्दोष अनुकरण करना चाहिए। यदि ऐसा न होगा तो ऐसी जयन्तियोंमें ढोंगका तत्त्व आ जायेगा। आप इस ढोंगको जैसे सम्भव हो वैसे दूर रखनेका प्रयत्न करें। यदि आपमें वस्तुतः भक्तिभाव होगा तो तमाशबीन लोग यहाँसे भक्तिका प्रभाव लेकर जायेंगे। जयन्तीकी सफलता मुख्यतः भक्तजनोंपर निर्भर है। भक्तोंको अपना चरित्र अत्यन्त उज्ज्वल बनाकर दिखाना चाहिए, मेरी यही विनम्र प्रार्थना है।

[गुजरातीसे]
काठियावाड़ टाइम्स, १२–११–१९१६

१. सौराष्ट्रमें एक शहर।

२२५. पत्र: ए० एच० वेस्टको

अहमदाबाद
दिसम्बर १२, १९१६

प्रिय वेस्ट,

पत्रके जिस मसविदेका उल्लेख पोलकने तुम्हारे नाम लिखे गये अपने संलग्न पत्रमें किया है यह वह मसविदा नहीं है। किन्तु मैं इस पत्रमें जो कह रहा हूँ उसमें उस मसविदेकी सभी बातोंका सार आ जाता है।

हम सबको तुम्हारे प्रस्तावपर विचार करनेके बाद यही लगा है कि अब हम सत्याग्रह-कोपकी सहायतापर निर्भर नहीं रह सकते। इस प्रकार सहायता प्राप्त करनेके सम्बन्धमें फीनिक्सके सभी न्यासी सहमत नहीं हैं। यहाँकी समिति अधिकसे-अधिक यही करेगी कि यदि 'इंडियन ओपिनियन' को चलानेके लिए कोषसे धन लिया जायगा तो वह उसे सहन कर लेगी। इसके सिवा यहाँके लोग भी इस प्रकार सहायता लेना बहुत ज्यादा नापसन्द करेंगे। ऐसी परिस्थितियोंमें हम केवल स्थानीय सहायताका ही सहारा ले सकते हैं — वह न मिले तो अखबारका आकार-प्रकार चाहे जिस हदतक कम कर सकते हैं। इस मामलेमें पूरा नियन्त्रण तुम्हारा होना चाहिए। यहाँ पर तुम्हारा कहनेसे अभिप्राय तुम, देवी,[1] साम[2] तथा जो व्यक्ति यहाँसे भेजा जाये उससे है।

मेरे विचारसे प्रागजीको अब निश्चित रूपसे चले जाना चाहिए। वे जाना चाहते हैं। भगा भी चला जायेगा। छगनलाल वहाँ आने तथा तुम्हारे अधीन निष्ठापूर्वक काम करनेके लिए तैयार है। या यदि तुम दायित्व न लेना चाहो तो तुम्हारे निष्ठापूर्ण सहयोगसे वह अखबार चलायेगा। मुझे पूरी आशा है कि तुम छगनलालकी वापसीसे सहमत होगे। यदि तुम सहमत न हुए तो मगनलाल अपने परिवारके साथ आयेगा और उपर्युक्त शर्तोंपर काम करेगा। और यदि तुम मगनलालकी वापसीके पक्षमें नहीं हो तो मणिलाल और रामदास भेजे जा सकते हैं। वे वस्तुतः तुम्हारे निरीक्षणमें ही काम कर सकते हैं। मणिलालको धीरे-धीरे गुजराती विभागका सम्पादन करनेमें कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए। इस समय तो वह जिस सामग्रीका अनुवाद तुम कराना चाहोगे उसीका अनुवाद करेगा।

यदि तुम छगनलालकी वापसीके पक्षमें हो तो केवल 'छगनलाल' लिखकर तार दो, मैं समझ जाऊँगा। यदि तुम मगनलालको चाहते हो तो केवल 'मगनलाल' लिखकर तार दो। और यदि तुम मणिलाल और रामदासको चाहते हो तो केवल 'मणिलाल' लिखकर तार दो। यदि तुम केवल मणिलालको चाहते हो तो 'मणिलाल रामदास नहीं' लिखकर तार दे सकते हो।

हिसाबके बारेमें फिर लिखूंगा। हमें अभी उसे छापनेकी आवश्यकता नहीं है। मुझे पेटिटको सिर्फ यही सूचित करना है कि हम शेष रकमका उपयोग किस प्रकार करना

१. वेस्टकी बहिन एडा, जिनका नाम गांधीजीने देवी रखा था।
२. गोविन्द सामी; इन्टरनेशनल प्रिंटिंग प्रेस, फीनिक्सके फोरमैन और शिकारी।

चाहते हैं। ट्रान्सवाल भारतीय महिला संघ [ट्रान्सवाल इंडियन वीमेन्स एसोसिएसन] का रुपया मेरे पास नहीं है। वह तुम्हारे पास जो रकम शेष है उसीमें है। तुम्हारा मतभेद हो तो भी तुमको कुमारी श्लेसिनके साथ सलाह करके उस वाजिब रुपयेको बैंकमें अलग जमा कर देना चाहिए और रसीद कुमारी श्लेसिनको दे देनी चाहिए। सदस्य चाहते हैं कि इसे बैंकमें जमा कर दिया जाये ताकि व्याज मिले और उनका यह सोचना ठीक है।

पोलक मद्रास गये हैं। मैं कांग्रेसके अधिवेशनमें जानेकी तैयारी कर रहा हूँ। मैं बहुतसे विषयोंपर लिखना चाहता हूँ, किन्तु प्रेस या फीनिक्सके बारेमें नहीं। किन्तु इसके लिए लखनऊसे मेरे वापस आने तक ठहरना होगा।

जब प्रागजीने मुझे यह सूचित किया कि तुम सब छगनलालको नहीं चाहते तो मैंने लिखा कि मैं उसे नहीं भेजूँगा। ऐसा ही पोलकने भी कहा है। किन्तु छगनलालके साथ बातचीत करने तथा यहाँकी स्थितिकी जाँच-पड़ताल करनेके बाद मैं इस निर्णयपर पहुँचा हूँ कि मुझे इसके बारेमें कमसे-कम तुम्हें बता देना चाहिए और तुमको ही इस बारेमें कुछ-न-कुछ निर्णय करने देना चाहिए।

तुम सबको प्यार।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी प्रति (सी० डब्ल्यू० ४४२५) की फोटो-नकलसे।
सौजन्य : ए० एच० वेस्ट

२२६. भाषण : म्योर कॉलेज, इलाहाबादमें

दिसम्बर २२, १९१६

श्री गांधीने म्योर सेंट्रल कॉलेज, इलाहाबादकी अर्थशास्त्र विभाग-समिति (इकॉनमिक सोसाइटी) के तत्त्वावधानमें आयोजित एक सभामें एक सारगर्भित भाषण दिया। सभाके अध्यक्ष माननीय पं० मदनमोहन मालवीय थे। सभामें आये हुए प्रतिष्ठित व्यक्तियोंमें माननीय डा० तेजबहादुर सप्रू, माननीय डा० सुन्दरलाल,[1] श्री एच० एस० एल० पोलक, श्री सी० वाई० चिन्तामणि[2], श्री शिवप्रसाद गुप्त[3], श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन[4] तथा डॉ० ई० जी० हिलके[5] नाम उल्लेखनीय हैं। व्याख्यानका विषय था : "क्या आर्थिक

१. प्रतिष्ठित वकील और इलाहाबाद वि० वि० के उपकुलपति।
२. सर चिरावुरी यज्ञेश्वर चिंतामणि (१८८०–१९४१); इलाहाबादके प्रसिद्ध दैनिक पत्र लीडरके सम्पादक।
३. बनारसके प्रख्यात हिन्दी-प्रेमी तथा देशसेवक।
४. (१८८५–१९६२); प्रख्यात हिन्दी-प्रेमी और देशभक्त।
५. म्योर कॉलेजके प्रधानाध्यापक।

उन्नति वास्तविक उन्नतिके विपरीत बैठती है?" अध्यक्षके द्वारा श्री गांधीका परिचय दिये जानेके पश्चात् श्री गांधीका व्याख्यान प्रारम्भ हुआ। वह इस प्रकार है:

प्रस्तुत विषयपर आप लोगोंके समक्ष बोलनेके लिए आज जब मैंने पं० कपिलदेव मालवीयका निमन्त्रण स्वीकार किया उस समय मेरा ध्यान अपनी सीमाओंकी ओर गया और मुझे अपनी कमियोंपर खेद भी हुआ। आपकी समिति [इकॉनमिक सोसाइटी] अर्थशास्त्रीय विषयोंके अध्ययनसे सम्बन्ध रखती है। और आपने अपनी कार्यक्रम-पत्रिकामें इस वर्ष तथा अगले वर्षके लिए नियत किये गये विषयोंपर भाषण देनेके निमित्त प्रख्यात विशेषज्ञोंको चुन रखा है। उनमें केवल मैं ही ऐसा आदमी हूँ जिसमें सौंपे हुए कार्यको सुचारु रूपसे निबाहनेकी क्षमता नहीं है। सच कहूँ तो वास्तवमें आप लोग अर्थशास्त्रको जिस रूपमें जानते हैं उस रूपमें इस विषयका मेरा ज्ञान बहुत ही स्वल्प है। अभी एक दिन शामको मैं एक मित्रके साथ भोजन कर रहा था। तभी उसने मेरे खब्तोंके बारेमें सवालोंकी झड़ी लगा दी। चूँकि मैंने स्वेच्छासे ही अपनेको उसकी जिरहका शिकार बन जाने दिया, उसे बड़ी आसानीसे यह मालूम हो गया कि उसकी समझमें मैं जिन विषयोंपर किसी ज्ञान-बन्धुकी तरह बोलता-बताता हूँ उनमें मैं बिलकुल कोरा हूँ। और मुझे अपने अज्ञानकी खबर नहीं है। मेरा खयाल है कि जब उसे यह मालूम हुआ कि मैंने मिल, मार्शल, एडम स्मिथ जैसे विख्यात अर्थशास्त्रियोंके ग्रन्थोंका अवलोकन तक नहीं किया है तब उसे बड़ा अचम्भा हुआ और उसे मेरे प्रति झुँझलाहट भी हुई। हताश होकर उसने अन्तमें मुझे यही सलाह दी कि मैं अर्थशास्त्र सम्बन्धी मामलोंपर प्रयोग करने और इस प्रकार जनसाधारणके समय और धनका दुरुपयोग करनेके पूर्व उपरोक्त लेखकोंकी कृतियोंको पढ़ जाऊँ। उस बेचारेको यह मालूम न था कि मैं ऐसा व्यक्ति हूँ कि उन पुस्तकोंको पढ़ जानेपर भी मूढ़का-मूढ़ ही रहूँगा। मैं अपने उन मित्रोंके बलपर जो मुझमें विश्वास रखते हैं अपने प्रयोग करता ही रहता हूँ, क्योंकि जीवनमें कभी ऐसा अवसर भी आता है जब हमें कुछ बातोंके बारेमें बाहरी प्रमाणकी आवश्यकता नहीं रह जाती। हमारे अन्तरात्मासे यह ध्वनि निकलती है कि "तुम ठीक रास्ते पर हो, दायें-बायें मुड़े बिना सीधे चलते चले जाओ।" इस प्रकारकी सहायताके सहारे हम धीमे ही सही आगेकी ओर निश्चित रूपसे निरन्तर बढ़ते जाते हैं; मेरी यही स्थिति है। यह स्थिति मेरे लिए तो सन्तोषजनक हो सकती है; परन्तु आपकी-जैसी संस्थाओंकी आवश्यकताएँ उससे किसी भी प्रकार पूरी नहीं हो सकतीं। इस सबके होते हुए भी पं० कपिलदेव मालवीयको मेरा नाम व्याख्यान-दाताओंकी सूचीमें न रखनेके लिए समझाना-बुझाना व्यर्थ था। मैं जानता था कि वे आप लोगोंके समक्ष किसी-न-किसी दिन मेरा भाषण करानेपर तुले हुए हैं। शायद मेरे आजके भाषणको सुनकर आप मनमें यही सोचेंगे कि चलो अच्छा हुआ रोज-ब-रोज एक ही तरहके सिद्धान्तोंके प्रतिपादन और उनकी बारीकियोंके निरूपणसे एक दिन तो विश्राम मिला। बहुत दिनों तक लगातार स्वादिष्ट भोजन करते रहनेपर बीच-बीचमें लंघन करना प्रायः आवश्यक हो जाया करता है। जो बात शरीरके लिए कही जा सकती है वही मस्तिष्कके लिए भी। और यदि आज आपके मस्तिष्कको बढ़िया-बढ़िया व्यंजन न मिलें और वह भूखा ही रह जाये तो,

निश्चय ही आप लोग आगामी १२ तारीखको रायबहादुर पं० चन्द्रिकाप्रसादका भाषण सुनकर अधिक तृप्तिका अनुभव करेंगे।

मेरे निजी अनुभवों और प्रयोगोंको सुननेके पूर्व यह उचित होगा कि हम लोग पहले आजके व्याख्यानके शीर्षकके अर्थके बारेमें आपसमें सहमत हो लें। हमारे व्याख्यानका विषय है: "क्या आर्थिक उन्नति वास्तविक उन्नतिके विपरीत बैठती है?" मेरा खयाल है कि आर्थिक उन्नतिका अर्थ हम "सीमा-विहीन भौतिक प्रगति" लगाते हैं और वास्तविक उन्नति को हम "नैतिक प्रगति" का पर्याय मानते हैं। यह नैतिक प्रगति हमारे ऊपर अन्तरमें रहनेवाले शाश्वत अंशके विकासके सिवा और क्या है? अतएव प्रस्तुत विषयको दूसरे शब्दोंमें इस प्रकार रखा जा सकता है: क्या नैतिक उन्नति उसी अनुपातमें नहीं हुआ करती जिस अनुपातमें भौतिक उन्नति होती है? मैं जानता हूँ कि यह विषय प्रस्तुत विषयकी अपेक्षा अधिक व्यापक है, परन्तु मेरा खयाल है कि छोटे प्रश्नको उठाते समय भी हमारा अभिप्राय बड़े प्रश्नसे ही रहा करता है। हममें विज्ञानकी इतनी जानकारी जरूर है कि हमारे इस गोचर विश्वमें पूर्ण गतिशून्यता-जैसी कोई वस्तु नहीं हैं। इसलिए यदि भौतिक उन्नति नैतिक प्रगतिके विरोधमें नहीं पड़ती तो वह उसके विकासमें सहायक हुए बिना नहीं रह सकती। और फिर अपनेको वृहत्तर समस्याका समर्थन करनेमें असमर्थ पानेवाले व्यक्ति कभी-कभी जिस भद्दे ढंगसे अपनी बात सामने रखते हैं हमें उससे भी सन्तोष नहीं हो सकता।

स्वर्गीय सर विलियम विल्सन हंटरने कहा है कि भारतमें तीन करोड़ व्यक्ति केवल एक वक्त खाकर बसर करते हैं — मालूम होता है कि लोग इसी कथनको इतना सत्य मान बैठे हैं कि दूसरी कोई बात उनके दिमागोंमें घुस ही नहीं सकती। वे कहते हैं कि लोगोंकी नैतिक उन्नतिकी बात सोचने या उसका जिक्र करनेके पहले हमें उनकी रोज-रोजकी जरूरतें पूरी करनी चाहिए। उनका कहना है कि इनके लिए भौतिक उन्नति ही उन्नति है। इसके बाद वे एकदम एक लम्बी छलाँग लगाकर इस निष्कर्षपर जा पहुँचते हैं कि जो बात ३ करोड़के बारेमें सत्य है वही समस्त संसारके लिए भी है। वे भूल जाते हैं कि अपवादरूप मामलोंके आधारपर कोई नियम निर्धारित नहीं किया जा सकता। यह कहना आवश्यक नहीं है कि यह निष्कर्ष कितना गलत है और हास्यास्पद है। यह तो आजतक किसीने भी नहीं कहा कि अतिशय दरिद्रता नैतिक पतनके अतिरिक्त कुछ और दे सकती है। प्रत्येक मनुष्यको जीवित रहनेका अधिकार और इसलिए उसे पेट भरनेके लिए भोजन तथा आवश्यकतानुसार तन ढकनेके लिए वस्त्र और रहनेके लिए मकान मुहैया करनेका अधिकार है। परन्तु इस बिलकुल मामूलीसे कामके लिए हमें अर्थशास्त्रियों अथवा उनके द्वारा गढ़े गये विषयोंकी मददकी जरूरत नहीं है।

संसारके सभी धर्म-ग्रंथोंमें इस आशयके आदेश मिलते हैं कि 'कलकी चिन्ता मत करो।' किसी भी सुव्यवस्थित समाजमें रोजी कमाना सबसे सुगम बात होनी चाहिए और हुआ करती है। निस्सन्देह किसी देशकी सुव्यवस्थाकी पहचान यह नहीं है कि उसमें कितने लखपति लोग रहते हैं बल्कि यह कि जनसाधारणका कोई भी व्यक्ति भूखों तो नहीं मर रहा है। अब केवल यही बात देखनी रह जाती है कि भौतिक

उन्नतिका अर्थ ही नैतिक उन्नति है — यह सब जगह और सब समयमें लागू होनेवाला नियम माना जा सकता है या नहीं।

आइये अब कुछ दृष्टान्त लें। भौतिक उन्नतिके उच्च शिखर तक पहुँचते ही रोमन लोगोंका नैतिक पतन आरम्भ हो गया। मिस्र देशमें भी यही हुआ। और कदाचित् उन सभी देशोंमें भी, जिनका इतिहास हमें उपलब्ध है, ऐसा ही हुआ है। परमात्माकी विभूतियोंसे विभूषित कृष्णचन्द्रजी महाराजके कुटुम्बियोंका — यादवोंका — भी, जब वे खूब दौलतमन्द होकर गुलछर्रे उड़ाने लगे, पतन हो गया। अमेरिकाके प्रसिद्ध धनी रॉकफैलर और कारनेगी या ऐसे ही दूसरे लोगोंमें सामान्य नैतिकताका अभाव है ऐसा मैं नहीं कह रहा हूँ, परन्तु हम लोग उनके अवगुणोंकी ओर ध्यान न देकर उनकी प्रशंसा ही किया करते हैं। मेरे कहनेका मतलब यह है कि हम उनसे नैतिकताकी कड़ीसे-कड़ी कसौटीपर खरे उतरनेकी आशा भी नहीं करते। उनके लिए भौतिक उन्नतिका अनिवार्य परिणाम नैतिक उन्नति नहीं हुआ। दक्षिण आफ्रिकामें मुझे अपने हजारों देशवासियोंके निकट सम्पर्कमें आनेका सौभाग्य प्राप्त था; मैंने वहाँ लगभग सदा यही देखा कि आर्थिक दृष्टिसे जो जितना सम्पन्न होता था उसका नैतिक स्तर गया-गुजरा होता था। और कुछ नहीं तो इतना तो कहा ही जा सकता है कि सत्याग्रहके हमारे नैतिक संघर्षको गरीबोंसे जितना बल मिला, उतना अमीरोंसे नहीं। यहाँकी स्थितिको देखकर धनाढ्य लोगोंके स्वाभिमानको वैसी ठेस नहीं लगती थी जैसी निर्धनसे-निर्धन व्यक्तियोंके हृदयोंको पहुँचती थी। वैसे तो मैं अपने देशके ही दृष्टान्त देकर आपके सामने यह प्रमाणित कर देता कि धन-सम्पत्तिका बाहुल्य व्यक्तियोंकी वास्तविक उन्नतिके मार्गमें बाधक हुआ है। किन्तु वैसा करना खतरेसे खाली नहीं है। मेरा खयाल है कि अर्थशास्त्र सम्बन्धी नियमोंके बारेमें अर्थशास्त्रके बदले हमारे धर्मग्रन्थ हमारा अधिक उचित मार्गदर्शन करते हैं। आज जिस प्रश्नकी चर्चा हम कर रहे हैं वह नया नहीं है। दो हजार वर्ष पूर्व ईसा मसीहसे भी वही प्रश्न पूछा गया था। संत मार्कने उस दृश्यका बड़ा सजीव चित्रण किया है। ईसा सामने विराजमान हैं, उनका भाव शान्त, उदार है और मुद्रा धीर-गम्भीर। वे अमरताके सम्बन्धमें कुछ कहते हैं। अपने आसपासके संसारका उनको पूरा ज्ञान है। वे स्वयं अपने कालके सबसे बड़े अर्थशास्त्री हैं। देश और कालको नाथकर, उसका अधिकतम सदुपयोग करके, वे देश और कालसे ऊपर उठ चुके हैं। ऐसे सर्व-सम्पन्न (परमश्रेष्ठ) ईसाके पास एक जिज्ञासु हाँफता हुआ आता है, घुटने टेककर नमन करता और पूछता है:

"हे कृपासिन्धु प्रभु, बताइये मैं किस रास्ते चलूँ कि मैं अविनाशी जीवनकी विरासत पा जाऊँ?" ईसाने उससे कहा: "तुम मुझे कृपासिन्धु क्यों कहते हो? एकको छोड़कर और कोई कृपासिन्धु है ही नहीं — और वह है परमात्मा। तुम धर्मानुशासनों (कमांडमेंट्स) से परिचित हो। व्यभिचार मत करो, जीवहत्या मत करो, चोरी मत करो, झूठी गवाही मत दो, किसीके साथ कपटका व्यवहार मत करो, अपने माता-पिताका आदर करो।" उस व्यक्तिने उत्तरमें कहा, "प्रभो! इन सब उपदेशोंपर मैंने युवावस्थासे ही आचरण किया है।" इसपर ईसाने उसे धन्यवाद दिया। उन्होंने उसपर स्नेह वर्षा करते हुए कहा — "तुममें एक बातकी कमी रह गई है: लौट जाओ, जो कुछ तुम्हारे पास है उसे बेच डालो और इस प्रकार प्राप्त धनको गरीबोंमें बाँट दो, तो तुम्हें स्वर्गकी

निधि प्राप्त होगी। आओ इस क्रॉसको हाथमें ले लो और मेरे पीछे-पीछे चलो।" यह सुनकर वह व्यक्ति उदास हो गया और चल दिया, क्योंकि उसके पास बहुत बड़ी जायदाद थी। ईसा मसीहने इधर-उधर निगाह दौड़ाई और अपने शिष्योंसे कहा, "जिनके पास दौलत है वे ईश्वरके राज्यमें किस प्रकार प्रवेश पा सकते हैं?" यह सुनकर शिष्यगण अचम्भेमें आ गये। परन्तु ईसाने उनसे बार-बार कहा, "बच्चो! जो लोग अपनी दौलतपर भरोसा करते हैं उनके लिए ईश्वरके राज्यमें प्रवेश पाना कितना दुष्कर है। सुईके छेदसे होकर ऊँटका गुजर जाना आसान है, परन्तु धनाढ्य व्यक्तिके लिए ईश्वरके राज्यमें प्रवेश कर पाना कठिन है।" इस दृष्टान्तमें जीवनका शाश्वत नियम अत्यन्त सुन्दर शब्दोंमें व्यक्त है। परन्तु शिष्योंको प्रतीति नहीं हुई। आजकल भी ऐसा ही देखनेमें आता है। ईसा मसीहसे उन्होंने कहा जैसा कि आजकल हम कहा करते हैं, "व्यवहारमें तो यह नियम चलता नहीं है। अगर हम सब-कुछ बेच डालें, अपने पास कुछ न रखें, तो खायेंगे क्या? हमारे पास रुपया होना ही चाहिए वरना हम सामान्यरूपसे भी नीतिवान् नहीं बने रह सकते।" वे आश्चर्यचकित स्वरमें आपसमें कहने लगे, "तो फिर परित्राण किसका सम्भव है?" ईसामसीहने उनकी ओर मुखातिब होकर कहा, "मनुष्यके लिए यह असम्भव जरूर है परन्तु ईश्वरके लिए नहीं। क्योंकि ईश्वरके लिए हरएक काम सम्भव है।" उसके पश्चात् पीटरने उनसे कहा, "देखिए हम लोगोंने अपना सब-कुछ त्याग दिया है। हमने आपके आदेशका पालन भी किया है।" ईसामसीहने उत्तरमें कहा — "सत्य मानो जिसने भी अपना घर, भाई-बहिन, माता-पिता, पुत्र-कलत्र, जमीन इत्यादिका मेरे तथा धर्मके निमित्त त्याग किया हो, उसे यहाँ यह सब सौगुना मिलेगा। बेशक उसे अत्याचार सहनेके लिए भी तैयार रहना होगा — और परलोकमें मोक्ष मिलेगा। परन्तु लोगोंमें से बहुतेरे जो आज आगे हैं पीछे रह जायेंगे और पीछे की पंक्तिवाला आगे पहुँच जायेगा।" सज्जनो, नीतिका फल अथवा, यदि यह शब्द आपको ठीक लगे तो नीतिका पुरस्कार यही है।

मैंने ये वाक्य एक ऐसे धर्म-ग्रन्थसे उद्धृत किये हैं जो हिन्दू धर्मका ग्रंथ नहीं है। मैं अन्य अहिन्दू ग्रंथोंसे उपरोक्त प्रकारके वाक्य उद्धृत करनेकी परेशानीमें नहीं पड़ूँगा और ईसा मसीह द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तके समर्थनमें मैं भारतीय ऋषि-मुनियों द्वारा कहे या लिखे गये वाक्योंको, ऐसे वाक्य जो इंजील (बाइबिल) के उपर्युक्त वाक्योंसे सम्भवतः अधिक जोरदार हैं, उद्धृत करके आपको खिन्न नहीं करूँगा। प्रस्तुत प्रश्नके इस उत्तरके अनुमोदनके लिए सबसे अधिक विश्वसनीय और जोरदार प्रमाण संसारके सबसे बड़े उपदेशकोंके जीवनचरित्र हैं। ईसा मसीह, मुहम्मद, बुद्ध, नानक, कबीर, चैतन्य, शंकराचार्य, दयानन्द, रामकृष्ण ऐसे व्यक्ति थे जिनका लाखों नरनारियोंके हृदयोंपर प्रभाव था और जिन्होंने असंख्य व्यक्तियोंका चरित्र गढ़ा है। ये महापुरुष इस पृथ्वीपर अवतरित हुए, और उनके अवतरित होनेसे विश्वकी नैतिकतामें समृद्धि हुई; ध्यान रहे कि ये सब ऐसे व्यक्ति थे जिन्होंने जानबूझकर गरीबीको अपनाया था।

यदि मेरा यह विश्वास न होता कि जिस हद तक हम आधुनिक भौतिकवादके पीछे दीवाने बने रहेंगे उस हद तक हम उन्नतिके मार्गसे दूर रहकर अवनतिकी दिशामें अग्रसर होते जायेंगे, तो मैंने आज जो इस प्रकार विस्तारपूर्वक अपनी बात आपके

सामने रखनेका प्रयास किया है सो कदापि न करता। मेरी धारणा है कि आर्थिक उन्नति, उस अर्थमें जिसमें उसे मैंने आपके समक्ष रखा है, वास्तविक उन्नतिके विरुद्ध पड़ती है। यही कारण है कि हमारा प्राचीन आदर्श धनसम्पत्तिमें वृद्धि करनेवाली गतिविधियोंपर नियन्त्रण रखना रहा है। इससे भौतिक समृद्धिकी आकांक्षा समाप्त हो जाती हो, सो बात नहीं है। हमारे मध्य जैसा कि सदासे होता आया है अब भी ऐसे व्यक्ति पैदा होते रहेंगे जिन्होंने अपने जीवनका लक्ष्य धन अर्जित करना ही बना रखा है। परन्तु हमारा सदासे ही यह विचार रहा है कि धनोपार्जनको लक्ष्य बना लेना आदर्शसे गिर जाना है। आपको यह जानकर आनन्द होगा कि हममें से सबसे अधिक धनवान व्यक्तियोंने प्रायः यह अनुभव किया है कि यदि हमने स्वेच्छासे निर्धनता अपनाई होती तो वह स्थिति हमारे लिए उच्चतर होती। परमेश्वर और माया दोनोंको एक साथ नहीं साधा जा सकता। यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण आर्थिक सत्य है। हमें इन दोनोंमें से एकको चुन लेना है। आज पाश्चात्य देश भौतिकवाद रूपी राक्षसके पाँवों तले पड़े हुए कराह रहे हैं। उनकी नैतिक उन्नतिको जैसे लकवा मार गया है; वे अपनी उन्नतिका मापदण्ड रुपया, आना, पाई बनाये हुए हैं। अमेरिकाकी दौलत उनका मानदण्ड बनी हुई है। अन्य राष्ट्र उसीके समान धनाढ्य बननेकी इच्छा रखने लगे हैं। मैंने अपने अनेक देशवासियोंको यह कहते सुना है कि हम अमेरिकाकी तरह धनवान तो होना पसन्द करेंगे परन्तु उसके तरीके न अपनायेंगे। मेरा नम्र निवेदन है कि यदि इस प्रकारका प्रयास किया गया तो वह असफल हुए बिना न रहेगा। हम एक ही समयमें "बुद्धिमान, संयमशील और क्रूर" नहीं हो सकते। मैं अपने नेताओंसे इस बातकी अपेक्षा करूँगा कि वे हमें संसार-भरमें सबसे अधिक नीतिमान् बनना सिखायें। हमें बताया गया है कि हमारे इस देशमें किसी समय देवता निवास करते थे। जिस देशको मिलोंकी चिमनियोंसे निकलनेवाला धुँआँ और कारखानोंका कर्कश स्वर भयजनक बनाये हुए है, जिसकी सड़कोंपर मुसाफिरोंसे खचाखच भरी असंख्य मोटरगाड़ियाँ तेजीके साथ इधरसे-उधर दौड़ रही हैं और जिसकी इन मोटरगाड़ियों-में लक्ष्यको भूले हुए ऐसे यात्री सवार हैं, जो प्रायः भ्रांतचित्त रहा करते हैं और जिन्हें उन वाहनोंमें भेड़-बकरीकी तरह भर दिये जानेके कारण तथा बिलकुल अपरिचित, असहिष्णु, विद्वेषपूर्ण व्यक्तियोंके साथ — जो यदि उनका बस चले तो परस्पर एक-दूसरेको निकाल बाहर करते — यात्रा करनेके लिए विवश होनेके कारण अपना होश नहीं रहता, उस देशमें देवताओंका निवास असंभव है। मैं इन बातोंका जिक्र इसलिए कर रहा हूँ कि ये भौतिक उन्नतिकी प्रतीक मानी जाती हैं। परन्तु इनसे हमारी सुख-समृद्धिमें किंचित् भी वृद्धि नहीं होती। महान् वैज्ञानिक वैलेस अपने सुचिन्तित विचार इन शब्दोंमें व्यक्त करते हैं:

> अतीत-कालसे चला आनेवाला साहित्य जो हमें आज उपलब्ध है उससे स्पष्टतः प्रकट होता है कि आज जो सामान्य नैतिक विचार और धारणाएँ, नैतिकताका सर्वस्वीकृत मानदण्ड और इनसे उत्पन्न होनेवाला जो पारस्परिक व्यवहार देखनेमें आता है वह आजकी अपेक्षा प्राचीन कालमें किसी प्रकार भी कम न था।

वही लेखक अनेक परिच्छेदोंमें इस बातका विवेचन करता है कि ब्रिटिश राष्ट्रकी धन-सम्पत्तिकी वृद्धिके साथ-साथ क्या दशा हुई। वह कहता है:

> **धन-सम्पत्तिकी इस वेगवती उन्नति तथा प्रकृतिपर हमारा प्रभुत्व स्थापित होनेके फलस्वरूप हमारी अपरिपक्व सभ्यता और हमारे दिखावटी ईसाई धर्मपर बहुत बड़ा बोझ आ पड़ा है। और यह उन्नति अपने साथ अनीतिको उसके नाना प्रकारके रूपोंमें लाई है जो उतने ही आश्चर्यजनक और अभूतपूर्व हैं जितनी कि सम्पत्तिकी वृद्धि।**

आगे चलकर वे बताते हैं कि किस प्रकार आदमियों, औरतों और बच्चोंकी लाशोंपर कारखाने खड़े किये गये हैं और किस प्रकार ज्यों-ज्यों वह देश तेजीसे धनवान बनता गया त्यों-त्यों उसका नैतिक पतन होता गया। वे अपनी इस बातके प्रमाणमें अस्वच्छता, प्राणघातक व्यवसाय, जिन्सोंमें मिलावट, रिश्वतखोरी, जुआ इत्यादिका उल्लेख करते हैं। वे यह भी सिद्ध करते हैं कि ज्यों-ज्यों दौलत बढ़ती गई त्यों-त्यों न्यायमें अनैतिकता आती गई, मद्यपानके कारण मृत्यु संख्या और आत्मघातकी घटनाओंमें वृद्धि हुई है, समयसे पूर्व प्रसव और तत्सम्बन्धी खराबियाँ बढ़ गई हैं और वेश्यागमनने संस्थाका रूप धारण कर लिया है। लेखकने वर्तमान अधोगतिका वर्णन इन सारगर्भित शब्दोंमें समाप्त किया है:

> **दौलत और निठल्लेपनके परिणामोंके दूसरे पहलुओंके बारेमें हम तलाक-अदालतोंके कार्य-विवरणसे बहुत-कुछ जान सकते हैं। मेरे एक मित्र हैं जो लन्दनमें बहुत अर्से तक रहे हैं। वे निश्चयात्मकरूपसे कहते हैं कि धनिकोंके देहाती घरोंमें और खुद लन्दन शहरमें ऐसी-ऐसी बदमाशियाँ प्रायः देखनेमें आती हैं जैसी बड़ेसे-बड़े दुराचारी सम्राटोंके शासनकालमें भी न हुई होंगी। युद्धके विषयमें मुझे कुछ कहना ही नहीं है। रोम साम्राज्यके उत्थानके दिनोंसे युद्ध जल्दी-जल्दी होने लगे हैं, परन्तु निश्चय ही आज सभी सभ्य राष्ट्रोंमें युद्धके प्रति भारी अरुचि उत्पन्न हो गई है। शान्तिके पक्षमें उत्कट धार्मिक भावनाके साथ की गई घोषणाओंके संदर्भमें शस्त्रास्त्रोंके उस भंडारका विचार करें, जिसका राष्ट्रोंने संग्रह कर रखा है, तो उससे यही प्रकट होता है कि शासक-वर्गोंमें एक व्यावहारिक मार्गदर्शक सिद्धान्तके रूपमें नैतिकताका पूर्ण अभाव हो गया है।**

ब्रिटिश छत्रछायामें हमने बहुत-कुछ सीखा है, परन्तु यह मेरा निश्चित मत है कि ब्रिटेन यथार्थ नैतिकताकी दिशामें कुछ भी देनेमें असमर्थ है। मेरी यह भी धारणा है कि यदि हम जागरूक न रहे तो उन सब अवगुणोंका, जिनका ब्रिटेन शिकार बना है, समावेश हो जायेगा। इसका कारण भौतिकवादसे उत्पन्न होनेवाले दोषोंके सिवा और कुछ नहीं है। हम उस सम्बन्धसे उसी दशामें लाभ उठा सकते हैं जब हम अपनी सभ्यता और अपनी नैतिकताको विचलित न होने दें अर्थात् यदि हम अपने गौरवमय अतीतकी डींग न हाँककर स्वयं अपने जीवनमें उन दिव्य गुणोंको उतारें और हमारा जीवन हमारे भूतकालकी साक्षी दे। उसी हालतमें हम उसे [ब्रिटेनको] तथा स्वयं अपनेको लाभ पहुँचा

सकेंगे। यदि हम ब्रिटेनकी नकल इसलिए करते हैं कि हमारा शासक-वर्ग वहाँका है तो हमारी और उन दोनोंकी अवनति होगी। हमें आदर्शोंसे अथवा आदर्शोंको पूर्णतया कार्यान्वित करनेसे भयभीत नहीं होना चाहिए। हमारा राष्ट्र सच्चे अर्थमें आध्यात्मिक राष्ट्र उसी दिन होगा जब हमारे पास सोनेकी अपेक्षा सत्यका भण्डार अधिक होगा, धन और शक्तिके प्रदर्शनकी अपेक्षा निर्भयता अधिक होगी और अपने प्रति प्रेमकी अपेक्षा दूसरोंके प्रति उदारता अधिक होगी। यदि हम केवल इतना ही करें कि अपने घरों, मुहल्लों और मन्दिरोंमें धनके आडम्बरका प्रवेश न होने देकर नैतिकताका वातावरण पैदा करें तो हम भारी रणसज्जाका बोझ उठाये विना शत्रुसे, वह चाहे जितना भीषण क्यों न हो, निपट सकते हैं। हमें सर्वप्रथम दैवी सम्पद्की, परमपिताके राज्य और उसकी पवित्रताकी कामना करनी चाहिए। जो ऐसा करेगा उसे यह अमोघ वचन मिला हुआ है कि उसके पास सब वस्तुएँ आ जायेंगी। सच्चा अर्थशास्त्र यही है। ईश्वर करे हम और आप दैवी सम्पद्का संचय करें और अपने जीवनमें उसे उतारें।

इसके अनन्तर गांधीजीसे कुछ प्रश्न पूछे गये — प्रोफेसर जेवन्सने कहा: समाजके लिए अर्थशास्त्रियोंका रहना आवश्यक है। [समाजका] लक्ष्य क्या होना चाहिए इसे निर्धारित करना उनका काम नहीं है। यह काम दार्शनिकोंका है।

प्रोफेसर गिडवानीने जो कि म्योर कालिज इकॉनमिक सोसाइटीके अध्यक्ष थे श्री गांधीको धन्यवाद दिया।

प्रोफेसर हिगिनबॉटमने कहा कि ऐसा कोई भी आर्थिक प्रश्न नहीं है जिसे नैतिक प्रश्नसे अलग किया जा सके।

श्री गांधीने प्रो० जेवन्सके कथनके सम्बन्धमें अपना विचार व्यक्त करते हुए कहा:

कूड़ा-करकट गलत जगहमें रखे हुए पदार्थके सिवा और कुछ नहीं है ऐसा कहा जाता है। इसी प्रकार जब कोई अर्थशास्त्री गलत जगहपर आ बैठता है तब वह हानिप्रद बन जाता है। जिस प्रयोजनके लिए उसकी सृष्टि हुई है यदि अर्थशास्त्री अपने उसी क्षेत्रमें रहे तो मैं यह मानता हूँ कि प्रकृतिकी व्यवस्थामें अर्थशास्त्रीका भी स्थान है। यदि कोई अर्थशास्त्री ईश्वरके बनाये नियमोंकी खोजबीन नहीं करता और निर्धनता-निवारणको लक्ष्य मानकर सम्पत्ति कैसे बाँटी जाये, हमें यह नहीं बताता, तो उसने भारतभूमिपर नाहक ही जन्म लिया है। मैं एक और बात अर्थशास्त्रके विद्यार्थियों तथा अध्यापकोंके विचारार्थ रखना चाहता हूँ, वह यह है कि जो बात इंग्लैंड और अमेरिकाके लिए अच्छी हो सकती है, यह जरूरी नहीं कि वह भारतके लिए भी अच्छी ही हो। मेरा विचार तो यह है कि नैतिक सिद्धान्तोंसे संगति रखनेवाले अर्थशास्त्र सम्बन्धी अधिकांश सिद्धान्त सब जगह समान रूपसे लागू किये जा सकते हैं। किन्तु अलग-अलग क्षेत्रोंमें उनके विनियोगमें थोड़ा-बहुत अन्तर तो करना ही होगा। इसलिए मैं चेतावनी देना चाहता हूँ कि चूँकि भारतीय परिस्थिति कुछ बातोंमें अमेरिका और इंग्लैंडकी परिस्थितिसे बहुत भिन्न है, अर्थशास्त्रियोंको चाहिए कि वे अपने सामने आनेवाली बातोंपर

नये दृष्टिकोणसे विचार किया करें। ऐसा करनेसे अर्थशास्त्री और भारतीय जनता दोनों ही लाभान्वित होंगे। श्री हिगिनबॉटम वास्तविक अर्थशास्त्रका अध्ययन कर रहे हैं और भारतके लिए इसी प्रकारका अर्थशास्त्र बहुत जरूरी है। वे अपने अध्ययनको क्रमशः कार्यरूपमें परिणत कर रहे हैं और चाहे हम विद्यार्थी हों या शिक्षक हमारे लिए इसी नीतिपर चलते जाना सर्वोत्तम होगा। एक विद्यार्थीके प्रश्नोंके उत्तरमें गांधीजीने कहा, मनुष्यको चाहिए कि वह अपने निजी स्वार्थके लिए धन-संग्रह न करे, परन्तु यदि वह भारतके करोड़ों निवासियोंके न्यासीकी भाँति धन-संग्रह करना चाहता है तो मैं कहूँगा कि वह जितना चाहे उतना धन इकट्ठा कर सकता है। साधारणतया अर्थशास्त्री अर्थशास्त्रके नियम अमीर लोगोंके (लाभके) लिए रचते हैं। ऐसे अर्थशास्त्रियोंका मैं सदा विरोध करूँगा।

अब मैं दूसरे प्रश्नको लेता हूँ। प्रश्न यह पूछा गया है कि क्या कारखानोंको मिटाकर कुटीर-उद्योगोंको चालू करना ज्यादा अच्छा न होगा। मैं इस सुझावको पसन्द करता हूँ, परन्तु अर्थशास्त्रियोंको चाहिए कि सबसे पहले धैर्यपूर्वक अपनी देशी संस्थाओंपर नजर डालें। यदि वे निकम्मी हैं, तो उन्हें समूल नष्ट कर देना चाहिए और यदि उनमें सुधार और उन्नतिकी गुंजाइश है तो उपाय ढूँढ़ निकालने चाहिए और उन्हें विकसित करना चाहिए।

दूसरे देशोंके साथ सम्पर्क स्थापित करनेके बारेमें मेरी धारणा तो यह है कि हमारे देशवासियोंकी दूसरे देशोंके निवासियोंके सम्पर्कसे रत्ती-भर भी नैतिक उन्नति होना जरूरी नहीं है। उदाहरणके तौरपर दक्षिण आफ्रिकामें बसे हुए भारतीयोंकी दशापर विचार कीजिए। यातायातके द्रुतगामी साधनों जैसे स्टीमर या रेलगाड़ियों इत्यादिने अनेक आदर्शोंको उनकी जगहोंसे हिला दिया है और बहुत अनर्थका सृजन किया है।

और इस प्रश्नके उत्तरमें कि किसी व्यक्तिको कमसे-कम कितना और अधिकसे-अधिक कितना धन रखना चाहिए श्री गांधीने कहा — 'किंचित्मात्र नहीं' जैसा कि ईसा मसीह, रामकृष्ण और अन्य [महापुरुष] कह गये हैं।

माननीय पण्डित मदनमोहन मालवीयने सभाको विसर्जित करते हुए श्री गांधीको उनके इतने सुन्दर भाषणके लिए धन्यवाद दिया। उन्होंने कहा कि जो सिद्धान्त उन्होंने [श्री गांधीने] हमारे सामने रखे हैं वे इतने ऊँचे हैं कि मैं यह आशा नहीं करता कि सभी लोग उनपर चलनेके लिए तैयार हो जायेंगे। परन्तु मैं आशा करता हूँ कि गांधीजीके इस मुख्य अभिप्रायसे कि अर्थशास्त्र सम्बन्धी सारे प्रश्नों और सिद्धान्तोंका ध्येय मानव-जातिका कल्याण होना चाहिए आप सभी सहमत होंगे।[1]

[अंग्रेजीसे]

लीडर, २५-१२-१९१६

१. भाषण समाप्त होनेपर श्री चिन्तामणिने गांधीजीसे इसकी हस्तलिखित प्रति प्रकाशनार्थ ले ली थी।

२२७. भाषण : इलाहाबादमें प्राचीन और अर्वाचीन शिक्षापर

दिसम्बर २३, १९१६

प्रयागकी एक बहुत बड़ी सार्वजनिक सभामें — जो मुन्शी रामप्रसादके विशाल उद्यानमें पं० मदनमोहन मालवीयके सभापतित्वमें हुई थी, महात्मा गांधीने हिन्दीमें निम्नलिखित आशयका एक व्याख्यान दिया था :

आपने कहा :

आप लोगोंके सामने हिन्दीमें व्याख्यान देनेमें मुझे कुछ कठिनाईका अनुभव हो रहा है; जिसके लिए मैं बहुत लज्जित हूँ — और यह बात आजके मेरे व्याख्यानके विषय अर्थात् आधुनिक शिक्षा-प्रणालीपर एक कड़ी टीका है। यद्यपि मैं अपने विचार अंग्रेजीमें अधिक सुगमतासे व्यक्त कर सकता हूँ तथापि मैं हिन्दीमें ही बोलना पसन्द करूँगा। वास्तविक शिक्षाका आरम्भ साधारणतः १६ या १७ वर्षकी अवस्थामें कॉलेजमें होता है। स्कूलमें जो शिक्षा मिलती है वह उपयोगी नहीं होती। मसलन, भारतीय विद्यार्थी इंग्लैंडका भूगोल तो अच्छी तरह जानता है, पर स्वयं अपने देशके भूगोलका उसे यथेष्ट ज्ञान नहीं होता। उन्हें भारतका जो इतिहास पढ़ाया जाता है, वह बहुत-कुछ विकृत होता है। आजकल शिक्षा प्राप्त करनेका उद्देश्य सरकारी नौकरी पाना है। विद्यार्थियोंकी बड़ीसे-बड़ी इच्छा यही रहा करती है कि हम शाही परिषद्के सदस्य हो जायें। विद्यार्थियोंने अपने पूर्वजोंके पेशे छोड़ दिये हैं और अपनी मातृभाषा भुला दी है। वे अंग्रेजी भाषा, यूरोपीय विचार और यूरोपीय वेशभूषा अपनाते जा रहे हैं। वे सोचते भी अंग्रेजीमें हैं और अपना सारा राजनीतिक और सामाजिक काम अंग्रेजीमें ही करते हैं तथा व्यापार आदिका भी सब काम उसी भाषामें चलाते हैं और समझते हैं कि बिना अंग्रेजी भाषाके हमारा काम चल ही नहीं सकता। उनका यह खयाल बन गया है कि इसके अतिरिक्त हमारे लिए और कोई मार्ग ही नहीं है। अंग्रेजी भाषाके द्वारा दी गई शिक्षाने मुट्ठीभर शिक्षितों और सर्व-साधारणके बीच बड़ी भारी खाई उत्पन्न कर दी है। परिवारोंमें भी यही हुआ है; अंग्रेजी पढ़े मनुष्यके विचार और भाव आदिका उसके घरकी स्त्रियोंके विचारों और भावों आदिसे किसी प्रकारका सरोकार ही नहीं होता। और, जैसा कि मैं अभी कह चुका हूँ, अंग्रेजी पढ़े-लिखे लोगोंका लक्ष्य या तो सरकारी नौकरियाँ पाना होता है या बहुत हुआ तो, शाही परिषद्की सदस्यता प्राप्त करना होता है। जिस शिक्षा-प्रणालीसे ऐसी बातें उत्पन्न होती हों, उसे मैं तो कभी ठीक नहीं समझता और जिन लोगोंको ऐसी शिक्षा मिलती है उनसे कभी यह आशा नहीं की जा सकती कि वे देशकी कोई बड़ी सेवा करेंगे। मेरे कहनेका मतलब यह

नहीं है कि शिक्षित लोग सर्वसाधारणकी दशाके प्रति हमदर्दी नहीं रखते। बल्कि मैं यह स्वीकार करता हूँ कि कांग्रेस आदि बड़े-बड़े सार्वजनिक आन्दोलन इन्हीं लोगोंके चलाये हुए हैं और वे ही उनका संचालन कर रहे हैं। लेकिन साथ ही मैं यह कहे बिना भी नहीं रह सकता कि यदि लोगोंको उनकी मातृभाषामें शिक्षा दी गई होती तो इतने वर्षोंमें और भी अधिक काम होता और विशेष उन्नति हो गई होती। यह दुर्भाग्यकी ही बात है कि लोग यही मानने लगे हैं कि जिस रास्तेपर हम लोग चल रहे हैं उसके सिवा हमारे लिए और कोई रास्ता है ही नहीं। लोग अपने आपको बिलकुल असहाय दशामें पाते हैं। लेकिन अपनेको लाचार मान बैठना मर्दानगी नहीं है।

इसके उपरान्त महात्मा गांधीने प्राचीन शिक्षा-प्रणालीका वर्णन करते हुए कहा: प्राचीन कालमें गाँवके साधारण गुरु जो आरम्भिक शिक्षा दिया करते थे उससे विद्यार्थियोंको उन सब बातोंका ज्ञान हो जाता था जो कि उनके पेशेके लिए आवश्यक थीं। जो लोग उच्च शिक्षा प्राप्त करते थे वे अर्थशास्त्र, नीतिशास्त्र तथा धर्मशास्त्रसे अच्छी तरह परिचित हो जाते थे। प्राचीनकालमें शिक्षापर किसी प्रकारका प्रतिबन्ध नहीं था। शिक्षाका प्रबन्ध राज्यकी ओरसे नहीं किया जाता था, बल्कि वह प्रबन्ध ब्राह्मणोंके हाथमें रहता था, जो केवल प्रजाके कल्याणकी ओर ही ध्यान रखकर शिक्षा प्रणालीका स्वरूप निर्मित करते थे। उसका आधार संयम और ब्रह्मचर्य था। यह इसी शिक्षा-प्रणालीका प्रताप था कि हजारों वर्षोंसे अनेक प्रकारके आघात सहनेपर भी भारतीय सभ्यता आजतक जीवित है जब कि यूनान, रोम तथा मिस्रकी सभ्यता लुप्त हो गई है। इसमें सन्देह नहीं कि इस समय भारतमें एक नई सभ्यताकी हवा बह निकली है। लेकिन मुझे पूरा यकीन है कि थोड़े ही समयमें यह बात खत्म हो जायेगी और फिरसे भारतीय सभ्यताका प्रचार होगा। प्राचीन कालमें जीवनका आधार संयम था, पर आजकल भोग-विलास ही प्रधान है। इसका फल यह हुआ है कि लोग बलहीन और कायर हो गये हैं और सत्यको भूल बैठे हैं। हम लोग इस समय दूसरी सभ्यताके फेरमें पड़े हुए हैं, इसलिए यह आवश्यक है कि हम अपनी नई परिस्थितिके अनुकूल अपनी पुरानी सभ्यतामें कुछ फेरफार कर लें, लेकिन हमारी जिस प्राचीन सभ्यताको अनेक यूरोपीय विद्वान भी सर्वश्रेष्ठ मानते हैं उसमें हमें कोई मूलभूत परिवर्तन नहीं करना चाहिए। कहा जा सकता है कि पाश्चात्य सभ्यताकी भौतिक शक्तियोंसे टक्कर लेनेके लिए उस सभ्यताके उपायों और साधनोंको ग्रहण करना आवश्यक है, लेकिन भारतीय सभ्यताका प्रधान आधार आध्यात्मिक बल है; वह भौतिक बलसे कहीं बढ़-चढ़कर है। भारतवर्ष प्रधानतः धर्म-भूमि है। उसे धर्म-भूमि बनाये रखना भारतवासियोंका सबसे बड़ा कर्त्तव्य है। उन्हें अपनी आत्मासे — ईश्वरसे — बल ग्रहण करना चाहिए। यदि हम लोग इसी मार्गपर चलते रहेंगे, तो जिस स्वराज्यकी हमें इतनी अधिक आकांक्षा है और जिसके लिए हम जुटे हुए हैं, वह स्वराज्य हमें स्वतः मिल जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

लीडर, २७–१२–१९१६

महात्मा गांधी हिज लाइफ राइटिंग्ज ऐंड स्पीचेज

२२८. भाषण : लखनऊ कांग्रेसमें

दिसम्बर २८, १९१६

श्री मो० क० गांधीने लखनऊमें हुए भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके ३१ वें अधिवेशनमें २८ दिसम्बर, १९१६ को ११ वाँ प्रस्ताव पेश करते हुए कहा :

सभापति महोदय, प्रतिनिधि बन्धुओ, बहनो और भाइयो,

मैं देखता हूँ, मेरे तमिल भाइयोंने मुझसे अपील की है कि मैं उनके सम्मुख अंग्रेजीमें बोलूँ और मैं उनके प्रति-आग्रहको अंशतः स्वीकार कर रहा हूँ। किन्तु मैं बदलेमें उनसे यह अपील करना चाहता हूँ कि वे अगले वर्ष-भरमें राष्ट्रभाषा सीख लें। यदि उन्होंने अगले वर्ष तक राष्ट्रभाषा नहीं सीखी — मैं जानता हूँ कि जब भारतको स्वराज्य दे दिया जायेगा तब कौन-सी भाषा राष्ट्रभाषा होगी (तालियाँ) — यदि उन्होंने अगले वर्षमें ऐसा नहीं किया तो जहाँतक मेरा सम्बन्ध है मैं अंग्रेजीमें नहीं बोलूँगा। अभी मैं पहले अंग्रेजीमें प्रस्ताव पढ़ूँगा और फिर उसीको हिन्दीमें। प्रस्ताव इस प्रकार है :

(क) यह कांग्रेस जोर देकर अनुरोध करती है कि आगामी वर्षके अन्दर ही गिरमिटिया मजदूरोंकी भरतीपर प्रतिबन्ध लगाकर गिरमिटियोंके प्रवासको बन्द कर देना चाहिए।

(ख) कांग्रेसके विचारमें यह अत्यन्त वांछनीय है कि भारत-सरकार एक ऐसे प्रतिनिधि भारतीयको, जो भारतीय जनताके विचारोंका प्रतिनिधित्व करनेवाली संस्थाओंके परामर्शसे चुना गया हो, निकट भविष्यमें इस प्रश्नपर विचार करनेके लिए लन्दनमें होनेवाले अन्तर्विभागीय सम्मेलनमें भाग लेनेके लिए नियुक्त करे।

(ग) यह कांग्रेस हार्दिक प्रार्थना करती है कि श्री मार्जोरीबैंक्स तथा माननीय श्री थम्बी मराक्यार और अन्तर्विभागीय समितिकी रिपोर्टको, कोई कार्रवाई करनेसे पहले, आम लोगोंके सूचनार्थ प्रकाशित कर दिया जाये।

संवाददाता तथा प्रतिनिधिगण, जिनके पास प्रस्तावकी प्रतियाँ हैं ध्यानपूर्वक देखें कि धारा (क) में एक शाब्दिक परिवर्तन किया गया है — प्रस्तावमें 'दरम्यान' के स्थान पर 'अन्दर ही' कर दिया गया है। ऐसा एक मित्रके अनुरोधपर किया गया है। उनको डर था कि सरकार यह सोच सकती है कि यदि गिरमिट प्रथा आगामी वर्ष बन्द रखी जाये तो हम सन्तुष्ट हो जायेंगे, जब कि हमारा मतलब है उसे हमेशाके लिए समाप्त करवाना। धारा (ख) में भी आप देखेंगे कि 'जनताके विचार' से पहले 'भारतीय' शब्द जोड़ दिया गया है।

श्री गांधीने प्रस्तावको हिन्दीमें पढ़ा और उसके उद्देश्यपर प्रकाश डाला।

[अंग्रेजीसे]

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके ३१ वें अधिवेशनकी रिपोर्ट, पृष्ठ ६२–३।

२२९. भाषण: अखिल भारतीय एक-भाषा व एक-लिपि सम्मेलन, लखनऊमें[1]

दिसम्बर २९, १९१६

मुझे जो कुछ कहना है वह मैं फिर कहूँगा। इस समय मैंने वक्ताओंके उपदेशसे जो-कुछ सीखा है केवल वही कहूँगा। मैं गुजरातसे आता हूँ। मेरी हिन्दी टूटी-फूटी है। मैं आप सब भाइयोंसे टूटी-फूटी हिन्दी ही में बोलता हूँ क्योंकि थोड़ी अंग्रेजी बोलनेमें भी मुझे ऐसा मालूम पड़ता है मानो मुझे इससे पाप लगता है। मुझे आपको हिन्दीका गौरव बतानेकी जरूरत नहीं है। आप लोगोंकी मुझसे हिन्दीका गौरव जाननेकी इच्छा ऐसी ही है जैसे कोई आदमी गंगामें स्नान करता रहे और कहे कि गंगाजी इधर आओ। यदि कोई आदमी राजपूतानेमें रहकर 'गंगाजी इधर आओ' यह प्रार्थना करता तो उचित भी था। आप लोग हिन्दी पढ़ें और नागरी सीखें, यह आपसे, आपके सम्मेलनसे कहना मेरा काम नहीं है। यदि मुसलमानोंसे कोई कहे कि उर्दू पढ़ना-लिखना सीख लो तो यह भी ऐसी ही व्यर्थ बात है। आप लोग कहते हैं कि मैं बोलनेवाला नहीं, काम करने-वाला हूँ, तो मैं जो कहता हूँ, मेरा कहना मानिये। सज्जनो, देखिए, क्रिश्चियन लिटरेचर डिपो ऐंड बाइबिल सोसाइटी सारे विश्वमें घूम रही है; वह अपनी पुस्तकोंका सारे विश्वमें प्रचार कर रही है, सब भाषाओंमें उनका अनुवाद करके आवश्यक स्थानोंमें वितरण करती है। यहाँतक कि दक्षिण आफ्रिकामें रहनेवाले मजदूरों और जंगली जातियोंको भी उनकी भाषाओंमें बाइबिल आदि देती है। इस कार्यमें वह करोड़ों रुपया खर्च करती है। वे लोग हमारी तरह खाली सम्मेलन नहीं करते। हाँ, कभी-कभी सम्मेलन करते हैं पर केवल रुपया इकट्ठा करने या अपने कामकी रिपोर्ट आदि सुनानेके लिए। यदि आज हिन्दी सिखानेवाले और काम करनेवाले लोग होते तो मद्रासी भी हिन्दी जानते होते। खाली सम्मेलन नहीं, किन्तु काम चाहिए जैसे क्रिश्चियन लिटरेचर डिपो ऐंड बाइ-बिल सोसाइटी कर रही है। हर काममें पैसा चाहिए। पर पैसेकी कमी नहीं है। कमी है काम करनेवालोंकी। यदि कार्यकर्त्ता हों तो गुजरात, मद्रास, दक्षिण सब जगह लोग हिन्दी सीख सकते हैं। हिन्दीमें नई-नई पुस्तकें बनें, अनुवाद हों, बाहर जाकर लोगोंको पढ़ाया जाये, और जो लोग यहाँ आयें उन्हें पढ़ाया जाये। यदि दक्षिण या गुजरात आदिमें हिन्दी पढ़ाने और उसका प्रचार करने आदिके लिए आदमी भेजें तो मुफ्त नहीं पर उचित रूपसे निर्वाह करनेके लिए उन्हें वेतन मिलेगा। पहले तो ऋषियोंके समयमें भारतवर्षमें बड़ा आत्मत्याग होता था, विद्या मुफ्त ही दी जाती थी। मैं हिन्दी सीखना चाहता था; अहमदाबादमें हिन्दी सिखानेवाला नहीं मिला। एक गुजराती सज्जनसे, जो टूटी-फूटी हिन्दी जानते थे और काशीमें १५–२० वर्ष रहे थे, मैंने हिन्दी सीखी। सम्मेलन आदि संस्थाएँ कार्यकर्त्ता बाहर भेजें तो बहुतसे लोग हिन्दी सीख

1. गांधीजी सम्मेलनके अध्यक्ष थे।

जायेंगे। आप स्वराज्य चाहते हैं, मैं भी स्वराज्य चाहता हूँ। पर स्वराज्य मिलनेका ढंग दूसरा है; बातें बनानेसे स्वराज्य नहीं मिलता। पहले खुद काम करो पीछे सरकारी मदद लो। सरकारी मदद पहले नहीं मिलेगी। पहले खुद आगे बढ़ेंगे तो सरकार भी हमारे पीछे आयेगी। सरकार कभी पहले स्वयं आगे नहीं बढ़ती। आप बाहर जाकर लोगोंको हिन्दी सिखायें, और उचित रूपसे काम करें। जब आप काम करेंगे तब सरकार आपकी प्रार्थना सुनेगी, नहीं तो अर्जियोंको फेंक देगी। काम बड़ा है। पर इच्छा करें तो आप स्वराज्यका भवन बना सकते हैं। प्राचीन समयका गौरव पण्डितजी (मालवीयजी) अच्छी तरह दिखा चुके हैं। अंग्रेजीका शब्द-भण्डार पहले १,००० था। अब बढ़कर कोई एक लाख हो गया। उसमें न्याय, वैद्यक आदि सब विषयोंके ग्रन्थ हैं। लोग कहते हैं हिन्दीमें कुछ नहीं है और अंग्रेजीके बिना काम नहीं चलता। बाजे-बाजे समय अंग्रेजीके बिना लोगोंको बड़ा कष्ट उठाना पड़ता है। यह मैं मानता हूँ। जैसे रेलवे आदिमें लोग अंग्रेजीके व्यवहारके बिना कष्ट उठाते हैं। यहाँतक कि मुझ-जैसे लोगोंको हिन्दीका व्यवहार करनेके कारण धक्के भी खाने पड़ते हैं। पर काम करनेवाले इन लोगोंकी परवाह नहीं करते। अंग्रेजीसे हिन्दी कितनी ही पीछे क्यों न हो, पर हमें उसका गौरव बढ़ाना ही पड़ेगा। हमारे प्राचीन ऋषि बड़े यम-नियमसे रहते थे, बहुत बड़ा त्याग करते थे। अतः हमें कटिबद्ध होकर, स्वार्थ-त्यागपूर्वक उनका गौरव बढ़ाना चाहिए। सरकारी कौंसिलोंमें अंग्रेजी ही की पूछ है। लोग कहते हैं वाइसरॉय आदि अंग्रेजीके अतिरिक्त और कुछ नहीं समझते, इसलिए उसीका उपयोग करना आवश्यक है। पर मैं कहता हूँ कि यदि मैं बोलना जानता हूँ और मेरे बोलनेमें कोई ऐसी बात रहेगी जिससे वाइसरॉय लाभ उठा सकें तो अवश्य ही वे मेरी बातें हिन्दीमें बोलनेपर भी सुन लेंगे। उन्हें आवश्यकता होगी तो उसका अनुवाद करा लेंगे। अथवा सी० आई० डी० का कोई आदमी आकर उसकी रिपोर्ट ले जायेगा। मैं तो प्रजा ही से स्वराज्य माँगता हूँ। प्रजासे स्वराज्य मिल जायेगा तो पीछे राजासे भी मिल जायेगा। यदि आपने इतना कर लिया तो आपमें सच्ची निर्भयता आ जायेगी और आपके मनोरथ सफल होंगे।

प्रताप, १-१-१९१७

२३०. अध्यक्षीय भाषण: अखिल भारतीय एक-भाषा व एक-लिपि सम्मेलन, लखनऊमें

दिसम्बर २९, १९१६

मेरे प्यारे भाइयो,

पं० मदनमोहन मालवीयजीने अभी आप लोगोंको हिन्दी-भाषाके प्राचीन गौरवका वर्णन सुनाया है। परन्तु इस वर्णनसे ही राष्ट्रभाषाका प्रचार नहीं हो जायेगा। भागीरथीकी बड़ी अगाध महिमा है, ऐसा कहनेसे ही भागीरथीमें स्नानका पुण्य नहीं मिल जाता। राष्ट्रभाषाका यदि प्रचार करना है तो उसके लिए भगीरथ प्रयत्न करना होगा। आप लोग लाट साहबको या सरकारके दरबारमें जो प्रार्थनापत्र भेजते हैं तो किस भाषामें

लिखकर भेजते हैं? यदि हिन्दी-भाषामें नहीं भेजते हैं तो हिन्दी-भाषामें लिखकर भेजें। आप लोग कहेंगे कि हिन्दी-भाषामें लिखकर भेजनेसे वे हमारी बात नहीं सुनेंगे। मैं कहता हूँ कि आप अपनी भाषामें बोलें, अपनी भाषामें लिखें। उनको गरज होगी तो वे हमारी बात सुनेंगे। मैं अपनी बात अपनी भाषामें कहूँगा। जिसको गरज होगी, वह सुनेगा। आप इस प्रतिज्ञाके साथ काम करेंगे तो हिन्दी भाषाका दर्जा बढ़ेगा। अभीतक इसका प्रचार सब प्रान्तोंमें नहीं हुआ है। राष्ट्रीय सभामें भी अभी राष्ट्रभाषाका प्रचार नहीं है। यह किसका दोष है? यह दोष आप लोगोंका है। मुझे हिन्दी पढ़नेके लिए एक हिन्दी जाननेवाले मनुष्यकी आवश्यकता थी और है। परन्तु अहमदाबादमें मुझे कोई ऐसा मनुष्य नहीं मिला जो मुझे और मेरे आश्रमवालोंको हिन्दी पढ़ा सके। मद्रासमें अभीतक हिन्दीका प्रचार नहीं हुआ। आपने कोई प्रयत्न ही नहीं किया। दस-पाँच लोग ऐसे जुटाइए जो मद्रास प्रान्तमें जाकर हिन्दीका प्रचार करें। उनको जो वेतन देना उचित है वह दीजिए। इतना रुपया मिलना कुछ कठिन नहीं है; क्योंकि इन सभाओंके करनेमें आप लोग इतना रुपया खर्च कर देते हैं। ऐसा प्रयत्न होगा तब राष्ट्रभाषाका सर्वत्र प्रचार होगा।

महात्मा गांधी

२३१. भेंट : लखनऊमें

[दिसम्बर २९–३१, १९१६ के आसपास]

राष्ट्रभाषा

प्र० – क्या आप यह आवश्यक समझते हैं कि राष्ट्रीय सभाका कार्य राष्ट्रभाषा हिन्दीमें ही हुआ करे?

उ० — जरूर। हिन्दी-भाषामें जबतक सार्वजनिक सारा कार्य नहीं होगा तबतक देशकी उन्नति नहीं हो सकती। राष्ट्रीय सभामें जबतक राष्ट्रभाषा द्वारा ही सब काम न हो तबतक स्वराज्य नहीं मिल सकता।

प्र० – परन्तु यह कैसे सम्भव है कि सब प्रान्तोंके लोग एकाएक हिन्दी सीख कर हिन्दी बोलने लग जायें?

उ० — मैं यह नहीं कहता कि सब प्रान्त अपनी-अपनी भाषाको छोड़कर हिन्दी बोलने और लिखने लग जायें। जहाँ प्रान्तिक प्रश्न हो वहाँ प्रान्तीय भाषामें काम हो। जहाँ राष्ट्रीय प्रश्न हो वहाँ राष्ट्रभाषामें ही उसका विचार होना चाहिए। यह काम बहुत कठिन नहीं है, और करनेसे सहज हो जाता है। जहाँ आजकल अंग्रेजीसे काम लिया जा रहा है वहाँ हिन्दीसे काम लेना चाहिए।

राष्ट्रीय सभाका 'स्वराज्य'

प्र० – कांग्रेसने 'स्वराज्य' का जो प्रस्ताव पास किया है और जिस ढंगसे उसे अमलमें लानेकी चेष्टा होनेवाली है उसके विषयमें आपकी क्या सम्मति है?

उ० — यह अच्छा हो चाहे बुरा, मेरी उसपर विशेष श्रद्धा नहीं है।

प्र० – इसका क्या कारण है?

उ० — उसमें द्वेषका निवास है।

प्र० – द्वेष तो उसमें कुछ नहीं है और यदि है भी तो वह नौकरशाही (ब्यूरो-क्रेसी) के सिद्धान्तके साथ है।

उ० — नौकरशाहीसे ही क्यों न हो, उसमें द्वेष है। इसलिए मेरी श्रद्धा उसपर नहीं है। पर मैं यह नहीं कहता कि यह प्रयत्न अच्छा नहीं है या वह प्रयत्न विफल होगा। द्वेष करना सर्वत्र हानि ही नहीं करता। द्वेषको मनसे दूर करनेके लिए भी द्वेषके साथ द्वेष करना ही पड़ता है। परन्तु मेरा यह मार्ग नहीं है। यह भारतीय मार्ग — प्राचीन परम्परागत मार्ग — नहीं है; यह पाश्चात्य मार्ग है।

प्र० – तो आपका या हमारा भारतीय मार्ग [स्वराज्य प्राप्त करनेका] क्या है?

उ० — वह मैं अभी न बताऊँगा।

वर्णाश्रम धर्म

प्र० – चातुर्वर्ण्यके विषयमें आपकी क्या सम्मति है?

उ० — यह संस्था बहुत अच्छी है। इसने देशका बड़ा उपकार किया है। इसका रहना बहुत जरूरी है।

प्र० – हिन्दू-समाजमें यदि चार ही वर्ण हैं और वे ऐसे ही रहेंगे तो अछूत जातियोंको आप किस वर्णमें गिनते हैं?

उ० — अछूत जातियोंका अस्तित्व चातुर्वर्ण्यकी ज्यादती है। चातुर्वर्ण्यने अनुचित रूपसे ज्यादती करके इन जातियोंको बहिष्कृत किया है। इनका स्थान चातुर्वर्ण्यके अन्दर ही है।

प्र० – यदि ऐसा है तो इन 'अछूतों' को किस वर्णमें स्थान मिलना चाहिए।

इस प्रश्नके उत्तरमें आपने बहुत देर तक समझाया कि समाजकी स्वाभाविक गति इनको यथाधिकार वर्णाश्रम प्रदान करेगी।

आर्यसमाजका शुद्धि-आन्दोलन

प्र० – हिन्दू और मुसलमानका प्रश्न कैसे हल होगा?

उ० — यह प्रश्न पूर्णतया हल नहीं हो सकता। अन्य देशोंमें जैसे हुआ वैसे यहाँ भी होगा। हिन्दू, मुसलमान दो पक्ष रहेंगे और ऐसा होनेसे देशकी कुछ हानि न होगी।

प्र० – आर्यसमाज 'शुद्धि' करके मुसलमानोंको हिन्दू बना लेता है। यदि ऐसा करनेमें कोई धर्म-घात न हो और सारे मुसलमान हिन्दू बन जायेंगे ऐसी कल्पना की जाये तो 'शुद्धि' से यह प्रश्न क्या हल नहीं हो सकता?

उ० — परन्तु यह मार्ग अच्छा नहीं है। यह धर्म-मार्ग नहीं है। यह स्वाभाविक गति नहीं है और समस्त मुसलमानोंको हिन्दू बना लेनेकी कल्पना भी व्यर्थ है।

महात्मा गांधी

२३२. भाषण: मुस्लिम लीगके सम्मेलनमें[1]

लखनऊ

दिसम्बर ३१, १९१६

आज सवेरे मुस्लिम लीगकी बैठक फिर हुई, उपस्थिति कलकी जैसी ही थी। गत वर्ष बम्बईमें सुधार-समिति नियुक्त की गई थी उसकी रिपोर्ट लीगके मन्त्री श्री वजीर हसनने पेश की। यह रिपोर्ट इस वर्ष राष्ट्रीय महासभाके समक्ष प्रस्तुत रिपोर्टकी जैसी ही थी।

इसके अनन्तर अध्यक्ष जिन्नाने एक प्रस्ताव रखा जिसका आशय यह था कि यह सम्मेलन उपनिवेशोंमें भारतीयोंके साथ किये जानेवाले व्यवहारके प्रति तीव्र असन्तोष प्रकट करता है।

इसके बाद श्री गांधीसे जो सभास्थलमें उपस्थित थे, व्याख्यान देनेको कहा गया। उन्होंने कहा:

यदि आप अपने इस प्रस्तावको कि भारतकी राष्ट्रभाषा उर्दू रहे, कार्यान्वित करना चाहते हैं तो आप लोगोंको अपनी कार्रवाई उर्दूमें करनी चाहिए। आपको उचित है कि आप लोग हिन्दू साहित्यमें भी कुछ दिलचस्पी लिया करें। इससे आप लोग हिन्दू समाजके साथ स्थायी मैत्रीभाव रखनेमें समर्थ होंगे। उपनिवेशोंमें हिन्दू और मुसलमान सदासे ही मिल-जुलकर काम करते आये हैं और यदि भारतमें भी वैसा ही किया गया तो हमारी मनोकामना शीघ्र पूरी हो सकती है। आप लोग जो प्रचार-कार्य करते हैं, उसे करनेमें आप सरकारसे डरना छोड़ दें, क्योंकि अंग्रेजोंका स्वभाव ही यह है कि वे जोरावरके आगे झुकते हैं और निर्बलोंपर सवारी कसते हैं।

[अंग्रेजीसे]

लीडर, ३-१-१९१७

२३३. पत्रका अंश[2]

[१९१६][3]

. . . में रखना। अभी तुम्हारा कार्य समस्त कामकाजकी देखरेख करना, सब लोगोंको काम सौंपना, और हिसाब पूरा करके फूलचन्दको[4] हिसाब-किताब रखना सिखा देना है। छाछ सबको मुआफिक नहीं आती यदि सब लोग पतली लपसी ही चाहते हैं तो

१. लखनऊमें।

२. पहले दो पृष्ठ उपलब्ध नहीं हैं।

३. पत्र १९१६ में लिखा गया जान पड़ता है। ठीक तिथि निश्चित नहीं की जा सकती।

४. गुजरातके एक राजनैतिक और रचनात्मक कार्यकर्ता फूलचन्द बापूजी शाह।

पतली लपसी बनवाना फिर शुरू कर दें। इस समय शरीरकी सामान्य स्थिति अच्छी है। यह हमें खो नहीं देनी है। हार्मोनियम आ गया होगा। साकलचन्द[1] भाई एक प्रति ढूँढ़नेकी बात कहते थे; उन्हें याद दिला देना। अनाथ आश्रमके फार्मको देख आना। मैंने उसे प्राप्त करनेका प्रयत्न फिर आरम्भ किया है। देखना यह है कि यह हमारे लिए उपयोगी होगा या नहीं।

बापूके आशीर्वाद

साथका पत्र[2] पढ़कर जमनादासको भेज देना।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५६९४) से।
सौजन्य : राधाबेन चौधरी

२३४. पत्र : व्र० गो० सरैयाको

अहमदाबाद
पौष सुदी १० [जनवरी ३, १९१७][3]

मैं कल रातको लखनऊसे लौटा हूँ।[4] जो-कुछ आ पड़े उसे आपको धीरजसे सहन करना चाहिए और नीतिकी रक्षा करते हुए मृत्यु भी स्वीकार करनी चाहिए। मैं इससे अधिक कोई सान्त्वना नहीं दे सकता।

मोहनदास गांधी

भाई व्रजलाल गोविन्दलाल सरैया
राजा मेहताकी पोल
तोडाके पास
अहमदाबाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें गुजरातीमें लिखित मूल पोस्टकार्ड (सी० डब्ल्यू० २८२०) से।
सौजन्य : विनयचन्द्र गोविन्दलाल सरैया

१. साकलचन्द शाह, पहले अहमदाबादके गुजरात कॉलेजमें भौतिकीके प्राध्यापक थे; बादमें उन्होंने राष्ट्रीय विद्यापीठ, गुजरातका कार्यभार सँभाला।
२. उपलब्ध नहीं है।
३. डाकखानेकी मुहरसे।
४. दिसम्बर, १९१६ के कांग्रेस-अधिवेशनमें भाग लेनेके बाद।

२३५. पत्र: एस्थर फैरिंगको

अहमदाबाद
जनवरी ११, १९१७

प्रिय एस्थर,[1]

तुम्हारा वम्बईसे लिखा संक्षिप्त पत्र पाकर मुझे प्रसन्नता हुई थी। हम लोगोंको तुम दोनोंकी वड़ी याद आती है। तुम लोग हमारे लिए मेहमान नहीं परिवारके सदस्य वन गये थे। आशा है कुमारी पीटर्सन[2] पुनः पूर्ण स्वस्थ हो गई होंगी। मैंने तुम्हारे कुछ पत्र कल पते वदलकर भेज दिये थे, और कुछ आज भेज रहा हूँ।

तुम दोनोंको यथायोग्य।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
माइ डियर चाइल्ड

२३६. पत्र: कल्याणजी मेहताको

अहमदाबाद
पौष वदी ४ [जनवरी १२, १९१७][2]

भाईश्री कल्याणजी,[3]

आप अभी सूरतमें ही होंगे, ऐसा मानकर यह पत्र लिख रहा हूँ। वीरमगाँवकी चुंगी-चौकीका प्रश्न आपने जान-बूझकर तो नहीं छोड़ दिया है? और तो सव ठीक जान पड़ता है। शिक्षण मातृभाषाके माध्यमसे देनेका प्रस्ताव भी पास किया जा सकता है।

१. तथा २. कुमारी एस्थर फैरिंग तथा कुमारी मेरी पीटर्सन दक्षिण भारतमें डेनिश मिशनरी सोसाइटीके अमलेकी सदस्या थीं। वे अपने शैक्षणिक कार्यकी तैयारीके लिए गांधीजीके सावरमती स्थित आश्रममें आई थीं। बापू एस्थरको वेटी-जैसा मानने लगे थे; देखिए "पत्र: एस्थर फैरिंगको", १५-४-१९१७ तथा १७-४-१९१७, ।

२. डाकखानेकी मुहरसे।

३. सूरत जिलेके एक कांग्रेसी नेता।

इस समय मेरा अहमदाबाद छोड़ना बहुत कठिन है। मैं आकर करूँगा भी क्या? मैं तो चाहता हूँ कि मुझे मुक्त कर दीजिए।

मोहनदास गांधीके वंदेमातरम्

प्रस्तावकी नकल वापस भेज रहा हूँ।

भाईश्री कल्याणजी विट्ठलभाई मेहता
पटेल बन्धु कार्यालय
सूरत

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें गुजरातीमें लिखित मूल पोस्टकार्ड (जी० एन० २६६३) की फोटो-नकलसे।

२३७. वक्तव्य: लायनेल कर्टिसके पत्रके सम्बन्धमें

[जनवरी १४, १९१७ के पूर्व][1]

'न्यू इंडिया' लिखता है: यह सिद्ध हो गया है कि लायनेल कर्टिस[2] द्वारा 'राउंड टेबल'के मन्त्रीको लिखे गये पत्रकी[3] खोज श्री गांधीकी थी। अहमदाबादके एक संवाददाताने बम्बईके 'हिन्दुस्तान' में श्री कर्टिसके गोपनीय पत्रके बारेमें गांधीजीका एक विस्तृत स्पष्टीकरण छापा है जो उन्होंने अहमदाबादमें अपने आश्रममें दिया था। इसमें श्री गांधी कहते हैं:

यह आगरेकी बात है; वह पत्र संयोगसे वहाँ मेरे हाथ लग गया। यह सरकारी छापेखानेमें मुद्रित किया गया था और इसपर 'गोपनीय' लिखा हुआ था। किन्तु यह छापेखानेके किसी कर्मचारीकी गलतीसे एक पुस्तकके साथ मुझतक आ गया। मैंने जैसे ही देखा, मैं चौंक पड़ा और उस खतरेको देखकर जो देशके सामने खड़ा था, मैंने इस षड्यंत्रका भंडाफोड़ किसी-न-किसी प्रकार कांग्रेसके सामने करनेका निश्चय किया। और मैंने इसे श्री हॉर्निमैनको[4] दे दिया। किन्तु साथ ही मैंने श्री कर्टिसको २४ घंटेका समय दिये जानेका सुझाव दिया ताकि वे इस बारेमें इस अवधिके भीतर जैसा ठीक समझें कहकर अपना स्पष्टीकरण दें। किन्तु दूसरे लोगोंका विचार था कि उनका कर्त्तव्य उसे तत्काल प्रकाशित कर देना है और इस प्रकारका नोटिस देनेकी आवश्यकता नहीं

१. यह १४-१-१९१७के *गुजराती*में भी प्रकाशित हुआ था।

२. लायनेल कर्टिस; जोहानिसबर्गके टाउन क्लार्क, १९०२-३; ट्रान्सवालमें नागरिक मामलोंके सहायक उपनिवेश सचिव; १९०३-६, सदस्य ट्रान्सवाल विधान परिषद्; देखिए खण्ड ८, पृष्ठ १०।

३. इस पत्रपर १३ दिसम्बर १९१६ की तारीख थी और यह २७-१२-१९१६के *न्यू इंडिया*में उद्धृत किया गया। पत्रमें "भारतको उपनिवेशोंके नियंत्रणमें रखने" का प्रस्ताव था। (*इंडिया इन द इयर्स*, १९१७-१९१८)

४. बी० जी० हॉर्निमैन, सम्पादक, *बॉम्बे क्रॉनिकल*।

है। मैं भी इसपर राजी हो गया। यदि कोई हमारे मकानके नीचे सुरंग खोदे और उसे विस्फोटकोंसे भर दे, एवं हमारा दुश्मन जब वहाँ भीड़-भाड़ हो तब उसे उड़ा देनेकी बात सोचे, और एक चिट 'निजी और गोपनीय' लिखकर प्रचारित करे तो हमारा कर्त्तव्य है कि हम उसे समयपर पकड़ लें और उसका भेद खोल दें। मैं श्री कर्टिसको बहुत समयसे जानता हूँ। उनके भाई दक्षिण आफ्रिकामें थे। मेरे विचारसे इस पत्रके प्रकाशित होनेके कारण भारतको उपनिवेशोंके प्रभुत्वमें रखनेकी चाल अब न चलेगी।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन सोशल रिफॉर्मर, २१-१-१९१७

२३८. पत्र: एस्थर फैरिंगको

अहमदाबाद
जनवरी १५, १९१७

प्रिय एस्थर,

तुम्हारा सुन्दर पत्र पाकर और यह जानकर कि कुमारी पीटर्सनका जुकाम बिलकुल ठीक हो गया है मुझे प्रसन्नता हुई।

मुझे इस बातकी बड़ी खुशी है कि आश्रममें तुम्हें शान्ति मिली। अवश्य ही हम, तुम दोनोंको अपने परिवारका सदस्य समझते हैं। तुम्हारी जब इच्छा हो या तुम जब आ सको तब आ जाना।

रामदास अच्छा लड़का है। वही दक्षिण आफ्रिका जा रहा है।[1] मुझे विश्वास है कि वह वहाँ अच्छा काम कर दिखायेगा। तैयारीके रूपमें वह यहाँ एक छापेखानेमें जा रहा है और कम्पोजिंगका अभ्यास कर रहा है।

मैंने तुम्हारे बारेमें काफी जान लिया है, इसलिए मुझे मालूम है कि तुम पूरा मन लगाकर अध्ययन करोगी और शीघ्र कामचलाऊ तमिल बोलने लगोगी।

जब तक चाहो नियमोंको[2] अपने पास रखो। उन्हें यहाँ भेजनेमें जल्दी करनेकी आवश्यकता नहीं है।

सस्नेह,

तुम्हारा,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

माई डियर चाइल्ड

१. देखिए "पत्र: नारणदास गांधीको", १७-१-१९१७।

२. साबरमती आश्रमके सदस्योंके लिए बनाये गये नियम; देखिए "आश्रमके संविधानका मसविदा", २०-५-१९१५।

२३९. पत्र : एस० हिगिनबॉटमको

अहमदाबाद
जनवरी १६, १९१७

प्रिय श्री हिगिनबॉटम,

संलग्न पत्रको देखनेसे आपको पता चलेगा कि मेरे पोस्टकार्डपर क्या बीती। उक्त पोस्टकार्ड लिखनेके बाद इस बीचमें मैंने वह किताब पढ़ डाली है। मुझे वह बहुत भायी। उसे पढ़कर मैं शिक्षा-सम्बन्धी मामलोंमें एक निश्चित कदम उठा रहा हूँ—ऐसा भी कह सकता हूँ कि लगभग उठा चुका हूँ। आप संभवतः उसके बारेमें शीघ्र ही सुनेंगे और शायद अपनी सलाहका लाभ भी देंगे।

आशा करता हूँ कि आप निकट भविष्यमें ही किसी समय आश्रम पधारेंगे।

आपका सच्चा,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (जी० एन० ८९३३) की फोटो-नकलसे।

२४०. पत्र : नारणदास गांधीको

अहमदाबाद
पौष बदी ९ [जनवरी १७, १९१७][1]

चि० नारणदास,

मैंने दो परिवर्तन करनेका निश्चय किया है। एक तो यह कि खेतीके लिए जो जमीन ली जाये उसमें उद्देश्य अच्छी कमाई करना हो। विचार यह है कि अच्छी कमाई होनेसे गृहस्थ भी इस कामकी ओर आकर्षित हो सकेंगे। दूसरा यह कि छोटे या बड़े पैमानेपर एक राष्ट्रीय शाला[2] खोली जाये, और उसमें विद्वान् शिक्षक रखे जायें। इन दोनों विभागोंमें वैतनिक कार्यकर्त्ता रखे जायें और उन्हें बाजार भावसे वेतन दिया जाये। इसमें तुम्हारे लिए भी गुंजाइश हो सकती है। विचार है कि तुमसे मुख्यतः इन विभागोंका हिसाब रखनेका काम लिया जाये। फिर भी यह निश्चित नहीं है। जो निश्चित है वह यह कि तुम्हें भी वेतनपर रखें। तुम आश्रममें रहना चाहोगे तो रह सकोगे। यदि तुम्हारी इच्छा इस कार्यमें सम्मिलित होनेकी हो तो सोचकर लिखना। कोई बहुत जल्दी नहीं है। तुम्हारा विचार हो तो आदरणीय खुशालभाईकी

१. इस पत्रके अन्तमें मणिलाल और रामदासका उल्लेख है। वे १९१७के आरम्भमें नेटाल गये थे।
२. देखिए "राष्ट्रीय गुजराती शाला", १८-१-१९१७के बाद।

सलाह लेना और अपने भाइयोंसे भी विचार-विमर्श करना। कुछ अधिक जानना चाहो तो पत्र लिखकर पूछना अथवा किसी रविवारको चले आना। अब अधिक नहीं लिखता।

हरखचन्दसे फिर मिलनेका प्रयत्न करना। डॉक्टरको स्पष्ट उत्तर मिलना ही चाहिए।

कृष्णो[1] और काशी[2] यहीं हैं। छगनलालने उक्त कार्यमें (वेतन लेकर) सम्मिलित होनेका विचार किया है। वह इसी उद्देश्यसे मोतीचन्दकी अनुमति लेने बड़ौदा गया है। लेकिन, उसने लिखा है कि मोतीचन्दने उसपर बड़ा दबाव डाला है। देखना है, अब वह क्या करता है।

मणिलाल और रामदास कुछ ही दिनोंमें नेटाल जाकर प्रागजीको मुक्त कर देंगे।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५६९१) से।
सौजन्य : नारणदास गांधी

२४१. पत्र : कल्याणजी मेहताको

अहमदाबाद
पौष वदी १० [जनवरी १८, १९१७][3]

भाई श्री कल्याणजी,

मैं आपको अपनी अन्य कठिनाई भी बता रहा हूँ। मैं इन दिनों शिक्षाके सम्बन्धमें एक भारी योजना[4] तैयार कर रहा हूँ। उसीमें मेरा सारा समय लग जाता है। बहुत-से लोगोंसे मिलना और विचार-विमर्श करना होता है। इस कामको चार-पाँच दिनके लिए मुल्तवी कर दूँ या जारी रखूँ; इस कामको करते रहना अधिक लाभप्रद है या आपके सम्मेलनमें आना — पहले इन सब प्रश्नोंका उत्तर दें और फिर मुझपर आनेके लिए दबाव डालें।

मोहनदास गांधीके वन्देमातरम्

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (जी० एन० २६६८) की फोटो-नकलसे।

१. छगनलाल गांधीका पुत्र कृष्णदास।

२. छगनलाल गांधीकी पत्नी।

३. यह पत्र १७ जनवरी १९१७को कल्याणजी मेहताके नाम लिखे पत्रके बाद लिखा गया जान पड़ता है।

४. देखिए अगला शीर्षक।

२४२. राष्ट्रीय गुजराती शाला

[जनवरी १८, १९१७के बाद][1]

विवरण-पत्रिका

कई वर्षोंसे कुछ मित्रोंको और मुझे ऐसा लगता रहा है कि हमारी मौजूदा शिक्षा राष्ट्रीय नहीं है और उससे लोगोंको जो लाभ मिलना चाहिए वह नहीं मिलता। इस शिक्षाके फलस्वरूप हमारे बालकोंका तेज नष्ट हो जाता है — वे कुम्हला जाते हैं। उनमें पुरुषार्थकी शक्ति नहीं रहती और वे जो ज्ञान प्राप्त करते हैं समाजमें उसका प्रसार नहीं होता, उनके कुटुम्बमें भी नहीं होता। यह शिक्षा ग्रहण करनेमें हमारे युवकोंके मनमें उद्देश्य केवल नौकरी प्राप्त करने, अपनी आर्थिक स्थिति सुधारनेका ही होता है। शिक्षाकी योजना जनसमाजकी आवश्यकताओंको ध्यानमें रखकर की जानी चाहिए। यह शिक्षाका एक अनिवार्य सूत्र है। हमारे स्कूलोंमें इस विचारको कोई स्थान ही नहीं दिया गया है।

अपनी यात्राओंके प्रसंगमें हिन्दुस्तानमें मैं जहाँ-जहाँ गया हूँ मैंने नेताओंके साथ इस प्रश्नपर चर्चा की है और लगभग सभीने निरपवाद रूपसे यह स्वीकार किया है कि शिक्षाकी पद्धतिमें परिवर्तन होना चाहिए।

इस सम्बन्धमें सरकारके भरोसे बैठे रहना केवल कालक्षय करना होगा। सरकार तो लोकमतकी राह देखेगी; विदेशी होनेके कारण धीरे-धीरे कदम उठायेगी; फिर उसके सलाहकार नादान या स्वार्थी भी हो सकते हैं। ऐसे अनेक कारणोंसे संभव है, प्रचलित पद्धतिमें महत्त्वपूर्ण परिवर्तन होने तक बहुत समय बीत जाये। और इसमें जितना समय जायेगा, प्रजाका उतना ही अधिक नुकसान होगा।

लेकिन हमारा यह आशय नहीं है कि सरकारकी मारफत हमें कोई काम करना ही नहीं है। सरकारको अर्जियाँ भेजने और [इस प्रश्नपर] लोकमत इकट्ठा करने दिया जाये, हमारा विरोध नहीं है। किन्तु अर्जीका सर्वोत्तम रूप तो यही है कि हम इस चीजको करके दिखा दें; लोकमतके निर्माणके लिए भी सीधा रास्ता यही है। इसलिए कुछ विद्वानोंके साथ दूसरे विचार-विमर्श करनेके बाद एक राष्ट्रीय शाला खोलनेका निश्चय हुआ है।

शिक्षणका स्वरूप

इस शालामें शारीरिक, बौद्धिक और धार्मिक शिक्षण दिया जायेगा।

शारीरिक शिक्षणके अन्तर्गत खेती-बाड़ी और बुनाईका काम सिखाया जायेगा और इससे सम्बद्ध बढ़ईगिरी और लुहारीके औजारोंका उपयोग भी सिखाया जायेगा। इनसे बालकोंको [पर्याप्त] शारीरिक व्यायाम मिल जायेगा। तथापि उन्हें मनोरंजक खेल[2] तथा कवायद और कवायदके एक अंगके रूपमें टोलियोंमें [सबके साथ कदम मिलाकर]

१. देखिए पिछला शीर्षक, "पत्र: कल्याणजी मेहताको", १८–१–१९१७।

२. मूलमें यहाँ कुछ शब्द बहुत अस्पष्ट हैं।

चलन तथा आग लग जानेपर या ऐसी ही दूसरी दुर्घटनाओंमें अपना-अपना काम चुपचाप अच्छी तरह करनेकी तालीम दी जायेगी।

अपने आरोग्यकी रक्षा और सामान्य बीमारियोंके घरेलू इलाजोंकी शिक्षा तथा इसके सिलसिलेमें शरीर-रचना तथा वनस्पतियोंकी आवश्यक जानकारी दी जायेगी।

बौद्धिक शिक्षणमें गुजराती, मराठी तथा हिन्दी और संस्कृत अनिवार्य रूपसे सिखाई जायेंगी। उर्दू तथा बँगला भी सिखाई जायेंगी।

पहले तीन वर्षोंमें अंग्रेजी नहीं सिखाई जायेगी।

इसके सिवा गणितशास्त्र (अंकगणित, बीजगणित और भूमिति) की शिक्षा दी जायेगी। पहाड़े, देशी वही-खाता और प्रचलित तोलकी जानकारी तो प्रारम्भमें ही दी जायेगी। बाकी पढ़ाई क्रमशः होगी।

इतिहास, भूगोल, खगोल-विद्याके प्रारंभिक सिद्धान्त तथा रसायनशास्त्रके प्रारंभिक सिद्धान्त सिखाये जायेंगे।

धार्मिक शिक्षामें धर्मके सामान्य सिद्धान्त सिखाये जायेंगे और हमें ऐसी आशा है कि शिक्षक अपने आचरणके द्वारा यह बतायेंगे कि धर्मका मर्म तो चरित्रमें है।

अन्तिम कक्षा तक सारा शिक्षण गुजरातीमें ही होगा और प्राथमिक वर्षोंमें शिक्षण अधिकांशतः मौखिक होगा। उद्देश्य यह है कि बच्चोंके लिखना-पढ़ना सीखने तक कहानियोंके रूपमें बातचीतके द्वारा उन्हें बहुत-कुछ बता दिया जाये; डाँट-फटकार या तिरस्कार सूचक छिः-छिः आदि शब्दोंसे उनके खिलते हुए मनका दमन न किया जाये, बल्कि [प्रेमपूर्वक] उसका विकास किया जाये तथा उन्हें खेलते-कूदते सामान्य ज्ञान दिया जाये।

स्पष्टीकरण

अभी तो हमारा विचार ऐसा है कि [इस पद्धतिके अनुसार] दस वर्ष तक शिक्षा लेनेवालेका ज्ञान लगभग एक अच्छे ग्रेजुएट-जितना हो जायेगा। मतलब यह कि विद्यार्थीपर अंग्रेजी सीखनेका बोझ कम रहेगा और इस तरह जो समय बचेगा उसमें उसे वह सारा उपयोगी ज्ञान दे दिया जायेगा जो किसी ग्रेजुएटको मिलता है। विद्यार्थीको परीक्षाके भयसे मुक्त कर दिया जायेगा। विद्यार्थियोंकी प्रगतिकी जाँच अवश्य होती रहेगी किन्तु शालाके ही शिक्षकोंकी मारफत विद्यार्थियोंके शिक्षणका सच्चा माप तो यह होगा कि शालासे निकलनेके बाद विद्यार्थी अपनी शक्तिका व्यवहारमें कैसा उपयोग करता है। विद्या-प्राप्तिका उद्देश्य नौकरी है, इस प्रचलित भ्रमको दूर करनेके लिए प्रत्येक अवसरका उपयोग किया जायेगा। और अन्तमें, हम आशा करते हैं, शालामें आनेवाले विद्यार्थीके मनमें, कुछ ही वर्षोंमें, ऐसा आत्मविश्वास पैदा हो जायेगा कि अपनी आजीविका कमा सकनेके विषयमें उसे कोई शंका या भय रहेगा ही नहीं। जो विद्यार्थी शालामें पाँच वर्ष तक रहेगा उसे, यदि उसकी इच्छा होगी तो, शालासे ही सम्बन्धित कार्योंमें वेतन देकर नियुक्त कर दिया जायेगा। यह संस्था कुछ कारखानोंके साथ ऐसा सम्बन्ध बनायेगी कि वह वहाँ कोई जीवनोपयोगी धंधा सीख सके और स्वतंत्र धंधा करनेके इच्छुक व्यक्तियोंको धंधोंमें लगवा दे। दस वर्षकी पढ़ाईके बाद यदि कोई विद्यार्थी

किसी विषयमें विशेष ज्ञान प्राप्त करना चाहे तो उसके लिए योग्य व्यवस्था करनेका काम अभी भविष्यपर छोड़ दिया गया है।

निःशुल्क शिक्षण

इस शालामें विद्यार्थियोंसे फीस नहीं ली जायेगी; शालाका खर्च दान लेकर चलाया जायेगा।

शिक्षक

शिक्षकोंको वेतन दिया जायेगा और वे पक्की उम्रके तथा कॉलेज तक पहुँचे हुए अथवा इस कोटिका ज्ञान रखनेवाले होंगे। हमारी मान्यता है कि बालकोंको आरम्भमें तो अच्छेसे-अच्छे शिक्षकोंकी ही जरूरत है।

प्रथम वर्षका पाठ्यक्रम

निम्नलिखित पाठ्यक्रम नमूनेके तौरपर दिया जा रहा है।[1]

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (एस० एन० ६१९५ ए) की फोटो-नकलसे।

२४३. पत्र : डॉ० एच० एस० देवको

अहमदाबाद
जनवरी ३१, [१९१७][2]

प्रिय डॉ० देव,[3]

मुझे आपका कार्ड मिला। मेरी समझमें पुण्यतिथि मनानेके लिए एकत्र होनेके पहले ही उन आदर्शोंके अनुरूप, जिनका प्रतिनिधित्व श्री गोखले करते थे, हमें कोई कदम उठाना चाहिए। मैंने यही सलाह यहाँ भी दी है और यह मान ली गई है। इसलिए इस वर्ष हम सम्भवतः गोखलेके सब भाषणोंका गुजराती रूपान्तर प्रकाशित करेंगे। पूनाके लिए भी मेरी ऐसी ही सलाह है। यदि अभी तक उनके भाषणोंका मराठीमें अनुवाद न हुआ हो तो हम बैठकमें इस बारेमें निश्चय कर सकते हैं, या कोई दूसरा व्यावहारिक कार्य कर सकते हैं। मैं तो ऐसा चाहता हूँ कि वे हममें और हमारे मारफत एवं इस प्रकार सारे राष्ट्रके मारफत, अधिकाधिक जीवित रहें। जबतक हम ऐसे समारोहोंमें प्रगतिशील कदम नहीं उठाते तबतक यह नहीं होगा। मुझे दो आकर्षण — एक पूनासे और दूसरा अहमदाबादसे — विरुद्ध दिशाओंमें खींच रहे हैं। कुछ कारणोंसे मैं उस दिन अहमदाबादमें रहना चाहता हूँ। इसी तरहके कुछ अन्य कारण मुझे प्रेरित करते हैं कि मैं पूना आऊँ। आपको निर्णय करना होगा कि मैं क्या करूँ। यहाँके मित्रोंने तो मुझे स्वतन्त्र छोड़ दिया है कि मैं जैसा सर्वोत्तम समझूँ वैसा करूँ।

१. उपलब्ध नहीं है।

२. गोखलेके भाषणोंके अनुवाद तथा गिरमिट सम्बन्धी सभाके उल्लेखसे मालूम होता है कि यह पत्र १९१७ में लिखा गया था।

३. भारत सेवक-समाज (सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी) के सदस्य।

मेरा खयाल है कि समारोहके बाद कामकाजके बारेमें दो बैठकें हों। दोनों एक ही दिन हों; किन्तु दोनोंके बीच पर्याप्त व्यवधान रहे। पहलीमें केवल सामान्य मित्र ही आयें। दूसरीका स्वरूप अधिक व्यापक हो और उसमें तिलकका दल भी आ सके।

मुझे आशा है, गिरमिट सम्बन्धी सभा[1] सफल होगी।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (सी० डब्ल्यू० ५७८९) की फोटो-नकलसे।

२४४. भारतीय विद्यालयों तथा महाविद्यालयोंमें शिक्षाके माध्यमके रूपमें देशी भाषाओंका प्रयोग: एक प्रस्तावना

[फरवरी १, १९१७][2]

डॉ० प्रा० जी० मेहताकी 'सेल्फ गवर्नमेंट सीरीज' (स्वशासन-पुस्तक माला)की 'वर्नाक्युलर्स एज मीडिया ऑफ इंस्ट्रक्शन इन इंडियन स्कूल्स ऐंड कॉलेजेज' (भारतीय विद्यालयों तथा महाविद्यालयोंमें शिक्षाके माध्यमके रूपमें देशी भाषाओंका प्रयोग) नामक पुस्तिका संख्या १की श्री गांधी द्वारा लिखी गई भूमिका नीचे दी जाती है . . .

यह आशा की जाती है कि अंग्रेजी पढ़े-लिखे भारतीय डॉ० मेहताकी इस निःस्वार्थ-भावसे लिखी गई पुस्तिकाकी ओर गम्भीरतापूर्वक ध्यान देंगे। उन्होंने यह सामग्री मद्रासके 'वेदान्त केसरी' के लिए लिखी थी और अब वह भारत-भरमें प्रचारित करनेके लिए वर्तमान रूपमें मुद्रित की गई है। शिक्षाके माध्यमके रूपमें देशी भाषाओंके उपयोगका प्रश्न राष्ट्रीय महत्त्वका प्रश्न है। देशी भाषाओंकी उपेक्षाका अर्थ है राष्ट्रीय आत्मघात। हम अंग्रेजीके बहुतसे पृष्ठपोषकोंको यह कहते सुनते हैं कि शिक्षाके माध्यमके रूपमें अंग्रेजीको जारी रखा जाये। वे इस तथ्यकी ओर संकेत करते हैं कि अंग्रेजी पढ़े-लिखे भारतीय सार्वजनिक कार्य और देशसेवाके एकमात्र अभिभावक हैं। यदि ऐसा न होता तो वह नितान्त अनुचित बात होती, क्योंकि इस देशमें जो भी शिक्षा दी जाती है केवल अंग्रेजीके माध्यमसे ही दी जाती है। फिर भी, तथ्य यह है कि परिणाम हमारी शिक्षामें दिये जानेवाले समयके अनुपातमें तो कदापि प्रतिफलित नहीं हुआ। जनतापर इसका प्रभाव नहीं पड़ता। किन्तु मुझे डॉक्टर मेहताने क्या कहा है मैं इसके बारेमें अभी कोई अन्दाज नहीं दूंगा। उनमें सच्ची लगन है। वे जैसा अनुभव करते हैं वैसा ही लिखते हैं। उन्होंने पक्षापक्षपर विचार किया है और अपने तर्कोंकी पुष्टिके लिए बहुतसे प्रमाण एकत्र किये हैं। इस विषयमें सबसे ताजी राय वाइसरॉयकी है। यद्यपि परमश्रेष्ठ कोई हल निकालनेमें असमर्थ हैं, फिर भी वे हमारे विद्यालयोंमें देशी भाषाओं द्वारा शिक्षा

१. यह बम्बईमें ९ फरवरी, १९१७को हुई थी।
२. छपी गुजराती भूमिका (एस० एन० ६३४१) में यही तारीख दी गई है।

देनेकी आवश्यकताको तीव्ररूपमें अनुभव करते हैं। मध्य तथा पूर्वी यूरोपके यहूदियोंने, जो संसारके सभी भागोंमें बिखरे हुए हैं, परस्पर बातचीतके लिए एक सामान्य भाषाकी आवश्यकता समझते हुए यीडिशको उन्नत करके उसे भाषाके स्तरपर ला खड़ा किया है और संसारके साहित्यमें उपलब्ध सर्वोत्तम पुस्तकोंका अनुवाद सफलतापूर्वक यीडिशमें कर दिया है। वे अपनी आत्माकी साधको, जिन तमाम विदेशी भाषाओंमें वे निष्णात हैं, उनके जरिए, सन्तुष्ट नहीं कर पाते थे। उनमें से जो थोड़ेसे पढ़े-लिखे लोग थे वे भी साधारण यहूदी जनतापर उसे अपने गौरवकी अनुभूति होनेसे पूर्व, किसी विदेशी भाषाको सीखनेका भार डालना नहीं चाहते थे। इसलिए उन्होंने एक ऐसी भाषाको, जो एक समय गँवारू भाषा मानी जाती थी और जिसे यहूदी बच्चे केवल अपनी माताओंसे सीखते थे, विशेष परिश्रम द्वारा संसारके सर्वोत्कृष्ट विचारोंका अनुवाद करके समृद्ध बना लिया है। यह सचमुच ही एक आश्चर्यजनक कार्य है। उन्होंने यह कार्य अपनी वर्तमान पीढ़ीमें ही किया है; वेबस्टरके कोषमें टाल भाषाकी परिभाषा इस प्रकार दी गई है — बहुत-सी भाषाओंके मेलसे बनी एक गँवारू भाषा जिसे विभिन्न राष्ट्रोंके यहूदी परस्पर बातचीतके लिए उपयोगमें लाते हैं।

किन्तु यदि यहूदियोंकी मातृभाषाकी परिभाषा अब इस प्रकार की जाये तो मध्य तथा पूर्वी यूरोपके यहूदी इसमें अपमानका अनुभव करेंगे। यदि ये यहूदी विद्वान् एक पीढ़ीमें अपने जनसाधारणको एक ऐसी भाषा प्रदान करनेमें सफल हो गये हैं, जिसके लिए वे गौरव अनुभव कर सकते हैं, तो निश्चित रूपसे हमारे लिए अपनी देशी भाषाओंकी आवश्यकता पूरी करना एक आसान काम होगा; क्योंकि वे सुसंस्कृत भाषाएँ हैं। हमें दक्षिण आफ्रिकासे भी यही शिक्षा मिलती है। वहाँ डच भाषाकी अपभ्रंश टाल तथा अंग्रेजीमें संघर्ष था। बोअर स्त्री-पुरुषोंने दृढ़ निश्चय कर लिया था कि वे अपने बच्चोंको, जिनसे वे बचपनमें टालमें बातचीत करते थे, अंग्रेजीके माध्यमसे शिक्षा प्राप्त करनेके बोझसे दबने नहीं देंगे। इस मामलेमें अंग्रेजीका पक्ष मजबूत था, उसके समर्थक योग्य थे, किन्तु अंग्रेजीको बोअरोंके देशप्रेमके सामने झुकना पड़ा। यहाँ इस बातपर ध्यान दिया जाये कि उन्होंने कठिन डच भाषाको भी अस्वीकार कर दिया। इसलिए स्कूलोंके उन अध्यापकोंको, जिन्हें यूरोपकी परिष्कृत डच भाषा बोलनेका अभ्यास है, मजबूर किया जाता है कि वे अपेक्षाकृत सुगम टाल भाषा सिखायें और इस समय दक्षिण आफ्रिकामें टाल भाषामें उत्तम साहित्यकी अभिवृद्धि हो रही है। यह भाषा पहले सीधे-सादे किन्तु बहादुर किसानोंकी परस्पर बोलचालकी भाषा थी। हमारा अपनी देशी भाषाओंके प्रति आश्वस्त न रहना अपने-आपमें आश्वस्त न होनेका चिह्न है; और यह हमारी अवनतिका बड़ा पक्का लक्षण है। यदि हम उस भाषाका जिसमें हमारी माताएँ बोलती हैं, आदर नहीं करते तो स्वशासनकी कोई भी योजना हमें स्वशासित राष्ट्र नहीं बना सकती; चाहे यह कितनी ही शुभ भावनासे या उदारतासे लागू क्यों न की जाये।

[अंग्रेजीसे]

लीडर, २५-५-१९१७; रंगून मेलसे उद्धृत।

यह अभियान इलाहाबादसे आरम्भ हुआ; मद्रास, पूना आदिमें सभाएँ हो चुकी हैं और अब हम भी इसी उद्देश्यसे यहाँ इकट्ठे हुए हैं। इस लड़ाईके लिए श्री ऐन्ड्रयूजने अपना जीवन समर्पित कर दिया है। श्री गोखलेको उनमें सम्पूर्ण विश्वास था और उन्हींके अनुरोधपर वे तथा पियर्सन परिस्थितिकी जाँच करनेके लिए फीजी गये थे। उनके पास ३०० पौंडकी जो पूँजी थी, उन्होंने उसे लाहौरके सत्याग्रह कोषमें दे डाला है। अब वे 'रेवरेंड' नहीं कहलाना चाहते, अपितु रवीन्द्रनाथ ठाकुरका शिष्य कहलानेमें अपना सम्मान समझते हैं। श्री पोलकको आप जानते ही हैं। वे जवान हैं और यदि आप जवान लोग, जितना वे करते हैं उसका दसवाँ हिस्सा भी करने लगें, तो हमें तत्काल स्वराज्य मिल जाये।

[गुजरातीसे]
प्रजाबन्धु, ११-२-१९१७

२४६. वक्तव्य: गिरमिट-प्रथाके उन्मूलनपर

[फरवरी ७, १९१७ के बाद]

इसमें कोई सन्देह नहीं कि हम अपने सम्मानकी रक्षाके लिए घोर संघर्षमें संलग्न हैं। और यदि हम सावधान न रहें तो लॉर्ड हार्डिंज़ने गिरमिट-प्रथाके जल्दी ही समाप्त हो जानेका जो वादा किया था वह व्यर्थ हो सकता है। वाइसरॉयकी हालकी घोषणा-[1] से यह आशंका दूर हो गई जान पड़ती है कि इस प्रथाकी अवधि सम्भवतः ५ वर्षके लिए और बढ़ा दी जायेगी और जैसा कि पूनामें सर रामकृष्ण भाण्डारकरने बताया था, इसका अर्थ होगा वस्तुतः दस वर्ष। लॉर्ड चेम्सफोर्डने हमें जो आश्वासन दिया उसके लिए हम उनके कृतज्ञ हैं। अंग्रेज सज्जन श्री सी० एफ० ऐन्ड्रयूजने इस मामलेमें हमारा मार्गदर्शन किया है; उसके लिए हम उनके भी कृतज्ञ हैं। जैसे ही उन्हें फीजीसे यह सूचना मिली कि उन देशोंके बागान-मालिकोंने गिरमिटकी अवधिमें पाँच वर्षकी वृद्धिको एक सुनिश्चित तथ्य समझ लिया है, वैसे ही वे शान्तिनिकेतनमें अपनी रोग-शय्या तथा अपना विश्राम छोड़कर खड़े हो गये और उन्होंने हमें हमारे कर्त्तव्यके प्रति सजग कर दिया।

किन्तु यदि एक बादल, जिससे हमारी आशाओंपर पानी पड़नेका भय था, ओझल हुआ सा जान पड़ता है तो उतना ही खतरनाक दूसरा बादल क्षितिजपर उठता दिखाई दे रहा है। लॉर्ड हार्डिंज़ने गत मार्चमें[2] उपर्युक्त गिरमिट प्रथाके उन्मूलनके लिए जो शर्तें रखी थीं वे इस प्रकार हैं:

किन्तु महामहिमकी सरकारकी ओरसे भारत मन्त्रीने हमें यह स्पष्ट करनेके लिए कहा है कि तबतक मजदूरोंकी भर्तीकी वर्तमान प्रथा निश्चित रूपसे कायम रखी जायेगी,

१. शाही विधान परिषद्में ७-२-१९१७ को दिये गये भाषणमें।

२. शाही विधान परिषद्में २० मार्च, १९१६ को मालवीयजीके उस प्रस्तावको स्वीकार करते हुए जिसमें गिरमिट प्रथाको रद करनेका अनुरोध किया गया था।

जबतक उपनिवेश कार्यालय तथा सम्बन्धित साम्राज्यीय उपनिवेश मिलकर ऐसी नई शर्तें तैयार नहीं कर लेते जिनके अनुसार मजदूरोंका उपनिवेशोंमें जाना बन्द नहीं कर दिया जाता; जबतक उपनिवेशोंमें समुचित संरक्षण नहीं दिये जाते तथा जबतक उन्हें अपनेको परिवर्तनोंके अनुकूल ढालनेका पर्याप्त अवकाश नहीं मिल जाता। यह अवकाश अवश्य ही उन परिस्थितियों और अवस्थाओंपर निर्भर करेगा जिनके बारेमें इस समय हमारी जानकारी अपूर्ण ही है।

हममें से जो इन प्रथाके बारेमें कुछ भी जानते हैं उन्हें मालूम है कि ऐसी शर्तें जो बागान-मालिकोंके लिए आर्थिक दृष्टिसे और हमारे लिए नैतिक दृष्टिसे उचित हों, ढूंढ़ निकालना प्राय: असम्भव है। हम समझते थे कि सरकारको स्वत: ही यह बात मालूम हो जायेगी, और इस बातको दृष्टिमें रखते हुए कि लॉर्ड हार्डिंजने प्रथाका हार्दिक विरोध किया था, इसका अन्त करनेके बारेमें सरकारका भी विचार वही होगा जो हमारा है। किन्तु अब हमारे सामने एक भिन्न स्थिति आ खड़ी हुई है। लगभग एक वर्ष बीत चुकनेके बाद अब हमें यह मालूम हुआ है, फीजीके बागान-मालिकोंको विश्वास दिलाया गया है कि उनके लिए यह प्रथा और पाँच वर्षतक कायम रहेगी तथा इस अवधिके अन्तमें भी नई शर्तोंके रूपमें जो परिवर्तन किये जायेंगे वे भी आखिर-कार नाम-मात्रके ही होंगे, वास्तविक नहीं। इस बारेमें श्री बोनार लॉका खरीता[1] स्पष्ट है। यह उन्होंने ४ मार्च १९१६ को फीजीके कार्यवाहक गवर्नरको लिखा है:

भारत-मन्त्रीको विश्वास है कि भारत सरकारके लिए विधान परिषद (लेजिस्लेटिव कौंसिल)में उन प्रस्तावोंको, जिनमें गिरमिट बन्द करनेपर जोर दिया जाता है, नाममात्रके सरकारी बहुमतसे, रद करते जाना सम्भव नहीं होगा। उनके विचारसे इस सम्बन्धमें भारतकी प्रबल और व्यापक भावनाके कारण यह प्रश्न नितान्त आवश्यक बन जाता है, और वे इस परिणामपर पहुँचे हैं कि गिरमिटियोंका प्रवास निश्चित रूपसे बन्द कर दिया जाना चाहिए।

इसके बाद वे कहते हैं:

यद्यपि भारत सरकार तथा भारत-मन्त्रीने जो निर्णय किया है वह सम्बन्धित उपनिवेशोंकी दृष्टिसे खेदजनक है, फिर भी मैं स्वीकार करता हूँ कि इस प्रश्नपर अन्तिम निर्णय करना भारत-सरकारके हाथमें रहना चाहिए।

इस प्रकार इस प्रश्नपर मानवताकी दृष्टिसे विचार करना उपनिवेशोंका काम नहीं है, यह अप्रत्यक्ष रूपसे मान लिया गया है।

अब उसी भ्रम-निवारक खरीतेसे लिये गये इस सारगर्भित अनुच्छेदपर भी ध्यान दीजिए:

इसपर विचार करनेके लिए कि गिरमिट प्रथाके स्थानपर कौन-सी प्रथा लागू की जाये, मैंने एक अन्तर्विभागीय समितिकी नियुक्ति स्वीकार कर ली है।[2] इस प्रथाको

१. ऐन्ड्रयू बोनार लॉ (१८५८-१९२३); ब्रिटिश राजनयिक, अनुदार दलीय नेता, उपनिवेश-मन्त्री और बादमें कोष-मन्त्री तथा प्रधानमंत्री।

२. यहाँ मूलमें कुछ शब्द मिटे हुए हैं।

पाँच वर्षतक और रहने दिया जाये तथा उस अवधिके अन्तमें बन्द कर दिया जाये। भारत-मन्त्री इस बातके लिए व्यग्र हैं कि जहाँतक सम्भव हो यह प्रथा इस तरह बदली जाये जिससे उपनिवेशोंके आर्थिक हितोंको कमसे-कम आघात पहुँचे। उन्होंने यह भी स्पष्ट कर दिया है कि जबतक कोई उचित संरक्षणयुक्त तरीका नहीं निकल आता तबतक वर्तमान प्रथा निश्चित रूपसे कायम रखी जायेगी।

अवधिमें पाँच वर्षकी अभिवृद्धिका उल्लेख करनेके कारण श्री ऐन्ड्रचूजकी भर्त्सना की गई है। उनके आलोचकोंसे बने तो, श्री बोनार लॉके फीजीके पत्रोंमें प्रकाशित इस जोरदार वक्तव्यका वे निराकरण करें। यदि हम सजग न रहे तो कुछ सरकारी वक्तव्यके कारण तथा कुछ बागान-मालिकोंके आर्थिक हितोंके सम्बन्धमें भारत-मन्त्रीकी चिन्ताके कारण, हमारा प्रयोजन आसानीसे विफल हो सकता है।

वाइसरायके भाषण तथा श्री बोनार लॉके खरीतेको ध्यानमें रखते हुए हमारा कर्त्तव्य स्पष्ट हो जाता है। जहाँ आवश्यक हो, हमें सरकारके हाथ मजबूत करने चाहिए और उसे गतिशील भी बनाना चाहिए ताकि यह अन्तर्विभागीय समिति हमारी आशाओं-पर तुषारपात न कर सके। यह एक ऐसी समिति है जिसमें साम्राज्यीय उपनिवेशोंका तथा उपनिवेश कार्यालयका प्रभाव बहुत अधिक रहेगा। यह एक ऐसी समिति है जिसे ऐसा प्रत्युपाय ढूँढ़ निकालना है जो हमें स्वीकार्य हो। मेरा विचार तो यह है कि यदि इसको मुख्यतः मजदूरोंके कल्याणपर ही विचार करना है तो यह व्यर्थका प्रयत्न होगा। किन्तु यदि बागान-मालिकोंकी चल सकी तो हम जानते हैं कि वे ऐसे प्रत्युपायपर जोर देंगे जो असम्भव होगा। और जब हम उसे अस्वीकृत कर देंगे तब वे श्री बोनार लॉके खरीतेके अनुसार गिरमिटके अन्तर्गत भर्ती जारी रखनेकी माँग करेंगे इसलिए यह स्पष्ट रूपसे समझ लेना चाहिए कि स्वीकार्य प्रत्युपाय ढूँढ़ निकालनेका दायित्व उनपर है, न कि हमपर। वे एक वर्षसे अधिक समय ले चुके हैं। लॉर्ड हार्डिंजने जिस खरीतेमें गिरमिटके पूर्ण उन्मूलनपर जोर दिया था वह १५ अक्तूबर, १९१५ को भेजा गया था। समितिकी बैठक आगामी मईमें होगी। सम्यक् दृष्टिसे विचारें तो प्रत्युपाय ढूँढ़ निकालनेके लिए यह समय बहुत अधिक है। श्री ऐन्ड्रचूजने फीजीमें जीवनकी स्थितियोंका जो मर्मभेदी चित्र खींचा है वह या तो सत्य है या असत्य। हमारा विश्वास है कि वह सत्य है और उसका कभी गम्भीरतापूर्वक खण्डन नहीं किया गया। एक वर्षसे अधिक प्रतीक्षा करनेका अर्थ हमारी सहनशक्तिकी हद-सी ही समझिए। इसका प्रत्युपाय मिले या न मिले, अपनी प्रतिष्ठा और कीर्तिकी खातिर और वास्तवमें साम्राज्यकी प्रतिष्ठा और कीर्तिकी खातिर, हम इस बातके अधिकारी हैं कि गुलामीके इस अन्तिम अवशेषको बिना किसी शर्तके मिटा दिया जाये। नेटालमें यह प्रथा किसी प्रत्युपायका उपबन्ध रखे बिना ही समाप्त कर दी गई थी[1]। मॉरिशसमें भी वैसा ही किया गया है। जोहानिसबर्गकी खानोंमें चीनी मजदूरोंसे काम लेना अचानक बन्द कर दिया गया और उनको जितनी जल्दी जहाज मिले उतनी जल्दी चीन भेज दिया गया। जोहानिसबर्गकी खानें इस धक्केको सहकर अब भी चल रही हैं।

१. १९११ में भारत सरकारने गिरमिटियोंकी भर्ती बन्द कर दी थी।

पूंजीपति निर्भीक भी होता है और डरपोक भी। यदि हम अपना कर्त्तव्य-भर पूरा करें, यदि भारत सरकार केवल फीजी तथा वेस्ट इंडीजके बागान मालिकोंकी चाटुकारितासे नर्म न पड़े तो निस्सन्देह ये लोग भारतकी सहायताके विना ही अपनी लाखोंकी पूंजीकी रक्षा करना सीख जायेंगे।

[अंग्रेजीसे]

स्पीचेज ऐंड राइटिंग्स ऑफ महात्मा गांधी (चौथा संस्करण)

२४७. भाषण : बम्बईकी गिरमिट-विरोधी-सभामें

फरवरी ९, १९१७

बम्बईके एक्सेलसीयर थियेटरमें ९ फरवरी, १९१७को सर जमशेदजी जीजीभाईकी अध्यक्षतामें एक सार्वजनिक सभा हुई। उसमें सर एम० जी० चन्दावरकरने एक प्रस्ताव रखा जिसमें माँग की गई थी कि गिरमिट-प्रथा तुरन्त बन्द कर दी जाये। यह प्रस्ताव सर्वसम्मतिसे पास कर दिया गया। तब एच० ए० वाडियाने प्रस्ताव रखा कि अध्यक्षको यह अधिकार दिया जाये कि वे उक्त प्रस्तावको तार द्वारा महामहिमके भारत-मन्त्री तथा परमश्रेष्ठ भारतके वाइसरॉय और गवर्नर-जनरलको भेज दें।

श्री मो० क० गांधीने प्रस्तावका अनुमोदन करते हुए कहा: मैं मंचपर बैठे हुए अपने मित्रोंके आदेशको मानकर इस समय अंग्रेजीमें भाषण दूंगा। जिस प्रस्तावका मैं अनुमोदन कर रहा हूँ उसमें कहा गया है कि पूर्ववर्त्ती प्रस्ताव तार द्वारा भारत-मन्त्री तथा परमश्रेष्ठ वाइसरॉयको भेज दिया जाये। इसका क्या मतलब है? हमने बहुत सोच-विचारके बाद इस वर्षकी ३१ मई तक की मीयाद गुलामीके इस अवशेषको समाप्त करनेके लिए रखी है। (हर्ष-ध्वनि)। इसका मतलब यह है कि हम ५० वर्ष तक सोये रहे और हमने यह प्रथा जारी रहने दी; किन्तु हमें अब अपने उत्तरदायित्व तथा कर्त्तव्यका भान हो गया है। अब हम एक दिन भी अधिक सोना नहीं चाहते; इसलिए हमारी इच्छा है कि एक क्षणकी भी देर किये विना प्रस्ताव तार द्वारा प्रेषित कर दिया जाये। इस प्रस्तावको पास करके हम सरकारके हाथ मजबूत कर रहे हैं और उपनिवेशोंको उनकी इस कर्त्तव्यभावनाके प्रति सजग कर रहे हैं कि वे भारतको साम्राज्यका एक अभिन्न अंग समझें। इससे वाइसरॉयके हाथ भी मजबूत होंगे। तब परमश्रेष्ठ वाइसरॉय कह सकते हैं कि यदि वे [ब्रिटिश-सरकार] ३१ मई तक गिरमिट-प्रथाके कलंकको दूर करनेके लिए तैयार नहीं तो मैं अब भारतपर शासन नहीं करूंगा। (हर्ष-ध्वनि)। भारतके लोगोंका सम्मान दांवपर है, इसलिए सोते या जागते उसके बारेमें हमें सोचना ही पड़ेगा। उन्होंने लोगोंसे अनुरोध किया कि वे ३१ मईका दिन याद रखें और तबतक बिलकुल चैन न लें। (हर्षध्वनि)

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १०-२-१९१७

२४८. भाषण : गिरमिट-विरोधी सभामें[1]

फरवरी ११, १९१७

श्री गांधीने घोषित किया कि सभाका कार्यक्रम देशी भाषामें चलेगा और कहा :

फीजी आदि जगहोंमें गिरमिटकी जिस प्रथाके कारण हमारे देशके अनाथ और अशिक्षित भाइयों और वहिनोंकी वड़ी दुर्दशा होती है वह तत्काल और सम्पूर्णतया उठा दी जानी चाहिए। हम ऐसा निर्णय कर रहे हैं कि इसे ३१ मई तक उठा दिया जाना चाहिए। हमारा काम तालियाँ वजानेसे होनेवाला नहीं है। यह काम तभी होगा जव हम वहाँ जानेके लिए तैयार मजदूरोंके घर जा-जाकर उन्हें समझायेंगे और जानेसे रोकेंगे। आपको इस प्रयत्नमें लग जाना चाहिए।

[गुजरातीसे]

गुजराती, १८-२-१९१७

२४९. वक्तव्य : गोखलेकी बरसीके सम्बन्धमें अखबारोंको

दिल्ली

फरवरी १७, १९१७

महोदय,

महामना पण्डित मदनमोहन मालवीय तथा अन्य मित्रोंकी सलाहसे मैं जनताका ध्यान अपने उस सुझावकी ओर आकर्षित करनेका साहस करता हूँ, जो मैंने अहमदावादके अपने मित्रोंको इस मासकी १९ तारीखको गोखलेकी वरसी मनानेके वारेमें दिया था। सुझाव यह है कि इन सभाओंमें प्रतिवर्ष दिवंगत देश भक्तकी शिक्षाओंसे सामंजस्य रखनेवाला कोई ऐसा निश्चित व्यावहारिक कदम उठाया जाये जिससे किसी सार्वजनिक उद्देश्यकी पूर्ति हो। अहमदावादमें सम्भवतः श्री गोखलेके भाषणोंको गुजरातीमें रूपान्तरित तथा प्रकाशित करनेके लिए चन्दा एकत्र किया जायेगा और उन्हें, अधिकसे-अधिक आगामी वरसी तक, प्रचारार्थ तैयार कर लिया जायेगा। दूसरे केन्द्र उनकी दूसरी चीजोंका अनुवाद कर सकते हैं, या विशेष प्रशिक्षणके निमित्त छात्रवृत्तियोंकी व्यवस्था करनेके लिए चन्दा एकत्र कर सकते हैं। यदि प्रतिवर्ष की जानेवाली सैकड़ों सभाओंमें इस तरहके वहुत वड़े तो नहीं लेकिन निश्चित कदम उठाये जायें तो खयाल है कि कुछ ही वर्षोंमें हम जो शैक्षणिक प्रगति करेंगे वह नगण्य नहीं होगी।

[अंग्रेजीसे]

लीडर, १९-२-१९१७

१. यह सभा वम्बईकी होमरूल लीगके तत्वावधानमें शान्ताराम चाल, वम्बईमें हुई थी। सभाकी अध्यक्षता गांधीजीने की थी।

२५०. पत्र : सुन्दरम्को

दिल्ली
फरवरी १७, १९१७

प्रिय सुन्दरम्,

ईश्वर करे तुम्हारे मनोरथ पूरे हों।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्रकी (जी० एन० ३१७४) फोटो-नकलसे।

२५१. मगनलाल गांधीको लिखे पत्रका अंश[1]

सोमवार [फरवरी १९, १९१७ से पूर्व][2]

...देना और उसके कारण अधिक लेना पड़े तो दूध लेना।

शिक्षाके सम्बन्धमें तुमने जो-कुछ लिखा है, वह ठीक है। तुम मुझे इस सम्बन्धमें परेशान करते रहो, यह वांछनीय है। इससे मैं अधिक जागरूक रहूँगा। मैं तुम्हारे कष्ट देनेका अर्थ बुरा नहीं लगाऊँगा और न उससे उकताऊँगा ही।

डॉ० हरिप्रसादसे कहना कि ऐसा लगता है, मैं गोखलेकी पुण्य-तिथिके सम्बन्धमें लेख साथ ही ला सकूँगा। वे ऐसी व्यवस्था रखें जिससे वह सोमवारको छप सके। सभामें ही जितना चन्दा हो सके, उतना कर लें।

विद्यालयकी योजनामें मराठी है,[3] इसलिए हमें भी मराठी आरम्भ करनी चाहिए, यह तुम ठीक लिखते हो। मैं जिस दिन गोधरासे लौटूं, उसी दिन इस सम्बन्धमें और शिक्षा-सम्बन्धी जिन अन्य विषयोंपर विचार करना उचित लगे, उनके सम्बन्धमें चर्चा कर लेना। ऐसे विषयोंको लिख रखना। भाई पोपटलाल और फूलचन्दसे शिक्षाका कार्य कराना तुम्हारा काम है।

आशा है, तुमने हिसाबका काम पूरा कर लिया होगा और फूलचन्दको समझा दिया होगा।

बापूके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५७०९) से।
सौजन्य : राधाबेन चौधरी

१. इस पत्रके पहले दो पृष्ठ उपलब्ध नहीं हैं।
२. गांधीजी इसी दिन गोधरा पहुँचे थे और उन्होंने गोखलेकी बरसीके उपलक्ष्यमें की गई सभाकी अध्यक्षता की थी।
३. देखिए "राष्ट्रीय गुजराती शाला", १८-१-१९१७ के बाद।

२५२. भाषण: गोधरामें, गोखलेकी बरसीके अवसरपर

फरवरी १९, १९१७

गोखलेकी बरसीके सम्बन्धमें १९ फरवरी, १९१७ को गोधरामें एक विशाल सार्वजनिक सभा हुई जिसकी अध्यक्षता गांधीजीने की। सभामें प्रस्ताव रखा गया था कि एक ऐसी समिति नियुक्त की जाये जो गोखलेके अति प्रिय जिलेमें शिक्षाका प्रसार करके उनकी स्मृतिको कायम रखनेके लिए कदम उठाये।

प्रस्तावके अनुमोदन तथा उसके पास होनेके बाद श्री गांधीने अध्यक्षीय भाषण दिया। सबसे पहला मुद्दा जो उन्होंने लिया वह था श्री गोखलेकी धार्मिक सहिष्णुता। उन्होंने कहा कि एक बार श्री गोखलेने एक ऐसे बनावटी 'साधु'को खूब डाँटा जो हिन्दुओं और मुसलमानोंके बीच भेदभावकी गहरी खाई खोदना चाहता था। उन्होंने कहा देशमें सर्वत्र धार्मिक विश्वास तेजीसे क्षीण होते जा रहे हैं, किन्तु इस समय एक अन्य धर्म प्रगति कर रहा है और वह है देश-प्रेम। श्री गोखलेने अपने भीतर इस धर्मको उच्चतम स्तर तक विकसित किया था; यहाँ तक कि उन्होंने अपना जीवन मातृभूमिकी सेवामें समर्पित कर दिया था।

श्री गांधीने अपने अनुपम तथा प्रभावशाली ढंगसे श्री गोखलेके सत्य, प्रेम और निर्भीकताके गुणोंका वर्णन किया। उन्होंने कहा कि इन गुणोंके साथ देश-भक्ति भी होनी चाहिए। जहाँ बहुतसे लोग केवल उन्हीं विचारोंको व्यक्त करते हैं जो श्रोताओंके लिए रुचिकर होते हैं, वहाँ गोखले सदैव अपने परिपक्व अध्ययन तथा चिन्तनसे परिष्कृत विचार जनता तथा अधिकारियोंके सामने रखते थे।

श्री गांधीने छोटे-बड़े सभी अधिकारियोंको श्री गोखलेके जीवनसे शिक्षा ग्रहण करनेकी सलाह देते हुए कहा कि वे यद्यपि शाही विधान परिषद् (इम्पीरियल लेजिस्लेटिव कौंसिल)के सदस्य होनेके नाते जीवनमें उच्च स्थान प्राप्त कर चुके थे, फिर भी वे अपने देशवासियोंके प्रति सदैव सदय और उदार थे। उन्होंने कहा कि जवान और बूढ़े हजारों लोगोंमें व्याप्त देशभक्तिकी भावना, सत्य और निर्भयता-जैसे उत्कृष्ट गुणोंके अभावमें, गंगाके उस प्रवाहकी तरह नष्ट हुई जा रही है जो हिमालयसे निकलकर बंगालकी खाड़ी तक बहता जा रहा है।

अन्तमें श्री गांधीने नगरके लोगोंसे अनुरोध किया कि वे उत्साहके साथ उस समितिकी सहायता करें जो जिलेमें शिक्षाके विकासके लिए नियुक्त की गई है। इसके बाद उन्होंने उन सब लोगोंको धन्यवाद दिया जिन्होंने उनका नगरमें इतना भव्य और हार्दिक स्वागत किया था।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २३-२-१९१७

२५३. भाषण: सरोजिनी नायडूके बारेमें[1]

फरवरी २३, १९१६

आज बहन सरोजिनीजीको[2] देखकर मुझे लॉर्ड कॉलिन कैम्बेलकी याद आई। लॉर्ड कॉलिन कैम्बेल १८५७ के विद्रोहके समय भारतमें मुख्य सेनाधिपतिकी हैसियतसे आये थे। उस समय सैनिक अधिकारी अपने ऐश-आरामकी साधन-सामग्री लाने-ले जानेके लिए ऊँटोंका मनमाना उपयोग करते थे और गोलाबारूद-जैसी महत्वकी सामग्री ले जानेके लिए ऊँट पर्याप्त संख्यामें नहीं मिलते थे। इसलिए लॉर्ड कैम्बेलने अपने उपयोगके लिए सिर्फ एक ही ऊँट स्वीकार किया और ऐसा करके दूसरे अधिकारियोंको उनके कर्तव्यका भान कराया जिससे सिपाहियोंका कुछ असन्तोष दूर हुआ। बहन सरोजिनी पहली श्रेणीमें यात्रा करती हैं किन्तु उनका सामान मात्र दो छोटी-सी पेटियोंमें आ जाता है। मैंने उनका गृह-जीवन देखा है और उसे देखकर मैं उनके प्रति सम्मानकी भावना रखने लगा हूँ। उनके चार बच्चे हैं जिनमें से सबसे छोटा तेरह वर्षका है। इस समय वे लगभग वानप्रस्थाश्रमका जीवन बिता रही हैं। वे रसायनशास्त्रीकी पुत्री हैं और एक स्वास्थ्याधिकारीकी पत्नी हैं। फिर भी अपने घरका कामकाज अत्यन्त दक्षतापूर्वक चलाती हैं। उनके मनमें सिर्फ यही एक बात गूँजती रहती है कि भारतकी उन्नति कैसे हो। उन्होंने अपने भाषणमें हमारी जो भर्त्सना की है उसमें उनका उद्देश्य हमें सम्पूर्णताकी प्राप्तिके लिए प्रेरित करनेका है। हिन्दू और मुसलमान उनके लिए समान हैं। अंग्रेजी भाषा उनके लिए मातृभाषा-जैसी हो गयी है किन्तु वे यह मानती हैं कि देशी भाषाओंके उद्धारके बिना हमारा काम नहीं चलेगा। हमें अपने अवगुणोंको जीतकर उनके-जैसे उच्च आदर्शोंको ग्रहण करना चाहिए।

[गुजरातीसे]

प्रजाबन्धु, २५-२-१९१६

१. यह भाषण अहमदाबादमें सरोजिनी नायडूके सम्मानमें आयोजित एक सभामें दिया गया था। स्थानीय विद्यार्थियोंने इसमें उन्हें मानपत्र अर्पित किया था।

२. सरोजिनी नायडू (१८७९-१९४९); प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ और कवयित्री; १९२५ में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके कानपुर अधिवेशनकी अध्यक्ष; स्वतंत्रता प्राप्तिके बाद उत्तर प्रदेशकी गवर्नर।

२५४. भाषण : सूरतमें गिरमिट-प्रथापर[१]

फरवरी २६, १९१७

बहनो और भाइयो,

मैं अहमदाबादका निवासी हूँ और इसलिए साधारणतः सूरतकी शहरी व्यवस्थाकी जानकारी मुझे नहीं हो सकती। मैं जब यहाँ आया तब मुझसे इस सभाका अध्यक्ष-पद ग्रहण करनेको कहा गया। मैं यह सुनकर सोचमें पड़ गया और मुझे अपनी अयोग्यताका भी विचार हुआ। इस शहरकी नागरिक स्थितिका मुझे कोई ज्ञान नहीं है, इसलिए मैंने स्थानीय भाइयोंकी सलाहको मानकर कहा कि मेरे अध्यक्ष होनेसे यदि आपका कार्य अच्छी तरह सम्पन्न हो सके तो मेरा नाम पेश करें। मैं अपना उत्तर-दायित्व भली-भाँति समझता हूँ। अलबत्ता यह नहीं कहा जा सकता कि यहाँ जिन विषयोंकी चर्चा होती है और जो प्रस्ताव आप लोग पास करनेवाले हैं उनके लिए मैं तैयार होकर आया हूँ। इस दृष्टिसे मैं इस पदके अयोग्य हूँ। इसलिए भाइयो और बहनो! मेरी प्रार्थना है कि मेरी जो त्रुटि आपके देखनेमें आये उसे नजर-अन्दाज करके मुझे निभा लें। अपना काम शुरू करनेसे पहले मैं आपको बहन सरोजिनी नायडूका सन्देश सुनाना चाहता हूँ। वे जब अहमदाबाद पधारीं, तब मैंने उन्हें यह सलाह दी थी कि यदि वे सूरत आयें तो अच्छा होगा। उन्होंने कहा कि रविवारके दिन उन्हें एक जरूरी काम है। उसके बाद डॉ० होराका तार आया। तब मैंने उनसे पुनः कहा कि यदि वे नहीं आयेंगी तो सूरतके लोगोंको बड़ी निराशा होगी, इसलिए उन्हें चलना ही चाहिए। उनपर ज्यादा जोर डाल सकनेकी गरजसे यह भी मालूम कर लिया कि उन्हें कौन-सा जरूरी काम था। बात यह है कि वे अनेक वर्षोंसे अस्वस्थ चली आ रही हैं। किन्तु उनका मनोबल इतना प्रबल है और उनका स्वदेश-प्रेम इतना उत्कट है कि जब कभी कामका मौका आता है तब वे वहाँ होती ही हैं। भगवान जाने कहाँसे उनमें ऐसी शक्ति आ जाती है कि क्षणभर पहले जो निष्प्राण-जैसी दिखाई देती थीं, मौका आ पड़नेपर उनके मुखपर दुःखका कोई भी चिह्न दिखाई नहीं पड़ता। यह उनकी अद्‌भुत शक्ति है। बम्बईमें २७ तारीख को एक विशाल सभा होनेवाली है; उसका कार्य सुचारु रूपसे कर सकनेके लिए उन्हें अपने स्वास्थ्यका ध्यान रखना चाहिए। सूरत आनेसे यह हेतु सिद्ध नहीं हो सकता था, इसलिए वे यहाँ नहीं आईं; किन्तु जो भारतकी प्रतिष्ठा हैं, देशका भूषण हैं और जो अपने स्वास्थ्यकी परवाह न करके देशभरमें घूमा करती हैं, ऐसी इस महिलाका ख्याल करके भी हमें अपना सर्वस्व देकर इस सवालपर विचार-विमर्श करना चाहिए। भारतके सभी धर्म यह सिखाते हैं कि एक कर्त्तव्य पूरा करनेके बाद ही दूसरा काम हाथमें लेना चाहिए। आप यहाँ इस अवसर-पर एक बड़ी जिम्मेदारी उठानेके लिए आये हुए हैं। जो कर्त्तव्य आपने अपने सिरपर

१. यह सभा जिला [कानून] संघके तत्त्वावधानमें हुई थी।

लिया है; पहले आप उसे पूरा करें अन्यथा कोई दूसरा कार्य स्वीकार करनेका आपको अधिकार नहीं रहता। मैं आपको उस कर्त्तव्यकी याद दिलाता हूँ। पिछले साल में सूरत आया था और आपसे मिला था; आपने उस समय महात्मा गोखलेके लिए एक कोष इकट्ठा करनेका निश्चय किया था। फिर आजतक उसकी कोई खबर नहीं ली गई। श्री अडवानीने उसमें ५०) दिये थे। केवल वे ही रुपये इस कोषमें अबतक पड़े हुए हैं। गोधरामें मेरी उनसे भेंट हुई थी, किन्तु इस बातकी चर्चा करनेका साहस मुझमें नहीं हुआ। अभी कोई बहुत देर नहीं हुई है; इस कोषके लिए आज भी आप पैसा इकट्ठा कर सकते हैं। यद्यपि श्री जहाँगीर पेटिटवाला कोष अब बन्द हो गया है और उसका न्यासपत्र भी तैयार हो चुका होगा। किन्तु भारत सेवक समाजमें अभी भी आप पैसा भेज सकते हैं। हरएक व्यक्तिको अपनी शक्तिके अनुसार कुछ देना ही चाहिए। शायद सूरतने, जिसका गुणगान नर्मदाशंकरने[1] किया है, यह सोचा हो कि वह देगा तो हजारों रुपये देगा या देगा ही नहीं। परन्तु मेरी सलाह यह है कि इस अवसरपर यदि आप सौ रुपये भेजते हैं तो दूसरे मौकेपर एक हजार रुपये भेज सकेंगे। यह विषय महत्त्वपूर्ण इसलिए है कि गिरमिट-प्रथाको हटानेके इस उद्देश्यके निमित्त नायडू बहन त्याग कर रही हैं और १८९६ में महात्मा गोखलेने उसमें अपना सहयोग दिया और १९१२ में तो उन्होंने इसे अपना ही प्रश्न बना लिया था। मुझे मालूम है कि उन दिनों उन्होंने जो व्याख्यान दिये उनमें उन्हें बड़ा श्रम हुआ और उससे उनका स्वास्थ्य भी बिगड़ा। इसलिए जिस महान नेताने इस प्रश्नकी खातिर अपने शरीर तक का बलिदान कर दिया उसकी स्मृतिमें कोष एकत्रित करनेके अपने पुराने वचनको याद करते हुए, आपको यथा-शक्ति चन्दा देना चाहिए। जिन सज्जनने मुझसे इस सभाकी अध्यक्षता करनेका प्रस्ताव किया था उन्होंने कहा है कि जो दो प्रश्न हमारे सामने हैं उनमें अधिक महत्त्वपूर्ण सेनाके लिए स्वयंसेवकोंके रूपमें सैनिकोंकी भर्तीका है। परन्तु मैं तब यह कहूँगा कि इन दोनों प्रश्नोंमें गिरमिटका प्रश्न अधिक महत्वका है। सेनामें भर्ती होनेके अधिकारके बारेमें आप जिस सन्तोषका अनुभव कर रहे हैं उसे प्रकट करना तो ठीक ही है; परन्तु उसके बाद जो करना उचित है सो भी तो करना होगा; नहीं तो कोरा सन्तोष किस काम-का? गिरमिट-प्रथाके बारेमें तो हमारा यह सतत प्रयत्न होना चाहिए कि भारतका कोई भी छोटा या बड़ा, प्रसिद्ध या अप्रसिद्ध नगर या गाँव ऐसा न रहे जिसमें इस प्रथाके विरोधमें आवाज न उठाई जाये। आपको मालूम है कि मैं दिल्लीसे आ रहा हूँ; वहाँ मैं महामहिम वाइसराय महोदय तथा राष्ट्रीय नेताओंसे मिल चुका हूँ। नायडू बहन तथा स्वर्गीय गोखलेकी भाँति भाई श्री ऐन्ड्रयूजने भी त्याग किया है। इस प्रश्नके सम्बन्धमें लगातार विचार करते रहनेके कारण उनके मनपर इतना गहरा असर पड़ा कि वे अस्वस्थ हो गये। यहाँतक कि उनका भाषण, जिसका अनुवाद हरएक भाषामें हुआ है, श्री पोलकको पढ़कर सुनाना पड़ा था। अब हमें इस सम्बन्धमें सार्वजनिक सभाएँ करनी चाहिए। ऐसा करनेमें हम सरकारको परेशानीमें नहीं डाल रहे हैं, प्रत्युत उसके हाथ मजबूत कर रहे हैं। खुद सरकारने ही स्वीकार किया है कि गिरमिट

१. गुजराती कवि नर्मद।

प्रथा अनीतिपूर्ण है और उससे अन्य कोई लाभ भी नहीं हो रहा है। थोड़ा बहुत आर्थिक लाभ होना सम्भव है परन्तु यह देखते हुए कि इससे नैतिक पतन हुआ है, इस प्रथाका अन्त होना चाहिए। इस प्रश्नपर मतभेदकी गुंजाइश है ही नहीं। 'टाइम्स ऑफ इंडिया' का सम्पादक पूछता है कि इस सवालको कौन हल करे और कब; जवाब फौरन ही मिलेगा कि यह अधिकार तो भारतका ही है; किन्तु इस सम्बन्धमें वाइसरॉयकी अपेक्षा हमारी भावना अधिक उपयोगी कार्य कर सकती है। मैं इसका केवल एक ही उदाहरण प्रस्तुत करूँगा — हमारी पूजनीय बहन बाजी गौरी अस्वस्थ हैं और उनकी छोटी बहन उनकी सेवा-शुश्रूषामें लगी हुई हैं। परिणामस्वरूप वे स्वयं अस्वस्थ हो गई हैं। उनके प्रति जितनी सहानुभूति यहाँके लोगोंकी होगी उतनी मुझ अहमदाबाद-निवासीकी नहीं हो सकती। और उनकी छोटी बहनकी जैसी सहानुभूति तो किसीको भी नहीं हो सकती। यदि मुझे उन-जैसी सहानुभूति होती तो मैं उनकी रोग-शय्याके पाससे न हिलता। ठीक उसी प्रकार अपने भाई-बहनोंकी दशाका खयाल जितना हम लोगोंको होगा उतना वाइसरॉयको नहीं हो सकता। हमें इस प्रथाको बन्द करनेकी अन्तिम तिथि निश्चित करा लेनी चाहिए; हमें कह देना चाहिए कि ३१ मई तक इस प्रथाको हम सहन कर सकते हैं। यदि यह प्रथा निश्चित तिथिसे एक दिन भी आगे चालू रही तो हजारों व्यक्ति अपनी जानकी बाजी लगा देंगे। यह प्रथा आज कोई पचास वर्षोंसे जारी है। इसके सम्बन्धमें अब-कहीं हमने प्रस्ताव रखा है और उसपर चर्चा शुरू की है, यह शर्मकी बात है। परन्तु मैं इसके विषयमें कुछ नहीं कहूँगा। इस प्रथाका [कटु] अनुभव मुझे गत बीस वर्षोंसे हो रहा है। इसलिए यदि आज मेरा हृदय रुदन करने लगे, मेरा मन भावाविष्ट हो जाये और यदि मैं अपने विचार विस्तारसे आपके समक्ष रखूँ तो आप मुझे क्षमा करेंगे। यह प्रथा गुलामीका ही एक रूप है। ब्रिटिश साम्राज्यकी छत्रछायामें फलने-फूलनेवाली इस प्रथामें गुलामीकी उसी प्रणालीके तत्त्व दीख पड़ रहे हैं जिन्हें इंग्लैंड बड़े गर्वके साथ जड़से उखाड़ फेंकनेका दावा कर रहा है। गिरमिट-प्रथाके विषयमें कहा जा सकता है कि वह सीमित अवधि तक की गुलामी है। गुलामीके सभी लक्षण तो इस प्रथामें मौजूद ही हैं; एक और भी बात इसमें है। इसे पूरी तरह जाननेके बाद व्यक्ति काँप उठता है। इस प्रथाके परिणामस्वरूप भारतकी नारीका गौरव बिलकुल नष्ट हो जाता है; उसकी मर्यादाका लोप हो जाता है। इस देशमें जिस सिद्धान्तके पीछे लाखों मनुष्य जानपर खेल गये, उसी सिद्धान्तका इस पद्धतिके कारण गला घुट रहा है। इसी बातको लेकर हम लोग यहाँ एकत्रित हुए हैं।

मैं यहाँ आपकी भावनाओंको उत्तेजित करने नहीं आया हूँ। जोश उभारनेके मामलेमें श्री एन्ड्रयूज मेरी अपेक्षा कहीं अधिक कुशल हैं। उन्होंने हालातका हूबहू चित्र खींच कर रख दिया है। मेरी कामना है कि इस प्रथासे सम्बन्धित जो साहित्य हमारे पास है, उसे पढ़कर आप लोगोंका भी खून उसी प्रकार खौल उठे, जैसे मेरा खौल रहा है। उसके अनन्तर मेरी प्रभुसे यह भी विनय है कि बाजी गौरी बहन शीघ्र स्वस्थ हो जायें। परन्तु जो कष्ट समुद्रके पार हमारी हजारों बहनें भोग रही हैं उस कष्टके सामने बाजी गौरी बहनका कष्ट नगण्य है। बदकिस्मतीसे यदि उनकी आत्मा इस नश्वर

शरीरको छोड़ जाये तो परमपदको प्राप्त होगी। परन्तु इस भवनमें उपस्थित ऐसा कौन-सा ज्योतिषी है जो कह सके कि वहाँ हमारी जिन हजारों बहनोंकी नैतिक अधोगति हो रही है उनका क्या होगा। इस रोगकी चिकित्सा हममें से हर एक कर सकता है। इसके लिए हम सबको त्याग करना चाहिए। वाइसरॉय महोदयसे हमें विनयपूर्वक कह देना चाहिए कि ३१ मईके पहले यह स्थिति समाप्त हो जानी चाहिए और आज ही यह संकल्प कर लेना चाहिए कि उस तारीखके पश्चात् स्थिति बर्दाश्तके बाहर हो जायेगी। अब मैं इस प्रकरणको यहीं छोड़ता हूँ।

स्वयंसेवकोंके रूपमें सेनामें भरती होनेके अधिकारके बारेमें मैं अनभिज्ञ हूँ। जब मैंने इस मसलेको पहले-पहल हाथमें लिया तब मुझे समझमें नहीं आता था कि भारतमें भी इस प्रकारका अधिकार क्यों नहीं दिया गया। शायद हम उसके लायक नहीं थे। अब यह अधिकार हमें मिल चुका है। आज भारतका शिक्षित समाज मेरे विचारोंको समझ रहा है। मैं हथियारोंसे किये गये संग्रामके खिलाफ हूँ। उसमें मेरी श्रद्धा नहीं है। अपनी अथवा दूसरोंकी रक्षाके निमित्त शस्त्र धारण करनेसे पूर्णरूपेण रक्षा होना असंभव है। फिर हमारे पास वैसी शक्ति भी नहीं है। मेरी धारणा है कि शस्त्र धारण करके शत्रुसे लोहा लेनेके स्थानपर आत्मिक शक्तिसे काम किया जाना चाहिए। जितना प्रभाव उसका होगा उतना अन्य किसी वस्तुका नहीं। जनरल गॉर्डन एक महान ब्रिटिश योद्धा था। उसका चित्र बनानेवाले चित्रकारकी बहुत अधिक प्रशंसा हुई है। चित्रकारने उस योद्धाको हाथमें तलवार या बन्दूक लिये चित्रित नहीं किया था बल्कि उसके हाथमें केवल छड़ी ही है। मैं तो यहाँ तक कहूँगा कि यदि वह उसे दोनों हाथ जोड़े हुए दिखाता और उसके नेत्रों, ओठों तथा समस्त मुख-मण्डलपर उसने प्रेमकी ज्योति चित्रित की होती, यह भाव प्रदर्शित करनेके लिए कि इस योद्धाको अपने निश्चयसे समस्त संसार विचलित नहीं कर सकता, तो उस चित्रसे एक सच्चे क्षत्रियका स्वभाव व्यक्त हो जाता। ये हैं मेरे व्यक्तिगत विचार; परन्तु सबको ये ग्राह्य नहीं हो सकते। बहुतेरे इस खयालको निकम्मा मानते हैं और कुछमें क़दाचित् उस विचारको कार्यान्वित करनेकी क्षमता नहीं होती। इसके निमित्त आप लोगोंका कर्त्तव्य है कि [शत्रुके सम्मुख आनेपर पीठ न दें], "अहिंसा परमो धर्मः" कहते हुए उसकी आड़में भाग न खड़े हों।[1] यह बहुत भयंकर दोष माना जायेगा। यदि आपकी इच्छा यह है कि शत्रुका विनाश किसी भी प्रकार हो ही जाये तो आप अहिंसा व्रतका पालन यथार्थ रूपमें नहीं कर रहे हैं, क्योंकि इस व्रतमें भयके मारे भाग जाना आता ही नहीं। भारतीयोंमें जो लोग यह चाहते हैं कि हम लोगोंकी, हमारी स्त्रियोंकी, नीतिकी, और कोषकी रक्षा होनी चाहिए उनकी रक्षा करना आप सबका ही काम है, उनकी रक्षा अवश्य की जाये। परन्तु कैसे? जिन लोगोंको मेरे प्रिय सिद्धान्तोंमें विश्वास नहीं है, उन्हें हथियारोंसे काम लेना ही चाहिए। यही कारण है कि रंगरूटोंको भरती होनेका जो अधिकार मिल गया है उसका मैं इस दृष्टिसे स्वागत करता हूँ। यहाँ आये हुए लोगोंसे मैं यही कहूँगा कि आप लोग सेनामें भरती हों। यदि कोई मुझसे यह पूछे कि बताइये

१. यहाँ रिपोर्टमें कुछ त्रुटि है।

हमें फौजमें ऊँचे अफसरकी जगह दी जायेगी या नहीं तो मैं कहूँगा कि यह रोना बादमें रोयें क्योंकि ऐसा न हो कि हाथ आया हुआ अवसर निकल जाये। सरकारके पास जाकर हमें कहना चाहिए कि हम तैयार हैं। (तालियाँ)। इसीमें हमारी शोभा है। अब मैं वकील श्री बेजनजीसे प्रार्थना करूँगा कि पहला प्रस्ताव पेश करें।

सभा विर्सजित करनेके पूर्व गांधीजीने कहा :

सभा समाप्त करनेसे पहले मैं आप लोगोंको तथा आयोजकोंको धन्यवाद देता हूँ। एक बात और है — मैं गोखले-कोष जमा करनेके सम्बन्धमें कुछ कहना चाहता था और जहाँ-कहीं मैं गया हूँ यह बात मैंने कही भी है। जो लोग इस कामके लिए स्वयंसेवकोंकी तरह कार्य करना चाहते हों वे फाटकपर खड़े हो जायें और देनेवाले सज्जन जो कुछ भी देना चाहें उन्हें देते जायें। इसका श्रेय सूरतको मिलेगा। जिस प्रस्तावका[1] अनुवाद श्री ठाकुरराम चाहते हैं वह मेरे पास मौजूद है; मैं उसका अनुवाद उनके पास भेज दूंगा [और] वे उसमें आवश्यक फेरफार करके प्रकाशित करवा सकते हैं।

[गुजरातीसे]

गुजरात मित्र अने गुजरात दर्पण, ४–३–१९१७।

२५५. तार : महाराजा कासिम बाजारको

[अहमदाबाद
फरवरी २६, १९१७ या उसके बाद][2]

महाराजा कासिम बाजार
कलकत्ता

शुक्रको कार्यक्रमका वचन निभाने कराची जा रहा हूँ। छः[3] को कलकत्ता पहुँचना असम्भव। इसे सात समझकर कराची जानेका वचन दिया था। मार्फत दुर्गादास अडवानी,[4] कराची, तार दें।

गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० ६३४७) की फोटो-नकलसे।

१. शायद तात्पर्य उस प्रस्तावसे है जो शाही विधान परिषद्में गिरमिट-प्रथाके बारेमें पेश किया गया था।

२. यह महाराजाके २६ फरवरीके तारके उत्तरमें भेजा गया था। तार इस प्रकार था : "६ मार्चको सार्वजनिक सभा। कृपया कलकत्तेमें मेरा आतिथ्य स्वीकार करें. . .।"

३. गांधीजी ६ मार्चको कलकत्ता पहुँच सके थे। देखिए "भाषण : कलकत्ताकी गिरमिट-विरोधी सभामें", ६–३–१९१७।

४. एक सिन्धी नेता जिन्होंने राष्ट्रकी खातिर जेल भोगी।

२५६. तार: सी० एफ० ऐन्ड्रयूजको

[अहमदाबाद
फरवरी २६, १९१७ या उसके बाद][1]

शुक्रका कार्यक्रम निभाने कराची जा रहा हूँ। कलकत्तेकी सभा[2] ७ को समझकर मंजूर किया था। बार्न्ज़से मन्त्रणाकी तारीख मेरी सुविधानुसार निश्चित करें। मार्फत दुर्गादास अडवानी, कराची तार दें। सस्नेह

गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० ६३४८) की फोटो-नकलसे।

२५७. भाषण: होमरूल लीग कार्यालय, कराचीमें

मार्च २, १९१७

आज (इसी २ तारीखको) गांधी दिनमें दो बार होम रूल लीगके प्रधान कार्यालयमें गये। दोनों बार उन्होंने सदस्यों, सहयोगी सदस्यों और कॉलेजोंके छात्रोंके सम्मुख सत्याग्रह और तपके सम्बन्धमें भाषण दिया। उन्होंने देखा कि सिन्धी लोग वस्त्रोंके बहुत प्रेमी हैं। गांधीको उनका यह वस्त्रप्रेम अच्छा नहीं लगा। एक सदस्यने उनसे [गाँधीजीसे] पूछा कि वे नंगे पैर क्यों रहते हैं गांधीने उत्तर दिया कि यदि वे तपोमय जीवन न बितायें तो जनसाधारणसे अपनी सचाईमें विश्वास करनेकी आशा नहीं कर सकते। उन्होंने कहा कि भारत बहुत निर्धन देश है; इसलिए जो लोग वस्त्रोंपर पैसा खर्च कर सकते हैं, वे उसे इस तरह खर्च न करके गरीबोंको दे दें। 'हिन्दवासी' के श्री जेठमलने[3] उनसे सत्याग्रहके सम्बन्धमें प्रश्न किया। गांधीने अपने दक्षिण आफ्रिकाके अनुभवोंसे उदाहरण दे-देकर सत्याग्रहका महत्त्व समझाया।

गांधी हरदेवी बाई कन्या पाठशाला देखने भी गये और वहाँ उन्होंने बच्चोंके सम्मुख शिक्षाके सम्बन्धमें संक्षेपमें कुछ बातें कहीं।

१. यह ऐन्ड्र्यूज़के २६ फरवरीके तारके उत्तरमें भेजा गया था। तार इस प्रकार था: "मार्च ८के आसपास पंडित तथा अन्य लोगोंके साथ बार्न्स मन्त्रणा करेंगे। आपकी उपस्थिति आवश्यक. . .।"

२. देखिए पिछला शिर्षक और "भाषण: कलकत्ताकी गिरमिट-विरोधी सभामें", ६-३-१९१७।

३. जेठमल परसराम; हिन्दवासीके सम्पादक; सिन्धी विद्वान और राजनीतिक कार्यकर्त्ता, जिन्होंने बादमें देशके लिए जेल भोगी।

वे दोपहर-बाद पारसी थियेटरमें कच्छी और गुजराती समाजके समारोहमें गये और मजदूरोंके बारेमें बोले।

[अंग्रेजीसे]

बाम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्टस, १९१७; पृष्ठ १४६

२५८. भाषण: पारसी थियेटर, कराचीमें

मार्च २, १९१७

अपने आगमनके बाद श्री गांधीने कराचीमें पारसी थियेटरकी सार्वजनिक सभामें भारत-रक्षा-सेनामें भारतीयोंके सम्मिलत होनेके कर्त्तव्यके सम्बन्धमें एक निश्चित घोषणा की। उन्होंने कहा कि भारतवासी सेनामें अपनी भर्तीके लिए सरकारपर बार-बार जोर डालते रहे हैं; और अब चूँकि सरकारने उन्हें भर्ती करना स्वीकार कर लिया है, भारतवासियोंको बहुत बड़ी संख्यामें भर्ती होकर मातृ-भूमिके प्रति अपने कर्त्तव्यका पालन करना चाहिए। मैं यह बात सत्याग्रहीके रूपमें नहीं, बल्कि एक ऐसे व्यक्तिके रूपमें कहता हूँ जो इस सम्बन्धमें भारतीयोंका विचार जानने और अपने देशकी वर्तमान परिस्थितिको समझनेका दावा करता है। शस्त्रका उपयोग करने-न-करनेके सम्बन्धमें —चाहे वह आत्म-रक्षाके लिए ही क्यों न हो—मेरे कुछ दृढ़ विचार हैं; परन्तु मैं जानता हूँ कि जो माँग स्वीकार हुई है, उसके लिए मेरे बहुत-से देशभाई पिछले कई वर्षोंसे आन्दोलन करते रहे हैं; और वे मेरे उन विचारोंसे सहमत नहीं हैं। ऐसे अवसर जीवनमें एकाध बार ही आते हैं। अपने देशसे प्यार करनेवाले किसी भी व्यक्तिको इसे खोना नहीं चाहिए। श्री सत्येन्द्र सिन्हाने[1] अपने अध्यक्षीय भाषणमें सबसे पहले इसी विषयको लिया था और खास तौरसे इसीपर जोर दिया। सर कृष्ण गुप्तने भी भारतीयोंसे आग्रह किया था कि वे सबसे पहले तो सेनामें प्रवेश प्राप्त करें। अब चूँकि सेनामें प्रवेश करनेका द्वार हमारे लिए खोल दिया गया है, इसलिए यदि हम इस सुयोगसे लाभ नहीं उठाते तो इससे हमारी, हमारे नेताओंकी और हमारे देशकी बदनामी होगी। व्यवसायी लोग अपने व्यवसायोंको अपने कर्त्तव्य-मार्गमें बाधक न बनने दें। बल्कि उन्हें जानना चाहिए कि यदि वे अपने देशकी सुरक्षाकी परवाह नहीं करते या उसमें असमर्थ सिद्ध होते हैं, और परिणामतः शत्रु उनके देशपर अधिकार कर लेता है, तो उनका सारा व्यवसाय नष्ट हो जायेगा। मेरे विचारसे यह विधेयक[2] स्वराज्यकी पहली सीढ़ी है; और यदि हम सरकारके इस सद्भावनापूर्ण कदमका आदर नहीं करते हैं तो

१. (१८६४–१९२८); वकील, राजनयिक और भारत सरकारमें प्रथम भारतीय मन्त्री; १९१५ में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके बम्बई अधिवेशनके अध्यक्ष।

२. भारतीय प्रतिरक्षा विधेयक।

यह एक प्रकारसे स्वराज्यको अस्वीकार करना होगा। वह हमें जो-कुछ दे रही है, उसे बिना किसी शर्तके स्वीकार कर लेना चाहिए। अभी तो हमें पूरे मनसे इस योजनाको स्वीकार कर लेना चाहिए; इसके दोषोंकी आलोचना करने और उन्हें दूर करानेके लिए तो हमारे पास पर्याप्त समय होगा।

[अंग्रेजीसे]

न्यू इंडिया, ५-३-१९१२

२५९. भाषण: कराचीकी गिरमिट-विरोधी सभामें

मार्च २, १९१७

कराची नागरिक संघ (सिटिज़न्स एसोसिएशन)के तत्त्वावधानमें इसी २ तारीखको खालिकदीन भवनमें गिरमिट-प्रथा जारी रखनेके विरोधमें एक सार्वजनिक सभा हुई। संघके अध्यक्ष माननीय श्री हरचन्द रायने सभापतित्व किया।

श्री गांधी नियत समयके कुछ बाद आये। उन्होंने श्रोताओंको बताया कि मैं समाप्ति तक नहीं ठहर सकता, क्योंकि कासिम बाजारके महाराजाने इसी ६ तारीखको मुझे कलकत्ते आनेके लिए आमन्त्रित किया है, और मुझे वहाँ जानेवाली गाड़ी पकड़नी है।

वे आध घंटे तक हिन्दीमें भाषण देनेके बाद भवनसे चले गये।

उन्होंने अपना भाषण आरंभ करते हुए सभामें एकत्रित लोगोंसे अहमद मुहम्मद काछलियाको, जिनके भतीजेका[1] देहान्त हो गया एक संवेदनाका तार भेजनेका अनुरोध किया। उन्होंने बताया कि श्री काछलियाने दक्षिण आफ्रिकामें भारतीयोंके लिए कितना काम किया है। उसके बाद उन्होंने गिरमिट-प्रथाकी चर्चा की। उसकी विभिन्न बुराइयोंका जिक्र करनेके बाद उन्होंने सभामें उपस्थित लोगोंसे कहा कि भारतीयोंको इसी सालकी ३१ मई तक इस प्रथाको रद करनेपर जोर देना चाहिए। यदि उनकी प्रार्थना स्वीकार न की जाये तो उन्हें भारतीय मजदूरोंका देशसे फीजी जाना रोकनेके लिए जो कुछ किया जा सकता हो वह सभी करना चाहिए। लोगोंके मनमें इस प्रथाके प्रति घृणा-भाव उत्पन्न करने और उन्हें इसे बन्द करनेकी माँग करना सिखानेके लिए हर प्रयत्न किया जाना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्टस, १९१७; पृ० १४६।

१. पुत्र; देखिए अगला शीर्षक।

२६०. भाषण: कलकत्ताकी गिरमिट-विरोधी सभामें

मार्च ६, १९१७

६ मार्च, १९१७ को कलकत्तेके टाउन हॉलमें महाराजा मणीन्द्रचन्द्र नन्दीकी अध्यक्षतामें एक सार्वजनिक सभा हुई, जिसमें गांधीजीने गिरमिटिया मजदूरोंके दक्षिण आफ्रिका-प्रवासके बारेमें एक वक्तव्य दिया।

श्री मो० क० गांधीने अध्यक्ष द्वारा प्रस्तुत किये गये प्रस्तावका अनुमोदन करते हुए कहा: अहमद मुहम्मद काछलियाके पुत्रका अभी हालमें ही देहान्त हो गया है; हम सब उनके प्रति संवेदना प्रगट करते हैं। श्री काछलिया ट्रान्सवाल ब्रिटिश भारतीय संघके अध्यक्ष थे। वे सत्याग्रही हैं और कई बार जेल जा चुके हैं। श्री गांधीने कहा कि सरकारने श्री मालवीयको अपना विधेयक प्रस्तुत नहीं करने दिया, क्योंकि वह स्वयं एक ऐसा विधेयक प्रस्तुत करना चाहती है जिससे लोग सन्तुष्ट हो जायेंगे। हम सभी जानते हैं कि वाइसरॉयकी सहानुभूति हमारे साथ है; किन्तु भारत-मन्त्री हमारे विरुद्ध हैं। वे भारतीयोंको हानि पहुँचाकर उपनिवेशीय खेत-मालिकोंके हितोंको सोनेसे तोलना चाहते हैं। भारत-मन्त्री यहाँसे बहुत दूर बैठे हैं और इतनी दूरसे वे भारतीयोंकी भावनाओंको नहीं समझ सकते। भारतका विश्वास है कि श्री ऐन्ड्रयूजकी रिपोर्ट[1] सच्ची है। खेत-मालिकोंने इंग्लैंड भेजे जानेके लिए अपने सर्वोत्तम लोग नियुक्त कर दिये हैं और वे समय देनेके लिए आग्रह कर रहे हैं। यदि भारत अपने-आपको अवसरके योग्य सिद्ध नहीं करेगा तो खेत-मालिक बाजी मार ले जायेंगे। इस प्रथाको अब बन्द करना चाहिए — यह बात भारत-मन्त्री नहीं, भारतके लोग ही कह सकते हैं और उन्होंने उसके लिए ३१ मईकी तिथि निश्चित की है। इसकी तिथि साल-दर-साल टलती जाये और हम इसे चुपचाप बैठे देखते रहें, यह नहीं हो सकता। यह कह देना हमारा कर्त्तव्य है कि भारत इस अन्यायको ३१ मईके बाद एक क्षण भी सहन नहीं कर सकता। लन्दन सम्मेलनमें इसके सिवाय कोई भी व्यवस्था क्यों न की जाये, वह भारतको कदापि स्वीकार्य न होगी।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, ७-३-१९१७

---

१. फीजीके गिरमिटियोंके बारेमें रिपोर्ट; देखिए "भाषण: भारतीय गिरमिटिया मजदूरोंके सम्बन्धमें", २८-१०-१९१५।

२६१. पत्र : मणिलाल गांधीको

अहमदाबाद
बुधवार [मार्च ७, १९१७ से पूर्व][1]

चि० मणिलाल,

जितना दु:ख तुम्हें जानेमें हुआ होगा, तुम्हें जाने देनेमें उससे अधिक दु:ख मुझे हुआ है। किन्तु, अनेक वार मुझे अपना हृदय वज्रसे भी कठोर कर लेना पड़ता है, क्योंकि मैं तुम्हारा हित इसीमें समझता हूँ। यदि तुम वहाँ अपना निर्माण कर सकोगे तो सव अच्छा ही होगा। मैं चाहता हूँ कि तुम स्वतन्त्र विचार करना सीखो और जव मेरा विरोध करना उचित जान पड़े तव साहसपूर्वक मेरा विरोध भी करो। तुम पूरे मजदूर वनो। मैं इसीमें श्रेय मानता हूँ।

वापूके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० १११) से।
सौजन्य : सुशीलावेन गांधी

२६२. पत्र : मणिलाल गांधीको

फाल्गुन सुदी १४ [मार्च ७, १९१७][2]

चि० मणिलाल,

तुम तो वहाँ अवतक पुराने भी हो गये होगे। भाई मेढ़[3] और प्रागजी कुछ ही दिनोंमें वहाँ पहुँच जायेंगे। इसलिए अभी कुछ दिन तुम्हें वहाँका वातावरण भी यहाँके जैसा ही लगेगा।

तुम अपनी खाँसीका ठीक इलाज करके निश्चिन्ततापूर्वक कार्य करना। इलाजकी दृष्टिसे श्वासोच्छ्वासकी क्रिया और छोटे चम्मचसे एक चम्मच जैतूनके तेलका सेवन पर्याप्त होगा। वादमें उसकी मात्रा वढ़ाई भी जा सकती है। टमाटरके साथ मिलाकर उसे कच्चा खाया जा सकता है। चाय, कॉफी और कोको छोड़ दोगे तो उस हदतक खाँसीको जड़-मूलसे नष्ट करनेमें मदद मिलेगी। इस सवपर ठीकसे सोच-समझकर अमल करना। श्वासोच्छ्वासकी क्रिया करनेमें किसी भी कारणसे आलस्य न करना। इसका

१. यह पत्र ७ मार्च १९१७ को लिखे गये अगले शीर्षक "पत्र: मणिलाल गांधीको", से पूर्व लिखा गया जान पड़ता है।

२. मणिलाल १९१७ के आरम्भमें दक्षिण आफ्रिका चले गये थे।

३. सुरेन्द्रराय मेढ़, दक्षिण आफ्रिकी सत्याग्रहके एक प्रमुख कार्यकर्त्ता।

अभ्यास मेरी बताई विधिसे करना। गणित करना कदापि न छोड़ना। उसे थोड़ा-बहुत तो हमेशा करते ही रहना पड़ेगा। मेरी सलाह यह है कि विधि आती है, यह सोचकर प्रश्नोंको हल किये बिना छोड़ न देना। इस प्रकार तुम ज्यों-ज्यों सरल और कठिन प्रश्न हल करते जाओगे, त्यों-त्यों तुम्हारा गणितका ज्ञान अच्छा होता जायेगा। इसमें आलस्य न करना। ऐसा ही संस्कृतके सम्बन्धमें समझना। और सबसे अन्तमें आती है अंग्रेजी। उसमें फिलहाल तो मैंने रस्किनका जो-कुछ पढ़ाया है, उसपर भलीभाँति मनन करना। 'लिसीदास'[1] पढ़ते रहना और जो-कुछ समझमें न आये, उसके सम्बन्धमें मुझे पत्र लिखकर पूछना।

यदि कुमारी श्लेसिनको अंग्रेजीमें पत्र लिखते रहोगे तो वह तुम्हें अंग्रेजीमें ही उत्तर दिया करेगी और तुम्हारे पत्रोंकी भाषा सुधारकर उन्हें वापस भेज दिया करेगी। प्रति-दिन कमसे-कम दो घंटे तो पढ़नेमें देना ही। यदि तुम इतना वक्त भी न निकाल सकोगे तो यह बहुत बुरी बात होगी। गुजराती पुस्तकें पढ़ने और उनपर मनन करनेकी आदत डालना भी आवश्यक है। यदि तुम नियमपूर्वक कार्य करो और बेकारकी बातें सोचते रहनेकी आदत छोड़ दो तो यह सब सहज ही सम्भव हो सकता है।

बापूके आशीर्वाद

यहाँकी चिन्ता न करना।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० १०९) से।
सौजन्य : सुशीलाबेन गांधी

२६३. मथुरादास त्रिकमजीको लिखे पत्रका अंश

अहमदाबाद
फाल्गुन वदी ११ [मार्च १९, १९१७]

चि० रामकुँवरकी मृत्युके समाचारसे मनमें कई तरहके विचार उत्पन्न होते हैं। आनन्द बेन पर दुःखका बोझ बढ़ता ही चला जा रहा है। किन्तु मैं जानता हूँ, उनमें अपने चित्तको शान्त रखनेकी क्षमता है। तुम स्वयं भी ज्ञानी व्यक्ति हो। इस ज्ञानका उपयोग करके अपने चित्तको शान्त रखोगे।

[गुजरातीसे]
बापुनी प्रसादी

१. अंग्रेजीके प्रसिद्ध कवि जॉन मिल्टन (१६०८-१६७४) का एक शोक-गीत।

२६४. पत्र : एस्थर फैरिंगको

अहमदाबाद
मार्च २०, १९१७

प्रिय एस्थर,

एक अंग्रेज महिला[१] मेरी मित्र हैं। उन्हें और उनकी वहनके वच्चोंको गर्मियोंमें किसी पहाड़ी जगहमें रहनेके लिए जाना है। तुम भी किसी ऐसी जगहमें जा ही रही हो। यदि वे भी उसी जगह जायें जहाँ तुम जा रही हो तो क्या उनसे मैत्री सम्भव मानोगी? कहनेकी आवश्यकता नहीं कि वे लोग अपना खर्च खुद ही उठायेंगे। उन्हें जिस चीजकी जरूरत है वह है अच्छा साथ। तो मुझे तुम्हारा खयाल आया। यदि यह सम्भव हो तो मुझे सूचित करो कि तुम कहाँ जाओगी, कव रवाना होओगी, कहाँ ठहरोगी और क्या तुम्हारे ही साथ उनके रहने, भोजन करनेकी व्यवस्था भी हो सकेगी। मुझे वहाँके खर्चका अन्दाज भी लिखना। तुमने श्री पोलकका नाम तो सुना होगा। मेरी मित्र महिला उनकी साली हैं। श्री पोलक और उनकी पत्नी सार्वजनिक कार्यसे दौरेपर जायेंगे। इस वीच वे अपने वच्चोंको किसी भी ऐसी पहाड़ी जगह रखनेके लिए चिन्तित हैं, जहाँ श्री पोलककी सालीको उपयुक्त साहचर्य मिल सके। वे भारतमें पहली वार ही आई हैं।

हम सवका वहुत-वहुत प्यार।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

पोलक-परिवार अहमदावादसे सम्भवतः सोमवारको रवाना होगा। इसलिए मैं चाहता हूँ कि तुम मुझे तारसे सूचना दो।

यदि तुम "गांधी, अहमदावाद" के पतेपर तार दोगी तो मुझे मिल जायेगा।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
माई डियर चाइल्ड

१. कुमारी ग्रैहम; देखिए "पत्र: एस्थर फैरिंगको", ३१-३-१९१७।

२६५. शिक्षण-पद्धति

मार्च २४, १९१७

हम लोगोंमें अपनी हर चीजका मुकावला पश्चिमी सभ्यताके साथ करनेका रिवाज हो गया है। हम कहते हैं कि हमारी पूर्वी सभ्यता पश्चिमी सभ्यतासे काफी अच्छी है। परन्तु हमारा आचरण इससे उलटा है। इसलिए भारतीय विद्यार्थियोंकी शिक्षण-पद्धति शुद्ध नहीं रही; संकर हो गई है। हमारे विद्यालयोंमें से हम अपने प्राचीन ऋषि-मुनियोंके वारिस उत्पन्न नहीं कर पाते। यह वड़े दुःखकी वात है। इस बातपर मैं बहुत समयसे मनन करता आ रहा हूँ। परिणामस्वरूप जो विचार मुझे सूझे हैं उनको मैं वाचक-वृन्दके सम्मुख रखता हूँ।

देशका आधार जिस धन्धेपर हो उस धन्धेका सामान्य ज्ञान सब विद्यार्थियोंको देना चाहिए। इस सिद्धान्तको कोई अस्वीकार नहीं करेगा। इस सिद्धान्तके अनुसार हमारे सव विद्यार्थियोंको खेतीका और बुननेका काम सिखाना चाहिए। क्योंकि भारतवर्षके प्रायः ९५ सैकड़ा मनुष्य खेतीके काममें रुके हुए हैं। पहले इनमें से ९० फी सदी बुननेका काम भी करते थे।

जवतक शिक्षित वर्ग इन दो वातोंपर ध्यान नहीं देगा तबतक हम अपने करोड़ों किसानों और लाखों जुलाहोंके दुःखको विलकुल नहीं समझ सकते। और न इन दोनोंके धन्धोंमें ही कुछ सुधार हो सकता है।

यदि हमारा शरीर तन्दुरुस्त न होगा तो हम कुछ काम नहीं कर सकते। इसलिए लड़कोंको वचपनसे आरोग्य-शास्त्रकी शिक्षा देना आवश्यक है।

धर्मके ऊपर सव कुछ निर्भर है। और संस्कृत जाने विना धर्म-शास्त्रोंका ठीक ज्ञान मिलना अशक्य है, इसलिए संस्कृतका जानना भी प्रत्येक हिन्दू लड़केका कर्त्तव्य है। किन्तु हर कहीं गुरुकुलका प्रवन्ध, मेरे विचारसे, वड़ा कठिन है। इसलिए सामान्य शिक्षणको सामान्य ज्ञान देकर समाप्त करना चाहिए। जिस विद्यार्थीमें असाधारण शक्ति हो उसके लिए चाहे विशेष प्रवन्ध भले किया जाये।

इतिहास व भूगोल पढ़ानेकी सरकारी पद्धति वदली जानी चाहिए। इतिहास और भूगोलमें प्रायः देशके वारेमें ही ज्ञान दिया जाना चाहिए। मेरा अनुभव ऐसा है कि वहुत लड़कोंको मिडिलसैक्स तो मालूम रहता है; लेकिन वे काठियावाड़ या सोरठ प्रान्तके वारेमें कुछ नहीं जानते। इतिहासमें विद्यार्थियोंको संयुक्त-राज्यका ज्ञान पर्याप्त रहता है और हमारे अपने शिवाजीको वे एक लुटेरा समझते हैं।

गणित-शास्त्रमें भी यही हाल है; लड़कोंको वड़े-वड़े हिसाव मालूम रहते हैं, पर वे सामान्य व्यवहार-गणित नहीं जानते। देशी तालिकाकी जानकारी भी उन्हें पूरी-पूरी नहीं होती।

शिक्षण अलग-अलग प्रान्तोंमें वहींकी अपनी भाषामें होना चाहिए। और तदुपरांत भारतवर्षकी दो-तीन और भाषाओंका ज्ञान होना चाहिए।

अंग्रेजीका ज्ञान केवल थोड़ेसे लड़कोंको विदेशी भाषाके तौरसे दिया जाये। मुझे विश्वास है कि जबतक हमारे मनसे अंग्रेजी पढ़नेका मोह दूर नहीं होगा तबतक हम लोगोंमें सच्चे स्वराज्यकी भावना नहीं आ सकती। कुछ मित्र मुझे कहते हैं कि साधारण कामोंमें जैसे कि रेलगाड़ीकी मुसाफिरीमें अथवा तार पढ़नेका अवसर आ जानेपर अंग्रेजी जाने बिना हमें बड़ी परेशानी उठानी पड़ती है। पर ऐसी स्थितिके उत्तर-दाता हम स्वयं हैं। यदि हमारी मन्दताके प्रभावमें हम अपना धर्म भूल जायेंगे तो यह पराधीन दशा और भी निकृष्ट हो जायेगी।

परिणाम यह होगा कि हमारे करोड़ों भाई जो कदापि अंग्रेजी नहीं सीख सकते गुलाम बने रह जायेंगे। अंग्रेजी पढ़े हुए और उनके बीचमें एक खाई उपस्थित हो जायेगी।

प्रचलित शिक्षणका हमारे घरोंपर कुछ असर नहीं होता — गोकि नियम यह है कि विद्यार्थी-जीवनका प्रभाव सारे देशपर पड़ना चाहिए। थोड़े-से इत्रकी सुगन्धि जैसे सब जगह फैल जाती है, वैसे विद्यार्थी-जीवन होना चाहिए। मेरे खयालसे स्वराज्यकी कुंजी सरकारके हाथमें उतनी नहीं है जितनी कि हमारी शिक्षा-प्रणालीपर है।

सत्धर्म प्रचारक, गुरुकुल अंक, २४–३–१९१७

२६६. पत्र : एस्थर फैरिंगको

अहमदाबाद
मार्च ३१, १९१७

प्रिय एस्थर,

मैं श्रीमती पोलककी बहनकी ओरसे तुम्हें बहुत कष्ट दे रहा हूँ। किन्तु तुमने तो स्वयं ही मुझे अपना भाई बनाया है। और मेरी यह ख्याति है कि अपने बहुत ही प्रिय और आत्मीय जनोंको मैं सबसे ज्यादा कष्ट देता हूँ। चूँकि तुमने अपना आत्मीय मान लिया है, तुम्हें सन्तोषपूर्वक यह सब सहना चाहिए।

कुमारी ग्रैहम, उन बहिनका नाम यही है, शायद तुरन्त ही ऊटी जा सकती हैं। उनके लिए और पोलकके बच्चेके लिए अविलम्ब पहाड़पर चले जाना आवश्यक है। मुझे लगता है, मैं अप्रैलमें मद्रास नहीं जा सकूँगा। यदि इस वर्ष जा भी सका तो तुम जब पहाड़से लौट आओगी उसके बाद ही जाऊँगा।

तुम्हें और कुमारी पीटर्सनको हम सबका प्यार।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

माई डियर चाइल्ड,

२६७. पत्र : मगनलाल गांधीको

बाँकीपुर
चैत्र वदी ३, संवत् १९७३
मंगलवार [अप्रैल १०, १९१७]

चि० मगनलाल,

वहाँसे दो पत्र एक ही दिन मिले। एकका वजन ज्यादा था, इसलिए उसका जुर्माना देना पड़ा। चि० नारणदासका हिसाबका चिट्ठा वापस भेज रहा हूँ। इसे देखकर तुम जान जाओगे कि जमाखातेकी रकमें ठीक हैं या नहीं। यह स्पष्ट है कि नारणदासके नामे डाली हुई सब रकमें उसके खाते जमा करके पोलकके नामे टीपनी हैं।

प्रभुदास कलकत्तेमें रह गया है। उसने बताया कि वहाँ उसका मन लग गया है। यह ठीक ही हुआ कि मैं उसे यहाँ नहीं लाया। जो व्यक्ति[1] मुझे यहाँ लाया है, कुछ नहीं जानता। उसने मुझे एक अनजानी जगहमें ला-पटका है। घरका मालिक कहीं गया हुआ है और नौकर ऐसा समझते हैं कि अवश्य ही हम दोनों भिखारी होंगे। वे हमें घरके पाखानेका भी उपयोग नहीं करने देते। खाने-पीनेकी तो बात ही क्या? मैं सोच-समझकर अपनी जरूरतकी चीजें साथ रखता हूँ, इसीलिए बेफिक्र रह सका हूँ। मैंने अपमानके बहुत घूंट पिये हैं, इसलिए यहाँकी अटपटी स्थितिसे कोई दुःख नहीं होता। यदि यही स्थिति रही तो चम्पारन जाना नहीं हो सकेगा। मार्गदर्शक कोई मदद कर सकेगा, ऐसा दिखाई नहीं देता। और मैं स्वयं अपना मार्ग खोज सकूँ, ऐसी स्थिति नहीं है। इस दशामें मैं अपना पता तुम्हें नहीं दे सकता। यदि मैं किसीको वहाँसे मददके लिए लाया होता तो वह भी मुझपर एक भार ही होता। अपना बोझा उठानेके अलावा मुझे उसका बोझा भी उठाना पड़ता। मैं सिर्फ अपनी अनिश्चित स्थितिकी बात-भर बता रहा हूँ; तुम्हें कोई चिन्ता करनेकी जरूरत नहीं। क्योंकि मैं एकान्तका आनन्द तो उठा ही रहा हूँ। घर ठीक है। नहाने-धोनेकी सुविधा है; इसलिए शरीरकी जरूरत पूरी हो रही है। आत्माका विकास तो हो ही रहा है।

बापूके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५७१०) से।
सौजन्य : राधाबेन चौधरी

१. राजकुमार शुक्ल।

२६८. रैम्जे मैकडॉनल्डको उत्तर[1]

अप्रैल ११, १९१७[2]

श्री रैम्जे मैकडॉनल्डने कहा है[3] कि यदि श्री गोखले जीवित होते तो वे शायद लोक-सेवा आयोग (पब्लिक सर्विस कमिशन) की बहुमतीय रिपोर्टपर हस्ताक्षर कर देते। इसके उत्तरमें हम अपनी व्यक्तिगत साक्षी देना चाहते हैं। श्री गोखलेने इस बारेमें स्वयं ही जो-कुछ कहा था वह हम दोनोंको भलीभाँति स्मरण है। उन्होंने कहा था कि यद्यपि आयोगके अन्य सदस्योंको, या कमसे-कम उसके कुछ सदस्योंको, अपने दृष्टिकोणसे सहमत करनेकी आशा मैंने बिल्कुल छोड़ी नहीं है; फिर भी मुझे लगता है कि मुझे अन्तमें बाध्य होकर श्री अब्दुर्रहीमके[4] साथ मिलकर एक अल्पमतीय रिपोर्ट तैयार करनी पड़ेगी।

[अंग्रेजीसे]

मॉर्डन रिव्यू, मई १९१७

२६९. पत्र : एल० एफ० मॉर्सहेडको

मार्फत — बाबू गयाप्रसादसिंह
मुजफ्फरपुर
अप्रैल १२, १९१७

प्रिय महोदय,

नीलकी खेतीसे सम्बन्धित काम करनेवाले भारतीयोंकी अवस्थाके बारेमें मैंने बहुत-कुछ सुना है, और इसीलिए, जहाँतक सम्भव हो, वास्तविक स्थितिकी जानकारी स्वयं ही प्राप्त करनेके लिए मैं यहाँ आया हूँ। मैं अपना काम स्थानीय प्रशासनकी जानकारीमें और सम्भव हो तो उसके सहयोगसे करना चाहूँगा। यदि आप मुझे मिलनेका कोई समय देनेकी कृपा करें, तो मैं कृतज्ञ हूँगा। मैं चाहता हूँ कि मैं आपके सम्मुख अपनी

१. मोतीहारीमें सी० एफ० ऐन्ड्रयूजके गांधीजीसे मिलनेके बाद प्रकाशित किया गया।

२. इसे बाँकीपुरसे असोसिएटड प्रेसने इसी तारीखको प्रेषित किया था।

३. भारतीय लोक-सेवा-सम्बन्धी शाही कमिशनके सदस्य रैम्जे मैकडॉनल्डने कहा था: "मेरी राय यह है कि उन्होंने [श्री गोखलेने] हमारे साथ हस्ताक्षर कर दिये होते और मतभेदके विस्तृत मुद्दे बताते हुए अपना एक ज्ञापन उसके साथ संयुक्त करके सन्तोष कर लिया होता।"

४. मद्रास उच्च-न्यायालयके न्यायाधीश, आयोगके सदस्य, जिन्होंने एक पृथक टिप्पणी प्रस्तुत की थी।

जाँचका उद्देश्य रख सकूँ और यह जान सकूँ कि मुझे अपने कार्यके सम्पादनमें स्थानीय प्रशासनसे कुछ सहायता मिल सकती है या नहीं।

आपका विश्वस्त,
मो० क० गांधी

श्री एल० एफ० मॉर्सहेड
कमिश्नर
तिरहुत डिवीजन

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (नेशनल आर्काइव्ज़ ऑफ इंडिया) से; **सिलैक्ट डॉक्यूमेंटस ऑन महात्मा गांधीज़ मूवमेंट इन चम्पारन**, सं० १३, पृष्ठ ५७ से भी।

२७०. पत्र : एल० एफ० मॉर्सहेडको

मुजफ्फरपुर
अप्रैल १३, १९१७

प्रिय श्री मॉर्सहेड,

आज प्रातःकाल मैंने जो वचन दिया था, उसके अनुसार मैं आपको एक पत्र[1] भेज रहा हूँ। यह पत्र मुझे यहाँ आनेके लिए आमन्त्रित करनेवाले मित्रोंने लिखा था और वे इस समय यहाँ मौजूद हैं।

मैं कदाचित् आपको अपने कार्यका यथार्थ स्वरूप नहीं समझा सका हूँ इसलिए मैं उसे यहाँ फिर बताता हूँ। मुझे मेरे विभिन्न मित्रोंने नील-सम्बन्धी मामलोंके बारेमें जो-कुछ बताया है, मैं उसकी सचाईकी जाँच करनेके लिए उत्सुक हूँ और स्वतः यह जानना चाहता हूँ कि मैं कोई उपयोगी सहायता दे सकता हूँ या नहीं। मेरा कार्य सम्मानपूर्ण समझौता कराना है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

मैं साथमें यह नोट भी भेज रहा हूँ, जो मुझे अभी-अभी बाबू श्री अरिक्षण सिन्हाने दिया है।

मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (नेशनल आर्काइव्ज़ ऑफ इंडिया) से; **सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज़ मूवमेंट इन चम्पारन**, सं० १६, पृष्ठ ५९ से भी।

१. देखिए परिशिष्ट ३।

२७१. पत्र : मगनलाल गांधीको

मुजफ्फरपुर
रविवार, अप्रैल १५, १९१७

चि० मगनलाल,

यहाँका मामला जितना मैंने समझा था, उससे अधिक गम्भीर है। यह फीजी और नेटालकी स्थितिसे भी बुरा जान पड़ता है। फिर भी ज्यादा तो जाँच करनेपर ही मालूम हो सकेगा।

अधिकारियोंसे मिला हूँ। सम्भव है, उनका विचार मेरे ऊपर हाथ डालनेका हो। मुझे यहाँ एक घड़ीकी भी फुरसत नहीं मिली है। अभी चम्पारन जा रहा हूँ। जाते-जाते यह पत्र लिख रहा हूँ, मुक्त रहा तब भी कब आ सकूँगा, कह नहीं सकता। जेल गया तो अभी कुछ समयके लिए यह पत्र अन्तिम ही होगा। जो भी होगा, उसकी सूचना तुम्हें तारसे मिल जायेगी। इस समय किसीको भी यहाँ आकर जेल जानेका विचार करनेकी आवश्यकता नहीं है। प्रो० शाहसे कहना कि हमने राष्ट्रीय शालाके जिस प्रयोगका विचार किया है; उसे तो शुरू कर ही देना चाहिए। वे उसे काका, फूलचन्द और छगनलालके साथ मिलकर आरम्भ कर दें। बुनाईका काम सीखनेमें कोई आश्रमवासी सहायता करे।

श्री पेटिटके पाससे १,५०० रुपयेकी दूसरी किस्त एक-दो मासमें आ जानी चाहिए। तुम हर साल ३,००० रुपये निकाल सकते हो। उनसे १५,००० रुपये तक लेना तय हुआ है। उससे सत्याग्रहियों और उनके परिवारोंका खर्च चलाना है। इससे अधिककी आवश्यकता होगी तो वह भी मिल सकता है।

देवदासका पढ़नेका शौक पूरा करना। मेरे दिये गये पतेपर पत्र लिखते रहना। मेरे सम्बन्धमें कोई निश्चित समाचार मिलनेपर बन्द कर देना।

बापूके आशीर्वाद

अच्छा हुआ, प्रभुदासको नहीं लाया। वह कलकत्तेमें आनन्द कर रहा होगा डॉक्टरको पत्र लिखना।

मूल गुजराती पत्रकी हस्तलिखित प्रति (एस० एन० ९८१५) की फोटो-नकलसे।

२७२. पत्र : मगनलाल गांधीको

मोतीहारी
रविवार [अप्रैल १५, १९१७]

चि० मगनलाल,

तुम्हें मेरा मुजफ्फरपुरसे लिखा पत्र मिला होगा। अभीतक तो कुछ हुआ नहीं है। मैं मोतीहारी पहुँच गया हूँ। मेरे पत्रके समाचार जिन्हें देने उचित हों, उन्हींको देना। मुझसे कुछ पूछना हो तो पूछ लेना। मुक्त रहा, तो उत्तर दूँगा। जान पड़ता है, यहाँ अधिक ठहरना होगा। तुम सब शान्तचित्त रहना। इसे आश्रमके सब लोगोंको पढ़वा देना।

बापूके आशीर्वाद

गोखलेके भाषणोंका अनुवाद भाई नरहरि कर रहे हैं। भाई गोवड़िया भी उसमें लगे हुए हैं। उनसे पूछना और जल्दी करनेके लिए कहना। छगनलाल इस बारेमें खोज-खबर रखे।

मूल गुजराती पत्रकी हस्तलिखित प्रति (एस० एन० ९८१६) की फोटो-नकलसे।

२७३. पत्र : एस्थर फैरिंगको

मोतीहारी
चम्पारन
अप्रैल १५, १९१७

प्रिय एस्थर,

तुम्हारा स्नेहपूर्ण पत्र आखिर चलते-चलते मेरे पास यहाँ आ ही गया। मैं लगभग हिमालयकी तलहटीमें हूँ। मैं निलहे जमींदारोंके अधीन काम करनेवाले लोगोंकी स्थितिका अध्ययन कर रहा हूँ। मेरा काम अत्यन्त कठिन है। लेकिन मेरा भरोसा ईश्वरमें है। हम तो कर्म ही कर सकते हैं, उसके बाद हमें कोई चिन्ता नहीं करनी रहती।

कुमारी ग्रैहमके सम्बन्धमें चिन्ता न करो। उसकी व्यवस्था ऊटीमें हो गई है।

तुम चाहो तो मुझे बापू कह सकती हो। बापूका अर्थ है पिता। आश्रममें यह प्यारका शब्द बन गया है। मैं तुम्हारे प्रेमको, सचमुच, बहुत महत्त्व देता हूँ। तुम अहमदाबादके पतेपर पत्र लिखती रह सकती हो।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गां०

[अंग्रेजीसे]
माई डियर चाइल्ड

२७४. पत्र : मगनलाल गांधीको

अप्रैल १६, १९१७

चि० मगनलाल,

मेरा स्वर्ण-पदक परमश्रेष्ठ वाइसरॉयके निजी सचिव, शिमलाके पतेपर भेज देना। रजिस्टर्ड पार्सल करना। मुझे इस जिलेसे निकल जानेका हुक्म दिया गया है। मैंने उसे माननेसे इनकार कर दिया है। किसी भी क्षण गिरफ्तारीका या ऐसा ही कोई दूसरा हुक्म आनेकी सम्भावना है। लक्ष्मी अनुमानसे पहले ही तिलक करनेके लिए आ गई है। मैं तो हाथ धोनेके लिए भी नहीं रुका हूँ। हममें से किसीने भी यह कल्पना नहीं की होगी कि जिस विहारमें भगवान् रामचन्द्र, भरत, जनक और सीताने विहार किया था; उसीमें मैं जेल जाऊँगा। जानकीनाथ राम भी तो नहीं जानते थे कि कल प्रातःकाल तक क्या होगा।[1]

वापूके आशीर्वाद

[पुनश्चः]

पूछताछ हो तो वता देना कि मेरी कोई सम्पत्ति नहीं है।

मूल गुजराती पत्रकी हस्तलिखित प्रति (एस० एन० ९८१८)की फोटो-नकल से।

२७५. पत्र : मगनलाल गांधीको

मोतीहारी

चैत्र वदी ९ [अप्रैल १६, १९१७]

चि० मगनलाल,

तुम्हें कार्ड लिखकर डाल दिया है। वह इसके साथ ही मिलेगा। कार्ड हुक्म मिलनेपर तुरन्त ही लिख दिया था। अभीतक मैं गिरफ्तार नहीं हुआ हूँ, इसलिए कुछ और लिख देता हूँ। मैं मुँह धोनेको भी नहीं रुका, यह अक्षरशः सत्य है। पुलिस इन्स्पेक्टर ने कहा: "उत्तर भेजनेसे पहले हाथ-मुँह तो धो लो।" मैंने तो मनमें यही कहा कि उत्तर भेजकर ही वह-सव करूँगा। मैं एक गाँवमें जाँच करनेके लिए जा रहा था, तभी रास्तेमें पकड़ लिया गया। फिर वे मुझे वैलगाड़ीमें वैठाकर ले चले। रास्तेमें पुलिसके एक वड़े अधिकारीने मुझपर हुक्म तामील किया। पहले तो उसने यही कहा कि कलक्टर वुलाते हैं। मैं विना कोई इनकार-एतराज किये पीछे मुड़ पड़ा। मैंने जिला छोड़नेसे इनकार किया। इस जुर्ममें छः मासकी कैद और १,००० रुपये जुर्मानेकी सजा दी जा सकती है। देखें, क्या होता है।

१. एक गुजराती गीतकी पंक्तिका आशय।

इस पत्रके साथ आजतक का हिसाब भेज रहा हूँ। छगनलाल इसके अनुसार जमा-खर्च दर्ज कर ले। इसमें मैंने जितना आवश्यक जान पड़ा उतना विवरण दे दिया है। प्रभुदास मेरे साथ नहीं है यह बड़ी खुशीकी बात है।

यह प्रदेश देखने योग्य है। उसका वर्णन तो मिलनेपर ही करूँगा। गर्मी वहाँसे बहुत कम है। लोग बहुत गरीब हैं। जिस प्रदेशमें रामचन्द्रने रमण-भ्रमण और पराक्रम किया, उसकी यह कैसी दुर्दशा! इस स्थितिमें यहाँ जेल जाना मेरे लिए अत्यन्त सुखद बात है। यह मंगलकारी परिणामका द्योतक है।

मेरी इच्छा है तुम्हारा काम दुगुनी तेजीसे चले। शालाका प्रयोग जारी रखना। कोचरब अथवा अन्य स्थानोंसे बारह या उससे अधिक छात्र आयेंगे, उन्हें पढ़ाना। जमीन भी ले लेना। किन्तु यदि तुम सबको अच्छी लगे तभी लेना। यदि शास्त्रीवाली जमीनमें पानी अच्छा हो तो मुझे तो वह बहुत पसन्द है। छगनलाल मकान बनानेसे सम्बन्धित काम-काजमें भी लग सकता है। उसे वेतनकी आवश्यकता हो तो वेतन ले। मैं तो इतना ही चाहता हूँ कि वह प्रसन्नतापूर्वक अपने कार्यमें तन्मय हो जाये।

जबतक स्वास्थ्य बिलकुल ठीक न हो जाये तबतक मूलजी भाईका आश्रममें ही रहना आवश्यक है। मैं यह माने लेता हूँ कि पुंजाभाई अब आश्रमके कार्यमें पूरी तरह तन्मय हो गये होंगे।

जब भी जरूरत जान पड़े, पोलक, ऐन्ड्र्यूज और मालवीयजीकी सलाह लेना। डॉक्टरको तो विस्तारसे लिखते ही रहना। श्री कैलेनबैकको भी पत्र लिखना और खबर देना। उनका पता है: डॉन्गियज़ एलिएन्स कैम्प, नं० ३६१२, आइल ऑफ मैन। कुमारी विंटरबॉटम[1] को भी लिखना। यदि किसी खास बातके लिए लिखोगे तो उत्तर दूंगा। नकलें भेज सका तो भेजूंगा। डॉ० हरिप्रसाद आदिको समाचार देना।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती पत्रकी हस्तलिखित प्रति (एस० एन० ९८१७)की फोटो-नकल से।

२७६. पत्र : चम्पारनके जिला-मजिस्ट्रेटको

मोतीहारी
अप्रैल १६, १९१७

महोदय,

भारतीय दण्ड विधानकी धारा १४४ के अन्तर्गत मुझपर अभी जो हुक्म[2] तामील हुआ है, उसके सम्बन्धमें मेरा निवेदन है कि आपको वह हुक्म जारी करनेकी जरूरत महसूस हुई, इसका मुझे दुःख है। लेकिन साथ ही मुझे इस बातका भी दुःख है कि कमिश्नरने मेरी स्थितिको बिलकुल गलत समझा[3] है। सार्वजनिक दायित्वको समझते हुए

१. नैतिकता-समिति संघ (यूनियन ऑफ एथिकल सोसाइटी) लन्दनकी मन्त्री कुमारी फ्लोरेंस विंटरबॉटम।

२ व ३. देखिए परिशिष्ट ४।

काठियावाड़ी पगड़ी पहने हुए

मैं यह कहना अपना कर्त्तव्य समझता हूँ कि मैं इस जिलेसे नहीं जा सकता; किन्तु यदि अधिकारी चाहते हैं तो मैं इस हुक्मकी उदूलीकी सजा भुगत लूँगा।

कमिश्नरका कथन[1] है कि मेरा उद्देश्य सम्भवतः कोई आन्दोलन करना है। मैं इसका खण्डन करता हूँ। मेरी विशुद्ध और एकमात्र इच्छा जानकारी प्राप्त करनेका वास्तविक प्रयत्न करना है। और जबतक मुझे मुक्त रहने दिया जायेगा तबतक मैं अपनी इस इच्छाके अनुसार काम करता रहूँगा।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
मो० क० गांधी

जिला मजिस्ट्रेट[2]
मोतीहारी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इंडिया) से; सिलेक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन; सं० २१, पृष्ठ ६३–६४ से भी।

२७७. पत्र : वाइसरॉयके निजी सचिवको

प्रकाशनार्थ नहीं

मारफत जिला मजिस्ट्रेट
मोतीहारी
अप्रैल १६, १९१७

प्रिय श्री मैफी,[3]

मैं इस जिलेमें स्वतः यह जानकारी प्राप्त करनेके लिए आया हूँ कि गोरे जमींदारोंके खिलाफ काश्तकारोंके जो आरोप हैं, उनमें सचाई है या नहीं। मैंने गोरा जमींदार संघके मंत्री और फिर डिवीजनके कमिश्नरसे भेंट करके उनका सहयोग माँगा।[4] किन्तु उन दोनोंने मेरे निवेदनको अस्वीकार कर दिया और मुझे नम्रतापूर्वक इस कार्यसे विरत होनेकी सलाह दी। लेकिन मैं तो उनकी सलाह माननेमें असमर्थ था; निदान तबसे मेरा कार्य जारी है। मजिस्ट्रेटने मुझपर एक हुक्म[5] तामील किया है, जिसमें मुझे जिलेसे चले जानेके लिए कहा गया है। इस हुक्मके जो कारण बताये गये हैं उनसे मैं सहमत नहीं हो सकता। इसलिए मर्जी न होते हुए भी लाचार होकर मुझे इस हुक्मकी उदूली करनी पड़ी है और मजिस्ट्रेटको लिखना पड़ा है[6] कि मैं इस हुक्म-उदूलीकी सजा भुगत लूँगा।

१. देखिए परिशिष्ट ४।
२. डब्ल्यू० बी० हेकॉक।
३. वाइसरॉय लॉर्ड चैम्सफोर्डके निजी सचिव।
४. देखिए "पत्र : एल० एफ० मोर्सहेडको", १२–४–१९१६।
५. देखिए परिशिष्ट ४।
६. देखिए पिछला शीर्षक।

मेरा हेतु राष्ट्र-सेवा है और वह भी उसी हदतक जिस हदतक वह मानवीय हितसे मेल खाती हो। मेरा खयाल है कि मुझे कैसरे-हिन्द स्वर्ण-पदक इसी कारण दिया गया था कि दक्षिण आफ्रिकामें किया गया मेरा कार्य मानव-हितका कार्य समझा गया। यदि मेरे मानवतावादी उद्देश्योंमें शंका की जाती है तो मैं इस पदकको रखनेका पात्र नहीं हूँ और इसलिए अपने लोगोंको उक्त पदकको वापस आपको भेज देनेको लिख रहा हूँ;[1] और जिस दिन मेरे उद्देश्यपर शंका न की जायेगी तब यदि मुझे वह लौटाया जायेगा तो मैं उसे फिर स्वीकार करनेमें प्रतिष्ठाका अनुभव करूँगा।

स्वयं इस प्रश्नके सम्बन्धमें, जहाँतक मेरे सामने प्रस्तुत किये गये प्रमाणोंकी मैं जाँच कर सका हूँ, उनसे यह पता चलता है कि जमींदारोंने काश्तकारोंको नुकसान पहुँचाकर स्वयं धनी बननेमें दीवानी और फौजदारी दोनों कानूनी अदालतों तथा गैर-कानूनी ताकतका सफल प्रयोग किया है। बेचारे काश्तकार आतंकसे दबे हुए दिन गुजार रहे हैं, और उनकी सम्पत्ति, उनके शरीर और उनके मन, सब जमींदारोंके पैरों तले कुचले जा रहे हैं। एक व्यक्तिने मुझसे बड़ी ही सजीव और मार्मिक भाषामें कहा: "हम तो सरकारकी नहीं, इन गोरे जमींदारोंकी प्रजा हैं। थाना कहीं नहीं है; जमींदार हरएक जगह हैं। जो वे चाहते हैं, हम वही लेते हैं; जो वे रखने देते हैं, हम वही रखते हैं।" मुझे आशा थी कि मेरे मनपर जो प्रभाव पड़ा है, वह अधिक गहरी छानबीनके बाद कुछ हलका हो जायेगा। यदि मुझे स्वतन्त्र रहने दिया जाता तो मैं अपनी जाँच पूरी करके उसका परिणाम अधिकारियोंके सम्मुख प्रस्तुत कर देता। मेरी तो अभिलाषा है कि परमश्रेष्ठ वाइसराय महोदय इस मामलेकी गम्भीरताको समझते हुए स्वतन्त्र जाँच करवायें। स्थानीय अधिकारीगण इस बातको स्वीकार करते हैं कि वे एक बहुत ही खतरनाक बारूदी सुरंगपर बैठे हुए हैं और फिर भी वे बन्दोबस्त-अधिकारीकी धीमी जाँचसे किसी तरह अपने मनको सन्तुष्ट कर लेते हैं; और यहाँ मेरी मौजूदगी बरदाश्त नहीं कर सकते। सब कुछ इस बातपर निर्भर करता है कि इस मामलेमें कितनी शीघ्रता बरती जाती है और जाँच समितिमें कितने उपयुक्त सदस्य चुने जाते हैं। काश्तकारोंको कमसे-कम इतना पानेका अधिकार तो है ही। बड़ी कृपा हो यदि आप यह पत्र वाइसरॉय महोदयकी सेवामें प्रस्तुत करके मेरी ओरसे इस बातके लिए क्षमा-याचना कर दें कि उनके अनेक आवश्यक कार्योंमें व्यस्त रहते हुए भी मैंने उन्हें इतना लम्बा पत्र लिखकर कष्ट दिया। लेकिन मामला इतना जरूरी है कि इसे लिखे बिना चारा नहीं था।

आपका आदि,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

मूलकी प्रतिलिपि (सी० डब्ल्यू० ७५९६) से।
सौजन्य: एच० एस० एल० पोलक

१. देखिए "पत्र: मगनलाल गांधीको", १६-४-१९१७।

२७८. कार्यकर्त्ताओंके लिए निर्देश[1]

[अप्रैल १६, १९१७][2]

जाँचका कार्यक्रम इस तरह जारी रखा जाये, मानो मैं जेल नहीं भेजा गया हूँ, अर्थात्

१. कार्यकर्त्तागण नियमित रूपसे गाँवोंमें जायें और जिन लोगोंसे पूछताछ की जाये उन सबकी गवाहियाँ लिख ली जायें।

२. जहाँ गवाही देनेवाले लोग अपने बयानोंपर दस्तखत या अँगूठा-निशानी देनेके लिए राजी हों, वहाँ उनके दस्तखत या अँगूठा-निशानी ले ली जाये।

३. जहाँ लोग दस्तखत करनेसे इनकार कर दें, वहाँ भी उनकी गवाहियाँ ले ली जायें। दस्तखत देनेसे इनकार करनेका कारण लिख लिया जाये।

४. जिन वकीलोंका काश्तकारोंके मुकदमोंसे थोड़ा-सा भी सम्बन्ध हो उनसे गवाही देनेकी प्रार्थना की जाये और जो गोरखबाबूको[3] सुझाये गये ढंगकी हो।

इन गवाहियोंको लेनेके लिए जितने भी कार्यकर्त्ता अपनी सेवाएँ देनेके लिए आयें, सब भर्ती कर लिये जायें। आशा तो यही की जानी चाहिए कि बहुत-से कार्यकर्त्ता सामने आयेंगे और जिलेसे चले जानेकी आज्ञा मिलनेपर भी जाँचका काम जारी रखनेसे मुँह नहीं मोड़ेंगे।

यदि उन्हें हुक्म न माननेपर अदालतमें बुलाया जाये और उनपर मुकदमे चलाये जायें तो वे चुपचाप जेल चले जायें। मेरा तो सुझाव है कि वे अपनी कोई सफाई न दें।

काश्तकारोंको यह निश्चित निर्देश दिया जाना चाहिए कि वे न तो अपने कष्टों और न अपनी सहायताके लिए आये हुए लोगोंके जेल भेजे जानेपर हिंसाका सहारा लें। अलबत्ता उनसे यह कहा जा सकता है और कहना चाहिए कि जहाँ उन्हें यह मालूम हो कि उनके साथ अन्यायपूर्ण व्यवहार किया जा रहा है — अर्थात् उन्हें नील बोनेकी जरूरत न होने पर भी नील बोनेके लिए बाध्य किया जा रहा है — तब उन्हें अदालतमें जानेके बजाय नील बोनेसे कतई इनकार कर देना चाहिए और यदि इस तरह इनकार करनेपर उन्हें जेल दी जाये तो उसे भुगत लेना चाहिए। इस बातको बहुत सावधानीसे समझानेकी जरूरत है। जहाँ कार्यकर्त्ता इस शान्तिपूर्ण प्रतिरोधके प्रभावको न समझें या इसकी शक्तिको अनुभव न करें वहाँ वे कार्यक्रमके इस मुद्देको छोड़ सकते हैं।

१. चम्पारनमें काम जारी रखनेके सम्बन्धमें; क्योंकि गांधीजीको चम्पारन जिलेसे चले जानेके सम्बन्धमें मजिस्ट्रेटकी आज्ञा न माननेके परिणाम-स्वरूप जेल भेज दिये जानेकी आशंका थी।

२. यह १६ की रातको तैयार किया गया था; देखिए "पत्र: एच० एस० एल० पोलकको", १७-४-१९१७।

३. गोरखप्रसाद (१८६९-१९६२); मोतीहारीके एक वकील; गांधीजी मोतीहारीमें कुछ दिन उनके मेहमान रहे थे।

जब प्रथम श्रेणीके कार्यकर्त्ता समाप्त हो जायें या बिलकुल न मिलें तब दूसरी श्रेणीके कार्यकर्त्ता भर्ती किये जायें। ये उन्हीं केन्द्रोंमें गवाही लें, जिनमें उनकी उपस्थितिसे नाराजी न हो। काश्तकारोंसे शान्तिपूर्वक इन केन्द्रोंमें आकर गवाहियाँ देनेके लिए कहा जा सकता है। सभी कागजात इकट्ठे करके वर्गीकृत कर लिए जायें। इस कार्यमें छः हफ्तेसे ज्यादा वक्त न लगना चाहिए। जाँचके बाद सारी गवाहियाँ, चाहे वे मौखिक हों या लिखित, लोगोंमें निजी तौरपर बाँटनेके लिए छाप ली जायें। यदि पहले-पहल इन्हें छापनेके लिए कोई तैयार न हो, तो इन्हें टाइप करा लिया जाये। सभी कागजात और गवाहियोंको एक जगह इकट्ठा कर लिया जाये और फिर एक व्यक्तिके निर्देशनमें कामकी सारी सामग्रीको छाँटकर व्यवस्थित किया जाये। जबतक श्री ऐन्ड्रयूज यहाँ आकर इस सामग्रीको सजाने-सँवारनेका काम नहीं करते, तबतक इसे बाबू ब्रजकिशोर-प्रसाद[1] सँभालें।

इसके आगे एक छोटी अखिल भारतीय समितिकी सलाहसे कार्रवाई की जाये, जिसके अध्यक्ष या तो पण्डितजी[2] हों या श्री शास्त्री[3]। एक निष्पक्ष जाँच समितिकी माँग की जानी चाहिए, जिसमें काश्तकारोंका प्रतिनिधित्व करनेवाले कुछ (गोरे जमींदारोंके प्रतिनिधियोंकी संख्याके बराबर संख्यामें) भारतीय सदस्य शामिल हों। हमारे प्रतिनिधि हमारी पसन्दके होने चाहिए।

जबतक जाँच न हो जाये तबतक गोरे जमींदार हर्जाने आदिके लिए कोई दीवानी दावे दायर न करें। प्रतिदिन अथवा जैसी व्यवस्था हो उसके अनुसार मजदूरी बाँटते समय एक निष्पक्ष व्यक्ति उपस्थित रहे।

जहाँ आवश्यक हो, कार्यकर्त्ताओंको वेतन दिया जाये। यदि स्थानीय रूपसे पैसा इकट्ठा न किया जा सके, तो इसके लिए साम्राज्यीय नागरिकता संघ (इम्पीरियल सिटीज़नशिप एसोसिएशन) से कहा जाये।

महात्मा, खण्ड १ में प्रकाशित मूल अंग्रेजी प्रतिकी प्रत्याकृतिसे

१. दरभंगाके प्रमुख वकील, बिहार और उड़ीसा विधान परिषद्के सदस्य; और गांधीजीके सक्रिय सहयोगी।

२. पण्डित मदनमोहन मालवीय।

३. वी० एस० श्रीनिवास शास्त्री।

२७९. पत्र: एस्थर फैरिंगको

मोतीहारी
अप्रैल १७, १९१७

प्रिय एस्थर,

निश्चय ही तुम्हें यह खबर देना उचित है कि मेरे गिरफ्तार होनेकी सम्भावना है। मैं यहाँ मजदूरोंकी कुछ शिकायतें दूर करवाने आया हुआ हूँ; अधिकारी लोग मेरी यह बात पसन्द नहीं करते। यही गिरफ्तारीकी सम्भावनाका कारण है। आश्रममें श्री एम० के नाम खत लिखकर उनसे कुछ कागज भेजनेको कहो। तब तुम्हें मालूम हो जायेगा। अपनी अन्तरात्माके अनुसार चलनेके कारण मैं गिरफ्तार किया जानेवाला हूँ यह विचार कर मुझे बेहद खुशी हो रही है।

तुम्हारा,
(अगर तुम्हें यही अच्छा लगता है तो)
बापू

[अंग्रेजीसे]
माई डियर चाइल्ड,

२८०. पत्र: एच० एस० एल० पोलकको

मोतीहारी
अप्रैल १७, [१९१७]

प्रिय हेनरी,

मुझे मालूम है कि तुम हर बातपर "खूब किया" कह दिया करते हो। ये दिन दक्षिण आफ्रिकाके सुनहरे दिनोंकी याद दिला रहे हैं; तिसपर स्थान वह है जहाँ राम और जनक रह चुके हैं। लोग सब प्रकारकी सहायता दे रहे हैं। आशा है कि हमें शीघ्र ही नायडू,[1] सोराबजी[2] और इमाम[3] [जैसे साथी] मिल जायेंगे। पता नहीं काछलिया[4] जैसे व्यक्ति हाथ लगेंगे या नहीं।

अदालतके अपमानके सम्बन्धमें अभीतक मुझे कोई सम्मन नहीं मिला है। प्रत्यक्ष है कि जो उत्तर[5] मैंने सरकारको भेजा है उसकी वह आशा नहीं कर रही थी।

कल रात मैंने वे कागजात तुम्हारे पास इलाहाबादके पतेपर भेज दिये; जब कि भेजना उन्हें कल रातको बाँकीपुर था। ऐसा नहीं हुआ और अब मैं तुम्हारे पास

१. २. ३. व ४. दक्षिण आफ्रिकामें सत्याग्रह-संघर्षमें भाग लेनेवाले वीर।
५. देखिए "पत्र: चम्पारनके जिला मजिस्ट्रेटको", १६-४-१९१७।

एक विशेष पत्र-वाहक भेज रहा हूँ। उक्त कागजको श्री मजहरुल हकको[1] भी दिखा देना। उन्होंने तार द्वारा सूचित किया है कि जरूरत पड़नेपर वे आनेको तैयार हैं। श्री मजहरुल हकको मैं इस आशयका उत्तर दे चुका हूँ कि वे मेरी गिरफ्तारीके पश्चात् आ जायें। जबतक मैं गिरफ्तार नहीं किया जाता तबतक मुझे केवल ऐसे स्वयंसेवकोंकी जरूरत है जो गाँव-गाँवमें जाकर लोगोंकी राम कहानी सुनें।

कल रातको जो हिदायतें[2] मैंने जल्दी-जल्दी लिखी हैं; उन्हें पढ़कर तुम्हें मालूम हो जायेगा कि आवश्यकता किस बातकी है। नेताओंको वहाँ दो काम कर डालने चाहिए; एक तो पक्षपात-रहित और शीघ्रतापूर्वक की जानेवाली जाँच की माँग, दूसरे लगनके साथ काम करनेवाले खासे पढ़े-लिखे ऐसे स्वयंसेवकोंका जत्था (१००), जो भिन्न-भिन्न गाँवोंमें जाकर रहे और ग्रामीणोंको जोर-जुल्मसे बचाये और जानकारी इकट्ठी करे। यदि अधिकारीगण स्वयंसेवकोंका जाना नापसन्द करें तो उन्हें उसकी परवाह नहीं करनी चाहिए। स्वयंसेवक यथासंभव बिहारी ही हों। इस कामका श्रेय उन्हींको मिलना चाहिए।

मेरा खयाल तो अब भी यही है कि तुम्हारा इस संघर्षमें कूदना जरूरी नहीं है; मैंने ऐन्ड्रयूजको आ जानेके लिए लिख दिया है। मैं चाहता हूँ कि तुम अपनेको मुक्त महसूस करो और इंग्लैंड जाने और वहाँ बसनेकी तैयारी करो।

मेरी अनुपस्थितिमें यहाँके गोरखप्रसाद बाबू तुम्हें सारे समाचार देते रहेंगे। अगर मेरी गिरफ्तारी न हुई तो मैं कल गाँवोंकी ओर चल पड़ूँगा। और दो दिन वहीं घूमता रहूँगा।

सस्नेह,

तुम्हारा,
भाई

[पुनश्च :]

मजिस्ट्रेटके उत्तरसे तुम्हें मालूम हो जायेगा कि कल मेरा 'निबटारा' होगा। इसलिए अब गाँवोंमें जाना न होगा।[3]

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (जी० एन० २८२१) की फोटो-नकलसे।

१. (१८६६–१९३०); बिहारके राष्ट्रीय नेता; मुस्लिम लीगके जन्मदाताओंमें से थे; और बादको उसके अध्यक्ष हुए; १९१४ में कांग्रेसकी ओरसे इंग्लैंड जानेवाले शिष्टमण्डलके सदस्य; चम्पारन-संघर्ष तथा असहयोग आन्दोलनमें गांधीजीका हाथ बँटाया था।

२. देखिए "कार्यकर्ताओंके लिए निर्देश", १६–४–१९१७।

३. देखिए "पत्र : चम्पारनके जिला मजिस्ट्रेटको", १७–४–१९१७।

२८१. पत्र : जे० बी० कृपलानीको

मोतीहारी
अप्रैल १७, [१९१७]

प्रिय मित्र,[1]

तुम्हारा प्रेम तुम्हारे नेत्रों, तुम्हारी भावभंगी और चाल-ढालसे झलक रहा था। ईश्वरसे प्रार्थना है कि मैं तुम्हारे इस प्रगाढ़ प्रेमके योग्य बनूँ। इसमें सन्देह नहीं कि तुम मदद करना चाहते हो। तुम अपनी इच्छाके अनुसार कोई एक चीज चुन लो। अहमदाबाद चले जाओ और वहाँ प्रयोगात्मक विद्यालयमें काम करने लगो या यहाँ आ जाओ और जेल जानेका खतरा उठाकर काममें जुट जाओ। परन्तु यह सब उसी दशामें जब मैं जेल भेज दिया जाऊँ। यदि तुम यह चाहते हो कि तुम्हारे इसी प्रान्तमें होनेके कारण मैं तुम्हारा कार्यक्रम निश्चित करूँ तो मैं कहूँगा कि तुम्हारा कर्त्तव्य यही है कि जबतक रैयत इन्सानकी तरह जीनेके लिए स्वतन्त्र न हो जाये तबतक यहाँसे न हटो। मेरे लिए तो चम्पारन मेरा घर ही हो गया है। जो पूछताछ प्रतिदिन की जा रही है उससे मेरी यह धारणा दृढ़ होती जा रही है कि कई बातोंमें यहाँ की स्थिति फीजीसे भी बदतर है।

मेरे द्वारा अदालतका अपमान किये जानेका सम्मन मुझे अभीतक नहीं मिला है।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

प्रोफेसर मलकानीको मुझे अभी आँकड़े देने हैं।

मो० क० गांधी

हिन्दीके नियमोंकी जो एक प्रति मेरे पास थी, वह मैंने ट्रेनिंग स्कूलके अथवा अन्य किसी स्कूलके शिक्षकको उनसे यह वचन लेकर दे दी थी कि वे उसे मुझे लौटा देंगे। उसका पता लगाकर अहमदाबाद भेज देना।

मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (जी० एन० २८२२) की फोटो-नकलसे।

१. आचार्य जे० बी० कृपलानी; देखिए "पत्र: काका कालेलकरको", २-५-१९१७।

२८२. पत्र : चम्पारनके जिला मजिस्ट्रेटको

मोतीहारी
अप्रैल १७, १९१७

जिला मजिस्ट्रेट
मोतीहारी

महोदय,

चूँकि अधिकारियोंको सूचित किये विना मैं कोई काम नहीं करना चाहता हूँ, इसलिए आपको इत्तला दे रहा हूँ कि (अगर मुझपर कल अदालतमें हाजिर होनेके लिए सम्मन जारी न हुआ) तो मैं कल सुवह शामपुर तथा उसके समीपवर्ती गाँवोंमें जा रहा हूँ। हम लोग ३ वजे प्रातःकाल चल देंगे।

कल मेरे देखनेमें यह आया कि हम लोगोंके पीछे-पीछे एक पुलिस-अधिकारी लगातार चल रहा था। मैं निवेदन करना चाहता हूँ कि हम लोग अपना सारा काम विलकुल प्रकट रूपसे करना चाहते हैं और इसलिए मैं अपनी तथा अपने साथियोंकी ओरसे कहना चाहता हूँ कि वैसे तो हम अपने काममें पुलिसवालोंकी सहायता तक की इच्छा करते हैं; किन्तु वह सम्भव न हो तो हम अपना काम करते समय उनकी उपस्थितिका स्वागत तो करेंगे ही।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इंडिया) से।
सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन, सं० २३, पृष्ठ ६७ से भी।

२८३. प्राप्ति स्वीकार

अप्रैल १७, १९१७

जिला मजिस्ट्रेटकी ओरसे एक पत्र प्राप्त हुआ।

मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें तारीख और सही किये हुए मूल अंग्रेजी पत्र (नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इंडिया) से।

२८४. पत्र : चम्पारनके जिला मजिस्ट्रेटको

मोतीहारी
अप्रैल १७, १९१७

महोदय,

आजकी तारीखके आपके पत्रके उत्तरमें निवेदन है कि मैं कल सुबह मोतीहारीमें [illegible] सम्मनकी प्रतीक्षा करूँगा।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इंडिया) से; सिलेक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन, सं० २५, पृष्ठ ६८ से भी।

२८५. वक्तव्य : अदालतमें[1]

[मोतीहारी]
अप्रैल १८, १९१७

अदालतकी इजाजतसे मैं एक संक्षिप्त बयान देना चाहता हूँ और उसके द्वारा यह स्पष्ट करना चाहता हूँ कि मैंने जाब्ता फौजदारीकी १४४ धाराके अन्तर्गत जारी किये गये हुक्मकी जाहिरा उदूली करनेका यह बहुत संगीन काम क्यों किया है। मेरी विनम्र सम्मतिमें सवाल मेरे और स्थानीय अधिकारियोंके बीच मतभेदका है। मैं इस प्रान्तमें मानव-जाति और राष्ट्रकी सेवा करनेके इरादेसे प्रविष्ट हुआ हूँ; मुझे यहाँ आने और रैयतकी सहायता करनेका जो आग्रहपूर्ण आमन्त्रण भेजा गया था उसीको स्वीकार करके मैं यहाँ आया हूँ। रैयतका यह कहना है कि उसके साथ बागान मालिक उचित व्यवहार नहीं करते। मामलेको पूरी तौरपर समझे बिना मेरे लिए उनकी किसी प्रकारकी सहायता करना असम्भव था। इसी कारण इस प्रश्नका अध्ययन, यदि सम्भव

हो तो सरकार और बागान मालिकोंकी सहायता लेकर, करनेके लिए आया हूँ। मेरा मन्शा और कुछ नहीं है। मैं यह विश्वास नहीं कर सकता कि मेरे आनेसे सार्वजनिक शान्ति भंग होगी या कुछ लोग जानसे हाथ धो बैठेंगे। मैं निश्चयपूर्वक कह सकता हूँ कि ऐसे मामलोंका मुझे काफी अनुभव है। परन्तु प्रशासनका खयाल कुछ और है। मैं उसकी कठिनाईको बखूबी समझ रहा हूँ और मैं यह भी स्वीकार करता हूँ कि प्राप्त जानकारीके आधारपर कार्रवाई करनेके अलावा उनके सामने और कोई रास्ता नहीं है। कानूनकी पाबन्दी करनेवाले नागरिककी हैसियतसे मेरे मनमें स्वभावतः पहले-पहल यही विचार आना चाहिए था — जैसा कि हुआ भी — कि दिये गये हुक्मकी तामील करूँ। मैं उसकी तामील जिन लोगोंकी खातिर मैं यहाँ आया हुआ हूँ उनके प्रति अपनी कर्त्तव्य-भावनाका हनन किये बिना नहीं कर सकता था। मेरी समझमें इस अवसरपर तो मैं उनके बीच रहकर ही उनकी सेवा कर सकता हूँ। इसलिए अपनी मर्जीसे इस जगहको छोड़कर चले जाना मेरे लिए असम्भव था। कर्त्तव्य-पालनकी इस असमंजसकी घड़ीमें उनके बीचसे अपने हटाये जानेकी जिम्मेदारी मैं प्रशासनके ऊपर ही छोड़ सकता हूँ।

मुझे यह बात भली-भाँति मालूम है कि भारतके सार्वजनिक जीवनमें मेरी जैसी स्थितिके जन-सेवकको उदाहरण उपस्थित करते समय बहुत सावधान रहना चाहिए। मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि हम लोग पेचीदगी भरे हुए जिस विधानके अन्तर्गत रहते हैं उस विधानमें स्वाभिमानी व्यक्तिके लिए मेरी जैसी परिस्थितिमें सही और सम्मानास्पद केवल एक ही मार्ग रह जाता है, अर्थात् हुक्म-उदूलीकी सजा विरोध किये बिना सहन करना; और यही मैंने स्वीकार किया है। मैंने इस वक्तव्यको देनेका साहस जो सजा मुझे दी जानेवाली है उसमें किसी प्रकारकी रियायत करानेकी इच्छासे नहीं बल्कि यह जतानेके लिए किया है कि जो हुक्म मुझे दिया गया था उसे न माननेका कारण सरकारके प्रति आदर-भावमें कमी नहीं बल्कि अपने जीवनके उच्चतर विधान — अन्तरात्माके आदेशका पालन था।

[अंग्रेजीसे]

लीडर, २२–४–१९१७; सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन, सं० २८, पृष्ठ ६९-७० से भी।

२८६. तार: अहमदाबाद आश्रमको[1]

मोतीहारी
अप्रैल १८, १९१७

गांधी
अहमदाबाद

हमारे द्वारा अपराध मान लिये जानेपर भी मजिस्ट्रेटने फैसला सुनाना मुल्तवी रखा है। शनिवार तक गाँवोंमें न जाना स्वीकार कर लिया है। जिस कामको हमने हाथमें उठाया है, उसके बारेमें इस बीच सरकार अपना मत प्रकट कर देगी। फिलहाल सार्वजनिक रूपसे कोई आन्दोलन प्रारम्भ न किया जाये।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

तार (एस० एन० ९८१९) की फोटो-नकलसे।

२८७. पत्र: एस० के० रुद्रको

मोतीहारी
अप्रैल १८, १९१७

प्रिय श्री रुद्र,[2]

मेरे जेलमें वन्द हो जानेके पहले आप मुझसे दो-चार शब्दोंकी अपेक्षा करते होंगे। यहाँ हमारे भाइयोंकी जानपर वनी है और यदि मैं यहाँकी रैयतके बीचसे हटकर ही स्वतन्त्र रह सकता हूँ तव तो मेरा जेलमें वन्द कर दिया जाना ही मेरे लिए सौभाग्यकी वात है। इस स्थानके वारेमें कदाचित् वह वात चरितार्थ होती है जो पादरी हेवरने[3] (ठीक है न?) मालावार और सीलोनके वारेमें, अलवत्ता अनुपयुक्त रूपमें, कही थी कि यहाँकी "प्रत्येक वस्तु सुन्दर है, केवल मनुष्य ही क्रूर हैं।"[4] कुछ

१. देखिए पिछले शीर्षककी पाद-टिप्पणी।
२. सेंट स्टीफेंस कॉलिज, दिल्लीके प्रधानाचार्य सुशीलकुमार रुद्र।
३. कलकत्तेके वडे पादरी रिजीनॉल्ड हेवर (१७८२–१८२६)।
४. वे पंक्तियाँ निम्नलिखित हैं:

"व्हाट दो दि स्पाइसी ब्रीज़ेज़ ब्लो सॉफ्ट ओवर सीलोन्ज़ आइल,
दो एव्री प्रॉस्पेक्ट प्लीज़ेज़, ऐंड ओनली मैन इज वाइल।"

बातोंमें यहाँकी परिस्थिति फीजीसे भी ज्यादा गई-गुजरी है। मैं समझता हूँ कि जो-कुछ मुझपर बीत रही है उससे आप नितान्त अनभिज्ञ नहीं हैं। ज्यादा जानकारीके लिए कृपया ऐन्ड्रयूजको सम्बन्धित कागज भेजनेके लिए लिखिए। अधिक लिखनेका अवकाश नहीं है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

मूल अंग्रेजी पत्र (सी० डब्ल्यू० ५७९५) से।
सौजन्य : राजमोहिनी रुद्र

२८८. पत्र : डब्ल्यू० बी० हेकॉकको

मोतीहारी
अप्रैल २०, १९१७

प्रिय श्री हेकॉक,

कृपया सूचित कीजिए कि मुझे आपसे कल कहाँ मिलना है? जब आपने मिलनेका समय बताया था उस समय मैं आपसे यह बात पूछना भूल गया था।

आपका सच्चा,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (नेशनल आर्काइव्ज़ ऑफ इंडिया) से; सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन, सं० ३९, पृष्ठ ७९ से भी।

२८९. तार : बिहार और उड़ीसाके लेफ्टिनेंट गवर्नरके निजी सचिवको

मोतीहारी
अप्रैल २१, १९१७

गवर्नर महोदयने मुकदमा वापस ले लेनेकी तथा जाँचके दौरान मुझे सहूलियतें दिये जानेके बारेमें स्थानिक अधिकारियोंको आदेश जारी करनेकी जो कृपा की है, उसके लिए धन्यवाद देता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन, सं० ४१, पृष्ठ ८०।

२९०. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[1]

बाँकीपुर,
मोतीहारी
अप्रैल २१, १९१७

सरकारके आदेशसे मुकदमा वापस ले लिया गया है। मेरे द्वारा की जानेवाली जाँचके दौरान अधिकारी लोग मेरी मदद करेंगे, इसका वचन दिया गया है। मैं इसके लिए सरकारका आभारी हूँ। यहाँके स्थानीय वकील तथा अन्य सज्जन मेरी बहुत सहायता कर रहे हैं। अनेक जगहोंसे सहानुभूति-सूचक सन्देश और सहायताके आश्वासन आये हैं। इनके परिणामस्वरूप मेरा और मेरे साथियोंका हौसला बढ़ा है। यहाँ आनेके बाद मैं अबतक कुछ गाँवोंमें घूम चुका हूँ और सैकड़ों किसानोंसे मिल चुका हूँ। अधिकारियोंसे लगातार शिष्टतापूर्ण व्यवहार मिल रहा है। जबतक मेरी यह जाँच चले, तबतक किसी प्रकारके सार्वजनिक आन्दोलनकी जरूरत नहीं है। [इस जाँचमें] जो मुद्दे निहित हैं वे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। जाँचके फलस्वरूप मैं जिन निर्णयोंपर पहुँचूंगा उन्हें मैं सरकार और देशके समक्ष प्रस्तुत करनेकी आशा करता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

लीडर, २३–४–१९१७; **सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन**, सं० ४६ (ई०), पृष्ठ ८६–८७।

२९१. पत्र : डब्ल्यू० बी० हेकॉकको

मोतीहारी
अप्रैल २२, १९१७

प्रिय श्री हेकॉक,

कलके नोटके लिए धन्यवाद। मैं आज श्री कॉक्सको[2] पत्र लिख रहा हूँ। आज तीसरे पहर बेतिया रवाना हो जाऊँगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (नेशनल आर्काइव्ज़ ऑफ इंडिया) से; **सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन**, सं० ४५, पृष्ठ ८३ से भी।

१. बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स १९१७, पृ० २५४ के अनुसार २२ अप्रैल, १९१७ को प्रातः श्री गांधीका भेजा हुआ एक तार आश्रममें प्राप्त हुआ था। उसमें लिखा था : "वक्तव्यका संक्षिप्त रूप तैयार कर रहा हूँ, जो प्रकाशित किया जा सकता है"; देखिए (एस० एन० ९८२०)।

२. पदुमकेर फैक्टरीके हर्बर्ट कॉक्स; जिला बागान मालिक संघ (डिस्ट्रिक्ट प्लांटर्स एसोसिएशन) के मन्त्री।

२९२. पत्र : महात्मा मुंशीरामको

बेतिया
वैशाख शुक्ल ५ [अप्रैल २६, १९१७][1]

महात्माजी,

आपका खत मीलनेसे मुझे बहुत आनंद प्राप्त हुआ है। आपने जो नया नाम[2] धारण कीया है बहुत से उचित है।

यहाका काम बड़ा भारी है। ईश्वरकृपासे अत्याचार दूर होगा। परन्तु चार छ मास तो अवश्य मुझे रहना पड़ेगा। बाबु ब्रीजकिशोरप्रसाद इ० जो सहाय कर रहे है वे योग्य पुरूष है।

आपका,
मोहनदास गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल पत्र (जी० एन० २२०९) की फोटो-नकलसे।

२९३. पत्र : डब्ल्यू० एच० लुईको

बेतिया
अप्रैल २८, १९१७

प्रिय श्री लुई,[3]

आपका आजकी तारीखका लिखा पत्र प्राप्त हुआ।[4] आपने हेकॉकके नाम लिखा अपना पत्र पढ़ जानेके लिए मेरे पास भेजा, तदर्थ धन्यवाद। उस पत्रमें आद्योपान्त व्याप्त स्पष्टवादिताकी मैं कद्र करता हूँ। कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि हम लोगोंके बीच जो कुछ गुजरा है यह उसका बहुत ठीक संक्षिप्त रूप है।

मेरा खयाल है कि बन्दूकोंके बारेमें आपकी नाराजी कुछ हदतक गैर जरूरी है। श्री हेकॉकके सुझावपर ही मैंने आपसे उस मामलेका जिक्र किया था। और यदि मेरे द्वारा किये गये उस जिक्रको आप उचित मानते हैं, तब फिर जिनकी बन्दूक छिन गई है उनसे बन्दूकें वापस मिलनेकी संभावनाकी बात कह देनेके लिए मैं दोषी नहीं ठहराया जा सकता। आपके बारेमें लोगोंके दिलोंमें अच्छी भावना पैदा करनेके सिवा उसका कुछ और उद्देश्य नहीं था। मुझे कहते हुए प्रसन्नता होती है कि आपसे

१. इस तारीखको गांधीजी बेतियामें थे।
२. स्वामी श्रद्धानन्द।
३. बेतियाके सब-डिवीजनल मजिस्ट्रेट।
४. सिलेक्ट डॉक्यूमेंट्स सं० ५२; इसे यहाँ उद्धृत नहीं किया गया है।

पहली ही बार मिलनेपर आपकी मेरे हृदयपर जो छाप अंकित हुई थी वह अभीतक जैसीकी-तैसी बनी है और उसे बदलनेका कोई कारण प्रस्तुत नहीं हुआ। मैं निश्चित रूपसे कह सकता हूँ कि आपकी सत्तामें मैंने किसी प्रकारका हस्तक्षेप नहीं किया है।

और मेरी धारणा है कि आपका यह निष्कर्ष कि हाकिमोंकी जगह रैयतके दिलोंमें मैं घर करता जा रहा हूँ, तथ्योंके विपरीत और निराधार है। मेरा उद्देश्य अधिकारियोंमें लोगोंकी सहायताके निमित्त सहृदयताके भाव जाग्रत करना तथा जो दिलचस्पी वे उनके प्रति आजतक दिखाते आये हैं, उससे अधिक दिलचस्पीके लिए उन्हें प्रेरित करना है।

मुझे किसी प्रकारकी अशान्तिकी आशंका नहीं है, क्योंकि जहाँ-कहीं मैं जाता हूँ गोरे जमींदारोंसे मुलाकात करनेसे कभी नहीं चूकता और जहाँ-जहाँ मैं जाता हूँ लोगोंसे कहा करता हूँ कि राहत मुझसे नहीं बल्कि जमींदारोंसे और सरकारसे ही मिलेगी। मैं उन्हें यह भी सलाह देता रहता हूँ कि आप लोग किसी भी हालतमें हिंसाका सहारा न लें, काम न रोकें, पहलेकी तरह ऐसे काम करते रहें, मानो जाँच हो ही नहीं रही है। मेरे मनमें लोगोंके द्वारा किसी प्रकारकी अशान्ति की जानेका अन्देशा इसलिए भी नहीं पैदा होता कि यह जाँच बिलकुल खुली जाँच है, और इसमें पुलिस तथा जमींदारोंके प्रतिनिधि भी बैठा करते हैं।

आप बाबू ब्रजकिशोर प्रसादके साथ कुछ ज्यादती कर रहे हैं। बिहारके अन्य लोगोंके साथ-साथ वे मेरी अच्छी-खासी मदद कर रहे हैं। इस जाँचकी हदतक मैं और वे अलग-अलग नहीं हैं। इसीलिए वे तथा मेरे अन्य सहयोगी आपसे मिलने नहीं आये। परन्तु यह जरूर कहूँगा कि उनकी सहायता बहुमूल्य रही है।

जमींदारोंके प्रति न्याय करनेकी खातिर मुझे यह कहना ही चाहिए कि श्री स्टिलने[1] खुद अपनी मर्जीसे मुझे इस बातका निमन्त्रण दिया है कि मैं उनके देहात जाऊँ और जितने दिन चाहूँ वहाँ ठहरूँ। और श्री कॉक्सने मुझे इस आशयका पत्र लिखा है कि वे कुछ अग्रगण्य बागान मालिकोंको विचार-विनिमयके लिए एकत्रित करनेवाले हैं। पत्रके अन्तमें उन्होंने लिखा है कि "आप इतमीनान रखें कि हम लोग आपकी जाँचमें मदद पहुँचाना चाहते हैं।" कदाचित् यह बात आपके इस कथनके प्रतिकूल बैठती है कि निलहोंके मनमें मेरे बारेमें बड़ा शक बैठा हुआ है; वे मुझे अपना सहज शत्रु मानते हैं।

मैं सरकारके माध्यमसे, जहाँ-कहीं उसकी सहायताकी आवश्यकता हो, अपने देशवासियोंकी और बागान मालिकोंकी सेवा करना चाहता हूँ।

आपका सच्चा,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन, सं० ५१, पृष्ठ ९८–९।

१. सी० स्टिल जो कि साठीकी नील-कोठीसे सम्बद्ध थे।

२९४. पत्र : डॉक्टर एच० एस० देवको

बेतिया
चम्पारन
अप्रैल २९ [१९१७][1]

प्रिय डॉक्टर देव,

आपका भूगोल-सम्बन्धी ज्ञान गलत है। यह आसाम नहीं है, यह तो उत्तर बिहार है। यह राजा जनककी भूमि है जहाँ विश्वामित्र उन दो किशोरों, राम और लक्ष्मणको अपने साथ लेकर आये थे। इस भूखण्डमें प्रकृतिने जितना दिल खोलकर दिया है, मनुष्यने अपनी शक्ति-भर उतना ही लूटा है। यहाँ हालत इतनी खराब है कि मैं इस जगहसे एक दिनके लिए भी बाहर नहीं जा सकता। मैंने अपने सारे कार्यक्रम रद कर दिये हैं। मेरी इच्छा तो जरूर है कि नासिक आकर आपसे मिलूँ परन्तु ऐसा होना दुश्वार दीखता है।

जो लोग हमारे पास आ रहे हैं उनके बयान यथासम्भव शीघ्रताके साथ लिये जा रहे हैं। कुछ ही दिनोंमें मेरे पास, रिपोर्ट लिखनेके लिए कुछ-न-कुछ मसाला जुट जायेगा। श्री शास्त्रियरको मैं यहाँके सब समाचार अविलम्ब भेजता रहता हूँ।

यद्यपि अभी मैं कारावासमें नहीं हूँ तथापि मैं यह अपेक्षा करूँगा कि श्री गोखलेके भाषणोंके अनुवादके बारेमें जो कार्यक्रम बन चुका है उसे आप ही पूरा कर दें।

हृदयसे आपका
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (सी० डब्ल्यू० ५७९७) की फोटो-नकलसे।

२९५. पत्र : डब्ल्यू० बी० हेकॉकको

मोतीहारी
मई २, १९१७

प्रिय श्री हेकॉक,

मैं कल रातको मोतीहारी आया। यह तो शायद आपको मालूम होगा कि मैं आज १०-४५ पर बागान मालिकोंसे मिल रहा हूँ। क्या आप चाहेंगे कि मैं आपसे भी मिल लूँ? यदि ऐसा हो तो कृपया सूचित कीजिए।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इंडिया) से; सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन, सं० ५८, पृ० ११० से भी।

१. चम्पारनकी भौगोलिक स्थितिके उल्लेखसे लगता है कि गांधीजीने यह पत्र वहाँ पहली बार जानेके बाद लिखा होगा।

२९६. पत्र : एस्थर फैरिंगको

मोतीहारी
चम्पारन
मई २, १९१७

प्रिय एस्थर,

तुम्हारा पत्र अहमदाबादसे मुझे अभी-अभी मिला है। उसके लिए तुम्हें 'धन्यवाद' देना तो निरर्थक उपचार होगा। तुम्हारा लक्ष्य कहीं अधिक गहरा है। यहाँ मुझे जो अनुभव हो रहे हैं उनसे मुझे बहुत आनन्द मिल रहा है। लेकिन अपने आसपास में लोगोंको जो दुःख उठाते देखता हूँ उनसे मुझे कष्ट भी उतना ही मिल रहा है। मैं जानता हूँ कि तुम मेरे लिए वेदना महसूस करती हो क्योंकि तुम स्वयं भी इन सारी कठिनाइयोंके बीचमें रहने और उन्हें [मेरे साथ] झेलनेकी इच्छा रखती हो। लेकिन तुम्हारा काम तुम्हें मिल चुका है। जो तुमसे दूर हैं उनके लिए तो तुम भगवान्से प्रार्थना-भर कर सकती हो और यह तो तुम अपने सम्पूर्ण अन्तःकरणसे कर ही रही हो।

मैं सम्भवतः छः माह तक इस जगहको छोड़ नहीं सकूँगा। यहाँ मैं जो काम कर रहा हूँ उसका वर्णन मैं तुम्हें शीघ्र ही किसी दिन लिख भेजूँगा।

जब भी तुम्हें सुविधा हो, आश्रम जरूर हो आओ। तुम्हारा एक घर वह भी है — अगर किसीके एकसे ज्यादा घर हो सकते हैं, तो।

पत्र लिखना चाहो तो ऊपर दिये हुए पतेपर लिखना।

सस्नेह,

तुम्हारा,
बापू

[अंग्रेजीसे]
माई डियर चाइल्ड

२९७. पत्र : काका कालेलकरको

बेतिया
मोतीहारी
वैशाख सुदी ११ [मई २, १९१७][1]

भाई श्री काका,

आपका पत्र मिला। आपका आश्रममें पहुँच जाना ठीक हुआ। आपकी आवश्यकता यहाँ[2] हो सकती है, किन्तु मैं आपकी सहायता यहाँ नहीं लूँगा। आपका काम अभी तो राष्ट्रीय शालाके प्रयोगमें जुट जाना है। मुझे वह प्रयोग बहुत आवश्यक दिखता है।

१. काका कालेलकर आश्रममें १९१७ में गये थे।
२. चम्पारनमें, जहाँ गांधीजीने बादमें स्कूल और लोक-कल्याण सम्बन्धी कार्य आरम्भ किये थे।

मेरी इच्छा है कि आप प्रो० शाहसे मिलकर उस कार्यको तुरन्त आरम्भ कर दें। भाई सदाशिवको लिख दें कि शायद उनकी जरूरत पड़ सकती है। जरूरत पड़नेपर उन्हें बुला लूँगा। क्या वे सपरिवार आनेके लिए तैयार हैं? कमसे-कम छः मास तो देने ही पड़ेंगे। अधिक समय भी लग सकता है।

यदि शास्त्रीवाली जमीन अन्यथा असुविधाजनक न हो और उसमें पानी ठीक हो तो उसे अविलम्ब खरीद लेना चाहिए। क्या आपको ऐसा लगता है कि मकान बनने तक वहाँ तम्बू लगाये जा सकते हैं या झोंपड़े बनाये जा सकते हैं? जमीनके सम्बन्धमें विश्लेषणकर्त्ताकी रिपोर्ट सन्तोषजनक न हो तो भी मुझे उसकी चिन्ता नहीं। पानी अच्छा होना चाहिए। हमें राष्ट्रीय शालामें फिलहाल तो १२ से २० तक लड़के चाहिए। यदि वे अच्छे परिवारोंके हों तो अच्छा, न हों तो भी ठीक। यदि शास्त्रीवाली जमीनमें जाना पड़े तो पासके गाँवोंके लड़के भी बुलाये जा सकते हैं। किन्तु जबतक अहमदाबाद नगरके लड़के आ सकें तबतक इस प्रयोगमें गाँवके लड़कोंको न लाना ज्यादा ठीक होगा। फिर भी इस बातपर कोई आग्रह रखनेकी जरूरत नहीं। जो लड़के मिलेंगे उन्हींसे काम चलेगा।

शिक्षकोंमें गुण होगा तो शिक्षणका सहज सुलभ लाभ तो सबको मिलेगा ही। वे 'रामायण' की कथाएँ सुनायेंगे तो उन्हें सभी यथाशक्ति समझेंगे। खेतीकी शिक्षा भी सब समान रूपसे लेंगे। लेकिन आध्यात्मिक चेतनाके लिए संस्कार होने चाहिए। हम कैसे जानें कि ये संस्कार शहरमें मिलेंगे या गाँवमें। यह पत्र प्रो० शाहको पढ़वा देना और उनसे मेरी ओरसे प्रार्थना करना कि वे इस काममें पूरी तरह जुट जायें। अवकाश मिलनेपर उन्हें मैं पत्र लिखूँगा।

भाई कृपलानी मुजफ्फरपुरमें हैं। उन्होंने मुझसे पूछा था कि उन्हें अब क्या करना चाहिए। मैंने उन्हें यह सलाह दी है[1] कि चूँकि वे यहाँ हैं, इसलिए यहींके काममें भाग लें। उसके बाद उनका कोई उत्तर नहीं आया है।

मोहनदासके वन्देमातरम्

चिन्तामणि शास्त्रीके सम्बन्धमें [उन्हें] अभय कर देना कि जबतक सिन्धको उनकी आवश्यकता है तबतक हम उन्हें यहाँ नहीं बुलायेंगे।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्रकी नकल (सी० डब्ल्यू० ५७१२) से।

सौजन्य: नारणदास गांधी

१. देखिए "पत्र: जे० बी० कृपलानीको", १७–४–१९२०।

२९८. पत्र : हरिलाल देसाईको

बेतिया
वैशाख वदी ५ [मई ११, १९१७][1]

भाई श्री हरिलाल देसाई[2],

आपका पत्र मुझे यहां मिला। आप मुझसे मिले थे, यह मुझे याद है। आप मेरे साथ यहां रहना चाहें तो रह सकते हैं। मैं अभी कुछ महीने इसी प्रदेशमें रहूँगा। यदि आप मेरी अनुपस्थितिमें अहमदावादमें रहना चाहें, तो वैसी व्यवस्था भी की जा सकती है। आपको जैसा अनुकूल हो, वैसा करें। आप कानपुर या पटना होकर यहां आ सकते हैं।

मोहनदास गांधीके वन्देमातरम्

भाई श्री हरिलाल माणिकलाल देसाई
तापीनी खड़की
कपड़वंज

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (जी० एन० १८६७) की फोटो-नकलसे।

२९९. पत्र : जमनादास गांधीको

बेतिया
चम्पारन
वैशाख वदी ६ [मई १२, १९१७][3]

चि० जमनादास[4],

तुम्हारे पत्रकी राह मैं ऐसे ही देख रहा था जैसे [चातक] मेघकी देखते हैं। पत्र मिला और मनको काफी सन्तोष प्राप्त हुआ। उसी डाकसे नारणदासका भेजा हुआ तुम्हारा एक दूसरा पत्र भी मिला है। तुम्हें मैं पत्र लिखता रहूँगा। मेरी कसौटी तुम्हारी सफलता है। यदि तुम मेरी अपेक्षाओंको पूरा न कर सके, तो मेरी परखकी

१. इस दिन गांधीजी बेतियामें थे।

२. हरिलाल माणिकलाल देसाई (१८८१–१९२७); शिक्षा-शास्त्री और समाज-सेवक। वे १९२० में अपना काम छोड़कर गांधीजीके मार्गदर्शनमें असहयोग आन्दोलनमें सम्मिलित हुए। बादमें उन्होंने अपना जीवन खादी और ग्रामोत्थानके कार्यमें लगा दिया।

३. इस तारीखको गांधीजी बेतियामें थे।

४. छगनलाल गांधीके भाई।

क्षमताको शून्य अंक मिलेगा। मैंने तुम्हारे ही भरोसे यह बीड़ा उठाया है। [तुम्हारे असफल होनेपर] मेरी आत्मा भी यही कहेगी कि मुझे लोगोंकी परख बिलकुल नहीं है। इसलिए तुम्हें मेरा आशीर्वाद और प्रोत्साहन सदा प्राप्त होता रहेगा। मेरी कामना है कि प्रभु तुम्हें पूरा और अपेक्षित बल दे। यदि तुम दोनोंका जीवन आदर्श रहेगा तो बहुतसे युवकोंका उद्धार हो जायेगा। मेरी प्रबल इच्छा है कि तुम सब, जिनपर मेरी आशा बँधी हुई है, मेरे समान बनो — इतना ही नहीं, बल्कि मुझसे भी अच्छे बनो और मुझमें जो दोष हों, वे तुम लोगोंमें न आयें। यदि तुम अपनी आकांक्षा इतनी ऊँची रखो तो उसमें कोई दोष नहीं है। बेटा बापकी सम्पत्तिको ज्योंका-त्यों बनाये रखे, यह कोई अनोखी बात नहीं है; किन्तु यदि वह उसमें वृद्धि करे तो उससे बापको प्रसन्नता होती है और उसकी अपनी शोभा भी बढ़ती है।

मुझे अभी तो यहीं रहना होगा। तुम्हें सभी समाचार डॉक्टर साहबसे मिल जाते होंगे; इसलिए खबरें इसमें नहीं लिख रहा हूँ। यदि वहाँका भोजन तुम्हारे शरीरके प्रतिकूल न हो तो अभी उसमें कोई बड़ा फेरफार करनेकी उतावली न करना। इस समय तुम्हारा कर्त्तव्य इतना ही है कि तुम अपना शारीरिक विकास भली-भाँति करो; लड़कोंको पढ़ा-लिखाकर उन्नत करो; और अन्य प्रकारसे डॉक्टर साहबको सन्तोष दो।

बापूके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५६७५) से।
सौजन्य: नारणदास गांधी

३००. पत्र: एस्थर फैरिंगको

बेतिया
मई १३, १९१७

प्रिय एस्थर,

मुझे पत्र लिखनेमें क्षमा याचनाकी क्या बात है? तुम्हारे पत्रोंका आना मुझे बहुत अच्छा लगता है।

मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं है कि मिशनको तुमने जो कुछ करनेका वचन दिया है, सम्पूर्ण मनसे उसे पूरा करना ही तुम्हारा कर्त्तव्य है। आश्रम तुम तभी आओ जब वे तुम्हें छुट्टी दें और यह बिलकुल स्पष्ट दिखने लगे कि यहाँ आकर तुम मानवताकी सेवा ज्यादा अच्छी तरह कर सकोगी। जब वह घड़ी आयेगी तब आश्रम अपने ही परिवारके एक सदस्यके रूपमें तुम्हारा स्वागत करेगा। बेशक, तबतक तुम वहाँ जब भी तुम्हारा जी हो जा सकती हो और जितने दिन रहना चाहो रह सकती हो।

आश्रममें आजकल हम लोग शिक्षाका एक प्रयोग कर रहे हैं। ऐसी शिक्षाका जो आदर्शका काम दे सके। मुझे विश्वास है कि तुम वहाँ जब भी जाओगी, तुम्हें हमारे शिक्षक अच्छे लगेंगे। मेरा खयाल है कि वे सब सज्जन और विचारवान् लोग हैं।

मेरा यहाँका कार्य मुझे दिन-प्रतिदिन ज्यादा-ज्यादा आनन्द दे रहा है। गरीब किसानोंको मेरे पास आकर बैठनेमें बड़ी खुशी होती है; उन्हें लगता है कि मैं जो करूँगा सो ठीक ही करूँगा; वे मेरा भरोसा कर सकते हैं। मैं यही मानता हूँ कि मुझमें उनके इस अपार प्रेमकी पात्रता हो। मैं बागान मालिकोंसे मिलता ही रहता हूँ और उन किसानोंकी ओरसे जो कितने वर्षोंसे अत्याचारोंके बोझके तले कराहते आये हैं उनकी न्याय-भावनाको उकसानेकी अथक कोशिश करता ही रहता हूँ। मैंने सरकारको जो प्रतिवेदन[1] भेजा है उसकी एक नकल मैं तुम्हें भेजूँगा। मुमकिन है उसके कुछ मुद्दे तुम्हारी समझमें न आयें। ऐसा हो तो मुझसे पूछनेमें हिचकना नहीं।

सस्नेह,

तुम्हारा,

बापू

[अंग्रेजीसे]

माई डियर चाइल्ड

३०१. प्रतिवेदन : चम्पारनके किसानोंकी हालतके बारेमें[2]

बेतिया

मई १३, १९१७

चम्पारनके किसानोंकी हालतकी अपनी जाँच-पड़तालके फलस्वरूप मैं जिन प्रारम्भिक निर्णयोंपर पहुँचा हूँ उन्हें माननीय श्री मॉडके सुझावोंके[3] अनुसार यहाँ पेश कर रहा हूँ।

शुरूमें ही मैं यह बता दूँ कि श्री मॉड मुझसे जो आश्वासन चाहते थे वह आश्वासन देना तो मेरे लिए सम्भव नहीं था। वे चाहते थे कि जो वकील-मित्र मुझे सहायता पहुँचा रहे हैं उन्हें [इस कामसे] खींच लिया जाये। मैं कहना चाहता हूँ कि इस माँगसे मुझे गहरा दुःख हुआ है। यह माँग मैं जबसे आया हूँ तबसे बराबर की जाती रही है। मुझे जिलेके बाहर निकाल दिया जाये, यह आज्ञा जबसे वापस ली गई है तबसे मुझसे यह कहा जाता रहा है कि मेरी उपस्थितिसे किसी हानिकी आशंका नहीं है और मेरी सदाशयता सन्देहातीत है; किन्तु वकील-मित्रोंकी उपस्थितिसे 'खतरनाक स्थिति' पैदा होनेका डर है। इस सम्बन्धमें मेरा निवेदन यह है कि यदि मेरे बारेमें यह भरोसा किया जा सकता है कि मैं भद्रता और शालीनताके साथ व्यवहार करूँगा तो उसी प्रकार यह भरोसा भी किया जा सकता है कि मैं अपने लिए अपने ही जैसे

१. देखिए अगला शीर्षक।

२. प्रतिवेदन बिहार और उड़ीसा प्रान्तके मुख्य सचिवको भेजा गया था।

३. श्री मॉड बिहार और उड़ीसा प्रान्तकी कार्यकारिणी परिषद्के उपाध्यक्ष थे। ये सुझाव उन्होंने गांधीजीके साथ अपनी १० मईकी बातचीतमें दिये थे। देखिए परिशिष्ट ५।

शालीन सहायक भी चुनूँगा। मेरे सामने जो कठिन कार्य उपस्थित है, उसे देखते हुए मैं इस बातको अपना सौभाग्य मानता हूँ कि मुझे उसमें इन योग्य, सच्चे और साखवाले व्यक्तियोंका सहकार प्राप्त है। मुझे तो ऐसा ही लगता है कि उन्हें छोड़ देना अपने कामको ही छोड़ देनेके बराबर होगा। सज्जनोचित व्यवहारका यह तकाजा है कि मैं उनकी सहायताका त्याग तबतक न करूँ जबतक यह सिद्ध न हो जाये कि उन्होंने कोई अनुचित कार्य किया है और मुझे उसका विश्वास न हो जाये। मुझे ऐसी कोई आशंका नहीं है कि मेरी अथवा मेरे मित्रोंकी उपस्थितिसे कोई 'खतरनाक स्थिति' पैदा हो सकती है। खतरा अगर कहीं है तो वह उन कारणोंमें है जो गोरे जमींदारों और किसानोंके बीच आजके तनावपूर्ण सम्बन्धोंके लिए जिम्मेदार हैं। और अगर ये कारण दूर कर दिये जाते हैं तो जहाँतक किसानोंका सवाल है, चम्पारनमें, किसी 'खतरनाक स्थिति' के पैदा होने का डर रखनेका कोई कारण नहीं है।

अस्तु, इस प्रतिवेदनके तात्कालिक उद्देश्यपर आयें। अभीतक हम सावधानीसे पूरी जिरह करनेके बाद करीब चार हजार किसानोंके बयान ले चुके हैं। हम कई गाँवोंमें घूम चुके हैं और अदालतों द्वारा दिये गये अनेक फैसलोंका अध्ययन कर चुके हैं। इस प्रकार हम जो जाँच कर पाये हैं उसके आधारपर, मेरी रायमें, निम्नलिखित निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं।

चम्पारन जिलेमें काम करनेवाली इन फैक्टरियों या पेढ़ियोंको दो वर्गोंमें बाँटा जा सकता है— (१) वे जिनके पास नीलकी खेती नहीं थी, और (२) वे जिनके पास नीलकी खेती थी :

(१) जिन पेढ़ियोंने नीलकी खेती कभी नहीं कराई उन्होंने कई अबवाब वसूल किये हैं (अबवाब किसानोंसे वसूल किये जानेवाले एक प्रकारके टैक्स हैं जिन्हें इस इलाकेमें अलग-अलग जगहोंमें कई अलग-अलग नामोंसे पुकारा जाता है) और इस तरह जो रकम वसूल की गयी है वह कमसे-कम किसानों द्वारा दिये जानेवाले लगानके बराबर तो है ही। इस प्रकारके कर वसूल करना गैर-कानूनी ठहराया जा चुका है, किन्तु वह बन्द नहीं हुआ है।

(२) नीलकी खेती करानेवाली फैक्टरियाँ नीलकी खेती या तो 'तिन-कठिया' या 'खुश्की' पद्धतिके अन्तर्गत कराती रही हैं। तिन-कठियाकी पद्धति ज्यादा प्रचलित रही है और किसानोंको सबसे ज्यादा तकलीफ उसीसे हुई है। उसका रूप समयके साथ बदलता रहा है। उसका आरम्भ नीलसे हुआ था किन्तु धीरे-धीरे उसने सभी फसलोंको अपनी लपेटमें ले लिया है। वह किसानकी जमीनसे सम्बद्ध ऐसी बाध्यता है जिसके कारण किसानको जमींदारकी मर्जीके अनुसार अपनी जमीनके ३/२० हिस्सेपर कोई खास फसल उगानी पड़ती है और इसके एवजमें उसे एक निर्दिष्ट मुआवजा दिया जाता है। इस प्रथाका कोई कानूनी औचित्य नहीं दिखाई पड़ता। किसानोंने इनका सदा विरोध किया है लेकिन उन्हें बल-प्रयोगके आगे झुकना पड़ा है। उन्हें अपनी सेवाओंके लिए पर्याप्त मुआवजा भी नहीं

मिला है। लेकिन जब कृत्रिम नील निकली और खेतीसे उत्पन्न स्थानीय नीलकी कीमत गिर गई तो जमींदारोंने नीलके सट्टोंको[1] रद करना चाहा। इसलिए उन्होंने अपना नुकसान किसानोंके सर थोपनेकी तरकीब ढूंढ़ निकाली। नीलकी खेती करानेका अपना अधिकार छोड़नेके एवजमें उन्होंने पट्टेदार किसानोंसे तावान वसूल किया जो प्रति बीघा रु० १०० तक था। किसानोंका कहना है कि तावानकी यह वसूली जबरदस्ती की गई। जहाँ किसान नगद पैसा नहीं दे सके वहाँ उन्होंने रकम किस्तोंमें चुकानेके लिए हैंड-नोट या रहन-नामा लिख दिया और १२ प्रतिशत वार्षिक ब्याज देना कबूल किया। इन पत्रकोंमें दर्ज बकाया रकमको तावान नहीं कहा गया है, बल्कि उसे किसानको उसके किसी कामके लिए दिया गया कर्ज बताया गया है।

मुकर्ररी जमीनोंमें नुकसान वसूल करनेका एक नया तरीका अपनाया गया है: यह तरीका है शरहबेशी सट्टोंका। शरहबेशी यानी नीलकी खेती [का हक छोड़ने] के एवजमें लगानमें की गई बढ़ोतरी। सर्वेकी रिपोर्टके अनुसार ५,९५५ काश्तकारोंपर — प्रभावित किसानोंकी संख्या इससे कहीं ज्यादा है — यह बढ़ोतरीकी रकम रु० ३१,०६२ है। बढ़ोतरी होनेके पहले वे लगानके रूपमें रु० ५३,८६५ देते थे। किसानोंका कहना है कि ये सट्टे उनसे जबरदस्ती लिखाये गये हैं। यह कदापि नहीं माना जा सकता कि नीलकी खेती करनेकी बाध्यतासे मात्र एक अस्थायी अवधिके लिए मुक्त होनेके एवजमें किसानोंने इस स्थायी और अतिशय बढ़ोतरीको स्वेच्छासे स्वीकारकर लिया होगा। वे तो इस मुक्तिके लिए कबसे जूझ रहे थे और अब उम्मीद कर रहे थे कि वह उन्हें जल्दी ही किसी भी समय मिल जायेगी।

जहाँ तावान नहीं वसूल किया गया है, वहाँ फैक्टरियोंने किसानोंको तिन-कठियाकी पद्धतिके तहत जई, ईख या ऐसी ही कोई दूसरी फसल उगानेके लिए मजबूर किया है।

इस तिन-कठिया पद्धतिके तहत किसान जमींदारोंकी बताई हुई फसलें उगानेके लिए अपनी सर्वोत्तम जमीन देनेके लिए बाध्य हुए हैं; कई बार तो इसके लिए उन्हें अपने घरके ठीक सामनेकी जमीन देना पड़ी है; इसके लिए उन्हें अपने समय और शक्तिका सर्वोत्तम अंश भी देना पड़ा है। अपनी फसलें उगानेके लिए — जिनपर कि उसकी जीविका निर्भर है — उसे बहुत ही कम समय रह जाता है।

किसानोंसे फैक्टरियोंको किरायेपर गाड़ियाँ देनेके लिए भी जबरदस्ती साटे कराये गये हैं; यह किराया इतना कम होता है कि इस काममें किसानोंको जो पैसा खर्च करना पड़ता है वह भी उससे पूरा वसूल नहीं होता।

किसानोंसे जबरदस्ती काम लिया जाता है और उन्हें पर्याप्त मजदूरी भी नहीं दी जाती। अल्पवयस्क लड़कों तक से उनकी इच्छाके विरुद्ध काम कराया जाता है।

फैक्टरियाँ किसानोंके हल उठवा लेती हैं और उन्हें अपनी जमीनें जोतनेके लिए लगातार कई दिनों तक और उस समय रोके रखती हैं जब कि किसानोंको भी

१. या साटा-लिखित करार।

अपनी जमीन जोतनेके लिए उनकी जरूरत होती है। फिर, उन्हें इसका बहुत ही कम पैसा दिया जाता है।

फैक्टरियोंके नौकरोंको बहुत ही कम वेतन मिलता है और ये नौकर मजदूरोंकी मजदूरीसे दस्तूरी वसूल करते हैं जो अक्सर उनकी दैनिक मजदूरीका पाँचवाँ हिस्सा होती है। वे गाड़ियों और हलोंके किराएमें से भी हिस्सा वसूल करते हैं।

कुछ गाँवोंमें चमारोंको किसानोंके मृत जानवरोंका चमड़ा फैक्टरियोंको दे देनेके लिए मजबूर किया गया है। पहले चमार मृत जानवरके बदलेमें किसानोंको जूते और हलोंमें लगनेवाले चमड़ेके नाड़े दिया करते थे और उनकी स्त्रियाँ किसानोंके घरोंमें प्रसूतिके मौकेपर काम करती थीं। अब उन्होंने यह सब काम बन्द कर दिया है। कुछ फैक्टरियोंने तो इन चमड़ोंको इकट्ठा करनेके लिए गोदाम भी खोल रखे हैं।

जिन किसानोंने फैक्टरियोंमें मनमाने हुक्म बजानेसे इनकार किया है उनपर गैरकानूनी और भारी-भारी जुर्माने ठोके गये हैं।

(प्राप्त गवाहियोंके अनुसार) किसानोंको झुकानेके लिए जमींदार जो अन्य अनेक उपाय काममें लाते हैं उनमेंसे कुछ ये हैं: उनके गाय-बैल आदि पकड़वाकर काँजी हौजमें डाल देना; उनके घरोंपर चपरासी बिठा देना; उनके नाई, धोबी, बढ़ई और लुहार बन्द कर देना; गाँवके कुएँ बन्द कर देना; उनके घरोंके सामने या पिछवाड़ेकी जमीन और रास्ते जोतकर कुओं और चरागाहोंपर उनका जाना मुश्किल कर देना; उनके खिलाफ दीवानी मुकदमे चलाना या चलवाना; उनके खिलाफ फौजदारीकी शिकायतें करना; उनपर शारीरिक बलका प्रयोग करना और उन्हें बेजा तौरपर बन्द कर रखना। जमींदारोंने किसानोंको अपनी मर्जीके मुताबिक चलानेके लिए उनके खिलाफ यहाँकी प्रथाओंका दुरुपयोग किया है और जहाँ जरूरत हुई है वहाँ वे कानूनको अपने हाथोंमें ले लेनेसे भी नहीं हिचके हैं। फलतः दीन-हीन असहायताकी जो हालत मैंने यहाँके किसानोंमें देखी है वैसी भारतमें मैं जहाँ भी गया हूँ वहाँ कहीं नहीं देखी।

वे [जमींदार] जिला-बोर्डोंके सदस्य हैं, चौकीदारी कानूनके तहत 'असेसर' हैं और अपने काँजी हौज रखते हैं। किसान उनकी इस अधिकार और सामर्थ्यकी स्थितिसे आतंकित हैं। वे सड़कोंका जो किराया देते हैं उसका आधा आना प्रति रुपया किसान भी देते हैं किन्तु उन्हें सड़कोंका उपयोग शायद ही करने दिया जाता है। उनकी गाड़ियों और बैलोंको, जिन्हें सड़कोंकी शायद सबसे ज्यादा जरूरत है, उनका उपयोग क्वचित् ही करने दिया जाता है। यह कहनेसे कि यह बात चम्पारनमें ही नहीं दूसरी जगहोंमें भी है, इस शिकायतकी गुरुतामें कुछ कमी नहीं होती।

मैं जानता हूँ कि कुछ औद्योगिक प्रतिष्ठान इस नियमके अपवाद भी हैं किन्तु सामान्य आरोपोंके रूपमें ऊपर जो-कुछ भी कहा गया है उसे सिद्ध किया जा सकता है।

मैं यह भी जानता हूँ कि कुछ भारतीय जमींदारोंपर भी ये सब आरोप लगाये जा सकते हैं। किसान जिस प्रकार गोरे जमींदारोंके अन्यायोंसे मुक्ति पाना चाहते हैं उसी प्रकार उनके अन्यायोंसे भी मुक्ति पाना चाहते हैं। इसमें सन्देह नहीं कि गोरे जमींदारोंने ये अन्याय खुद शुरू नहीं किये, उन्होंने तो पहलेसे चली आई एक दूषित प्रणाली विरासतमें पाई। किन्तु यह भी सच है कि अपनी बौद्धिक प्रवीणता और अधिकारपूर्ण

स्थितिकी सहायतासे उन्होंने इन पुराने रिवाजोंको एक शास्त्र ही बना डाला है। नतीजा यह है कि यदि सरकारने उनकी थोड़ी-बहुत रक्षा न की होती तो किसान अन्यायोंके इस समुद्रमें डूब गये होते; उन्हें उसके ऊपर सिर उठानेका भी अवकाश न मिलता। लेकिन सरकारसे किसानोंको जो रक्षा मिलती है वह बहुत कम होती है; दूसरे उसकी चाल बहुत धीमी होती है और अकसर इतनी देरसे मिलती है कि उससे उठाये जा सकनेवाले लाभका समय ही बीत चुकता है।

यह सही है कि इस प्रतिवेदनमें जिन मामलोंका जिक्र हुआ है, उनमें से कुछके बारेमें सरकार बन्दोबस्त-(सैटिलमेंट) अधिकारीकी रिपोर्टकी राह देख रही है। लेकिन जब किसान ऊपर वर्णित अत्याचारोंके बोझके तले कराह रहे हैं, उस समय इस सारी परि-स्थितिकी जाँच बन्दोबस्त अधिकारीसे करवानेका तरीका भारी-भरकम और इसलिए बेढंगा है। उसके लिए तो ये सारी शिकायतें बन्दोबस्तके अपने विशाल कार्यका एक अंग-मात्र हैं। इसके सिवा, उसकी जाँचमें ऊपर उठाये हुए सारे मुद्दे आते भी नहीं। फिर, ये सारी शिकायतें ऐसी हैं जिनके बारेमें कोई विवाद शायद ही हो सके और वे इतनी गम्भीर हैं कि उनसे तुरन्त राहत मिलनी चाहिए।

तावान और शरहबेशी साटे और अबवाब जबरदस्ती लिए गये हैं, इससे कोई इनकार तो कर ही नहीं सकता। और मेरा खयाल है, यह भी नहीं कहा जायेगा कि इन चीजोंके बारेमें किसानोंको कानूनका आश्रय लेनेसे पूरी रक्षा मिल सकती है। हमारा कहना यह है कि जहाँ जबरदस्तीकी यह वसूली इतने व्यापक पैमानेपर की जा रही है वहाँ किसानोंको अदालतोंसे पूरी रक्षा नहीं मिल सकती और सर्वोच्च जमींदारकी हैसियतसे सरकारको अपनी ओरसे प्रशासनिक सुरक्षा देनी ही चाहिए; उसके बिना काम चल ही नहीं सकता।

अन्यायोंकी दो श्रेणियाँ हैं। एक तो वे अन्याय जो हो चुके और अब मेटे नहीं जा सकते और दूसरे वे जो अभी जारी हैं। इन दूसरे प्रकारके अन्यायोंको एकदम बन्द किया जाना चाहिए और पुराने अन्यायोंकी — जो तावान और अबवाब वसूल किये जा चुके हैं और शरहबेशीका जो पैसा दिया जा चुका है, उनकी छोटी-सी जाँच होनी चाहिए। डोंडी पिटवाकर और पर्चे बाँटकर किसानोंको बता दिया जाना चाहिए कि वे अबवाब, तावान और शरहबेशीका पैसा देनेके लिए न केवल बाध्य नहीं हैं बल्कि उन्हें वह नहीं देना चाहिए और अगर कोई उनसे यह पैसा वसूल करनेकी कोशिश करे तो सरकार उनकी रक्षा करेगी। उन्हें यह भी बताया जाना चाहिए कि वे अपने जमींदारोंकी वैयक्तिक टहल करनेके लिए बाध्य नहीं हैं, अपनी सेवाएँ वे जहाँ चाहें, जिसे चाहें उसे बेच सकते हैं और अगर उनकी इच्छा न हो और इसमें उन्हें अपना लाभ न दिखे तो वे नील, गन्ना या कोई भी दूसरी फसल उगानेके लिए भी बाध्य नहीं हैं। बेतिया राज द्वारा फैक्टरियोंको दिये गये पट्टे उनकी अवधि बीत जानेपर तबतक दुबारा नहीं दिये जाने चाहिए जबतक वे अपने अनुचित कार्योंको सुधार नहीं लेतीं और जब ये दुबारा दिये जायें तो उनमें किसानोंके अधिकारोंकी रक्षाकी व्यवस्था होनी चाहिए।

अब दस्तूरीका सवाल लें: जाहिर है कि जिम्मेदारीकी जगहोंमें मौजूदा लोगोंकी अपेक्षा ज्यादा शिक्षित आदमी लिये जाने चाहिए और उन्हें ज्यादा अच्छा वेतन दिया

जाना चाहिए और गैरकानूनी तौरपर दस्तूरी वसूल करके किसानोंको उनकी प्राप्य मजदूरीसे कम देनेका रिवाज बन्द होना चाहिए। मेरा निश्चित विश्वास है कि गोरे जमींदार इस बुराईको मिटा सकते हैं यद्यपि वे उसे 'हिमालय-जितनी पुरानी' बताते हैं।

किसानोंको एक बार यह विश्वास हो जाये कि वे आजाद हैं और जमींदार उनके साथ मनमानी नहीं कर सकते तो फिर इस सवालकी जाँच करनेकी जरूरत नहीं रह जायेगी कि नीलके साटोंमें, [फैक्टरियोंको] गाड़ियाँ किराएपर देनेके साटोंमें और मजदूरीके रूपमें उन्हें जो मुआवजा दिया जाता है वह पर्याप्त है या नहीं है। सर्वसम्मत समझौतेके आधारपर उन्हें यह सलाह दी जानी चाहिए कि उस साल उन्होंने नीलकी या जो भी दूसरी फसल उगाई हो उसे वे पूरा कर दें। लेकिन इस सालके बाद कोई भी फसल क्यों न हो वे उसे अपनी इच्छाके अनुसार चाहे उगायें, चाहे न उगायें। उन्हें इस सम्बन्धमें निर्णयकी पूरी आजादी होनी चाहिए।

आपके ध्यानमें यह बात आयेगी कि मैंने इस प्रतिवेदनको ज्यादा दलीलें देकर बोझिल नहीं बनाया है। किन्तु यदि सरकारकी ऐसी इच्छा हो कि मुझे अपना अमुक निष्कर्ष प्रमाणित करना चाहिए तो मैं उसके प्रमाण सहर्ष पेश करूँगा।

अन्तमें मैं यह कहना चाहूँगा कि बागान मालिकोंकी भावनाओंको दुखानेकी मेरी कतई इच्छा नहीं है। मुझे उनसे सदा सद्व्यवहार मिलता रहा है। लेकिन चूँकि मैं यह मानता हूँ कि यहाँके किसान एक भयंकर अन्यायकी चक्कीमें पिस रहे हैं और उन्हें उससे तत्काल मुक्त किया जाना चाहिए इसलिए यहाँ मैंने उनके द्वारा चलाई जा रही प्रणालीकी आलोचना अवश्य पेश की है—हाँ, मैंने यह सावधानी रखी है कि जहाँ तक सम्भव हो मैं अपनी बात शान्त भावसे कहूँ। यह कार्य मैंने इस आशासे हाथमें लिया है कि अंग्रेज-जातिके नाते अपने इस विश्वासको ध्यानमें रखकर कि पूरी-पूरी व्यक्तिगत स्वतन्त्रताका उपयोग उनका जन्मसिद्ध अधिकार है वे अपने गौरवकी ऊँचाई तक उठ सकेंगे और अपने आश्रित किसानोंको भी वही स्वतन्त्रता देनेकी उदारता दिखायेंगे।

मैं इस प्रतिवेदनकी नकलें तिरहुतके कमिश्नर, चम्पारनके कलेक्टर, बेतियाके सब-डिवीज़नल अधिकारी, बेतिया राजके मैनेजर और बिहार प्लांटर्स एसोसिएशन (बिहारके गोरे कामदारोंका संघ) तथा जिला बागान मालिक संघ (प्लान्टर्स एसोसिएशन) के मन्त्रियोंको भेज रहा हूँ। इसके सिवा, मैं उन्हें भारतीय लोकमतके उन नेताओंको भी भेज रहा हूँ जो यहाँ मेरे और मेरे साथियोंके इस कामसे सम्पर्क रखते रहे हैं। नकलों-पर ऐसी टिप्पणी दे दी गई है कि प्रतिवेदन प्रकाशनके लिए नहीं है, क्योंकि जबतक वैसा करना बिलकुल आवश्यक न हो जाये तबतक हम इस सवालको सार्वजनिक विवादका विषय नहीं बनाना चाहते।

मेरी ओरसे यह आश्वासन तो है ही कि जब भी मेरी उपस्थिति आवश्यक मानी जाये मैं आपकी सूचना पाते ही सेवामें हाजिर हो जाऊँगा।

[अंग्रेजीसे]

सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज़ मूवमेंट इन चम्पारन, सं० ७२, पृष्ठ १२६–१३१।

३०२. चम्पारनकी स्थितिके सम्बन्धमें टिप्पणी[1]

गोपनीय

बेतिया
मई १४, १९१७

मजिस्ट्रेटने श्री गांधीको जिलेसे बाहर चले जानेका जो आदेश दिया था वह जबसे वापस ले लिया गया है तबसे लोगोंके बयान लिखनेका काम बिना किसी रुकावटके लगातार चल रहा है। करीब ४,००० बयान लिये जा चुके हैं। मोतीहारी और बेतियामें किसान भारी संख्यामें इकट्ठे हुए हैं। भीड़ इतनी ज्यादा है कि स्वयंसेवक अपना काम रोज-ब-रोज पूरा नहीं कर पाते।

ये सब स्वयंसेवक स्थानीय वकील हैं और उन्होंने अपना काम बहुत उत्साह और लगनके साथ किया है। बाबू ब्रिजकिशोरप्रसाद हमारे कामके इस हिस्सेकी देख-रेख करते रहे हैं। दूसरे स्वयंसेवकोंके नाम इस प्रकार हैं: बाबू राजेन्द्रप्रसाद,[2] बाबू धरणीधर,[3] बाबू गोरखप्रसाद बाबू रामनवमीप्रसाद,[4] बाबू शम्भुशरण[5] और बाबू अनुग्रहनारायण सिंह।[6] कभी-कभी आ जानेवाले लोग भी यदाकदा इस काममें हमारी मदद करते रहे हैं। कार्यकर्त्ता अनेक गाँवोंमें गये हैं और सैकड़ों काश्तकारोंसे उन्होंने उनके घरोंमें जाकर भेंट की है।

काश्तकारोंके साथ-साथ गोरे जमींदारोंको भी सभाओंमें आनेका निमन्त्रण हमेशा दिया जाता रहा है। लेकिन वे सभाओंमें कभी आये नहीं हैं। हाँ, उनके जमादार आते रहे हैं। श्री गांधी जमींदारोंसे अलग-अलग मिल चुके हैं और एक बैठकमें उनके प्रतिनिधियोंके साथ [सामूहिक रूपसे भी] गांधीजीकी बातचीत हो चुकी है। जमींदारोंके

१. ये और ऐसी अन्य टिप्पणियाँ गांधीजीने समय-समयपर अपने साथी-कार्यकर्त्ताओं और चम्पारनके इस आन्दोलनके प्रति सहानुभूति रखनेवाले पत्र-सम्पादकोंके उपयोगके लिए लिखी थीं। ताकि ये पत्र-सम्पादक उन्हें पढ़कर चम्पारनकी वास्तविक परिस्थितिके बारेमें ज्यादा ठोस जानकारीके साथ लिख सकें (देखिए 'टिप्पणी-३')। इनमें से संख्या ३, ५ और ६ की टिप्पणियोंपर तो गांधीजीके हस्ताक्षर भी हैं; बाकीको इसी आधारपर गांधीजी द्वारा लिखा हुआ माना गया है। संख्या ४ उपलब्ध नहीं है। इस टिप्पणीपर क्रम-संख्याका उल्लेख नहीं है, इसलिए यह स्पष्ट नहीं कि यह इस क्रमका प्रथम लेख है या दूसरा।

२. (१८८४-१९६३); वरिष्ठ राजनीतिज्ञ; भारतकी संविधान सभाके अध्यक्ष, १९४६-४९; भारतके प्रथम राष्ट्रपति।

३. दरभंगाके प्रसिद्ध वकील और कांग्रेसी।

४. मुजफ्फरपुरके प्रसिद्ध वकील; बिहारके निलहे गोरोंके खिलाफ किसानोंके मुकदमे लड़ते थे; गांधीजीके साथ चम्पारनके आन्दोलनमें और फिर असहयोग आन्दोलनमें शामिल हुए।

५. (१८९२-१९३१); वकील व बिहारके प्रसिद्ध कांग्रेसी; चम्पारन तथा असहयोग और खिलाफत आन्दोलनोंमें भाग लिया था।

६. (१८८९-१९५७); वकील और बिहारके कांग्रेसी नेता; बिहार मंत्रिमंडलके सदस्य, १९४६-५७।

प्रतिनिधि बड़ी सज्जनतासे पेश आये, लेकिन वे अपनी बातका आग्रह छोड़नेके लिए तैयार नहीं थे। उनका दावा था कि उन्होंने हमेशा किसानोंके उपकारकोंका-सा व्यवहार किया है और उन्हें साहूकारोंके लोभका शिकार होनेसे बचाया है। जाहिर है कि उन्होंने अपना पक्ष पेश करनेमें अतिशयोक्ति की। स्थानीय अधिकारियोंके साथ श्री गांधीकी कई मुलाकातें हो चुकी हैं। हमारी बात सुनने और समझनेकी वृत्ति गोरे जमींदारोंकी बजाय स्थानीय अधिकारियोंमें ज्यादा है और वे निश्चय ही सन्तोषकारक समझौतेकी इच्छा भी रखते हैं। अधिकारियोंने अपने इस मतको भी कभी छिपाया नहीं है कि हम यहाँ जो कार्य कर रहे हैं वे उसे पसन्द नहीं करते। सरकारकी सूचना थी कि श्री गांधीको हर किस्मकी सुविधा दी जानी चाहिए किन्तु उनमें से कुछ लोगोंने इसका पालन बहुत अनिच्छासे ही किया है। फलतः उनसे जानकारी प्राप्त करना हमेशा बहुत आसान नहीं रहा है। ऊपर जिन सहायकोंके नाम आये हैं उनकी उपस्थितिके खिलाफ उन्होंने अपनी नापसन्दगी और भी जोरसे व्यक्त की है। बेतियाके सब-डिवीजनल ऑफिसर (उप-मंडल-अधिकारी) ने तो कई बार यहाँ तक कहा[1] है कि हमारी जाँचके कारण उसे अपने इलाकेमें किसी भी दिन आगजनी आदिके उपद्रव होनेकी आशंका है। वह कहता है कि काश्तकार पहलेसे ज्यादा ढीठ हो गये हैं और उन्होंने हमारी जाँचके बारेमें जरूरतसे अधिक आशाएँ बाँध रखी हैं। उसने सरकारसे कहा है कि अगर जाँचका काम बन्द नहीं कराया जाता तो वह अपने जिलेमें शान्ति बनाये रखनेके लिए जिम्मेदार नहीं होगा। कुछ गोरे जमींदार सरकारके पास यह शिकायत करने राँची पहुँचे थे कि अगर जांच जारी रहती है तो उन्हें अपनी जानका खतरा है। इसीलिए इस महीनेकी १० तारीखको श्री गांधीको माननीय श्री मॉडसे मिलनेके लिए बाँकीपुर बुलाया गया था।

एक औद्योगिक प्रतिष्ठानका मुख्य कोठीसे दूर बना हुआ एक हिस्सा जला दिया गया है।[2] गोरे जमींदार इस घटनासे घबराये और उन्होंने इसे हमारे जाँच-कार्यका परिणाम बताया। किन्तु जाँचका इस घटनासे कोई सम्बन्ध नहीं है।

श्री मॉडने सुझाव दिया[1] कि जाँच अब बिलकुल बन्द कर दी जाये, यही ज्यादा उपयोगी होगा और श्री गांधी अपनी रिपोर्ट सरकारको पेश कर दें; और यदि जाँच बन्द करना सम्भव नहीं है तो श्री गांधी उस जिलेसे अपने वकील-मित्रोंको हटा लें। श्री गांधीने कहा कि जांच पूरी तरह बंद नहीं की जा सकती लेकिन वे जाँचके इस कार्यमें उस मंजिल तक पहुँच गये हैं जहां वे उसके आधारपर प्रारंभिक निर्णय पेश कर सकते हैं। वकील-मित्रोंके बारेमें उन्होंने कहा कि वे सब शान्त स्वभावके और विश्वसनीय लोग हैं, उन्होंने इस कार्यमें मेरी बहुत ज्यादा सहायता की है और मैं उनकी सहायताका त्याग करनेकी बात सोच ही नहीं सकता; वह अशोभन होगा। श्री मॉडकी बातचीतका ढंग मैत्रीपूर्ण था और उससे समझौता करनेकी इच्छा प्रगट

होती थी। साथमें जो प्रतिवेदन[1] भेजा जा रहा है वह दोनोंकी इस भेंटका परिणाम है। जाँच चल रही है लेकिन अभीतक लोगोंके बयान स्वयंसेवक [सहायक वकील-मित्र] लिख रहे थे, अब वे नहीं लिखेंगे बल्कि श्री गांधीको ज्यों ही सुविधा होगी त्यों ही श्री गांधी प्रतिदिन कुछ घण्टे किसानोंके बीच बैठेंगे और उनके बयान[2] सुननेके बाद उनके सम्बन्धमें अपना मन्तव्य लिखा करेंगे।

प्रतिवेदनमें जान-बूझकर अल्पोक्तिसे काम लिया गया है; उसमें किसानोंकी दशा जैसी चित्रित की गई है उससे कहीं ज्यादा खराब है। जिसने इस सवालका विशेष अध्ययन न किया हो वह उसे समझ नहीं सकता। कहा जा सकता है कि वहाँ स्थानिक सरकारके शासनकी जगह गोरे जमींदारोंका ही शासन चल रहा है। किसानोंकी ओरसे बोलनेकी किसीको हिम्मत नहीं पड़ती। उन्हें स्थानिक मुख्तारोंकी मदद भी आसानीसे नहीं मिलती। श्री गांधीको कितने ही लोगोंने अकेलेमें मिलकर अत्याचारोंकी जो कहानियाँ सुनाई हैं, बयानोंमें जो कुछ लिखा गया है, वे उससे ज्यादा भयंकर हैं। फीजी और नेटालमें तकलीफका कारण कोई एक कानून था; अगर वह कानून हटा दिया जाये तो बुराईका उपाय हो जाता था। लेकिन चम्पारनमें फैली हुई बुराई चारों ओर उगनेवाले घासपातकी तरह है जो उगता ही जाता है, बढ़ता ही जाता है और इस तरह फैल-फैलकर जिसने कानून और व्यवस्थाको चौपट कर दिया है। जो कानून किसानोंकी रक्षाके लिए बनाये गये हैं, गोरें जमींदारोंने उन्हींका उपयोग उन्हें गुलाम बनानेमें कर डाला है। चूंकि जमींदारोंने अपनेको कानूनके बाहर माना है इसलिए कई बार तो अदालतोंकी डिगरियोंका भी उनपर कोई असर नहीं होता। इसलिए इस बुराईको रोकनेके लिए भारी कोशिश करनी पड़ेगी, तभी वह रोकी जा सकेगा। विशाल पैमानेपर और संगीन सार्वजनिक आन्दोलन छेड़नेकी आवश्यकता न पड़े और जमींदार [स्वेच्छासे] न्याय करनेके लिए राजी हो जायें, इसके लिए पूरी-पूरी कोशिश की जा रही है। हमारी इच्छा यह है कि सरकारसे जमीदारोंके साथ सख्तीसे बरतनेको कहा जाये और इस प्रकार उक्त रिपोर्टका प्रकाशन टाला जाये; क्योंकि अगर रिपोर्टका प्रकाशन हुआ तो भारतीय जनता [इस कष्ट-गाथा]को सुनकर काँप उठेगी। अगर रिपोर्ट प्रकाशित होती है तो हमारे सार्वजनिक कार्यकर्त्ता — स्त्रियाँ और पुरुष — तबतक कभी शान्त नहीं बैठ सकेंगे जबतक कि उसमें गिनाये हुए अत्याचार दूर नहीं हो जाते। इन अत्याचारोंके वर्णन-मात्रसे लोगोंका क्रोध भड़क उठेगा। इसलिए सार्वजनिक आन्दोलन छेड़े बिना समझौता करनेकी कोशिशें की जा रही हैं।

समझौता हो तो, और न हो तो भी गाँवोंमें स्वयंसेवकोंको बिठानेकी आवश्यकता है। ये स्वयंसेवक जमींदारों और किसानोंके बीच कड़ीका काम करेंगे, किसानोंकी हिम्मत बढ़ायेंगे और अपनी उपस्थितिसे उन्हें जमींदारोंके नौकरोंके अत्याचारोंसे बचायेंगे। इन स्वयंसेवकोंसे गांवोंमें कमसे-कम छः माह तक रहनेकी अपेक्षा है।

१. देखिए पिछला शीर्षक।
२. देखिए परिशिष्ट ६।

अगर सरकार गाँवोंमें उनकी उपस्थितिको ठीक मानती है तो उनका काम आसान होगा, और अगर वह उसे नापसन्द करती है तो मुश्किल होगा। लेकिन जो भी हो हमें वैसा करना है। गाँवोंमें रहते हुए वे गाँवोंके लड़के-लड़कियोंको पढ़ायेंगे और ग्रामवासियोंको प्राथमिक सफाई सिखायेंगे। यहाँ यह कह दिया जाये कि यहाँकी ग्रामवासी जनता भारतकी लगभग सबसे ज्यादा पिछड़ी हुई और अपढ़ जनता है। शिक्षाका स्तर इस जिलेमें सबसे नीचा है। सफाईकी हालत सबसे खराब है। बच्चोंको भरपेट खाना नहीं मिलता जिससे वे बीमार-से नजर आते हैं। और वयस्क लोग किसी-न-किसी रोगसे पीड़ित हैं। अनेक लोगोंको गलगण्ड नामक गलेकी एक बीमारी है। उनमें कोई शारीरिक या नैतिक सत्त्व नहीं रह गया है। यहाँ तक कि — देखकर दुःख होता है — राजपूत भी भयसे पीड़ित हैं। मौजूदा स्वयंसेवक ऊपर बताया हुआ काम करनेके लिए प्रतिज्ञाबद्ध हैं। ऐसी अपेक्षा नहीं है कि बिहार अभी वैसे और भी कई स्वयंसेवक देगा जैसे हम चाहते हैं। स्वयंसेवकोंके चुनावमें बहुत सावधानी बरती जा रही है। हमें बहुत सुशिक्षित, जिम्मेदार और शान्त-गम्भीर स्वभाववाले लोग चाहिए। जिनके पास ये टिप्पणियाँ पहुँचें उनसे हम अपेक्षा करते हैं कि वे ऐसे स्वयंसेवक प्राप्त करनेमें अपने प्रभावका उपयोग करेंगे और उनसे हमारे पास अपने नाम भेजनेको कहेंगे। करीब सौ स्वयंसेवकोंकी आवश्यकता है। जिन्हें अपने परिवारोंके लिए मददकी जरूरत है, उन्हें हम अपनी शक्तिके अनुसार मामूली मदद भी देंगे।

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ६३५२) से।

३०३. पत्र : डब्ल्यू० मॉडको

बेतिया
मई १४, १९१७

प्रिय श्री मॉड,

जैसा कि मैंने वादा किया था आज अपना प्रतिवेदन[1] मैंने मुख्य सचिव (चीफ सेक्रेटरी)को भेज दिया है। मैं ऐसी आशा किये हूँ कि उसपर तुरन्त ही विचार किया जायेगा।

मैं यथासंभव शीघ्र ही अपने वचनके अनुसार जाँचकी पद्धति बदलनेकी व्यवस्था भी कर रहा हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

सिलेक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन, सं० ७३, पृष्ठ १३१।

१. देखिए "प्रतिवेदन: चम्पारनके किसानोंकी हालतके बारेमें", १३-५-१९१७।

३०४. पत्र : एल० एफ० मॉर्सहेडको

बेतिया
मई १४, १९१७

प्रिय श्री मॉर्सहेड,

सरकारको मैंने जो प्रतिवेदन दिया है उसकी नकल आपकी जानकारीके लिए आपके पास भेज रहा हूँ।

आपका,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (नेशनल आकाइव्ज ऑफ इंडिया) से; पत्र (जी० एन० ४६१७) की फोटो-नकल से भी।

३०५. पत्र : डब्ल्यू० बी० हेकॉकको

बेतिया
मई १४, १९१७

प्रिय श्री हेकॉक,

सरकारको मैंने जो प्रतिवेदन दिया है उसकी एक नकल आपकी जानकारीके लिए आपके पास भेज रहा हूँ।

आपका,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (नेशनल आर्काइव्ज़ ऑफ इन्डिया) से; पत्र (जी० एन० ४६११) की फोटो-नकल से भी।

३०६. पत्र : डब्ल्यू० बी० हेकॉकको

मई १४, १९१७

प्रिय श्री हेकॉक,

आपका ध्यान संलग्न सामग्रीकी ओर खींचना चाहता हूँ। मेरे पास तरह-तरहकी अफवाहें पहुँची हैं। इस सम्बन्धमें (स्पष्टीकरणका) निवेदन प्रकाशित करनेके लिए मुझपर जोर डाला जा रहा है, किन्तु मैं कोई अनधिकृत निवेदन नहीं करना चाहता हूँ। क्या आप कृपया मुझे यह बतायेंगे कि आगसे कितना नुकसान हुआ है, जो बँगला जल गया है वह कैसा था, क्या उसमें कोई रहता था या उसकी रक्षाका कोई दूसरा प्रवन्ध था और क्या इस घटनामें और चम्पारनमें मेरी उपस्थितिके

बीचमें कोई सम्बन्ध बताया गया है। यह सारी सामग्री मैं प्रकाशनके लिए चाहता हूँ। पत्र मैं एक विशेष सन्देशवाहकके हाथ भेज रहा हूँ जो आपके उत्तरके लिए रुकेगा।

आपका सच्चा,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज़ मूवमेंट इन चम्पारन, सं० ७१ (ए) पृष्ठ १३६।

३०७. पत्र: एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाको

[मई १४, १९१७ अथवा उसके बाद]

श्री गांधीने एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाको निम्नलिखित पत्र लिखा है:

मैं यहाँ जो कार्य कर रहा हूँ उसके सम्बन्धमें अखबारोंमें आपके द्वारा प्रेषित हालके एक समाचारको देखते हुए मैं इसके साथ चम्पारनके जिला मजिस्ट्रेटके साथ हुआ अपना पत्र-व्यवहार संलग्न कर रहा हूँ। कृपया उसे प्रकाशित करायें।

श्री गांधीका पत्र[1]

उत्तर[2]

पत्र अपनी बात खुद ही बता रहे हैं। मैं उसमें इतना ही जोड़ना चाहूँगा कि जहाँतक मैं जानता हूँ आग लगनेकी उस घटनामें और यहाँ मेरी उपस्थितिमें किंचित् भी सम्बन्ध नहीं है। आपके समाचारमें कहा गया है कि एक पूरी फैक्टरी जला दी

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२. प्रिय श्री गांधी,

आपका ता० १४ मई १९१७ का पत्र मिला। मैं आपको निम्नलिखित जानकारी दे सकता हूँ। ओल्हा फैक्टरी तुरकौलिया प्रतिष्ठानका एक बाहरी हिस्सा है। उसका इंजिनवाला कमरा, प्रेस (कोल्हू) वाला मकान तथा खलीवाला मकान जल गये हैं। इन मकानोंकी कीमत मोटे तौरपर बीस हजार रुपये कूती गई है। लेकिन यह एक मोटा अनुमान-मात्र है। इस हिस्सेमें कोई मैनेजर या सहायक मैनेजर नहीं रहता लेकिन इन मकानोंकी देखरेखके लिए कुछ नौकर रहते हैं। ये मकान मोतीहारीके दक्षिण-पश्चिममें कोई बीस मीलकी दूरीपर हैं। आपके पास, आपके कहनेके अनुसार, जो तरह-तरहकी अफवाहें पहुँची हैं उसका कारण शायद यह है कि इन मकानोंमें आग लगनेकी यह घटना इस जिलेमें आपके आनेके कुछ ही समय बाद हुई है और जाँचके सिलसिलेमें आपके आगमनसे वातावरणमें काफी सरगर्मी पैदा हुई है।

हृदयसे आपका,
डब्ल्यू० बी० हेकॉक

गई है लेकिन जिला मजिस्ट्रेटका पत्र बताता है कि फैक्टरीके एक बाहरी बँगलेका एक हिस्सा ही आगसे जला है।

आपका विश्वस्त,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन, सं० ७९, (ए), (पृष्ठ १३६–१३७) में संकलित बिहारी १७–५–१९१७ के उद्धरणसे।

३०८. पत्र : जे० पी० एडवर्डको[1]

बेतिया
मई १७, १९१७

प्रिय महोदय,

रकसौल बाजारके बुटई साहू हलवाई, गुल्ली साहू कानू और भरदुलठा कुर बदईने मुझे उन जमीनोंकी रसीदें दिखाई हैं जो आपने उन्हें पट्टेपर दी हैं। उनका कहना है कि उनके घर जल गये हैं और उन्हें दुबारा घर बनानेसे रोका जा रहा है और उनसे उक्त जमीनोंको खाली करनेके लिए कहा जा रहा है। कृपया बताइए कि उनके कथनमें कुछ सचाई है या नहीं; यदि है तो सूचित करें कि उन्हें घर दुबारा बनानेसे क्यों रोका जा रहा है।

आपका विश्वस्त,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन, सं० ७६, पृष्ठ १३३।

१. हरदिया कोठी, चम्पारनके प्रबन्ध

३०९. पत्र : छगनलाल गांधीको

बेतिया

वैशाख बदी ११, मई १७, १९१७

चि० छगनलाल,

बनारसके भाषणकी[1] संशोधित प्रति भेजनेमें कोई हानि नहीं है।

अब जमनादासके पत्र भेजनेकी आवश्यकता नहीं है, क्योंकि वह अब मुझे लिखने लग गया है। तुमने इस बार जो पत्र भेजा है, उसे नारणदासको भेजे देता हूँ। ऐसा जान पड़ता है, उसने उसे नहीं देखा। उसके पत्रमें कोई खास बात हो तो मुझे लिखना।

यहाँ पगड़ी भेजनेकी जरूरत नहीं है। जो है, उसीसे काम चला लेता हूँ। धोतियाँ तैयार न हुई हों, तो करा लेना। लगता है उनकी जरूरत पड़ेगी। तुमने उमरेठको और सूत दे दिया होगा। उस कामको छोड़ना नहीं है। मेरी राय है कि सैयद मुहम्मद और दूसरे भाई, जिन शर्तोंपर लालजी आये है उन्हीं शर्तों पर आयें, तो उन्हें रख लिया जाये। मुझे लगता है, हमें काफी कपड़ा बनवाना चाहिए; किन्तु आँटी बनाकर देनेकी जिम्मेदारी अपने ऊपर नहीं लेनी है। वे अपने लड़के साथ लायें। यदि गरीब माँ-बाप अपने लड़कोंको काम सीखने भेजें तो उन्हें मजूरी दी जाये। उनसे काम थोड़े समय ही लिया जाये; शेष समय उन्हें पढ़ाया जाये। संक्षेपमें, मुझे एक छोटा कारखाना खोलनेकी जरूरत महसूस होती है। इसी तरह धीरे-धीरे कुछ सूझ जायेगा। इस बारेमें यह खयाल भी आता है कि यदि हमें कुछ ईमानदार वैतनिक कर्मचारी मिल जायें, तो उनको रखना ठीक होगा। उनसे घरेलू काम लिया जा सकता है और इस समय हममें जो लोग घरेलू काममें लगे हैं उन्हें अवकाश मिल सकता है। यह विचार मेरे मनमें बराबर आया करता है। किन्तु इसे काफी ठोक-बजाकर देख लेना है। इस दृष्टिसे यदि कोई प्रौढ़ वयकी विधवा बहन मिल जाये तो उसको रख लेना शायद ठीक होगा। अवकाशके समयमें ऐसा ही सोचता रहता हूँ। किन्तु चूँकि मैं [तुमसे] इतनी दूर बैठा हुआ यह सब सोचता हूँ, इसलिए इन विचारोंको बहुत महत्त्व देनेकी आवश्यकता नहीं है। यदि इनपर अमल करो तो अपनी जिम्मेदारीपर करो। [इस सम्बन्धमें विचार करते समय भाई ब्रजलालकी पूरी सहायता लेना। चूँकि जिम्मेदारी उनकी रहती है, इसलिए इस सम्बन्धमें कुछ विशेष वे ही कह सकेंगे।

बापूके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५७०४) से।

सौजन्य : छगनलाल गांधी

१. देखिए "भाषण : बनारस हिन्दू विश्वविद्यालयमें", ६-२-१९१६।

३१०. पत्र : नरहरि परीखको

वेतिया
वैशाख वदी ११ [मई १७, १९१७][1]

भाई श्री नरहरि,

आपका पत्र मिल गया है। मैंने उसे ध्यानसे पढ़ लिया। मुझे विश्वास है कि आपने जो कदम उठाया है, उसमें कोई भूल नहीं हुई है। मैं छगनलालको लिखे देता हूँ कि वह आपको ७५ रुपया मासिक देता रहे। यदि आप हमेशा इतने रुपयोंमें काम चलाते रह सकें तो वह पर्याप्त समझा जायेगा। इसके लिए भी आपको संयम रखना होगा। जान पड़ता है, अभी ऐसे लोगोंके मिलनेका समय नहीं आया जो पैसेके विना अथवा वहुत ही थोड़े पैसेमें अपना काम चला सकें। उसके लिए परिवारके पूरे वातावरणमें परिवर्तन होना आवश्यक है। यह वात मुख्यत: गुजरातके वारेमें सही है।

आप अध्यापनका और गोखलेके भाषणोंके अनुवादका वोझ एक-साथ उठा सकेंगे, इसमें मुझे सन्देह है। अध्यापनके सम्वन्धमें मेरे विचारोंको कार्यान्वित करना वहुत श्रमसाध्य कार्य है। हम अपने विद्यार्थियोंमें अपनी आत्मा उँडेल देना चाहते हों तो हमें निरन्तर उनके अध्यापनका ही विचार करते रहना चाहिए। यदि हम उनपर रोष न करते हुए उन्हें अच्छीसे-अच्छी भाषामें रोज-व-रोज जो भी ज्ञान देना हो, दें, तो उसमें हमारा वहुत-सा समय चला जायेगा। फिर हमें तो शिक्षा-पद्धतिके सम्वन्धमें भी विचार करना है। सव कुछ नई पद्धतिसे ही सिखाना है। किन्तु आपको अनुवादका पूरा काम किये विना भी छुटकारा नहीं मिलनेका। इतना सव मैं सिर्फ आपके और अन्य सारे शिक्षकोंके भावी दायित्वको ध्यानमें रखकर लिख गया।

मैंने भूगोलको अलग विषय नहीं माना है। इसलिए मैंने लिखा था कि जो इतिहास पढ़ायेगा वही भूगोल भी पढ़ायेगा। फिर भी यदि फिलहाल उन्हें अलग-अलग विषय मानना ठीक लगे तो मान सकते हैं। यदि अनुभवके वाद परिवर्तन करना उचित लगा, तो कर लेंगे।

सभी शिक्षकोंको सप्ताहमें कमसे-कम एक वार इकट्ठा होना और आपसमें अनुभवोंका आदान-प्रदान करके जैसा उचित जान पड़े, वैसा परिवर्तन करना पड़ेगा। मुझे लगता है कि शिक्षण पद्धतिके सम्वन्धमें समझदार विद्यार्थियोंसे भी सलाह-मशविरा करना और उनसे सुझाव माँगना चाहिए।

प्रत्येक विद्यार्थीके स्वास्थ्यका खयाल रखना प्रत्येक शिक्षकका कर्त्तव्य है। इसका मुख्य दायित्व उस शिक्षकपर होगा, जिसके पास आरोग्यका विषय है।

शिक्षकोंको पाठ्यक्रमके जिन विषयोंका ज्ञान न हो, उनका ज्ञान प्राप्त कर लेना चाहिए, और उसमें भी मुख्यत: हिन्दीका ज्ञान। हिन्दी कितनी आवश्यक है, यह मैं

१. इस तारीखको गांधीजी वेतियामें थे।

अपने यहाँके काम-काजमें देख सकता हूँ। मुझे लगता है कि देशके अन्य भागोंसे स्वयं-सेवक बुलाने होंगे। जिन्हें हिन्दी न आती होगी उनके सम्बन्धमें मुश्किल ही है। मुझे तो बराबर इसके प्रमाण मिलते रहते हैं कि हिन्दी सीखे बिना शिक्षा बिलकुल अधूरी रहती है।

मेरा खयाल है, यदि आनन्दशंकरभाई अथवा केशवलालभाई[1] प्रतिदिन एक घंटा अथवा सप्ताहमें कुछ घंटे देकर शिक्षकोंका गुजराती भाषाका स्तर ऊँचा उठायें और वे पुरानी गुजराती पुस्तकोंको आसानीसे समझने योग्य बन जायें तो अच्छा हो। इस समय हम ऐसे प्रश्नोंपर विचार कर सकते हैं, जैसे फिलहाल हम गुजरातीमें कितनी प्रगति कर सकते हैं, किन पुस्तकोंको अच्छा कहा जा सकता है और नये शब्दोंके क्या अनुवाद किये जायें। हम अखा भगतकी[2] रचनाओं अथवा ऐसी ही अन्य गम्भीर पुस्तकोंके अर्थोंमें गहराई तक उतर सकते हैं और शिक्षकोंको नित्य-प्रति जिन बातोंको समझानेमें कठिनाई आती हो, उनके सम्बन्धमें किसी निश्चित निष्कर्षपर पहुँचा जा सकता है। इस प्रकार गुजराती भाषाके स्तम्भोंको भी कुछ अधिक प्रकाश मिलेगा और कुछ ऐसी बातोंपर विचार करनेका अवसर मिलेगा जिन्हें उन्होंने अछूता छोड़ दिया है। शिक्षकोंके पारिभाषिक शब्दोंके ज्ञानमें एकरूपता आयेगी और हिज्जों आदिके सम्बन्धमें भी निर्णय किया जा सकेगा। इस समय या तो सभीके अपने-अपने नियम हैं या हम नियमोंके बिना ही काम कर रहे हैं।

मैं यह मान लेता हूँ कि आप यह पत्र अन्य शिक्षकोंको भी पढ़वा देंगे।

मोहनदासके वन्देमातरम्

मूल गुजराती पत्र (एस० एन० ६३५५) की फोटो-नकलसे।

३११. पत्र : ए० के० हॉल्टमको

बेतिया
मई १९, १९१७

प्रिय श्री हॉल्टम,[3]

आप सारिस्वा आये और अपनी गाड़ी भेजी, इसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ।[4]

आपके और श्री लुईके चले जानेके बाद मैं लोगोंके साथ बैठा। उनकी संख्या ५०० से ऊपर होगी। मैंने उनसे बातचीत की और उन्हें बताया कि आप न्याय करना

१. दीवान बहादुर केशवलाल हर्षदराय ध्रुव; एक गुजराती विद्वान् और लेखक।

२. गुजरातके कवि।

३. ढोकरहा और लोहरिया कम्पनियोंके प्रबन्धक।

४. गांधीजी १८ मईको सारिस्वा गये थे।

चाहते हैं और जिरात भूमिको[1] वापस लेनेको तैयार हैं। आपका ऐसा खयाल है कि उसे वापस ले लेनेमें आपको अधिक मुनाफा है। मैंने उन्हें यह भी बताया कि आपके विचारसे लोगोंने आपके पूर्वजोंसे जिरात जमीन न केवल इच्छापूर्वक ली थी बल्कि बहुत ही तीव्र इच्छासे ली थी और वह रैयतको नीलकी खेतीके बदलेमें नहीं, बल्कि इसलिए दी गई थी कि वे जमींदारोंको मजदूर देनेकी जिम्मेदारीसे मुक्त हो सकें। मैंने आगे उन्हें बताया कि आपने मुझे श्री बर्कलेका[2] श्री गॉर्लेको[3] लिखा पत्र दिखाया था जिसमें इसी विचारकी पुष्टि की गई थी और अन्तमें उन्हें बताया कि इस मुद्देपर कि यदि उन्होंने जिरातकी जमीन आपको लौटा दी तो आप उनसे जबतक उनके अनुबन्धोंका समय पूरा नहीं हो जाता फिर पहलेकी तरह नीलकी खेती करनेकी आशा करें। मैंने उन्हें आश्वासन दिया कि मैं आपसे ऐसी वकालत करूँगा कि रैयतको फिरसे नीलकी खेती करनेको कहना, काफी अनुचित होगा (जिसके कारण मैं अभी बयान करूँगा)। फिर मैंने उन लोगोंके नाम माँगे जो तुरन्त जिरात छोड़ना चाहते थे, यद्यपि वे उसके बदलेका पूरे कृषि-वर्षका पैसा अदा कर चुके थे। इसके परिणामस्वरूप १७५ से अधिक लोगोंने तुरन्त वहीं अपने नाम दिये और दो दिनोंसे लोगोंका ताँता लगा हुआ है। यह लिखते समय तक नाम देनेवालोंकी संख्या लगभग ५०० तक पहुँच गई है।

जिरात जमीनके लिए ली गई रकम, रसीदें और खातोंको देखते वक्त उसमें मैंने पाया कि ७० काश्तकारियोंमें औसतन रैयत आपको फी बीघा जिरात जमीनके रु० २४–५–३ दे रही है। सबसे अधिक रकम जो वसूली जाती है फी बीघा रु० ९१–७–३ और सबसे कम रु० ७–८–० है। संयोगसे मैंने यह भी देखा कि जहाँ २७ बीघेकी काश्त जमीन आपको रु० ५९–१३–६ देती है, वहाँ २७ बीघे जिरात जमीन आपको रु० ६५९–७–० देती है। ऐसा लगता है कि ज्यादातर रैयतके पास एक बीघा जमीन या जिरात जमीन भी नहीं है। दरें काश्तके क्षेत्रके अनुसार कमोवेश निश्चित की गई हैं, न कि जिरातकी किस्मके अनुसार। यहाँ तक कि वे डेढ़ रुपया फी बीघा काश्तके लिए देते हैं जो जिरातके प्रति कठ्ठा[4] ६ आनेसे लेकर १२ आने तक अतिरिक्त पड़ता है। और ऐसा प्रतीत होता है कि जिरातके कठ्ठे, काश्तके बीघोंसे भिन्न हैं और किसी भी हालतमें एक बीघेमें ३ कठ्ठेसे ज्यादा नहीं होते। औसतन् ५० ग्राम निवासियोंको १$\frac{3}{5}$ कठ्ठे फी बीघेका हिसाब पड़ता है। मेरी रायमें यह बात श्री बर्कलेके विचारके अनुरूप ही है। बल्कि जहाँ रैयतके इस विचारके अनुरूप है कि जिरातका समझौता तिन-कठियाका ही दूसरा रूप है और वह इसलिए बनाया गया कि जब नीलके भाव गिरें तो कम्पनियोंका घाटा पूरा हो जाये। रैयत इस बातको जोर देकर कहती है कि

१. जमींदारकी वह जमीन जिसमें वह खास पैदावार कराता था।

२. जे० बर्कले इन कम्पनियोंके मालिक थे।

३. डब्ल्यू० आर० गॉर्ले, बंगालके कृषि निदेशक और बेतियाके पूर्ववर्ती एस० डी० ओ०; इन्होंने १९०८ में बंगालके गवर्नरके आदेशानुसार चम्पारनमें नीलकी खेतीके मामलोंकी जाँच करके अगले वर्ष अपनी सिफारिशें प्रस्तुत की थीं।

४. बिस्वाँ, बीघेका बीसवाँ भाग।

जिरात जमीन लेनेके लिए उसपर बड़ा दबाव डाला गया। उसे वापस लौटानेके लिए जितनी तत्परतासे वे आगे आये हैं उससे उनका विचार स्पष्ट व्यक्त हुआ दिखता है। पिछले १० वर्षों तक रैयत जो देती रही है वह, उपर्युक्त दृष्टिकोणके अनुसार नील न उपजानेका तावान हुआ। और इस कारण कम्पनीको तिन-कठियापर औसतन फी बीघा सौ रुपयेसे ज्यादा मिले। इन परिस्थितियोंमें और इस तथ्यको ध्यानमें रखते हुए कि आपका विश्वास है कि जिरात जमीन वापस पानेसे आपको लाभ होगा, मैं आशा करता हूँ कि आप नीलकी खेती फिरसे किये जानेपर जोर नहीं देंगे।

मैं देखता हूँ कि कुछ मामलोंमें क्षतिपूर्ति इस ढंगसे की गई है कि रैयतकी काश्त-जमीनमें से कठ्ठे ले लिये गये हैं। मैं समझता हूँ कि यदि आप मेरा सुझाव स्वीकार कर सकें कि जिरात वापस ले लें और आगेकी क्षति, वह चाहे जिरातपर हो या काश्तपर, जाने दें, तो कम्पनी और रैयतके बीच संघर्षका यह दुःखद मुद्दा सुविधासे हल हो जायेगा और इस प्रकार आप एक ऐसा दृष्टान्त सामने रखेंगे जिसे अन्य नीलके बागान-मालिक भी अपनायेंगे और लाभ उठायेंगे।

रैयतसे नीलकी खेतीमें घाटेकी वसूलीका बयान करते हुए मैंने अभी तक अपने आपको आपकी मुकर्ररी जमीन तक सीमित रखा है। ट्क्का जमीनपर लगता है कि आपने वही तरीका अपनाया है जो अन्यत्र अपनाया जा रहा है। आपने रैयतसे बकाया तावानके लिए हैंडनोट लिये हैं जिनपर सूदकी दर बहुत बड़ी है। मेरा सुझाव है कि बकायाके हैंडनोट रद कर दिये जायें। शान्ति और समझौतेकी खातिर रैयत न तो जिनका भुगतान नहीं हुआ है ऐसे सब ऊपर उल्लिखित हुंडाकी वापसीके लिए कुछ कहे और न उस तावानकी वापिसीके लिए जो वसूल कर लिया गया है और जिसके शेषांशके लिए हैंडनोट लिखाये गये हैं।

जुर्मानोंके बारेमें, मुझे मानना पड़ेगा कि वे विद्रोही रैयतपर किये गये हैं। यह शिकायत प्रायः आम शिकायत है। मैंने रैयतको बताया कि आपने कहा कि जब रैयत आपके पास अपने आपसी झगड़ोंके समझौतेके लिए आई तो आपने केवल नाम-मात्रका जुर्माना किया और वह भी आपने जीतनेवालेको लौटा दिया। रैयतने इस कथनका दृढ़तासे खण्डन किया और कहा कि जुर्माने यहाँ तक कि २५ रु० एक बारमें और इससे ज्यादा भी, कम्पनीके खिलाफ तथाकथित जुर्मके लिये किये गये थे।

रैयत आपके जमादार गोकुल मिसरके खिलाफ शिकायतमें भी उतनी ही दृढ़ है और यदि आप मामलेकी और जानकारी चाहेंगे तो मैं आपके सामने सहर्ष प्रमाण प्रस्तुत करूँगा।

नई इमारत बनाने या दुबारा बनानेकी अनुमतिके लिए कुछ वसूलीके तरीकेके सम्बन्धमें (जिसे मैं समझता हूँ कि हाल ही में अपनाया गया है) निवेदन है कि आपने उसे इस आधारपर उचित ठहराया कि जो भूमि रैयतोंकी काश्तकारीमें है वह जमींदारकी है और यदि रैयत उसका इस्तेमाल इमारत बनानेके लिए करे तो इसके लिए उसे पैसा देना होगा। बंगाल-काश्तकारी-कानूनको देखते समय मैं पाता हूँ कि कानून रैयतको जमींदारके किसी भी प्रकारके दखलके बिना इमारत बनानेकी अनुमति देता है, जहाँतक कि वे ऐसा अपनी सम्पत्तिके लाभार्थ करते हैं। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि

यह रकम-वसूली कानून द्वारा अपेक्षित नहीं है और मैं आशा करता हूँ कि भविष्यमें आप इसे हटा देंगे।

अब पेड़ोंको काटनेका प्रश्न बाकी बचता है। बंगाल काश्तकारी-कानून इस विषय-पर स्पष्टतः रैयतको पेड़ काटनेकी अनुमति देता है और इसके लिए पहलेसे जमींदारको नोटिस देना या उसकी अनुमति लेना जरूरी नहीं मानता। परन्तु मैं समझता हूँ कि हालके वर्षोंमें जमींदार कटी हुई लकड़ीमें से आधी ले लेते रहे हैं। मैं नहीं जानता कि यह रिवाज पक्का हो गया है या नहीं। यह एक ऐसा प्रश्न है जिसपर समझौतेकी प्रतीक्षा की जा सकती है।

कोडाई पानके सम्बन्धमें जो कागजात भेजनेका वायदा आपने किया था उनकी मैं प्रतीक्षा कर रहा हूँ। सीताराम तिवारीके सम्बन्धमें, मैं समझता हूँ कि ११ कठ्ठेपर ३६ रुपया लगान क्लर्ककी भूल है और मैं सुझाव देना चाहता हूँ कि यदि आप इस भूलको मान लें और सामान्य निर्धारित दरके हिसाबसे लगान लें तो वह आपके लिए शोभनीय होगा।

मैं आपसे प्रार्थना करूँगा कि इस पत्रमें उल्लिखित मुद्दोंपर ध्यानपूर्वक विचार करें और यदि आप उपर्युक्त सुझावोंके अनुसार अपनी रैयतको राहत दे सकें तो मुझे इसमें सन्देह नहीं कि इससे आपकी कम्पनी और उसकी रैयतके बीच एक स्थायी शान्ति स्थापित होगी और उससे भी ज्यादा यह एक सहज न्यायपूर्ण कार्य होगा।

आपका सच्चा,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन, सं० ८३, पृष्ठ १४१–३।

३१२. पत्र : एस्थर फैरिंगको

बेतिया
मई १९, १९१९

प्रिय एस्थर,

तुम्हारे पत्रसे तुम्हारे हृदयकी अच्छाई जाहिर होती है। मुझे फिलहाल ५०) की सचमुच ही आवश्यकता नहीं है। जितनी आवश्यकता है, इस समय हमारे पास उससे अधिक ही रुपये हैं। यदि तुम उस धनका कोई और उपयोग न सोच पाओ तो उसे आपत्कालीन कोषमें जमा करनेके लिए आश्रमको भेज दो। आश्रमको भी धनकी कोई तात्कालिक आवश्यकता नहीं है। शायद तुम्हें यह जानकर कोई आश्चर्य नहीं होगा कि मेरे कामके लिए प्राप्त होनेवाली सारी आर्थिक सहायता एक प्रकारसे मेरी ईश्वर-प्रार्थनाके जवाबमें प्राप्त हुई है। जो कुछ सेवा-कार्य मैंने अपनाये हैं उन्हें

चलानेके लिए मुझे भीख माँगनेकी आवश्यकता नहीं हुई। लेकिन यह तो लम्बी कहानी है जिसकी चर्चा मैं यहाँ नहीं कर सकता।

यहाँका कार्य यथावत् चल रहा है।

जब कुमारी पीटरसनको पत्र लिखो तो उसे मेरी याद अवश्य दिला देना और कहना कि उसने जो लम्बा पत्र मुझे लिखनेका वादा किया था मैं उसकी अभीतक प्रतीक्षा कर रहा हूँ।

सस्नेह,

तुम्हारा,
बापू

[अंग्रेजीसे]
माई डियर चाइल्ड

३१३. पत्र : डब्ल्यू० बी० हेकॉकको

बेतिया,
मई २०, १९१७

प्रिय श्री हेकॉक,

अभीतक मैंने आपको जानबूझकर ऐसे वक्तव्योंकी सूचना नहीं दी थी जिनमें कहा गया है कि रैयतको मेरे पास आनेसे रोका जाता है, और जो लोग आये हैं उन्हें कोठीके अमला लोग तरह-तरहसे सताते हैं, और कभी-कभी तो स्वयं मैनेजर भी उन्हें सताते हैं। ऐसी शिकायतें मेरे पास लगातार आती रहती हैं। मैंने इनमें से सभी बयानोंको पूरी तरह विश्वसनीय नहीं माना है, फिर भी कुछ बयानोंको दर्ज किया है। लेकिन बेलवा और ढोकरहाकी कम्पनियोंकी कारगुजारियोंके बारेमें मैंने जो-कुछ सुना है यदि वह सच है तो उनका एक परिणाम तो निश्चित है; अर्थात् उस सद्भावपूर्ण भावनाका अन्त, जिसमें अभीतक जाँचका काम चल रहा था। मैं इस मैत्रीकी भावनाको बनाये रखने और उसे और बढ़ानेके लिए अत्यन्त उत्सुक हूँ। अपनी सामर्थ्य-भर मैं मण्डलीका कार्य इस प्रकार चला रहा हूँ कि जब उसका कार्य पूरा हो उस समय पारस्परिक सद्भावनाके अलावा कोई कटुभाव न रह जाये। बेलवा और ढोकरहा कम्पनियोंके सम्बन्धमें लिखाये गये बयान[1] मैं आपको भेज रहा हूँ। यदि ये बयान सच हैं तो यह उन कम्पनियोंके लिए शोभनीय नहीं है। श्री हॉल्टमको[2] लिखे अपने पत्रकी प्रतिलिपि भी मैं संलग्न कर रहा हूँ। यह पत्र आगकी खबर सुननेसे पहले लिखा गया था। मैंने ढोकरहावालोंके बयान कल शाम ६॥ बजेके बाद लिये थे; यह पत्र उससे पहले ही रवाना किया जा चुका था।

जिन्हें अपनी रैयतसे भारी-भारी रकमें पानेकी अभीतक आदत रही है उनसे उस बड़ी आमदनीको छोड़ देनेकी सम्भावनापर विचार करनेको कहा जाये; तो मैं उन लोगोंकी [विरोधी] भावनाको समझ सकता हूँ, और कुछ हद तक उसकी कद्र भी

१. देखिए परिशिष्ट ६।

२. देखिए "पत्र : ए० के० हॉल्टमको", १९-५-१९१७।

कर सकता हूँ। अतः जिसे वे अपना अधिकार समझते रहे हैं, उसे बनाये रखनेके उनके न्यायसम्मत प्रयत्नोंका बुरा नहीं माना जा सकता। किन्तु बेलवा और ढोकरहा गाँवोंमें जो-कुछ होनेकी खबर मिली है उसे न्यायसम्मत प्रयत्नोंके वर्गमें नहीं रखा जा सकता।

यह सभी जानते हैं कि आम तौरपर बागान-मालिकोंकी इच्छा है कि मैं और मेरे मित्र अपना काम जारी न रखें। मैं सिर्फ यही कह सकता हूँ कि जबतक सरकार हमें बल-प्रयोग करके न रोके, अथवा जबतक इस बातका पक्का आश्वासन न दे कि रैयतकी जानी-मानी या जो सिद्ध की जा सकें ऐसी शिकायतें सदाके लिए दूर कर दी जायेंगी तबतक कोई शक्ति हमें इस जिलेसे नहीं हटा सकती। मैंने रैयतकी जितनी कुछ दशा देखी है उससे मुझे विश्वास हो गया है कि यदि इस समय हम इस कामसे हटते हैं, तो हम मनुष्य और ईश्वर, दोनोंकी निगाहोंमें अपराधी माने जायेंगे; और सबसे बड़ी बात तो यह है कि हम खुद अपनेको कभी माफ नहीं कर पायेंगे।

मण्डलीका उद्देश्य सर्वथा शान्तिपूर्ण है। मैं बराबर यह कहता हूँ कि बागान-मालिकोंके प्रति मेरे हृदयमें कोई दुर्भाव नहीं है। मुझसे कहा गया है कि यह बात मेरे बारेमें तो ठीक है, लेकिन मेरे साथियोंके बारेमें ठीक नहीं है। उनके मनमें अंग्रेज-विरोधी उग्र भावना है, और वे इस कार्यको अंग्रेज-विरोधी आन्दोलन समझते हैं। मैं तो यही कह सकता हूँ कि मेरे साथी किसी ऐसी भावनासे जितने मुक्त हैं उतना शायद ही कोई व्यक्ति-समूह हो। मैं ऐसे किसी रहस्योद्घाटनकी आशा नहीं कर रहा था। मैं किसी हद तक उनके मनमें दुर्भावना है, ऐसा सुननेको तैयार था। उसे मैं क्षम्य मानता। जो परिस्थितियाँ मुझे अत्यन्त असह्य प्रतीत हुई हैं, उनमें स्वयं मेरा मन दुर्भावनाग्रस्त नहीं हुआ, ऐसा मैं नहीं कह सकता। किन्तु यदि मैं देखता कि मण्डलीके कार्य-सम्पादनमें मेरे किसी साथीने दुर्भावनासे काम लिया तो मैं अपनेको उनसे अलग कर लेता और आग्रह करता कि वे मण्डलीसे अलग हो जायें। मगर इसके साथ ही रैयतकी गर्दन तोड़नेवाला जो जुआ उनके कन्धोंपर रखा है उससे उन्हें मुक्त करानेका हमारा संकल्प भी अटल है।

स्वाभाविक रूपसे प्रश्न उठता है, क्या सरकार उन्हें उससे मुक्त नहीं कर सकती? मेरा कहना है कि इस प्रकारके मामलोंमें मण्डली जैसी सहायता कर रही है वैसी सहायताके बिना सरकार कुछ नहीं कर सकती। सरकारी यन्त्रकी बनावट ही ऐसी है कि वह धीमी गतिसे चलता है। वह घूमता है, अवश्य घूमता है, किन्तु कमसे-कम अवरोधकी दिशामें। मेरे जैसे सुधारकोंके प्रति, जिनके पास वर्तमान सुधार-कार्य करनेके अलावा कोई और काम नहीं है, असहिष्णु हो उठना, अथवा उनकी सहायताके बिना भी काम कर सकनेकी अपनी सामर्थ्यपर गलत विश्वास करना शायद सरकारकी गलती होगी। मुझे आशा है कि इस मामलेमें उक्त दोनों बातोंमें से एक भी घटित नहीं होती, और जो शिकायतें मैं पहले ही सरकारके सामने रख चुका हूँ, और जिन्हें स्वीकार भी किया जाता है, वे कारगर ढंगसे दूर की जायेंगी। तब बागान-मालिकोंको इस मण्डलीके प्रति, जिसके नेतृत्वका भार मुझपर है, भय या शंका रखनेका कोई कारण नहीं रह जायेगा, और वे सहर्ष स्वयंसेवकोंकी सहायता स्वीकार करेंगे। ये स्वयंसेवक गाँववालोंमें शिक्षा-प्रसार और सफाईका काम करेंगे और बागान-मालिकों और रैयतके बीच कड़ीका काम अदा करेंगे।

कृपया पत्रकी लम्बाई और तर्कपूर्ण शैलीके लिए मुझे क्षमा करें। अपनी सच्ची स्थिति आपके सामने रखनेके लिए इनके वगैर काम नहीं चल सकता था। जिन दो मामलोंके कारण मुझे यह पत्र लिखना पड़ा है, उनमें आपसे कोई कानूनी राहत माँगनेका मेरा मंशा नहीं है। किन्तु मैं आपसे अनुरोध करूँगा कि कोठियों तथा मेरे और मेरे साथियोंके बीच अवतक जो मैत्रीपूर्ण भावना रही है, उसे बनाये रखनेके लिए आप अपने प्रशासकीय प्रभावका जितना प्रयोग कर सकते हों, अवश्य करें।

मेरा मंशा ऐसा कहनेका नहीं है कि आगकी घटनाके लिए सम्बन्धित कोठियाँ जिम्मेदार हैं। ऐसा सन्देह तो रैयतके कुछ लोगोंको है। मैंने आगकी दोनों घटनाओंके सिलसिलेमें रैयतके सैकड़ों लोगोंसे बात की है। उनका कहना है आगके लिए रैयत जिम्मेदार नहीं है और न मण्डलीका उनसे कोई सम्बन्ध है। हम इस आरोप-खण्डनको खुले मनसे स्वीकार करते हैं क्योंकि हम रैयतको बराबर समझाते रहे हैं कि इस मण्डली-का उद्देश्य हिंसात्मक अथवा प्रतिशोध लेनेका नहीं है, और यदि कोई वैसा काम करेंगे तो उससे राहत मिलनेमें विलम्ब ही होगा। किन्तु यदि कोठियाँ आगकी घटनाओंके लिए जिम्मेदार न मानी जायें, तो उन्हें भी आगकी घटनाओं और मण्डलीके बीच कोई सम्बन्ध स्थापित करनेकी कोशिश नहीं करनी चाहिए। आगकी घटनाएँ इससे पहले भी हो चुकी हैं, और मण्डली हो या न हो, आगे भी हमेशा होती रहेंगी। जबतक बिलकुल स्पष्ट प्रमाण न हों तबतक दोनों पक्षोंको एक-दूसरेपर दोषारोपण करनेसे बचना चाहिए।

बागान-मालिकोंकी जान खतरेमें है, इस ढंगकी भी एक बात कही जाती है। इस प्रकारकी चर्चामें कोई गम्भीरता नहीं हो सकती। फिर भी जितने सुरक्षित वे अब हैं, मण्डली उन्हें उससे ज्यादा सुरक्षा नहीं दे सकती। मण्डलीका ध्येय और सिद्धान्त ऐसे किसी भी कार्यके सर्वथा विरुद्ध है। इसका उद्देश्य स्वयं कष्ट-सहन करके राहत प्राप्त करना है, किसी कल्पित या वास्तविक अपराधीके प्रति हिंसा करके कदापि नहीं। रैयतको दिन-रात यही पाठ पढ़ाया गया है।

अन्तमें, मुझे लगता है कि डराने-धमकानेके बारेमें जो बयान यहाँ संलग्न किये गये हैं, उनकी सचाईके काफी प्रमाण हैं। वर्तमान प्रणालीको बरकरार रखनेका बागान-मालिकोंका जो स्वार्थ है वह ऐसे तरीकोंसे सिद्ध नहीं होगा, और डराने-धमकानेसे तो चारों-ओर और संकट ही फैलेगा।

मैं आपसे अनुरोध करता हूँ कि जो परिस्थितियाँ आपके सामने मैंने रखी हैं उनमें आप जो सहायता दे सकते हों, दें।

मैं इस पत्रकी एक प्रति श्री लुईको भेज रहा हूँ।

आपका सच्चा,

मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इंडिया) से; **सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन**, सं० ८४, पृष्ठ १४४–४६ से भी।

३१४. चम्पारनकी स्थितिके सम्बन्धमें टिप्पणी – ३

(बेतिया, २० मई, १९१७)

बेतिया,
मई २१[१], १९१९

गोपनीय

चम्पारनकी स्थितिके बारेमें यह तीसरी टिप्पणी है।

यह स्पष्ट है कि बागान-मालिकोंकी कोशिश हमारी मण्डली [मिशन] को अवैध घोषित कराने या बदनाम करनेकी है। अपना मतलब पूरा करनेके लिए उनका पहला तरीका सरकारको यह बताना था कि चम्पारनमें मण्डलीकी उपस्थितिके कारण उनके प्राणोंको खतरा है। उन्होंने यह सुझाव भी दिया कि बागान-मालिकों और रैयतके सम्बन्धोंकी जाँच करनेके लिए एक कमीशन नियुक्त किया जाना चाहिए।

उनके प्राणोंको अगर पहले कोई खतरा नहीं था तो अब भी नहीं है। रैयत इतनी दबी हुई और सभीत है कि यदि वह चाहे, तो भी ऐसी कोई हरकत नहीं करेगी; इसके अलावा, मण्डलीका सिद्धान्त तो यह है कि हर सम्भावित परिस्थितियोंमें हिंसाका सर्वथा अभाव होना चाहिए।

अपने आगमनके तुरन्त बाद वाइसरॉयको लिखे गये अपने पत्रमें[२] श्री गांधीने स्वयं उस समय, जब वे गिरफ्तार किये जानेवाले थे, एक कमीशन नियुक्त करनेका सुझाव दिया था। किन्तु उसके बादसे अबतक जो बातें प्रकाशमें आई हैं, उनसे लगता है कि कमीशनकी नियुक्ति होनेसे राहत मिलनेमें विलम्ब ही होगा। नेतागण सही स्थितिसे परिचित होनेके बाद, जिसकी कुछ झलक उन्होंने सरकारको भेजे गये अपने प्रतिवेदनमें पहले ही दे दी है, अब किसी ऐसी सम्भावनाकी कल्पना भी नहीं कर सकते जिसके कारण ये शिकायतें अनिश्चित काल तक जारी रह सकें। जितनी भी गम्भीर शिकायतें हैं उनमें से अधिकांशको स्वीकार किया जाता है। वे सरकारकी कमजोरीके कारण ही दूर नहीं हो सकी हैं। राहत देनेके लिए जो कदम जरूरी हैं उन्हें दृढ़तापूर्वक उठानेसे वह डरती रही है। उसने बागान-मालिकोंकी सद्वृत्तिके ऊपर जरूरतसे ज्यादा भरोसा किया है; और बागान-मालिकोंने कानूनों और सरकारी निर्देशों, दोनोंकी ही उपेक्षा की है। ऐसी स्थितिका सामना कोई भी कमीशन नहीं कर सकता। केवल सरकार ही ऐसा कर सकती है, बशर्ते कि वह ऐसा करना चाहे, या उसे वैसा करनेपर मजबूर किया जाये। यह स्पष्ट है कि बागान-मालिक एक ऐसा कमीशन नियुक्त कराना चाहते हैं कि मण्डलीका स्थान स्वयं ग्रहण करके उसकी गतिविधियोंको बन्द करा दें। इस पुण्य कार्यमें लगे हुए कार्यकर्त्तागण अपनी अन्तरात्माको चोट पहुँचाये बिना अपना काम किसी कमीशनके जिम्मे

१. ऐसा प्रतीत होता है कि गांधीजीने इस टिप्पणीको २० तारीखको लिखना आरम्भ किया और २१ तारीखको उसे समाप्त किया।

२. देखिए "पत्र: वाइसरॉयके निजी सचिवको", १६-४-१९१७।

सौंपकर घर नहीं बैठ सकते। कमीशनकी स्थापनाकी बात तभी स्वीकार की जा सकती है जब इस समय जो अन्याय हो रहे हैं उन्हें तत्काल दूर कर दिया जाये; और जो व्यक्ति कमीशनके सदस्य नियुक्त हों उनमें लोगोंको विश्वास हो, तथा मण्डलीको भी अपना काम जारी रखने दिया जाये। यदि कमीशन नियुक्त किया जायेगा तो मण्डली अपने कामका क्षेत्र बदल देगी, अर्थात् तब वह जाँच-कार्य छोड़कर उसके बदले गाँवोंमें जाकर कमीशनके सामने पेश करनेके लिए प्रमाण और गाँववालोंके बयान इकट्ठे करेगी। कमीशन स्वीकार्य हो, इससे पहले जो शिकायतें दूर हो जानी चाहिए, वे ये हैं: (१) अबवाब या बागान-मालिकों द्वारा वसूल की जानेवाली गैर-कानूनी चुंगीको नाममात्रके लिए नहीं, वास्तवमें खत्म किया जाये; (२) नीलकी खेती न करनेपर क्षतिपूर्तिके रूपमें एक मुश्त रकम या शरहबेशी रूपी हरजाना समाप्त किया जाये; (३) तिन-कठिया किसी भी रूप और ढंगसे वसूल न की जाये; (४) रैयतपर जुर्माना लगानेकी प्रणाली समाप्त की जाये; (५) मजदूरी करानेके लिए या बागान-मालिकोंकी मर्जी पूरी करानेके लिए मारपीटका तरीका समाप्त किया जाये।

इस प्रकार कमीशन जिन बातोंकी जाँच करेगा वे ये होंगी: (१) बागान-मालिकोंके भूमिपर पट्टेकी शर्तें क्या हैं; (२) बागान-मालिकों द्वारा रैयतसे अबतक वसूल की गई गैर-कानूनी चुंगीको वापस दिलानेका औचित्य और सम्भावनाएँ क्या हैं; (३) भू-स्वामियों द्वारा किन परिस्थितियोंमें मजदूर प्राप्त किये गये हैं; (४) मजदूरोंको मिलनेवाला मेहनताना पर्याप्त है अथवा नहीं; (५) आम जनताकी घोर गरीबी और नितान्त असह्य अवस्थाके कारण क्या हैं।

उक्त मुद्दे यहाँ इसलिए दिये गये हैं कि यह जाना जा सके कि जिस ढंगका कमीशन हमें स्वीकार हो सकता है, बागान-मालिकोंका विचार उससे बिलकुल भिन्न ढंगके कमीशनकी स्थापना है।

जहाँतक जनता और समाचारपत्रोंके लिए अपनी राय जाहिर करनेका सवाल है सबसे अच्छा तो यह होगा कि वे सबसे पहले मानी हुई शिकायतोंको दूर करनेका आग्रह करें और फिर यदि जरूरी जान पड़े तो वे एक कमीशन नियुक्त किये जानेकी बात स्वीकार कर लें; लेकिन यह बात तो निश्चित ही मानी जाये कि किसी भी स्थितिमें कार्यकर्त्तागण अपना काम जारी रखेंगे।

बागान-मालिकों द्वारा अपनाया गया दूसरा तरीका यह है कि वे ऐसे उपद्रव करायें या उनका लाभ उठायें जिनसे सरकार मण्डलीके प्रति आशंकित हो उठे; इसके सिवा वे मण्डली और उसके सहायकोंको डराते-धमकाते भी रहें।

आग लगानेकी घटनाका[1] ऐसा उपयोग पहले ही किया जा चुका है। आज धारणा यही है कि उससे जो क्षति हुई है वह बहुत ही थोड़ी है, और यह काम खुद बागान-मालिकोंका ही कराया हुआ है। लेकिन इस धारणाको गलत भी माना जा सकता है। आगकी इस घटनाको चाहे मात्र संयोग मानें, चाहे किसी दुष्टकी कार्रवाई, लेकिन मण्डलीसे उसका कदापि कोई सम्बन्ध नहीं है। श्री गांधी द्वारा पूछे गये प्रश्नके[2] उत्तरमें

१. यह आग ओलावा कारखानेमें लगी थी।

२. देखिए "पत्र: डब्ल्यू० बी० हेकॉकको", १४-५-१९१७।

श्री हेकॉकके[1] पत्रसे पता चलता है कि (१) ज्यादासे-ज्यादा २०,००० रु० की क्षति हुई है; वे स्वयं इस बातपर बहुत जोर देते हैं कि यह बागान-मालिकों द्वारा दिया गया मोटा अनुमान-मात्र है; (२) जाँच-कार्य और आगकी घटनाके बीच किसी भी प्रकारका सम्बन्ध है, उनके पास इस बातका कोई प्रमाण नहीं है।

साथ ही यह तथ्य भी ध्यानमें रखने योग्य है कि मण्डलीका कोई सदस्य इन जगहोंपर नहीं गया है, और जिस समय आग लगी उस समय कोठीके उस छोटे बाहरी बँगलेका कोई उपयोग नहीं किया जा रहा था। आगकी दूसरी घटना[2] इस माहकी १९ तारीखको घटी। एक कचहरी जलकर राख हो गई। यह नहीं मालूम कि इस जगहका उपयोग बागान-मालिक कचहरीके ही रूपमें करते थे या नहीं। यह सही है कि यह आग जहाँ लगी वहाँ मण्डलीने हाल ही में दौरा किया था। श्री गांधी वहाँ बुधवारको गये थे, और शुक्रवारको आग लगी। आग लगते ही श्री गांधीके पास सूचना आई कि यह हरकत शायद कोठीवालोंकी है। इस आशयका एक बयान[3] दर्ज किया गया है कि आग लगनेसे एक दिन पहलेकी शामको कारखानेका एक आदमी कागजात हटाते देखा गया था। अर्थात्, कचहरीमें आग लगानेसे पहले वहाँसे कागज-पत्र हटा दिये गये थे। इस कथाको इस तथ्यसे भी बल मिलता है कि बुधवारको जो जाँचकी कार्रवाई हुई थी उसमें मैनेजर और सब डिवीजनल अफसर भी कुछ समयके लिए उपस्थित थे। उस समय रैयतने दृढ़तापूर्वक बयान दिया कि उन्हें जिरात भूमि लेनेके लिए बाध्य किया जाता है, और कारखानेको नीलके मूल्यमें गिरावटके फलस्वरूप जो हानि होती थी उसकी पूर्ति उसी जिरात भूमिसे की जाती है। इसपर मैनेजरने शेखीमें आकर कहा कि वह जिरातको खुशीसे वापस लेनेको तैयार है। श्री गांधीने तुरन्त ही उन लोगोंसे अपन नाम देनेको कहा जो जिरात भूमि वापस करनेके इच्छुक थे। (कारखानेकी दृष्टिमें) यह एक दुर्घटना हुई; और (अनुमान है कि) इससे मैनेजर अवश्य ही क्रुद्ध हो गया होगा, और जाँच-कार्यको बदनाम करनेके लिए उसने आग लगवाई होगी। आग लगनेसे एक दिन पहले, बृहस्पतिवारको मैनेजर पड़ोसके एक गाँवमें गया और जिरात छोड़ देनेकी बातपर लोगोंपर काफी झल्लाया और धमकी दी कि अब वह उन्हें नीलकी खेती करनेको मजबूर करेगा। रैयतपर इन बातोंका कोई असर नहीं हुआ; शायद यह भी आग लगवानेका एक कारण हुआ। लेकिन यह सब केवल अनुमान है और सम्भव है इसका तथ्योंसे कोई सम्बन्ध न हो। एक बात निश्चित है कि मण्डलीका आगकी घटनाओंसे कोई सम्बन्ध नहीं है। कचहरीकी लागतका पता नहीं है लेकिन वह २०० रु० से अधिक नहीं होगी।[4]

गाँववालोंको तंग करते रहना उनका तीसरा तरीका है। डराने-धमकानेका सबसे हालका दृष्टान्त यह है कि कारखानेके अमला एक गाँवमें गये और एक छोटे जमींदारके

१. देखिए "पत्र : एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाको", १४–५–१९१७ की पाद-टिप्पणी २।
२. ढोकरहामें।
३. देखिए परिशिष्ट ६ (ब)।
४. देखिए "पत्र : डब्ल्यू० बी० हेकॉकको", २२–५–१९१७ के साथ संलग्न वक्तव्य।

मजदूरोंको मारा-पीटा। यह जमींदार एक छोटी-सी जमींदारीमें किसी कारखानेका हिस्सेदार है। उसने अपने हिस्सेकी जमींदारी छोड़नेसे इनकार कर दिया है और कहा जाता है कि मण्डलीके आगमनकी सूचना उसीने रैयतको करवाई थी। उक्त कथित मारपीटके आरोपकी सचाई पूरी तरह साबित करनेवाले बहुतसे बयान प्राप्त हुए हैं। ऐसी शिकायतें रैयतके व्यक्तिगत सदस्योंकी ओरसे बराबर आती रहती हैं कि श्री गांधीके पास जानेके कारण उन्हें तरह-तरहके दण्ड देनेकी धमकी दी जाती है और वे काफी खतरा उठाकर उनके पास आते हैं।

यह कहनेकी जरूरत नहीं है कि कार्यकर्त्ताओंको अपना काम करनेसे कोई चीज नहीं रोक सकती। उसे छोड़नेके मतलब होंगे रैयतके साथ और घोर अन्याय करना। कार्यकर्त्ताओंकी एक ऐसी टोलीकी उपस्थिति-मात्रसे, जिसने उनके दुःखोंकी सीधी-सादी और करुण कथा बराबर सुनी है, और इस जानकारीसे आवश्यकता पड़नेपर उनकी सहायताके लिए दौड़ी आयेगी, रैयतका उत्साह बढ़ा है और उनमें आशा और साहसका संचार हुआ है। जबतक रैयत मुक्त होकर साँस न लेने लगे उस समय तक यदि भयवश या अन्य किसी कारणसे ये कार्यकर्त्ता काम छोड़कर जाते हैं तो वे इस महान् उद्देश्य और अपने देशके लिए कलंकरूप होंगे।

ऊपर बताई गई घटनाओंके सिलसिलेमें श्री गांधीने चम्पारनके जिला मजिस्ट्रेटको एक पत्र[1] भेजा है। उस पत्र तथा अन्य कागजातोंकी प्रतियाँ इस टिप्पणीके साथ भेजी जायेंगी, या उन्हें जल्दी ही अलगसे भेजा जायेगा। पहलेसे बरती गई सावधानियोंके कारण सम्भव है बागान-मालिक डराने-धमकानेकी अपनी योजना स्थगित रखें। किन्तु स्थिति किसी भी समय बिगड़ सकती है और भयंकर अराजकता फैलनेका डर है। अब यह बात समझ ही ली गई होगी कि यदि स्थिति बिगड़ी तो उसकी जिम्मेदारी किसी भी हालतमें मण्डलीके सदस्योंपर नहीं होगी; और जनताको यह जान लेना चाहिए कि मण्डली अपना कार्य जारी रखेगी।

ऊपरकी बातसे स्वयंसेवकोंको तैयार रखनेकी आवश्यकता स्पष्ट होती है, ताकि वे एक क्षणकी सूचनापर रवाना हो सकें। ये स्वयंसेवक प्रौढ़, जिम्मेदार, शान्त प्रकृतिके और शिक्षित होने चाहिए। उनमें कष्ट-सहनकी क्षमता या तैयारी होनी चाहिए; उन्हें संघर्षको अन्त तक चलानेके लिए तैयार होकर आना चाहिए; उनको हिन्दीका कामचलाऊ ज्ञान अवश्य होना चाहिए (इसलिए केवल तमिल लोग ही, सिवा उनके जिन्होंने थोड़ी-बहुत हिन्दी सीख ली है, स्वयंसेवक नहीं हो सकेंगे); उन्हें गाँवोंमें जाने और रैयतके बीच रहनेको तैयार रहना होगा। ऐसा अनुमान है कि उन्हें कमसे-कम ६ महीने तक काम करना होगा।

मो० क० गांधी

गांधीजीके हस्ताक्षरयुक्त टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ६३५२) से।
सौजन्य: गांधी स्मारक निधि

१. देखिए पिछला शीर्षक।

३१५. पत्र : डॉक्टर एच० एस० देवको

बेतिया

मई २१, [१९१७][1]

प्रिय डॉ० देव,

जान पड़ता है, आप श्री शास्त्रियरके नाम भेजे गये पत्रोंको नहीं खोलते; इसी कारण जो कागजात[2] मैं भेजता रहा हूँ आपने नहीं देखे। मैंने आपका नाम उन लोगोंकी सूचीमें लिख दिया है जिन्हें कागजात भेजे जाते हैं। आप जिन्हें ठीक समझें उनको ये कागजात दिखा सकेंगे। यह बात अवश्य ध्यानमें रखनी होगी कि वर्तमान स्थितिमें कोई चीज समाचारपत्रोंमें नहीं छपनी चाहिए। इस शर्तके साथ आप जिसे चाहें उसे इन कागजातोंको दिखानेके लिए स्वतन्त्र हैं।

हृदयसे आपका,

मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (सी० डब्ल्यू० ५७९८) की फोटो-नकलसे।

३१६. पत्र : जे० पी० एडवर्डको

बेतिया

मई २१, १९१७

प्रिय श्री एडवर्ड,

आपके २० तारीखके पत्रके लिए धन्यवाद। मैंने लोगोंको आपके पत्रमें लिखी बातें बता दी हैं।

आपका,

मो० क० गांधी

सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन, सं० ८६, पृष्ठ १५२।

१. १९१७ में मईकी २१ तारीखको गांधीजी बेतियामें थे।

२. आशय उस प्रकारके कागजातोंसे हैं जिनमें से पिछला शीर्षक एक है।

३१७. पत्र : डब्ल्यू० बी० हेकॉकको

वेतिया
मई २२, १९१७

प्रिय श्री हेकॉक,

इसके साथ मैं ढोकरहाकी अग्नि-दुर्घटनाके बारेमें एक और वक्तव्य भेज रहा हूँ। इसके बारेमें मुझे कुछ कहनेकी आवश्यकता नहीं है।

आपका सच्चा,
मो० क० गांधी

(संलग्न वक्तव्य)

वेतिया
मई २१, १९१७

आज सुबह करीब १० बजे ढोकरहासे कुछ लोग आये और उन्होंने श्री गांधीको बताया कि कुछ अफसर वहाँ गये थे वे उनसे घटनाके विषयमें पूछताछ कर रहे थे कि तभी एक आदमीने कहा कि उसने सुना था कि आग लगनेसे पहले कारखानेके आदमियोंने कचहरीके दरवाजे निकाल लिये थे। मैंने सुझाव दिया कि उस स्थानपर जाकर जाँच करनेसे उपयोगी सूचना प्राप्त हो सकती है। श्री गांधीने यह सुझाव स्वीकार किया और मुझसे खुद ढोकरहा जानेको कहा। तदनुसार मैं तुरन्त घटनास्थलके लिए रवाना हो गया।

मैं कोई ११॥ बजे ढोकरहा पहुँचा। कोठीमें मुझे सिर्फ एक गाड़ीवान मिला। उसने कहा कि जिस समय आग लगी थी, वह वहाँ उपस्थित नहीं था, लेकिन चौकीदार उपस्थित था। मैंने उससे चौकीदारको बुला लानेको कहा, और इस बीच मैंने कचहरीका निरीक्षण शुरू किया।

कचहरी कारखानेके मैनेजरके रिहायशी बँगलेके अहातेमें स्थित है। यह अनुमानतः २१ फुट लम्बा और १५ फुट चौड़ा एक कमरा-मात्र है। . . .

उसकी सारी छत नीचे गिर पड़ी है। दीवारें ईंटकी हैं जिनपर मिट्टीका पलस्तर है। दीवारोंपर अन्दर और बाहरकी सफेदीपर कोई असर नहीं पड़ा है। केवल चार या पाँच जगहोंपर दीवारोंके ऊपरी हिस्से काले दिखाई दिये। दीवारके ऊपरी हिस्सेको देखकर लगता है कि आगको फैलनेसे रोकनेके लिए छतकी धन्नियाँ खींचकर निकाल दी गई थीं। छतपर फूसकी छावन थी जिसपर देशी खपरैल डाल दी गई थी। . . . कमरेके अन्दर और बाहर मलबेके ढेरमें जगह-जगह जली हुई धन्नियोंको देखा जा सकता था। आंशिक रूपसे जले कागजोंका एक ढेर भी मिला; मैंने उनकी जाँच की।

ये सारे कागजात सिआहा और साटे थे। ये सिआहा १३१३ साल फसली और १३१५ फसलीके थे। इनमें से कोई पूरी तरह नष्ट नहीं हुआ था। ( ) . . . दरवाजे और तीनों खिड़कियोंकी चौखटोंपर आगका जरा भी प्रभाव नहीं पड़ा था। दरवाजा 'क' पल्ले और उसका चौखटा सारे मकानमें कहीं नहीं मिले। दरवाजा कोई ७½ फुट ऊँचा और ५ फुट चौड़ा है। इस बातके स्पष्ट चिह्न मौजूद थे कि दरवाजेकी चौखटको निकालकर हटा दिया गया था। पलस्तर टूटकर गिर पड़ा था। चौखटके नीचेकी मिट्टी बिलकुल साफ थी। दरवाजा 'ड'की चौखट चारों ओर थोड़ी-थोड़ी जल गई थी, लेकिन उसे कोई खास क्षति नहीं पहुँची थी। दरवाजेके कुछ कब्जे उसमें लगे हुए थे। मैंने उनकी जाँच की। उनपर लगी जंगके ताजे चूरेसे पता चलता था कि उनमें से पेच निकाले गये थे। दो पेचोंमें से एक पेच अब भी सूराखमें लगा हुआ था। इस चौखटके पल्ले वहाँ नहीं थे। मलबेमें जली हुई चौखट या पल्लेका कोई पता नहीं चला। दरवाजा 'क' पर शीशेका कोई फलक नहीं मिला। काँचके करीब आधा दर्जन छोटे-छोटे टुकड़े वहाँ पड़े थे।

कहा जाता है कि पहले इस कमरेका उपयोग लगान जमा करनेके दफतरके रूपमें होता था। बताया गया कि करीब २ या ३ साल पहले यह दफ्तर बन्द कर दिया गया और कम्पनीके सारे कागजात लोहरयिा ले जाये गये। इस अहातेमें सिर्फ एक चौकीदार रहता है। बँगलेसे करीब एक सौ गजकी दूरीपर एक मकान है जिसमें कोठीके आदमी रहते हैं।

मलबेकी जाँच करनेसे पता चला कि जिस समय आग लगी उस समय कमरेमें बहुत ही थोड़ा सामान रहा होगा। मेरे अनुमानसे रु० २०० से कम ही क्षति हुई है।

बिंध्यवासिनी प्रसाद वर्मा
बी० ए०, एलएल० बी०

[अंग्रेजीसे]

सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन, सं० ९२, पृष्ठ १५८-९।

३१८. पत्र : रेवाशंकर सोढाको

बेतिया

जेठ सुदी १ [मई २२, १९१७][1]

चि० रेवाशकर,

तुम्हारा पोस्टकार्ड मिल गया है। यदि भाडलाका घर चला जायेगा तो मैं केवल तुम्हारा दोष मानूंगा। तुम्हें तुरन्त कार्रवाई करनी थी। जो उत्तर आया था, वह मैंने तुम्हें भेज दिया था। उसके बाद तुमने तुरन्त प्रार्थनापत्र क्यों नहीं दिया? अब साथका पत्र बेचरभाईको दे देना। उन्हें साथ लेकर स्वयं जाना और जहाँ प्रार्थनापत्र देना हो, दे देना।

तुम करघा-खर्च खाते जो रुपया माँगते हो उसके सम्बन्धमें चि० छगनलालको लिखना। जो-कुछ उचित लगेगा, वह भेज देगा। तुम कितना काम कर चुके हो, यह नहीं लिखते। नहीं मालूम तुम पूरे दिन इस काममें जुटे रहते हो या नहीं। तुम बुनाईके काममें दिन-दिन अधिक कुशल होते जा रहे हो और तुम दोनोंको बिलकुल उसी काममें लग जाना चाहिए। ऐसा करोगे तभी सफल हो सकोगे।

चि० छोटमको अहमदाबाद भेजना हो तो भेज देना। किन्तु वह भी बिलकुल राजी हो तभी। उसे राजी करना जरूरी है। जबरदस्ती मत भेजना। तुम्हारे साथ आनेकी उसकी तीव्र इच्छा थी, इसलिए मैंने उसे भेजा। वह अहमदाबादमें भी तभी चल सकेगा जब उसकी अपनी इच्छा होगी।

तुम्हारा दक्षिण आफ्रिका जाना मुझे कतई पसन्द नहीं। रतनसीकी[2] इस इच्छाके अनुसार चलनेमें मुझे तुम्हारा अहित ही होता दिखाई देता है। रतनसी लिखते तो रहते हैं, किन्तु अभीतक उन्होंने भेजी एक पाई भी नहीं है। मेरा खयाल है, यदि तुम वहाँ गये तो जैसे उनका जीवन व्यर्थ गया वैसे ही तुम्हारा भी जायेगा। तुम चाहो तो यह पत्र रतनसीको भेज दे सकते हो।

यदि तुम दोनों बुनाईके काममें लगे रहे तो मुझे उसका भविष्य उज्ज्वल दिखता है।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ३४२१) से।
सौजन्य : रेवाशंकर सोढा।

१. इस दिन गांधीजी थे।
२. रेवाशंकरके पिता।

३१९. पत्र : छगनलाल गांधीको

बेतिया,
[मई २२, १९१७ के बाद][1]

चि० छगनलाल,

रेवाशंकरका[2] पत्र आया है, इसमें उसने छोटालालको भेजनेकी अनुमति माँगी है और पैसेकी भी कुछ मदद देनेको कहा है। मैंने उसे लिख दिया है कि वह पैसेके बारेमें चि० मगनलालको लिखे। और छोटालालके विषयमें लिखा है कि वह स्वयं आनेके लिए राजी हो तभी उसे भेजा जाये।

साथके कागजोंसे पता चल जायेगा कि यहांकी स्थिति किसी भी समय गम्भीर रूप धारण कर सकती है। डॉ० हरिप्रसाद आदि जो भी लोग यहाँ आनेके लिए तैयार हों, उन्हें कुछ समय हिन्दी सीखनेमें अवश्य लगाना चाहिए। यह बात शायद मैं पहले भी लिख चुका हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (एस० एन० ६३५८) की फोटो-नकलसे।

३२०. पत्र : डब्ल्यू० बी० हेकॉकको

मोतीहारी
मई २४, १९१७

प्रिय श्री हेकॉक,

मैं यहाँ कल रात पहुँचा, और रविवारको तीसरे पहर तक मोतीहारीमें ही रहनेकी आशा करता हूँ। इस बीच आप मुझे अपनी सेवामें मानें।

आपका सच्चा,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (नेशनल आर्काइव्ज़ ऑफ इंडिया) से; सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन, सं० ९६, पृष्ठ १६५ से भी।

१. रेवाशंकरको रुपयेके बारेमें मगनलालको पत्र लिखनेके उल्लेखसे लगता है कि यह पत्र पिछले शीर्षकके बाद लिखा गया होगा।

२. सोढ़ा।

३२१. पत्र : डब्ल्यू० एस० इर्विनको[1]

मोतीहारी
मई २४, १९१७

प्रिय महोदय,

आपके इलाकेके गाँव वसतपुरमें वडाटोलाकी रैयत लाखनराय और कवलधारीने मुझे वताया है कि पिछले रविवार और सोमवारको आपके आदमियोंने उनकी खड़ी फसल काट ली और उसे उठा ले गये। उन्होंने यह भी वताया है कि फसल आपकी मौजूदगीमें खेतोंसे ले जाई गई थी। उनका यह भी कहना है कि वे इससे पहले मोतीहारीमें मेरे सहयोगियोंके पास आकर जो अपने वयान दे गये थे, उसी कार्यके दण्डस्वरूप यह किया गया है। इसके सिवा फसल काटकर लदवा ले जानेके वारेमें लाखनरायके वयानकी पुष्टि वहुतसे लोगोंने की है। इन वयानोंमें कोई सचाई है अथवा नहीं, इसकी सूचना यदि आप कृपापूर्वक देंगे तो मैं आपका आभार मानूंगा।

आपका विश्वस्त,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन, सं० ९८, पृष्ठ १६५-६।

३२२. पत्र : बिहार तथा उड़ीसाके मुख्य सचिवको

वेतिया
मई २५, १९१७

मुख्य सचिव
विहार तथा उड़ीसा सरकार
रांची

महोदय,

आपके १९ और २१ तारीखके पत्र मुझे मिल गये हैं।

मैं इन पत्रों और इनमें दिये गये आश्वासनोंके लिए कृतज्ञ हूँ।

मेरा सुझाव था कि मैंने जिन मामलोंमें शिकायतें की हैं उनमें तुरन्त ही कार्रवाईकी दरकार है। सुझावका मंशा यह नहीं था कि सरकार स्थानीय अधि-

१. एक प्रमुख वागान-मालिक, और चम्पारनमें नीलकी खेती करनेवाली मोतीहारी इंडिगो कन्सर्नके प्रवन्धक।

कारियोंकी रिपोर्ट और जमींदारोंकी बात देखे-सुने बिना ही आदेश जारी कर दे। यदि मेरा कोई और मंशा होता तो मेरा स्थानीय अधिकारियों और बागान-मालिक संघोंके पास अपनी टिप्पणीकी[1] प्रतियाँ भेजना बेमतलब होता। और आप अनुमति दें तो मैं कहूँगा कि यदि स्थानीय अधिकारियों और बागान-मालिक संघोंको अपने-अपने प्रतिवेदन या विचार अगली ३० जूनसे पहले भेज देनेको कह दिया जाये तो इससे अवधिसे सम्बन्धित बातें हल हो जाती हैं।

इसके वैधानिक पक्ष और न्यायालयोंके निर्णयकी ओर ध्यान न दिया गया हो, ऐसी बात नहीं। मैं कहता हूँ कि विशाल जन-समुदायको पीड़ित करनेवाले किसी भी अन्यायको वैधानिक निर्णयों या वैधानिक प्राविधिकताओंके बलपर बरकरार रखनेकी इजाजत कतई नहीं दी जा सकती। मैं यथेष्ट सम्मान और पूरे आत्म-विश्वासके साथ कहता हूँ कि मैंने आपका ध्यान जिस स्थितिकी ओर आकर्षित किया है वह कई गम्भीर किस्मकी नैतिक समस्याएँ पेश करती है जिनको हल करनेके लिए आवश्यक है कि जहाँ भी वैधानिक प्राविधिकताएँ और वैधानिक निर्णय वास्तविक न्यायके आड़े आयें वहाँ उनको धता बतला दी जाये। जमींदारों और रैयतके बीच इतनी अधिक असमानता है कि न्यायालयों और बन्दोबस्त अधिकारियों तकके लिए यह लगभग असम्भव ही है कि वे अपने सामने पेश मुकदमोंमें सचाईका पता भी लगा सकें। मेरी इस बातको सही सिद्ध करनेवाले उदाहरणोंकी संख्या मेरे सामने हर रोज बढ़ती जा रही है। ऐसे उदाहरण भी मिलते हैं कि न्यायालयों द्वारा मंजूर कर दिये जानेपर भी अन्यायोंका प्रतिकार हुआ है।

अबवाब (करों)के सम्बन्धमें, मुझे कहना है कि बेतिया राजके आगामी पट्टोंमें जुर्मानेकी एक धारा और जोड़ देनेसे केवल एक आंशिक राहत ही मिल सकेगी और उसमें भी समय काफी लगेगा; क्योंकि उन पट्टोंमें सम्बन्धित काश्तकी सारी जमीन शामिल नहीं होगी और जिस अन्यायको सभीने अन्याय माना है उसमें तब ठीक कोई राहत नहीं दी जा सकेगी जबतक कि पट्टोंको समाप्त करके उस सिलसिलेमें नये इकरारनामे नहीं किये जाते। उसका यह मतलब है कि राहत मिलनेमें अनावश्यक विलम्ब होगा। मैं समझता हूँ कि पट्टोंके बारेमें नये इकरारनामे तबतक नहीं किये जायेंगे जबतक कि भू-सम्पत्तिकी दशाको कोई सुदृढ़ आधार नहीं दिया जाता। साथमें यह भी कहा जा सकता है कि पट्टोंमें जुर्मानेकी धारा जोड़ देनेसे अपनेको कानूनसे ऊपर समझनेवाले जमींदारोंको नियंत्रित नहीं किया जा सकेगा। इसीलिए मेरी विनम्र राय है कि सरकार यदि जमींदारोंको अबवाब, सलामी,[2] जुर्माने, इत्यादि वसूल करने या बेगारमें मेहनत या गालियाँ, हल इत्यादि लेनेके खिलाफ नोटिस जारी कर दे और रैयतमें ऐलान करा दे कि वह जमींदारोंको ऐसे कर अदा न करे और उनको बेगारमें, मेहनत-गाड़ी या हल देना जरूरी नहीं है, तो इस समय यही सबसे उपयुक्त रहेगा; इससे रैयतके दिमागकी परेशानी दूर होगी और यह इस बातका प्रमाण होगा

१. देखिए "प्रतिवेदन : चम्पारनके किसानोंकी हालतके बारेमें", १३-५-१९१७।
१. अबवाब और सलामी — कर और नजराने।

कि सरकार जहाँ राहत देना जरूरी समझती है वहाँ सचमुच बड़ी शीघ्रतासे राहत देनेके लिए तत्पर है।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
मो० क० गांधी

टाइप की हुई अंग्रेजी प्रतिसे।
सौजन्य : गांधी स्मारक निधि

३२३. पत्र : डब्ल्यू० बी० हेकॉकको

मोतीहारी
मई २५, १९१७

प्रिय श्री हेकॉक,

अभी-अभी मेरे पास छतौनीके लोग आये और उन्होंने मुझे बताया कि रविवारकी रात्रिको उन्हें श्री इर्विनने पीटा। उनका कहना है कुछ लोगोंने एक दूसरे आदमी और हमपर कारखानेके लोगोंको हमला करते देखा है।

एक और व्यक्ति मुझे बता रहा है कि कोठीने उनकी ५० बीघेसे भी अधिक जमीन उनसे ऐसी जमीनके बदलेमें ले ली जो तब भी निकम्मी थी और आज भी।

यदि ये बातें सही हैं, तो ये गम्भीर हैं। चूँकि कुछ तनाव दिखाई देता है इसलिए मैं यथासम्भव कुछ समयके लिए देहातोंमें जाना टाल देना चाहता हूँ। फिर भी आज शाम मुझे छतौनी जाना आवश्यक लग रहा है। यदि आप कोई दूसरी बात सुझायें तो अलग बात है; नहीं तो मैं यहाँसे ठीक ५-३० बजे शामको चल दूंगा[१]।

आपका सच्चा,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (नेशनल आर्काइव्ज़ ऑफ इंडिया) से; **सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन**, सं० १०१, पृष्ठ १६८ से भी।

१. हेकॉकने जवाब दिया: "मैं यह आपपर छोड़ देना पसन्द करूँगा। आप जो ठीक समझें, करें।"

३२४. पत्र : डब्ल्यू० बी० हेकॉकको

मोतीहारी
मई २६, १९१७

प्रिय श्री हेकॉक,

आपकी कलकी तारीखकी टिप्पणीके लिए धन्यवाद। वह मुझे आज सुबह ६-४५ पर मिली।

मेरी टिप्पणी लेकर जो सन्देशवाहक गया था, उसने मुझे बताया कि आप कहीं अन्यत्र गये हुए थे; उसने बताया कि आप दोपहरको लगभग २ बजे तक वापस आ सकते हैं। शामके ६ बजे तक इन्तजार करनेके बाद मैंने छतौनी जानेका निर्णय किया; मैं वहाँ एकाएक पहुँचना चाहता था। मैंने इसलिए जो लोग मेरे पास आये थे, उन्हें अपने पहले वहाँ पहुँचनेसे रोक दिया था।[1]

आपका सच्चा,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरों मूल अंग्रेजी पत्र (नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इंडिया) से; **सिलेक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन, सं० १०१ (ए), पृष्ठ १६९ से भी।**

३२५. पत्र : एस्थर फैरिंगको

बेतिया
मई २६, १९१७

प्रिय एस्थर,

तुम्हारा पत्र इतना अच्छा है कि मैं इसे पोलक-दम्पतिके पास पढ़नेके लिए भेजनेकी धृष्टता कर रहा हूँ; वे इसे पढ़कर अहमदाबाद भेज देंगे। मुझे आशा है तुम इसका बुरा नहीं मानोगी।

जो लोग नीलकी खेती नहीं करते, वे भी गैरकानूनी लाभ उठाना चाहते हैं। इसलिए वे रैयतपर दबाव डालते हैं कि वे उनकी जमीनपर उनके लिए मेहनत करें, सो भी या तो बहुत कम मजदूरीपर या कभी-कभी बिना किसी मजदूरीके वे उन्हें लगानके अतिरिक्त [अबवाब आदि] देनेपर भी मजबूर करते हैं। निःसन्देह, उनकी दशा गुलामोंसे किसी भी प्रकार बेहतर नहीं है। जो और कागजात मैंने तुम्हारे पास भेजे हैं, वे इस प्रश्नपर और अधिक प्रकाश डालेंगे। मैं यह जरूर कहूँगा कि सिर्फ बागान-

१. यहाँ पत्र कटा-फटा है।

मालिकोंका ही दोष नहीं है। बागान-मालिक अंग्रेज हैं। भारतीय जमींदार उनसे जरा भी बेहतर नहीं हैं, और उनमें से कुछ तो कहीं ज्यादा बुरे हैं। निःसन्देह इस मामलेकी सार्वजनिक कार्यकर्त्ताओंको इतनी जानकारी नहीं थी इसीलिए यह गलत काम इतने दिनों तक चलता रहा। बिना दबावके सरकारके कानपर जूँ नहीं रेंगती।

निःसन्देह तुम्हारे लिए अन्य सभी भाषाओंसे तमिल पहले है। परन्तु यदि तुम देवनागरी लिपि सीख लो तो उससे बहुत सहायता मिले। यह आसान है और इस अर्थमें संसारकी सर्वाधिक सम्पूर्ण वर्णमाला है कि प्रत्येक वर्ण केवल एक ध्वनिको व्यक्त करता है और इस लिपिमें लगभग सभी ध्वनियाँ आ जाती हैं।

तुम्हारा,
बापू

[अंग्रेजीसे]
माई डियर चाइल्ड

३२६. हिन्दीका प्रचार[1]

हिन्दी ही हिन्दुस्तानके शिक्षित समुदायकी सामान्य भाषा हो सकती है, यह बात निर्विवाद सिद्ध है। यह कैसे हो, केवल यही विचार करना है। जिस स्थानको आजकल अंग्रेजी भाषा लेनेका प्रयत्न कर रही है और जिसे लेना उसके लिए असम्भव है, वही स्थान हिन्दीको मिलना चाहिए; क्योंकि हिन्दीका उसपर पूर्ण अधिकार है। यह स्थान अंग्रेजीको नहीं मिल सकता; क्योंकि वह विदेशी भाषा है और हमारे लिए बड़ी कठिन है। अंग्रेजीकी अपेक्षा हिन्दी सीखना बहुत सरल है। हिन्दी बोलनेवालोंकी संख्या प्रायः साढ़े छः करोड़ है। बँगला, बिहारी, उड़िया, मराठी, गुजराती, राजस्थानी, पंजाबी और सिन्धी हिन्दीकी बहनें हैं। उक्त भाषाओंके बोलनेवाले थोड़ी बहुत हिन्दी समझ तथा बोल लेते हैं। इन सबको मिलानेसे संख्या प्रायः २२ करोड़ हो जाती है। जिस भाषाका इतना प्रचार है उसकी बराबरी करनेके लिए अंग्रेजी, जिसे एक लाख भी हिन्दुस्तानी ठीक-ठीक नहीं बोल सकते, क्योंकर समर्थ हो सकती है। आजतक हमारा देशी काम और व्यवहार हिन्दीमें प्रारम्भ नहीं हो पाया, इसका कारण हमारी भीरुता, अश्रद्धा और हिन्दी भाषाके गौरवका अज्ञान है। यदि हम भीरुता छोड़ दें, श्रद्धावान् बनें, हिन्दीका गौरव समझ लें तो हमारी राष्ट्रीय और प्रान्तिक परिषदों तथा सरकारी व्यवस्था-सभाओंका भी व्यापार हिन्दीमें चलने लगेगा। आरम्भ प्रान्तिक राष्ट्रीय मण्डलोंसे होना आवश्यक है। इस कार्यमें यदि कुछ कठिनता भी है तो वह प्रायः तमिल आदि द्राविड़ भाषा-भाषियोंके लिए है, पर इसकी भी औषधि हमारे हाथमें है। हिन्दीके उत्साही, साहसी, स्वाभिमानी, जोशीले पुरुषोंको बिना मूल्य हिन्दीकी शिक्षा देनेके लिए मद्रास आदि प्रान्तोंमें भेजा जाना चाहिए। वे हिन्दीके पराक्रमी प्रचारक बन जायें तो अल्प काल ही में मद्रास आदि प्रान्तोंके शिक्षित हिन्दी सीख लेंगे। यदि हममें उचित जोश हो

१. यह लेख मई १९१७ में कई समाचारपत्रोंमें प्रकाशनार्थ भेजा गया था।

तो इस प्रश्नका उत्तर केवल त्रैराशिक पर ही रहता है। जितने अधिक शिक्षक भेजे जायें, उतना ही शीघ्र हिन्दीका प्रचार हो जायेगा। शिक्षकोंके भेजनेके साथ ही साथ स्वयं शिक्षण-पुस्तकें भी बनानी चाहिए। इन पुस्तकोंका प्रचार बिना मूल्य होना आवश्यक है। भाषा सीखनेकी आवश्यकता बतलानेके लिए प्रतिष्ठित वक्ताओंका भेजना भी आवश्यक है।

जैसा प्रचार द्राविड़ देशमें करना आवश्यक है, वैसा ही प्रचार बम्बई आदि प्रदेशमें भी उचित है। मराठी, गुजराती भाषा-भाषियोंके लिए भी हिन्दी पुस्तकें तैयार करवानी चाहिए और उन प्रदेशोंमें भी प्रचारक भेजे जाने चाहिए।

इस कार्यमें द्रव्यकी आवश्यकता है। हमारा धनाढ्य समुदाय इस कामको बोझ-रूप न समझे। उसका यह कर्त्तव्य है कि इस महान् कार्यमें वह सहायता दे।

प्रबन्ध करनेके लिए एक छोटीसी समिति बनानेकी आवश्यकता है। इतना ध्यान रखना उचित है कि इस समितिमें केवल कार्य करनेवाले ही चुने जायें।

इस निवेदनमें एक गर्भित बात आ जाती है। वह यह है कि हिन्दी और उर्दूके बीचमें भेद नहीं रखा गया है। वास्तवमें हम अपने इस्लामी भाइयोंसे क्यों झगड़ें? वे उर्दू लिपिमें पढ़ें; हममें से थोड़े लोग उर्दू लिपि भी जानते हैं तथा और अधिक लोग सीख लेंगे। जबतक इस्लामी भाई नागरी लिपि नहीं पढ़ लेंगे तबतक हमारे राष्ट्रीय कार्य दोनों लिपियोंमें हुआ करेंगे — कैसे ही क्यों न हो इस प्रश्नका निपटारा हम इस्लामी भाइयोंके साथ भ्रातृभावसे कर सकते हैं। अब तो उक्त लिपिसे सारे भारत-वर्षमें भाषाका प्रचार करना एक मुख्य कर्त्तव्य है।

प्रताप, २८-५-१९१७

३२७. वक्तव्य : चम्पारन समितिके बारेमें अखबारोंको

बाँकीपुर
मई २९, १९१७

'पायनियर' में प्रकाशित उस वक्तव्यके संदर्भमें, जिसमें यह कहा गया था कि सामान्य तौरपर जमींदारों और काश्तकारोंके, और विशेष रूपसे बागान-मालिकों और रैयतके बीचके सम्बन्धोंकी जाँचके लिए बिहार सरकार एक समिति नियुक्त करनेका विचार कर रही है, श्री गांधीने समाचारपत्रोंमें निम्नलिखित वक्तव्य भेजा है:

यदि प्रचलित जानी-मानी शिकायतें तुरन्त दूर कर दी जायें तो एक निश्चित अवधिके अन्दर कुछ सुनिश्चित मसलोंकी जाँच करके अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करनेवाली समितिकी नियुक्तिसे वर्तमान स्थितिका समाधान हो जायेगा। उस हालतमें मेरे सहयोगियोंका और मेरा काम फिलहाल मुख्यरूपसे जाँच-समितिके सामने मुख्य-मुख्य सबूत इकट्ठा करके पेश करानेका ही होगा।

[अंग्रेजीसे]

पायनियर, ३१-५-१९१७

३२८. पत्र : डब्ल्यू० बी० हेकॉकको

बेतिया
मई ३०, १९१७

प्रिय श्री हेकॉक,

मैं आपकी जानकारीके लिए इस पत्रके साथ श्री इर्विनके नाम लिखे गये अपने पत्रकी प्रति भेज रहा हूँ।

४ जूनको एल० जी०से[1] रांचीमें मिलनेके लिए मुझे एक सम्मन मिला है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इंडिया) से; **सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन**, सं० १०७, पृष्ठ १७३ से भी।

३२९. पत्र : डब्ल्यू० एस० इर्विनको

बेतिया
मई ३०, १९१७

प्रिय महोदय,

टोला गजपुरा रामसिंह, छतौनीकी आपकी रैयतके कुछ बयानोंके कारण, पिछले सोमवारको मैं लगभग ८ बजे शामको अचानक उस जगह गया।

मैं ५० से अधिक ग्रामवासियोंसे मिला और उन्होंने मुझे एक जमीनका टुकड़ा दिखाया जो पैमाइशमें ५१ बीघा कही जाती है और बताया कि वह जमीन हाल ही में आपने ज़िरातमें बदल दी है। उन्होंने कहा कि अधिकतर मापमें तो उन्हें जमीन बराबरकी दी गई है परन्तु उसकी किस्म घटिया होती है। उन्होंने गांवका चरागाह दिखाया; चूँकि ज़िरातमें बदली हुई जमीनकी सरहद इससे लगी हुई थी इसलिए वे अपने मवेशियोंके पकड़े जानेके भयसे वहाँ प्रायः जा ही नहीं पाते। पिंजरापोलको जानेवाला (उनके कथनानुसार) जो एकमात्र रास्ता था, उन्होंने वह भी दिखलाया और कहा कि हम इस रास्तेका इस्तेमाल भी इसी डरसे नहीं कर सकते; यह ज़िरातमें से गुजरता है। लोगोंने बड़ी कटुतासे कहा कि वे जबर्दस्ती बेदखल किये गये हैं और इससे उनका बड़ा नुकसान हुआ है। उन्होंने कहा कि रद्दोबदलके समय हमें कुछ कागजातोंपर

१. लेफ्टिनेंट-गवर्नर।

अँगूठे लगानेको वाध्य किया गया। हमें यह नहीं वताया गया कि उन कागजातोंमें क्या लिखा है, और हमें उसकी प्रतियाँ भी नहीं दी गईं।

उनमें से हीरामन लुहार नामके एक व्यक्तिने मुझे वताया कि इतवार २० तारीखको आपके कर्मचारियोंने उसे इसलिए पीटा कि उसने उन कर्मचारियोंसे हुज्जत की जो उसका भूसा ले जानेकी कोशिश कर रहे थे। और उसे गाँववालोंके बीच-वचाव और वड़ी आरजू-मिन्नतके वाद छोड़ा। हीरामनके भतीजे नेपाली और बेटे जपालने मुझे वताया कि वे मेरे पास इस घटनाकी खवर देने आ रहे थे। शोर यह मचाया गया कि वे थाने जा रहे हैं। इसपर आपके आदमी उनके पीछे दौड़े। उन्हें पकड़ लिया, (ऐसा वयान किया गया है) और आपके पास ले गये। उन्होंने यह भी वताया कि आपने उन्हें कोड़े लगाये। उनमें से एकने अपने टखनों और पीठपरके गहरे निशान दिखाये। आपने उन्हें मुर्गीखाने भिजवा दिया और प्रत्येकपर रु० १० जुर्माना किया। उन्हें आधी रातको यह वायदा करनेपर ही छोड़ा गया कि वे सुवह जुर्माना भर देंगे। इन जुर्मानोंके लिए महाजन लीलाधर साहने अगले दिन सुवह आपके प्रतिनिधिको एक जमानत दी।

काठा गाँवका जदुराई, मानसिंह रायका वेटा, २६ तारीखको मेरे पास मोतीहारी आया और उसने कहा कि मेरे पास ६ वीघे जमीन थी और मैं नीलकी खेतीके वदलेमें रु० ७५ तावान अदा कर चुका था; कारखानेको एक हल न दे पानेके कारण मुझपर रु० १० का जुर्माना किया गया और जुर्माना अदा न कर पानेपर मुझे अपनी जमीनसे वेदखल कर दिया गया तथा मुझे एक दस्तावेजपर दस्तखत करने पड़े। उसने मुझे रु० १४–६–९की तारीख १३२३की[1] सं० १०२ एक रसीद भी दिखलाई।

ऐसे मामले आपकी निगाहमें लाना मैं विलकुल ठीक समझता हूँ। यदि आप इन घटनाओंपर, जिन्हें मैंने वयान किया है, प्रकाश डालेंगे तो मैं अनुग्रह मानूँगा।

आपका विश्वस्त,

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन, सं० १०८, पृष्ठ १७३–४।

१. यहाँ मूलमें कुछ भूल प्रतीत होती है।

३३०. पत्र: बिहारके मुख्य सचिवको

बेतिया
मई ३०, १९१७

चम्पारनमें भू-सम्पत्ति सम्बन्धी स्थितिके बारेमें आपका २७ तारीखका पत्र मुझे मिल गया है।

अगले सोमवार, ४ जूनको दोपहरको रांचीमें लेफ्टिनेंट-गवर्नर महोदयसे मिलनेमें मुझे बड़ी खुशी होगी।

जिस उद्देश्यके लिए मैं चम्पारन आया हूँ यदि उसके लिए ईमानदारीसे काम करूँ तो आपके पत्रमें उठाये गये कतिपय प्रश्नोंको मैं अनदेखा नहीं कर सकता।

रैयतका कहना है कि बागान-मालिक अपने स्वार्थकी पूर्तिके लिए कुछ भी करनेसे नहीं हिचकेंगे। मैं जबसे यहाँ आया हूँ तभी से देख रहा हूँ कि हर बातमें, हरएकपर मालिकोंका अनुचित और बहुत अधिक दबदबा है। उन्होंने मुझे चम्पारनसे निकलवानेके लिए भरसक प्रयत्न किया है। वे उन सम्माननीय सज्जनोंपर कीचड़ उछालनेमें तनिक भी नहीं हिचके जिन्होंने व्यक्तिगत रूपसे काफी आत्मत्याग करके मुझे बहुमूल्य सहायता दी है। उन्होंने रैयतको मेरे पास आनेसे रोकनेके लिए कमसे-कम "नैतिक प्रबोध" का सहारा तो लिया ही है। ढोकरहामें मुझे एक अफसोसनाक नजारा देखनेको मिला। मैनेजर और सब-डिवीजनल अफसरकी मौजूदगीमें दो-तीन व्यक्ति लगभग ५०० लोगोंकी भीड़के सामने कोठीका गुण-गान करने लगे। बाकी सभी लोगोंने कोठीकी शिकायत की कि जिरात-जमीन उनपर थोप दी गई है और हुक्म न माननेपर उनसे जुर्माने वसूल किये गये हैं। मैनेजर इन गवाहोंको लोहरियासे यह कहनेके लिए लाया था कि लोहरियामें किसीको कोई शिकायत नहीं और ढोकरहामें शिकायतें होनेकी वजह है केवल शोर मचानेवाले एक-दो लोगोंकी शरारत। उसके बादसे लोहरियाकी रैयतके कई लोग आकर ठीक उसी तरहकी शिकायतें कर गये हैं जैसी कि ढोकरहाके लोगोंने की थीं। ध्यान देनेकी बात है कि यदि रैयतके साथ पूरा न्याय किया जाये, तो मालिकोंकी वार्षिक आमदनीमें भारी कमी आ जायेगी और कई ऐसे विशेषाधिकार भी छिन जायेंगे जो अभी तक उनको मिले हुए हैं। मैं ऐसी परिस्थितिमें रैयतके इस बयानको बिलकुल निराधार तो नहीं मानता कि कोठियोंने मेरे कार्यको बदनाम करने और मुझे रैयतके बीचसे हटानेके लिए जान-बूझकर अग्निकांड कराये हैं। रैयत यह भी कहती है कि इतना तो मानना ही चाहिए कि वह कमसे-कम अपना स्वार्थ तो पहचानती है और इसीलिए वह आगजनी-जैसी हरकतें करके खुद अपना नुकसान नहीं करेगी। मैंने ढोकरहा-अग्निकांडकी अपनी पड़तालके[1] निष्कर्ष जिलाधीशके पास भेज दिये हैं। मैं अपने पत्रकी एक प्रति श्री हेकॉकके[2] लिए नत्थी कर रहा हू। फिर

१. और २. देखिए "पत्र : डब्ल्यू० बी० हेकॉकको", २२-५-१९१७।

भी मैं रैयतके कथनपर अविश्वास करने और यह माननेके लिए तैयार हूँ कि आग अपने-आप किसी दुर्घटनाके फलस्वरूप लगी होगी। पर मैं यह भी वतला दूँ कि ढोक-रहाके अग्निकांडमें केवल छानी और छप्पर ही जला था। साथमें, मैं यह भी कहता हूँ कि यदि यह भी मान लिया जाये कि मेरी उपस्थितिके कारण तैशमें आकर रैयतके किसी सिर-फिरे आदमीने ही जानवूझकर आग लगाई थी, तो भी मुझे यहाँसे हटानेका तवतक कोई औचित्य नहीं जवतक सरकारको निश्चित तौरपर यह मालूम न हो जाये कि प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूपसे अग्निकांडमें मेरा हाथ था। और अन्तमें मैं कहूँगा कि मेरे आनेसे पहले भी कोठियोंमें कई वार आग लगती रही है और, जैसा आयुक्तने स्वीकार किया है, मेरे विहारमें प्रवेश करनेसे वहुत पहलेसे चम्पारनमें उत्तेजना फैली हुई थी। मैं वड़े आदरके साथ सरकारको चेतावनी देना चाहता हूँ कि यदि वह मुझे रैयतके वीचसे हटायेगी तो वुरी तरह गलतफहमीकी शिकार वनेगी। मैं सिवाय इसके और कुछ नहीं चाहता कि मालिकों और रैयतके वीच परस्पर शान्ति स्थापित करूँ, जिससे कि रैयतको भी उतनी स्वतन्त्रता और प्रतिष्ठा मिल जाये जितनी कि मनुष्यमात्रको मिलनी ही चाहिए।

मैं चाहता हूँ कि सरकार मालिकों द्वारा फैलाई हुई इस भ्रान्तिको अपने दिमागसे निकाल दे कि कुछ शरारती लोगोंकी स्वार्थ-वश की गई हरकतोंके कारण वर्तमान उत्तेजना फैली है। मालिक इतने शक्तिशाली हैं कि उनको कोई नुकसान नहीं पहुँचा सकता, चाहे वह कितना ही वड़ा शरारती क्यों न हो। रैयतका कहना है कि उसने कोई ऐसा काम नहीं किया कि उन गाँवोंमें पुलिस तैनात की जाती; पुलिस तो मालिकोंकी दमनकारी नीतिके तहत तैनात की गई थी। स्वीकार किया गया है कि साठीमें रैयतकी अपेक्षा मैनेजरका ही दोष अधिक था, फिर भी रैयतको उसकी कीमत धन और जनसे चुकानी पड़ी। अव वहाँ पूर्णतः शान्ति है, इसलिए कि मौजूदा मैनेजर अपना काम जानता है। मेरे पास चम्पारन-भरकी रैयतके ७,००० से ज्यादा लोगोंके वयान मौजूद हैं। हालाँकि खुद अकेले जाकर उनके वयान दर्ज करना मेरे लिए असम्भव था फिर भी मैंने वे सव देख लिये हैं। अव यह विश्वास करना वड़ा मुश्किल है कि उन सभी लोगोंने कुछ शरारतियोंके वहकावेमें आकर झूठ-मूठ वयान दिये हैं।

मोतीहारी प्रतिष्ठान (कोठी) के मैनेजरको लिखे गये अपने पत्रोंकी[1] प्रतियाँ मैं संलग्न कर रहा हूँ। अपने पहले पत्रका मुझे कोई उत्तर नहीं मिला था। पूरे प्रसंगका शायद कोई दूसरा पहलू भी हो, परन्तु जिन घटनाओंका वर्णन किया गया है वे वतलाती हैं कि रैयतके लोग कितना जोखिम उठाकर मुझसे मिलने आये थे। मैं जो उद्धरण दे रहा हूँ उससे आपको पता चलेगा कि रैयतको अपनी मर्जीके मुताविक झुकानेके लिए मालिकों द्वारा अपनाये गये तरीकोंके वारेमें वेतिया सव-डिवीजनके उस समयके सव-डिवीजनल अफसर, श्री जॉन्स्टनने[2] १९१४में क्या कहा था :

> अवज्ञा करनेवाले किसानोंको अदायगी करनेपर विवश करनेके लिए इस सव-डिवीजनमें चार तरीके अपनाये जाते हैं। आम तरीका तो यह है कि उसके

१. देखिए "पत्र : डब्ल्यू० एस० इर्विनको", २४-५-१९१७ और ३०-५-१९१७।

२. एडवर्ड हैमिल्टन जॉन्स्टन, आई० सी० एस०, १९१३-१४ में वेतियाके सव-डिवीजनल अफसर।

पीछे चपरासी लगा दिये जाते हैं। इस तरीकेको अपनानेकी बात प्रार्थना-पत्रमें नहीं कही गई है। दूसरा तरीका है कि खलिहानोंमें जमा फसल जब्त कर ली जाती है। इसको अपनानेकी बात भी उसमें नहीं कही गई है। कभी-कभी नाइयों और धोबियोंको काम करनेसे मना कर दिया जाता है; प्रार्थनापत्रमें इसकी आशंका प्रकट की गई है; अभीतक यह तरीका उनपर इस्तेमाल नहीं किया गया है। और सबसे ज्यादा कारगर तरीका है रैयतके मवेशियोंको या तो गैर-सरकारी कांजी हाउसमें या यदि डी० बी० कांजी-हाउस भू-स्वामीको पट्टेपर दे दिया हो तो उसमें बन्द करा दिया जाता है।

वैसे प्रतिवेदन अपने-आपमें रैयतके खिलाफ ही है। मेरी राय यह है कि प्रतिवेदनमें रैयतके साथ न्याय नहीं किया गया है। मैं अपनी यह राय परिस्थितिका भली प्रकार अध्ययन करनेके बाद पूरी विनम्रताके साथ लिख रहा हूँ। लोग प्रायः इस बातको भुला देते हैं कि मालिकोंको हर मामलेमें ताकत का इस्तेमाल करनेकी जरूरत नहीं पड़ती। उनके पास ताकत है और कहीं थोड़ीसी भी आजाद-ख्याली दिखाई पड़नेपर वे उसका इस्तेमाल कर सकते हैं — यह तथ्य अपने-आपमें ही लोगोंको अवज्ञा करनेसे रोकनेके लिए पर्याप्त है। मेरा सादर निवेदन है कि मालिक इतने लम्बे अर्सेसे मन-मानी करते आ रहे हैं कि रैयतमें अब कुछ भी कर सकनेकी ताब नहीं रह गई है। सरकारको रैयतकी पूरी-पूरी देखभाल करनी चाहिए और उसकी बातोंपर ध्यान देना चाहिए। लेकिन सरकार तबतक ऐसा नहीं करेगी जबतक कि वह मालिकोंके मुकाबिले रैयतकी बातोंपर (इसमें सन्देह नहीं कि उनमें अतिशयोक्ति होगी ही) अधिक विश्वास करनेके लिए तैयार हो।

पत्र काफी लम्बा हो गया है, इसके लिए मैं क्षमा-प्रार्थी हूँ। यदि इसमें आव-श्यकतासे अधिक स्पष्टवादिता हो, तो उसका कारण मेरा यह बड़ा कार्य ही है जिसे लेकर मैं चल रहा हूँ। वह इतना बड़ा है कि उसमें फूहड़पनसे कोई कतर-ब्यौंत नहीं की जा सकती। आशा है कि ऐसे समयमें जब सरकार और भारतकी जनताके सामने एक इतना बड़ा संकट है; सरकार मुझसे यह अपेक्षा नहीं करेगी कि मैं अपनी भाव-नाओंको व्यक्त करनेमें दुराव-छिपाव करूँ।

मैं लेफ्टिनेंट गवर्नर महोदयका बड़ा कृतज्ञ हूँ कि उन्होंने मुझसे स्वयं ही बात करनेका निश्चय किया है। मैं तो रैयतकी ओरसे यही मनाऊँगा कि मैं ऐसा कुछ भी न करूँ या कहूँ जिससे उसके इस जबर्दस्त कार्यपर कोई बुरा प्रभाव पड़े, और लेफ्टिनेंट-गवर्नर महोदयकी उपस्थितिमें मुझे अपनी बात कहनेके लिए ऐसे उपयुक्त शब्द सूझें कि मैं उनको रैयतकी दयनीय दशा उसी रूपमें समझा सकूं जिस रूपमें मैं उसे समझता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन, सं० १०९, पृष्ठ १७४-७।

३३१. चम्पारनकी स्थितिके सम्बन्धमें टिप्पणी–५

बेतिया
मई ३०, १९१७

गोपनीय

सरकारके पत्र[१] और उसके उत्तरसे,[२] जो इस टिप्पणीके साथ संलग्न है जान पड़ता है कि समस्या संकटपूर्ण स्थितिके निकट आ गई है। यदि श्री गांधी और उनके साथी हटाये जाते हैं, तो ऐसी उम्मीद है कि नेतागण एकके बाद एक उनकी जगह लेते चले जायेंगे। इसके लिए उनका यहाँकी अन्दरूनी स्थितिको समझ लेना जरूरी है। अन्दरूनी स्थिति यह है: रैयत इतनी अधिक अपंग बना दी गई है और इतने लम्बे अर्से तक उसने कष्ट-सहन किया है कि वह ऐसा मानने लगी है कि राहत कभी मिलनेवाली नहीं है। वह अब अपने उन देशभाइयोंकी हार्दिकताको प्रत्यक्ष महसूस करती है जो कमसे-कम उसकी बात सुननेको तो तैयार हैं, चाहे वे कोई प्रभावशाली मदद न ही दे पायें। उनकी निराशामें डूबती हुई भावनाओंको इससे बड़ा सहारा मिला है। जबतक सवाल हल नहीं हो जाता और उन्हें आजादीका आश्वासन नहीं मिल जाता तबतक उन्हें अरक्षित छोड़ देना क्रूरता होगी। कार्यकर्त्ताओंको उनके बीचसे बल-पूर्वक हटानेसे सम्भव है कि आतंकवाद फैल जाये और उसके फलस्वरूप अबतक दिये गये वक्तव्योंसे लोगोंके विमुख हो जानेका अन्देशा भी है। एक और टिप्पणी मुख्य सचिवको दिये गये जवाबमें उल्लिखित कागजातोंके साथ बादमें भेजी जायेगी।

मो० क० गांधी

गांधीजीके हस्ताक्षरयुक्त टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिसे।
सौजन्य: गांधी स्मारक निधि

१. मुख्य सचिवका २७–५–१९१७ का पत्र; देखिए **सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स** सं० १०३, पृष्ठ १७०।
२. देखिए पिछला शीर्षक।

३३२. पत्र : सांकलचन्द शाहको

बेतिया
जेठ सुदी १ [मई ३०, १९१७][1]

भाई श्री सांकलचन्द,

मुझे अब फुरसत है। आपका पत्र फिर पढ़ गया। समय-पत्रक[2] भी पढ़ा। समय-पत्रकसे तो मेरा दिमाग हमेशा चक्कर खाने लगता है। मैंने उसे याद रखनेका प्रयत्न नहीं किया।

मुझे लगता है कि इतिहास और भूगोलको, जो अलग-अलग रखे गये हैं, गुजरातीके साथ मिला दिया जाये। हम गुजराती भाषाके माध्यमसे मानसिक शक्तिका विकास करना चाहते हैं। इसलिए हम एक दिन साहित्यकी पुस्तकका और दूसरे दिन इतिहासकी पुस्तकका प्रयोग करें। जो-कुछ पढ़ाना है, वह पहले जबानी सुना दें और फिर [विद्यार्थियोंसे] उसमें से कुछ पढ़वायें। इससे यदि साहित्यके अध्ययनमें कुछ कमी पड़ती हो तो पड़े। जिस देशका इतिहास पढ़ाया जाये, उसीका भूगोल भी पढ़ाया जाये। इससे भूगोलका अध्ययन सुगम और सरस हो जायेगा। रही इतिहासकी बात, सो जहाँतक उसे साहित्य मानें, वहांतक [छात्रोंके सामने] कुछ सूत्र-वाक्य सुन्दर भाषामें प्रस्तुत करें। उदाहरणार्थ, "हम रामचन्द्रको अवतारी पुरुष—साक्षात् ईश्वर मानते हैं। अवतार शब्द संस्कृतका है। वह संस्कृतकी 'अव-पूर्वक तॄ' धातुसे बना है और उसका अर्थ होता है नीचे आना। ईश्वर नीचे (इस पृथ्वीपर) आया, यही उसका अवतार है। किन्तु, आज हम अवतारी रामके सम्बन्धमें विचार नहीं करेंगे। आज तो हम इस बातपर विचार करेंगे कि ऐतिहासिक राम कौन थे।" इन वाक्योंमें कोई दम है या नहीं, यह तो आप शिक्षक लोग जानें, किन्तु मेरा दृष्टिकोण बतानेके लिए ये पर्याप्त हैं। इसमें साहित्यका समावेश हो जाता है। रामचन्द्रका इतिहास पढ़ाते समय हम ऐसा ही कुछ लिखें। पहले हम या तो बोलकर ऐसा लिखा दें या स्वयं ही ब्लैक बोर्डपर लिख दें और उसके बाद रामचन्द्रकी कहानी सुनायें। उसमें हम जान-बूझकर कुछ कठिन शब्दोंका प्रयोग करें। शिष्य उनका अर्थ पूछें और तब गाड़ी आगे चले। उनका जन्म अयोध्यामें हुआ था, इसलिए अयोध्याका भूगोल पढ़ाना होगा। नक्शा तो होगा ही। वह नगर अहमदाबादसे कितनी दूर है, वहाँ कैसे जा सकते हैं, वहाँ आज क्या है, कवियोंने उसका जैसा वर्णन किया है वह वैसा है या नहीं, यह सब साहित्य है, इतिहास है और भूगोल भी। इस कथामें आप कितना साहित्य सिखाना चाहते हैं, कितना इतिहास और कितना भूगोल, यह अपने मनमें पहले ही तय कर लें और फिर अपने शिष्योंके साथ एकाकार हो जायें।

१. इस तारीखको गांधीजी बेतियामें थे।

२. गांधीजीकी राष्ट्रीय शालाका समय-पत्रक; देखिए "राष्ट्रीय गुजराती शाला", १८-१-१९१७ के बाद।

संस्कृतको सुगम बना लें और उसे मराठीके साथ संयुक्त करके एक दिन संस्कृत और एक दिन मराठी पढ़ायें। इससे समयकी बचत होगी। सम्भव है, दोनों भाषाओंमें से कोई भी नित्य न पढ़ाई जाये; फिर भी यह बात उनके सम्बन्धमें लागू होगी। उनके घंटे कम करने ही होंगे। जबतक शालामें केवल आश्रमवासी लड़के ही हैं, तबतक धार्मिक शिक्षाके लिए घंटा अलगसे रखनेकी जरूरत नहीं रहती। जो आख्यान सुनाना चाहें, प्रार्थनाके समय सुना दें, यह पर्याप्त होगा।

मुझे लगता है कि यदि काकाको[1] कवायद कराना अच्छी तरह आता हो तो वर्गका आरम्भ और अन्त कवायदसे ही किया जाये। इसके लिए पाँच मिनट आरम्भमें और पाँच मिनट अन्तमें देना पर्याप्त होगा। लेकिन, यह बात अंग-संचालन सीख लेनेके बादकी स्थितिपर लागू होगी। अंग-संचालन सिखानेके लिए सप्ताहमें किसी एक दिन समय निकाल लिया जाये। जो सिखाया जाये उसका सप्ताह-भर अभ्यास कराया जाये। जब तक जमीन न मिल जाये तबतक खेतीका काम करना कठिन ही है। फिलहाल तो शायद उसे छोड़ देना ही ठीक होगा। जो व्यक्ति हमें सिखाये वह ऐसा हो जो स्वयं किसान रह चुका हो। यदि कोई माली मिल जाये तो वह खेतपर ही रहे और हमें खेतीकी विशिष्ट विधियाँ बताय। हम शिक्षक और विद्यार्थी — दोनों एक-दो वर्ष उन विधियोंको सीखें। उसके बाद हम कृषि-विज्ञान पढ़ाना आरम्भ करें। खेतीका घंटा सभी विद्यार्थियोंको नित्य नहीं दिया जा सकेगा। यदि विभिन्न वर्गोंको प्रति सप्ताह दो-तीन दिन दिये जायें तभी उसे सब सीख सकते हैं। खेतीका काम सिखानेके लिए चालीस मिनटका समय पर्याप्त नहीं है; हाँ, कृषि-विज्ञान सीखनेके लिए पर्याप्त है। यही बात बुनाईके कामके बारेमें भी है। दोनोंमें अभ्यासकी आवश्यकता है। इसलिए ऐसे दिन निकालने चाहिए, जब विद्यार्थी कमसे-कम दो घंटे लगातार दे सकें। भाई पंड्या यदि खेतीका काम और कृषि-विज्ञान दोनों जानते हों और वे आ जायें तो, निस्सन्देह, वे बहुत उपयोगी सिद्ध होंगे। मेरा खयाल यह है कि सामान्यत: सरकारी कृषि कॉलेजोंसे निकले लोग हमारी अधिक सहायता नहीं कर सकते। मगनलालसे शान्तिनिकेतनके नगीन बाबूकी बात सुनानेको कहिए। उसका दोष नहीं था। वह कर ही क्या सकता था?

बारह वर्षकी आयु होने तक बढ़ईगिरी सिखानेकी जरूरत नहीं है। इससे पहले तो बालक हथौड़ा भी नहीं चला सकता। लेकिन इस उम्रके बाद इसे सीखे बिना छुटकारा नहीं है। इस कार्यको खेतीके धन्धेका अंग मानना चाहिए। भारतमें ऐसा नहीं है। किन्तु हम इस कार्यको, जबतक अपनी जमीनपर नहीं चले जाते, तबतक नहीं कर सकते।

'वर्कशाप' का गुजराती शब्द ढूँढ़ना ही होगा। "कारखाना" से काम चलेगा क्या? पाठ्यक्रममें किसीने "मीट्रिक सिस्टम" लिखा है। आगेसे ऐसा लिखते समय सोचना होगा। ऐसी माथा-पच्ची तो अभी कितने ही मामलोंमें करनी होगी। यदि आप लोग ऐसा करेंगे तो भावी सन्तति उसके सुफलका उपभोग करेगी।

१. कालेलकर।

आरोग्यके लिए प्रत्येक वर्गको सप्ताहमें एक-एक घंटा दें तो काम चल जायेगा। शिक्षक बराबर यह ध्यान रखे कि जो-कुछ सिखाया गया है, उसपर उस सप्ताहमें अमल किया गया है या नहीं। विद्यार्थियोंके लिए इसका दूसरा घंटा नहीं है, इसका अर्थ यह नहीं कि सप्ताहमें क्या पढ़ाया है, वह यही भूल जाये। शालामें जिस लड़केके नाखून बढ़े हुए हों और उनमें मैल हो, उससे शिक्षक गणितके घंटेमें भी पूछ सकता है कि उसके नाखूनोंमें मैल क्यों है और उसे इस सम्बन्धमें क्या बात सिखाई गई थी।

प्रोफेसर (इसके लिए गुजराती शब्द क्या होगा? अथवा इस भाषामें भी उसे ऐसा ही रखना पड़ेगा?) कृपलानी आयेंगे अवश्य। वे पहले तो आजमाकर देखेंगे। यदि यह कार्य उनकी शक्तिसे बाहर न होगा तो इसमें सम्मिलित हो जायेंगे। फिलहाल तो वे यहाँसे नहीं निकल सकते।

मैं यह पत्र कुछ लम्बा लिख गया हूँ — लगभग अनर्गल-सा ही। लेकिन बात यह थी कि अपना आशय पूरी तरह समझा देनेकी मेरी इच्छा बड़ी प्रबल हो उठी थी।

मोहनदासके वन्देमातरम्

फिर भी कुछ बात रह ही गई।

जबतक संगीतका शिक्षक न मिले, तबतक तो उसे छोड़े ही रहना पड़ेगा। इस विषयको बहुत महत्त्व नहीं दिया जाता, इसलिए यह केवल अभिनेताओं और भक्तजनों तक ही सीमित रह गया है। अभिनेताओंको नियुक्त करनेसे पूर्व हमें सोचना होगा और कोई भक्त हमें मिलेगा नहीं। गान्धर्व महाविद्यालयको लिखकर देखिए। क्या विज्ञान-शिक्षण सम्बन्धी आवश्यक सामग्रीकी सूची भेजेंगे? मैं सब-कुछ स्थायी हो जानेसे पूर्व अधिक मूल्यकी वस्तुएँ खरीदते डरता हूँ। जिन पुस्तकोंकी कमी हो, उनकी भी सूची भेज दें तो ठीक हो।

मेरी सारी बातोंको केवल विचारार्थ ही समझें। उनको अमलमें लाना न लाना तो आप सबकी इच्छापर है।

आपका पत्र और पाठ्यक्रम वापस भेज रहा हूँ।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (एस० एन० ६३६०) की फोटो-नकलसे।

३३३. पत्र : मगनलाल गांधीको

बेतिया
[मई १९१७][1]

चि० मगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। तुमनें आदरणीय खुशालभाईको लिखा, सो ठीक किया। यदि सम्मिलित रसोईके प्रति तुम्हारी वैसी ही श्रद्धा रही जैसी तुम आदरणीय खुशाल-भाईके प्रति रखते हो तो यह प्रयोग अवश्य सफल होगा। इससे भी आगे जाकर शुद्धताके सम्बन्धमें वे जो नियम बतायें हम उन्हें स्वीकार कर सकते हैं। धर्म छुआ-छूतके सिद्धान्तको माननेमें नहीं है, यह बात उन्हें विनयपूर्वक लेकिन दृढ़तासे समझाना। अस्पृश्यताको अखा भगतने [धर्मके] "अनावश्यक और अतिरिक्त अंग"के रूपमें माना है। यहाँ तो मैं रससे सराबोर हो रहा हूँ। लोगोंके कष्टोंकी सीमा नहीं। [मुझे] गाँवोंका अद्भुत अनुभव मिलता रहता है।

यदि मावजीभाई अन्य दृष्टिसे अच्छे व्यक्ति हों तो उनके लिए वेतन निश्चित कर देना। यह आवश्यक है कि ऐसे व्यक्ति शिक्षण प्राप्त करें और बुनाईके बारेमें पूरा ज्ञान प्राप्त करें ताकि ऐसे हजारों लोगोंको रखा जा सके।

जो सज्जन आश्रमका खर्च देनेके विचारसे आये हैं उन्हें आश्रमका पूरा हिसाब-किताब बता देना। यदि वे पैसा दें तो उसे लेनेमें कोई हर्ज नहीं दिखाई देता। मैं प्रभुदासको पत्र[2] लिखा रहा हूँ कि यदि वह यहाँ आना चाहे तो आ सकता है। यदि चि० छगनलाल इस बार विलम्बसे आता तो उस देरीका कोई इलाज नहीं बचता, यह सच है। अन्तिम समयमें अनायास ही सारी परिस्थितियाँ अनुकूल हो गईं, इसलिए लगता है कि सब कुछ ठीक हुआ।

तुम पूछते हो यहाँ मेरा काम कब पूरा होगा। काम बहुत बड़ा है, उसके महत्त्वको देखते हुए इसमें अनेक वर्ष व्यतीत हो जा सकते हैं। मेरी समझमें छः मास तो अवश्य लगेंगे। यहाँ मुझे अमूल्य सहायक मिले हैं। अन्य लोग आनेवाले हैं। मैं तो ईश्वर कृपाका घूँट पीता रहता हूँ। प्रभुदासका दिमाग दूधकी कमीके कारण खाली हो गया है, ऐसी बात नहीं। चि० छगनलालने शंका उठाई है। उसका कारण है प्रभुदासके विकासकी एक अवस्थासे दूसरी अवस्थामें जाना। जब इस तरहके बड़े परिवर्तन होते हैं तब ज्यादातर लोग किसी न किसी रूपमें इनसे प्रभावित होते ही हैं। इसके अलावा प्रभुदासने देवदासके साथ होड़ करनेमें अथक प्रयत्न किया, यह मैं

१. यह मगनलाल द्वारा पत्रके ऊपर दिया हुआ है।
२. यह उपलब्ध नहीं है।

पढ़ाते समय देख सका। प्रभुदासमें कुछ उत्तम गुण हैं। उसकी आयु और योग्यताको देखते हुए उसने अपनी सीमासे बाहर प्रयत्न किया है। अब वह थक गया है।

बापूके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५७११) से।
सौजन्य: राधाबेन चौधरी

३३४. पत्र: डब्ल्यू० बी० हेकॉकको

बेतिया
जून १, १९१७

प्रिय श्री हेकॉक,

मेरा खयाल है कि मैंने आपको उस रिपोर्टका हवाला भेजनेका वायदा किया था, जिसमें से मैंने इस सम्बन्धमें उद्धरण दिये थे कि फैक्टरियाँ रैयतसे अपनी इच्छानुसार काम लेनेके लिए क्या-क्या तरीके अपनाती हैं।[1] यह रिपोर्ट तारीख २२ जुलाई, १९१४ की है और इसपर बेतियाके एस० डी० ओ० श्री ई० एच० जॉन्स्टनके हस्ताक्षर हैं। यह रिपोर्ट बेतिया फैक्टरीके बारेमें है।

आपका सच्चा,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (नेशनल आर्काइव्ज़ ऑफ इंडिया) से; **सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन**, सं० ११०, पृष्ठ १९० से भी।

३३५. पत्र: वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको

मोतीहारी
चम्पारन
जून १ [१९१७]

प्रिय श्री शास्त्रियर,

सम्भव है कि संलग्न पत्र[2] आपके पास किसी अन्य जरियेसे पहुँच भी चुका हो। मेरी समझमें आप इसे पसंद करेंगे।

आशा है कि आप स्वस्थ होंगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (जी० एन० ६२९६) की फोटो-नकलसे।

१. इस उद्धरणके लिए देखिए "पत्र: बिहारके मुख्य सचिवको", ३०-५-१९१७।
२. उपलब्ध नहीं है।

३३६. पत्र : मगनलाल गांधीको

बेतिया
ज्येष्ठ सुदी ११, संवत् १९७३
[जून १, १९१७]

चि० मगनलाल,

जिन किशोरलालके सम्बन्धमें भाई चन्दूलालने लिखा था, वे यहाँ आ गये हैं। लेकिन उनका शरीर स्वस्थ नहीं है, इसलिए उन्हें वापस भेज रहा हूँ। वे बहुत भले व्यक्ति हैं। [मैंने] उन्हें पाठशालामें शामिल होनेके लिए कहा है। मुझे विश्वास है कि वे शामिल कर लिये जायेंगे।

आज सवेरे मैंने जो पत्र भेजा उसमें अपने अन्तिम विचार पूरी तरह प्रकट नहीं कर सका। भाई फूलचन्द तथा नरहरिके नाम रहनेवालोंकी सूचीमें इसलिए नहीं लिखे कि वे यदि यहाँके जेल-जीवनका अनुभव करना चाहेंगे तो वह अन्त-अन्तमें भी हो सकेगा। भाई सांकलचन्दके सहारे ही पाठशाला आरम्भ की गई है। वे चाहें भी तो यहाँ नहीं आ सकते। फिलहाल काकाके बिना पाठशालाकी कल्पना नहीं कर सकता। भाई सांकलचन्द अकेले उसे नहीं चला सकेंगे। इसलिए काकाको भी वहीं रहना चाहिए। काकाके लिए यहाँ बहुत सीखनेको नहीं रहा है। मैं उन्हें पहुँचा हुआ व्यक्ति मानता हूँ। वे बहुत परिश्रम कर सकते हैं। उनके लिए सबकी सेवा करनेका काम सीखना अभी बाकी है। यह काकाके लिए उपयुक्त अवसर है। मामा आधा समय स्कूलमें और आधा समय बुनाईमें अथवा पूरा समय बुनाईके काममें व्यतीत कर सकते हैं। वे भी काकाके समान ही हैं। अन्तिम समय तक कष्ट सहना और समय आनेपर जेल जाना, यही सीखना है। इस पाठशालामें मामा उत्तीर्ण हुए हैं। छोटा-लालके बिना तुम बुनाई-घर कैसे चला सकोगे? और फिर, जेल जाना छोटालालके लिए आसक्तिका विषय है। उसके लेखे जेल कोई कष्टका स्थान नहीं है। उसे तो यदि कष्ट कहीं हैं तो वहीं है, तो भी वह उन्हें उठाता है और उठाता रहेगा। सन्तोक यदि वहाँ रहे तो लड़कियोंकी देखभाल हो सकती है तथा व्रजलालको रसोईके कामसे छुट्टी मिल सकती है। खुशालभाई वहाँ आ गये हों तो छगनलालको छोड़ा जा सकता है। और पूंजाभाई जैसा हिसाब रखते हैं वैसा रखें। उनके पाससे कौन हिसाब लेनेवाला है? मुझे यही व्यवस्था उचित जान पड़ती है। शिक्षकोंमें से एक भी व्यक्ति इस कार्यमें भाग लेनेके लिए बँधा हुआ नहीं है। मैं उनसे वैसी अपेक्षा भी नहीं रखता। मैंने इतना ही कहा है कि यदि वे चाहें तो भी केवल दो को छोड़ा जा सकता है। लेकिन फिलहाल तो देवदासके सिवाय किसी और व्यक्तिके आनेकी आवश्यकता नहीं दिखाई देती। तुम, मामा और छोटालाल जब करघेके ऊपर पूर्ण अधिकार प्राप्त कर लोगे तब, मेरी सहायताके बिना अकेले ही करघा चलानेवाले व्यक्तियोंके उद्धारके लिए लड़ लोगे। जब भाई सांकलचन्द तथा अन्य शिक्षकोंका राष्ट्रीय पाठशालापर

पूर्ण प्रभुत्व हो जायेगा तब वे खुद ही सब जगह ऐसी शिक्षण-पद्धतिका प्रसार करनेके लिए संघर्ष कर सकेंगे। यदि मैं मुक्त रहा और जिन्दा रहा तो उसमें भी भाग लूँगा। यदि नहीं, तो यह संघर्ष तुम सबको रास्ता दिखायेगा।

'हे कुरुनन्दन! योगवादीकी निश्चयात्मक बुद्धि एकरूप होती है, परन्तु अनिश्चयवालोंकी बुद्धियाँ अनेक शाखाओंवाली और अनन्त होती हैं।"[1]

इसमें सब कुछ आ जाता है।

एक बार कृतसंकल्प हो जानेके बाद जब यह धारणा बन जायेगी कि चाहे जो हो, अपने मार्गपर दृढ़ रहना है, तो सब-कुछ अपने-आप बनता चला जायेगा। मैं कैसे लोगोंकी व्यथा-कथा सुन और लिख पाता हूँ, यह कोई खास बात नहीं है। इसमें मामाके पत्रका उत्तर भी आ जाता है। उन्हें सारा पत्र पढ़ा देना। नारणदासको तुमने जो पत्र लिखा था वह अथवा उसने तुम्हें जो पत्र भेजा था वह, तुम मुझे भेजना भूल गये जान पड़ते हो। बुनाईके अलावा तुम्हें जो अन्य मजदूर रखना उचित जान पड़े, रख लेना। बाजारके अनुसार हम दाम ले सकते हैं। मकानके नक्शेके विषयमें तुमने जो लिखा है वह उचित जान पड़ता है। यदि रहनेके लिए जाओ तो उसमें तुरन्त बाड़ लगा देना। काहेकी बाड़ लगानी है, इसपर विचार कर लेना। मैं अपना नक्शा पहले ही दे चुका हूँ। घरके आसपास चौड़ा चबूतरा बनानेका ध्यान रखना। शिक्षकोंके मकान सामनेकी जगहमें हों, यह ठीक है। वहीं लालजी आदिके लिए भी . . . आदरणीय खुशालभाईके लिए मैं नहीं कह सकता। उसके बारेमें तुम्हीं विचार कर लेना। मेरे पत्रके[2] उत्तरमें वह क्या निर्णय करते हैं यह भी देखना बाकी है। मुझे लगता है, मकानपर बीस हजार रुपया खर्च करना पड़ेगा और हम उतना खर्च कर पायेंगे। डॉक्टर साहबके पाससे प्रतिवर्ष दो हजार रुपये मिलेंगे। यह रकम अभी उन्होंने हमारे पास जमा नहीं कराई है लेकिन मेरा खयाल है वे जल्दी ही जमा करा देंगे। यदि किसी चीजकी जरूरत हो तो उन्हें बताना। जमीनको मैं अलग मानता हूँ। मकान पक्की ईंटोंसे बनानेकी आवश्यकता महसूस करो तो बनवाना। वहाँ एक्जीक्यूटिव इंजीनियर श्री तैयबजी हैं। वे मदद कर सकते हैं। जब वे मुझे जेल दिखाने ले गये थ तब पूंजाभाई मेरे साथ थे।

वेतन आश्रमकी पूँजीमें से दिया जाये, यह ठीक है। यदि पाठशालाके खातेम कोई व्यक्ति रुपया भेजे तो उसका क्या किया जाये, इसकी जाँच भी कर लेनी है। शिक्षकोंके मकान भी आश्रमके रुपयोंमें से बनाये जायेंगे। यदि वे दे सकते हों तो उन्हें जमीन तथा और चीजोंपर जो लागत आयेगी, उसपर छः प्रतिशतके हिसाबसे अथवा वे जो उचित समझें उस हिसाबसे, किराया देना चाहिए। इससे तुम्हारे सब प्रश्नोंका उत्तर मिल जाता है।

बापूके आशीर्वाद

१. व्यवसायात्मिका बुद्धिरेकेह कुरुनन्दन।
बहुशाखा ह्यनन्ताश्च बुद्धयोऽव्यवसायिनाम्॥ भगवद्गीता, २-४१।

२. उपलब्ध नहीं है।

जीवनलालभाईको १५ तारीख तक वेतन देनेकी जो बात चि० छगनलालने लिखी है वह उचित नहीं है। मैं यह तय कर चुका हूँ कि जीवनलालभाईको [पहले] एक पखवाड़ेका अग्रिम वेतन दें और बादमें हर महीनेकी पहली तारीखको वेतन दिया जाये। [यह बात] चेक-बुक देखने तथा भाई फूलचन्दसे पूछनेपर मालूम होगी। भावी खर्चके लिए हमारा विचार व्याजपर निर्भर करनेका नहीं है। जहाँतक बन पड़ेगा तबतक बिना माँगें जो रकम प्राप्त होगी उसमें गुजारा कर लेंगे। लेकिन हमारी तपश्चर्यामें जितनी कमी होगी उतना ही हमें हाथ पसारना होगा। महत्त्वके समस्त कार्योंका विकास जगत्में इसी प्रकार हुआ है। सूदपर चलनेवाली संस्थाएँ अन्तमें निष्क्रिय हो जाती हैं। जनताको जिस संस्थाकी आवश्यकता होगी उस संस्थाकी सार-सँभाल वह कर लेगी। श्रीजी [के मन्दिर]में यदि धनका भण्डार न हो तो वहाँके पुजारी आध्यात्मिक प्रवृत्तिवाले हों। मेरे इन विचारोंसे अथवा ऐसे प्रबन्धसे शिक्षकोंको चौंकनेकी आवश्यकता नहीं। शुक्ल साहब[1] तथा रेवाशंकरभाईके पास पड़ी रकमसे चार साल तक उनका काम चल सकता है। लेकिन, मैंने डॉक्टर साहबको पत्र लिखा है जिसमें उनसे मौजूदा खर्चका भार उठानेके लिए कहा है। मेरा खयाल है वे उठा लेंगे। तुम उन्हें वर्ष-भरके सारे खर्चका अन्दाज लिख भेजना। मैं बाहर रहा तो यह प्रश्न उठेगा ही नहीं।

बापूके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५७१३) से।

सौजन्य : राधाबेन चौधरी

३३७. पत्र : महाराजा बहादुर सर रामेश्वरसिंहको

रांची

जून ४, १९१७

प्रिय महाराजा साहेब बहादुर,[2]

मैं, आपके सुझावके मुताबिक, प्रस्तावित जाँच-पड़तालके बारेमें अपने विचार लिपि-बद्ध कर रहा हूँ।

मेरी राय है कि जाँच-समिति (या नीचे जैसा सुझाया जा रहा है — मध्यस्थता-समिति) की नियुक्तिके साथ-ही-साथ उन विभिन्न मुद्दोंके बारेमें ऐलान कर दिया जाना चाहिए जिनका हवाला मैंने सरकारके नाम पिछली १३ मईके अपने पत्रमें दिया था।[3] तिन-कठियाके सारे प्रकार और ढोकरहा कोठीके बकाया तावान और हुन्डोंकी बकाया रकमके रुक्के — सबको समाप्त या रद्द करनेका ऐलान कर दिया जाना चाहिए।

१. डी० बी० शुक्ल।

२. दरभंगाके; बिहार तथा उड़ीसाकी कार्यकारिणी परिषद्के सदस्य।

३. देखिए "प्रतिवेदन : चम्पारनके किसानोंकी हालतके बारेमें", १३-५-१९१७।

यदि मेरा बस चले तो मैं बागान-मालिक द्वारा रैयतको झुकानेके लिए अपनाये गये जबरिया तरीकोंके बारेमें बयान नहीं देना चाहता; अलबत्ता शरहबेशी और तावानके सवालके सिलसिलेमें जितना बयान देना जरूरी हो उतना दे दूँगा। मेरी बड़ी इच्छा है कि मालिकों और रैयतके बीच मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध स्थापित हो जायें। आपसी समझदारीके आधारपर की जानेवाली पड़तालमें जबरिया तरीकोंकी जाँचकी बात उठाना गलत होगा।

तब यही प्रश्न रह जाते हैं — शरहबेशी[1], साटे, जमीन इत्यादि छिन जानेके कारण रैयतको हुए व्यक्तिगत कष्ट और वसूल किये गये तावान तथा शरहबेशीकी वापसी। समिति इनकी जाँच करेगी। इस बीच शरहबेशीकी अदायगी मुल्तवी कर दी जानी चाहिए।

समिति केवल शरहबेशीके उन साटोंपर ध्यान देगी जो दिये जानेवाले उच्च न्यायालयके फैसलेके क्षेत्रमें नहीं आते। उच्च न्यायालयके फैसलेको दोनों ही पक्ष अन्तिम मान लेंगे। तब जाहिर है कि शरहबेशीके साटोंके बारेमें कोई भी जाँच उच्च न्यायालयका फैसला हो जानेतक के लिए मुल्तवी कर दी जायेगी।

समिति नियुक्त हो जानेपर हमारे कामका क्षेत्र बदल जायेगा। तब हमारा काम होगा — साक्ष्य इकट्ठा करना, उसका मिलान करना और उसे पेश करना और साथ-ही-साथ शिक्षण तथा संरक्षणका वह कार्यक्रम चालू करना जिसकी रूपरेखा आपके सामने रखी गई थी।

ऐसी समिति एक पंचायतकी तरह काम कर सकती है। उसमें मालिकों और रैयतकी ओरसे नामजद (दोनोंकी ओरसे एक-एक) सदस्य रहें और उनको एक निर्णायक नियुक्त करनेका अधिकार हो। निर्णायक द्वारा किया गया निर्णय दोनों पक्षोंके लिए अन्तिम और अनिवार्य हो। यदि किसी भी पक्षने उस मध्यस्थ-निर्णयका पालन न किया, तो उसके पीछे, न्यायिक प्राधिकारके स्थानपर, सरकारका बल रहेगा। यह एक घरेलू झगड़ा है, इसलिए यदि मेरे बतलाये हुए ढंगसे इसका निपटारा किया जाये तो उससे एक स्वस्थ परम्परा बनेगी।

परन्तु यदि समितिका काम पंचायतकी तरहका नहीं होगा, तो वह सरकार द्वारा नियुक्त एक सरकारी समितिकी तरह काम करेगी। तब उसके दो सदस्य तो वही रहेंगे जो पंचायत-जैसी समितिमें रहते, परन्तु अध्यक्षके पदपर उच्च न्यायालयका एक न्यायाधीश आसीन होगा।

यदि इस पत्रकी किसी बातका और खुलासा आवश्यक हो और यदि आप चाहें तो मैं किसी भी समय परिषद्के सामने आनेके लिए तैयार हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

सिलेक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन, संख्या-११५, पृष्ठ १९८–९९।

१. बेशी लगान।

३३८. भेंट: बिहारके लेफ्टिनेंट गवर्नरसे[1]

जून ५, १९१७

आज दोपहर बाद मैंने श्री गांधीसे इस प्रश्नपर बातचीत की कि चम्पारनकी स्थितिके सम्बन्धमें क्या कदम उठाया जाना चाहिए। बातचीतके समय मुख्य सचिव भी उपस्थित थे। मैंने श्री गांधीसे कहा कि अब तो आपको जितनी-कुछ जानकारीकी आवश्यकता थी, उसे प्राप्त करनेके लिए पर्याप्त समय मिल चुका है, और उधर काश्तकार भी उत्तेजित हो रहे हैं; इसलिए जैसे भी हो, इस स्थितिको समाप्त करना आवश्यक है; क्योंकि यह बड़ी तेजीसे खतरनाक रूप धारण करती जा रही है। जो सवाल उठाये गये हैं, उन्हें तय करना खुद श्री गांधीके लिए असम्भव है, क्योंकि गोरे जमींदार उनकी सत्ता स्वीकार नहीं करेंगे। और यदि श्री गांधी ऐसा प्रयत्न करें भी तो यह तो सरकारका काम अपने हाथोंमें लेना होगा। सरकारका विचार था कि जबतक बन्दोबस्त विभागकी रिपोर्ट नहीं मिल जाती, तबतक विवादास्पद प्रश्नोंपर विचार स्थगित रखा जाये, किन्तु वर्तमान परिस्थितियोंको देखते हुए अब वह मानती है कि यह बात सम्भव नहीं रही। अतः एक समिति नियुक्त करनेका निश्चय किया गया है, जिसके अध्यक्ष एक अन्य प्रान्तके वरिष्ठ राजस्व-अधिकारी (श्री स्लाई) होंगे और सदस्य निम्नलिखित व्यक्ति होंगे: भारत सरकारके राजस्व विभागके उप-सचिव श्री रेनी, कानूनी सलाहकार श्री ऐडमी, विधान परिषद्में गोरे जमींदारोंके प्रतिनिधि श्री डी. रीड, जमींदारोंके प्रतिनिधिके रूपमें अमावांके राजा हरिहर प्रसाद नारायण सिंह और काश्तकारोंके प्रतिनिधिके रूपमें स्वयं श्री गांधी। कहनेकी आवश्यकता नहीं कि अन्तिम तीन सज्जनोंकी नियुक्ति उनकी स्वीकृतिके बिना नहीं की जा सकती, मैंने श्री गांधीसे पूछा कि क्या आप समितिमें काम करनेको तैयार हैं। पहले तो उन्होंने कहा कि मैं समितिके बाहर ही रहना पसन्द करूँगा, जिससे स्वयं गवाही दे सकूँ। किन्तु कुछ विचार-विमर्शके बाद उन्होंने स्वीकार किया कि उनका समितिमें रहना हितकर है, बशर्ते कि सरकार यह मान ले कि उनके कुछ निश्चित विचार हैं, जिन्हें सदस्य बदल नहीं सकते। फिर वे, स्वयं भी एक लिखित वक्तव्यके रूपमें समितिके सम्मुख अपनी गवाही पेश करना चाहते हैं। इसके अतिरिक्त उन्होंने यह इच्छा भी व्यक्त की कि उन्हें पूछताछके लिए गवाहोंको पेश करनेकी स्वतन्त्रता दी जाये तो अच्छा रहे। मैंने उनसे कहा कि आपको इन मामलोंमें समितिमें रहते हुए भी उतनी ही स्वतन्त्रता रहेगी, जितनी कि बाहर रहनेपर होती। इसपर श्री गांधीने पंडित मदनमोहन मालवीयसे सलाह करनेके

१. लेफ्टिनेंट गवर्नरका यह नोट गांधीजीको दिखाया गया था और उन्होंने इसमें कुछ संशोधन कर दिये थे।

लिए समय माँगा और बाँकीपुरमें उनसे भेंट करनेके बाद तुरन्त मुझे अपना निर्णय सूचित करनेका वचन दिया।

श्री गांधीने स्वीकार किया कि समितिके सम्मुख निम्नलिखित सन्दर्भ-पद (टर्म्स ऑफ रेफरेन्स) प्रस्तुत करना उपयुक्त होगा:

> चम्पारन जिलेके जमींदारों तथा काश्तकारोंके सम्बन्धकी और नीलकी खेती तथा उसके निर्माणसे उत्पन्न सभी झगड़ोंकी जाँच करना। समिति पहलेसे ही उपलब्ध सामग्रीकी परीक्षा करे और परीक्षाको सर्वांगपूर्ण बनानेके लिए स्थानीय और अस्थानीय रूपसे आगे जो भी जाँच कराना वांछित लगे, करवाये। वह अपने निष्कर्षकी रिपोर्ट, यदि सम्भव हो तो १५ अक्तूबर तक, सरकारके सामने प्रस्तुत कर दे। जिन बुराइयों और शिकायतोंका उसे पता चले, उन्हें दूर करनेके उपाय भी वह रिपोर्टमें बताये।

श्री गांधीने यह पूछा कि क्या यह निश्चित माना जा सकता है कि उपर्युक्त सन्दर्भ-पदमें मेरे १३ मईके नोटमें[1] उल्लिखित सभी मुद्दे आ जाते हैं, जिनमें शरहबेशी सट्टोंका प्रश्न भी शामिल है; हालाँकि उनसे सम्बन्धित एक मामला उच्च न्यायालयके विचारार्थ प्रस्तुत है। मैंने कहा कि हाँ, उसमें सभी मुद्दे आ जाते हैं।

फिर श्री गांधीने कहा कि मेरा खयाल है, "पहलेसे ही उपलब्ध सामग्री" शब्द-समुच्चयमें वे सब गवाहियाँ भी आ जायेंगी जिन्हें मैं पेश करना चाहूँगा, मैंने इसका उत्तर भी "हाँ" में दिया।

श्री गांधीने कहा कि मेरे विचारसे तो समितिकी कार्रवाई अनौपचारिक और सरसरे ढंगकी होनी चाहिए। मैंने कहा कि मुझे तो यह बात मान लेने लायक लगती है, किन्तु मेरा खयाल है कि इसे समितिके सदस्योंकी मर्जीपर छोड़ दिया जाये।

> श्री गांधी अपनी ओरसे वचन देते हैं कि वे तुरन्त अपना जाँचका काम बन्द कर देंगे। तथा अब से वे एक भी व्यक्तिका वक्तव्य नहीं लेंगे, और न खुद गाँवोंमें जायेंगे, न अपने सहायकोंको ही जाने देंगे। श्री गांधी काश्तकारोंको ऐसा महसूस करने देना नहीं चाहते कि
>
> 'क' उन्होंने ऐन मौकेपर उन्हें छोड़ दिया है, और इसी कारण वे समितिकी बैठक प्रारम्भ होने तक उस जिलेको बिलकुल छोड़ना नहीं चाहते। किन्तु, वे यह वचन देते हैं कि वे बेतिया और मोतीहारीसे बाहर नहीं जायेंगे। वे कुछ समयके लिए इन स्थानोंमें जायेंगे और फिर अहमदाबादका एक चक्कर लगायेंगे।

श्री गांधीने कहा कि गैर-कानूनी कामोंको, जैसे अबवाब लगाना और बेगारमें श्रम कराना, बन्द करनेके लिए तुरन्त हुक्म जारी किये जायें। मैंने कहा कि हम तबतक ऐसा नहीं कर सकते जबतक कि इसके साथ-ही-साथ गोरे जमींदारोंके अनुरोधके अनुसार यह

१. देखिए "प्रतिवेदन: चम्पारनके किसानोंकी हालतके बारेमें", १३-५-१९१७।

नोटिस भी जारी नहीं कर दिया जाता कि श्री गांधीको सरकारकी ओरसे कोई मान्यता प्राप्त नहीं है। इसपर श्री गांधीने कहा कि मैं तो चाहूँगा कि दोनों वक्तव्य जारी कर दिये जायें। किन्तु अन्तमें वे इस बातपर राजी हो गये कि ऐसे किसी नोटिसके बदले स्थानीय अधिकारियोंके नाम, जो भी बुराई दिखाई दे, उसे रोकनेके लिए कड़ी कार्रवाई करनेकी हिदायतें जारी की जायें। उदाहरणार्थ, अबवाब लेना, यथासम्भव, अन्तिम रूपसे बन्द कर दिया जाये और इसके लिए जहाँ आवश्यक हो, पट्टोंकी मीयाद बढ़ानेसे इनकार करनेके अधिकारका उपयोग किया जाये। इसी तरह जहाँ-कहीं भी कोई ऐसी बात दिखाई दे कि मजदूरों, बैल-गाड़ियों और हलोंका गैरकानूनी ढंगपर बेगारमें उपयोग किया जा रहा है, वहाँ उसे जैसे भी हो, रोका जाये।

श्री गांधीने अनुरोध किया कि गोरे जमींदारोंको यह चेतावनी भेज दी जाये कि समितिकी रिपोर्ट मिलनेकी अवधि तक के लिए वे बैलगाड़ियाँ और कुली आदि बेगारमें न लें और न अबवाब आदिकी वसूली करें। इसके उत्तरमें मैंने कहा कि यदि सरकार ऐसी कोई चेतावनी देगी तो गोरे जमींदार नाराज हो जायेंगे, क्योंकि इसका मतलब मामलेको देखने-परखनेसे पहले ही उसके बारेमें राय कायम करना होगा। हाँ, यह है कि जब समितिके लिए गोरे जमींदारोंके प्रतिनिधि सदस्यकी नियुक्ति हो जायेगी तब मैं उसे बता दूँगा कि यदि ऐसी बातें होती रहीं तो उससे क्या हानि होगी। मैं उससे अपने गोरे जमींदार भाइयोंको इस आशयकी सूचना भेजनेकी वांछनीयतापर भी विचार करनेका अनुरोध करूँगा।

अब निम्नलिखित कार्रवाई करनी चाहिए :

(१) हम जिस निर्णयपर पहुँचे हैं, उसकी सूचना संक्षेपमें भारत सरकारको भेज दी जाये, और उसमें यह उल्लेख भी कर दिया जाये कि श्री टैलेंट्सके बदले श्री टैनरको सेक्रेटरी चुना गया है।

(२) श्री रीड और अमावांके राजासे पूछा जाये कि क्या वे समितिमें काम करना पसन्द करेंगे।

(३) कमिश्नरको पत्र लिखकर सूचित किया जाये कि चम्पारनमें खेती-बाड़ीसे सम्बन्धित पूरे प्रश्नको एक समितिके विचारार्थ सौंपनेका निर्णय किया गया है। इस समितिके गठनकी सूचना आपको यथाशीघ्र भेज दी जायेगी। फिलहाल श्री गांधीने (जैसा ऊपर 'क' में बताये अनुसार) स्वीकार कर लिया है, गोरे जमींदार-संघको भी इस निर्णयकी सूचना भेज दी जानी चाहिए।

(४) समितिकी नियुक्तिके सम्बन्धमें एक छोटा-सा प्रस्ताव तैयार कर लिया जाये, ताकि ज्यों ही अंतिम रूपसे इसका गठन हो जाये, उसे जारी कर दिया जाये।

ई० ए० जी०[1]

५-६-१९१७

१. ई० ए० गेट।

मैंने लेफ्टिनेंट गवर्नर महोदय द्वारा हस्ताक्षरित और श्री गांधी द्वारा संशोधित मूल मसविदा अपने पास रखा है।

एच० मैक्फर्सन

[अंग्रेजीसे]

सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन, सं० ११७, पृष्ठ २०३–६।

३३९. तार: बिहारके मुख्य सचिवको

बांकीपुर
जून ७, १९१७

स्वीकृत शर्तोंपर[1] मुझे चम्पारनमें कृषि-सम्बन्धी प्रश्नको तय करनेके लिए प्रस्तावित समितिमें अपनी नामजदगी सहर्ष स्वीकार। खेद है पहले तार न दे सका। कारण माननीय पंडित मालवीय गाड़ी छूट जानेसे अभी पहुँचे हैं।

[अंग्रेजीसे]

सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन, सं० ११८, पृष्ठ २०७।

३४०. तार: बिहारके मुख्य सचिवको

बांकीपुर
जून ८, १९१७

अधिकृत सूत्रोंके आधारपर आजके 'इंग्लिशमैन'में एसोसिएटेड प्रेसका एक तार छपा है।[2] यदि गोरे जमींदार खुली जाँच चाहते हैं तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है। गुप्त जाँचका मेरा सुझाव पूर्णतः उनके हितके ध्यानसे था। यह तो कहना ही पड़ेगा कि सूचनाके प्रकाशनसे मित्रोंमें मेरी स्थिति अटपटी। सूचना पानेका उन्हें हक है किन्तु वह उन्हें दी नहीं जा सकती। मैं तुरन्त बेतिया रवाना हो रहा हूँ।

[अंग्रेजीसे]

सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन, सं० १२०, पृष्ठ २१०।

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२. इसमें अन्य बातोंके अलावा जाँच-समितिकी नियुक्तिका उल्लेख था और यह बताया गया था कि जाँच गुप्त रूपसे करने तथा उसकी रिपोर्ट देनेकी अवधि नियत करनेकी बातें गांधीजीकी सुझाई हुई हैं।

३४१. पत्र : एस्थर फैरिंगको

बेतिया
जून ९, १९१७

प्रिय एस्थर,

तुम्हारे पास जो कागज भेजे गये थे, उनपर से तुमने समझ लिया होगा कि मैं रांची गया था। कल ही वहाँसे लौटा हूँ। लौटनेपर तुम्हारा पत्र मिला।

तुम्हारे सवालका जवाव देना कठिन है। भारतमें यूरोपीयोंने जो-कुछ किया है उसका प्रभाव कुल मिलाकर इस देशके लिए अच्छा नहीं हुआ। यहाँ आनेवाले ज्यादातर यूरोपीय पश्चिमके सद्‌गुण पूवको देनेके वजाय स्वयं यहाँके दुर्गुणोंके शिकार हो गये हैं। शायद कुछ और हो भी नहीं सकता था। धर्मका उनपर कोई स्थायी प्रभाव तो पड़ा नहीं है; यह वात आजके युद्धसे भी सिद्ध हो जाती है। मेरी मान्यता तो यह है कि आधुनिक सभ्यताका ईसाइयतसे निश्चय ही विरोध है। और यदि यूरोपीय कोई चीज लेकर भारत आये हैं, तो वह यह आधुनिक सभ्यता ही है, ईसा मसीहका जीवन नहीं। तुम और कुछ इने-गिने अन्य लोग उस जीवनकी वानगी रखनेका प्रयत्न कर रहे हो। उसकी छाप इस भूमिपर निश्चित रूपसे पड़ेगी ही। किन्तु इसमें समय लगेगा। भगवान्‌के कामकी गति तो धीमी ही होती है। तुम और तुम्हारे जैसे-अन्य लोग वुराइयोंसे घिरकर भी उनसे प्रभावित नहीं होते। वे लोग उस आवरणके पीछे जो अच्छाई छिपी पड़ी है, उसे ढूंढ निकालते हैं और उसे भी अपनी सद्‌गुण-सम्पत्तिमें मिला लेते हैं और इस तरह पूर्व और पश्चिमका मणि-कांचन संयोग हो जाता है। जो मैं चाहता हूँ, सो तो यह है कि हम अपनी-अपनी पद्धतिका आदान-प्रदान करें। और इसीलिए मैंने तुम्हारे आश्रम आनेका स्वागत किया था। मैं उन सभी यूरोपीय मित्रोंके यहाँ आनेका स्वागत किया करता हूँ जो अपनी उत्तम परम्पराओंके प्रति सच्चे और इसके साथ ही इतने उदार भी हैं कि यह देश उन्हें जो उत्तम वस्तु दे सकता है, उसे लेनेके लिए तैयार हैं। मैं समझता हूँ, मेरी वात स्पष्ट हो गई होगी। आवश्यकता हो, तो निस्संकोच इस चर्चाको आगे चलाना।

सरकार जो समिति नियुक्त करने जा रही है, सम्भव है मैं उसपर काम करूँ। मैं इस समय इस सम्वन्धमें एक सर्वसामान्य टिप्पणी[1] तैयार कर रहा हूँ और उससे तुम्हें मेरी रांची यात्राका व्यौरा भी मिल जायेगा। मेरा वहाँ जाना अच्छा ही हुआ।

श्रीमती गांधी और देवदास इस समय यहाँ हैं। पोलक भी यहाँ हैं। यदि मैं गिरफ्तार कर लिया जाता, तो श्रीमती गांधी और देवदास गरीव किसानोंके बीच काम करते और उन्हें संघर्ष करनेके लिए प्रोत्साहित करते। मेरी वड़ी इच्छा है कि तुम जल्दीसे-जल्दी श्रीमती गांधीसे मुलाकात कर सको।

१. देखिए "चम्पारनकी स्थितिके सम्बन्धमें टिप्पणी — ६", १७-६-१९१७।

ऐसा मत सोचना कि मैं जरूरतसे ज्यादा काम करके अपने आपको मारे डाल रहा हूँ।

हम सबके प्यार सहित,

तुम्हारा,
बापू

[अंग्रेजीसे]
माई डियर चाइल्ड

३४२. पत्र : एच० मैक्फर्सनको

वेतिया
जून १०, १९१७

प्रिय श्री मैक्फर्सन,[1]

लेफिटनेंट गवर्नर महोदयका नोट[2] संलग्न करते हुए आपके नोटके[3] लिए धन्यवाद।

इस पत्रके साथ जिस लिफाफेमें आपका पत्र आया था, उसे वापस भेज रहा हूँ। मैंने उसमें से कागजात विना किसी खास दिक्कतके निकाल लिये थे।

वेतियामें वयान लेनेका काम कलसे वन्द कर दिया गया है। और मोतीहारीमें वन्द करवानेके लिए मैं कल वहाँ जा रहा हूँ।

आपका सच्चा,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (नेशनल आर्काइव्ज़ ऑफ इंडिया) से; **सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन**, सं० १२५, पृष्ठ २१२–३ से भी।

३४३. पत्र : एच० मैक्फर्सनको

वेतिया
जून ११, १९१७

प्रिय श्री मैक्फर्सन,

आपके इसी ९ तारीखके पत्रके लिए धन्यवाद। यदि यह मान लिया जाये और मेरा खयाल है कि यह मान ही लिया जाना चाहिए, कि वात मेरी ओरसे नहीं खुल सकती तो एसोसिएटेड प्रेसका समाचार[4] एक पूरा रहस्य वन जाता है।

१. विहार-उड़ीसाके लेफ्टिनेंट गवर्नरके मुख्य सचिव।
२. देखिए "भेंट : विहारके लेफ्टिनेंट गवर्नरसे", ५-६-१९१७।
३. रांचीसे प्रेषित ८ जूनका नोट।
४. देखिए "तार : विहारके मुख्य सचिवको", ८-६-१९१७।

स्वयं उस समाचारमें तो इस बातका सबूत है ही कि सूचनाएँ मुझसे प्राप्त नहीं हुई; इसके अतिरिक्त मैं यह कहना चाहूँगा कि मैंने सायंकाल ६ बजेतक, अर्थात् माननीय पंडित मालवीयजीके आनेतक बांकीपुरमें भेंटके सम्बन्धमें किसीको कुछ नहीं बताया था और फिर मैंने मालवीयजी और चार अन्य मित्रोंसे जो बातचीत[1] की उसमें उक्त समाचारमें उल्लिखित बहुत सारी बातोंका जिक्र तक नहीं किया था।

आपका सच्चा,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (नेशनल आर्काइव्ज़ ऑफ इंडिया) से; **सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन**, सं० १२७, पृष्ठ २१६ से भी।

३४४. पत्र : एस्थर फैरिंगको

मोतीहारी
जून ११, १९१७

प्रिय एस्थर,

मैं यहाँ एक दिनके लिए आया हूँ। मुझे तुम्हारी पुस्तिका[2] स्टेशन जाते-जाते मिली। इस पुस्तिकासे मुझे उन अत्यन्त आनन्दप्रद क्षणोंका स्मरण हो आया जो मैंने वर्षों पूर्व दक्षिण आफ्रिकामें बिताये थे। मैंने यह पुस्तिका कुछ अत्यन्त प्रिय ईसाई मित्रोंके साथ रहते हुए पढ़ी थी। मैंने इसे आज फिरसे पढ़ा और यदि ऐसी पवित्र पुस्तिकाके सम्बन्धमें ऐसा कुछ लिखा जा सकता हो तो मैं कहूँगा कि मुझे यह पहलेसे भी अधिक पसन्द आई। मेरी दृष्टिमें सत्य और प्रेम एकार्थवाची शब्द हैं, अर्थात् जिसे हम सत्य कहते हैं उसीको प्रेम भी कह सकते हैं। शायद तुम नहीं जानतीं कि निष्क्रिय प्रतिरोधका गुजराती नाम सत्यबल है। मैंने इसे सत्यबल, प्रेमबल या आत्मबल कहकर कई तरहसे स्पष्ट किया है। किन्तु सच तो यह है कि शब्दोंमें कुछ रखा नहीं है। करने योग्य बात तो यह है कि हमें सर्वत्र जो घृणा दिखाई देती है उसके बीच हम प्रेमपूर्ण जीवन बितायें। और जबतक इसकी अमोघ शक्तिमें हमारी अटूट श्रद्धा न हो तबतक हम ऐसा जीवन नहीं बिता सकते। दो-तीन शताब्दी पूर्व मीराबाई नामक एक महान् रानी हुई है। उन्होंने अपने पति और समस्त वैभवका त्याग करके परमप्रेमका जीवन बिताया। अन्तमें उनके पति उनके भक्त बन गये। हम अक्सर उनके रचे हुए कुछ सुन्दर भजन आश्रममें गाते हैं। जब तुम आश्रममें आओगी तब इन गीतोंको सुनोगी; और किसी दिन गाओगी भी।

१. जून ७ की बातचीत।
२. **कोरिंथियन्स**, अध्याय १३।

अमूल्य उपहारके लिए धन्यवाद। इस पुस्तिकामें जैसे विचार हैं वैसे विचारोंकी मुझे आवश्यकता है।

सस्नेह,

तुम्हारा,
बापू

[पुनश्च :]

मैं प्रेम सम्बन्धी पद्योंका[1] तीन मास तक नित्य पारायण करनेके ड्रमंडके निर्देशका अनुगमन करनेवाला हूँ।

[अंग्रेजीसे]

माई डियर चाइल्ड

३४५. पत्र : एच० मैक्फर्सनको

बेतिया
जून १३, १९१७

प्रिय श्री मैक्फर्सन,

मैं कल मोतीहारी गया था। वहाँ औपचारिक रूपसे बयान लेना बन्द करा दिया गया है। मैंने काश्तकारोंसे कहा है कि सरकार एक जाँच-समिति नियुक्त कर रही है। वह सम्भवतः अपना कार्य आगामी जुलाईके मध्य तक आरम्भ करेगी और जिस हद तक आवश्यक होगा उस हद तक उनके कष्टोंकी कहानी सुनेगी। मैंने उन्हें कहा है कि सरकारके उपर्युक्त निर्णयको ध्यानमें रखते हुए मुझे अब उनके बयान लेनेकी आवश्यकता नहीं रही है।

मैं अपना प्रधान कार्यालय उठाकर मोतीहारी ले जा रहा हूँ जहाँ मैं और मेरे साथी अबतक इकट्ठी की गई गवाहीका अध्ययन और विश्लेषण करेंगे एवं उसे ऐसा रूप देंगे जिसे अवसर आनेपर प्रस्तुत किया जा सके। काश्तकार जानकारी और मार्गदर्शनके लिए हमारे पास अब भी आते रहेंगे। मैं तो देखता हूँ कि यदि उन्हें अपनी मर्जीके मुताबिक हमसे मिलते रहने दिया जाता है तो इससे उन्हें बड़ी राहत मिलती है और उन्हें जो सलाह दी जाती है उसे वे तुरन्त मान भी लेते हैं। उनसे हम यह कह रहे हैं कि वे जबतक जाँच नहीं हो जाती तबतक स्थितिको यथावत् बनाये रखें। तभी कुछ करें जब कार्रवाई स्पष्ट रूपसे गैर-कानूनी हो; और वे स्वयं जो-कुछ करें वह किसी प्रकारसे भी गैर-कानूनी न हो।

जबतक समितिकी नियुक्ति करनेवाला प्रस्ताव[2] प्रकाशित नहीं हो जाता और अखबारोंमें छिड़ी गर्मागर्म बहस कुछ ठण्डी नहीं हो जाती तबतक मैं अहमदाबाद

१. हेनरी ड्रमंडकी द ग्रेटेस्ट थिंग इन द वर्ल्ड।
२. देखिए परिशिष्ट ११ (चम्पारन जाँच-समितिकी रिपोर्ट)।

नहीं जा रहा हूँ। यदि आप कृपा करके मुझे तारसे बता सकें कि प्रस्तावके कबतक 'गज़ट' में छपनेकी सम्भावना है तो मैं कृतज्ञ हूँगा।

कृपया इस पत्रके मिलनेके बाद सब पत्र मोतीहारी भेजें। मैं कल (गुरुवारको) तमाम दिन बेतियामें रहूँगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इंडिया) से; सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन, सं० १३१ पृष्ठ २१९ से भी।

३४६. चम्पारनकी स्थितिके सम्बन्धमें टिप्पणी–६

मोतीहारी
जून १७, १९१७

गोपनीय और अप्रकाशनीय

आपको स्मरण होगा कि जाँच-समितिकी नियुक्ति करनेवाले सरकारी प्रस्तावके[1] प्रकाशित होनेसे पूर्व ही श्री गांधी राँची बुला लिये गये थे। उस समय सरकारका विचार था कि उनको और उनके साथियोंको चम्पारनसे हटा दिया जाये। समस्त स्थितिपर लेफ्टिनेंट गवर्नर और श्री गांधीके बीच विस्तृत बातचीत[2] हुई। श्री गांधी कार्यकारिणी परिषद्के अन्य सदस्योंसे भी मिले[3] और दो दिनकी बातचीतके बाद सरकारने एक समिति नियुक्त करनेकी इच्छा प्रकट की और सुझाव दिया कि उस अवस्थामें श्री गांधी बयान लेना बन्द कर दें। श्री गांधीने सरकारकी यह बात तुरन्त मान ली। लेफ्टिनेन्ट गवर्नरने उनसे पूछा कि क्या वे उसके बाद चम्पारनसे चले जायेंगे और अपने सहकारियोंको हटा लेंगे? श्री गांधीने कहा कि नहीं, वे ऐसा नहीं कर सकते। उनके साथी और वे गवाही एकत्र करने और समितिकी तैयारी करनेमें लगना चाहते हैं। उनकी यह इच्छा चम्पारनके बाहर रहकर पूरी नहीं हो सकती। इसके अतिरिक्त वे किसानोंके मनमें यह खयाल नहीं आने देना चाहते कि किसी भी रूपमें उन्होंने किसानोंका साथ छोड़ दिया है। तब लेफ्टिनेंट गवर्नरने इस मुद्देपर जोर नहीं दिया; किन्तु यह आशा व्यक्त की कि जबतक समितिकी बैठकें नहीं होतीं तबतक न तो श्री गांधी और न उनके साथी ही गाँवोंमें जायेंगे। उनकी यह बात भी मान ली गई। अब बयान लेना और गाँवोंमें जाना बिलकुल बन्द कर दिया गया है। प्रधान कार्यालय मोतीहारी ले जाया गया है और उन काश्तकारोंकी

१. देखिए परिशिष्ट ११।
२. देखिए "भेंट : बिहारके लेफ्टिनेंट गवर्नरसे", ५-६-१९१७।
३. देखिए "पत्र : महाराजा बहादुर सर रामेश्वरसिंहको", ४-६-१९१७।

सेवाके लिए जो कुछ जानना या सहायता प्राप्त करना चाहते हों, केवल एक कार्यकर्त्ता बेतियामें रह गया है। उनको यह सलाह दी जा रही है कि जबतक जाँचका परिणाम घोषित नहीं होता तबतक वे हर हालतमें वर्तमान स्थितिको यथावत् बनाये रखें। श्री गांधीका दृढ़ मत है कि जहाँ उनकी मंडलीने असंदिग्ध रूपसे किसानोंके दमनके विरोधके निश्चयको दृढ़तर बनाया है और उनमें अपनी स्वतन्त्रताके लिए संघर्ष करनेका हौसला पैदा किया है, वहाँ उसकी उपस्थिति किसानोंको भी किसी प्रकारकी ज्यादती करनेसे रोकेगी। यदि उनका मार्गदर्शन न किया जाये तो वे गुमराह होकर कोई ऐसा कार्य कर सकते हैं जो अन्ततः उनके लिए हानिकर हो। समितिकी बैठक १५ जुलाईके लगभग होगी।[1] इस दरमियान श्री गांधी कुछ दिनके लिए अहमदाबाद जा रहे हैं और वहाँसे इसी मासकी २२ तारीखको मोतीहारी लौटेंगे।

जहाँतक समितिकी रचनाका सम्बन्ध है, श्री गांधीने उसमें अपनी नियुक्ति इस स्पष्ट शर्तके साथ स्वीकार की है कि वे स्वयं गवाही देने और काश्तकारोंकी गवाही तैयार करने और पेश करनेके लिए स्वतन्त्र होंगे एवं इस सम्बन्धमें उनकी स्थिति वैसी ही होगी जैसी समितिका सदस्य न होनेपर होती। उन्होंने यह कदम माननीय मालवीयजी और बिहारी मित्रोंकी अनुमतिसे उठाया है। वे उन लोगोंसे रांचीसे लौटनेके बाद बांकीपुरमें मिले थे। सरकारने अन्य सदस्योंकी नामजदगी बहुत सावधानीसे की है। इसमें उसका दृष्टिकोण यह रहा है कि समितिके निष्कर्ष न्यायोचित हों। रांचीकी बातचीतमें शुरूसे लेकर आखिर तक लेफ्टिनेंट गवर्नरकी यह तीव्र इच्छा रही कि कोई समुचित समझौता हो जाये।

एसोसिएटेड प्रेसने इस आशयका एक अनधिकृत वक्तव्य प्रचारित किया है कि श्री गांधीने गुप्त जाँचकी सलाह दी है। यह समाचार तत्त्वतः सही है। संगृहीत गवाही उत्तेजक किस्मकी है और उसपर अखबारोंमें गर्मागर्म चर्चा छिड़नेसे निश्चय ही ऐसा वातावरण उत्पन्न होगा जिससे निष्पक्ष जाँच करनेमें बाधा पड़ेगी। मण्डलीकी यह इच्छा नहीं है कि व्यर्थ ही जमींदारोंके हितोंको अनावश्यक हानि पहुँचाई जाये, और इसीलिए उनके हितोंका खयाल करके और यह बतानेके लिए कि मण्डली काश्तकारोंके प्रति न्याय करानेकी ही इच्छुक है, इसके अतिरिक्त वह और कुछ नहीं चाहती, गुप्त जाँचका सुझाव दिया गया था। इस विधिको अपनानेसे काश्तकारोंको हानि नहीं पहुँच सकती। यह निष्कर्ष नहीं निकालना चाहिए कि रिपोर्टको जनताके सम्मुख रखनेकी बात नहीं थी। फिर भी एसोसिएटेड प्रेसका वक्तव्य प्रकाशित होनेपर श्री गांधीने सरकारको तार दिया[2] कि चूंकि वह सुझाव सर्वथा जमींदारोंके हितमें था, इसलिए वे उसे वापस लेते हैं और यदि जमींदारोंकी यही इच्छा है तो वे खुली जाँचका स्वागत करेंगे।

यह समझ लेना चाहिए कि यद्यपि फिलहाल और स्वयंसेवकोंकी आवश्यकता नहीं है किन्तु समितिकी रिपोर्टपर सरकारका फैसला छपते ही उनकी जरूरत पड़ेगी। सरकारकी जांचका परिणाम चाहे जो हो, उसका इनके कार्यपर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। इन

१. देखिए परिशिष्ट ७।
२. देखिए "तार: बिहारके मुख्य सचिवको", ८-६-१९१७।

स्वयसेवकोंका काम अत्यन्त महत्त्वपूर्ण और स्थायी होगा और इसीलिए वह मण्डलीके कार्यका अन्तिम और महत्त्वपूर्ण दौर होगा। अखबारोंमें कोई प्रचार किये बिना स्वयं-सेवक तैयार कर रखने चाहिए। और यदि दूसरे गुण होनेपर भी उन्हें हिन्दी न आती हो, तो उनको काम लायक हिन्दी सीख लेनेकी सलाह देनी चाहिए। उन्हें वयस्क, विश्वसनीय और कठोर परिश्रमी होना चाहिये, ताकि यदि उन्हें फावड़ा चलाना पड़े, या गांवमें रास्तोंकी मरम्मत करनी पड़े, अथवा नये रास्ते बनाने पड़ें और गाँवकी नालियों या हौजोंकी सफाई करनी पड़े तो भी वे परवाह न करें एवं काश्तकारोंको जमींदारोंसे व्यवहार करनेका ठीक रास्ता दिखायें। छः मासके ऐसे प्रशिक्षणसे किसानों, कार्यकर्त्ताओं और समस्त देशको अकल्पनीय लाभ हुए बिना नहीं रह सकता।

मो० क० गांधी

गांधीजीके हस्ताक्षरयुक्त टाइप की हुई अंग्रजी दफ्तरी प्रतिसे।

सौजन्य: गांधी स्मारक निधि

३४७. पत्र : एस्थर फैरिंगको

मोतीहारी

जून १७, १९१७

प्रिय एस्थर,

मैं ४ दिनके लिए अहमदाबाद जा रहा हूँ। बहुत हुआ तो २८ तारीख तक लौटूंगा। जो-कुछ मेरे पास है वह कोई रहस्य नहीं है, और उसके सम्बन्धमें मुझसे जिज्ञासा करनेका तुम्हें पूरा अधिकार है? जिस प्रकार यह एक सुनिश्चित तथ्य है कि मैं तुम्हें इस समय पत्र लिख रहा हूँ; सत्य और प्रेमपर मेरा एकान्त विश्वास भी उतना ही सुनिश्चित तथ्य समझो। मेरी दृष्टिमें वे पर्यायवाची हैं। सत्य और प्रेमके बलपर सबको जीता जा सकता है।

हृदयसे तुम्हारा,

बापू

[अंग्रेजीसे]

माय डियर चाइल्ड

३४८. राष्ट्रीय स्कूलके अध्यापकोंसे वार्तालाप

[अहमदाबाद
जून २३, १९१७][1]

मैंने इतना मान लिया है कि आप सब अपना जीवन पाठशालाको समर्पित कर चुके हैं। इस समय हमारी आर्थिक स्थिति क्या है, मैं आपको उससे परिचित कराना चाहूँगा। हमारे पास फिलहाल आश्रमके कोषमें १०,००० रुपया नकद है। इसके अलावा लगभग १०,००० रुपयेके आभूषण आदि हैं जो मुझे [दक्षिण आफ्रिकासे] हिन्दुस्तान आते समय उपहारमें मिले थे तथा एक मित्रने जमीन खरीदकर देनेका वचन दिया है। इसलिए १०,००० रुपये ये हुए। मेरी यह इच्छा है कि मुझे जो उपहार मिले हैं, हालाँकि उनका उपयोग देशसेवाके काममें ही करना है, उन्हें मेरे जिन्दा रहते न बेचा जाये, यदि आवश्यकता पड़े तो उन्हें बेचा जा सकता है। यदि हमें अभी कोई सहायता न मिली और आजके जैसा खर्च रहे तो इतने पैसे हैं कि लगभग तीन वर्ष तक निर्वाह हो सकता है। लेकिन मुझे उम्मीद है कि हमें जब जरूरत होगी तब पैसा मिल जायेगा। ऐसा भी हो सकता है कि हम अपने सिद्धान्तके कारण सबको नाराज कर दें और पैसा न मिले। वैसी स्थितिमें अध्यापकोंके लिए ये रास्ते खुले हैं: एक तो पाठशाला छोड़कर किसी अन्य धंधेमें लग जायें, आप लोगोंमें से कोई ऐसा गया-बीता नहीं है कि अपनी आजीविका न कमा सके। दूसरा मार्ग है, चाहे जो हो, बाजरेकी रोटी मिले तो वह खाकर भी पाठशाला चलायें। पैसे प्राप्त करनेके लिए भीख माँगना जरूरी हो तो उसके लिए निकल पड़ें। अर्थात् आपको पाठशालाके लिए भिक्षा-वृत्ति अपनानेके लिए तैयार रहना चाहिए।

पाठशालाके उद्देश्य

१. नई शिक्षा पद्धति अपनायेंगे।
२. चरित्र-निर्माणपर विशेष ध्यान दिया जायेगा। उद्देश्य यह होगा कि कमसे-कम दस प्रतिशत विद्यार्थियोंको देश-सेवाके लिए तैयार किया जाये।
३. गुजराती भाषाके गौरवको प्रोत्साहन दिया जायेगा।
४. राष्ट्रभाषा हिन्दीका प्रचार किया जायेगा।
५. नई शिक्षा-पद्धतिके अनुसार ग्राम-ग्राममें पाठशालाएँ खोली जायेंगी। उन सभी पाठशालाओं तथा सरकारके लिए भी यह पाठशाला एक नमूना होगी। उद्देश्य यह है कि इस पाठशालामें शिक्षक तैयार किये जायेंगे और उन्हें गाँवोंमें भेजा जायेगा।
६. सरकारसे नई शिक्षण पद्धति स्वीकार करवानी होगी।

१. गांधीजी इस तारीखको अहमदाबादमें थे। वे १८ तारीखको मोतीहारीसे रवाना हुए थे। वे २४ से लेकर २८ तारीख तक बम्बईमें रहे और उसके बाद वापस मोतीहारी लौट आये थे।

शिक्षकोंके लिए आवश्यक होगा

१. हिन्दी तथा मराठी भाषाका ज्ञान।
२. बुनाईका काम
३. स्वास्थ्य-संरक्षण
४. हिन्दुस्तानकी तीर्थ-यात्रा
५. पाठशालाके अतिरिक्त आश्रमके अथवा मेरे मन्त्रीके रूपमें काम करनेकी तैयारी ।

पढ़ानेके उपरान्त शिक्षकोंके करनेके काम

१. पाठ्य-पुस्तकें
२. पारिभाषिक कोष

सह-शिक्षा

मैं स्वयं सह-शिक्षाके पक्षमें हूँ लेकिन शिक्षकोंकी राय अलग हो तो मैं आग्रह नहीं करता।

मैं [लड़के और लड़कियोंके] एक-साथ रहनेके पक्षमें नहीं हूँ। छात्रालयमें लड़कियोंको नहीं रखा जा सकता। लड़कियोंको तो, मेरे मतानुसार, जहाँतक हो सके, माताओंके निरीक्षणमें ही रखा जाना चाहिए। उनके अलावा और किसीके साथ नहीं रखा जा सकता। गर्मियोंमें छुट्टियाँ दी जायें और पाठशालाको ठण्डी जगह ले जाया जाये। उससे मैं समझता हूँ, अध्यापक और विद्यार्थी बाकी समयमें बहुत अच्छा काम कर सकते हैं। छुट्टियोंमें शिक्षकों तथा विद्यार्थियोंको साथ रहना चाहिए।

अंग्रेजी वैकल्पिक विषय होगा। अंग्रेजी [का ज्ञान] अच्छा लेकिन शुद्ध चाहिए। इसके लिए कोई अंग्रेज अध्यापक मिल जाये तो बहुत अच्छा हो लेकिन फिलहाल मेरे ध्यानमें कुमारी श्लेसिनके अतिरिक्त और कोई नहीं है। यदि वे आयें तो कहना ही क्या? वे बहुत भली महिला हैं। पाठशालाके विद्यार्थीको किसी भी अंग्रेजके साथ बिना घबराहटके शुद्ध अंग्रेजीमें बातचीत करनी आनी चाहिए।

आलेखन (ड्राइंग) की शिक्षा ललित-कलाके रूपमें नहीं बल्कि व्यावहारिक ज्ञानको ध्यानमें रखकर दी जायेगी जिससे उसे मानचित्र बनाना, सीधी लकीरें खींचना, सुन्दर अक्षर लिखना तथा किसी भी वस्तुकी स्मृतिके आधारपर चित्रांकन करना आ सके।

पाठशालामें अनुशासनके लिए नियम बनाये जायेंगे। लेकिन उनके पालनमें दबाव अथवा जोर-जबरदस्तीसे काम नहीं लिया जायेगा। विद्यार्थियोंका मन स्वेच्छया उनका पालन करनेका होना चाहिये। वे उन नियमोंका पालन करते हैं या नहीं, इस बातका ध्यान रखा जायेगा। पालन न करनेपर नापसन्दगी जाहिर की जायेगी। पालन करनेके लिए उनको समझाया जायेगा।

पाठशालामें, आरम्भमें, एक-सौ विद्यार्थी भर्ती किये जायेंगे और वे सब ऐसे होंगे जो अपना खर्च चला सकें। किसी भी विद्यार्थीके लिए पाठशालाके कोषमें से कुछ भी

खर्च न किया जायेगा। यदि कोई विद्यार्थी होशियार लेकिन गरीब हो तो उसके लिए हम अपने मित्रसे कहकर पैसा दें तथा उसकी फीसके लिए दूसरे मित्रसे पैसा माँगें। परन्तु पाठशालाके कोषसे बिलकुल खर्च नहीं किया जा सकता।

इतिहास, भूगोल, विज्ञान तथा आरोग्यके विषयोंका गुजरातीमें समावेश किया जा सकता है।

हमें अनेक बार दक्षिणके सम्पर्कमें आना पड़ता है और उसमें हमें लाभ भी है। इसलिए प्रत्येक विद्यार्थीको मराठी भाषा आनी चाहिए।

हस्तलिखित गुजराती प्रति (एस० एन० ६३१८) की फोटो-नकलसे।

३४९. पत्र : एच० मैक्फर्सनको

मोतीहारी
जून २९, १९१७

प्रिय श्री मैक्फर्सन,

आपका इस मासकी १८ तारीखका पत्र मेरी यात्राके दौरान मेरे पीछे-पीछे फिरता रहा। मैं ग्यारह दिन बाहर रहकर अहमदाबादसे कल दोपहरके बाद लौटा हूँ। यद्यपि मेरे साथी कार्यकर्त्ताओंने चम्पारनसे गायब रहनेकी कोई खास कोशिश नहीं की फिर भी उनमें से ज्यादातर अपने निजी कामसे अक्सर बाहर जाते रहे हैं। वे गवाहोंमें इसलिए दिखाई नहीं दिये, कि उनका काम मेरे लिए उस गवाहीका, जो मैंने संगृहीत की है, एक संक्षिप्त विवरण तैयार करना और पूछताछ करनेवाले लोगोंको जानकारी देना है। मेरा खयाल है कि गवाहियाँ लेना और देहातोंमें जाना ईमानदारीके साथ बन्द कर दिया गया है, इसलिए यहाँ हलचलका सर्वथा अभाव है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (नेशनल आर्काइव्ज़ ऑफ इंडिया) से; **सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन**, सं० १३८, पृष्ठ २४१ से भी।

३५०. पत्र : डब्ल्यू० बी० हेकॉकको

मोतीहारी
जून २९, १९१७

प्रिय श्री हेकॉक,

मैं कल दोपहरको यहाँ आया हूँ। भारत सेवक समाज (सर्वेन्ट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी)के सदस्य डॉ० देवको सोसाइटीकी ओरसे, मैं आगे जबतक चम्पारनमें रहूँ तबतक, अपने साथ काम करनेके लिए नियुक्त किया है। यद्यपि फिलहाल उनकी सेवाओंकी आवश्यकता नहीं है, फिर भी वे मेरी कार्य-पद्धतिका अध्ययन करनेके लिए आये हैं, ताकि जब स्वयंसेवकगण सहायतार्थ गाँवोंमें जायें उस समय उन्हें सुविधा हो सके। कहनेकी आवश्यकता नहीं कि डॉ० देव, आप जब भी उन्हें समय दें, आपको अपने आगमनकी सूचना देने और आपसे मिलनेके लिए उत्सुक हैं।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (नेशनल आर्काइव्ज़ ऑफ इंडिया) से; **सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज़ मूवमेंट इन चम्पारन**, सं० १३९, पृष्ठ २४८ से भी।

३५१. पोशाकके बारेमें 'पायनियर'को उत्तर

मोतीहारी
जून ३०, १९१७

महोदय,

मैं चम्पारनमें जो थोड़ा-बहुत काम कर रहा हूँ उसकी आपने और श्री इर्विनने आलोचनाकी और मैं अबतक इस आलोचनाका उत्तर देनेका लोभ संवरण करता रहा हूँ। आपकी हर बातका उत्तर तो मैं इस पत्रमें भी नहीं दूंगा। किन्तु श्री इर्विनने एक बात बिना सही जानकारी पानेका कष्ट उठाये कही है; मैं उसका उत्तर अवश्य दूंगा। उन्होंने मेरे कपड़े पहननेके तरीकेके बारेमें जो कुछ कहा है मेरा अभिप्राय उसीसे है।

'पाश्चात्य सभ्यताकी छोटी-छोटी सुख सुविधाओंसे परिचित' न होनेके कारण मैंने अपनी राष्ट्रीय पोशाकका आदर करना सीखा है। और श्री इर्विनको यह जाननेमें दिलचस्पी हो सकती है कि मैं चम्पारनमें जो पोशाक पहनता हूँ उसे भारतमें सदा पहनता रहा हूँ। केवल कुछ दिनके लिए अपने अन्य देशवासियोंकी भाँति मैं भी अदालतोंमें और काठियावाड़से बाहर अन्यत्र अर्द्ध-यूरोपीय पोशाक पहननेकी कमजोरीका

सहज शिकार हो गया था। मैं अबसे २१ वर्ष पूर्व काठियावाड़की अदालतोंमें बिलकुल इसी पोशाकको पहनकर जाता था जिसे मैं चम्पारनमें पहनता हूँ।

मैंने एक परिवर्तन किया है और वह यह कि बुनाई और खेतीका धन्धा अपनाने एवं स्वदेशीका व्रत लेनेपर मेरे कपड़े अब बिलकुल हाथसे कते और बुने होते हैं और उन्हें या तो मैं स्वयं तैयार करता हूँ या मेरे साथी कार्यकर्त्ता तैयार करते हैं। श्री इर्विनके पत्रकी ध्वनि यह है कि मैं काश्तकारोंपर असर डालनेके लिए उनके सम्मुख ऐसी पोशाक पहनकर जाता हूँ और इसका उपयोग मैं अस्थायी तथा विशेष रूपसे चम्पारनमें ही करता हूँ। तथ्य यह है, मैं राष्ट्रीय पोशाक इसलिए पहनता हूँ कि मैं समझता हूँ कि यह एक भारतीयके लिए अत्यन्त स्वाभाविक और शोभनीय पोशाक है। मेरा विश्वास है कि यूरोपीय पोशाककी नकल करना हमारे पतन, अपमान, और दुर्बलताका चिह्न है और हम अपनी इस राष्ट्रीय पोशाकको छोड़कर राष्ट्रीय पाप कर रहे हैं; जो भारतकी जलवायुके लिए उपयुक्त है, जिसकी सादगी, कला और सस्तेपनमें पृथ्वी भरकी कोई पोशाक मुकाबला नहीं कर सकती एवं जो स्वास्थ्य और सफाईकी दृष्टिसे निर्दोष है। यदि अंग्रेजोंमें झूठा घमंड और गौरवके झूठे भाव न होते तो यहाँ रहनेवाले अंग्रेज भारतीय पोशाकको बहुत पहले ही पहनने लग जाते। मैं यहाँ प्रसंगवश यह भी कह दूँ कि मैं चम्पारनमें इधर-उधर नंगे सिर नहीं जाता। जूते तो मैं धार्मिक कारणोंसे नहीं पहनता; किन्तु मैं यह भी देखता हूँ कि यथासम्भव उन्हें न पहनना अधिक स्वाभाविक और स्वास्थ्यके लिए लाभप्रद है।

श्री इर्विन और आपके पाठकोंको यह बतलाते हुए मुझे खेद होता है कि 'परिषद्के भूतपूर्व माननीय सदस्य' मेरे आदरणीय मित्र बाबू ब्रजकिशोर प्रसाद अब भी असंस्कृत ही हैं। वे अपने प्रान्तकी टोपी पहनते हैं और कभी नंगे पैर नहीं चलते और जिस घरमें हम रहते हैं उसमें भी खड़ाऊ पहनकर भयंकर खटखटकी आवाज करते रहते हैं। मेरे साथ उनका गहरा सम्पर्क है, फिर भी [बाहर] उन्हें अपनी अर्द्ध-अंग्रेजी पोशाकको त्यागनेका साहस नहीं होता; जहाँ भी वे अधिकारियोंसे मिलने जाते हैं, अपने पैरोंको दुटंगे परिधान [पतलून] में डालते हैं और यह मानते हुए भी कि उन्हें अपने पैर संकुचनशील जूतोंमें कसनेसे बहुत कष्ट होता है, वैसे जूते पहनते हैं। मैं उन्हें यह विश्वास नहीं दिला पाता कि यदि वे अधिक फबनेवाली और कम कीमतकी 'धोती' पहनेंगे, तो न उनके मुवक्किल उन्हें छोड़ जायेंगे और न अदालतें ही उन्हें सजा देंगी। मैं आपसे और श्री इर्विनसे भी कहता हूँ कि उन 'कहानियों' पर विश्वास न करें जिन्हें वे और आप मेरे मित्रोंके बारेमें सुना करते हैं; बल्कि शिक्षित भारतीयोंको अपने उन आचारों, आदतों और रिवाजोंको, जो बुरे या हानिकर सिद्ध नहीं हुए हैं, छोड़नेके विरुद्ध किये जानेवाले पवित्र संघर्षमें मेरा साथ दें। अन्तमें मैं आपको और श्री इर्विनको चेतावनी देनेका साहस करता हूँ कि यदि आप इसी तरह असिद्ध तथ्योंके आधारपर आलोचना करते रहेंगे तो आप दोनों चम्पारनमें मेरी उपस्थितिको जिस उद्देश्यके लिए खतरा समझते हैं, उस उद्देश्यको ही हानि पहुँचायेंगे। कृपया मेरी यह बात बिलकुल सही मानें कि मैं अपने देशवासियोंके प्रति जिस तरह बरतता हूँ, अगर अपने उन सैकड़ों अंग्रेज

मित्रों और सहयोगियोंके प्रति, जिनमें से सभी मेरी तरह सनकी नहीं हैं मैं उससे भिन्न व्यवहार करूँ तो मैं अपने आपको उनके सौहार्द और विश्वासका पात्र नहीं मानूंगा।

मो० क० गांधी

'पानियर'में ५-७-१९१७को प्रकाशित अंग्रेजी पत्र (एस० एन० ६३६८) की फोटो-नकलसे।

३५२. पत्र : एस्थर फैरिंगको

मोतीहारी
जून ३०, १९१७

प्रिय एस्थर,

तुम्हारे दो पत्र मेरे सम्मुख हैं। मैं अहमदाबादसे २८ तारीखको रवाना हो गया था; वहाँ मेरा समय ठीक गुजरा।

मुझे शहरका जीवन सदा ही निरुत्साहजनक और गाँवका मुक्त, शक्तिप्रद और दिव्य लगता रहा।

यदि हम अपने इन अनेक गुणों, शक्तियों और अनुसंधान-बुद्धिका उपयोग न करें तो फिर हमें ईश्वरने ये चीजें क्यों दी हैं? तुमने वही प्रश्न किया है जो मेरे मनमें उठा है और जिसे हजारों लोग सदा करते रहते हैं। मेरा विनम्र मत यह है कि ईश्वरने हमारे मार्गमें प्रलोभन रखे हैं जो उतने ही प्रबल होते हैं जितनी नैतिक उत्थानकी सम्भावनाएँ। हम अपनी आविष्कार-शक्तिका उपयोग अपने आन्तरिक विकास या बाह्य सुखोपभोगके लिए कर सकते हैं। मैं अपनी बुद्धि को हिमालयके प्रपातोंका क्या उपयोग किया जा सकता है, यह खोजनेमें लगा सकता हूँ; किन्तु इसके द्वारा मैं आदमीको आरामपसन्द बनानेके सिवा और कुछ नहीं कर सकूँगा। मैं अपनी बुद्धिको अपने भीतरके उन नियमोंको खोजनेमें लगा सकता हूँ जो हिमालयके प्रपातोंपर लागू होते हैं; इससे मैं अपने और मानव-जातिके स्थायी सुखमें वृद्धि करके अपनी और मानव जातिकी सेवा करता हूँ। तुम यह प्रमाणित करनेवाले असंख्य उदाहरण स्वयं जुटा सकती हो कि हमारी समस्त बुद्धि केवल हमारे आन्तरिक विकासमें लगनी चाहिए और यह विकास केवल आत्म-संयमसे ही हो सकता है।

श्री विटमैनसे[1] मेरा अभिवादन कहना और उन्होंने तुम्हें अवकाश मिलनेपर आश्रममें आनेकी जो अनुमति दी है उसके लिए मेरी ओरसे धन्यवाद देना।

उक्त युवकके बारेमें तुम्हें जो अनुभव हुआ है, उसमें कोई असाधारण बात नहीं है। तुम जिन स्त्री-पुरुषोंसे मिलती हो उनका सुधार करनेके लिए अधीर मत हो जाओ। शुरूसे अन्त तक प्रयत्न तो हमें अपने आपको सुधारनेका करना है। हम जब किसी औरको

१. दक्षिण भारतमें डेनमार्कके मिशनके एक वरिष्ठ सदस्य।

सुधारनेका प्रयत्न करते हैं तो ऐसा लगता है मानो हम कोई निर्णायक हैं। हमारे इस तरहके वर्तावसे युवक और भी विगड़ जाते हैं। सवसे अच्छा तो यही है कि उनका दोप सावित होनेपर चला जाने दिया जाये। मैंने अपना विचार वहुत स्पष्ट नहीं किया है; किन्तु तुम समझ जाओगी। न समझ पाओ तो पूछना।

तुम्हारा,
बापू

[अंग्रेजीसे]
माई डियर चाइल्ड

३५३. पत्र : फूलचन्द शाहको

मोतीहारी
आपाढ़ सुदी ११ [जून ३०, १९१७][1]

भाई फूलचन्द,

मैंने [तुम्हें] श्रीमती वेसेंटका एक पत्र रखनेको दिया था। यह दूसरा पत्र भेज रहा हूँ। तुम वहाँके समाचारपत्रोंकी कतरनें [तो] लेते होगे।

कुमारी फैरिंगका इस वारका पत्र पढ़ने लायक है। आश्रमके प्रति उसका जो प्रेम है उससे हमारी जिम्मेदारी वढ़ जाती है। हमें हृदयकी ऐसी स्वच्छता और पवित्रता प्राप्त करने और निभानेकी कामना करनी चाहिए। ऐसा प्रयत्न करनेमें ही हमारे अस्तित्वकी सार्थकता है।

मोहनदासके वन्देमातरम्

मैंने जिस दिन तुम्हें पत्र लिखा था उसी दिन सुरेन्द्र वीमार पड़ गया था। भूल मुझसे हुई। मैंने उसे एकदम पूरी छूट दे दी। उसका पेट सव-कुछ पचाने लायक नहीं हुआ था। उसने कल उपवास किया। आज आराम है। आज यहाँ सवने एकादशीका व्रत रखा है।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (एस० एन० ६३६४) की फोटो-नकलसे।

१. इस दिन गांधीजी मोतीहारीमें थे।

३५४. पत्र : वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको

मोतीहारी
जून ३०, [१९१७]

प्रिय श्री शास्त्रियर,

आपके पत्र और डॉ० देवको [मेरे पास] भेजनेके लिए धन्यवाद। मुझे आपका तो प्रोत्साहन चाहिए ही। यदि डॉ० देव जेल न जायें तो कृपया आप इसका कारण मेरे प्रयत्नकी कमी न समझें। वे कल जिला मजिस्ट्रेटसे मिल रहे हैं।

आपने डॉ० सप्रूको[1] जो पत्र लिखा है उसके सम्बन्धमें मैं आपको विस्तारसे लिखना चाहता हूँ; समय मिलनेपर लिखूँगा। तबतक बम्बईके मित्रोंके लिए तैयार किये गये मसविदेकी नकलें भेजता हूँ; सम्भव है, श्री पेटिटको पत्र[2] लिखूँ।

आप अपने शरीरके साथ जो दुर्व्यवहार कर रहे हैं उसके विरोधस्वरूप मैं एक तीखा पत्र लिखना चाहता हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (जी० एन० ६२९५) की फोटो-नकलसे।

३५५. पत्र : जे० बी० पेटिटको

मोतीहारी
जून ३०, १९१७

प्रिय श्री पेटिट,

जनसाधारणमें जोरदार प्रचार किया जाये। और उसके लिए गाँव-गाँव घूमा जाये, लोगोंसे बातचीत की जाये एवं उनमें परचे आदि बाँटे जायें; बहुत सतर्कतापूर्वक विचार करनेके बाद भी मैं जेल जानेकी दृष्टिसे, इसके सिवा ऐसा दूसरा कार्य जिसे सभी कर सकें नहीं सुझा सकता। इस समय आप, श्री जिन्ना और ऐसे ही अन्य नेता गाँवोंमें जायेंगे तो उसका परिणाम गिरफ्तारीके सिवा दूसरा नहीं हो सकता। यह प्रचार सरकारी प्रतिबन्धके बावजूद जारी रहना चाहिए; इस हद तक वह गैर-कानूनी कहा जा सकता है; किन्तु वह सत्याग्रहीके लिए अवैध नहीं है।

अन्य भी कई तरीके हैं; किन्तु जबतक हम वर्तमान रूपमें सत्याग्रहको थोड़ा पचा न लें, तबतक मैं उनकी सलाह देना नहीं चाहता।

१. सर तेजबहादुर सप्रू (१८७५–१९४९) प्रसिद्ध वकील और राजनयिक।
२. देखिए अगला शीर्षक।

मैं इतना और कह देना चाहता हूँ कि इस तरीकेमें अन्यायकारीको दण्ड देनेका कोई विचार नहीं आता। इसलिए कोई वदला नहीं लिया जाना चाहिए और न वहिष्कार किया जाना चाहिए। फिर भी, हमें वदलेकी कार्रवाईके रूपमें नहीं, अपने अस्तित्वके नियमके रूपमें, शुद्ध स्वदेशी व्रतका पालन करना चाहिए। भारतीय होनेके नाते अन्य वस्तुओंकी तुलनामें भारतीय वस्तुएँ पसन्द करना हमारा नैतिक कर्त्तव्य है।

मुझे आशा है कि हमारी कार्रवाईका स्वरूप जो भी हो, आप और आपके मित्र समयकी अवधिसे सम्वन्धित प्रस्ताव अवश्य स्वीकार करेंगे और हम तवतक दम न लेंगे जवतक सभी नजरवन्द[1] रिहा नहीं कर दिये जाते।

आप इस पत्रको श्री जिन्नाको तो दिखा ही देंगे।

हृदयसे आपका,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ६३६५) की फोटो-नकलसे।

३५६. पत्र : एस्थर फैरिंगको

मोतीहारी
जुलाई १, १९१७

प्रिय एस्थर,

मुझे तुम्हारा पत्र अभी मिला। इसमें तुमने लिखा है कि तुमने अपने जीवनके नव वर्षमें प्रवेश किया है, किन्तु कौनसे वर्षमें, यह नहीं लिखा। मैं आश्रममें आनेकी तुम्हारी उत्सुकताको समझता हूँ। मेरी कामना है कि वह तुम्हारी आवश्यकताओंकी पूर्ति करे और वहाँ तुम्हें वही प्रसन्नता, शान्ति और प्रेम मिले जो तुम्हें अपने माता-पिताके घर मिलता। हमने अपने वीतनेवाले हर वर्षको वचाया है या खोया है, यह इस वातपर निर्भर है कि हमने उसका सदुपयोग किया है या दुरुपयोग। हम लोगोंके लिए, जो ईश्वरसे डरते हैं, हर नया साल नई जिम्मेदारीका द्योतक है।

लिखना कि तमिलकी परीक्षा देनेके लिए तुम कौन-सी पुस्तकें पढ़ रही हो और यदि तुमने कोई मुन्शी रखा हो, तो उसे क्या दे रही हो।

तुम्हारा,
वापू

[अंग्रेजीसे]
माई डियर चाइल्ड

१. श्रीमती वेसेंट और अन्य लोग जो मद्रासमें ५ जूनको गिरफ्तार और नजरवन्द किये गये थे।

३५७. आश्रम-कोषके लिए परिपत्र

मात्र निजी प्रचारके लिए

मोतीहारी
चम्पारन
आपाढ़ सुदी ११, संवत् १९७३
[जुलाई १, १९१७][1]

स्नेही भाईश्री,

सत्याग्रह आश्रम तथा उससे सम्वन्धित कार्रवाइयोंपर होनेवाला खर्च इतने दिनों तक केवल मित्र समुदाय द्वारा स्वेच्छया दी गई सहायतापर चला, लेकिन उसकी प्रवृत्तियाँ इतनी वढ़ गई हैं कि अव उसका खर्च विना माँगे चल सकेगा, ऐसा नहीं जान पड़ता।

आश्रमकी प्रवृत्तियोंको निम्नलिखित विभागोंमें वाँटा गया है:

१. आश्रमवासियोंके रहने तथा खानेका खर्च: इस समय आश्रममें छोटे-वड़े मिलाकर ३० व्यक्ति हैं। भाड़े सहित उनका खर्च प्रति मास लगभग ४०० रुपये आता है। इसमें मेहमानोंपर होनेवाला खर्च भी शामिल है।

२. हाथ करघेका काम: आश्रममें दो वर्ष पहले यह काम किसीको नहीं आता था। आज आश्रमके अधिकांश लोगोंको यह काम थोड़ा-वहुत आता है। और उनमें से कुछ तो [इस काममें] निपुण माने जाते हैं। आश्रममें सात खड्डियाँ हैं। इसकी देखरेखमें पाँच खड्डियाँ और चलती हैं। इस प्रवृत्तिमें ३,००० रुपयेकी पूँजी लगी हुई है। कपड़ा वननेके साथ ही विक जाता है। अवतक ५०० रुपयेका कपड़ा वेचा गया है। इस उद्योगमें चार परिवारोंने, जिन्होंने वुनाईके कामको छोड़ दिया था, फिरसे हाथ लगाया है और इससे कुल मिलाकर १७ व्यक्ति अपनी जीविका कमाते हैं। एक परिवारने करघेका काम नया-नया सीखकर अपना भरण-पोषण आरम्भ करनेका प्रयत्न आरम्भ किया है। इस धन्धेसे [हम] अपनी आजीविका कमा सकते हैं यह वात अभी नहीं कही जा सकती। उम्मीद है कि दस वर्षके भीतर हजारों वुनकर, जिन्होंने यह धंधा छोड़ दिया था, इसे फिरसे अपना लेंगे। सव लोग इस वातको स्वीकार करते हैं कि कपड़ा वुननेकी मिलें रहनेपर भी देशमें हाथसे कपड़ा वुननेवालोंके लिए वहुत अधिक गुंजाइश है। इस काममें अभी नुकसान हो रहा है लेकिन अन्ततः

१. देखिए "पत्र: फूलचन्द शाहको", ३-७-१९१७, जिसमें लिखा है, "कल एक प्रति अम्बालाल भाईको भेजी।" तथापि छपी हुई प्रतिपर आषाढ़ वदी ९, संवत् १९७३ की तारीख पड़ी है जो अंग्रेजी पंचांगके अनुसार जुलाई १३, १९१७ ठहरती है।

नुकसान नहीं होना चाहिए। फिलहाल इसपर एक सौ रुपये मासिक खर्च आता है।

तीसरी प्रवृत्ति राष्ट्रीय पाठशालाकी है। आश्रममें रहनेवालोंकी यह मान्यता है कि जबतक राष्ट्रीय पद्धतिके अनुरूप शिक्षा नहीं दी जायेगी तब तक देशका बहुत ज्यादा नुकसान होता रहेगा। इसलिए प्रयोगके तौरपर राष्ट्रीय पाठशाला आरम्भ की गई है। इसमें उद्देश्य यह है कि मातृभाषाके माध्यमसे और आसान तरीकेसे ऊँची शिक्षा दी जाये। यदि प्रयोग सफल रहा तो सरकारसे ऐसी शिक्षा देनेकी माँग करनेका और इसके लिए निरन्तर प्रयत्न करनेका उद्देश्य भी इसमें शामिल है। यदि हम लोगोंको प्रयोगकी सफलता दिखा सके तो उनके द्वारा निजी तौरपर ऐसे अन्य प्रयोगोंके शुरू किये जानेकी भी काफी सम्भावना है। इस प्रयोगमें मानसिक और शारीरिक शिक्षण देनेकी व्यवस्था है। पाठ्यक्रमके लिए तेरह वर्षकी अवधिकी कल्पना की गई है। इसमें लगभग एक स्नातकको जितनी शिक्षा मिलती है उतनी शिक्षाके अलावा हिन्दी भाषाका ज्ञान, खेती तथा बुनाईका काम भी शामिल है। गुजरात कॉलेजके विज्ञानके भूतपूर्व प्रोफेसर सांकलचन्द शाहने यह प्रयोग करनेका बीड़ा उठाया है। प्रोफेसर शाहने दस वर्ष तक प्रोफेसर गज्जरके[1] साथ काम किया है। उनके साथ मदद करनेके लिए भाई नरहरि परीख, बी० ए०, एलएल० बी०; भाई दत्तात्रेय कालेलकर, बी० ए०; भाई फूलचन्द शाह, बी० ए०; भाई किशोरलाल मशरूवाला,[2] बी० ए०, एलएल० बी० तथा मेरा भतीजा छगनलाल गांधी है। अभी एक-दो चरित्रवान् शिक्षकोंकी खोज जारी है। संस्कृतके अभ्यासमें अहमदाबादके शास्त्री गिरिजाशंकरजी मदद करते हैं। इस प्रयोगकी देखरेख प्रोफेसर आनन्दशंकर ध्रुव करते हैं और अपनी राय देते हैं। अन्य सुशिक्षित व्यक्तियोंकी मदद भी ली जाती है। शिक्षक अपनी आवश्यकतानुसार वेतन लेते हैं। इस प्रयोगपर फिलहाल हर महीने ५०० रुपया खर्च आता है। इसमें किरायेका समावेश नहीं है क्योंकि वह आश्रमके खर्चमें गिना जाता है। इस समय विद्यार्थियोंकी संख्या बारह है। प्रयोग ऐसी स्थितिपर पहुँच गया है कि अब बाहरके विद्यार्थियोंको लेना शुरू किया जायेगा। अभी तक तो आश्रमके और शिक्षकोंके लड़के ही विद्यार्थी थे।

चौथी प्रवृत्ति हिन्दी भाषाके प्रचारकी है। जो स्थान इस समय अनुचित ढंगसे अंग्रेजी भोग रही है वह स्थान हिन्दीको मिलना चाहिए। इस विषयपर मतभेद होनेका कोई कारण न होनेपर भी मतभेद होना दुर्भाग्यकी बात है। शिक्षित वर्गको एक भाषा अवश्य चाहिए और वह हिन्दी ही हो सकती

१. त्रिभुवनदास कल्याणदास गज्जर (१८६३–१९२०); रसायन-शास्त्रके प्रोफेसर, बड़ौदा कॉलेज, बड़ौदा; पश्चिम भारतमें रसायन उद्योगके प्रणेता।

२. किशोरलाल घनश्यामदास मशरूवाला (१८९०–१९५२); रचनात्मक कार्यकर्ता तथा गांधीजीके सहयोगी; गांधीजीके साप्ताहिक पत्र *हरिजन*के सम्पादक तथा **गांधी ऐंड मार्क्स**के लेखक।

है। हिन्दीके द्वारा करोड़ों व्यक्तियोंमें आसानीसे काम किया जा सकता है। इसलिए उसे उचित स्थान मिलनेमें जितनी देर हो रही है उतना ही देशका नुकसान हो रहा है। इस नुकसानको रोकनेका प्रयत्न देशमें किया जा रहा है। आश्रमकी प्रवृत्तिसे इस दिशामें सहायता मिलेगी। उसमें सबसे पहला कदम मुख्यत: हिन्दी-शिक्षक प्राप्त करने और उन्हें शिक्षण देनेका है। मेरा खयाल है इस कार्यमें कमसे-कम हर महीने २०० रुपयेका खर्च आयेगा।

पाँचवी प्रवृत्ति केवल उन राजनैतिक विषयोंको हाथमें लेनेकी है जिनमें मेरी कुछ पैठ हो। उसमें केवल मेरा और मेरे साथ घूमनेवालेके रेल भाड़ेका खर्च है। यह मुश्किलसे १०० रुपये प्रति मास होगा। इस राशिको प्राप्त करनेके लिए अभी तक कुछ प्रयास नहीं करना पड़ा है फिर भी यहाँ लिख देता हूँ।

इस प्रकार हर महीने खर्च आता है:	रुपये
आश्रमके व्यवहारके लिए	४००
बुनाईके कामके लिए	१००
पाठशालाके लिए	५००
हिन्दी भाषा-प्रचारके लिए	२००
मेरे रेल-खर्चके लिए	१००
लगभग	१,३००

राष्ट्रीय पाठशालाका खर्च अभी बढ़ेगा। इसलिए, यदि सारी प्रवृत्तियोंपर १,५०० रुपयेके खर्चका अनुमान लगायें तो इसमें अतिशयोक्ति न होगी।

इन कार्योंके लिए विस्तृत भूमिकी आवश्यकता है। वैसी लगभग ५५ बीघे जमीन साबरमतीके किनारे, साबरमती जेलके पास ली गई है। दूसरी [जमीन] लेनेके प्रयत्न अभी जारी हैं। उसमें बुनाईके कामके लिए कारखाना, आश्रममें रहनेवालोंके लिए कमरे, रसोईघर तथा राष्ट्रीय शालाके लिए मकान बनाये जायेंगे। इसमें १,००,००० रुपये खर्च होनेकी सम्भावना है। भारत सेवक समाजके[1] भाई अमृतलाल ठक्करने मकान बनानेके कामकी देखरेखका दायित्व अपने ऊपर लिया है।

इस तरह मेरी जरूरतें मकानपर तथा एक वर्षके दौरान होनेवाले खर्चके आँकड़ोंको मिलाकर १,१८,००० रुपयेकी होती हैं। जमीनका खर्च मेरे पास जमा रुपयोंमें से किया गया है। इस जमीन और मकानका ट्रस्ट बनाना है।

उपरोक्त साहसिक योजना यदि आपको पसन्द हो तो मुझे आपकी सहायता लेनी होगी; आपको भी यथाशक्ति मेरी सहायता करनी होगी तथा लोगोंसे भी इसके लिए कहना होगा। यदि आपकी इन सब प्रवृत्तियोंमें से अमुक प्रवृत्तिके लिए सहायता करनेकी इच्छा होगी तो आपके [द्वारा दी गई] रकम उसीपर व्यय की जायेगी। लेकिन अगर मेरी समस्त प्रवृत्तियोंमें पागलपनके सिवा आपको और कुछ दिखाई न दे

१. सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी।

तव भी आप लोगोंमें से, जो मुझे जानते हैं उनसे मेरी प्रार्थना है कि उन्हें मेरे आत्मिक सन्तोषकी खातिर ही मदद करनी चाहिए। जबतक मुझे अपनी भूल मालूम नहीं पड़ेगी तबतक ये प्रवृत्तियाँ मेरी जीवन-डोर होंगी। इन प्रवृत्तियोंमें मेरी देशसेवाकी [वृत्तिकी] चरम परिणति है।

मैं खुद वहाँ आकर आपसे मिलता लेकिन मुझे नौ महीने तक चम्पारनसे निकलनेकी कोई सम्भावना नहीं दिखाई देती। इस बीच प्रवृत्तियाँ जारी रहेंगी और खर्च भी होता रहेगा।

समाचारपत्रों द्वारा चन्दा माँगनेकी फिलहाल मेरी कोई इच्छा नहीं है। ऐसा करनेसे पहले अभी कार्यको आगे बढ़ानेकी तथा विशेष अनुभव प्राप्त करनेकी आवश्यकता है। आप जितनी बन सके उतनी मदद सीधे सत्याग्रहाश्रम, अहमदाबाद अथवा मुझे मोतीहारीके पतेसे भेजें तो ठीक होगा। आपके मित्रवर्गसे सहायता मिल सके तो प्रार्थना है कि वह भी लें। आप स्वयं आर्थिक सहायता देनेमें समर्थ न हों तो मेरी इच्छा है कि आप अपने समर्थ मित्रोंसे सहायता प्राप्त करें। कोई व्यक्ति अपने मित्र-समुदायसे बाहर जाकर सहायताकी याचना करे यह मैं नहीं चाहता।

प्रत्येक प्रवृत्तिसे सम्बन्धित हिसाब-किताब ध्यानपूर्वक रखा जाता है। और इस हिसाबका संक्षिप्त विवरण प्रतिवर्ष मित्र-वर्गमें वितरित करनेका इरादा है।

कोई प्रश्न पूछना चाहें तो पूछियेगा।

मोहनदास करमचन्द गांधीके वन्देमातरम्

गाँधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती मसविदे (एस० एन० ६३७८)से छपी हुई प्रतिसे।

सौजन्य: राधाबेन चौधरी

३५८. पत्र: मगनलाल गांधीको

मोतीहारी

आषाढ़ सुदी १२ [जुलाई २, १९१७][1]

चि० मगनलाल,

[मैंने] श्री यूबेंकको[2] लिखा[3] है कि उस विषयके सम्बन्धमें मुझे कुछ भी ज्ञान नहीं है। मैं चम्पारनमें कुछ महीने तक रुकूँगा। फिर भी यदि मुझे फुरसत मिली और वे मुझसे भाषण देनेका आग्रह करें तथा जिस विषयपर मुझे बोलना है उससे सम्बन्धित साहित्य भेजें तो मैं भाषण लिखनेका प्रयत्न करूँगा।[4]

१. इस दिन गांधीजी मोतीहारीमें थे।

२. बम्बईकी सहकारी समितियोंके पंजीयक।

३. पत्र उपलब्ध नहीं है।

४. देखिए "सहकारिताका नैतिक आधार", पृष्ठ ५४१-४६।

[काम करनेवाली] बाईको और अधिक समयके लिए रोका; इसमें कोई हर्ज नहीं। मुझे फकीराकी ओरसे पत्र मिला। उसके उत्तरमें[1], मैंने उसे वहाँ जानेके लिए लिखा है। तुम्हें तथा छोटालालको रसोई आदि फुटकर कामोंसे मुक्त होना ही चाहिए। मुझे पूरा विश्वास है, उसके बिना हम बुनाईके काममें आगे नहीं बढ़ सकते। यह कैसे सम्भव हो सकेगा, यह सोचना तुम्हारा काम है। सत्यदेवजीको[2] चक्कीके काममें लगाना। उन्हें मिर्चें देकर ठीक ही किया। हमारा उन्हें खानेके लिए मिर्चें दे देना भी यज्ञ है। देखें, यह फलीभूत होता है या नहीं। मेरा खयाल है केवल स्वास्थ्यके कारण यदि कोई मिर्चें खाता है तो चिन्ताकी कोई बात नहीं। यज्ञ करते समय मन प्रफुल्लित रहना चाहिए। हमने अच्छा समझकर ही इतना सब किया है और उसी उद्देश्यको ध्यानमें रखकर, उल्लसित मनसे उन्हें [मिर्चें] देंगे।

साथकी कतरन सँभालकर रखनेके लिए भेज रहा हूँ। तुमने वहाँ 'पाटलिपुत्र' मँगाया होगा। 'प्रताप' सबसे अच्छा समाचारपत्र माना जाता है, यह बात मुझे प्रयागमें मालूम हुई। यह भी मालूम हुआ कि उसका सम्पादक बहुत ही निःस्वार्थ व्यक्ति है।[7]

बापूके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५७२०) से।
सौजन्य : राधाबेन चौधरी

३५९. पत्र : फूलचन्द शाहको

मोतीहारी
आषाढ़ सुदी १३ [जुलाई ३, १९१७][3]

भाईश्री फूलचन्द,

इसके साथका पत्र[4] आप सब पढ़ें और फिर पूंजाभाईको दे दें। और प्रतियाँ तैयार होती जा रही हैं। सम्भव है पत्रके आँकड़ोंमें फर्क हो। यदि हो तो मुझे सुधारकर सूचित कर देना। विचार और तर्क आदिमें कुछ कहने योग्य हो तो कहना। कल एक प्रति अम्बालालभाईको[5] भेजी। पूंजाभाईके लिए आज भेज रहा हूँ। अन्य प्रतियाँ कल भेजी जायेंगी। फिर भी आपकी राय मैं माँगता हूँ। अंग्रेजी प्रति भी तैयार हो रही है।[6]

१. उपलब्ध नहीं है।
२. स्वामी सत्यदेव परिव्राजक; आश्रमके हिन्दी शिक्षक।
३. गांधीजी इस दिन मोतीहारीमें थे।
४. देखिए "आश्रम-कोषके लिए परिपत्र", १-७-१९१७
५. अम्बालाल साराभाई, अहमदाबादके एक उद्योगपति जिन्होंने गांधीजीके कार्य-कलापोंमें गहरी दिलचस्पी ली थी।
६. देखिए अगला-शीर्षक।
७. गणेशशंकर 'विद्यार्थी'; जो कानपुरके हिन्दु-मुस्लिम दंगे (१९३१) में बलि हुए।

साबुन बनाया? हिन्दी सीखनेवाले कितने लोग आते हैं? हिन्दीकी शिक्षा कैसी लगती है? संध्या प्रार्थनामें कितने लोग आते हैं?

मोहनदासके वन्देमातरम्

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (एस० एन० ६३६६) की फोटो-नकल से।

३६०. आश्रम-कोषके लिए परिपत्र

मोतीहारी
चम्पारन
[जुलाई ३, १९१७ को या उसके बाद][1]

प्रिय श्री शास्त्रियर,

मुझे अहमदाबादमें सत्याग्रह-आश्रम चलाते दो वर्ष हो चुके। आश्रमका उद्देश्य उन स्त्री-पुरुषों और बच्चोंको जुटाना है जो या तो स्वयं आजीवन राष्ट्रसेवा करना अपना लक्ष्य बना चुके हैं या जिनके माता-पिता अपने उन बच्चोंके जीवनका यह लक्ष्य स्थिर कर चुके हैं। आश्रममें बहुत-कुछ छंटनी करनेके बाद इस समय ३० सदस्य हैं जिनमें पुरुष, स्त्री और बच्चे सभी शामिल हैं। जबतक इसकी प्रवृत्ति आत्म-प्रशिक्षण तक सीमित थी, तबतक इसका खर्च उस सहायतासे चलता था जो मित्रोंसे मिल जाता था और इसके लिए कोई विधिवत् अपील करनेकी आवश्यकता नहीं होती थी। औसतन मासिक खर्च ४०० रुपये आता है और उसमें अस्थायी आगन्तुकोंका खर्च भी शामिल है; इन अस्थायी आगन्तुकोंकी संख्या खासी होती है।

किन्तु इसकी प्रवृत्ति धीरे-धीरे व्यापक हुई है और उसमें (१) हाथ-करघोंसे बुनाई (२) राष्ट्रीय ढंगकी शिक्षाके विकासका प्रयोग और (३) शिक्षित भारतीयोंके लिए समान-माध्यमके रूपमें हिन्दीका प्रचार समाविष्ट हो गये हैं।

इन प्रवृत्तियोंका अर्थ यह हुआ कि ऊपर मैंने जितना रुपया मिलनेकी बात लिखी है, उससे ज्यादा खर्च। इन प्रवृत्तियोंके विकासके लिए जमीनके काफी बड़े टुकड़ेपर स्थायी मकान बनाना जरूरी है। मेरे पास जितना रुपया था उसमें से केन्द्रीय जेलसे कुछ दूर साबरमतीके किनारे स्वास्थ्यके लिए एक अनुकूल स्थानमें लगभग ५० बीघे जमीन खरीद ली गई है। यहाँ कॉलेजके छात्र भी आसानीसे पहुँच सकते हैं और वे आश्रमके पुस्तकालयका, जिसमें काफी संख्यामें चुनी हुई पुस्तकें हैं और काफी पत्र-पत्रिकाएँ आती हैं, जिन्हें उनके प्रकाशक कृपापूर्वक मुफ्त भेजते हैं, अधिकाधिक संख्यामें उपयोग कर रहे हैं। भारत सेवक समाजके सदस्य श्री अमृतलाल वी० ठक्कर इसकी योजना बना रहे हैं। उनका मोटा अन्दाज है कि इमारतोंका खर्च १,००,००० रुपये आयेगा। शिक्षा-सम्बन्धी प्रयोगपर लगभग ५०० रुपये प्रतिमास

१. देखिए पिछला शीर्षक।

खर्च आ रहा है और हाथ-करघा उद्योगपर १०० रुपये प्रति मास। अगले वर्षमें हिन्दी प्रचारपर २०० रुपये प्रति मास खर्च होगा। शिक्षा और हिन्दी-प्रचारका खर्च क्रमशः बढ़ेगा। इसमें १०० रुपये मासिक मेरी यात्राका खर्च जुड़ जायेगा जो किसी-न-किसी सार्वजनिक प्रवृत्तिके सम्बन्धमें ही होता है। मेरी यात्राका यह खर्च आसानीसे जुट जाता है। इस प्रकार पूरी रकम होती है १,००,००० रुपये पूँजीगत खर्च और १,३०० रुपये तथा २०० रुपये मासिक क्रमशः बढ़ते हुए खर्चके लिए रखकर कुल १,५०० मासिक; अर्थात् अगले बारह मासका खर्च १८,००० रुपये।

मैं उपर्युक्त प्रवृत्तियोंका संक्षिप्ततम विवरण देनेका प्रयत्न करूँगा।

हाथ-करघा उद्योग मृतप्रायः अवस्थामें है। सभी मानते हैं कि मिलोंके वस्त्र-उद्योगका भविष्य कुछ भी हो, हाथ-करघा उद्योगको नष्ट न होने देना चाहिए। डॉ० मैनने[१] अपनी अभी हालमें प्रकाशित एक पुस्तिकामें कहा है कि उन्होंने कुछ विशिष्ट गाँवोंमें जो वर्तमान दरिद्रता देखी उसका कारण कदाचित् हाथ-करघोंका, जो खेतीके धन्धेकी पूर्ति करते थे, नष्ट हो जाना है। अतः आश्रमका उद्देश्य यह है कि प्रत्येक आश्रमवासी हाथसे कपड़ा बुनना सीखे और इस प्रकार इस कलाके रहस्यों और दोषोंका स्वयं अध्ययन करके इस उद्योगकी रक्षाके साधन ढूंढे। अब सभी आश्रमवासी, बुनकर वर्गके न होने पर भी, कुछ-न-कुछ इस कलाको सीख गये हैं। और कुछ तो इस कलामें खासी दक्षता प्राप्त कर चुके हैं। आश्रम इस समय कुछ बुनकर-परिवारोंका, जिनमें १७ प्राणी हैं, भरण-पोषण कर रहा है और एक परिवार इस कलाको आश्रममें सीखनेके बाद अपना स्वतन्त्र व्यवसाय जमा चुका है एवं उससे अपना निर्वाह करनेका प्रयत्न कर रहा है। आश्रममें सात करघे चल रहे हैं। उनमें ३,००० रुपयेकी पूँजी लगी है। यह उद्योग जल्दी ही अपने पैरोंपर खड़ा हो जायेगा। आश्रम लगभग ५०० रुपयेका कपड़ा बेच भी चुका है और कई लोग जो पहले विदेशी या देशी कारखानोंका बना घटिया कपड़ा पहना करते थे, अब आश्रमके बने मजबूत कपड़ेको व्यवहारमें ला रहे हैं। इस उद्योगसे १० वर्षमें सैकड़ों बुनकरोंके, जो फिलहाल अपना धन्धा अत्यन्त निराश होकर छोड़ चुके हैं, अपने धन्धेमें पुनः प्रतिष्ठित हो जानेकी आशा है। इस समय जो शिक्षाप्रणाली प्रचलित है और जो भारतकी आवश्यकताओंकी पूर्त्तिके लिए सर्वथा अनुपयुक्त मानी जाती है, वह पाश्चात्य प्रणालीकी भौंडी नकल है और उसका माध्यम एक विदेशी भाषा होनेके कारण स्कूलों और कॉलेजोंसे निकलनेवाले हमारे युवक निःसत्त्व हो गये हैं और क्लर्कों एवं पद-लोलुपोंकी एक सेना खड़ी हो गई है। उसके कारण मौलिकताका समस्त स्रोत सूख गया है, देशी भाषाएँ दरिद्र हो गई हैं और शिक्षित वर्गोंके सम्पर्कसे जन-साधारण जो उच्चतर ज्ञान पा सकते थे, वे उसके लाभसे वंचित हो गये हैं। इस प्रणालीका परिणाम यह हुआ है कि शिक्षित वर्गों और जन-साधारणके बीच एक खाई खुद गई है। उसने मस्तिष्कको गति अवश्य दी है; किन्तु शिक्षाका आधार धार्मिक न होनेसे आत्माको अभावग्रस्त रखा है और दस्तकारियोंका शिक्षण न देकर शरीरको क्षीण बना दिया है। पाठ्यक्रममें कृषिके प्रशिक्षणकी कोई उल्लेख-

१. पूना एग्रीकल्चर कॉलिजके, प्राध्यापक; **लैंड ऐंड लेबर इन ए डेकन विलेज** के लेखक।

नीय व्यवस्था नहीं की गई है; इस प्रणालीने इस अर्थमें भारतकी सबसे महत्त्वपूर्ण आवश्यकताकी ओर उदासीनता दिखाकर पाप किया है। इस समय आश्रममें जो प्रयोग किया जा रहा है उसमें उक्त दोषोंसे बचनेका प्रयत्न किया जा रहा है। शिक्षाका माध्यम प्रान्तीय भाषा है। हिन्दी समान-माध्यमके रूपमें पढ़ाई जाती है एवं हाथ-बुनाई और खेती आरम्भसे ही सिखाई जाती है। छात्रोंको यह सिखाया जाता है कि वे इनको जीविकाका साधन समझें और पुस्तकीय-ज्ञानको मन और मस्तिष्कके शिक्षण एवं राष्ट्रीय सेवाका साधन मानें। पाठ्यक्रम ऐसा तैयार किया गया है कि वर्तमान संस्थाओंमें स्नातकोंके पाठ्यक्रममें रखे गये सब मुख्य विषय १३ वर्षमें पूरे हो जायें। यह प्रयोग गुजरात कॉलेजके भूतपूर्व प्राध्यापक श्री शाहके सुपुर्द है। श्री शाह १० वर्ष तक प्रोफेसर गज्जरके साथ रहे हैं। उनके सहायक श्री नरहरि, बी० ए०, एल-एल० बी०; श्री फूलचन्द शाह, बी० ए०; श्री दत्तात्रेय कालेलकर, बी० ए०; श्री छगन-लाल गांधी और श्री किशोरलाल मशरूवाला, बी० ए०, एलएल० बी० हैं। श्री मशरूवालाके अतिरिक्त अन्य सभीने अपने और अपने परिवारोंके निर्वाह योग्य भत्ता लेकर अपना जीवन केवल इसी कार्यमें लगानेकी प्रतिज्ञा की है। श्री किशोरलालने अपनी सेवाएँ एक वर्ष तक बिना वेतन लिये दी हैं। उनके पास अपने निर्वाहके साधन हैं और यदि वर्षके अन्तमें उन्हें यह कार्य अनुकूल प्रतीत हुआ तो वे भी अपने शेष साथियोंका अनुगमन करेंगे। यह प्रयोग लगभग १२ लड़के-लड़कियों तक सीमित है। इनमें लड़कियाँ दो हैं। ये लड़के-लड़कियाँ या तो आश्रमके हैं या अध्यापकोंके बच्चे हैं। इसकी व्यवस्था गुजरात कॉलेजके उपाचार्य प्रा० आनन्दशंकर ध्रुव कर रहे हैं। मैंने इस प्रयोगपर बहुत बड़ी आशा बाँध रखी है। इसमें मेरी श्रद्धा अटूट है। यह असफल हो सकता है; किन्तु तब इसमें दोष प्रणालीका नहीं, बल्कि हम कार्यकर्ताओं-का होगा। यदि यह सफल हो जायेगा तो इसी नमूनेकी अन्य ऐच्छिक संस्थाएँ खोली जा सकती हैं और सरकारसे भी उसे हाथमें लेनेका अनुरोध किया जा सकता है।

हिन्दी जल्दीसे-जल्दी अंग्रेजीका स्थान ले ले, यह एक स्वयंसिद्ध उद्देश्य जान पड़ता है। हिन्दी शिक्षित वर्गोंके बीच समान-माध्यम ही नहीं, बल्कि जन-साधारणके हृदय तक पहुँचनेका द्वार बन सकती है। इस दिशामें देशकी कोई भाषा इसकी समानता नहीं कर सकती और अंग्रेजी तो कदापि नहीं कर सकती। एक मद्रास प्रान्त ही ऐसा है जिसके कारण कठिनाई उत्पन्न होती है; किन्तु मुझे दाक्षिणात्योंकी आत्मशक्ति और कल्पना-शक्तिमें पूरा विश्वास है और मैं जानता हूँ कि वे जल्दी ही हिन्दीको समान-माध्यमके रूपमें ग्रहण कर लेंगे। भाषाओंको सीखनेकी योग्यता जितनी मद्रासमें है उतनी किसी अन्य इलाकेमें नहीं। यह मेरा दक्षिण आफ्रिकाका अनुभव है। यद्यपि वहाँ बहुत बड़ी संख्या द्रविड़ोंकी है, फिर भी हिन्दी-भाषी जितनी जल्दी तमिल या तेलगू सीखते हैं उसकी अपेक्षा तमिल या तेलगू लोग हिन्दी ज्यादा जल्दी सीख लेते हैं।

बस, इन प्रयोगोंके निमित्त ही मैं आपसे आर्थिक सहायता माँगता हूँ। मुझे आशा है कि यदि आप इनमें से किसी भी प्रवृत्तिसे सहमत हैं तो आप जो कुछ दे सकते हैं मुझे भेज देंगे। यदि आप चाहें तो अपने दानकी रकम किसी खास कामके लिए निर्धारित कर सकते हैं।

जमीन और इमारतोंका एक न्यास बना दिया जायेगा। विविध विभागोंके खर्चका सही हिसाब रखा जा रहा है और दानी महानुभावोंको विवरण भेजा जायेगा।

यदि पत्रोंकी मारफत सहायताके लिए अपील किये बिना काम चले तो मैं अभी ऐसी अपील करना नहीं चाहता। अभी ये प्रवृत्तियाँ इतनी प्रगति नहीं कर पाई हैं कि ऐसी अपील करना वांछनीय हो। किन्तु मुझे उन लोगोंसे जो मुझसे व्यक्तिशः परिचित हैं, विश्वासपूर्वक यह प्रार्थना करनेमें कोई झिझक नहीं है कि वे मुझे या तो स्वयं सहायता दें या अपने मित्रोंको सहायता देनेकी सलाह दें।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

गांधीजीके हस्ताक्षरयुक्त टाइप किये हुए मूल अंग्रेजी परिपत्र (जी० एन० ६२९७) की फोटो-नकल से; दफ्तरी प्रति (एस० एन० ६३७८) की फोटो-नकलसे भी।

३६१. पत्र : वाइसरॉयके निजी सचिवको

वांकीपुर
जुलाई ७, १९१७

प्रिय श्री मैफी,

मैं चम्पारन समितिके कार्यके सिलसिलेमें रांची रवाना हो चुका हूँ और रास्तेसे यह पत्र एनी बेसेंट-सम्बन्धी आन्दोलनके सम्बन्धमें लिख रहा हूँ। चूंकि मैं इस आन्दोलनके नेताओंसे सम्पर्क रखे हुए हूँ, उनका ध्यान इस सम्बन्धमें अपने विचारोंकी ओर आग्रहपूर्वक खींच रहा हूँ,[1] और इसलिए एक प्रकारसे इस आन्दोलनमें भाग ले रहा हूँ, मैं यह अनुभव करता हूँ कि मुझे वाइसरॉय महोदयके समक्ष वस्तुस्थिति और इस आन्दोलनमें अपनी स्थिति स्पष्ट कर देना आवश्यक है।

मेरी विनीत सम्मतिमें ये नजरबन्दियाँ करना एक बहुत बड़ी भूल हुई है। इनसे पहले मद्रासमें पूर्ण शान्ति थी। अब वहाँ भारी उथल-पुथल है। भारतने समग्र रूपसे श्रीमती बेसेंटका साथ नहीं दिया था; किन्तु अब वे अपने तरीकोंको भारतसे बहुत हदतक मनवा चुकी हैं। बहुत थोड़ा-सा अवकाश पाकर मैं उस संस्थाके कार्यसे अहमदाबाद गया था, जिसे चला रहा हूँ। वहाँसे लौटते हुए मैं बम्बई और इलाहाबाद रुका और तब मुझे स्थितिका कुछ अनुमान हुआ। मैं स्वयं श्रीमती बेसेंटके तरीकोंको अधिक पसन्द नहीं करता। मुझे लड़ाईके दिनोंमें राजनैतिक प्रचार करनेका विचार पसन्द नहीं आया है। मेरी विनम्र सम्मतिमें, हमारा संयम ही सर्वोत्तम प्रचार होता, किन्तु समस्त देश मेरे विरुद्ध है। और श्रीमती बेसेंटने त्याग किया है, और वे भारतसे प्रेम करती हैं या उनकी इच्छा पूर्णतः वैध कार्य करनेकी है, इससे कोई

१. देखिए "पत्र: जे० बी० पेटिटको", ३०-६-१९१७।

इनकार नहीं कर सकता। इस वातसे भी इनकार नहीं किया जा सकता कि देश ऐसा प्रचार करना चाहे तो उसे इसका अधिकार है। हममें से बहुत-से लोगोंका श्रीमती बेसेंटसे मतभेद है; किन्तु उनकी शक्ति और निष्ठाको सभीने स्वीकार किया है। कांग्रेस श्रीमती बेसेंटपर 'कब्जा' करनेका प्रयत्न कर रही थी और श्रीमती बेसेंट कांग्रेसपर। अब वे दोनों लगभग एक हो गये हैं। मैं आपसे पूर्ण हार्दिक अनुरोध करता हूँ कि सरकारको अधिकसे-अधिक साहसपूर्ण नीति अपनानी चाहिए अर्थात् अत्यन्त स्पष्टतापूर्वक अपनी इस ज़बरदस्त भूलको स्वीकार कर लेना चाहिए। वह नजरबन्दीकी आज्ञाओंको वापस ले ले और यह घोषित कर दे कि देशको ऐसा कोई भी प्रचार, जो ब्रिटेनके संविधानके विरुद्ध न हो और हिंसासे सर्वथा मुक्त हो, करनेका अधिकार है। ऐसी कार्रवाई दुर्बलताकी नहीं, शक्तिकी सूचक होगी। इसे वही सरकार कर सकती है जो सदा न्याय ही करना चाहती है, और जिसमें अन्यायको कुचलनेकी शक्ति हो।

यदि दुर्भाग्यसे सरकारने भीरुताका परिचय दिया तो देशकी शान्ति नष्ट हो जायेगी और हिंसाकी भावना भी अवश्य फैलेगी। खुली हिंसाकी बात समझमें आती है और वह सँभाली जा सकती है। सम्भव है, खुली हिंसाकी बजाय गुप्त हिंसा करनेका प्रयत्न किया जाये। उसका उत्तरदायी कोई नहीं होगा और न उसका दायित्व कोई अनुभव करेगा। मैं देखता हूँ, और मुझे इसका दुःख है कि युवक, जिनका मार्गदर्शन कोई खास व्यक्ति नहीं कर रहा है, इस दिशामें वह रहे हैं। मैंने अपना जीवन इस रोगको बढ़नेसे रोकनेके लिए और जहाँतक यह जड़ पकड़ गया है वहाँतक उसकी जड़ें खोदनेके लिए अर्पित कर दिया है। मैंने युवकोंके सम्मुख और सामान्यतः भारतीयोंके सम्मुख नम्रतापूर्वक एक अधिक अच्छा और अधिक प्रभावकारी तरीका रखा है और वह है आत्मबल या सत्यबल या प्रेमबलका तरीका, जिसे मैंने कोई अधिक उपयुक्त शब्द न मिलनेसे निष्क्रिय प्रतिरोध कहा है। और मैं नेताओंसे इस तरीकेको इस नाजुक मौकेपर पूरी तरह और साहसके साथ स्वीकार कर लेनेका अनुरोध कर रहा हूँ। इसमें अन्ततक स्वयं ही कष्ट सहना होता है और वह भी अकेले। संसारकी कोई भी सरकार निर्दोष लोगोंको लगातार कैद नहीं रख सकती और न परेशान कर सकती है। ब्रिटिश सरकारमें भी यह सामर्थ्य नहीं है। उसका बहुत बड़ा रहस्य और विशिष्ट गुण यह है कि वह जब कोई अनुचित कार्य भी करती है तब भी संसारके सम्मुख नैतिक आधारपर उसका औचित्य सिद्ध करनेका प्रयत्न करती है।

मेरा खयाल है, मैं अपनी बात पर्याप्त स्पष्ट कर चुका हूँ। आशा है, मैंने जो कुछ कहा है उसका अर्थ गलत न लगाया जायेगा। मैंने इस पत्रको लिखनेकी जो धृष्टता की है उसके लिए क्षमा चाहता हूँ और अपने प्रस्तावकी स्वीकृतिके लिए हार्दिक प्रार्थना करता हूँ।

कृपया इस पत्रको वाइसरॉय महोदयके सम्मुख प्रस्तुत कर दें। यदि शिमलामें मेरी उपस्थिति आवश्यक हो तो वे जब कहें मैं आ सकता हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

पुनश्च:

मैं इस ११ तारीख तक रांचीमें रहूँगा। यहाँ मेरा पता होगा, मारफत श्री सहाय और उसके बाद, मोतीहारी, चम्पारन।

मो० क० गां०

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० ६३७२) की फोटो-नकलसे।

३६२. पत्र : एस्थर फैरिंगको

रांची
जुलाई ८, १९१७

प्रिय एस्थर,

मैं यहाँ समितिके कामके सम्बन्धमें आया हूँ। मैं यहाँसे ११ तारीखको मोतीहारी रवाना हो जाऊँगा। यह स्थान पठारपर स्थित होनेसे स्वास्थ्यवर्धक माना जाता है।

इसके साथ 'पायनियर'को लिखे गये पत्रकी[1] नकल भेजता हूँ। मैं जानता हूँ कि यह तुम्हें पसन्द आयेगा। पत्रसे यहाँ खासी खलबली पैदा हो गई है। अभीतक तो इसकी प्रतिक्रिया अच्छी ही हुई है।

'द ग्रेटेस्ट थिंग इन द वर्ल्ड'[2] यहाँ नहीं मिल सकी। क्या तुम इसकी एक प्रति पोलकको भेज सकोगी? मैंने अनुच्छेदोंकी नकल करके उसे भेज दी थी। अब उसने पुस्तिका माँगी है। जो पुस्तिका मेरे पास है वह काममें आ रही है।

तुम्हारा,
बापू

[अंग्रेजीसे]
माय डियर चाइल्ड

१. देखिए "पोशाकके बारेमें **पायनियर**को उत्तर", ३०-६-१९१७।
२. हेनरी ड्रमंड द्वारा लिखित; देखिए "पत्र : एस्थर फैरिंगको", ११-६-१९१७।

३६३. पत्र : रामनवमी प्रसादको

रांची

[जुलाई ८, १९१७के लगभग]

भाईश्री रामनवमी प्रसाद,

बाबु बृजकीशोरजीके मुंसे आपका शरीरकी हालत सुन कर मेरा हृदय रोता है। आपको बीमारी होना नहि चाहीये। देशका काम तो बहुत ही करना है और देशके सिपाही लोग रोगग्रस्त हो जायेंगे तो क्या हाल होगा? इस बातका ख्याल करके बीमारीको हटा देनेका प्रयत्न करोंगे ऐसी मेरी उमेद है। वैदोंसे रोग नाबुद नहि होगा। रोगका कारण स्वच्छंद है। उसकी दवा संयम है। हमेशा हम स्वच्छंद देख नहि सकते हैं। हमेशा कीस प्रकारका संयम करना वह मालुम नहि पड़ता है। परन्तु विचार करनेसे दोनों चीज दृष्टिगोचर होती है।

आपका,

मोहनदास गांधी

गांधीजीके हस्ताक्षरोंमें मूल पत्र (जी० एन० ७३४) की फोटो-नकलसे।

३६४. पत्र : फूलचन्द शाहको

रांची

रविवार [जुलाई ८, १९१७][1]

भाईश्री फूलचन्द,

मैंने जैसा पत्र[2] पूंजाभाईको भेजा है उसी आशयके पत्र निम्नलिखित व्यक्तियोंको भेज दिये गये हैं अथवा भेज दिये जायेंगे; अम्बालाल साराभाई, रणछोड़भाई पटवारी, बेचरलाल कालीदास, कुंवरजी आनन्दजी, गोविन्दजी डाह्याभाई, शुक्ल बैरिस्टर,[3] देवचन्दभाई बैरिस्टर,[4] डॉक्टर मेहता, मंगलदास सेठ,[5] नरोत्तमदास मोरारजी,[6] ललुभाई

१. पूंजाभाईको लिखे गये पत्रके उल्लेखसे लगता है कि यह "पत्र: फूलचन्द शाहको", ३-७-१९१७के बाद लिखा गया था। इसके सिवा रविवार, ८ जुलाईको गांधीजी रांचीमें ही थे और वहाँसे गुरुवार १२ जुलाईको वापस मोतीहारी लौट गये थे।

२. देखिए "पत्र: फूलचन्द शाहको", ३-७-१९१७।

३. राजकोटके दलपतराम भवानजी शुक्ल; लन्दनमें गांधीजीके सहपाठी।

४. देवचन्द पारेख: गांधीजीके सहपाठी और मित्र।

५. अहमदाबादके उद्योगपति; अहमदाबादमें आश्रमकी स्थापनाके समय गांधीजीकी आर्थिक सहायता की थी।

६. बम्बईके व्यापारी और उदार दलीय राजनीतिज्ञ; जिन्होंने गांधीजीके कार्य-कलापोंमें गहरी दिलचस्पी ली थी।

सामलदास,[1] डॉक्टर एदल बहराम, रेवाशंकरभाई,[2] मनसुखलाल, रामजीभाई, मद्रासके सीताराम पंडित,[3] रतिलाल सेठ, कामेश्वर पंड्या, अमृतलाल ठक्कर, गोपालजी ठक्कर,[4] कृष्णराव, पट्टणी,[5] शंकरलाल बैंकर।[6] इनके अलावा तुम्हें, मगनलालको अथवा अन्य लोगोंको कोई और नाम सूझे तो मुझे लिखना। भाई पोपटलाल चुडगरको[7] तथा अपने पोपटलालको भी भेजनेका विचार है। साथमें अंग्रेजी प्रति[8] भेज रहा हूँ। इसी तरह मद्रास आदि स्थानोंमें गैर-गुजराती लोगोंको भेजा गया है। वहाँसे कोई उत्तर अथवा पैसा आये तो सूचित करना।

'पायनियर' में श्री इर्विनका पत्र था। मुझे उसपर टीका करनेका अवसर मिल गया और इसलिए मैंने उत्तर[9] लिखा। वह उत्तर वहाँ देखनेमें तो आया होगा। फिर भी चूँकि मेरे पास अनेक कतरनें आ गई हैं, एक कतरन भेज रहा हूँ। इस पत्रका जितना असर हुआ है उतना बहुत सारे भाषणोंका भी नहीं होता। [मेरा खयाल है] समस्त कतरनें जमा की गई होंगी। 'बंगाली' में से कतरन वहाँ नहीं मिली होगी, वह भी भेजता हूँ।

मैं यहाँ बुधवार तक हूँ। बादमें मोतीहारी जाऊँगा। तुम्हारे पत्र वहाँ मिलें तो अच्छा। यह सम्भव है कि एनीबाईके[10] सम्बन्धमें मुझे २१ तारीख तक बम्बई आना पड़े।

मूलजीभाईकी तबीयत कैसी रहती है इसके सम्बन्धमें अवश्य लिखते रहना। पूंजाभाई मारवाड़ जानेवाले थे, क्या वे गये? बम्बईसे पुस्तकें आनेवाली थीं, क्या वे आ गईं?

शिवपूजनके[11] सन्दूकके सम्बन्धमें कुछ बन्दोबस्त हुआ? चि० मगनलालको इस बातकी खबर है। क्या आश्रमवासी हिन्दी सीखनेका लाभ स्वामीजीसे ले सकते हैं? मेरी समझमें स्त्रियां यह लाभ नहीं ले पायेंगी।

मोहनदासके वन्देमातरम्

१. बम्बईके व्यापारी और उदार दलीय राजनीतिज्ञ; पश्चिम भारतमें सहकारी-आन्दोलनके प्रवर्तक।

२. झवेरी।

३. राजकोटके बैरिस्टर जो गांधीजीके मित्र थे।

४. भावनगरके व्यापारी।

५. सर प्रभाशंकर दलपतराम पट्टणी (१८६२–१९३७), भावनगर रियासतके दीवान; इंडिया कौंसिलके सदस्य १९१७–१९१९।

६. शंकरलाल बैंकर (जन्म १८८९–) **यंग इंडिया**के प्रकाशक। वे १९२२ में गांधीजीके साथ जेल गये।

७. राजकोटके बैरिस्टर; जो बादमें सौराष्ट्र उच्च न्यायालयके जज भी रहे; काफी समय तक रियासतके जन-आन्दोलनसे सम्बन्धित।

८. देखिए "आश्रम-कोषके लिए परिपत्र", ३–७–१९१७ को या उसके बाद।

९. देखिए "पोशाकके बारेमें **पायनियर**को उत्तर", ३०–६–१९१७।

१०. श्रीमती एनी बेसेंट।

११. एक बालक जो अगस्त १९१४ में मगनलाल गांधीके साथ फीनिक्ससे भारत आया था।

इस पत्रके लिखनेके बाद तुम्हारी चिट्ठी मिली है। आँकड़े प्राप्त हुए। मैं देखता हूँ कि यह बड़ी मेहनतका काम है। कोई जानने योग्य खर्च अथवा आमदनी हो तो मुझे तुरन्त भेजना। बाकीकी चिन्ता नहीं करनी चाहिए। २० रुपये . . . की माँके लिए भेजे जाते हैं। इस रकमको आश्रमके हिसाबमें चढ़ा देना चाहिए।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (एस० एन० ६३७६) की फोटो-नकलसे।

३६५. अनाथाश्रमके लिए दो शब्द[1]

[जुलाई ११, १९१७ से पूर्व]

हिन्दुस्तानकी यात्रामें मैंने अनेक अनाथाश्रम देखे हैं, कुछको गहरी दिलचस्पीके साथ और कुछको सरसरी तौरपर। उनमें से कुछपर अपने विचार मैंने व्यवस्थापकोंको बताये हैं। सब लोगोंको अपने विचारोंके प्रति श्रद्धा होती है; मुझे भी है। मुझे लगता है कि यदि ये विचार जनताके समक्ष रखे जायें तो इसमें बुराईकी कोई बात नहीं।

अनाथाश्रम [शब्द] की व्याख्या तो यही हो सकती है कि वह अनाथ लोगोंको आश्रय देकर सनाथ बनानेका स्थान है। इन आश्रमोंके सम्बन्धमें अनाथका विशेष अर्थ, माँ-बाप अथवा संरक्षकोंसे रहित बालक, करनेमें आया है। ये आश्रम संरक्षकोंके अभावको पूरा करनेका दावा करते हैं अथवा उन्हें करना चाहिए। अनाथाश्रम अंग्रेजी शब्द 'ऑरफनेज' का अनुवाद है। अनाथ शब्दका यह अर्थ होनेपर भी अनाथाश्रमोंमें बालकोंके अलावा जो अपनी आजीविका कमा सकते हैं वैसे युवकोंको लिया जाता है। और फिर अपंग, लूले, लँगड़े और अन्धोंको भी दाखिल किया जाता है। और अब तो अज्ञात माता-पिताओंके सद्यःजात बच्चोंको भी इन आश्रमोंमें स्थान मिलता है। मेरा खयाल है कि इससे उक्त उद्देश्योंकी पूर्तिमें अधिक मदद मिलती है। इन आश्रमोंको ऊपरी तौरपर देखनेसे विशेष परोपकार वृत्तिका आभास मिलता है लेकिन गहराईसे देखनेके बाद पता चलेगा कि ये आश्रम व्यापारिक वृत्तिको ध्यानमें रखकर बनाये जाते हैं। जिस प्रकार कृपण व्यक्ति अपने धनपर अधिकसे-अधिक सूद लेनेकी कामना करता है और अन्तमें अधोगतिको प्राप्त होता है, अनाथाश्रमोंका भविष्य भी ठीक वैसा ही है; इसमें मुझे तनिक भी सन्देह नहीं। मैंने सावधानी बरतनेकी खातिर 'भविष्य' शब्दका प्रयोग किया है। मुझे तो वर्तमानमें ही उनकी पतितावस्था दिखाई देती है। यह व्यवस्था हमारी भयभीत मनःस्थिति और अश्रद्धाकी सूचक है। हम मान लेते हैं कि संस्थाओंके लिए हमें बड़ी मुश्किलसे धनिकोंकी मदद मिलती है। "हमें अपंगोंकी रक्षा तो करनी ही पड़ेगी। गुप्त रीतिसे पैदा हुए बच्चोंकी रक्षा भी हमें करनी ही पड़ेगी; इसलिए, जो कुछ मिला है उसीसे इस कार्यको पूरा करें," यह निकृष्ट दृष्टिकोण

१. यह लेख मूलतः मराठी पत्रिका चित्रमय जगत्‌में प्रकाशित हुआ था। ११–७–१९१७के खेडा वर्तमानमें भी इसकी चर्चा की गई थी।

है। मेरा तो विश्वास है कि अच्छे कार्योंके लिए भारत-जैसे गरीब देशमें भी पैसा मिल सकता है। कार्य अच्छा है, यह सावित करना कार्यकर्त्ताओंके हाथमें है। जो संस्थाएँ क्षीण हो गई हैं उसका कारण धनकी कमी नहीं लेकिन दृढ़, श्रद्धालु तथा चरित्रवान् कार्यकर्त्ताओंकी कमी है। यह मान्यता सही अथवा गलत, चाहे जो हो, यह वात तो पक्की है कि अनाथाश्रम एक साथ तीन घोड़ोंपर चढ़नेका प्रयत्न करते हैं लेकिन तीनोंमें से एकको भी सँभाल नहीं सकते।

उपरोक्त स्थितिमें अनाथ वालक सनाथ कैसे हो सकते हैं? उन्हें निरन्तर अपनी [अनाथ] स्थितिका भान होता रहता है। हम इन आश्रमोंमें अपने वालक कभी नहीं भेजते। यदि ये आश्रम अनाथोंके नाथ हों तो व्यवस्थापकोंके वालक भी इनमें देखनेको मिलें। वे [व्यवस्थापक] निधड़क होकर किसी और कारणसे नहीं तो अपनेको कसौटी-पर कसनेकी खातिर ही अपने वालकोंको अनाथ वालकोंके साथ रखें। अपने गहरे अनुभवके कारण मैं यह कहना चाहता हूँ कि यह माँग वहुत अधिक नहीं है। अनाथ वालकोंको अपंगोंके साथ रखा जाता है इतना ही नहीं और भी वहुत-सी चीजें ऐसी होती हैं जिनसे इन वालकोंको अपनी हेय स्थितिका भान वना रहता है। यदि अनाथ-आश्रम केवल अनाथ वच्चोंके लिए ही हों तो वे थोड़े ही समयमें स्वावलम्वी वन सकते हैं। इस सम्वन्धमें हम साल्वेशन आर्मी[1] (मुक्ति-सेना) से वहुत-कुछ सीख सकते हैं। वे जो अनाथाश्रम चला रहे हैं उनमें प्राण है। हमारे आश्रम तुलनात्मक दृष्टिसे निष्प्राण हैं। उन्होंने हजारों वालकोंको आश्रय दिया है, उन्हें आदमी वनाया है, उन्हें धन्धों-में लगाया है। हमारे आश्रमके वालकोंको इस तरहका संरक्षण नहीं मिला है। कुछ-एक वालकोंको छोटी नौकरियाँ मिली हैं। इनका लेखा-जोखा करनेकी आवश्यकता नहीं। हमारे यहाँ वालकोंके वड़े हो जानेपर उन्हें अधिकतर छुट्टी दे देनेकी रीति प्रचलित है। मुक्ति-सेनामें ऐसा कुछ नहीं है। जैसे परिवारमें वच्चे वड़े होते हैं तव उन्हें परिवारमें एक रक्षक तथा पोपक वढ़ गया, इस रूपमें माना जाता है वैसे ही वहाँ अवस्थाको प्राप्त होनेपर वालक कारखानोंमें काम करने लग जाते हैं। हमारे आश्रमोंमें भी वैसे ही कौटुम्विक-न्यायका समावेश करनेकी आवश्यकता है।

जैसे हम अनाथ वच्चोंको रहने, खाने और पहननेके लिए देते हैं, वैसे ही उन्हें शिक्षा और आश्रमके कारखानोंमें नौकरी दे सकते है। आश्रममें हम महान् राष्ट्रीय प्रयोग कर सकते हैं, राष्ट्रीय पद्धतिके अनुसार शिक्षा दे सकते हैं, उद्योग सिखा सकते हैं, खेती सिखा सकते हैं और जो धन्धे नष्ट होते जा रहे हैं उन्हें वचा सकते हैं। ऐसी व्यवस्थाके परिणामस्वरूप आजके अनाथ वालक कल अपने आश्रमके शिक्षक, कारीगर तथा नेता वन सकते हैं। इन आश्रमोंमें ही हम अपने वातावरणके अनुकूल भारत-प्रतिरक्षा सेना उत्पन्न कर सकते हैं।

यदि मेरा यह खयाल ठीक हो तो समस्त आश्रमोंके अथवा वम्वई क्षेत्रके आश्रमोंके नेताओंको एकत्रित करके उनकी राय लेनेके वाद सव आश्रमोंके लिए एक पद्धति निश्चित कर ली जा सकती है। सवके लिए एक ही व्यवस्थापक मण्डल हो सकता

१. विलियम वूथ द्वारा १८८० में सेवा और धार्मिक प्रचारके लिये प्रारम्भ किया गया संगठन।

है, वही सबकी देखरेख कर सकता है और अनुभवके आधारपर जो संशोधन-परिवर्धन उचित जान पड़ें सो सुझा सकता है। ऐसी संगठित योजनाके लिए अगर हम [अभी] तैयार नहीं हुए है तो जिन आश्रमोंमें अन्य आश्रमोंकी अपेक्षा अधिक जीवन है उनमें उपरोक्त पद्धति लागू की जा सकती है।

मैंने कुछ-एक आश्रमोंमें आग्रहपूर्वक बच्चोंको आश्रममें बनाये रखनेकी प्रथा देखी है। मुझे तो इस कदममें विचारका अभाव लगता है। जो बच्चे आश्रममें नहीं रहना चाहते वे अनाथ नहीं बल्कि स्वतन्त्र हैं। आश्रमोंका मूल्य अनाथोंकी संख्यासे नहीं बल्कि वे कितने नागरिक उत्पन्न करते हैं इस बातसे आँका जाना चाहिए।

अपंगोंके लिए जितने आश्रमोंकी आवश्यकता है उतने आश्रम विद्यमान हैं। जहाँ आवश्यकता हो वहाँ अलगसे ऐसे आश्रम खोले जाने चाहिए यह बात स्पष्ट करनेकी कोई जरूरत नहीं दिखाई देती।

अज्ञात माता-पितासे उत्पन्न बच्चोंके प्रवेशका सवाल गम्भीर है। मैं यह बात ठीक-ठीक नहीं समझ पाया हूँ कि उनको प्रवेशकी सुविधा प्रदान करनेमें क्या औचित्य है? मुझे कुछ ऐसा आभास होता है कि ऐसी सुविधा प्रदान करनेसे विषय-वृत्तिको बढ़ावा मिलता है। और फिर इसे तो किसी भी प्रकार सिद्ध नहीं किया जा सकता कि येनकेन प्रकारेण उत्पन्न जीवोंको जीवित बनाये रखनेके लिए हम असंख्य प्रयत्न करें और उन्हें मरने न दें — यह भी जीवदयाके ही अन्तर्गत आ जाता है। इस प्रकारका प्रयत्न करना तो व्यर्थ ही है। ऐसा करनेमें तो एक प्रकारसे अहंताका गूढ़ भाव समाया हुआ है। मुझे तो क्षण-क्षणपर यह प्रतीति हो चली है कि जीवदयाका अर्थ इतना सरल नहीं है। पर चूंकि इस विषयसे मैं अपनी एकता मानता हूँ इसीलिए इसपर कुछ अधिकारपूर्वक लिखनेकी हिम्मत कर रहा हूँ। भूत दयाका आधार इस बातपर तो कतई अवलम्बित नहीं है कि अमुक संस्थामें जीवोंको बचाया जाये। भूत दया तो मूल-रूपमें ही आत्माका गुण है। यही कारण है कि कोई जीव दयापूर्ण आत्माके सम्पर्कमें आते ही उसकी अनुकम्पाका प्रत्यक्ष अनुभव करने लगता है। जीवदयाका प्रश्न गणितका प्रश्न नहीं है। सड़े हुए आटेमें असंख्य जीव उपद्रव मचाते रहते हैं; ऐसे आटेका संग्रह भूतदया नहीं माना जायेगा। बल्कि उसे गाड़कर या जलाकर नष्ट कर देनेमें ही भूतदया है; यद्यपि दोनों कामोंके कारण आटेमें के जीवोंका तो नाश ही होगा। अपने शरीरको स्वच्छ रखनेके प्रयासमें भी हम असंख्य जीवोंका नाश कर देते हैं। विशुद्ध भूतदया तो उन उपायोंकी खोज करेगी जिससे आटा सड़ने ही न पाये और न शरीर अस्वच्छ होने पाये। ठीक इसी प्रकार सच्ची भूत दया अज्ञात बालकोंके जन्मके कारणोंकी खोज करेगी और पवित्रताके विस्तारके उपाय ढूंढेगी। वह ऐसे अज्ञात जन्मका भार उठाकर उसकी अपवित्रतापर पर्दा नहीं डालेगी; उससे तो वह निर्भय हो जायेगी और प्रोत्साहन पाती रहेगी।

यह कहनेकी आवश्यकता नहीं कि मेरी यह टीका सहयोगी वृत्तिसे ही की जा रही है, आक्षेपमूलक नहीं। और ऐसा भी नहीं है कि यह सारी टीका सभी आश्रमों-पर लागू होती है। मेरे लेखका हेतु तो यही है कि ऐसे सारे आश्रम उच्चतम स्थितिको पहुँच पायें।

हम प्रायः देखते हैं कि हमारी अनेक संस्थाओंमें वणिक वृत्ति छाई है। पर इसे हमें गौण स्थान देना चाहिए। और (साहसपूर्ण) क्षात्रवृत्तिको, (दीर्घ दृष्टिवाली) ब्राह्मणवृत्तिको, और मुख्य रूपसे (सेवा-परायण) शूद्रवृत्तिको प्रधानता देनी चाहिए। इसकी आज आवश्यकता है।

[गुजरातीसे]

महात्मा गांधीजीनी विचारसृष्टि

३६६. पत्र : एस्थर फैरिंगको

मोतीहारी
जुलाई १४, १९१७

प्रिय एस्थर,

अभी रांचीसे लौटनेपर तुम्हारा पत्र देखा।

तुमने शाकाहार आरम्भ कर दिया है यह तुमने मुझे कभी नहीं लिखा। मुझे विश्वास है कि धार्मिक महत्त्वकी बात छोड़ दें तो भी यह इस जलवायुके लिए उपयुक्त है। नया शाकाहारी अपने सामिष आहार-कालमें दाल, मक्खन, पनीर और दूध जिस परिमाणमें खाता था उससे उसे अधिक खानेके लिए कहा जाता है। यह भूल है। दालें कम ही खाई जायें। यदि दूध पर्याप्त मात्रामें पिया जाये तो फिर बहुत कम मक्खन खानेसे काम चल जाता है।

मेरी सम्मतिमें अनावश्यक चीजें रखना ठीक नहीं है; यह मानी हुई बात है कि जिसके पास ऐसी चीजें होंगी उसे जिन्हें इन चीजोंका लोभ हो उन लोगोंसे उनकी रक्षा करनी होगी। इसके लिए सावधानी और सँभालकी आवश्यकता होती है, जिसका सदुपयोग हम अन्य अधिक महत्त्वपूर्ण मामलोंमें कर सकते हैं। और फिर हम चीजोंके प्रति अपने-आपको कितना ही निर्मोही क्यों न मानें, उनके खो जानेकी मनमें कसक बनी रहती है।

समितिकी बैठक सोमवारको आरम्भ होगी।

तुमने मेरी पत्नीको बहुत सोच-विचार कर जो उपहार भेजे हैं उन्हें देखकर मुझे प्रसन्नता हुई है।

तुम्हें हम सबका प्यार।

तुम्हारा,
बापू

[अंग्रेजीसे]

माई डियर चाइल्ड

३६७. पत्र : मगनलाल गांधीको

मोतीहारी

आषाढ़ वदी ११, संवत् १९७३ [जुलाई १५, १९१७]

चि० मगनलाल,

वहाँ जिस प्रकारका, जो कपड़ा तुम बचा सकते हो उसको सन्दूकमें रखकर मोतीहारी भेजना।

[कपड़ेको] कटवाकर प्रति गजके हिसाबसे कीमत लिख भेजना और प्रत्येकके ऊपर गोंदसे चिट चिपका देना भी ठीक होगा। धोतियाँ, ४० इंच और ५० इंचकी दस-दस गज लम्बी, जितनी भेज सको उतनी चाहिए। हाथ पोंछने और नाक पोंछनेके लिए रुमाल चाहिए। खुरदरा कपड़ा भी चाहिए। टोपियोंकी भी आवश्यकता है। क्या वहाँ रहनेवाली स्त्रियोंसे यह काम नहीं लिया जा सकता? उन्हें कुछ मजूरी देना। टोपियाँ हाथकी बनी हुई होनी चाहिए, भले ही उनके दाम अधिक हों। क्या तुम्हें सन्तोकके नाम लिखा हुआ मेरा पत्र[1] मिला? उसकी प्राप्तिकी सूचना नहीं मिली। भाई फूलचन्दसे कहना कि वे मुझे हर सप्ताह आँकड़े न भेजा करें। जानने योग्य ही भेजा करें तो काफी है।

१. स्वामीजी हिन्दी कितनी और कैसी सिखा पाते हैं?
२. हिन्दी सीखने कितने लोग आते हैं?
३. तुमने शहरमें वर्ग खोला है?
४. आनन्दशंकरभाई वापस आनेवाले थे; क्या वे आ गये? उन्होंने [हिन्दी] सिखाना शुरू किया?
५. दूसरी जमीन खरीदनेकी बात थी, उसका क्या हुआ?
६. छोटालाल रसोईके कार्यसे बिलकुल मुक्त हो सका है या नहीं? इन सब प्रश्नोंका उत्तर भाई फूलचन्द अथवा तुम देना।

बापूके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५७१९) से।
सौजन्य : राधाबेन चौधरी

१. उपलब्ध नहीं है।

३६८. भाषण: चम्पारन जाँच समितिकी बैठकमें

बेतिया
जुलाई १९, १९१७

चम्पारन कृषि-पद्धति जाँच-समितिकी बैठक आज फिर आरम्भ हुई। प्रारम्भमें अध्यक्षने[1] कहा: हमारे सामने प्रस्तुत कुछ लिखित बयानोंमें ऐसी घटनाएँ दी गई हैं जो कई वर्ष पूर्व हुई थीं; इसमें से कुछ बीससे पच्चीस वर्ष तक पुरानी हैं। हमारा जाँचमें इतने पीछेके समयको सम्मिलित करना नितान्त असम्भव है। हमारी जाँच चम्पारन जिलेमें किसानोंकी वर्तमान अवस्थासे सम्बन्धित है और हमारा पिछले इतिहाससे सम्बन्ध उसी हदतक रहेगा जिस हदतक उससे वर्तमान स्थितियोंपर प्रकाश पड़े। मेरा खयाल है कि जो इक्के-दुक्के मामले बहुत साल पहले हुए हैं उनके सम्बन्धमें जाँच करनेसे कोई लाभ न होगा। उन्होंने निर्णय दिया कि समितिकी जाँच अपेक्षाकृत हालकी घटनाओं तक ही सीमित रहेगी। इसका कारण यह है कि श्री गॉर्लेने १९०९ में एक विशेष जाँच की थी जिसमें उससे पूर्व किसानोंकी जो स्थिति थी उसकी जाँच-पड़ताल की गई थी। उन्होंने प्रस्ताव किया कि समिति केवल श्री गॉर्लेके बादकी स्थितियोंकी ही जाँच हाथमें ले। उन्होंने कहा: जाँच जहाँसे शुरू की जानी चाहिए उसके लिए मुझे यही काल उचित लगता है। दूसरा मुद्दा मैं यह प्रस्तुत करना चाहता हूँ कि कुछ घटनाएँ उन मामलोंसे सम्बन्धित हैं जिनपर देशकी अदालतोंने फैसले दे दिये हैं। हमारा इन मामलोंपर पुनर्विचार करना व्यर्थ होगा। ये मामले अदालतोंमें सुने जा चुके हैं और तय किये जा चुके हैं; देशकी अदालतोंके फैसलोंपर पुनर्विचार करना समितिके विचार-क्षेत्रके अन्तर्गत नहीं आता। इसलिए जहाँतक इन मामलोंका सम्बन्ध है समिति केवल अदालती कागजातोंपर ही विचार कर सकती है, उनसे सम्बन्धित बाहरी तथ्योंपर नहीं।

श्री गांधीने कहा: चूँकि मैंने उन बयानोंको पेश किया है, इसलिए मैं उनके सम्बन्धमें कुछ कहना चाहता हूँ। मैं अध्यक्षके निर्णयका आदर करता हूँ; किन्तु मेरा खयाल यह है कि मेरा इन मामलोंको एक वक्तव्यके रूपमें रख देना आवश्यक था; ऐतिहासिक क्रमके साथ लोगोंको अपना दुखड़ा न कहने देना उनके साथ अन्याय होता। मैं नहीं चाहता कि समिति अदालती फैसलोंके मूलमें जाये; किन्तु मेरा खयाल है कि समितिको किसानोंकी पूरी गाथा सुननेका अवसर मिलना चाहिए।

अध्यक्षने कहा कि अदालती फैसलोंके झूठे तथ्योंके आधारपर दिये जानेके आरोपोंकी जाँच समिति नहीं कर सकती।

१. सर फ्रैंक जॉर्ज स्लाई।

श्री गांधीने कहा : मैं यह बात मानता हूँ; किन्तु मेरा खयाल है, सभी बातें समितिकी निगाहमें लाई जानी चाहिए; उससे कुछ छिपाया जाना ठीक नहीं है।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २०-७-१९१४

३६९. चम्पारन जाँच समितिके सम्मुख गवाहीमें प्रश्न

जुलाई २३, १९१७

श्री गांधीने, जिन्होंने गवाह [श्री ए० अमान[1]] से जिरह की, कहा कि संत राउतका घर नहीं लूटा गया था; बल्कि तथ्य यह है कि वह जनवरीमें जब वापस आया तब उसने देखा कि उसका खेत, अन्नके कोठे, अन्न, औजार, सालके पेड़ और लट्ठे एवं अन्य वस्तुएँ लूट ली गई हैं।

गवाहने उत्तरमें कहा, जहाँतक मेरी जानकारी है, यह सच नहीं है। मुझे यह बात मालूम नहीं है कि कथित घटनासे कुछ दिन पहले संतने मजिस्ट्रेटको यह प्रार्थनापत्र दिया था कि उसे अपने सामानके लूटे जानेका भय है। मुझे लूटकी खबर पहली बार अखबारोंसे मिली...

[अंग्रेजीसे]

पायनियर, २५-७-१९१७

३७०. पत्र : मगनलाल गांधीको

मोतीहारी

श्रावण सुदी ५, १९७३ [जुलाई २४, १९१७]

चि० मगनलाल,

तुम्हारा जन्म-दिवस आकर चला गया। अर्थात् इस शरीरकी आयुमें से एक वर्ष कम हो गया। तुम्हारे बलपर मैंने शेखचिल्लीका किला बनाया है। इसलिए तुम्हारी [आत्मा] दिन-प्रतिदिन निर्मल हो, ऐसी इच्छा करनेमें मेरा अपना भी स्वार्थ समाविष्ट है। मेरी समस्त इच्छाएँ तुममें मूर्तिमान हैं। मेरी भगवान्से यह प्रार्थना है और तुम्हें मेरा आशीर्वाद है कि तुम्हारी समस्त शुभ इच्छाएँ फलवती हों, तुम

१. [illegible] मैनेजर।

दीर्घायु हो, तुम्हारा स्वास्थ्य बना रहे तथा तुम परिवार, देश और जगत्के लिए आदर्श रूप हो।

बापूके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५७२१) से।
सौजन्य : राधाबेन चौधरी

३७१. पत्र : रंगून यात्री-कष्ट समितिके सचिवको

मोतीहारी
जुलाई २५, १९१७

सचिव
यात्री कष्ट-समिति
रंगून

महोदय,

मैं आपकी समितिके विचारार्थ उसमें प्रस्तुत विषयके सम्बन्धमें संलग्न टिप्पणी भेज रहा हूँ।

आपका विश्वस्त,

[सहपत्र]

टिप्पणी

भाग १

शिकायतें

हस्ताक्षरकर्त्ताको पिछले २५ वर्षोंके दौरान संसारके कई भागोंमें की गई यात्राका यथेष्ट अनुभव है।

हस्ताक्षर-कर्त्ताको १९०१में[1] और फिर १९१५में[2] बर्माकी यात्रा करनेका अवसर मिला था। हस्ताक्षरकर्त्ता लगभग ४ वर्ष पहले तक सदा ही नियमपूर्वक पहले दरजेमें यात्रा किया करता था। इसके बादमें उसने सदा एक डेक-यात्रीके रूपमें यात्रा की है। हस्ताक्षरकर्त्ताकी रायमें :—

(१) कम्पनीके कर्मचारी या पुलिस कर्मचारी ब्रिटिश इंडिया स्टीम नेवीगेशन सर्विसके जहाजोंपर यात्रा करनेवाले डेक-यात्रियोंकी ओर पर्याप्त ध्यान नहीं देते।

(२) यात्रियोंको जैसे-तैसे डेकपर ठूँस दिया जाता है, उनके साथ अशिष्टता-पूर्वक बात की जाती है, अभद्र शब्दोंका प्रयोग किया जाता है और उनपर अक्सर हाथ भी उठाया जाता है।

१. वस्तुतः १९०२ में, देखिए खण्ड ३, पृष्ठ २४२-४३।
२. देखिए "पत्र : बी० आई० एस० एन० कम्पनीके एजेंटको", १९-३-१९१५।

(३) कर्मचारी शिकायतोंको बिलकुल नहीं सुनते।
(४) जहाज-कर्मचारी यात्रियोंके साथ दुर्व्यवहार करते हैं और प्रायः रिश्वत लेते रहते हैं।
(५) चूँकि यात्रियोंके बैठानेमें गुंजाइश और तरीकेका कोई भी खयाल किये बिना उनको किसी तरह ठूँस-ठास दिया जाता है, इसलिए सबसे अच्छा स्थान सबसे तगड़े या धनी लोगोंको ही मिलता है।
(६) उपर्युक्त (५)में सूचित पद्धति महिला-यात्रियोंके लिए भी अपनाई जाती है और उनके लिए पुरुषोंसे अलग स्थानका प्रबन्ध नहीं किया जाता।
(७) डेकमें बहुधा गन्दगी रहती है। यात्रियोंके बरतावपर नियन्त्रण रखनेकी भी कोई व्यवस्था नहीं है; इसीका परिणाम है कि गन्दे किस्मके यात्री जहाँ मनमें आया थूक देते हैं और जहाँ चाहते हैं खाना खाने लगते हैं, जिससे कि सफाई-पसन्द यात्रियोंको असुविधा होती है।
(९) शौचालय बहुत ही ज्यादा गन्दे रहते हैं; महिलाओंके लिए नियत शौचालयोंका इस्तेमाल बहुधा पुरुष ही करते हैं; श्रीमती गांधी जितनी बार शौचालय गईं उनके साथ किसी-न-किसीको विशेष तौरपर जाना ही पड़ा। और कुंडी तो एक भी दरवाजेमें नहीं है।
(१०) स्नानादिके स्थान बहुधा जहाजी कर्मचारियोंसे भरे रहते हैं। और कपड़े धोनेकी तो कोई भी सुविधा नहीं है।
(११) उपर्युक्त (९) और (१०)में जिस स्थानकी बात कही गई है, वह यात्रियोंकी संख्याको देखते हुए अत्यन्त अपर्याप्त है।
(१२) हस्ताक्षरकर्त्ताने अपनी यात्राओंके दौरान महसूस किया है कि डेक-यात्रियोंके लिए जितनी जगह रखी जाती है उसपर उससे कहीं अधिक यात्री भर लिये जाते हैं।
(१३) यात्रियोंका सामान रखनेके लिए भी कोई ठीक व्यवस्था नहीं दिखती; परिणाम यह है कि सामान ही बहुत अधिक स्थान घेर लेता है।
(१४) हस्ताक्षरकर्त्ताने देखा है कि अज्ञान, भय, काहिली और ऐसे ही अन्य कारणोंसे यात्री लोग शिकायतें करना टालते रहते हैं।

भाग २

उपाय

हस्ताक्षरकर्त्ताकी रायमें :—

(१) कम्पनीके अपने भरोसेके कुछ विशेष प्रतिनिधि डेक-यात्रियों और उनके कष्टोंको समझनेके लिए तत्पर होने चाहिए और इनकी नियुक्ति सरकारकी मंजूरीसे होनी चाहिए।
(२) घाटोंपर काम करनेके लिए यात्रियोंके हितमें काम करनेवाले जाने-माने संगठनोंके विश्वासपात्र स्वयंसेवकोंकी सहायता ली जानी चाहिए।
(३) डेकों, शौचालयों और स्नानादिके स्थानोंकी संख्या बढ़ाई जानी चाहिए।

(४) उपर्युक्त भाग–२के (१)में उल्लिखित प्रतिनिधियोंको प्रत्येक जहाजकी जाँच करके भाग–२ के (३)में उल्लिखित बातोंके बारेमें अपनेको सन्तुष्ट करना चाहिए।

(५) उल्लिखित प्रतिनिधियोंको प्रत्येक जहाज-(स्टीमर) पर जाकर यात्रियोंसे उनके अनुभव सुनने चाहिए।

(६) जहाजपर रहनेवाले चिकित्सा-अधिकारीको यह अधिकार दिया जाना चाहिए और उससे यह अपेक्षा की जानी चाहिए कि वह हर तरहसे यात्रियोंकी शारीरिक सुख-सुविधाका ध्यान रखेगा। एक चिकित्सा-अधिकारी-ने हस्ताक्षरकर्त्तासे कहा था कि यात्रियोंके लिए समुचित स्थान, उनकी सफाई, शौचालयोंके प्रबन्ध और उनकी दशा देखनेका काम उनके जिम्मे नहीं है।

(७) यात्रियोंके लिए हिदायतोंकी एक पुस्तिका कई स्थानीय भाषाओंमें तैयार कराई जानी चाहिए और उसकी एक प्रति प्रत्येक यात्रीको टिकटके साथ दी जानी चाहिए।

समिति यदि हस्ताक्षरकर्त्तासे कुछ अधिक जानकारी हासिल करना चाहे तो वह बड़ी खुशीसे इसके लिए तैयार है।

गांधीजी द्वारा संशोधित टाइप किये हुए मूल अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० ६३८२) की फोटो-नकलसे।

३७२. पत्र : डब्ल्यू० बी० हेकॉकको

मोतीहारी
जुलाई २५, १९१७

प्रिय श्री हेकॉक,

आपका २३ तारीखका गोपनीय पत्र[1] अभी-अभी मिला। उसके लिए धन्यवाद। आपकी चुप्पीका गलत अर्थ लगानेका मेरा इरादा नहीं था। तथापि मैं आपकी चेता-वनीके औचित्यको पूरी तरह समझता हूँ। मैं जानता हूँ कि इस प्रश्नके निपटारेके बाद मैं जो कदम उठाना सोच रहा हूँ उससे अनेक परिणाम निकल सकते हैं; मैं आपको आश्वस्त करना चाहता हूँ कि मैं सरकारको पूरा-पूरा विवरण बतलाये

१. यह "पत्र : डब्ल्यू० बी० हेकॉकको", २९–६–१९१७ के उत्तरमें लिखा गया था और उसमें कहा गया था : ". . . मेरी चुप्पीका गलत अर्थ नहीं लगाया जाना चाहिए, उससे यह नहीं समझना चाहिए कि सरकार आपके विचारका अनुमोदन करती है। मैं कह नहीं सकता कि सरकार बाहरसे स्वयंसेवक बुलानेके प्रस्तावके प्रति क्या रुख अपनायेगी. . .।" **सलैक्ट डॉक्यूमेंट्स**, सं० १४९ से।

बिना और प्रत्येक विचारणीय पहलूपर उपयुक्त विचार किये बिना कोई कदम नहीं उठाऊँगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इंडिया) से; सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन, सं० १५०, पृष्ठ २८०-१ से भी।

३७३. चम्पारन-समितिके सम्मुख गवाहीमें प्रश्न[1]

मोतीहारी
जुलाई २६, १९१७

चम्पारन कृषि जाँच-समितिने आज केवल एक ही गवाह, मोतीहारी लिमिटेडके प्रबन्धक, श्री डब्ल्यू० एस० इर्विनसे जिरहकी। अध्यक्षके पूछनेपर गवाहने बतलाया कि उसके प्रतिष्ठानमें छः फैक्टरियाँ हैं। प्रतिष्ठानमें पहले नीलका काम होता था, लेकिन अब नहीं होता। उसने १९११ में तावान या शरहबेशी लेकर तिन-कठिया पद्धतिको बदल दिया था। तिन-कठिया पद्धतिमें हरएक काश्तकारको अपनी भूमिके तीन कट्ठोंमें[2] नीलकी खेती अनिवार्य रूपसे करनी पड़ती थी। रैयतके हर काश्तकारके लिए यह अनिवार्य था। गवाहने मुकर्ररी गाँवोंमें शरहबेशी और ठेकेदारी गाँवोंमें तावानकी वसूली की थी।

यह पूछनेपर कि क्या उसका कहना यह है कि राज्यने एकाधिकारका उपयोग करने दिया इसलिए उन्हें एकाधिकारका हक मिल गया — गवाहने कहा कि राज्यने तो उससे कहीं ज्यादा ही लिया था जितना कि उनके पट्टोंकी शर्तोंके मुताबिक वसूल करनेकी अनुमति थी। उसने जब यह कहा कि सरकारने इस अधिकारको मान्यता दी थी, तब उसका यह मतलब था कि सरकारकी ओरसे कोई आपत्ति नहीं की गई थी। चूंकि राज्यने कहा था कि जबतक नीलकी खेती होती रहती है तबतक लगान नहीं बढ़ाया जा सकता, पट्टोंकी शर्तोंके मुताबिक वसूली करनेमें राज्यकी मूक सहमति थी।

इसके बाद गवाहने जुर्माने करने और मजदूर रखनेके बारेमें उसी प्रकारका बयान दिया जैसा अन्य गवाहोंने दिया था।

गवाहने श्री गांधीसे कहा कि उसने किसी भी व्यक्तिपर ५०० रुपयेसे अधिक जुर्माना नहीं किया। श्री गांधीने कहा कि एक आदमी ऐसा है जो कहता है कि गवाहने उसपर एक हजार रुपये जुर्माना किया था। इसपर गवाहने कहा:

1. जाँच समितिके समय-समयपर प्रकाशित होनेवाले विवरणोंमें से यह विवरण नमूनेके तौरपर पूरा उद्धृत किया जा रहा है।

2. कट्ठा — एक बीघेके बीसवें भागके बराबर भूमिकी माप।

"यदि श्री गांधीको देशके उस क्षेत्रमें उतने ही लम्बे अर्से तक रहनेका अनुभव होता (मैं ३५ वर्षोंसे रह रहा हूँ) तो वे भली प्रकार समझ गये होते कि चम्पारनकी रैयत कितनी ज्यादा झूठी है।" चम्पारनकी रैयतमें कई सद्गुण भी हैं; लेकिन उन सद्गुणोंमें सच बोलना नहीं आता। 'पायनियर' को लिखे गये उनके पत्रसे पहले उसके खिलाफ एक भी शिकायत नहीं की गई थी।

श्री गांधीने कहा कि श्री हेकॉक (कलक्टर) द्वारा तैयार किये गये सारांशको देखनेसे लगता है कि पिछले चार वर्षके दौरान २० विभिन्न गाँवोंसे फैक्टरीके खिलाफ २७ प्रार्थनापत्र भेजे गये थे।

गवाहने कहा, उसके नीचे ३० हजार काश्तकार हैं, और यदि चार वर्षोंके दौरान कुल २७ प्रार्थनापत्र भेजे गये तो उसे उनकी जानकारीका न दिया जाना स्वाभाविक ही है।

गवाहसे अगला प्रश्न दमनके कुछ खास मामलोंके बारेमें पूछा गया। कहा गया था कि उनमेंसे एकमें गवाहने लखनरायकी फसल बरबाद कर दी थी।[1]

गवाहने बतलाया कि उसने नवम्बर १९१४में एक सरकारी नीलाममें एक काश्तकार आलमकी जमीन खरीदी थी जिसका कुछ भाग एक शिकमीके रूपमें लखनरायके नामपर था, लेकिन प्रमाणीकरणके समय लखनरायने बन्दोबस्त अधिकारीसे कहा था कि वह अब शिकमी नहीं रह गया है। गवाहने अपने कथनके सबूतके तौरपर एक प्रमाणीकृत प्रति पेश की। उस समय उस जमीनपर जईकी फसल खड़ी थी और उसने लखनरायको उसका आधा भाग दे दिया था। फिर पिछली मईमें उसने पूरी जमीनको नीलकी खेतीके लिए तैयार करनेका आदेश दिया था और तब पता चला कि उस जमीनके एक कोनेमें लखनरायने दो कट्ठोंमें चेना बो दिया था। लखनरायको इसका कोई हक नहीं था, इसलिए गवाहके आदमियोंने पूरी जमीनपर हल चला दिया। फसल बहुत ही मामूली किस्मकी थी और नुकसान भी बहुत ही मामूली हुआ था।

दूसरी घटनाके बारेमें पूछे जानेपर, गवाहने स्वीकार किया कि उसमें उससे कुछ गलती हो गई थी। उसने घटनाका विवरण बतलाते हुए कहा कि पिछली मईकी २३ तारीखको उसके गुमाश्तेने खबर दी कि फैक्टरीकी तीन गाड़ियाँ बटाई भूसेका फैक्टरीका आधा हिस्सा लेने, वादी पक्षके गाँव गई थीं। वहाँ बटाईदारके बहकावेमें आकर गाड़ीवालोंको मारा-पीटा गया और गाड़ियोंका भूसा गिरा दिया। गवाहने स्वीकार किया कि वे लोग जब उसके पास आये, तो उसने उनके पैरोंमें अपने घोड़ेकी पतलीसी चाबुक मारी थी, लेकिन उस समय वह बहुत क्रोधमें था। लोगोंने उसके आदमियोंपर बुरी तरह हमला किया था। यह भी सही था कि उसने उनपर जुर्माने करनेकी धमकी दी थी, लेकिन जुर्माने वास्तवमें किये नहीं। उसने कहा कि यह बात बिलकुल झूठ है कि उन लोगोंको उसके मुर्गीखानेमें बन्द कर दिया गया था। उन लोगोंको तो मुर्गीखानेके पास भी नहीं ले जाया गया।

1. देखिए "पत्र : डब्ल्यू० एस० इर्विनको", २४-५-१९१७

श्री गांधीने कहा: तब तो रैयतकी आधी बात सच है।

यह सही था कि उसने रैयतकी जमीनके कुछ भागको जिरात जमीनमें बदल लिया था, लेकिन उसके बदलेमें उनको दूसरी जमीनें दी गई थीं। बदलेमें मिली जमीनपर रैयतने सचमुच फसलें बोईं और काटी थीं। अच्छी तरह निगरानी कर सकनेके लिए उन जमीनोंको बदलकर एक ही जगह सभी जिरात जमीन रखना जरूरी हो गया था। सभी जमींदारियोंमें जमीनोंकी इस प्रकार अदला-बदली की जाती है।

गवाहका बयान इतना ही था। इसके कुछ ही समय बाद समिति स्थानीय रूपसे जाँच करने और प्रदेशके भीतरी गाँवोंमें जानेके विचारसे बेतियाके लिए रवाना हो गई।

[अंग्रेजीसे]

पायनियर, २८-७-१९१७

३७४. चम्पारन-समितिकी बैठककी कार्यवाहीसे

गेस्ट हाउस
बेतिया
जुलाई २७,१९१७

काँजी हाउस: श्री गांधीने विचार व्यक्त किया कि काँजी हाउसोंकी नीलामी नहीं होनी चाहिए, बोर्डको खुद ही उनकी सीधी देखरेख करनी चाहिए...

१. खेतीकी लागत:— श्री रीडने कहा कि बागान मालिकोंको जिरात खेतीकी प्रति एकड़ लागत ७ से ८ रुपये तक पड़ती है। राजा कीर्त्यानन्द सिंह[1] ने अपने अनुभवके आधारपर इसकी पुष्टि की। श्री गांधीने कहा कि रैयतका अनुमान है कि इसकी लागत २० या २५ रुपये प्रति एकड़से कम नहीं बैठती, लेकिन वे फैक्टरीकी बहियाँ देखनेके बाद इस प्रश्नकी और छानबीन करेंगे...

...श्री गांधीने कहा कि स्वैच्छिक ठेकोंकी अवधि एक वर्षतक सीमित की जानी चाहिए।

शरहबेशी—श्री गांधीने कहा कि दुबारा बन्दोबस्तके दौरान तिन-कठियाके बदले लगानमें वृद्धि करने (शरहबेशी) की बातको मान्यता दी गई थी, परन्तु उसपर पुनः विचार किया जाना चाहिए और उसे घटाकर लगानमें उतनी ही साधारण वृद्धिकी अनुमति दी जानी चाहिए जितनी कि मूल्योंकी वृद्धिके कारण दी जा सकती है। अध्यक्ष और अन्य सदस्य इससे सहमत होनेके लिए तैयार नहीं थे। उन्होंने कहा कि

१. बनैलीके राजा कीर्त्यानन्द सिंह; बिहार तथा उड़ीसा विधान परिषद्के सदस्य, जिनको जुलाई ९, १९१७को, राजा हरिहरप्रसाद नारायण सिंहके त्यागपत्र दे देनेपर, चम्पारन-समितिका सदस्य नियुक्त किया गया था।

कानूनके मुताबिक तो लगान-वृद्धिके अधिकांश मामलोंमें कोई हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता।

तावान—सभी सहमत हुए कि तावानकी प्रथा अन्यायपूर्ण है और उसे आगेके लिए बन्द कर दिया जाना चाहिए। तब इस प्रश्नपर चर्चा हुई कि जहाँ वह वसूल किया जा चुका हो वहाँ क्या कार्रवाई की जानी चाहिए। श्री गांधीने कहा कि जहाँ उसकी अदायगी हो चुकी है वहाँ तो कोई भी कार्रवाई नहीं की जा सकती, परन्तु फैक्टरियोंसे कहा जाना चाहिए कि इस खातेमें जितनी भी बकाया रकम पड़ी हो उस सबको वे रद कर दें। उन्होंने यह माना कि यह बात केवल उन फैक्टरियों-पर लागू की जा सकती है जो बॉण्ड लेनेवाले व्यक्तियोंकी निजी सम्पत्ति हों और जो इस बीचमें बेच न दी गई हों। कोर्ट ऑफ वॉर्ड्स इस व्यवस्थाको करनेसे इनकार करने-वाले ठेकेदारोंके पट्टोंका नवीनीकरण करनेसे इनकार करके उसे लागू कर सकती है। अन्य सदस्योंने महसूस किया कि इस प्रस्तावको माननेमें कुछ कठिनाइयाँ हैं, जिनपर अधिक विचार करनेकी जरूरत है।

श्री गांधीके प्रस्ताव थे:—

१. कोर्ट ऑफ वॉर्ड्स ठेका पद्धतिको और अधिक न बढ़ाये।

२. यदि राज्य वर्तमान ठेकोंके पट्टोंका नवीनीकरण करनेका फैसला करे तो उनमें उसे समितिकी सिफारिशोंको लागू करनेवाली शर्तें शामिल करनी चाहिए; शामिल की जानेवाली शर्तोंमें ये शर्तें हों:—

१. स्वैच्छिक पद्धतिके अतिरिक्त अन्य कहीं भी नीलकी खेती नहीं की जायेगी;

२. अबवाब नहीं लिये जायेंगे;

३. किसी भी प्रकारका हर्जाना या तावान नहीं लिया जायेगा।

ये प्रस्ताव स्वीकार कर लिये गये।

[अंग्रेजीसे]

सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन, सं० १५२, पृष्ठ २८७–९।

३७५. पत्र : जमनालाल बजाजको

मोतीहारी
श्रावण शुक्ल १ [जुलाई २८, १९१७][1]

सुज्ञ भाईश्री जमनालालजी,[2]

आपका खत और हुंडी रूपैया १५०० की मीली है। मैं ऋणी हुआ हुं आपका दान हिंदी शिक्षा प्रचारमें ही रखा जायेगा। यदि दूसरे कोई इसीहि कामके लीये सिर्फ भेज देंगे और कुछ धन वचेगा तो आपका दान दूसरे कार्योंमें भी खर्चा जायगा।

मेरा फीर वर्धा आने का होगा तो खबर दे दुंगा।

आपका,
मोहनदास गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल पत्र (जी० एन० २८३३) की फोटो-नकलसे।

३७६. शरहबेशीके सम्बन्धमें चम्पारन-समितिके सदस्योंके नाम गुप्त टिप्पणी

बेतिया
जुलाई २९, १९१७

मेरा विनम्र मत है कि (१) समिति बननेकी वजह तिनकठिया पद्धतिकी बुराइयाँ हैं; (२) समितिका मुख्य कार्य न्यायपूर्ण ढंगसे उसका हल निकालना है; और (३) उससे ऐसी सिफारिशोंकी आशा की जाती है जो इस मामलेका एक स्थायी हल दे सके, जमींदारों या ठेकेदारों और रैयतके बीच फिरसे अच्छे सम्बन्ध स्थापित कर सके और आगे चलकर मुकदमों या अन्य किसी रूपमें विवाद खड़ा न होने दे।

यदि तिन-कठियाको किसी अदायगीके एवज़में हटाया जाता है तो यह समिति द्वारा अपने प्राथमिक कर्त्तव्यकी उपेक्षा करना कहलायेगा। तिन-कठिया पद्धतिको लेकर एक मुकदमा भी चल रहा है और फिर भी यह समिति नियुक्त की गई है। समितिके पास यह जाननेके लिए अनेकानेक प्रमाण मौजूद हैं कि तिन-कठियाने रैयतको अपनी लपेटमें इस तरह कस लिया है जैसे नाग किसीको अपने पाशमें कस ले। रैयत, तरीके वैधानिक हों या नहीं, अपने-आपको इससे मुक्त करनेकी कोशिश शुरूसे करती आ रही

१. गांधीजी इस दिन मोतीहारीमें थे।

२. जमनालाल बजाज (१८८९–१९४२) प्रसिद्ध गांधीवादी उद्योगपति; जिन्होंने गांधीजीकी रचनात्मक योजनाओंमें भरपूर सहयोग दिया। गांधीजीके निकटतम साथियों और सलाहकारोंमें से एक।

है और सरकारने भी कई बार रैयतको उससे मुक्त करानेकी कोशिशें की हैं। सरकारकी ओरसे जो साक्ष्य हमारे सामने प्रस्तुत किया गया है उससे पता चलता है कि अधिकारियोंको भी उससे छुटकारा पानेके लिए अपनी सारी चातुरी लगा देनी पड़ी है; वे हर तरहसे तिन-कठियाको ही दोषी ठहराते हैं। श्री ह्विटीके इस कथनमें काफी सचाई है कि वे तिन-कठियाको ही अबवाब इत्यादिके लिए जिम्मेदार ठहरानेके पक्षमें कोई प्रत्यक्ष प्रमाण तो नहीं जुटा सकते, लेकिन उनका खयाल है कि उसकी जड़में भी वही है। मेरा निवेदन है कि ऐसी परिस्थितिमें समिति तिन-कठियाकी स्पष्ट निन्दा करने और रैयतकी ओरसे किसी भी प्रकारकी अदायगीके बिना उसे हटानेकी सिफारिश करनेके लिए बाध्य है। एक बार यह सिद्ध हो जानेपर कि गुलामी प्रथा पापपूर्ण है, गुलामोंसे उसे हटानेकी कीमत अदा करनेके लिए नहीं कहा गया था।

इसलिए मेरा सुझाव है कि समिति कमसे-कम इतना तो कह सकती है कि :

(१) तिन-कठियाको बिना शर्त हटा दिया जाये।
(२) शरहबेशीकी दरपर जो वसूली की जा चुकी है, उसमें कोई हस्तक्षेप न करते हुए शरहबेशीको हटा दिया जाये।
(३) शरहबेशीको रद कर देना चाहिए, फिर चाहे वह ठेकेके रूपमें पंजीकृत हो या समझौतेके रूपमें; लेकिन खाम[1] या ठेकेके गाँवोंमें शरहबेशीसे पहलेके लगानमें की जा सकनेवाली वृद्धि की जा सके।

इस प्रकारके बन्दोबस्तका परिणाम यह होगा कि उच्च न्यायालयसे मुकदमा वापस हो जायेगा और जहाँतक तिन-कठिया और शरहबेशीका सम्बन्ध है स्थायी शान्ति स्थापित हो सकेगी।

यदि इस मामलेका निर्णय न्यायालयोंपर छोड़ा जाये तो उसके फलस्वरूप अन्तहीन विवाद उठ खड़े होंगे और उनमें जिनके पास थैली ज्यादा बड़ी होगी वे ही विजयी होंगे। इससे सम्बन्धित पक्षोंके बीच कटुता बढ़ेगी और यदि कहीं रैयतकी जीत हो गई तो 'स्वीनी[2]-सैटेलमेंट' के अन्तर्गत निर्णीत कई मामलोंके बारेमें नये सिरेसे मुकदमे दायर किये जायेंगे और तब जमींदारोंको उपर्युक्त योजनाके अन्तर्गत प्रस्तावित लगानकी बढ़ोतरीसे वंचित हो जाना पड़ेगा। ऐसी परिस्थिति सरकार और समिति दोनों ही के लिए सन्तोषकारक नहीं होगी। और रैयतकी दृष्टिसे तावान यदि बुरा है तो शरहबेशी उससे भी बुरी चीज होगी। पहली चीज मौजूदा पीढ़ीके लिए दुःखदायी है लेकिन दूसरी तो आगामी पीढ़ियोंको भी बाँध कर रख देगी। हम यह भी जानते हैं कि शरहबेशीका प्रस्ताव और उसकी वसूली एक ऐसे समय हुई जब कि बागान-मालिकोंके लिए नीलकी खेती लाभप्रद नहीं रह गई थी और राजपुर प्रतिष्ठानने यह भी सिद्ध कर दिया था कि लगभग बिना किसी अतिरिक्त लागतके नीलकी खेती खुश्की पद्धतिसे की जा सकती है। इस प्रकार शरहबेशीके रूपमें बागान-मालिकोंको लगानमें

१. राज्यके सीधे प्रबन्धके अन्तर्गत गाँव।
२. जे० ए० स्वीनी, उत्तर बिहारके सैटिलमेंट अफसर।

अधिकसे-अधिक वृद्धि हासिल हो गई है और नीलकी खेतीसे होनेवाला लाभ भी एक दूसरे रूपमें बरकरार रहता है।

मो० क० गांधी

गांधीजीके हस्ताक्षरयुक्त टाइप की हुई मूल अंग्रेजी प्रति (नेशनल आकाईव्ज़ ऑफ इंडिया) से; **सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन**, सं० १५३, पृष्ठ २९०–१ से भी।

३७७. पत्र : फूलचन्द शाहको

मोतीहारी
श्रावण सुदी १३ [अगस्त १, १९१७][1]

भाईश्री फूलचन्द,

पत्र पढ़कर सुरक्षित रख लेना। रुपया रेवाशंकर भाईको भेज दिया गया है। उनके नामे डाल देना। कलकी सारी डाक देवदासके हाथों कहीं खो गई। उसमें [किसी एक पत्रमें] कपड़ेका आँकड़ा था। दुबारा लिख भेजना। अभी [कपड़ेकी] गाँठ आई नहीं है।

गोखलेजीके भाषण छपवानेका प्रबन्ध आजसे ही किया जाये तभी छपवा सकना सम्भव होगा; इसलिए उसका तत्काल प्रबन्ध होना चाहिए।

मोहनदासके वंदेमातरम्

प्रभुदास यहाँसे आज निकला है; वहाँ शनिवारकी रातको ८.३० पर पहुँचेगा।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (एस० एन० ६३८६ ए) की फोटो-नकलसे।

३७८. पत्र : एस्थर फैरिंगको

नडियाद
अगस्त ३, १९१७

प्रिय एस्थर,

तुमने बड़े-बड़े सवाल उठा दिये हैं। मेरा खयाल है कि यीशुके उपदेशमें अस्पष्टताकी थोड़ी भी गुंजाइश नहीं है। जिसके हृदयमें प्रेम हो उसके लिए हत्या-मात्र बुरी चीज़ है। उसे हत्या करनेकी जरूरत ही नहीं पड़ेगी। वह हत्या नहीं करेगा। जिसके हृदयमें साँपके लिए दया होगी, उससे भय नहीं होगा, वह साँपको नहीं मारेगा और न साँप ही उसपर चोट करेगा। हमें मनकी निर्मलताकी अवस्था प्राप्त करनी चाहिए। परन्तु विरले ही उसे प्राप्त कर पाते हैं। मुझे लगता है कि राष्ट्रोंके लिए

१. गांधीजी इस दिन मोतीहारीमें थे।

तो उस अवस्था तक पहुँचना असम्भव ही है। सभी लोगोंकी प्रगति समान हो — यह कल्पनाके बाहरकी बात है। इसलिए राष्ट्र तो सदा लड़ेंगे ही। उनमें से कोई एक राष्ट्र ज्यादा और दूसरा कम गलतीपर होगा। कोई भी राष्ट्र पूरी तौरपर सही रास्तेपर तभी हो सकता है जब वह आत्मिक बलके आधारपर लड़े। ऐसा राष्ट्र अभी तक तो कोई है नहीं। मैं भारतसे एक ऐसा राष्ट्र होनेकी आशा करता था। लेकिन लगता है मेरी यह आशा गलत थी। भारतसे मैं अधिकसे-अधिक यही आशा करता हूँ कि वह दूसरे राष्ट्रोंको संयत रखनेवाले एक महान् बलकी तरह काम करे। परन्तु इसके लिए उसे अपनेमें लड़नेकी योग्यता पैदा करनी चाहिए और कष्ट-सहन करने चाहिए, तभी वह संसारको कोई संदेश दे सकता है और तभी उसकी बात कुछ सुनी भी जायेगी।

तुम्हारे और मेरे सामने एक संगत प्रश्न यह है कि वैयक्तिक रूपसे हमारा कर्त्तव्य क्या है। अपने लिए मैंने एक काम-चलाऊ निष्कर्ष यह निकाला है: 'कोई भी कारण क्यों न हो मैं किसीकी हत्या नहीं करूँगा; यदि उसकी इच्छाका प्रतिरोध करनेमें मुझे अपना जीवन होम करना पड़े तो मैं उसके हाथों अपनी मृत्यु पसंद करूँगा।' मैं हरएकको ऐसी ही सलाह दूँगा। परन्तु जिसके बारेमें मुझे मालूम हो कि उसमें इच्छाशक्ति बिलकुल है ही नहीं, उसे मैं इच्छाशक्तिका प्रयोग करते हुए संघर्षकी सलाह दूँगा। जहाँ इच्छाशक्ति नहीं, वहाँ प्रेम नहीं होता। भारतमें इतना ही नहीं कि प्रेम नहीं है, किन्तु उसमें तो पुंसत्व-हीनताके कारण घृणा मौजूद है। परले दर्जेकी असहायताके साथ-साथ, उसमें लड़ने और हत्या करनेकी भी बड़ी प्रबल इच्छा है। पहले तो संघर्ष करनेकी क्षमता पैदा करके इस इच्छाको सन्तुष्ट किया जाना चाहिए। चुननेका प्रश्न इसके बाद ही उठता है।

यह ठीक है कि जो क्षमा और प्रेम करता है, उसकी श्रेष्ठता केवल इसीसे सिद्ध हो जाती है। परन्तु बातको इस तरह पेश करनेसे एक प्रश्न उठता है: प्रेम कौन कर सकता है? एक चूहा, चूहा रहते हुए तो बिल्लीसे प्रेम नहीं कर सकता। सामान्यतया यह तो नहीं कहा जा सकता कि चूहा अपनेको बिल्लीको चोट पहुँचानेसे बचाता है। तुम जिससे भय खाते हो, उसे प्रेम नहीं कर सकते। भयसे मुक्ति पाते ही तुम अपना मार्ग चुननेकी स्थितिमें आ जाते हो — चोट करना या हाथ रोकना। हाथ रोकना इस बातका प्रमाण है कि मनुष्यकी आत्मा चेत गई है; और चोट करना शारीरिक बलका प्रमाण है। आत्माकी शक्तिका प्रदर्शन तभी होता है जब चोट करनेकी क्षमता मौजूद हो। इसका अर्थ यह नहीं कि हमें शारीरिक रूपसे अपने विपक्षीके मुकाबले अधिक बलशाली होना चाहिए।

इस पत्रसे पूरा सन्तोष नहीं होगा, परन्तु मेरा खयाल है कि तुम मेरी तर्क-पद्धति तो समझ ही लोगी। परन्तु ऐसे मामलोंमें मात्र प्रार्थना ही मार्ग है।

सस्नेह,

बापू

[अंग्रेजीसे]

माई डियर चाइल्ड

३७९. पत्र : पोपटलालको

श्रावण वदी ५, [अगस्त ७, १९१७][1]

भाईश्री पोपटलाल,

तुम्हारे आश्रममें आनेका समाचार पढ़कर अत्यन्त हर्ष हुआ। वहाँ सबके साथ सलाह करके अपनी शक्तिके अनुसार विषय चुन लेना। तुम्हारी आँखोंको नुकसान न पहुँचे इसका खयाल रखना।

अगले हफ्ते वहाँ पहुँचनेकी आशा करता हूँ।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (एस० एन० ६३८४) की फोटो-नकलसे।

३८०. चम्पारन-समितिकी बैठककी कार्यवाहीसे

बेतिया
अगस्त ८, १९१७

*　　　*　　　*

श्री गांधीने सुझाव दिया कि रिपोर्टमें ज्यादातर प्रचलित ढंगके अबवाबोंका स्पष्ट उल्लेख कर दिया जाये, ताकि उनकी भर्त्सना की गई है या नहीं इस विषयमें कोई सन्देह न रहे। इसे स्वीकार कर लिया गया।

*　　　*　　　*

जुर्माने — जुर्मानोंके बारेमें तय करनेकी सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह थी कि उन मामलोंमें जिनमें जमींदार भी शामिल हों, क्या सिफारिश की जाये। सभापतिने कहा कि मेरी रायमें श्री गांधीका ऐसे सारे मामलोंका अदालतमें ले जानेका सुझाव रैयतके लिए हानिकर होगा; और इसके लिए कानून बनानेकी जरूरत होगी। उन्होंने कहा कि यदि निम्नलिखित बातें स्पष्ट रूपसे कह दी जायें और समझ ली जायें तो श्री गांधीकी आपत्तियोंका समाधान हो जायेगा —

(१) कि [जुर्मानेकी] अदायगी स्वेच्छासे की जायेगी;

(२) कि यदि रैयत ऐसा समझे कि वह जिम्मेदार नहीं है अथवा अदायगीकी रकम बहुत ज्यादा है तो वह अदायगी करनेसे इनकार कर सकती है।

१. पत्र गांधीजीके सन् १९१७ के पत्र-संग्रहमें पाया गया और इसलिए सन् १९१७ का माना गया है। गांधीजी बेतियासे अहमदाबाद १६ अगस्तको रवाना हुए थे; इस तथ्यसे भी उक्त निर्णयकी पुष्टि होती है।

. . . श्री गांधीने कहा चूंकि जुर्मानेके मामले बहुत कम होते हैं, इसलिए ऐसे मामले भी बहुत थोड़े होंगे जिनको लेकर जमींदारको अदालत जाना पड़े। उनके विचारमें रैयतके ऊपर जमींदारोंकी सत्ता इतनी अधिक है कि अदायगीको निश्चित रूपसे स्वैच्छिक बनाना कठिन होगा। कुछ बहसके बाद श्री रीडके सुझावपर यह तय हुआ कि क्षतिका अनुमान लगानेका काम पंच-निर्णयपर छोड़ दिया जाये। . . .

[अंग्रेजीसे]

सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज़ मूवमेंट इन चम्पारन, सं० १५६, पृष्ठ २९३–४।

३८१. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

मोतीहारी
श्रावण वदी ७, [अगस्त ९, १९१७]

चि० [मथुरादास,]

तुम्हारा पत्र मिला था। वह खो गया और मैं अपने काममें ऐसा डूबा रहा कि फिर भूल ही गया। जन्म और मृत्युका हिसाब मैं अब मुश्किलसे ही रख पाता हूँ। ऐसी बातोंमें मैं अब कुटुम्बके कामका नहीं रहा। [जन्म-मरणके] इस ज्वार-भाटेका असर भी अब मेरे मनपर कदाचित ही होता है। इन दिनों हमारे कुटुम्बमें यह तीसरी मृत्यु हुई है। खबर सुनकर क्षण-भर विचारमें पड़ जाता हूँ और फिर भूल जाता हूँ। मुझे यह स्थिति अनायास ही प्राप्त हो गई है; किन्तु ऐसा लगता है कि वह प्राप्तव्य है। मरण वर्त्तमान स्थितिका अनिवार्य परिवर्तन ही तो है। उससे डरना क्यों चाहिए? जन्म भी इसी प्रक्रियाका चिह्न है। उसमें भी प्रसन्न होनेका कोई कारण नहीं दिखता। हम इन दोनों स्थितियोंसे, अपने लिए और संसारके लिए, मुक्ति चाहते हैं। इसीको परम-पुरुषार्थ कहा गया है। ऐसी बात है; तब . . . को क्या आश्वासन दूं? . . . धर्म-ध्यान आदिमें रुचि रखती है। इस धर्मका रहस्य समझनेका उसे यह एक सुअवसर प्राप्त हुआ है।

मोहनदासके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

महात्मा गांधीनी विचारसृष्टि

८२. चम्पारन-समितिकी बैठककी कार्यवाहीसे

अगस्त १०, १९१७

*　　*　　*

(१) काश्तपर खर्च — श्री गांधीने कहा, मुझे अभी तक श्री जेम्सनसे[1] कतिपय आँकड़े प्राप्त नहीं हुए हैं। किन्तु बादमें उन आँकड़ोंसे किसी नई बातके मालूम होनेकी स्थितिमें तरमीमकी गुंजाइश रखते हुए, समितिकी बैठकके अन्तमें यह तय हुआ कि अधिकतम व्यय रु० १५ प्रति बीघा (८–हाथ लग्गी) या रु० १० प्रति एकड़ है।

*　　*　　*

(२) श्री गांधीने कहा कि देहातके उपयोगकी फसलोंके बीजकी कीमत थोड़ी होती है; लेकिन सभापतिने कहा कि रबीकी फसलके बीजका खर्च बहुत होता है। . . .

खुश्की नील — श्री गांधीने सुझाव दिया कि खुश्की नीलके लिए एक निम्नतम दर नियत कर दी जानी चाहिए। श्री रीडके विचारमें इस सुझावका असर दूसरी फसलोंपर, उदाहरणार्थ, गन्नेपर भी पड़नेका डर था। बहसके बाद यह तय हुआ कि नीलके इतिहासको देखते हुए, यदि संक्रमण कालमें संघ ही कमिश्नरकी स्वीकृतिसे खुश्की नीलकी एक निम्नतम दर नियत कर दे तो अच्छा हो। यह संक्रमण काल तबतक ही माना जायेगा जबतक सरकारको यह इत्मीनान नहीं हो जाता कि रैयत यह जान गई है कि उसके लिए मर्जी न होनेपर नीलकी खेती करना आवश्यक नहीं है।

*　　*　　*

तिन-कठिया रद करनेका मुआवजा — दूसरा विचारणीय विषय यह था कि ऐसे मामलोंमें जहाँ काश्तकारीकी शर्तके अनुसार नीलकी खेती करना लाजिमी था, वहाँ तिन-कठिया प्रथा समाप्त करनेके एवजमें कोई मुआवजा दिया जाये या नहीं। सभापतिने समितिके सामने अपने विचार प्रकट करते हुए कहा, मैं रैयतके प्रति अन्याय करनेवाली हर चीजको हटानेके लिए उत्सुक हूँ। . . . उन्होंने कहा, शायद श्री गांधीको रैयतवारी इलाकेका ही अनुभव है; इसलिए वे जमींदारोंकी स्थितिको पूरी तरह नहीं समझ सके हैं। उन्होंने समितिके सामने यह सुझाव रखा कि इन मामलोंका निबटारा करनेके लिए एक विशेष अदालत नियुक्त की जाये। यह अदालत निर्णय करेगी कि:

(क) क्या काश्तकारीकी वास्तवमें ऐसी कोई शर्त थी, और यदि थी तो उक्त अदालत

१. जे० वी० जेम्सन, जलहा फैक्टरीके प्रबन्धक।

(ख) उस शर्तकी माफीके लिए मुआवजेकी एक उचित दर नियत करेगी।

इस अदालतके निर्णयके विरुद्ध एक स्पेशल जजके सामने अपील की जा सकेगी।

मुआवजेकी रकमकी वसूली एकमुश्त नहीं होगी, बल्कि लगानमें वृद्धिके रूपमें होगी। मुआवजेके रूपमें उचित लगान निश्चित करते समय अदालतको चाहिए कि वह—

(क) तिनकठियाके अन्तर्गत रैयतको अबतक होनेवाली हानिपर, और—

(ख) समान परिस्थितियोंमें मुआवजेके तौरपर बढ़ी हुई लगानकी जो दरें वास्तवमें दी जा रही हैं, उनपर विचार करे, और—

(ग) नियत की गई कुल लगानकी दर अनुचित और अन्यायपूर्ण तो कदापि न हो।

वृद्धिकी रकम यदि २५ प्रतिशतसे अधिक बैठती हो तो दर क्रमशः बढ़ाई जाये।

श्री गांधीने कहा, मैं कानूनी मुद्दोंमें नहीं पड़ना चाहता। मैं तो इस प्रश्नपर न्यायकी दृष्टिसे विचार करना चाहता हूँ। उक्त प्रस्तावका परिणाम यह होगा कि प्रत्यक्ष बन्दोबस्तके अधीन आनेवाले गाँवोंकी रैयत निलहे गाँवोंकी रैयतकी अपेक्षा ज्यादा अच्छी स्थितिमें हो जायेगी, हालाँकि निलहे गाँवोंकी रैयतने ही विगत कालमें यह अन्यायपूर्ण भारी बोझ सहन किया है। मेरे विचारमें समितिने इस प्रथाकी बुराईको सही ढंगसे समझा नहीं है। सरकारने यह बात कभी स्वीकार नहीं की थी कि रैयतके लिए नील उपजाना अनिवार्य होगा, और तमाम कागजातोंसे पता चलता है कि तिन-कठिया प्रथा और उससे सम्बन्धित अन्य बातें रैयतपर एक तरहका असह्य बोझ थीं। उक्त प्रस्तावसे रैयतको मुक्ति नहीं मिलती; उलटे, यह तो बागान-मालिकोंके लिए मुँह-माँगी मुराद जैसा है। अब तो बागान-मालिक ही नीलकी खेती छोड़ना चाहते हैं, क्योंकि अब जो भी स्थिति हो, जब अन्य फसलोंकी खेती आरम्भ की गई उस समय नीलकी खेती लाभदायी नहीं रह गई थी। मैंने मसलेपर जमींदारोंके दृष्टिकोणसे भी विचार किया है जैसा कि तावानके मामलेमें किये गये मेरे समझौतेसे स्पष्ट है। वर्तमान प्रश्नपर मैं मुकर्ररी गाँवोंकी रैयतको ठेकेवाले गाँवोंकी रैयतसे अलग नहीं कर सकता। दोनों एक जैसी ही स्थितिमें थे, और उनके बारेमें एक ही नीति होनी चाहिए। इसलिए मैं कानूनकी साधारण व्यवस्थाके अनुसार लगानमें वृद्धि करनेके सिवा और कोई बात स्वीकार नहीं कर सकता, और तिन-कठियाके बदले कोई विशेष वृद्धि करनेका विरोध करता हूँ। किसी विशेष अदालत द्वारा निपटारा होनेमें कई महीने लगेंगे, जो वर्त्तमान विक्षोभजनक दशाओंको देखते अवांछनीय है। एक तात्कालिक और सहज उपचारकी आवश्यकता है, और मेरे इस सुझावमें उक्त दोनों ही बातें शामिल हैं। मेरा सुझाव है कि मूल्योंमें वृद्धिके आधारपर एक निश्चित दरके हिसाबसे, अर्थात् सभी मामलोंमें रुपयेमें ३ आनेकी दरसे लगान बढ़ाया जाये।

सभापतिने कहा कि निलही रैयतकी गैर-निलही रैयतसे तुलना करते समय यह बात ध्यानमें रखनी होगी कि, जिन गाँवोंमें अबवाब लिया जाता है, वहाँ वह शरहबेशीसे ज्यादा होता है, और जहाँ अबवाब नहीं लिया जाता (जैसे मधुवन राज्यमें), वहाँ

लगानमें अन्य स्थानोंकी तुलनामें कहीं अधिक वृद्धि की गई है। निश्चय ही, बेतियाके खमवाले गाँवोंमें ये सवाल नहीं पैदा होते, लेकिन सम्पूर्ण समानता स्थापित कर सकना असम्भव है, और हर हालतमें उक्त प्रस्तावसे उस रैयतकी दशा सुधरेगी जो नीलकी खेती करती है। जहाँतक इस आलोचनाका सवाल है कि प्रस्ताव बागान-मालिकोंके लिए मुँहमाँगी मुराद जैसा है, कहना यह है कि केवल वहीं लगान वृद्धिकी अनुमति दी जायेगी जहाँ बागान-मालिककी कानूनी जायदाद होगी, और वहाँ भी जायदादकी पूरी कीमत नहीं दी जायेगी। मैं ऐसा नहीं मानता कि विशेष अदालतमें बहुत ज्यादा कठिनाइयाँ पैदा होंगी। जमीनके बन्दोबस्तके सरकारी कागजातोंकी मददसे मामले निपटानेमें आसानी होगी और जिस इलाकेके बारेमें फैसले होने हैं वह भी बहुत बड़ा नहीं है।

. . . श्री रेनीने[1] कहा कि यह प्रस्ताव वैसा ही है जैसा कि छोटा नागपुरमें अपनाया गया था। छोटा नागपुरमें खेतीकी अदल-बदल कानूनके अन्तर्गत अनिवार्य है। उन्होंने इस बातसे इनकार किया कि सरकारने यह बात कभी स्वीकार नहीं की थी कि [नीलकी] खेती करनेकी बाध्यता काश्तकारीकी एक शर्त हो सकती है, क्योंकि खण्ड २९ की अवधान धारा (३) इस बातका स्पष्ट प्रमाण है कि सरकारने इसे स्वीकार किया है। इसी प्रकार श्री ईर्विनके शरहबेशीके बारेमें बोर्डके १६ अक्तूबर, १९१२ के पत्रसंख्या ५०३२-आर० (ए) में भी उक्त बात स्वीकार की गई है। श्री गांधीने कहा कि यदि कानूनी अधिकार न्यायसंगत नहीं है, अथवा उसका सर्वथा दुरुपयोग किया गया हो, तो कोई मुआवजा नहीं देना चाहिए। . . .

श्री रीडने कहा कि ज्यादातर रैयतने इसी शर्तपर अपनी-अपनी जमीन ली थी कि वे नील पैदा करेंगे। श्री गांधीने कहा कि शिकायत नीलके विरुद्ध नहीं है, बल्कि जिस ढंगसे और जिन तरीकोंसे उसकी खेती कराई जाती है, उसके विरुद्ध है। . . . शिकायत प्रणालीके विरुद्ध नहीं; बल्कि उस प्रणालीके अन्तर्गत रैयतको पिछड़ा हुआ रखकर उसे जो नैतिक और बौद्धिक क्षति पहुँचाई जाती है उसके विरुद्ध है। सभापतिने कहा कि प्रस्तावसे रैयतको बहुत-कुछ प्राप्त होता है, जैसे

(१) यदि वे न चाहें तो नील पैदा न करनेकी स्वतन्त्रता,
(२) अपनी सबसे अच्छी जमीनपर नीलकी खेती करनेकी मजबूरीसे मुक्ति,
(३) कारखानेके कर्मचारियोंकी देखरेखमें काम करनेसे मुक्ति,
(४) केवल ऐसे मामलोंमें जहाँ भूमिपर जमींदारका कानूनी अधिकार है, वहाँ रैयतको मुआवजा तो देना होगा, लेकिन पूरा नहीं। शेष मामलोंमें उसे कोई मुआवजा नहीं देना होगा।

श्री गांधीने कहा कि इन चार बातोंमें एक भी बात ऐसी नहीं है जिसका प्रस्ताव स्वयं बागान-मालिकोंने न किया हो। लेकिन श्री रेनीने कहा कि बागान-मालिक जहाँ

१. सर जी० रेनी; चम्पारन भूमि-सुधार जाँच समितिके सदस्य।

अपनी शर्तोंपर ये छूटें दे रहे हैं, वहाँ इस प्रस्तावके अन्तर्गत वे एक अदालत द्वारा निश्चित की गई शर्तें स्वीकार करनेको बाध्य होंगे।

सभापतिने कहा कि श्री गांधी जो तर्क रख रहे हैं वह तो यह कहनेके समान है कि चूंकि रैयतपर भूतकालमें जुल्म हुए हैं इसलिए न्यायसंगत लगान-भर देकर उसे छुट्टी मिल जानी चाहिए, यह तर्क मुझे ठीक नहीं प्रतीत होता।

इसके बाद बैठक स्थगित हो गई।

[अंग्रेजीसे]

सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन, सं० १५८, पृष्ठ २९६–३००।

३८३. चम्पारन-समितिकी बैठककी कार्यवाहीसे

अगस्त ११, १९१७

पिछले दिनकी बहसको जारी करते हुए श्री गांधीने कहा कि शरहबेशीके रूपमें जो रकम ली जाती है वह औसतन लगानका ५० प्रतिशत होती है। राजा कीर्त्यानन्दने जो टिप्पणी समितिके सदस्योंको भेजी है उसमें शरहबेशी खत्म करके उसकी जगह लगानमें रुपयेमें ४ आने बढ़ानेका, और मूल्योंमें होनेवाली वृद्धिको ध्यानमें रखते हुए साधारण बढ़ोतरी करनेका सुझाव दिया है। उन्होंने कहा, मैं अपने साथी सदस्योंके विचारोंको यथासम्भव माननेके लिए उत्सुक हूँ, और मूल्योंमें वृद्धि होनेपर लगानमें जो बढ़ोतरी होती है उससे ऊपर थोड़ी-बहुत और बढ़ोतरीकी बात माननेको तैयार हूँ, लेकिन मैं लगानमें दण्डस्वरूप बढ़ोतरी करनेका समर्थन नहीं करूँगा। सबसे ज्यादा कठिनाई उस शरहबेशीके सिलसिलेमें होगी जो पहले ही ली जा चुकी है। मेरे विचारमें मूल्य-वृद्धिके कारण जो बढ़ोतरी की जा सकती है, उससे बहुत ज्यादा बढ़ोतरी करना खतरनाक होगा।... अध्यक्षने कहा, प्रस्तावको जैसा मैंने समझा है, वह यह है कि जहाँ काश्तकारीकी शर्तोंके अन्तर्गत नील पैदा करनेकी बाध्यता मौजूद थी, या जहाँ उसके एवजमें शरहबेशीकी शर्त मंजूर हुई थी, ऐसे मामलोंमें मूल्य वृद्धि होनेपर लगानमें सामान्यतया जो वृद्धि की जा सकती है, उससे ऊपर थोड़ी और वृद्धि करने दी जाये। यह अतिरिक्त वृद्धि दण्ड-स्वरूप नहीं होगी। उन्होंने कहा, लगानमें कुल वृद्धिकी निश्चित राशि निर्धारित कर सकना असम्भव होगा, क्योंकि अभी यही बात अनिश्चित है कि मूल्योंमें वृद्धि होनेके कारण लगानमें कितनी वृद्धि करनेकी अनुमति अदालतें देंगी। अतः प्रस्तावमें इस वृद्धिके ऊपर की जानेवाली अतिरिक्त वृद्धिका ही उल्लेख किया जा सकता था। उन्होंने श्री गांधीसे पूछा कि वे कितनी अतिरिक्त वृद्धिके लिए सहमत हो सकते हैं। श्री गांधीने कहा कि रुपयेमें एक आनेसे अधिक नहीं।

...अध्यक्षने कहा कि तथ्य यह है कि बागान-मालिकों और रैयतके बीच हुए एक बन्दोबस्तके अनुसार शरहबेशीमें ५० प्रतिशतकी वृद्धि की गई थी। श्री गांधीने कहा कि यह वृद्धि बहुत ज्यादा है क्योंकि जिस कानूनी जायदादके बदले यह बढ़ी हुई अतिरिक्त रकम वसूली गई थी, वह न्याय-विरुद्ध है और इसलिए अतिरिक्त वृद्धिमें कमी की जानी चाहिए। श्री गांधीने यह भी कहा कि यह तथ्य भी विचारणीय है कि काश्तकार लगान अदा नहीं, कर रहे हैं, और एक मामलेमें तो उनको अपने विरोधमें सफलता मिल चुकी है। मेरा सुझाव मान लेनेपर समिति वर्त्तमान संकटको तत्काल समाप्त कर सकेगी। समिति फैसला करनेकी अपनी जिम्मेदारी किसी दूसरी निर्णायक समिति-(विशेष अदालत) पर नहीं डाल सकती। श्री ऐडमीकी रायमें एक आना रुपया काफी नहीं था, और श्री रेनी द्वारा बताई गई कठिनाइयोंको ध्यानमें रखते हुए वे इस पक्षमें थे कि मुकर्ररी गाँवोंमें एक विशेष अदालत द्वारा ऐसे सभी मामलोंमें लगान एक सर्वसामान्य तरीकेपर निश्चित कर दिया जाये जहाँ नील पैदा करनेकी बाध्यता या तो अब भी बनी हुई थी, और या उसके बदले शरहबेशी दी जाती थी। राजा कीर्त्यानन्द सिंहने अपनी टिप्पणीमें रुपयेमें चार-आने बढ़ानेके प्रस्तावका समर्थन किया। श्री गांधीने कहा कि यदि श्री ऐडमीका प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया तो माना जायेगा कि समितिने अपना आधा ही फर्ज निबाहा है। इसके विरुद्ध मेरी मुख्य आपत्ति यह है कि जो क्षोभ पहलेसे ही व्याप्त है इस प्रस्तावसे उसमें और वृद्धि होगी। समितिको बागान-मालिकोंसे परामर्श करनेका अधिकार है, और मेरी दृष्टिमें उसका बागान-मालिकोंके साथ ही कोई समझौता कर लेना ज्यादा अच्छा होगा; क्योंकि किसी निर्णायक समिति या अदालतकी नियुक्ति करनेसे अन्तिम समझौता होनेमें विलम्ब होगा। श्री रीडने कहा कि सबसे ज्यादा प्रभावित होनेवाली नील कम्पनियाँ मोतीहारी, पिपरा और तुरकौलियाकी हैं, और मैं इस प्रस्तावको इन तीनों कम्पनियोंके सामने रखनेको तैयार हूँ। सभापति महोदयने कहा कि पहले यह तय कर लेना चाहिए कि क्या बागान-मालिकोंके सामने रखा जानेवाला प्रस्ताव अन्तिम होगा जिसे वे स्वीकार या अस्वीकार कर सकते हैं; अथवा इसे केवल एक ऐसा आधार माना जाये जिसपर आगे बातचीत की जा सके। मैं दूसरी बातके पक्षमें हूँ। बिना अदालतका सहारा लिये मामलेको तय कर लेनेमें बहुत लाभ है, और चूँकि मैं भी एक आनेको पर्याप्त नहीं मानता इसलिए मेरी रायमें इसके ऊपर बागान-मालिकोंसे बातचीत की जानी चाहिए। श्री गांधीने कहा, मैं यह नहीं कहता कि मैं एक आनेसे अधिक बढ़ोतरीको स्वीकार ही नहीं करूँगा, लेकिन मैं यह भी नहीं कह सकता कि मैं इससे ज्यादाकी बात स्वीकार कर लूँगा। मेरी तरफसे तो एक आना भी रियायत ही है, क्योंकि मैं मूल्य-वृद्धिके कारण लगानमें जितनी बढ़ती की जा सकती है, रैयतको उससे अधिक देनेके लिए कहना उचित नहीं मानता। श्री रीडने कहा, मेरी समझमें बागान-मालिक आठ आनेसे कम वृद्धिकी बात स्वीकार नहीं करेंगे। उन्होंने कहा कि पिपरा तकमें, जहाँ सबसे अधिक बढ़ी हुई दरपर लगान वसूला गया है, लगान केवल रु० २ प्रति एकड़ है।

इसके बाद श्री रीडने सुझाव दिया कि यह प्रस्ताव ज्यादा न्यायोचित होगा कि शरहबेशीपर एक नियत प्रतिशत, कहिए २५ प्रतिशतके हिसाबसे घटा दिया जाये। श्री गांधीने कहा कि मैं समझौतेके आधारके रूपमें बड़ी खुशीसे यह सुझाव स्वीकार करनेको तैयार हूँ, और सद्भावना स्थापित करनेके लिए काफी दूर तक जानेको तैयार रहूँगा। सर्वसामान्य रूपसे यह स्वीकार किया गया कि मूल प्रस्तावकी अपेक्षा बातचीतके आधारके रूपमें यह सुझाव ज्यादा न्यायसंगत है। यह तय हुआ कि इर्विन,[1] हिल[2] और नॉर्मनसे[3] अगले दिन आनेको कहा जाये ताकि प्रस्तावको उनके सामने रखा जा सके।

तावान — पहली बैठकमें जिस प्रस्तावको निर्णयके लिए उठा रखा गया था, वह यह था कि जहाँ तावान पहले ही दिया जा चुका है, उन मामलोंमें कोई कार्रवाई न की जाये, लेकिन जहाँ तावानकी बकाया रकमोंके बदले रुक्के ले लिये गये थे, वहाँ वे रुक्के रद कर दिये जायें। अध्यक्षने कहा कि इस प्रस्तावमें एक कठिनाई यह है कि बहुतसे रुक्के ऐसे हैं जिनमें तावानके अलावा और भी कई ढंगकी रकमें शामिल हैं। इसलिए इन रुक्कोंके सवालपर अन्तिम निर्णय करनेसे पहले कोई जाँच-पड़ताल करनी जरूरी होगी। दूसरी कठिनाई यह है कि इस प्रस्तावका प्रभाव रैयत और बागान-मालिकों, दोनोंके ऊपर असमान रूपसे पड़ता है। श्री गांधीने कहा कि पहली कठिनाई तो कारखानेकी बहियोंकी जाँच करके हल की जा सकती है। तावानकी बकाया रकमें छोड़ दी गईं या नहीं, यह देखनेका काम मैं बेतिया राजपर छोड़ देना चाहूँगा। श्री रीडने कहा, मेरी समझमें बैरिया कारखानेको छोड़कर मिले-जुले रुक्के कहीं और नहीं लिये गये हैं; बैरियामें रैयतके कर्जोंको खतम करके उन रकमोंको तावानमें जोड़ लिया गया था। मैंने शरहबेशीके बारेमें जो सुझाव दिया था वही सुझाव तावानके बारेमें भी दूंगा अर्थात् बकाया तावानमें से एक निश्चित प्रतिशत रकम निकाल दी जाये और जो तावान पहले दिया जा चुका है उसमें से एक निश्चित प्रतिशत रकम वापस कर दी जाये। यह बात केवल ठेकेवाले गांवोंपर लागू होगी।...

अगला मुद्दा जिसपर विचार किया गया, यह था कि जिन मामलोंमें तावान लिया जा चुका है, बेतिया राज वहाँ भी लगान बढ़ानेका दावा कर सकता है या नहीं। श्री रेनीने कहा, मैं इस प्रस्तावसे सहमत हूँ कि ऐसे मामलोंमें कोई वृद्धि न की जाये। किन्तु अध्यक्षका विचार था कि बेतिया राजके हितोंको भी ध्यानमें रखना आवश्यक है। उन्होंने कहा, मेरा सुझाव है कि बेतिया राजको ऐसे मामलोंमें लगान बढ़ानेका अधिकार बना रहने दिया जाये जिनमें तावान लिया जा चुका है, लेकिन कुछ वर्षों तक, कहिए पाँच वर्ष तक, बढ़ा हुआ लगान वसूल न किया जाये। श्री गांधीने सुझाव दिया कि अगला बन्दोबस्त होने तक लगानमें बढ़ी हुई रकम छोड़ दी जाये। श्री रेनीने कहा

१. एस० डब्ल्यू० इर्विन, मोतीहारी कारखानेके प्रबन्धक।
२. जे० एल० हिल; तुरकौलिया कम्पनीके प्रबन्धक।
३. जे० वी० नॉर्मन; पिपराकी नील कम्पनीके प्रबन्धक।

कि अगर तावानकी रकम लगानमें बढ़ी हुई अतिरिक्त रकमकी पन्द्रह गुनी न हो, तो १५ वर्षकी अवधिको उचित नहीं माना जा सकता। उन्होंने राय दी कि तावानके बराबरकी रकम बेतिया राजको बढ़े हुए लगानमें से छोड़ देनी चाहिए। श्री रीडने कहा कि इस स्थितिके लिए राज भी कुछ हद तक जिम्मेदार है। थोड़ी बहसके बाद यह सिफारिश करनेका निर्णय किया गया कि जिन मामलोंमें तावान लिया जा चुका है उनमें भी राजको बढ़ी हुई दरपर लगान वसूल कर लेनेके दावेसे वंचित न किया जाये, किन्तु राज सात वर्ष तक लगानकी अतिरिक्त रकम छोड़ देगा।...

*　　　　*　　　　*

श्री गांधीने निम्नलिखित सुझाव पेश किये:

(१) कि समिति यह सिफ़ारिश करे कि सरकार समितिकी रिपोर्टपर जो आदेश जारी करे उनकी नकलें रैयतको प्रान्तकी भाषाओंमें दी जायें। यह स्वीकार कर लिया गया।

(२) मिट्टीके तेलपर एकाधिकार समाप्त किया जाना चाहिए। इसे भी स्वीकार कर लिया गया।

(३) उन्होंने प्रस्ताव किया कि रैयतको बताया जाना चाहिए कि दस्तूरी गैर-कानूनी है। रिपोर्टमें यह उल्लेख करना स्वीकार कर लिया गया कि समितिकी जानकारीमें यह तथ्य लाया गया है कि कारखानेका अमला भुगतानपर कमीशन लेता है जो सर्वथा गैरकानूनी है और उसे ऐसा करनेसे रोकनेकी पूरी कोशिश की जानी चाहिए। यह सिफारिश करना भी तय हुआ कि रैयतके नाम एक घोषणा जारी करके उन्हें जानकारी दे दी जाये कि दस्तूरी देना कानूनमें नहीं आता।

(४) उन्होंने सुझाव दिया कि समितिकी सिफारिशोंपर सरकार द्वारा दिये गये आदेशोंका पालन किया जा रहा है या नहीं, इसकी समय-समयपर जाँच करनेके लिए एक अधिकारी मुकर्रर किया जाये। यह तय हुआ कि रिपोर्टमें एक अनुच्छेद जोड़ा जाये जिसमें इस बातपर जोर दिया जाये कि समितिकी सिफारिशोंके अनुसार सरकार द्वारा दिये गये आदेशोंपर अमल कराना जिलेके सरकारी अधिकारियोंका एक महत्त्वपूर्ण कर्त्तव्य होगा। जबतक कि सरकारको यह सन्तोष नहीं हो जाता कि इन आदेशोंपर पूरी तरह अमल हो चुका है, बेतिया राजके कर्मचारियोंपर इसका दायित्व विशेष रूपसे रहेगा।

[अंग्रेजीसे]

सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज़ मूवमेंट इन चम्पारन, सं० १५९, पृष्ठ ३००–५।

३८४. चम्पारन-समितिकी बैठककी कार्यवाहीसे

अगस्त १२, १९१७

अगली बैठकमें समितिके निमन्त्रणपर सर्वश्री इर्विन (मोतीहारी), नॉर्मन (पिपरा) और हिल (तुरकौलिया) उपस्थित थे। अध्यक्षने कहा कि यहाँ होनेवाली चर्चा सर्वथा गुप्त रखी जाये। उन्होंने बताया कि समिति सर्वसम्मतिसे इस निष्कर्षपर पहुँची है कि तिन-कठिया प्रणाली समाप्त होनी चाहिए और उसके स्थानपर एक संक्षिप्त अवधिवाले बन्दोबस्तके अन्तर्गत खुश्की प्रणाली लागू की जानी चाहिए। इसलिए जहाँ अबतक नील पैदा करनेकी बाध्यता बनी हुई है और जहाँ उससे माफी मिल गई है, ऐसे सभी मामलोंमें नील पैदा करनेकी बाध्यतासे छूटके प्रश्नपर विचार करना आवश्यक हो गया है। . . . चूँकि श्री गांधीने कहा था कि वे कुछ निश्चित सिद्धान्तोंके आधारपर समझौतेकी सम्भावनापर विचार करनेको तैयार हैं इसलिए श्री रीडने उनसे कहा कि वे उपस्थित बागान-मालिकोंके सामने अपना प्रस्ताव रखें। श्री गांधीने कहा कि मेरा उद्देश्य सद्भावना और हेलमेल पैदा करना है। जितनी बड़ी संख्यामें लोगोंने शरहबेशीके खिलाफ अपना विरोध प्रदर्शित किया है, उसे देखते हुए मुझे कोई सन्देह नहीं है कि रैयतको शरहबेशीके कारण बहुत कठिनाइयाँ झेलनी पड़ी हैं। अनिवार्यताकी शर्तमें परिवर्तन करनेके समय नीलकी खेती लाभजनक नहीं रह गई थी, और उक्त बाध्यता समाप्त करनेमें दोनों पक्षोंको लाभ था। इसलिए यदि रैयत लगानमें कानूनकी रूसे साधारण वृद्धिके अलावा कोई और भार थोपनेपर एतराज प्रकट करती है तो वह उचित ही है। साधारण वृद्धिके प्रश्नके सम्बन्धमें, जिसपर पिछली बैठकमें कुछ शंकाएँ प्रकट की गई थीं, श्री गांधीने १९१६ की स्पेशल अपील संख्या १४ पर स्पेशल जज द्वारा दिये गये निर्णयका उल्लेख किया और कहा कि अन्ततः जो वृद्धि करनेका फैसला होगा वह चार आने आठ पाई नहीं, तीन आने ही होगा। उन्होंने कहा, मैंने शरहबेशीके बदले रियायतके तौर पर एक आनेकी अतिरिक्त वृद्धि करनेका सुझाव दिया है। बागान-मालिक शरहबेशीकी जो रकम पहले ही पा चुके हैं उसमें से कोई अंश वापस देनेकी बात निस्सन्देह उन्हें अपने साथ अन्याय लगेगी, लेकिन मैं उनसे अपील करूँगा कि वे रैयतकी स्थितिको भी समझें। जहाँ शरहबेशी पहले ही वसूली जा चुकी है ऐसे सभी मामलोंमें कटौती करनेके किसी प्रस्तावको मैं स्वीकार करनेके लिए तैयार हूँ। समझौता-वार्त्ताके लिए ऐसा प्रस्ताव ज्यादा अच्छा होगा। उन्होंने कहा, आपसी समझौते द्वारा एक राशि नियत कर लेना दोनों पक्षोंके लिए अच्छा होगा। अगर सुझाये गये दोनों तरीकोंसे ऐसा समझौता नहीं हो सका तो एक विशेष अदालत द्वारा लगान तय करानेका रास्ता ही बच रहेगा। इससे बड़े लम्बे झगड़े खड़े हो जायेंगे और उनका निपटारा होनेमें बहुत समय लगेगा। तथापि, यदि बागान-मालिक विशेष अदालतकी स्थापनाको ज्यादा बेहतर तरीका मानते हों, तो मैं

उनके प्रस्तावपर विचार करनेको तैयार रहूँगा। अध्यक्षने कहा कि अभीतक जो बहस हुई है उसमें समितिने मूल लगानमें एक अतिरिक्त राशिकी वृद्धि करनेकी अपेक्षा जो शरहबेशी ली जाती है उसमें एक आनुपातिक कमी करनेके आधारपर समझौतेका होना ज्यादा ठीक माना है; और उसका कारण यह है कि दूसरा तरीका विभिन्न कम्पनियोंकी विभिन्न परिस्थितियोंको देखते हुए ज्यादा न्याय-संगत है।... श्री रीडने बताया कि मैंने यहाँ उपस्थित तीनों बागान-मालिकोंसे आज सुबह बड़ी देर तक बातचीत की। पहले तो वे दोनों पक्षोंकी सहमति और सैटिलमेंट अदालतकी स्वीकृतिसे लगानमें जो वृद्धि की गई थी, उसमें कोई कमी करनेको तैयार नहीं थे। उनका [बागान-मालिकोंका] कहना था कि उनके पास जो मूल्यवान जायदाद है, समिति उनसे उस जायदादका एक अंश छोड़ देनेकी बात कह रही है। मैंने उन्हें समझाया कि भविष्यमें होनेवाली मुकदमेबाजी और झंझटोंको टालनेके लिए अगर उन्हें थोड़ा-बहुत त्याग करना पड़े तो वह भी वांछनीय होगा। अन्तमें वे अनिच्छापूर्वक लगानमें थोड़ी छूट देनेके लिए तैयार हो गये हैं। तथापि श्री हिलने मुझसे कह दिया है कि उनके यहाँ लगानमें बहुत कम वृद्धि की गई है, इसलिए और जगहोंके मुकाबले उनके यहाँ उसमें छूट भी बहुत थोड़ी ही दी जायेगी। श्री गांधीने कहा कि मैं यह सिद्धान्त स्वीकार करनेको तैयार हूँ कि अलग-अलग कम्पनियाँ लगानमें विभिन्न दरोंपर कमी करें, लेकिन कठिनाई तो यह है कि समितिके सामने आँकड़े नहीं हैं। मुझे इसमें सन्देह है कि बिना और जाँच पड़ताल किये, महज बन्दोबस्तके कागजातोंसे ऐसे पर्याप्त आँकड़े प्राप्त हो सकेंगे जिनके आधारपर लगानमें दी जानेवाली छूटोंमें भिन्न स्थानोंपर होनेवाले अन्तरका औचित्य तय किया जा सके। अध्यक्षने कहा कि आपसी रजासे समझौता करनेसे बागान-मालिकोंको ही नहीं, रैयतको भी बहुत फायदे होंगे।... यदि समिति लगानमें एक निश्चित प्रतिशत कमी कर सके तो यह समझौतेकी दिशामें महत्त्वपूर्ण कदम होगा, और इसलिए मेरा खयाल है कि हमें एक निश्चित राशि तय करनेकी कोशिश करनी चाहिए। पारस्परिक सहमतिसे कोई समझौता न हो सकनेपर जो दूसरा तरीका बच रहेगा उसके फलस्वरूप पारस्परिक कटुताकी भावना और तीव्र होगी, और सम्भावना यही होगी कि स्पेशल अदालतके निर्णयोंको स्वस्थ-मनसे स्वीकार न किया जाये। मैं बागान-मालिकोंसे अनुरोध करूँगा कि वे शरहबेशीमें की गई वृद्धिको ज्यादासे-ज्यादा किस हदतक कम करनेको तैयार हैं, यह निश्चित करके उसकी राशि बता दें। सर्वश्री इर्विन और नॉर्मनने कहा कि वे ज्यादासे-ज्यादा २५ प्रतिशत और श्री हिलने कहा कि वे २० प्रतिशतकी कमी करनेको तैयार हैं। श्री गांधीने कहा कि मैं तुरन्त इस वक्त यह कहनेकी स्थितिमें नहीं हूँ कि कितनी छूटको मैं उचित मानूँगा, और न मैं यही समझता हूँ कि समिति इसी समय एक निश्चित प्रतिशत निर्धारित करनेकी स्थितिमें है।... मैं यह जानना चाहता हूँ कि क्या बागान-मालिक छूटका प्रतिशत क्या हो इसका निर्णय समितिके ऊपर छोड़नेके लिए तैयार हैं? बागान-मालिकोंने अपनी स्थिति

स्पष्ट करते हुए कहा कि यदि समिति २५ प्रतिशत तक की छूट देगी तो वे उसे स्वीकार कर लेंगे; किन्तु यदि वह २५ प्रतिशतसे अधिक छूटकी सिफारिश करेगी तो वे उसका विरोध करेंगे। स्वीकार भी हम यही मानकर करेंगे कि समितिका निर्णय सभीपर अनिवार्य रूपसे लागू होगा, और समझौतेसे हटकर कोई मुकदमेबाजी नहीं की जायेगी। सभापति महोदयने कहा कि मैं समझता हूँ कि कोई समझौता बाध्यकारी हो, इसके लिए कानून बनना आवश्यक है। यह समितिका काम है कि वह प्रयत्न करके छूटके प्रतिशतपर सहमति प्राप्त करे। उन्होंने कहा कि शरहबेशीके इन सभी मामलोंमें लगानको सैटिलमेंट अदालतोंने उचित और न्यायसंगत ठहराया था। इसलिए समितिको आश्वस्त होना चाहिए कि शरहबेशीमें प्रस्तावित छूट देनेके बाद जो लगान निर्धारित किया जायेगा वह रैयतके लिए और भी अधिक न्याय्य होगा। विवादग्रस्त सभी मामलों-पर विचार करते समय केवल उन्हीं मामलोंमें सैटिलमेंट अदालतने लगानको उचित और न्यायसंगत ठहराया जिनमें तिन-कठियावाली बाध्यता सिद्ध हो गई थी और लगानकी दर नीची थी। अतः मेरी समझमें इसका कोई भय नहीं है कि कमी कर देनेके बादके नये लगानोंकी दर उचित और न्यायसंगत नहीं होगी। श्री गांधीने कहा कि सैटिल-मेंट अफसरने जो निर्णय दिये वे गलत थे और उसने कानूनकी व्याख्या भी गलत की थी। मुझे सन्देह है कि कानूनी छानबीनके सामने सैटिलमेंट अदालतके फैसले ठीक ठहर सकेंगे। मेरी रायमें न्यायकी दृष्टिसे बन्दोबस्तके फैसले गलत थे। श्री गांधीने इसके बाद १९१६ की स्पेशल अपील सं० १४ में स्पेशल जजके उस फैसलेका फिर उल्लेख किया जिसमें स्पेशल जजने सैटिलमेंट अफसरका यह मत ठीक ठहराया था कि प्रति रुपया ०–४–८ की वृद्धि अनुचित है। उन्होंने कहा, यदि सैटिलमेंट अदालतोंकी रायमें ०–४–८ की वृद्धि अनुचित थी, और उन्होंने सिर्फ ३ आनेकी वृद्धिकी अनुमति देना स्वीकार किया था, तो वही अदालतें दूसरे मामलोंमें १०० प्रतिशत तक की वृद्धिको उचित और न्यायसंगत कैसे ठहरा सकती हैं? . . . श्री रेनीने कहा कि श्री गांधी कानूनन की गई वृद्धिके मामलेको उचित और न्यायसंगत लगानके मामलेसे नाहक जोड़ रहे हैं। बेतिया राज द्वारा अपने लगानके बन्दोबस्तके लिए दी गई अर्जियाँ इस धारणापर आधारित हैं कि मौजूदा लगान उचित और न्यायसंगत हैं। शरहबेशीवाले मामलोंमें ऐसी धारणाका प्रश्न ही नहीं उठता क्योंकि उनमें लगानकी दर बहुत कम थी। कानूनी दृष्टिकोण और न्यायसंगत दृष्टिकोणमें सावधानीके साथ भेद करना बहुत जरूरी है।

श्री गांधीने कहा कि उचित और न्यायसंगत लगान क्या है, यह तय करते समय जमीनकी उपजपर ही विचार नहीं करना चाहिए। चूंकि लगान जमीनके उत्पादनका केवल एक छोटा-सा हिस्सा होता है, इसीलिए वह बहुत कम है ऐसा नहीं कहा जा सकता। मेरी कठिनाई यह है कि बागान-मालिकोंके और मेरे दृष्टिकोणमें अन्तर है, और जहाँ दृष्टिकोणोंमें भेद हो वहाँ पारस्परिक सहमतिसे मामलोंको तय कर सकना बहुत ही कठिन होता है। मैं दण्डस्वरूप वृद्धिसे कभी सहमत नहीं हो सकता, और इस समय

२५ प्रतिशतकी कमी करनेके प्रस्तावमें मुझे दण्डस्वरूप वृद्धिकी बात नजर आती है। मैं कुछ निर्णय करनेसे पहले विचार करनेके लिए थोड़ा समय चाहता हूँ। श्री इर्विनने विशम्भरपुर गाँवका उदाहरण दिया जो छोटे-छोटे मालिकोंके स्वामित्वमें था। उन्होंने कहा कि यह गाँव मेरे पट्टेमें नहीं है हालाँकि यह बेतिया राजके उन गाँवोंसे घिरा हुआ है जो मेरे पट्टेमें हैं। विशम्भरपुरमें लगानकी दर रु० ९ से लेकर कहीं-कहीं रु० १४ प्रति बीघे तक थी जब कि उसके चारों ओरके मेरे पट्टेवाले गाँवोंमें लगानकी औसत दर शरहबेशी मिलाकर भी रु० ४ से रु० ५ प्रति बीघेसे अधिक नहीं थी। यदि इस प्रस्तावसे रैयतको काफी लाभ होनेकी बात है, तब मेरी समझमें नहीं आता कि यह किस तरह कहा जा सकता है कि रैयतके लिहाजसे यह प्रस्ताव अनुकूल नहीं है। श्री गांधीने यह तो माना कि रैयतके दृष्टिकोणसे कानूनी स्थिति सर्वथा निराशाजनक नहीं है।

* * *

श्री गांधीने कहा कि मैंने निम्नलिखित आँकड़े निकाले हैं:

शरहबेशीमें प्रति बीघे १९ या २० आनेसे लेकर ३० या ३२ आने तक की वृद्धि हुई है। २५ प्रतिशतकी छूट देनेपर यह वृद्धि घटकर १४ आने ९पाई या १५ आनेसे लेकर २२ आने ६ पाई या २४ आने रह जायेगी। मेरे हिसाबसे, यदि लगानकी दर रु० २–६–० प्रति बीघे हो, तो मेरे प्रस्तावके अन्तर्गत प्रति बीघे १० आनेकी वृद्धि होगी, और इसमें तथा दूसरे लोगों द्वारा प्रस्तुत प्रस्तावोंके अन्तर्गत होनेवाली वृद्धिकी रकममें बहुत-काफी अन्तर है। अध्यक्षने कहा कि मोतीहारीमें शरहबेशीकी रकम पुराने लगानका ६० प्रतिशत थी। इसे घटाकर ४५ प्रतिशत कर देनेका प्रस्ताव है, जब कि श्री गांधीका प्रस्ताव है कि केवल २५ प्रतिशत दिया जाये। इन दोनोंमें २० प्रतिशतका अन्तर है। श्री रेनीने कहा कि कुछ मामले हैं जिनमें प्रतिशतके हिसाबसे ही कुछ तय करना भ्रामक होगा, क्योंकि जिन जगहोंपर शरहबेशीका प्रतिशत अधिक था वहाँ, जैसे पिपरामें, लगान बहुत कम था। अध्यक्षने कहा तुरकौलिया और मोतीहारी, इन दोनों स्थानोंमें थोड़ेसे मामलोंको छोड़कर रैयतने पिछले छः वर्षोंसे बिना किसी आपत्तिके बढ़ा हुआ लगान दिया है, और मेरा खयाल है कि २५ प्रतिशतकी छूट रैयतके लिए काफी बड़ी रियायत है। श्री गांधीने कहा कि मैं इस प्रश्नपर रैयतको छः साल पहले जो माँगनेका हक था, उसकी दृष्टिसे विचार करता हूँ क्योंकि यदि इससे पहले उन्होंने कोई आपत्ति नहीं उठाई तो इसका कारण था अपनी कानूनी स्थितिके सम्बन्धमें उनका अज्ञान। अध्यक्षने कहा कि एक विशेष अदालतकी स्थापना न हो, उसका एकमात्र तरीका यही है कि सहमतिसे समझौता हो जाये। यह बहुत अनिश्चित है कि रैयतके सामने इस समय जो शर्तें रखी जा रही हैं, अदालत उन्हें उससे अच्छी शर्तें दे ही देगी। श्री गांधी भले ही ऐसा मानते हों कि शरहबेशी सहित वर्तमान लगानमें प्रस्तावित छूट उचित और न्यायसंगत नहीं है, पर क्या वे यह भी स्वीकार नहीं करेंगे कि रैयत इतना लगान आसानीसे दे सकती है। श्री गांधीने कहा, मैं चम्पारनकी रैयतको गरीब मानता हूँ और मैं यह माननेको

तैयार नहीं हूँ कि लगान आसानीसे अदा किया जा सकता है।... श्री गांधीने कहा कि रैयत किस श्रेणीकी है, और भूमिकी उत्पादन-शक्ति क्या है, इन दोनों ही बातोंपर विचार करना जरूरी है। चम्पारनकी रैयत आदतन अच्छी काश्तकार नहीं है। मेरी रायमें यदि लगानकी दरें प्रकटतः कम हैं, तो इसका समुचित कारण भी है। मैं समझता हूँ कि लगानमें वृद्धि न करके जो रियायत दिखाई गई है, रैयतने उसकी पूरी कीमत चुका दी है। मेरी दृष्टिमें कानूनी स्थिति तो यह है कि बिना कोई मुआवजा चुकाये रैयत नील पैदा करनेकी बाध्यतासे अपनेको मुक्त मान सकती है। ऐसा कहनेमें मेरा मंशा यह नहीं है कि नीलकी खेती बिलकुल खत्म हो जाये। मैं रैयतको सलाह दूँगा कि वह नीलकी खेती करे, बशर्ते कि उसके लिए उसे मुनासिब पैसे मिलें। ... श्री रेनीने कहा कि श्री स्वीनीके उत्पादन सम्बन्धी आँकड़ोंके अनुसार पिपरामें लगान बहुत कम था, मोतीहारीमें मामूली था और तुरकौलियामें भी लगान ज्यादा नहीं था। यदि शरहबेशीमें २५ प्रतिशत कमी कर दी जाये तो राहत मिलनेकी काफी गुंजाइश पैदा हो जायेगी। श्री गांधीने कहा कि मैं २५ प्रतिशत छूटकी बात स्वीकार करनेमें अपनेको असमर्थ पा रहा हूँ। श्री रोडने जानना चाहा कि क्या परस्पर सहमतिसे समझौता न होने पर श्री गांधी अदालतकी स्थापना करनेका सुझाव रखेंगे। श्री गांधीने कहा कि यदि समिति किसी समझौतेपर नहीं पहुँच पाती, तो मैं अदालतका सुझाव माननेको तैयार रहूँगा। मैं जानना चाहता हूँ कि क्या समिति और अधिक छूट देनेकी सिफारिश नहीं कर सकती? अध्यक्षने कहा कि मेरी रायमें समिति बागान-मालिकोंसे ज्यादासे-ज्यादा जितनी कमी करा सकती थी, वे उतनेके लिए राजी हो गये हैं, और मैं उससे ज्यादाकी छूट स्वीकार करनेको तैयार नहीं हूँ। मैं कल्पना भी नहीं कर सकता कि इस प्रस्तावको स्वीकार करके रैयतका कोई भी व्यक्ति कभी पछतायेगा। इससे केवल वही रैयत असन्तुष्ट हो सकती है जो अब भी नीलकी खेती करती हो। श्री गांधीने कहा कि रैयत ऐसा समझती है कि जहाँ शरहबेशी खण्ड १० (ग) के अन्तर्गत निर्धारित की गई है, वहाँ भी वह कानूनी तरीकोंसे उससे मुक्ति पा सकती है। इसलिए मुझे ऐसा नहीं लगता कि मौजूदा प्रस्तावको अस्वीकार करके उन्हें पछताना पड़ेगा।

श्री गांधीने जानना चाहा कि यदि समिति सामान्य प्रश्नपर किसी निष्कर्ष तक पहुँच जाती है तो जलहाकी कम्पनीके मामलेमें क्या होगा। उस कम्पनीने काश्तकारोंसे उनकी भूमि वापस ले ली थी, और फिर उनके रिश्तेदारोंके साथ बढ़े हुए लगानके आधारपर बन्दोबस्त कर लिया था, और इस रूपमें शरहबेशी वसूल की थी। दीवानी अदालतने कुछ मामलोंमें फैसला दिया था कि पुराने काश्तकारोंको पहलेके लगानकी दरपर उनकी भूमि वापस कर दी जाये। अध्यक्षने कहा कि यह पहला अवसर है कि यह मामला मेरे ध्यानमें लाया गया है। मेरे विचारसे कोई बात तय करनेसे पहले हमें तथ्योंका पता लगा लेना चाहिए और सुन लेना चाहिए कि श्री जेम्सनको इस बारेमें क्या कहना है। ...

आम सवालकी फिर चर्चा करते हुए श्री ऐंडसीने कहा कि स्थितिके औचित्यका तकाजा है कि हम पिछले ५९ वर्षोंको बिलकुल भूल जायें और दोनों पक्षोंको उसी स्थितिमें ला रखें जिसमें वे नीलकी खेती शुरू न होनेकी हालतमें होते। श्री गांधीने कहा कि ऐसा नहीं किया जा सकता क्योंकि इन पिछले ५० वर्षोंमें रैयतको जो-कुछ मिला है उसकी तुलनामें उसे खोना बहुत-अधिक पड़ा है। श्री रेनीने मधुबन बाबूकी जागीरमें लगानकी ऊँची दरकी ओर समितिका ध्यान दिलाया। श्री गांधीने स्वीकार किया कि भारतीय जमींदारोंने अपनी रैयतका लगान बढ़ा दिया है।... तब अध्यक्षने कहा कि चूँकि श्री गांधी २५ प्रतिशत छूटकी बात स्वीकार नहीं कर सकते, अतः दो ही रास्ते बचते हैं -- समिति बहुमतसे सिफारिश कर सकती है कि २५ प्रतिशत छूट उचित है। श्री गांधी असहमतिकी टिप्पणीमें बता सकते हैं कि उनकी दृष्टिमें और अधिक छूट क्यों जरूरी है। और फिर यह सरकारके ऊपर छोड़ दिया जाये कि वह दोनों सम्मतियोंपर विचार करनेके बाद जैसा ठीक समझे कानून बनाये। लेकिन यह रास्ता तभी अपनाया जा सकता है जब मुझे इत्मीनान हो कि सरकारका जो भी फैसला हो उसे दोनों पक्ष स्वीकार कर लेंगे। यदि उसे स्वीकार नहीं किया गया तो संघर्ष और असन्तोष फिर भी बना रहेगा, और वैसी स्थितिमें समितिको लगान तय करनेके दूसरे तरीकेकी सिफारिश करनी पड़ेगी, यानी एक विशेष अदालतकी स्थापना करनेकी। मैं आशा करता हूँ कि शान्तिके हितमें यही ठीक होगा कि हम पहले तरीकेको स्वीकार कर लें। इसमें यह बात तयशुदा मानी जायेगी कि सरकार जो-कुछ निश्चित करेगी उसे ईमानदारीसे स्वीकार कर लिया जायेगा। श्री गांधीने कहा कि मैं सरकारका निर्णय स्वीकार करनेका वचन दे सकता हूँ, और मैं रयतको भी यही सलाह दूँगा कि वह उसका विरोध न करे। श्री रीडने पूछा कि सरकार इस समय जिस विधेयकपर विचार कर रही है, उसका क्या होगा। श्री गांधीने कहा कि मेरी रायमें वांछनीय यही है कि हम अपनी सिफारिश सरकारको तुरन्त भेज दें, ताकि सरकार कोई निर्णय कर सके, और फिलहाल जो विधेयक विचारार्थ प्रस्तुत है, जल्दीसे-जल्दी रोका जा सके। श्री ऐंडसीने शंका उठाई कि कानून बनानेमें तो समय लगेगा। अध्यक्षने कहा कि सरकार सम्भवतः समितिकी रिपोर्टको पहले प्रकाशित करेगी और जनता तथा सम्बन्धित पक्षोंको प्रस्तावोंपर विचार करनेका अवसर देगी। यदि श्री गांधी समितिको बता सकें कि वे कमसे-कम कितनी छूट चाहते हैं तो समितिके लिए अपनी रिपोर्ट तैयार करनेमें सहूलियत होगी और सरकार द्वारा जल्दी ही कोई निर्णय करनेकी सम्भावना भी बढ़ जायेगी। श्री गांधीने कहा कि मैं आँकड़ोंका पुनः अध्ययन करूँगा और इसके बाद कमसे-कम जो छूट मुझे स्वीकार्य होगी, समितिको बता दूँगा।

[अंग्रेजीसे]

सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन, सं० १६०, पृष्ठ ३०५–३१२।

३८५. पत्र : एस्थर फैरिंगको

वेतिया
अगस्त १२, १९१७

प्रिय एस्थिर,

आज मेरे पास थोड़ा-सा अवकाश है। तुमने जो पंक्तियाँ लिख भेजी हैं वे बड़ी अच्छी हैं; और वे सत्य हैं। विश्वास और आशा बड़ी चीज है। सफलताके लिए ये दोनों अपरिहार्य हैं। किन्तु प्रेम इनसे भी बड़ी चीज है। देखता हूँ, यहाँ प्रेमकी बड़ी कठिन परीक्षा होती है। आज ही सुबह मेरे पास एक हृष्ट-पुष्ट आदमी आया और मुझसे ऐसी सहायताकी जिद करने लगा जिसे दे सकना मेरे वशमें नहीं था। वह मुझे छोड़नेको तैयार नहीं था। मैंने उससे बहुत कहा-सुना। पर वह रोने और छाती पीटने लगा। उसका कोई मामला ही नहीं है। वह आशा और प्रेमवश मेरे पास आया था। उससे प्रेम करना चाहते हुए भी मुझे उसके साथ कैसा व्यवहार करना चाहिए? मान लें कि उसके आँसू सच्चे थे, फिर भी क्या मुझे उसकी मौजूदगी सहनी चाहिए और उसके साथ बात करते जाना चाहिए? ऐसी समस्याएँ रोज खड़ी होती हैं। प्रेममें धीरज होना ही चाहिए। लेकिन ऊपर बताये गये मामलेमें निषेधका नियम कैसे लागू किया जाये? यदि मन शुद्ध हो और आदमीको अपनी ईमानदारीका भरोसा हो, तो एकमात्र विश्वसनीय मार्गदर्शक अन्तरात्मा ही है। हम अक्सर स्वयं अपनेको धोखा देते हैं।

फिलहाल तुम अहमदाबाद पत्र लिख सकती हो जहाँ मैं अबसे एक हफ्तेके अन्दर पहुँचनेकी आशा करता हूँ। आजसे तीन दिनके भीतर समिति अपना काम समाप्त कर चुकेगी।

तुम्हें साँपने काटा था तब तुम्हारा क्या इलाज किया गया था? साँपने तुम्हें काट कैसे लिया था? कहाँ काटा था? क्या साँप पकड़ लिया गया था और उसे मार दिया गया था? साँपके काटने और साँपोंके बारेमें मुझे बड़ी दिलचस्पी है।

हम सबोंकी ओरसे प्यार सहित।

तुम्हारा,
बापू

[अंग्रेजीसे]
माई डियर चाइल्ड

३८६. पत्र : चम्पारन जाँच-समितिके अध्यक्षको

बेतिया
अगस्त १३, १९१७

प्रिय श्री स्लाई,

मैंने इस प्रश्नपर सोते-जागते बराबर विचार किया है, ईश्वरसे प्रकाशके लिए प्रार्थना की है और [बाइबिलके] १ कोरन्थियन १३ का पाठ किया है; यह तो मैं समितिकी बैठकमें आनेसे पहले हमेशा करता हूँ। मैंने इस प्रश्नपर अपने मित्रोंके साथ भी चर्चा की है। उपजके अनुपातसे की जानेवाली वृद्धिका औचित्य श्री रेनीने बड़े जोशके साथ सिद्ध करनेका प्रयास किया था, और मुझे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि बाबू ब्रजकिशोर उनके तर्कोंके सबसे प्रबल समर्थक हैं। अन्य सब लोगोंने उनका [बाबू ब्रजकिशोरका] विरोध किया। किन्तु जब वे अपनी बातपर दृढ़ रहे, और कहा कि लगान कम होनेके सवालपर वे श्री स्वीनीके निष्कर्षोंसे पूर्णतया सह-मत हैं तब मुझे अचम्भा हुआ। तथापि उनकी दलील बिलकुल लचर है। मेरे सभी साथियोंकी राय है कि यदि मैं बागान-मालिकोंका प्रस्ताव स्वीकार करता हूँ तो यह रैयतके हितोंका बलिदान करना होगा। उन्होंने एकमत होकर इस बातकी सराहना की कि बागान-मालिकोंने हर दृष्टिसे बहुत शक्तिशाली होनेपर भी शरहबेशीमें कमी करना स्वीकार कर लिया है। मेरे अधिकांश साथी इस मतके हैं कि मुझे समितिके साथ किसी भी कीमतपर समझौता कर लेना चाहिए। मुझे लगा कि इन सुखद घटनाओंका उल्लेख मुझे इस पत्रमें कर देना चाहिए। ये भविष्यके लिए शुभ लक्षण हैं। मेरे मित्र, जो मेरी रायमें बिहारकी संस्कृतिका प्रतिनिधित्व करते हैं, हठधर्मी नहीं हैं जैसा कि बागान-मालिक मित्रोंने अक्सर ही कहा है। हम लोगोंमें मुझसे बढ़कर हठधर्मी कोई नहीं है।

अब मैं अपना प्रस्ताव रखता हूँ, जो बिल्कुल अन्तिम है। मेरा पिछला मत राजा साहबके[1] प्रस्तावको[2] स्वीकार करनेका था। उनके प्रस्तावमें बागान-मालिकोंके २५ प्रतिशतकी तुलनामें ५५ प्रतिशत कमी करनेका सुझाव था। यदि मुझे असहमति-सूचक टिप्पणी लिखनी पड़े तो मैं साफ मनसे उनके प्रस्तावके पक्षका समर्थन करते हुए लिखूँगा। समितिके हम सारे सदस्योंमें पूर्ण मतैक्य हो सके, इसके लिए मैं ४० प्रतिशत, यानी बागान-मालिकोंके प्रस्तावसे १५ प्रतिशत अधिककी कमी स्वीकार करनेको तैयार हूँ। मेरे लिए यह, अपनी भाषामें कहूँ तो लगभग दण्डस्वरूप वृद्धि-

१. राजा कीर्त्यानन्द सिंह; बिहार तथा उड़ीसा विधान परिषद्के सदस्य, और चम्पारन भूमि-जाँच समितिके सदस्य।

२. समितिके सदस्योंमें वितरित टिप्पणी, **सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स**, सं० १६१। इसे यहाँ नहीं दिया गया है।

जैसा ही है। बागान-मालिकोंके प्रस्तावके अन्तर्गत उन्हें रु० ०-६-७ प्रति रुपया, और मेरे प्रस्तावके अन्तर्गत रु० ०-५-३ प्रति रुपया मिलेगा। इस तरह, मेरे इस अन्तिम प्रस्तावमें सारी सम्भावनाएँ शामिल हैं, यहाँतक कि श्री ह्विटीकी[1] अपील सफल होनेकी सम्भावनाका भी उसमें ध्यान रखा गया है।

मेरा अपना मूल प्रस्ताव ०-३-० प्रति रुपये वृद्धिका था जो ६६ प्रतिशत कमीके बराबर है। मेरे मौजूदा प्रस्तावमें ४० प्रतिशतकी कमी माँगी गई है। इस तरह मैंने २६ प्रतिशत ज्यादा स्वीकार किया है। अब यदि दबाव डालना ही हो तो मुझपर नहीं; बागान-मालिकोंपर डालना चाहिए।

श्री इर्विन पिछले छः वर्षोंसे बिना किसी औचित्यके तावानके रूपमें बड़ी-बड़ी रकमें लेते रहे हैं और शरहबेशीकी वसूली की है। मेरा प्रस्ताव स्वीकार करनेमें उनके लिए शिकवा-शिकायत करनेकी कोई बात नहीं हो सकती। तुरकौलिया और पिपरा, इन दोनों जगहोंपर शरहबेशीके नामपर रैयतके साथ जो ज्यादती की गई है, उसके सबूत समितिके सामने हैं। हमारे सामन लिखित प्रमाण मौजूद हैं कि दबावके बारेमें अपना निर्णय देते समय श्री स्वीनीने लोमराजसिंहके मामलेमें दिये गये निर्णय और नाजायज असर डालनेके सवालपर हाईकोर्टकी फुल बेंच द्वारा दिये गये निर्णयको नहीं पढ़ा था। कानूनमें अब यह बात निश्चित हो गई है कि नाजायज असर और दबावमें कोई अन्तर नहीं है। इन तथ्योंका उल्लेख मैं यह बतानेके लिए कर रहा हूँ कि समितिके रूपमें हम इन बातोंको नजरअन्दाज नहीं कर सकते। हम तथाकथित बहुत कम लगानके काल्पनिक आधारपर ही अपने निर्णय करें, यह सम्भव नहीं है।

मुझे विश्वास है कि अपने सदस्योंके बीच अंक-सम्बन्धी विवादको सरकारके पंचनिर्णयके लिए सौंपनेसे पहले समिति सौ बार सोचेगी। ऐसी किसी दुःखद स्थितिको टालनेके लिए मैं जिस हदतक जा सकता था, वहाँ तक गया हूँ। यदि आप और अन्य सदस्योंका मन मेरे प्रस्तावको स्वीकार करनेपर राजी न हो सके, तो मैं दुःखके साथ अपनी असहमति-टिप्पणी लिखूंगा, किन्तु उसमें, जैसा कि मैंने पहले कहा है मैं ५५ प्रतिशत कमी करनेका समर्थन करूँगा। ४० प्रतिशतकी कमीका प्रस्ताव सदस्योंके (और केवल बागान-मालिकोंके, बशर्ते कि आप ऐसा समझें कि उनसे फिर सलाह करना ठीक है) विचारार्थ है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

मैंने अपनी संख्यामें दशमलव नहीं रखे हैं।

मो० क० गांधी

गांधीजीके हस्ताक्षरयुक्त टाइप किये हुए मूल अंग्रेजी पत्र (नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इंडिया) से; **सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन**, सं० १६२, पृष्ठ ३१३-५ से ली।

१. जे० टी० ह्विटी; बेतिया राजके प्रबन्धक।

३८७. चम्पारन-समितिकी बैठककी कार्यवाहीका सारांश

अगस्त १४, १९१७

अध्यक्षने बतलाया कि श्री गांधीने पत्र[१] द्वारा सूचित किया है कि २५ प्रतिशत कटौतीके आधारपर किये जानेवाले किसी भी समझौतेको स्वीकार करना उनके लिए सम्भव नहीं होगा। श्री गांधीने लिखा है कि यदि समिति सर्व-सम्मतिसे सिफारिश करे तो वे ४० प्रतिशत कटौतीपर तैयार हो जायेंगे, परन्तु यदि यह नहीं होगा तो वे अपनी असहमति-सूचक टिप्पणीमें ५५ प्रतिशत कटौतीकी सिफारिश करेंगे। अध्यक्षने यह प्रस्ताव बैठकके सामने रखा। श्री रीडने कहा कि वे बागान-मालिकोंसे २५ प्रतिशतसे अधिक छोड़नेकी सिफारिश नहीं करेंगे और उन लोगोंके साथ उनका फिर बात करनेके लिए जाना बेमतलब होगा। उन्होंने खासकर श्री हिलके मामलेका हवाला दिया और कहा कि यदि २५ प्रतिशत कटौती कर दी जाये तो उनको लगान से जो आय होगी वह मूल्य-वृद्धिके आधारपर की जानेवाली साधारण वृद्धिसे होनेवाली आयसे थोड़ी ही अधिक होगी। श्री गांधीने कहा कि वे विभिन्न प्रतिष्ठानोंमें विभिन्न दरोंपर कटौती करनेके सिद्धान्तको माननेके लिए सदा ही तैयार रहेंगे। परन्तु अध्यक्षने कहा कि अब स्पष्ट है कि समझौतेके आधारपर इसको निटपानेका प्रस्ताव स्वीकार्य नहीं हुआ है। उन्होंने कहा कि अब शायद श्री गांधी ५५ प्रतिशत कटौतीकी सिफारिश करते हुए अपनी असहमति सूचक टिप्पणी लिखेंगे। वे और अधिक रियायतोंके लिए उनसे आग्रह तो नहीं करेंगे, लेकिन एक बातपर उनको विचार करना चाहिए। दोनों ही पक्ष चाहते हैं कि इसके निपटारेके लिए एक विशेष न्यायाधिकरण न बनाया जाये और न न्यायालयों द्वारा इन मामलोंका निर्णय कराया जाये। यदि इसी रूपमें सिफारिशोंको रखकर सरकारके पास प्रतिवेदन भेजा जायेगा, तो उसे मध्यस्थ बनकर २५ प्रतिशत कटौती और ५५ प्रतिशत कटौतीके बीचका कोई निर्णय करना पड़ेगा, परन्तु बड़ी आशंका इस बातकी है कि सरकार शायद इतने अधिक अन्तरके बारेमें मध्यस्थता करनेको तैयार न हो। यदि अन्तर केवल २५ और ४० प्रतिशतका होता, तो शायद वह मध्यस्थता स्वीकार कर लेती। उन्होंने श्री गांधीसे पूछा कि क्या इस दृष्टिसे यह सम्भव नहीं कि वह अपनी असहमति-टिप्पणीमें ४० प्रतिशतकी ही बात कहें? श्री गांधीने इसपर कहा कि उनकी समझमें नहीं आता कि अन्तर बहुत अधिक होनेके कारण सरकार मध्यस्थता करनेसे इनकार क्यों करेगी। तब अध्यक्षने एक दूसरा सुझाव रखा कि यदि वे मध्यस्थताके बारेमें सरकारके साथ इस आधारपर बात करें कि श्री गांधीने अपनी असहमति-टिप्पणीमें सरकारका निर्णय मान लेनेकी रजामन्दी दे

१. देखिए पिछला शीर्षक।

दी है, तो क्या उनके ऐसा कहने पर श्री गांधीको कोई आपत्ति होगी कि उन्होंने ४० प्रतिशत कटौतीपर समझौता करनेकी बात भी कही थी? श्री गांधीने उत्तर दिया कि वे इसके लिए तैयार हैं कि सरकारको भी सभी तथ्य बतला दिये जायें, यह भी कि उन्होंने ४० प्रतिशतपर समझौता करनेको कहा था, परन्तु वे इसके लिए तैयार नहीं हैं कि मध्यस्थता-निर्णय २५ प्रतिशतसे ५५ प्रतिशतके सिवा किसी और सीमाके बीच किया जाये। श्री रीडने बतलाया कि बागान-मालिक २५ प्रतिशतका प्रस्ताव अन्तिम रूपसे रख चुके हैं और श्री गांधीकी ओरसे भी ४० प्रतिशतका प्रस्ताव अन्तिम माना जाना चाहिए। श्री गांधीने कहा कि वे इसके लिए तैयार हैं कि सरकार मध्यस्थता इस बातमें करे कि कटौती बिलकुल भी नहीं होनी चाहिए या पूरी १०० प्रतिशत कटौती होनी चाहिए, उसे यही दो सीमाएँ माननी चाहिए; और साथमें उसे यह भी बता देना चाहिए कि बागान-मालिक २५ प्रतिशत और वे खुद ४० प्रतिशत तककी कटौती माननेके लिए तैयार थे। उन्होंने कहा कि यह बतलानेके लिए कि उनका रवैया कितना उचित रहा है वे अपनी असहमति-टिप्पणीमें भी यह सब लिखनेको तैयार हैं। तब अध्यक्षने कहा कि वे अन्तिम रूपसे एक प्रस्ताव रखना चाहते हैं। उन्होंने कहा कि श्री गांधीको मेरा यह मत भली-भाँति विदित है कि रैयतका २५ प्रतिशत कटौती स्वीकार कर लेना सुविचारपूर्ण रहेगा। मैंने श्री गांधीके विचार भली प्रकार समझ लिये हैं और रैयतकी स्थितिको समझनेकी भरसक कोशिश भी की है। मैं व्यक्तिगत रूपसे सरकारके सामने मध्यस्थ-निर्णयका कोई प्रस्ताव नहीं रखना चाहता, क्योंकि वैसा करनेका मतलब यह होगा कि समिति अपने कामको पूरी तरह अंजाम नहीं दे सकी। इसके सिवा मध्यस्थ-निर्णय करनेके लिए सरकारकी स्थिति उतनी अच्छी नहीं होगी जितनी कि समितिकी है। यदि श्री गांधी इस बातके लिए तैयार हैं कि सरकार मध्यस्थ-निर्णय करे, तो क्या उनको अध्यक्षपर इतना भरोसा है कि मध्यस्थ-निर्णय करनेका काम सौंप दें, इन तीन शर्तों पर:

१. कि मध्यस्थ-निर्णय किसी भी तरह २५ प्रतिशतसे ४० प्रतिशतके बीचके अंकसे कम न हो,
२. वे जो भी अंक निर्धारित करें, उसे माननेके लिए बागान-मालिकोंको राजी करनेकी कोशिश करेंगे,
३. वे उसके लिए समितिकी सर्वसम्मत सहमति प्राप्त करनेकी कोशिश करेंगे।

श्री गांधी इस बातपर सहमत हुए कि यदि सम्भव हो तो समितिको स्वयं ही यह काम करना चाहिए। परन्तु उन्होंने सन्देह प्रकट किया कि अध्यक्ष इस स्थितिमें, खास तौरपर जब वे अबवाबके सिलसिलेमें लगान बढ़ानेकी बात कह चुके हैं जो उनके [श्री गांधीके] विचारोंके सर्वथा प्रतिकूल है, पूरी स्थितिपर एक नये सिरेसे दृष्टिपात करनेमें कैसे समर्थ हो सकेंगे। अध्यक्षने कहा कि मैं तो २५ प्रतिशत और ४० प्रतिशतकी सीमाओंके बीच केवल एक पंचकी तरह निर्णय कर सकता हूँ और मैंने वास्तवमें एक

तरहसे अपने मनमें एक अंक निश्चित भी कर लिया है। श्री गांधीने कहा कि तब तो मैं सहमत नहीं हो सकता क्योंकि अध्यक्ष अपने तईं एक फैसला कर ही चुके हैं और अब अध्यक्षको रैयतकी माँगकी न्यायपूर्णता समझा सकनेकी कोई आशा नहीं रह गई है। इसपर अध्यक्षने कहा कि चूँकि यह प्रस्ताव स्वीकृत नहीं हुआ, इसलिए अब मैं समितिके सामने एक दूसरा प्रस्ताव रखना चाहता हूँ। बागान-मालिकोंकी ओरसे अधिकतम सीमा २५ प्रतिशत रखी गई है और श्री गांधीने रैयतकी ओरसे अधिकतम सीमा ४० प्रतिशतकी रखी है। दोनोंमें १५ प्रतिशतका अन्तर है। इन दोनोंके अन्तरके बीचसे कोई मार्ग निकालनेकी बात सोचनेके दौरान श्री गांधीकी दलीलें सुनते-सुनते मुझे एक हल सूझ गया है। श्री इर्विनने १२ अगस्तकी अपनी चर्चाके दौरान कहा था कि लगानकी पुरानी दरपर उनके मुकर्ररी पट्टोंमें कोई लाभ नहीं रहा है और श्री गांधीने उसका यह उत्तर दिया था कि बागान-मालिकोंको बेतिया राजपर उसका भार डालना चाहिए, रैयतपर नहीं। उनको यही दलील सुनकर एक हल यह सूझा है कि समिति शरहबेशीमें ४० प्रतिशतके लगभग कटौतीकी सिफारिश करे, जिसका २५ प्रतिशत बागान-मालिक भरें और शेषका भार अगला कोई निपटारा होने तक बेतिया राज उठाये। बेतिया राजकी ओरसे दिये जानेवाले अंशके बारेमें उन्होंने एक अवधि निश्चित करनेकी बात कही और इसका एक उदाहरण दिया कि तावानके[1] मामलेमें फैसला किया गया था कि बेतिया राजको एक निश्चित अवधि तक लगानकी बढ़ी हुई रकम छोड़नी चाहिए। श्री गांधीने कहा कि सिद्धान्तकी दृष्टिसे तो प्रस्ताव काफी अच्छा मालूम पड़ता है, परन्तु मैं सहमत होनेसे पहले इस बातका कोई पक्का सबूत चाहूँगा कि मुकर्ररी पट्टोंमें कोई लाभ नहीं बचा। अध्यक्षने बतलाया कि श्री ह्विटीने उनको बतलाया था कि मुकर्ररी पट्टोंपर कुल मिलाकर नाममात्रका मुनाफा रह गया है। मुकर्ररी पट्टे दिये जानेके समय जो जमा तय हुई थी वह पूरे लगान या उससे कुछ ज्यादा ही तय की गई थी; और उसके बाद लगानमें नाममात्रकी ही वृद्धि हुई है। श्री गांधीने विचार प्रकट किया कि प्रतिवेदनमें यह लिखा जा सकता है कि एक बागान-मालिक द्वारा ऐसी गवाही प्रस्तुत की गई है कि नीलकी खेतीके बिना मुकर्ररी पट्टोंमें घाटा रहता है और यदि 'कोर्ट ऑफ वार्डस्' के सामने यह सिद्ध हो जाये कि आम हालत ऐसी ही है तो समिति सिफारिश करती है कि उसका एक भाग बेतिया राजको भी भरना चाहिए। उनके खयालसे समिति मौजूदा साक्ष्यके आधारपर इस प्रकारका एक प्रस्ताव निश्चित तौरपर नहीं रख सकती, क्योंकि अभीतक जितनी भी जाँच-पड़ताल हुई है वह बागान-मालिकों और रैयतके सम्बन्धोंके बारेमें ही रही है, उसमें बेतिया राजकी स्थितिके बारेमें ध्यान दिया ही नहीं गया। अध्यक्षने प्रस्ताव रखा कि जितनी प्रतिशत मात्रापर सभी लोग सहमत हों उससे २५ प्रतिशत निकालकर जो भी शेष रहे वह सारीकी-सारी रकम राज ही भरे। राज इस राशिको कुछ निश्चित

१. जुर्माना, प्रतिकार।

वर्षों तक के लिए उतना मुकर्ररी लगान घटाकर भर सकता है। अध्यक्षने कहा कि मैंने राजके लिए भी इस प्रस्तावके न्यायपूर्ण होनेकी पूरी तसल्ली कर ली है। नील-उद्योगके कारण बेतिया राजको मुकर्ररी जमाके रूपमें ज्यादा रकम मिलती रही है, इसलिए राजने नील-उद्योगसे काफी लाभ उठाया है, और यदि नीलकी जगह किसी दूसरी चीजकी खेती करनी पड़ती है तो उचित यही होगा कि उसका कुछ भार राज भी उठाये। यही नहीं, यदि इस विवादका अन्त समझौतेमें नहीं होता तो बागान-मालिकोंकी कठिनाइयोंके कारण राजको जमाकी रकम वसूल करनेमें मुश्किल पड़ेगी; और फिर राजको एक भले भूस्वामीकी हैसियतसे विवादका निपटारा करानेमें हाथ बँटाना चाहिए। इसके सिवा खास और ठीकाके गाँवोंसे राजको बढ़ी हुई दरपर लगान मिल रहा है, इसलिए इस मदमें अधिक खर्च करने लायक रकम उसके योग्य है। अभीतक जितना पता लगाया जा सका है, उसके मुताबिक शरहबेशीकी असल रकम करीब डेढ़ लाख रुपये है, जिसका १५ प्रतिशत २२,५०० रुपये बैठता है। यदि पूरे ४० प्रतिशतकी कटौती मान ली जाये तो राजको प्रतिवर्ष अधिकसे-अधिक इतनी ही रकम छोड़नी पड़ेगी। अध्यक्षके अनुसार राजको इतनी रकम सदाके लिए नहीं छोड़नी है, उसकी मियाद आजसे १५ या २० वर्ष बाद अगले बन्दोबस्त तक के लिए तय कर दी जानी चाहिए। श्री गांधीने कहा कि ऐसे प्रस्तावसे सहमत होनेसे पहले वे इस बातसे अपनी तसल्ली कर लेना चाहेंगे कि राजको नील-उद्योगसे लाभ हुआ था या नहीं और वे यह भी जानना चाहेंगे कि पट्टे मूलतः किन परिस्थितियोंमें मंजूर किये गये थे। अध्यक्षने कहा कि पट्टे लाभदायक रहे हों या नहीं, भार उठाना राजके लिए उचित रहेगा क्योंकि यदि नील-उद्योग न होता तो राजको जमाके रूपमें इतनी अधिक राशि न मिलती। श्री रीडने बतलाया कि राजको जमाके रूपमें काफी अधिक राशि मिलनेके साथ-ही-साथ पट्टोंकी मंजूरीके समय काफी बड़े नजराने भी मिले थे। श्री गांधीने कहा, पट्टे लेना तो एक व्यावसायिक सौदा था और यदि वर्त्तमान परिस्थितियोंके अनुसार सौदेमें कोई लाभ न हो सका हो तो अब बेतिया राज उसके लिए नुकसान क्यों उठाये। अध्यक्षने कहा कि वह व्यावसायिक सौदा था, ठीक इसीलिए तो बेतिया राजको अब उस सौदेकी बुनियादी चीज — नीलकी खेती — छोड़नेके एवजमें उसका कुछ भार वहन करना चाहिए। श्री गांधीने उत्तर दिया कि सौदा बेतिया राज और बागान-मालिकों, दो ही पक्षोंके बीच हुआ था। यदि बादमें कुछ दुर्घटनाएँ हो जायें तो राज उसका घाटा क्यों बरदाश्त करे। समितिके पास जितनी थोड़ी सामग्री है उसके आधार-पर कोई निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता। अध्यक्षने कहा कि उनके विचारसे तो यदि अतिरिक्त साक्ष्य अपेक्षित है तो केवल इतना ही कि प्रत्येक गाँवने कितना लगान अदा किया और मुकर्ररी जमाके मुकाबले वह कितना कम या ज्यादा है। श्री गांधीने इसपर कहा कि यदि बागान-मालिक एक उचित दरपर खुश्की पद्धति द्वारा उतना ही नील पैदा कर सकते हैं तो कोई वजह नहीं कि ऐसी तबदीलीसे उनको घाटा

हो। श्री ऐंडमीने बतलाया कि यदि बागान-मालिकों और रैयतके बीच कशमकश चलती रही तो बेतिया राजको उससे आर्थिक हानि होगी ही और इसलिए राजका हित इसीमें है कि वह दोनोंमें समझौता करानेके लिये कुछ त्याग करे। श्री गांधीने उत्तर दिया कि मुख्य बात यह है कि राजसे भुगतान कराना न्यायपूर्ण होगा या नहीं; शेष सब बातें अवान्तर हैं, फिर भी वे उसके लिए तैयार हैं कि प्रतिवेदनमें बेतिया राजके विरुद्ध बागान-मालिकोंके मामलेका एक विवरण दे दिया जाये, परन्तु उस मामलेमें कोई निर्णय देनेका काम समितिका नहीं है। श्री ऐंडमीने कहा कि दोनों पक्षोंकी अधिकतम सीमाएँ ---२५ और ४० प्रतिशत---हमें बतला भर देनी चाहिए। उन्होंने सुझाव दिया कि यदि राजके विरुद्ध बागान-मालिकोंके मामलेका ब्यौरा बतलानेके बाद, सरकारके सामने वह बात सिद्ध हो जाये तो राजको दोनोंका अन्तर अदा कर देना चाहिए। अध्यक्षने पूछा कि क्या समिति थोड़ा आगे बढ़कर यह नहीं कह सकती कि बात सिद्ध है। श्री गांधीने शंका प्रकट की कि क्या वैसा कहनेके लिए मुकर्ररी पट्टोंके बारेमें पर्याप्त सूचना मिल सकेगी। अध्यक्षने बतलाया कि सरकारी दस्तावेजोंसे प्राप्त जानकारी यह है कि महाराजाने स्वयं ही वे पट्टे पौंडोंमें एक कर्जके[1] सिलसिलेमें जमानत जुटानेके लिए दिये थे।

श्री गांधीने कहा कि वे तो पूरी चीजको एक विशुद्ध व्यावसायिक सौदा मानते हैं और यदि बागान-मालिकोंको उसमें कोई घाटा हो गया हो तो राज उसके लिए कोई अदायगी क्यों करे? उन्होंने विचार व्यक्त किया कि यदि जिलेमें मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध और पारस्परिक सद्भावना बनी रहे तो नीलकी खेतीसे अभीतक लाभ हो सकता है। श्री रीडने कहा कि अगले बन्दोबस्तके बाद बागान-मालिकोंको ही पूरा भार उठाना पड़ेगा। श्री गांधीने कहा कि तबतक उस समयके बढ़े हुए मूल्योंके आधारपर उनकी आमदनीमें वृद्धि भी तो हो जायेगी। इसपर अध्यक्षने कहा कि उनको वह २५ प्रतिशत तो कभी वापस मिलेगा ही नहीं जिसे वे अभी छोड़ रहे हैं। श्री रेनीने कहा कि बंगाल भू-धारण अधिनियमके अनुसार भू-स्वामी एक बार छोड़ी हुई लगान-वृद्धिको फिर कभी वसूल नहीं कर सकते। श्री गांधीने इसपर कहा कि भारतीय ठीकेदार [ठेकेदार] बंगाल भू-धारण अधिनियमकी त्रुटियोंका लाभ उठाकर उसकी व्यवस्थाओंको निष्फल बना सकते हैं, बड़े-बड़े राज ऐसा नहीं कर सकते; किसानोंसे बढ़ा हुआ लगान वसूल करना छोटे भू-स्वामियोंके लिए आसान होता है। श्री रीडने कहा कि यदि श्री गांधी प्रस्तावसे सहमत हो जायें तो उनको प्रस्ताव स्वीकार करनेपर कोई आपत्ति नहीं

१. बेतिया राजको १८८८ में ४,७५,०० पौंडके कर्जकी आवश्यकता थी। कुछ बागान-मालिकोंने उसका फायदा उठाकर राजसे मौरूसी पट्टे ले लिये थे और उसके बदले खुद राजकी जमानत देकर उसे इंग्लैंडसे कर्ज दिलवा दिया था। कलकत्तेकी एक फर्मने इंग्लैंडकी एक फर्मकी सहायतासे उस कर्जके लिए बातचीत चलाई। भारत-सरकार और बंगालके लेफ्टिनेंट गवर्नरको इसकी जानकारी थी। कर्जकी एक शर्त यह थी कि बेतियाके महाराजा राजके तत्कालीन प्रबन्धक और एक भूतपूर्व बागान-मालिक टी० एम० गिबनके उत्तराधिकारीकी नियुक्ति बंगालके ले० गवर्नरके अनुमोदनसे ही कर सकेंगे। देखिए **सलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज़ मूवमेंट इन चम्पारन**, १९१७-१८, पृष्ठ ६।

होगी; हालाँकि उनका खयाल यह है कि यह बात बागान-मालिकोंके लिए मुश्किल हो जायेगी। श्री रेनीने कहा कि वे श्री गांधीकी इस बातसे सहमत हैं कि समितिको भली प्रकार छानबीन करके कुछ ठोस प्रमाण जुटानेके बाद ही कोई बात कहनी चाहिए। यदि महाराजा गद्दीपर होते, तो विवादका निपटारा करानेके खयालसे राजके सामने ऐसा प्रस्ताव रखनेमें उनको कोई हिचक न होती, लेकिन अब चूँकि राजके प्रबन्धका भार एक ट्रस्टीके रूपमें सरकारके ही हाथोंमें है, इसलिए ऐसा कोई प्रस्ताव रखनेसे पहले उसपर सावधानीसे विचार कर लेना चाहिए। उनके विचारसे राज वर्तमान स्थितिके दायित्वसे इनकार नहीं कर सकता। अध्यक्षने पूछा कि क्या समितिके लिए इतना ही पर्याप्त नहीं होगा कि वह मुकर्ररी पट्टोंसे सम्बन्धित लिखा-पढ़ीकी छानबीन कर ले और मुकर्ररी जमा तथा गाँवों द्वारा पट्टोंकी मंजूरीके समय और आजकल अदा किये गये लगानकी रकमोंका मिलान कर ले? श्री गांधीने कहा कि इतना पर्याप्त नहीं होगा; क्योंकि 'कोर्ट ऑफ वार्ड्स' पहले यह जानना चाहेगा कि आगे चलकर बागान-मालिकोंको कोई हानि तो नहीं होने जा रही है; क्योंकि समिति अब इस मामलेमें तीसरे पक्षको भी बीचमें ला रही है और उसकी स्थितिका भी ध्यान रखेगी। श्री रीडने कहा कि यह बात सरकारपर ही क्यों नहीं छोड़ी जा सकती; परन्तु अध्यक्षने कहा कि यदि सम्भव हो तो समितिको अपना निर्णय स्वयं ही करना चाहिए। उन्होंने कहा कि यदि यह प्रस्ताव स्वीकार नहीं किया गया तो इसके लिए एक विशेष न्यायाधिकरण बैठानेकी सिफारिश करने या इसका निर्णय न्यायालयों-पर छोड़नेके अलावा कोई चारा नहीं रह जायेगा। सरकारको पंच बनानेके प्रस्ताव-के खिलाफ यदि केवल एक सदस्यकी असहमति होती तो शायद इसका निर्णय सरकार-पर छोड़ा भी जा सकता, लेकिन राजा कीर्त्यानन्द सिंह भी इससे सहमत नहीं हैं, इस-लिए इसमें मध्यस्थ-निर्णय नहीं हो सकता। इससे बागान-मालिकोंको हानि होगी और रैयतको तो उससे भी ज्यादा। श्री ऐडमीने कहा कि इस प्रस्तावसे सहमत होना स्पष्ट ही राजके हितमें है और यह सरकारके सामने पेश किया जाना चाहिए और सरकार इसपर कोई आदेश देनेसे पहले राजस्व बोर्डसे परामर्श करेगी ही। वे प्रस्ताव स्वीकार करनेके लिए तैयार हैं। राजा कीर्त्यानन्द सिंहने भी कहा कि वे प्रस्ताव स्वीकार करनेके लिए तैयार हैं; हालाँकि सरकार 'कोर्ट ऑफ वार्डस्' की राय लेकर ही अन्तिम आदेश जारी करेगी। श्री रेनीने भी सहमति प्रकट करते हुए कहा कि लेकिन समितिको इस प्रस्तावके औचित्यके बारेमें सरकारको पूरी बात समझा देनी चाहिए। श्री गांधीने कहा कि यदि वे प्रस्तावको उचित मान लें, तो भी इस बातसे सहमत नहीं हो सकते कि राज पन्द्रह वर्षकी इतनी लम्बी अवधि तक यह हानि सहन करता रहे। श्री रीडने बतलाया कि इसके बारेमें सरकारको खुद अपनी तसल्ली करनी चाहिए। श्री गांधीने कहा कि तथ्योंको जाने बिना वे प्रस्तावको स्वीकार भी नहीं कर सकते कि भविष्यमें क्या होने जा रहा है। उनके खयालसे तो समिति राजको आगे चलकर

होनेवाली एक हानि सहन करनेपर विवश नहीं कर सकती। इसीलिए उन्होंने एक दूसरा प्रस्ताव पेश किया। उन्होंने कहा कि विवाद तो केवल अंकोंको लेकर है और यदि समिति उनका यह दृष्टिकोण मानती है तो फिर बेतिया राजको बीचमें लानेकी कोई जरूरत नहीं रह जाती। उन्होंने प्रस्ताव रखा कि एक पक्षका प्रतिनिधित्व बागान-मालिक करें और दूसरे पक्ष — रैयतका प्रतिनिधित्व वे स्वयं करें और दोनों अपने-अपने विचार एक पंचके सामने रखें; पंचका काम न तो सरकार करे और न समिति; बल्कि एक पृथक् निकाय ही उसे करे। उन्होंने पंचोंके नाम भी पेश किये। श्री एपरले[1] और पण्डित मदनमोहन मालवीय; जो दोनों ही अपने लिए एक तीसरा पंच चुनेंगे, और यदि समिति इसे न माने तो उन्होंने श्री हेकॉक्का नाम पेश किया। इन पंचोंके सामने दोनों पक्ष अपने-अपने विचार रखेंगे और इससे पहले समितिके विचार उनको बता ही दिये जायेंगे। उसपर पंच लोग अपना निर्णय देंगे, जिसे समितिके प्रतिवेदनमें शामिल कर लिया जायेगा। श्री रीडने कहा कि वे इस प्रस्तावसे सहमत नहीं हो सकते। बागान-मालिकोंने जितनी भी अधिकसे-अधिक हो सकती थी, रियायत देनेकी बात कह दी है और अब वे पंच-निर्णयके इस सुझावसे सहमत नहीं होंगे। श्री रेनीने भी कहा कि बागान-मालिक सहमत नहीं होंगे। २५ प्रतिशत कटौती मंजूर होनेपर तुरकौलिया प्रतिष्ठानमें औसत वृद्धि ४ आने १० पाई होगी; यदि सदर सब-डिवीजनमें अनुमति प्राप्त वृद्धिकी दर उतनी ही बैठे जितनी कि बेतिया सब-डिवीजनमें है, तो तुरकौलिया प्रतिष्ठान मुन्सिफकी अदालतमें एक रुपयेमें ४ आने ८ पाईकी वृद्धि करा सकता है, इसलिए इतना तो स्पष्ट है कि ऐसे किसी भी पंच-फैसलेकी बात मानना उनके हितमें नहीं होगा जिसमें उनकी निश्चित हानि हो। तब अध्यक्षने कहा कि ऐसी परिस्थितिमें यह मानना चाहिए कि बेतिया राजके बारेमें उनका प्रस्ताव समितिके बहुमत द्वारा समर्थित है और यदि सरकार उसे बेतिया राजके लिए उचित समझे तो श्री गांधी उसका विरोध नहीं करेंगे। यदि वे विरोध करेंगे तो विशेष न्यायाधिकरण बैठानेकी सिफारिश की जायेगी।

. . . तब अध्यक्षने कहा कि वे एक छोटीसी चीजकी ओर सदस्योंका ध्यान आकर्षित करना चाहते हैं। श्री गांधी शुरूसे ही मानते आये हैं कि मूल्य-वृद्धिके आधारपर जितनी भी उचित हो उतनी वृद्धि रैयतके लगानमें की जानी चाहिए। राजघाट प्रतिष्ठानने लगान नहीं बढ़ाया, इस कारण उसको कुछ कठिनाई पड़ सकती है। इसलिए क्या श्री गांधी इस बातपर सहमत होंगे कि एक विशेष सिफारिश की जाये कि मूल्य-वृद्धिके आधारपर राजघाट प्रतिष्ठानमें लगान बढ़ा दिया जाना चाहिए और बंगाल भू-धारण अधिनियमके खण्ड ११२ को लागू करनेके कारण भूमिका क्षेत्र बढ़ जानेके आधारपर लगान वृद्धि होनी चाहिए। श्री गांधी इससे सहमत हुए।

१. सम्भवतः एफ० डब्ल्यू० एपरले, राजघाट कम्पनीके प्रबन्धक।

तावान: श्री गांधीने तावानके प्रश्नके सम्बन्धमें कहा कि वे हालमें पट्टोंपर दिये गये गाँवोंमें तावानके मामलोंपर नजर रखते रहे हैं और उन्होंने ऐसे मामलोंकी एक सूची तैयार कर ली है जिनमें, उनके खयालसे नीलके सट्टे तावान-वसूलीके उद्देश्यसे ही लिये गये थे और उन्होंने सुझाव रखा कि दस वर्षसे कमकी नीलकी खेतीवाले गाँवोंमें जहाँ भी तावान लिया गया हो, उसे पूराका-पूरा लौटाया जाना चाहिए। अध्यक्षने पूछा कि क्या समिति ऐसी एक सामान्य सिफारिशसे सहमत होगी कि यदि पिछले कुछ वर्षोंके दौरान किसी ऐसे गाँवसे तावान वसूल किया गया हो जहाँ नीलकी खेती कभी नहीं हुई, तो पूराका-पूरा तावान लौटा दिया जाना चाहिए? श्री रीडने सुझाव दिया कि ऐसे मामलोंका फैसला बेतिया राजपर छोड़ देना चाहिए। श्री रेनीने बतलाया कि आपत्तिजनक मामले तो वे हैं जिनके बारेमें निश्चित है कि मात्र तावान वसूल करनेके उद्देश्यसे सट्टे लिये गये थे। इस मामलेमें तिथियोंपर इतना भरोसा नहीं करना चाहिए; वे दस वर्षकी ही निश्चित अवधिपर सहमत नहीं होंगे। उन्होंने कहा कि ऐसा एक मसविदा आसानीसे तैयार किया जा सकता है कि जिसपर सभी सदस्य सहमत हों। उन्होंने सुझाव दिया कि सिफारिश की जानी चाहिए कि बेतिया राजको जहाँ-कहीं यह लगे कि नील-सट्टे नीलकी खेतीके उद्देश्यसे नहीं बल्कि तावान-वसूलीके उद्देश्यसे लिये गये थे, उन मामलोंमें राजको पूराका-पूरा तावान लौटाने-पर जोर देना चाहिए। अध्यक्षने इसमें यह और जोड़नेका सुझाव रखा कि जहाँ भी किसी फैक्टरीने एक वर्षतक नीलकी खेती करनेके बाद तावान लिया हो, वहाँ यह मान लेना चाहिए कि सट्टे केवल तावान-वसूलीके उद्देश्यसे लिये गये थे। इस-पर सभी सहमत हुए।

ठेका-पट्टे: श्री गांधीने सुझाव दिया कि समितिको सिफारिश करनी चाहिए कि ठेका-पट्टे छोटी अवधिके लिए ही हों। अध्यक्षने कहा कि उनका अनुभव यह है कि अल्पकालीन ठेकोंमें रैयतको लूटनेका ठेकेदारोंको बड़ा लालच रहता है। मध्य प्रान्तोंमें ठेकोंको लम्बा करनेकी लेकिन साथ ही उनको रद्द करनेके बारेमें कड़ी शर्तें लगानेकी नीति रही है और उनके विचारमें अल्पकालीन ठेकोंकी अपेक्षा वह नीति कहीं अधिक बुद्धिमत्तापूर्ण है। श्री गांधीने अपना सुझाव वापस ले लिया...

विशेष न्यायाधिकरण: श्री गांधीने विशेष न्यायाधिकरण सम्बन्धी प्रस्तावोंके बारेमें एक संशोधनका सुझाव रखा कि उच्च-न्यायालयमें उसके फैसलोंकी अपीलकी अनुमति रहनी चाहिए। श्री रेनीने विचार व्यक्त किया कि यदि इसमें किसी संशोधनकी आव-श्यकता है भी तो वह दूसरी ही दिशामें किया जाना चाहिए। उन्होंने कहा कि न्याया-धिकरणमें एक वरिष्ठ राजस्व अधिकारी और एक वरिष्ठ न्यायिक अधिकारी रहना चाहिए और उनके फैसलेके विरुद्ध अपील की व्यवस्था नहीं होनी चाहिए। जरूरत इस बातकी है कि जो निर्णय हो, अन्तिम हो और यदि कई प्रकारकी अपीलोंकी व्यवस्था की जायेगी तो परिस्थिति वैसी ही हो जायेगी जैसी कि साधारण न्यायालयों-पर इसका निर्णय छोड़नेसे होती। श्री गांधीने कहा कि यदि अपीलकी व्यवस्था न हो

तो वह न्यायाधिकरणमें तीन सदस्य रखनेके पक्षमें हैं; लेकिन उन्होंने कहा कि वे मामले-पर थोड़ा और विचार करना चाहेंगे।

इसके पश्चात समितिकी बैठक स्थगित कर दी गई।

[अंग्रेजीसे]

सिलेक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन, संख्या १६३, पृष्ठ ३१५–२२।

३८८. पत्र : जे० बी० नॉर्मनको

मोतीहारी

अगस्त १५, १९१७

प्रिय श्री नॉर्मन,

आपकी रैयतके कुछ बयान मैं इस पत्रसे संलग्न कर रहा हूँ। इसी तरहके कुछ बयानात मैं कलक्टर महोदयको समय-समयपर भेजता रहा हूँ। लेकिन वे वहाँ कोई कार्रवाई करनेके पक्षमें नहीं हैं। अपनी जगह वे सही हैं। मैं यथासम्भव अदालती कार्रवाई करनेसे बचना चाहता हूँ। इसलिए संलग्न कागजात मैं आपके पास भेजनेकी स्वतन्त्रता ले रहा हूँ ताकि आप खुद जाँच कर लें। यदि बयान सही हैं, तो आप निश्चय ही इस बातकी व्यवस्था करेंगे कि भविष्यमें आपकी रैयत इस प्रकारके जोर-जुल्मसे बची रहे।

आपका सच्चा,

मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (नेशनल आर्काइव्ज़ ऑफ इंडिया)से; **सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन**, सं० १६५, पृष्ठ ३२३ से भी।

३८९. पत्र : जमनालाल बजाजको

अमदावाद

भाद्रपद शुक्ल ४ [अगस्त २१, १९१७][1]

भाईश्री जमनालालजी,

आपका पत्र मीला है। में थोड़े दीनोंके लीये यहां आया हुं। आपको चंपारन आनेका प्रयोजन नहिं है। कमीटीका कार्य वहोत कर अभी समाप्त हो गया है.

आपका

मोहनदास गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल पत्र (जी० एन० २८३४) की फोटो-नकल से।

१. चम्पारनके उल्लेखसे प्रतीत होता है कि यह पत्र १९१७ में लिखा गया था।

३९०. भाषण : व्यापारियोंकी सभामें[1]

अगस्त २४, १९१७

ऐसा लगता है मानो जिस वस्तुकी प्राप्तिके लिए हम संघर्ष कर रहे थे, वह समीप आ गई है। सरकारी अधिकारियोंका विचार है कि इस देशके वकीलों तथा डॉक्टरोंके पास अन्य कोई धन्धा नहीं है इसी कारण वे अनर्गल बोलते रहते हैं तथा राजनीतिक विषयोंपर चर्चा करते रहते हैं, लेकिन आजकी सभाको देखकर उनकी यह धारणा मिथ्या सिद्ध होती है। सरकारने विद्यार्थियोंके [राजनीतिक सभाओंमें] भाग लेने पर प्रतिबन्ध लगा रखा है फिर भी वे सब [सभाओंमें आनेसे] बिलकुल बाज नहीं आते[2] और अब व्यापारीवर्ग भी राजनैतिक हलचलके महत्त्वको समझने लगा है। मेरा विचार है, जबतक व्यापारी वर्ग हिन्दुस्तानकी समस्त राजनीतिक हलचलोंकी बागडोर अपने हाथमें नहीं ले लेता तबतक हिन्दुस्तानका भला हो ही नहीं सकता। इंग्लैंडके व्यापारी अपनी स्वतन्त्रताके लिए संघर्ष करनेके कारण [संसार-भरमें] प्रसिद्ध हो गये हैं। अहमदाबाद गुजरातकी राजधानी है और उसका प्रभाव भी बहुत है। यहाँके व्यापारियोंकी भाँति यदि अन्य व्यापारी भी राजनैतिक हलचलोंमें विशेष भाग लेने लगेंगे तो हिन्दुस्तान अपने उद्देश्योंकी पूर्तिमें सफल हुए बिना नहीं रहेगा।

[गुजरातीसे]

प्रजाबंधु, २६-८-१९१७

३९१. महादेव देसाईके साथ वार्तालाप

अगस्त ३१, १९१७

...३१ अगस्तकी सुबह बापूजीके कुछ शब्दोंने मेरे मनमें प्रेम, व्याकुलता और हर्षके मिले-जुले भाव पैदा कर दिये। मैं इस पत्रमें उनके साथ हुई अपनी छोटीसी बातचीतको लिखनेकी कोशिश करूँगा, हालाँकि उसे शब्दोंमें रख सकना आसान नहीं है। बापूजीने कहा :

मैंने जो तुमसे रोज अपने यहाँ आनेको कहा है वह अकारण ही नहीं है। मैं चाहता हूँ कि तुम आकर मेरे साथ ठहरो। मैंने पिछले तीन दिनोंमें तुम्हारी क्षमता देख ली है। मैं पिछले दो सालसे जैसे नवयुवककी खोजमें हूँ वह मुझे तुम्हारे रूपमें

१. यह सभा स्थानीय होमरूल लीगके तत्त्वावधानमें हुई थी, जिसमें श्रीमती बेसेंट और उनके सहयोगियोंके रिहा किये जानेकी माँग की गई थी। इसकी अध्यक्षता गांधीजीने की थी।

२. १९१७ के मई-जून महीनोंमें, मद्रास, बम्बई और बंगाल सरकारोंने आदेश जारी करके स्कूलों-कॉलिजोंमें पढ़नेवाले विद्यार्थियोंके राजनैतिक सभाओंमें भाग लेनेपर प्रतिबन्ध लगा दिया था।

मिल गया है। क्या तुम विश्वास करोगे कि मुझे तुममें वह व्यक्ति मिल गया है जिसकी मुझे तलाश थी, ऐसा व्यक्ति जिसके ऊपर किसी दिन मैं अपना सारा काम छोड़कर निश्चित हो सकूं, और जिसके ऊपर मैं निश्चित-भावसे भरोसा कर सकूं। तुम्हें मेरे पास आना होगा। तुम होमरूल लीगको, जमनादासको, हर चीजको छोड़ दो। मैंने ऐसी वात इससे पहले सिर्फ तीन व्यक्तियोंसे कही है, श्री पोलक, कुमारी श्लेसिन और श्री मगनलालसे। आज मैं उसी प्रकार तुमसे कह रहा हूँ, और ऐसा करते हुए मुझे बहुत खुशी है, क्योंकि मुझे तुममें तीन विशिष्ट गुण दिखाई पड़े हैं। ये गुण हैं नियमितता, निष्ठा और कुशाग्र वुद्धि। जब मैंने पहले-पहल मगनलालको चुना था उस समय उनमें कोई विशेषता नहीं मालूम होती थी। लेकिन आज उसका व्यक्तित्व तुम्हें आश्चर्यचकित करता है। मैंने उसे पहले प्रेसके कामकी शिक्षा दी। उसने पहले गुजरातीमें, और फिर अंग्रेजी, हिन्दी, तमिल तथा अन्य भाषाओंमें कम्पोजिंगका काम सीखा। जिस तेजीसे उसने इस कलापर अधिकार जमा लिया उसे देखकर मैं विस्मित हो गया। तवसे उसने कई ढंगके कामोंमें अपनी कुशलताका परिचय दिया है। फिलहाल, हम मगनलालकी बातको छोड़ दें। वुद्धिकी जो कुशाग्रता मैंने तुममें देखी है, उतनी मुझे उसमें नहीं दिखाई पड़ी। मुझे विश्वास है कि अपने कई अच्छे गुणोंके कारण तुम कई दृष्टियोंसे मेरे लिए उपयोगी होगे।

मैं विना एक शब्द बोले यह सव साश्चर्य और सलज्ज भावसे सुनता रहा। मैंने कहा, 'लेकिन मैंने जो-कुछ किया है वह तो आपको कभी नहीं दिखाया'—इसपर उन्होंने निम्नलिखित वात कही:

तुम्हें कैसे मालूम? मैं वहुत-थोड़े समयमें आदमियोंको परख लेता हूँ। मैंने पोलकको पाँच घंटेमें जाँच लिया था। उन्होंने किसी समाचारपत्रमें प्रकाशित मेरा एक पत्र पढ़ा था, और इसपर उन्होंने मुझे पत्र लिखा। इसके बाद वे मुझसे मिलने आये, और मैंने एकदम उनके गुणोंको भाँप लिया। तवसे वे मेरे आदमी बन गये। मेरे साथ आ जानेके वाद ही उन्होंने विवाह किया और वकीलकी हैसियतसे धन्धा शुरू किया। विवाहसे पहले उन्होंने मुझसे कहा कि उन्हें अपने वच्चोंके लिए कुछ कमाना जरूरी है। मैंने उनसे स्पष्ट कह दिया कि "तुम मेरे हो, और तुम्हारे तथा तुम्हारे वच्चोंके लिए व्यवस्था करनेकी जिम्मेदारी मेरी है, तुम्हारी नहीं। मैं तुम्हारा विवाह करवा रहा हूँ क्योंकि मैं देखता हूँ, तुम्हें विवाह करनेमें कोई आपत्ति नहीं है।" उनका विवाह मेरे ही घरपर सम्पन्न हुआ था। लेकिन अव कामकी वातपर लौटें। मैं तुम्हें होमरूल लीग और जमनादासके वारेमें सव विचार छोड़नेकी सलाह दूंगा। तुम हैदरावाद जाओ। साल सवा साल मौज करो। जी-भरकर जीवनका आनन्द लो। जिस क्षण तुम्हें लगे कि अपना समय नष्ट कर रहे हो तुम सव-कुछ छोड़कर मेरे पास चले आओ।

इसपर मैंने कहा कि मैं इसी समय आपके पास रहनेको तैयार हूँ। लेकिन वे बोले:

"मैं जानता हूँ कि तुम तैयार हो, पर मैं चाहता हूँ कि तुम थोड़ा और जीवन देख लो और सुख उठा लो। मुझे सहकारिता आन्दोलनकी तुम्हारी जानकारीकी भी जरूरत पड़ेगी। हमें इस विभागको उसके दोषोंसे मुक्त करना है। किसी वातकी

कोई चिन्ता मत करना, और थोड़े समय और जीवनका सुख भोगकर मेरे पास लौट आना। मैं तुम्हें अपने निजी कामके लिए चाहता हूँ, स्कूलके लिए या अन्य किसी कामके लिए नहीं। तुम जहाँ हो, वहीं साल छः महीने बने रहो। तबतक मैं तुम्हारे बिना अपना काम चला लूँगा।

इस पत्रको पढ़नेके बाद वापस भेज देना, क्योंकि इसमें बापूकी बात मैंने उन्हींके शब्दोंमें दी है। कालान्तरमें इन्हें भूल जानेकी सम्भावना है।[1]

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाई द्वारा नरहरी परीखको ता० २–९–१९१७ को लिखा पत्र : **महादेव देसाईज़ अर्ली लाइफ**, पृष्ठ ५२–४ से उद्धृत

३९२. उपनिवेशोंमें भारतीय प्रवासी

भारत सरकारने इस माहकी पहली तारीखको जो प्रस्ताव शिमलासे प्रकाशित किया है उसे मैं ध्यानपूर्वक पढ़ गया हूँ। इस प्रस्तावमें लन्दनमें हाल ही में होनेवाले अन्तर्विभागीय सम्मेलनकी[2] रिपोर्ट शामिल की गई है। स्मरण होगा कि यह वही सम्मेलन था जिसका जिक्र केन्द्रीय विधान-परिषद्के अधिवेशनका उद्घाटन करते हुए पिछले वर्ष वाइसरॉय महोदयने किया था। यह भी स्मरणीय है कि यह वही सम्मेलन था जिसमें सर जेम्स मेस्टन और सर एस० पी० सिन्हा भाग लेने वाले थे, लेकिन सम्मेलन आरम्भ होनेसे पहले ही भारत लौट आनेके कारण वे भाग नहीं ले पाये थे।[3] जिस रिपोर्टपर हम यहाँ विचार करने जा रहे हैं उसमें कहा गया है कि दोनों सज्जन कतिपय अंग्रेजी उपनिवेशोंमें प्रवासके प्रश्नपर भारत-मन्त्री और उपनिवेश मन्त्रीसे अनौपचारिक चर्चा करनेवाले थे। लॉर्ड इसलिंगटन,[4] सर ए० स्टील मेटलैंड[5] और सर्वश्री सीटन,[6] क्रिडिल,[7] ग्रीन[8] और मैकनॉटनने[9] सम्मेलनमें भाग

१. महादेव देसाई (१८९२–१९४२) गांधीजीके निजी सचिव : सन् १९१७ में गांधीजीके साथ हुए। अपने जीवन-कालमें गांधीजीके विचारोंके प्रमुख भाष्यकार; वर्षोंतक गांधीजीके साप्ताहिकोंका सम्पादन किया किया : वे गांधीजीके अत्यन्त निकटके अनुयायियोंमें एक थे और अनन्य निष्ठाके साथ मृत्यु पर्यन्त उनकी सेवा करते रहे; गांधीजीने उनकी मृत्युपर कहा था : "महादेवमें अपनेको शून्य कर लेनेकी अद्भुत क्षमता थी।"

२. यह सम्मेलन ब्रिटिश गायना, ट्रिनीडाड, जमैका और फीजीमें सहायता-प्राप्त प्रवासकी नई प्रणालीपर विचार करनेके लिए मई, १९१७ में लन्दनमें हुआ था।

३. जेम्स मेस्टन और एस० पी० सिन्हाने लन्दनमें अप्रैल, १९१७ में होनेवाले साम्राज्यीय युद्ध-सम्मेलनमें भारतका प्रतिनिधित्व किया था। भारत सरकारने उन्हें लन्दनमें ही होनेवाले अन्तर्विभागीय सम्मेलनके लिए भी अपना प्रतिनिधि नियुक्त किया था किन्तु उन्हें सम्मेलन आरम्भ होनेसे पहले ही भारत लौट आना पड़ा था। (**इंडियन रिव्यू**, १९१७, पृष्ठ ६२६)।

४. सम्मेलनके अध्यक्ष।

५. ६, ७, ८ और ९. विभिन्न मन्त्रालयोंके प्रतिनिधि-सदस्य।

लिया। प्रस्तावके शब्दोंमें यह सम्मेलन "ब्रिटिश गायना, ट्रिनीडाड, जमैका और फीजीके लिए सरकारी सहायतासे प्रवासकी एक नई प्रणालीके लिए प्रस्तावित योजनापर विचार करनेके लिए" बैठा था। जनताको यह बात ध्यानमें रखनी चाहिए कि सहायता प्राप्त प्रवासकी प्रणाली केवल उपरोक्त चार शाही उपनिवेशोंपर लागू होगी। दक्षिण आफ्रिका, कैनेडा या आस्ट्रेलियाके स्वशासित उपनिवेशों, या मॉरिशसके शाही उपनिवेशपर वह लागू नहीं होगी।[१] इस भेदका क्या महत्त्व है, सो आगे बताया जा रहा है। यह बड़े सौभाग्यकी बात है कि "भारत सरकारने अभीतक रिपोर्टपर विचार नहीं किया है, और उसमें उठाये गये मुद्दोंपर अपना निर्णय सुरक्षित रखा है।" ऐसा करना सर्वथा उचित भी है क्योंकि यह प्रश्न अत्यन्त गम्भीर है, और अभी पिछले ही वर्ष इसको लेकर सारे देशमें उथल-पुथल हुई थी। सन् १८९५ से ही किसी-न-किसी रूपमें यह सवाल सारे देशको उद्वेलित करता रहा है।

यह घोषणा भी स्वागतके योग्य है कि "सम्राट्की सरकारने भारत-सरकारकी सहमतिसे निर्णय किया है कि गिरमिटिया-प्रवासको फिर आरम्भ नहीं किया जायेगा," और "जबतक उपनिवेशोंमें मौजूदा भारतीय प्रवासियोंको उनके वर्तमान गिरमिटसे मुक्त नहीं कर दिया जाता तबतक वहाँ स्वतन्त्र प्रवासियोंको[२] नहीं भेजा जा सकता।"

हालाँकि रिपोर्टमें ऐसी बहुत-सी चीजें हैं जिनसे मन खुशीसे भर जाता है लेकिन उसका वह वास्तविक अंश जिसमें गिरमिटिया-प्रवासके स्थानपर लागू की जानेवाली योजना दी गई है, मेरी समझके अनुसार बहुत नरम ढंगसे कहा जाये तो निराशाजनक है। शब्द-रचनाके जिस पर्देमें लपेट कर इसे प्रस्तुत किया गया है, उसे उघाड़ देनेपर यह योजना गिरमिटिया-प्रवासकी ही एक प्रणाली नजर आती है; इतना जरूर है कि यह प्रणाली ज्यादा मानवीय है और इसमें कुछ ऐसी शर्तें रख दी गई हैं जो इस योजनाका लाभ उठानेवालोंके लिए लाभजनक हैं।

मुख्य मुद्दा जिसे हमें ध्यानमें रखना है, यह है कि सम्मेलनकी बैठक जानबूझकर प्रवासकी एक ऐसी योजनापर विचार करनेके लिए की गई थी जो भारतीय मजदूरोंके हितमें नहीं, बल्कि उनके उपनिवेशी मालिकोंके हितमें है। नई प्रणाली की रचना सम्बन्धित उपनिवेशोंकी सहायताके उद्देश्यसे की गई है। देशसे बाहर प्रवासी भेजनेके लिए भारतको कमसे-कम इस समय किसी निमित्तकी आवश्यकता नहीं है। यह बात मान लेनेका कोई कारण नहीं है कि किसी भी स्थितिमें भारतीय प्रवासियोंको बसानेके लिए उपर्युक्त चार उपनिवेश ही सबसे उपयुक्त हैं। इसलिए भारतीयोंके दृष्टिकोणसे जो बात सबसे अच्छी होगी वह यह है कि भारतसे बाहर ले जानेके लिए किसी भी प्रकारकी कोई सहायता-प्राप्त प्रवास-प्रणाली होनी ही नहीं चाहिए। सहायताके अभावमें प्रवास पूर्णतः स्वतन्त्र और प्रवासीकी अपनी जिम्मेदारी और खर्चेपर निर्भर होगा। पिछले अनुभवोंसे तो यही पता चलता है कि वैसी स्थितिमें सुदूर उपनिवेशोंमें स्वेच्छासे जानेवाले प्रवासी बहुत थोड़े होंगे। रिपोर्टमें उल्लिखित सहायता-प्राप्त प्रवासका अर्थ तो, बहुत नरम भाषामें कहा जाये तो, उत्तेजन-प्राप्त प्रवास है; और जिस समय भारतके

१. देखिए "वक्तव्य: गिरमिट-प्रथाके उन्मूलनपर", ७-२-१९१७।

उद्योग-धन्धे मजदूरोंकी कमीका रोना रो रहे हैं, और उसकी आन्तरिक साधन-शक्ति ही अविकसित अवस्थामें हैं, उस समय घरके मोही भारतीयोंको भारतसे बाहर जानेके लिए उत्तेजन प्रदान करनेका विचार भी पागलपन है। जब बर्मा या लंका जानेवाले प्रवासियोंको ही अत्यन्त खराब परिस्थितियाँ सहनी पड़ती हैं और न तो सरकार और न कोई स्वयंसेवी संस्था ही उनकी रक्षा कर पाती है, तब फीजी या उन अन्य तीनों अत्यन्त सुदूरके उपनिवेशोंमें भला उनकी रक्षा कौन कर सकेगा। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि भारतके जन-नेता अपने इस मतपर चट्टानकी तरह अटल रहेंगे कि वे भारतीयोंको उपनिवेशोंमें भेजे जानेके पक्षमें नहीं हैं। कहनेको यह दलील दी जा सकती है कि साम्राज्यका एक अंग होनेके नाते हमें अन्य अंगोंकी आवश्यकताओंका खयाल रखना चाहिए, लेकिन यह तर्क उस समय तक उचित नहीं ठहराया जा सकता जब-तक कि स्वयं भारतको अपने यहाँ उपलब्ध सम्पूर्ण श्रम-शक्तिकी आवश्यकता बनी हुई है। यदि भारत उपनिवेशोंकी सहायता नहीं करता, तो इसका यह मतलब नहीं कि वह ऐसा करना ही नहीं चाहता, बल्कि यह है कि वह सहायता करनेमें असमर्थ है। कोई राजनीतिक व्यक्ति एक और दलील भी रख सकता है, और वह उचित भी होगी, कि जबतक भारतको अन्य उपनिवेशोंके बराबरका दर्जा नहीं प्राप्त हो जाता, और जब-तक भारतमें अंग्रेजी मालिक तथा उपनिवेशोंमें अंग्रेज लोग भारतकी सन्तानको लकड़ी चीरने और पानी खींचनेका काम करनेके ही उपयुक्त मानते रहेंगे, तबतक उपनि-वेशोंमें प्रवासकी कोई योजना भारतीय प्रवासियोंके लिए नैतिक दृष्टिसे लाभजनक नहीं होगी। यदि उन्हें हीनताका बिल्ला सदैव पहने रहना पड़ा तो वे अपने पूरे दर्जे तक कभी नहीं उठ पायेंगे, और इसीलिए प्रवास करनेसे उन्हें भौतिक लाभ जो कुछ भी हों, उनका कोई महत्त्व नहीं रह जाता।

लेकिन फिलहाल, आइये, हम नई प्रणालीपर विचार करें।

> कहा गया है, यह प्रणाली, "जिसे भविष्यमें अपनाया जायेगा, सहायता-प्राप्त प्रवासकी प्रणाली होगी; और इसका उद्देश्य भारतीयोंको अमुक उपनिवेशोंमें, कुछ समय तक वहाँ नौकरी करनेकी शर्तके साथ, ताकि वे उन उपनिवेशोंके जीवन और वहाँ कामकाज करनेके बारेमें अभ्यस्त हो सकें, जाकर बसनेके लिए प्रोत्सा-हित करना है। साथ ही, इस तरह उपनिवेशियोंके लिए मजदूरोंकी जरूरत भी पूरी करना इसका उद्देश्य है।

इस तरह, उपनिवेशोंमें प्रवासियोंको बसानेके साथ ये शर्तें जुड़ी हुई हैं कि वे वहाँ शर्त-बन्द मजदूरोंके रूपमें जायें। इस रिपोर्टकी समीक्षा करते हुए हम आगे देखेंगे कि ये शर्तें उतनी ही बाध्य होंगी जितनी गिरमिट-प्रथाके अन्तर्गत होती थीं। रिपोर्टमें निम्नलिखित हास्यापद अंश भी है:

> उसपर [भारतीय प्रवासीपर] किसी मालिक विशेषके ही अधीन काम करनेका बन्धन नहीं होगा; हाँ, स्वयं उसकी अपनी सुरक्षाके विचारसे प्रथम छः महीनोंके लिए उसे एक चुने हुए मालिकके यहाँ काम करना होगा।

इस वाक्यसे पुरानी गिरमिट-प्रथाकी गंध आती है। उस प्रथाके विरुद्ध जो एक शिकायत की जाती थी वह यह कि मजदूरोंको किस मालिकके अधीन काम करना होगा, यह पहलेसे तय कर दिया जाता था। मजदूरोंको अपना मालिक चुननेकी आजादी नहीं थी। नई प्रणालीके अन्तर्गत मालिकोंको मजदूरोंकी सुरक्षाके लिए चुन दिया जायेगा। मुझे यह बतानेकी जरूरत नहीं है कि भावी मजदूरोंकी सुरक्षाके लिए जो तरीका बनाया गया है उसमें वे कभी सुरक्षित अनुभव नहीं कर पायेंगे।

> **मजदूरोंको "प्रथम तीन वर्ष तक कृषि उद्योगोंमें काम करनेके लिए प्रोत्साहित किया जायेगा, और उनसे कहा जायेगा कि यदि वे वैसा करना स्वीकार कर लेंगे तो बादमें प्रवासीके नाते उन्हें बहुत सारे महत्त्वपूर्ण फायदे प्राप्त होंगे।"**

गिरमिट स्वीकार करनेके लिए यह भी एक प्रलोभन है। इस तरहकी योजनाओंसे मैं अच्छी तरह परिचित हूँ, और उसके आधारपर सरकार और जनता, दोनोंको विश्वास दिलाता हूँ कि धूर्त्त व्यक्तियोंके हाथमें ये तथाकथित प्रलोभन भोले-भाले नादान भारतीय मजदूरोंको बाध्य करनेके साधन बन जाते हैं। इस योजनाके बनानेवालोंका ध्यान इस तथ्यकी ओर आकृष्ट करना मेरा कर्त्तव्य है कि उन्हें करार तोड़नेके अपराधमें कभी कोई दण्ड नहीं दिया जा सकता है। यदि यह योजना लागू कर दी जाती है तो भारतमें फिर एक बार भर्ती-डिपो और प्रवासी एजेंटोंका भयंकर सिलसिला स्थापित हो जायेगा। निःसन्देह इनका रूप अपेक्षाकृत अधिक सम्माननीय होगा, लेकिन होगा उसी ढंगका, और इनके जरिये अकथनीय शैतानी की जा सकेगी।

रिपोर्टके बाकी हिस्सेमें जनताको शायद दिलचस्पी न हो, लेकिन जो उसे पढ़ना चाहें, वे, मुझे विश्वास है, मेरे इस निष्कर्षसे सहमत होंगे कि यद्यपि योजनाके निर्माताओंने पुरानी प्रणालीमें जो बहुत-सी बुराइयाँ घुस गई थीं, उन्हें दूर करनेका भरसक प्रयत्न किया है, किन्तु वे भारतीय जनताके सामने एक ऐसी योजना रखनेमें सफल नहीं हुए हैं जो उसे ग्राह्य हो सके। मेरा निश्चित मत है कि ऐसी कोई योजना बना सकना सर्वथा असम्भव है। गिरमिटिया-प्रथामें स्थिति अस्थायी गुलामीकी होती थी। उसमें सुधार नहीं किया जा सकता; उसे तो समाप्त ही कर देना चाहिए। हम आशा करते हैं कि भारतको अब उस प्रथाका किसी रूपमें पुनरुज्जीवित किया जाना स्वीकार नहीं होगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन रिव्यू, सितम्बर १९१७

३९३. पत्र : मगनलाल गांधीको

बम्बई

भादों सुदी १५, [सितम्बर १, १९१७][1]

चि० मगनलाल,

मैंने आज उस ओर निकलनेकी सारी तैयारी कर ली थी; किन्तु निकल नहीं सका। श्रीमती पोलकके बुखारका आज चौथा दिन है; लगातार ज्वर बना हुआ है। उनकी इच्छा है कि मैं उन्हें ऐसी स्थितिमें छोड़कर न जाऊँ; मुझे भी ऐसा ही लगता है। श्रीमती पेटिट उनकी सेवा-शुश्रूषा बहुत अच्छी तरह कर रही हैं किन्तु उन्हें लगता है कि यदि बीमारी लम्बी चलती दिखे तो उन्हें वहाँ नहीं पड़े रहना चाहिए। इसलिए यदि मुझे दो-तीन या इससे भी ज्यादा दिन तक रुकना पड़े तो आश्चर्य नहीं। मैं तार करूँगा।

श्री पोलक कल चले गये।

सत्याग्रहके बारेमें काम ठीक चल रहा है। आज सभा है; आशा है कि उसमें जिसपर सब एकमत हों, ऐसा प्रस्ताव पास हो जायेगा।[2]

अमृतलाल भाई बीमार पड़ गये हैं इसलिए उन्हें देर लग रही है। तबीयत अब कुछ ठीक है; अतः सम्भवतः आठ-दस दिनमें हमारे लिए मकानका नक्शा तैयार कर देंगे।

वहाँ सब स्वस्थ और प्रसन्न होंगे। ठाकोरलालको हर माह १५ रु० देने हैं। मैंने भाई फूलचन्दसे कह दिया है। [मेरे नाम यहाँ] डाक भेजना फिर शुरू कर देना। मावजीभाईके भाईको मोजोंके लिए ३० रु० तक का सूत, वे जिस जगह बतायें वहाँ, भेजना है। [उनसे] पूछकर प्रबन्ध कर देना।

मंगलदास सेठने कहा है कि वे हमें हमारी जरूरतका सारा सूत बाजारकी अपेक्षा दो आने कम भावपर देंगे।

बापूके आशीर्वाद

इमाम साहबको तुमने खबर नहीं दी इसलिए उन्हें कुछ दुःख हुआ है। मुझे इसका पता ही नहीं था कि कपड़ा उनके लिए है। मैं सोच रहा था, किसके लिए होगा।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५७२२) से।

सौजन्य : राधाबेन चौधरी

१. पत्रमें अमृतलाल ठक्कर द्वारा मकानोंका नक्शा बनाये जानेका उल्लेख है, जिससे प्रकट होता है कि पत्र सन् १९१७ का है। गांधीजी उस दिन बम्बईमें थे भी।

२. देखिए अगला शीर्षक "भाषण: बम्बई प्रान्तीय कांग्रेस समितिकी सभामें", २-९-१९१७।

३९४. भाषण: बम्बई प्रान्तीय कांग्रेस समितिकी सभामें

सितम्बर २, १९१७

बहुत गरमागरम बहस हुई . . . श्री गांधीने पूछनेपर बताया कि सत्याग्रह आन्दोलन कांग्रेस-जैसी किसी संस्था द्वारा नहीं चलाया जा सकता। सत्याग्रहको तो केवल अन्तः-करणका प्रश्न या आत्मिक बल कहा जा सकता है; और इसमें वकीलोंके पास जानेकी कोई जरूरत नहीं होती।

गांधी द्वारा अपना मत प्रकट कर चुकनेके बाद यह सुझाव दिया गया कि बा० गं० तिलकको गांधीसे सलाह करके कोई ऐसा संशोधन प्रस्तुत करना चाहिए जो सभाको स्वीकार्य हो। इसपर गांधीने स्वयं संशोधन सुझाया लेकिन तिलकने उसे सभाके सामने प्रस्तुत करनेसे पहले स्वयं उसमें कुछ परिवर्तन करनेका आग्रह किया . . . सभापतिने तिलक और उनके दलके साथ कुछ विचार-विमर्श करनेके बाद घोषणा की कि तिलक और उनके दलकी सहमतिसे संशोधनका एक मसविदा तैयार किया गया है। यह संशोधन इस प्रकार था:

हालाँकि बम्बई प्रान्तीय कांग्रेस समितिकी राय है कि सरकार द्वारा हाल ही में उठाये गये दमनकारी कदमोंके परिणामस्वरूप जनतामें सत्याग्रह आन्दोलनका समर्थन करनेकी जबर्दस्त भावना है, लेकिन उसकी सलाह है कि श्री मॉटेग्यु[1] चूँकि इस देशमें आनेवाले हैं, और उनके आनेका कारण सभीको अच्छी तरह ज्ञात है, इसलिए सत्याग्रहके आधारभूत सिद्धान्तोंपर विचार करने और उनपर अपनी सम्मति प्रकट करने तथा उन सिद्धान्तोंको कार्यरूप देनेके लिए आवश्यक कार्रवाईके सिलसिलेमें इस समितिपर अपने सुझाव देनेका जो उत्तरदायित्व अखिल भारतीय कांग्रेस समिति और अखिल भार-तीय मुस्लिम लीगकी कौंसिल द्वारा डाला गया था, उसे फिलहाल स्थगित रखा जाये। साथ ही यह सभा आशा प्रकट करती है कि अधिकारियों द्वारा नजरबन्दी तथा अन्य दमन-कारी कदम उठानेके फलस्वरूप जनतामें जो कटुताकी भावना फैल गई है उसे दूर करनेके लिए सरकार आवश्यक कदम उठायेगी। ऐसा रास्ता अपनानेपर भारत-मन्त्रीको जो काम सौंपा गया है उसे वे सामान्य और शान्तिपूर्ण वातावरणमें पूरा कर सकेंगे। . . . यह (संशोधन) हर्षध्वनिके बीच सर्व-सम्मतिसे पास हो गया।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, १९१७ पृष्ठ ६२०–२१

१. ई० एस० मॉटेग्यु (१८७९–१९२४); भारत-मन्त्री (१९१७-२२); मॉटेग्यु-चैम्सफोर्ड सुधारोंके सह-प्रणेता।

३९५. पत्र : शंकरलालको

सत्याग्रह क्या है?

[सितम्बर २, १९१७][1]

भाईश्री शंकरलाल,

आप सत्याग्रहमें विषयके मेरे विचार जानना चाहते हैं; मैं उन्हें संक्षेपमें नीचे लिखता हूँ:

जिस शक्तिके विषयमें मुझे लिखना है, अंग्रेजी शब्द 'पैसिव रेज़िस्टेन्स' उसका सूचक नहीं है। हाँ, 'सत्याग्रह' शब्दसे उसका भाव ठीक-ठीक प्रकट होता है। सत्याग्रह आत्माका बल है और वह शस्त्र-बलका विरोधी है। सत्याग्रह धार्मिक साधन है इसलिए धार्मिक वृत्तिके मनुष्य ही उसका उपयोग ज्ञानपूर्वक कर सकते हैं। प्रह्लाद, मीराबाई आदि सत्याग्रही थे। मोरक्कोके युद्धमें अरबोंपर फ्रेंच तोपें गोले बरसा रही थीं। अपने विश्वासके अनुसार अरब लोग केवल धर्मके लिए युद्ध कर रहे थे। उन्होंने प्राणार्पणके लिए उद्यत होकर 'या अल्लाह'का घोष किया और वे तोपोंकी ओर दौड़ पड़े। इसमें [शत्रुओंको] मारनेकी गुंजाइश नहीं थी [मरनेकी ही थी]। फ्रेंच गोलन्दाजोंने इन अरबोंपर गोले चलानेसे इनकार कर दिया और हर्षनाद करते हुए तथा अपनी टोपियोंको हवामें उछालते हुए उन्होंने अरबोंका बन्धुभावसे आलिंगन किया। यह सत्याग्रहका और उसकी विजयका उदाहरण है। अरबोंने ज्ञानपूर्वक या जान-बूझकर सत्याग्रह किया हो, ऐसा नहीं था। भावके आवेशमें वे मृत्युका आलिंगन करनेके लिए अवश्य तैयार हो गये थे, पर उनमें प्रेमका अभाव था। सत्याग्रही द्वेष नहीं करता। वह अपनेको क्रोधसे प्रेरित होकर मृत्युकी भेंट नहीं चढ़ाता किन्तु अपनी दुःख सहनेकी शक्तिकी बदौलत अपने 'शत्रु'के अथवा अत्याचार करनेवालेके सामने मस्तक नहीं नवाता। अतएव सत्याग्रही मनुष्यमें वीरता, क्षमा और दया आदि गुण अवश्य होने चाहिए। इमाम हसन और हुसैनको कुछ ऐसे काम करनेके लिए कहा गया था जिनको वे न्याययुक्त नहीं समझते थे। इसलिए उन्होंने उनको करनेसे साफ इनकार कर दिया। उस समय उन्हें निश्चित-रूपसे मालूम था कि मृत्यु हमारे आगे खड़ी है। तथापि इस विचारसे कि अन्यायके अधीन होनेसे हमारा पुरुषार्थ कलंकित होगा, हम धर्म-भ्रष्ट होंगे, उन्होंने मृत्युका ही आलिंगन किया। इन सुन्दर बालकोंके सिर जमीनपर लोट गये, पर वे अन्यायके अधीन नहीं हुए। मेरी धारणा है कि इस्लाम धर्मकी उन्नतिका कारण मुसलमानोंकी तलवारें नहीं, किन्तु मुसलमान फकीरोंकी आत्माहुति ही है। तलवारका वार सहने ही में सच्ची बहादुरी है; तलवार चलानेमें तनिक भी नहीं। यदि मारनेवालेकी भूल होगी तो यह याद उसे सदा कचोटती रहेगी कि मैंने हत्याका पाप किया है। पर मरनेवालेने यदि भूलसे ही मृत्यु अंगीकार की हो तो भी उसकी विजय ही है।

१. गुजरातीके २-९-१९१७ के अंकमें प्रकाशित।

सत्याग्रह अहिंसा-धर्म है, इसलिए वह सदा-सर्वदा धर्म्य है, इष्ट है। शस्त्र-बल हिंसात्मक है, इसलिए सभी धर्मोंमें निन्दनीय समझा गया है। शस्त्र-बलकी हिमायत करनेवाले भी उसके प्रयोगकी कई सीमायें बाँधते हैं। लेकिन सत्याग्रहकी कोई सीमा नहीं है। और यदि है तो केवल सत्याग्रहीकी तपश्चर्या अर्थात् दुःख सहन करनेकी शक्तिकी।

यह स्पष्ट है कि सत्याग्रहके वैध होने अथवा न होनेका प्रश्न बेकार है। सत्याग्रही ही उसका निर्णय कर सकता है। तटस्थ मनुष्य सत्याग्रह आरम्भ होनेपर उसकी परीक्षा कर सकता है। सत्याग्रही व्यक्तिको दुनियाकी अप्रसन्नता उसके मार्गसे रोक नहीं सकती। सत्याग्रहका आरम्भ गणितके नियमोंपर अवलम्बित नहीं है। यह कहनेवाला कि "सत्याग्रह तभी किया जाये जब सफलताके लक्षण स्पष्ट दीख पड़ते हों" राजनीति-कुशल या बुद्धिमान् भले ही हो, पर सत्याग्रही कदापि नहीं हो सकता। सत्याग्रही अपना काम [हानि-लाभका विचार किये बिना] सहज भावसे करता है।

सत्याग्रह और शस्त्र-प्रयोग ये दोनों उपाय अनादि हैं। प्रचलित धर्मशास्त्रोंमें दोनों ही की प्रशंसा की गई है। ये [दोनों] दैवी और आसुरी सम्पत्तिके ही रूप हैं। हमारा विश्वास है कि भारतवर्षमें दैवी सम्पत्तिकी प्रधानता थी। आज भी हमारा आदर्श वही है। आसुरी सम्पत्तिके प्राधान्यका बढ़िया नमूना यूरोप पेश कर रहा है।

दुर्बलता, उस दुर्बलताकी अपेक्षा — जिसे सूचित करनेके लिए हम तिरस्कार-सूचक परन्तु ज्यादा सही 'कायरता' शब्दका प्रयोग करते हैं — उपर्युक्त दोनों शक्तियाँ वांछनीय हैं। इन दोनोंमें से कोई एक मार्ग ग्रहण किये बिना स्वराज्य-प्राप्ति अथवा सच्ची लोक-जागृति असम्भव है। कर्मानुष्ठानके बिना मिला हुआ स्वराज्य 'स्वराज्य' ही नहीं है। ऐसे स्वराज्यका लोगोंके मनपर कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ सकता। बल और पौरुषके बिना लोक-जागृति नहीं हो सकती। नेता जो चाहें सो कहा करें, सरकार चाहे जितना प्रयत्न करे, परन्तु जबतक सरकार तथा हम सब लोग सत्याग्रहको प्रधान पद न देंगे तबतक शस्त्र-प्रयोगकी वृद्धि अपने-आप होती ही जायेगी। शस्त्र-प्रयोग घासके समान है; वह सभी तरहकी जमीनोंमें सहज ही उग सकता है। सत्याग्रहरूपी फसलके लिए प्रयत्न तथा साहसरूपी खाद की आवश्यकता है। और घास निराई न जानेसे जिस तरह बोया हुआ अन्न उससे दब जाता है उसी तरह जबतक हम तपश्चर्या द्वारा भूमिको साफ रखकर हिंसारूपी घासका उगना बन्द न करेंगे, तथा उगी हुई घासको दयाके अभ्याससे काट न डालेंगे तबतक वह उगती ही जायेगी। जो नवयुवक, जिन्हें वे सरकारके अत्याचारपूर्ण कार्य कहते हैं, उनसे क्षुब्ध और क्रुद्ध हैं उन्हें हम सत्याग्रहसे मना सकते हैं और उनकी वीरताका, उनसे साहस और उनकी सहनशक्तिका, दैवी-शक्तिकी वृद्धि करनेमें उपयोग कर सकते हैं। इन कारणोंसे सत्याग्रहका प्रचार वांछनीय है और वह जितने शीघ्र हो सके उतना अच्छा। इसीमें राजा और प्रजा दोनोंका कल्याण है। सत्याग्रही, सरकार अथवा और किसीको भी हैरान नहीं करना चाहता। बिना विचारे सत्याग्रही कोई काम नहीं करता। वह कभी उद्धत नहीं होता। और इसलिए वह 'बहिष्कार'से तो दूर रहता है किन्तु स्वदेशी-व्रतको अपना धर्म समझकर निरन्तर उसका पालन करता रहता है। वह केवल ईश्वरसे डरता है, इसलिए दूसरी कोई शक्ति उसे नहीं डरा सकती। शस्त्रके भयसे वह अपने कर्त्तव्योंका परित्याग नहीं करता।

इसके बाद मुझे यह कहनेकी जरूरत नहीं कि विदुषी एनी बेसेंट और उनके सहकारियोंके छुड़ानेके लिए सत्याग्रह करना हमारा कर्त्तव्य है। यह बात जुदा है कि उनके कुल अथवा कुछ काम सबको पसन्द हैं या नहीं। मैं स्वयं भी उनकी कितनी ही बातोंको पसन्द नहीं करता तथापि मैं यह जरूर कहूँगा कि उनको नजरबन्द करके सरकारने बड़ी भारी भूल की है। यह बहुत बड़ा अन्याय हुआ है। मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि सरकार उसको भूल नहीं समझती। प्रजा उन्हें छुड़ानेकी इच्छा करनेमें ही शायद भूल करती हो। सरकारने तो जो उचित समझा सो किया। प्रजा अपने हृदयकी पीड़ा किस प्रकार प्रकट करे? प्रार्थनापत्र आदि उपाय सामान्य सह्य दुःखोंके लिए हैं। असह्य दुःखका एकमात्र इलाज सत्याग्रह है। यह दुःख जब असह्य होगा तभी और जो इसे असह्य पायेगा वही अपना तन, मन, धन श्रीमती एनी बेसेंटको छुड़ानेके लिए न्यौछावर करेगा। इससे लोगोंकी भावनाओंका पता चलेगा। मेरा दृढ़ विश्वास है कि इस प्रकारके महात्यागके सामने किसी चक्रवर्त्तीकी भी शक्तिको झुकना पड़ेगा। श्री मॉटेग्यु आ रहे हैं यह सोचकर भले लोग अपनी भावनाओंपर नियन्त्रण रखें, उन्हें प्रगट न करें। इससे उनकी न्यायबुद्धिमें लोगोंका विश्वास प्रगट होगा। पर उनके आनेके पहले यदि उन्हें रिहा नहीं किया जाता तो सत्याग्रहका अवलम्बन हमारा कर्त्तव्य ही है। सरकारको चिढ़ाना, परेशान करना हमारा उद्देश्य नहीं है। सत्याग्रह करके हम अपने दुःखकी गम्भीरता प्रगट करते हैं और इस प्रकार सरकारकी सेवा ही करते हैं।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें गुजराती मसविदे (एस० एन० ६३७३) की फोटो-नकल से।

३९६. निष्क्रिय प्रतिरोध नहीं, सत्याग्रह[1]

[सितम्बर २, १९१७के लगभग][2]

अंग्रेजीमें "पैसिव रेज़िस्टेंस" शब्दसे जिस शक्तिका ज्ञान होता है, और गुजराती अखबार जिसका अनुवाद 'निष्क्रिय प्रतिरोध' शब्दसे करते हैं उस शक्तिका ठीक-ठीक परिचय न तो मूल अंग्रेजी शब्दसे मिलता है और न उसके अनुवादसे ही। वास्तवमें इस शक्तिकी पहचान "सत्याग्रह" शब्दसे ठीक होती है। "सत्याग्रह" की उत्पत्ति दक्षिण आफ्रिकामें संवत् १९६५ में हुई। हमारे दक्षिण-आफ्रिका प्रवासी हिन्दुस्तानी भाइयोंने जिस शक्तिका प्रयोग अपने दुःख-निवारणके लिए किया था उस शक्तिको सूचित करनेवाला कोई शब्द भारतवर्षकी भाषामें प्रचलित नहीं था। अंग्रेजी शब्द "पैसिव रेज़िस्टेंस" था, इसलिए उसीसे काम लिया जाने लगा। परन्तु इस महान् शक्तिको सूचित करनेवाले शब्दकी आवश्यकता दिनपर-दिन बढ़ती जाती थी। इसलिए ऐसा शब्द सुझानेके लिए पारितोषिक देना निश्चित किया गया। प्रतियोगितामें एक गुजरातीने "सत्याग्रह" शब्द भेजा और वही शब्द सर्वोत्तम माना गया।[3]

१. मूल गुजराती लेख उपलब्ध नहीं है।

२. ऐसा लगता है कि यह लेख पिछले शीर्षकके साथ-साथ लिखा गया था।

३. देखिए खण्ड ८, पृष्ठ २३ और १२६-२७।

"पैसिव रेजिस्टेंस" शब्दमें इंग्लैंडकी सफरेजिट, वोट चाहनेवाली, औरतोंके आन्दोलनका समावेश होता था। इन औरतोंका मकानोंको जलाना भी "पैसिव रेज़िस्टेंस" था और उनका कारागृहमें उपवास भी "पैसिव रेज़िस्टेंस" माना जाता था। वे सब भले ही "पैसिव रेजिस्टेंस" हों, परन्तु "सत्याग्रह" नहीं थे। कहा जाता है कि "पैसिव रेज़िस्टेंस' दुर्बल मनुष्योंका हथियार है, किन्तु जिस शक्तिका वर्णन करना इस लेखका उद्देश्य है उसका प्रयोग तो बलिष्ठ मनुष्य ही कर सकता है। यह शक्ति 'निष्क्रिय प्रतिरोध' नहीं है; और इस शक्तिके प्रयोगमें प्रचण्ड क्रियाकी आवश्यकता है। दक्षिण आफ्रिकाका आन्दोलन निष्क्रिय (पैसिव) नहीं वरन् सक्रिय (ऐक्टिव) था। दक्षिण-आफ्रिकाके भारतवासी मानते थे कि सत्य उनका ध्येय था। सत्यकी सदा जय होती ही है। इस उद्देश्य-निश्चयसे वे अपने सत्यपर आग्रहपूर्वक डटे रहते थे। उस आग्रहके कारण जो कष्ट उन्हें उठाना पड़ता था उसको वे धैर्यपूर्वक उठाते थे। सत्यको मरण-पर्यंत त्यागना नहीं चाहिए, यही समझकर वे उसका पालन करनेमें मृत्युका भय भी त्याग देते थे। सत्यके लिए वे जेलको महल मानते थे, और जेलके दरवाजोंको स्वतन्त्रताका द्वार।

सत्याग्रह क्या है ?

सत्याग्रहमें शारीरिक बलका प्रयोग नहीं है। सत्याग्रही शत्रुको कष्ट नहीं देता। सत्याग्रही शत्रुका नाश नहीं चाहता। सत्याग्रही बन्दूक आदि शस्त्रोंका प्रयोग कदापि नहीं करता। सत्याग्रहके प्रयोगमें द्वेषका सर्वथा अभाव है।

सत्याग्रह विशुद्ध आत्मिक शक्ति है; आत्मा सत्यका स्वरूप है। इसीलिए इस शक्तिको सत्याग्रह कहते हैं। आत्मा ज्ञानमय है। उसमें प्रेम-भाव प्रज्वलित होता है। अज्ञानसे यदि कोई हमें कष्ट देगा तो हम उसको प्रेम-भावसे जीत लेंगे। "अहिंसा परमो धर्मः" इस शक्तिका प्रमाण है। अहिंसा सुषुप्त स्थिति है; उसका जाग्रत स्वरूप प्रेम है। प्रेमके वश होकर यह संसार चलता है। एक अंग्रेजी कहावत है: "माइट इज़ राइट" अर्थात् शक्ति ही सत्य है — दूसरा "सरवाइवल ऑफ द फ़िटेस्ट" अर्थात् बलिष्ठ ही संसारमें बचे रहते हैं। ये दोनों सूत्र उपर्युक्त सूत्रके विरोधी हैं। दोनों ही सर्वथा सच्चे नहीं हो सकते। यदि वैर-भाव ही इस जगत्‌में प्रधान रहता तो संसार कभीका नष्ट हो चुका होता। न मुझे इस लेख ही के लिखनेका अवसर प्राप्त होता और न मैं पाठकोंकी आशा पूर्ण कर सकता। प्रेम-भावके लिए ही आज हम जी रहे हैं। इसके साक्षी स्वयं हम सब हैं। हम पश्चिमकी आधुनिक सभ्यताके भ्रममें पड़े हुए प्राचीन सभ्यताको भूलकर शस्त्र-क्रियाकी पूजा करते हैं।

शस्त्र-पूजा

और सर्वधर्मके सारांश अहिंसा तत्वको भूल जाते हैं। शस्त्र ही एक अधर्मसूचक सूत्र है। उसीकी अधीनताके कारण यूरोपमें दारुण युद्ध हो रहा है।

हिन्दुस्तानमें भी शस्त्र-पूजा पाई जाती है। तुलसीदासजीके अलौकिक ग्रन्थमें भी यह पूजा दृष्टिगोचर होती है। परन्तु सभी ग्रन्थोंमें देखा जाता है कि आत्मिक बल ही सर्वोत्कृष्ट शक्ति है।

रामचन्द्र और रावण

आत्मा और अनात्मा सूचक संज्ञाएँ हैं। रावणकी अतुलित शारीरिक शक्ति रामचन्द्रकी आत्मिक शक्तिके निकट किसी गिनती में ही नहीं है । रावणके दस मस्तक रामचन्द्रके सामने तृणवत् हैं। रामचन्द्र योगी पुरुप हैं, वे संयमी हैं, निरभिमानी हैं। "समभाव सदा वैभव विपदा" तथा "नहिं राग न लोभ मान मदा" इत्यादि उनके गुण हैं। यही सत्याग्रहकी पराकाष्ठा है । इस भारत-भूमिमें सत्याग्रहकी विजय-पताका फिर उड़ सकती है और उसे उड़ाना हमारा प्रधान कर्त्तव्य है। हम यदि सत्याग्रहका अवलम्वन करें तो हम अपने विजेता अंग्रेजोंको जीत लें, वे हमारी प्रवल आत्मशक्तिके वशमें रहें और ऐसे परिणामसे संसारको लाभ पहुँचे।

यह निश्चित है कि भारतवर्ष शस्त्र-क्रियामें अंग्रेज अथवा यूरोपीय प्रजाकी समानता नहीं कर सकता। अंग्रेज प्रजा युद्ध देवकी पूजा करती है, और ऐसी स्थितिमें वे सभी शस्त्रधारी हो सकते हैं और हो रहे हैं । भारतवर्पके करोड़ों आदमी कदापि शस्त्रधारी नहीं हो सकते। उन्होंने अहिंसा धर्मका तत्त्व ग्रहण कर लिया है। भारतवर्पमें वर्णाश्रम-धर्मका लोप होना असम्भव है।

वर्णाश्रम-धर्म

प्रकृतिका अनिवार्य नियम है । भारतवर्प ज्ञानपूर्वक इस धर्मका पालन कर उससे ठीक-ठीक लाभ उठाता है । भारतवर्पमें इस्लामी और अंग्रेज भाई भी थोड़ा वहुत इस धर्मका पालन करते हैं। भारतवर्पके वाहर भी अनजाने इस धर्मका पालन होता है । जवतक वर्णाश्रम-धर्म रहेगा तवतक भारतवर्पमें हरएक आदमी शस्त्रधारी नहीं हो सकता। भारतवर्पमें ब्राह्मण धर्म — आत्म-शक्तिको — सर्वोच्च पद दिया गया है। शस्त्रधारी भी ब्राह्मणको प्रणाम करता है । यह प्रथा जवतक चलेगी तवतक शस्त्रक्रियामें पाश्चात्य प्रजाकी वरावरी करना हमारे लिए वृथा ही कालक्षय करना है।

अव हम समझ सकते हैं कि सत्याग्रह क्या चीज है। यह

सर्वसंकट-निवारणी संजीवनी

वूटी है। यह हमारी कामधेनु है। यह सत्याग्रही और उसके विपक्षी दोनोंको ही लाभदायिनी है। यह सर्वदा विजयिनी है । उदाहरणके लिए लीजिए, हरिश्चन्द्र सत्याग्रही थे,प्र ह्लाद सत्याग्रही थे, मीरावाई सत्याग्रहिणी थीं। डैनियल, सॉक्रेटिस तथा वे अरव जिन्होंने फ्रेंच तोपोंकी अग्निमें अपनी आहुति दी थी, सत्याग्रही थे। इन सव दृष्टान्तोंमें हम यह देखते हैं कि सत्याग्रही अपने शरीरकी परवाह नहीं रखते, वे जिस वातको सत्य समझते हैं उसे छोड़ते नहीं, पराजयका शव्द उनके शव्द-कोषमें है ही नहीं, वे शत्रुका नाश नहीं चाहते, शत्रुपर रोप नहीं करते; किन्तु उसपर दयाभाव रखते हैं।

सत्याग्रही दूसरोंकी राह नहीं देखता, वह स्वयं अपने ही वलसे भिड़ जाता है। वह समझता है कि दूसरे भी समय आने पर वैसा ही करेंगे । सत्याग्रहीका कार्य ही उसका व्याख्यान है। सत्याग्रह वायु-सा व्यापक है। वह संक्रामक है, स्पर्शजन्य है और इस कारण छोटे-वड़े, स्त्री-पुरुप सव सत्याग्रही हो सकते हैं। सत्याग्रही सेनामें किसीका वहिष्कार नहीं है, उसके द्वारा किसीपर अत्याचार नहीं हो सकता। सत्याग्रही वला-

त्कारके वश नहीं होता; वह किसीपर शस्त्र नहीं चलाता। जैसे सर्व-साधारण सत्याग्रहमें काम कर सकते हैं वैसे ही सत्याग्रहका प्रयोग भी सब क्रियाओंमें हो सकता है। लोग सत्याग्रहका

ऐतिहासिक प्रमाण

माँगते हैं। इतिहासमें प्रायः शस्त्र-क्रियाके प्रयोगका वर्णन है। उसमें स्वाभाविक क्रियाओंका वर्णन कम मिलता है। असाधारण और छुटपुट क्रियाएँ ही आश्चर्यजनक जान पड़ती हैं। सत्याग्रहका प्रयोग सदा ही सब दशाओंमें होता रहता है। पिता पुत्रके साथ, पुत्र पिताके साथ, स्त्री पुरुषके साथ, पुरुष स्त्रीके साथ निरन्तर सत्याग्रहका व्यवहार किया करते हैं। जब पिताको रोष आता है और वह पुत्रको दण्ड देता है तब पुत्र पिताको शस्त्र-प्रहारसे दण्ड नहीं देता, बल्कि पिताके वश होकर उसके रोषको रोकता है। पुत्र पिताके अन्याय-शासनके अधीन नहीं होता और अन्यायी पिताकी आज्ञाका निरादर करनेसे जो दण्ड मिलता है उसे सहन कर लेता है।

इसी प्रकार सरकारके अन्यायी

शासनका निरादर

करके और निरादरके दण्डको सहन करके हम अन्यायी शासन दूर कर सकते हैं। हम सरकारसे द्रोह नहीं करते। जब हम सरकारको अभयदान दे देंगे, अधिकारियोंपर शस्त्र-प्रहार करना नहीं चाहेंगे, उनकी गद्दी छीनना नहीं चाहेंगे, बल्कि केवल उनके अन्यायको ही हटाना चाहेंगे तो अवश्य और तत्काल वे हमारे वशीभूत हो जायेंगे।

यह प्रश्न किया जा सकता है कि सरकारके किसी शासनको हम अन्यायी क्यों कहें? ऐसा कहनेसे तो हम ही न्यायाधीश बन जाते हैं। यह ठीक है। परन्तु इस संसारमें हमको सदा ही न्यायाधीश बनाना पड़ता है। इसीलिए सत्याग्रही प्रतिस्पर्धीपर शस्त्र-प्रहार नहीं करता। यदि वह सच्चा होगा तो उसकी जय होगी, और यदि उसका विचार दूषित होगा तो वह अपने दोषका दण्ड स्वयं पायेगा।

ऐसा कहा जाता है कि एक ही आदमीके अन्याय-विरोधी होनेसे क्या लाभ हो सकता है, वह स्वयं दण्ड पाकर नष्ट हो जायेगा, कारागृहमें सड़ जायेगा अथवा फाँसीकी सजा पाकर अकाल-मृत्युका ग्रास होगा। यह आपत्ति ठीक नहीं है। सदा ही सब सुधारोंके इतिहासमें देखा जाता है कि वह एक ही पुरुषसे आरम्भ होते हैं। तपश्चर्याके बिना फल मिलना कठिन है। सत्याग्रहमें जो कष्ट उठाना पड़ता है वह शुद्ध तपश्चर्या है। जब तपश्चर्या फलके योग्य होती है तभी फल मिल जाता है। इस विचारसे सिद्ध होता है कि तपश्चर्याकी न्यूनतासे फल-प्राप्तिमें विलम्ब होता है। ईसा मसीहकी तपश्चर्या असीम होनेपर भी वह यूरोपके लिए पर्याप्त नहीं थी। यूरोपने ईसा मसीहका निरादर कर दिया है। अज्ञानताके कारण उसने ईसा मसीहके विशुद्ध चरित्रकी अवहेलना कर डाली है। कई ईसा मसीहोंको यूरोपकी प्रचण्ड वेदीपर आहुति देनी पड़ेगी तब उसे ज्ञान प्राप्त होगा। परन्तु ईसा इस कार्यमें सदा अग्रगण्य रहेगा। बीजका बोनेवाला वही है और इसलिए फलोत्पत्तिका श्रेय उसीको होगा। ऐसा कहा जाता

है कि हिन्दुस्तानके करोड़ों

अज्ञानी कृषकोंमें सत्याग्रहकी शिक्षा

फैलना असम्भव अथवा बहुत ही कठिन है, एवं सरल होनेपर भी आपदग्रस्त है; क्योंकि अशिक्षित अज्ञानियोंको एक दशासे दूसरी दशामें ले जाना अति कठिन है। उक्त दोनों दलीलें निरी पोच हैं। हिन्दुस्तानकी प्रजा सत्याग्रहकी शिक्षा ग्रहण करनेके सर्वथा उपयुक्त ही है। हिन्दुस्तानको धर्मका ज्ञान है। जहाँ धर्म-ज्ञान है वहाँ सत्याग्रह अत्यन्त सहज है। हिन्दुस्तानकी प्रजाने भक्तिका रसामृत पान किया है। यह महान् प्रजा श्रद्धासे परिपूर्ण है। ऐसी प्रजाको सत्याग्रह रूपी शुद्ध मार्गपर ले जाना कुछ भी कठिन नहीं। किसीको शंका है कि सत्याग्रहमें पड़कर जन-समाज पीछे शस्त्र-क्रियाका प्रयोग करने लगेगा। यह भय मिथ्या है। सत्याग्रहसे असत्याग्रहके पथपर जाना असम्भव है। हाँ, यह सम्भव है कि कुछ शस्त्र-क्रियाधारी पुरुष छलसे सत्याग्रहमें प्रविष्ट होकर लोगोंको भ्रममें डालें और उनसे शस्त्र-क्रियाका प्रयोग करा दें। ऐसा सभी कामोंमें हो सकता है, किन्तु अन्य कामोंकी अपेक्षा सत्याग्रहमें ऐसा सन्देह बहुत कम रहता है। क्योंकि यहाँ शीघ्र ही पोल खुल जाती है; और जन-समाजके शस्त्र-क्रियाके लिए तैयार न होनेपर उसको शस्त्र-क्रियाके भयंकर पथपर ले जाना असम्भव है। शस्त्र-क्रियाका बल सत्याग्रह-शक्तिका सर्वथा विरोधी है। जैसे उजालेमें अन्धकारका अभाव रहता है वैसे ही आत्मिक शक्ति-रूपी तेजमें अनात्मिक शस्त्र-क्रियाका प्रवेश नहीं हो सकता। दक्षिण-आफ्रिकाके सत्याग्रहमें कितने ही पठान भाई भी शामिल थे और वे सत्याग्रहके सभी नियमोंको मानते थे।

फिर यह भी शंका की जाती है कि सत्याग्रही होनेमें बड़ा कष्ट उठाना पड़ता है और सारी प्रजा इस महान् कष्टको झेलनेके लिए तैयार न होगी। यह शंका निर्मूल है। जैसा श्रेष्ठ पुरुष करते हैं वैसा ही इतर पुरुष सदासे करते आये हैं। इसमें सन्देह नहीं कि सत्याग्रही नेताका पैदा होना बहुत मुश्किल है। हमारा अनुभव है कि जितनी विभूतियाँ शस्त्रधारीके लिए आवश्यक हैं, वे सब और उससे कहीं बढ़कर संयम, अभय आदि गुण सत्याग्रहीके लिए अनिवार्य रूपसे आवश्यक हैं। शस्त्रधारीकी महत्ता शस्त्रकी श्रेष्ठतामें नहीं है, न उसके शारीरिक बलमें ही है, बल्कि उसकी दृढ़तामें और मृत्युके प्रति निर्भीकतामें है। जनरल गॉर्डन ब्रिटिश साम्राज्यका एक भारी योद्धा था। उसकी जो प्रतिमा उसके स्मरणार्थ बनाई गई है उसमें उसके हाथमें खाली एक पतली-सी छड़ी रखी गई है। इससे यह सिद्ध होता है कि योद्धाकी शक्तिका माप उसके शस्त्रोंसे नहीं होता, बल्कि उसके मनोबलसे किया जाता है। सत्याग्रहीके लिए शस्त्रधारीसे करोड़ों गुना अधिक मनोबल चाहिए। ऐसे पुरुषके जन्मसे हिन्दुस्तानका उद्धार क्षण-भरमें हो सकता है। हिन्दुस्तान ही क्या सारी सृष्टि ऐसे सत्याग्रहीकी बाट जोह रही है। तबतक हम सब यथाशक्ति सत्याग्रहका पालन कर भूमि तैयार कर सकते हैं।

सत्याग्रहका प्रयोग

आधुनिक प्रवृत्तिमें हम कैसे कर सकते हैं? स्वराज्यके आन्दोलनमें सत्याग्रहका प्रयोग क्यों करें? हम सब वीरत्वकी हत्या करते हैं, जबतक विदुषी एनी बेसेंट नजरबन्द हैं तबतक हमारे वीरत्वको लाज आनी चाहिए। हम सत्याग्रहसे एनी बेसेंटको कैसे छुड़ाएँ?

सम्भव है कि सरकार निर्दोष हो, उसके पास उनको नजरबन्द रखनेके दृढ़ प्रमाण हों। परन्तु कुछ भी हो, प्रजा उनके स्वातन्त्र्यका हरण होनेसे दुखित है। शस्त्र-क्रियासे एनी वेसेंट छूट नहीं सकतीं, कोई भारतवासी इस क्रियाको पसन्द नहीं करेगा। याचनाओं एवं प्रार्थनाओंसे हम उन्हें छुड़ा नहीं सकते। वहुत समय व्यतीत हो गया है। हम सव सरकारसे नम्रतापूर्वक कह सकते हैं कि यदि विदुषी एनी वेसेंट हमारे निश्चित किये हुए कालमें न छोड़ दी जायेंगी तो हम लोगोंको भी उन्हींकी गतिका अनुसरण करना पड़ेगा। सम्भव है कि हम सव उनके समस्त कामोंको पसन्द न करते हों, परन्तु उनके कार्यमें हम कोई ऐसा दोष नहीं देखते, जिससे (ऐसटेब्लिश्ड गवर्नमेंट) सरकार या स्थापित अधिकारकी हानि हो। इसीलिए हम भी उनकी सव प्रवृत्तियोंमें शामिल होकर उन्हींकी स्थितिकी याचना करेंगे अर्थात् हम भी कैद होंगे। हमारे व्यवस्थापक सभाके सभ्य भी सरकारसे यह याचना कर सकते हैं, और याचना स्वीकार न होनेसे अपना पद छोड़ सकते हैं। स्वराज्यके लिए भी सत्याग्रह रामवाण है। सत्याग्रहका अर्थ यह है कि हम जिस चीजको चाहते हैं वह सत्य है, हम उसके योग्य हैं और उसे प्राप्त करनेमें हम मरण-पर्यन्त प्रयत्न करेंगे।

किंवहुना। "सत्यमेव जयते। सत्यान्नास्ति परो धर्मः।" सत्यकी सर्वदा जय है। ईश्वरसे यही प्रार्थना है कि इस पवित्र भूमिमें हम सत्याग्रहका अवलम्वन कर धर्मराज्यका प्रचार करें और हमारा देश सारे जगत्‌के लिए दृष्टान्त-स्वरूप वने।

महात्मा गांधी

३९७. पत्र : एस्थर फैरिंगको

अहमदावाद
सितम्वर ५, १९१७

प्रिय एस्थर,

वास्तवमें मुझे तुम्हारे दो पत्रोंका उत्तर देना है। दूसरा पत्र तो वहुत मर्मस्पर्शी है। मैंने जो भयंकर पीड़ा सही है, उसका कारण तो मेरे अन्दर ही था। मैंने दो वार भोजन किया, जव कि मुझे खाना ही नहीं चाहिए था। परिणाम-स्वरूप वहुत जोरकी पेचिश हुई। अव मैं वहुत वेहतर हूँ, और प्रतिदिन दशामें सुधार हो रहा है। चार-पाँच दिनमें ही चारपाई छोड़ दूंगा।

सस्नेह,

बापू

[अंग्रेजीसे]
माई डियर चाइल्ड

३९८. पत्र : एस्थर फैरिंगको

अहमदाबाद
सितम्बर ६, १९१७

प्रिय एस्थर,

तुम्हारा पत्र पाकर बड़ी खुशी हुई। मैं इसी महीनेकी १४ तारीखको एक दिनके लिए मद्रासमें होऊँगा। मुझे १५ तारीखकी शामको ही वहाँसे रवाना हो जाना पड़ेगा।

यहाँ पहुँचनेके बादसे मैं बराबर हिंसात्मक तरीकोंके स्थानपर सत्याग्रहका सन्देश फैलाते हुए घूमता रहा हूँ। यह मुश्किल काम है। संलग्न कागजसे तुम देख सकोगी कि 'सत्याग्रह' से मेरा अभिप्राय क्या है।

मेरी मंशा यह नहीं थी कि पोशाक सम्बन्धी तुम्हारी टिप्पणी प्रकाशित की जाये। मैं डॉ० एम० को उसके बारेमें चेतावनी देना भूल गया। उन्हें तुम्हारे विचार इतने पसन्द आये कि वे अपनेको रोक नहीं सके। मुझे आशा है कि तुम्हारे ऐसे पत्रोंका, जिनसे मेरी रायमें कुछ मदद मिलती है, डॉ० एम० को भेजना तुम बुरा नहीं मानोगी।

"इच्छासे मुक्ति" एक . . . पारिभाषिक व्यंजना है और इसका मतलब है सर्वोत्तमसे कुछ कम बनने या पानेकी कामना करना। अतः ईश्वरसे प्रेम करना 'कोई इच्छा' नहीं है। यह तो स्वाभाविक कामना है। किन्तु मैं कुछ भलाई कर सकूँ इसलिए विशाल धनकी उपलब्धि, एक इच्छा है और इसका दमन करना चाहिए। हमारे अच्छे कार्य उतने ही सहज होने चाहिए जितना सहज हमारी पलकोंका उठना-गिरना। हमारे इच्छा किये बिना ही वे स्वतः उठती-गिरती रहती हैं। अच्छे कार्योंका करना भी उतना ही सहज होना चाहिए।

सदैव तुम्हारा,
बापू

[अंग्रेजीसे]
माई डियर चाइल्ड

३९९. पत्र : भगवानजी वकीलको[1]

अहमदाबाद
भादों वदी ९ [सितम्बर ९, १९१७][2]

भाई श्री भगवानजी,

क्या आप मेरी एक मदद करेंगे? कृपया हरएक रजवाड़ेमें कहाँ-क्या खराबी है, इसपर एक संक्षिप्त नोट लिख भेजें। मुझे उसे प्रकाशित करनेकी छूट होनी चाहिए। छूट न दे सको तो भी नोट तो मुझे चाहिए। उदाहरणके लिए, सुना है कि जामनगरमें ब्राह्मणोंकी झोलीपर और भैंसके जननेपर कर लगता है। बढ़वानमें हाथ-कते सूतपर तीन प्रकारका कर लगता है। मिलका सूत और कपड़ा करसे मुक्त है। ये तो मैंने स्थूल उदाहरण दिये। ये और ऐसे ही दूसरे तथा ज्यादा गम्भीर उदाहरण मुझे चाहिए। कानून तथा कानूनके [अनुचित] अमलसे होनेवाली तकलीफोंका उल्लेख करना। जल्दी भेजना। मैं जहाँ होऊँगा नोट मुझे वहाँ मिल जायेगा।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ३०२४) से।
सौजन्य : नारणदास गांधी

४००. पत्र : कल्याणजी मेहताको

अहमदाबाद
[सितम्बर ११, १९१७][3]

भाई श्री,

आज तो मैं मद्रासके लिए निकल रहा हूँ। ता० १७–१८ को पूना रहूँगा। ता० १९ की सुबह पूनासे चल पड़ूँगा। तब तुम मुझसे बम्बईमें मिल सकते हो। उसी तारीखको मैं नागपुर मेलसे रांचीके लिए निकल पड़ूँगा।

मोहनदासके वन्देमातरम्

भाईश्री कल्याणजी मेहता
पटल बंधु आफिस
सूरत

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें पोस्टकार्डपर लिखित मूल गुजराती पत्र (जी० एन० २६६५) की फोटो-नकलसे।

१. राजकोटके भगवानजी अनूपचंद।

२. ऐसा लगता है कि यह पत्र ३–१०–१९१७ को भगवानजी वकीलको लिखे गये पत्रसे पहले लिखा गया था।

३. तारीख, पत्रमें यात्राका जो कार्यक्रम दिया गया है उसके आधारपर तय की गई है।

४०१. याचिका : श्री मॉंटेग्युको

[सितम्बर १३, १९१७ के पूर्व[1]]

माननीय
श्री ई० एस० मांटेग्यु,
भारत-मन्त्री

गुजरातकी ब्रिटिश प्रजाका प्रार्थनापत्र

नम्रतापूर्वक निवेदन है

(१) प्रार्थियोंने अखिल भारतीय मुस्लिम लीग और अखिल भारतीय कांग्रेस समिति द्वारा तैयार की गई और गत वर्ष भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस तथा अखिल भारतीय मुस्लिम लीग द्वारा सर्वसम्मतिसे स्वीकार की गई स्वराज्य-योजनापर विचार किया और उसे समझा है।

(२) प्रार्थी उक्त योजनाका समर्थन करते हैं।

(३) प्रार्थियोंकी नम्र सम्मतिमें भारत तथा साम्राज्यके हितोंको देखते हुए उपर्युक्त योजनामें प्रस्तावित सुधार नितान्त आवश्यक हैं।

(४) प्रार्थियोंका यह भी विश्वास है कि ऐसे सुधारोंके बिना भारतमें सच्चे सन्तोषका युग नहीं आयेगा।

उक्त कारणोंसे प्रार्थी सादर प्रार्थना करते हैं कि आप कृपापूर्वक पूरी तरह विचार करके सुधार-प्रस्तावोंको स्वीकार करें, और अत्यन्त असुविधा उठाकर की गई अपनी इस यात्राको सफल, और राष्ट्रीय आशाओंको पूर्ण करें।

इस अनुग्रहपूर्ण कार्यके लिए प्रार्थी आपके सदा कृतज्ञ रहेंगे।

तारीख	प्रार्थीके हस्ताक्षर	धन्धा	पता

महात्मा, खण्ड १ में उद्धृत अंग्रेजी प्रतिकी प्रत्याकृतिसे।

१. जैसा कि १३-९-१९१७ को लिखे गये "गुजरात सभाका परिपत्र" (देखिए परिशिष्ट ८) में बताया गया है, इस प्रार्थनापत्रका मसविदा गांधीजीने तैयार किया था। ऐसे ही प्रार्थनापत्र अन्य भाषाओंमें भी तैयार किये गये थे।

४०२. स्वयंसेवकोंको निर्देश[1]

[सितम्बर १३, १९१७ के पूर्व[2]]

प्रार्थनापत्रपर हस्ताक्षर प्राप्त करनेवाले स्वयंसेवकोंके लिए श्री गांधीने निम्नलिखित नियमोंकी रचना भी की:

१. प्रार्थनापत्रपर हस्ताक्षर कराते समय यह निश्चय कर लेना चाहिए कि हस्ताक्षर करनेवाला व्यक्ति प्रार्थनापत्रमें बताई गई योजनाको ठीक-ठीक समझता है या नहीं।

२. लोग योजनाको समझ सकें, इसके लिए सभा द्वारा तैयार की जानेवाली एक विज्ञप्तिके जरिए किसी स्थानके लोगोंको एक जगह इकट्ठा करके उसे [यानी योजनाको] उनके सामने पढ़ा जाना चाहिए। यदि पढ़ चुकनेके बाद लोग कोई ऐसे नये प्रश्न उठायें जिनके उत्तर [योजनाकी] प्रस्तावनामें नहीं हैं; तो स्वयंसेवकोंको उन प्रश्नोंका समाधान स्वयं नहीं करना चाहिए, बल्कि उन्हें अपने हलकेके प्रधानके सामने रखना चाहिए; और जबतक प्रश्नकर्त्ताके प्रश्नका समाधान न कर दिया जाये, तबतक उसे हस्ताक्षर नहीं करने देना चाहिए।

३. यह बात अच्छी तरह ध्यानमें रखनी चाहिए कि किसी स्थानके किसी भी निवासीपर किसी तरहका दबाव नहीं डालना है।

४. इस बातका ध्यान रखा जाये कि सरकारी कर्मचारी या वे लोग जो समझ नहीं पाये हैं, गलतीसे हस्ताक्षर न कर बैठें।

५. ऐसे तरुण व्यक्तियोंके हस्ताक्षर नहीं लेने चाहिए जिनकी आयु अठारह वर्षसे कमकी प्रतीत हो।

६. स्कूलोंमें पढ़नेवाले छात्रोंके हस्ताक्षर न लिये जायें, चाहे उनकी उम्र कुछ भी हो।

७. किसी भी पुरुष या स्त्रीके हस्ताक्षर लिये जा सकते हैं बशर्ते कि स्वयंसेवकको विश्वास है कि वह स्त्री या पुरुष मामलेको समझ सकता है।

८. कोई पुरुष या स्त्री, जो पढ़ या लिख नहीं सकते, उन्हें अपने हाथसे काटनेका चिह्न (क्रॉस) बनाना चाहिए, और फिर उस स्थानके किसी जानेमाने व्यक्तिसे उस कटे हुए चिह्नके सामने गवाहकी हैसियतसे हस्ताक्षर कराना चाहिए।

९. यह बात ध्यानमें रहे कि हस्ताक्षर दो फार्मोंपर लिये जायें।

१०. फार्म गंदे न हों और न मुड़ने-तुड़ने पायें।

११. जिन कागजोंपर हस्ताक्षर नहीं हुए हैं उन्हें तुरन्त मुख्य कार्यालयमें भेज दिया जाये; और जहाँ कोई सभा की गई हो, या करनेका प्रयास किया गया हो, वहाँसे एक रिपोर्ट तुरन्त मुख्य कार्यालयको भेजी जाये।

१. देखिए परिशिष्ट ८।

१२. स्वयंसेवकको किसी ऐसे विषयपर बोलनेका अधिकार नहीं है जो प्रार्थना-पत्रकी विषय-सीमासे बाहर हो या जिसका सम्बन्ध [योजनाकी] भूमिकासे भले हो, किन्तु जो उसमें शामिल न हो।

१३. सर्वप्रथम किसी स्थानके निवासियोंको एक जगह इकट्ठा करके उन्हें भूमिका पढ़कर सुनाई जाये, और फिर उनके हस्ताक्षर लिये जायें। इसके बाद जितने घरोंमें जाना सम्भव हो, उनने घरोंमें जाकर बाकी पुरुषों और स्त्रियोंके हस्ताक्षर लिये जायें। लेकिन भूमिकाको अच्छी तरह समझानेके बाद ही हस्ताक्षर कराये जायें।

१४. यदि विभिन्न स्थलोंपर जाने, या लोगोंको बुलाकर इकट्ठा करनेमें पुलिस या कोई अन्य अधिकारी आपत्ति उठाये, तो स्वयंसेवक नम्रतापूर्वक जवाब दे कि जबतक मुख्य कार्यालय काम रोकनेकी आज्ञा नहीं देता तबतक वह अपना काम जारी रखेगा। यदि ऐसा करते हुए पुलिस उसे गिरफ्तार करे, तो उसे गिरफ्तार हो जाना चाहिए, लेकिन पुलिसका विरोध नहीं करना चाहिए। और यदि ऐसी कोई घटना हो, तो उसे एक विस्तृत रिपोर्ट मुख्य कार्यालयको भेजनी चाहिए। यदि पुलिसके भयसे या अन्य किसी कारणवश लोग स्वयं न इकट्ठे हों, तो स्वयंसेवकको वह स्थान छोड़ देना चाहिए, और मुख्य कार्यालयको तुरन्त इसकी सूचना भेजनी चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

स्पीचेज ऐंड राइटिंग्ज ऑफ महात्मा गांधी: नटेसन (तृतीय आवृत्ति)।

४०३. एक सुझाव

[सितम्बर १६, १९१७ के पूर्व]

गांधीजी लिखते हैं कि:

कलकत्तेमें जिस दिन कांग्रेसका अधिवेशन हो उसी दिन नगर-नगरमें तथा ग्राम-ग्राममें सभाएँ आयोजित करके तथा कांग्रेस-अध्यक्षके[1] भाषणका गुजरातीमें अनुवाद करके कांग्रेस तथा लीगके सुधार-कार्यक्रमसे सब लोगोंको परिचित कराया जाना चाहिए।

[गुजरातीसे]

गुजराती, १६-९-१९१७

१. श्रीमती बेसेंट।

४०४. पत्र : सत्यानन्द बोसको[1]

[सितम्बर १६, १९१७ के पूर्व]

प्रिय सत्यानन्द बाबू,

आपने जिस पत्रमें निष्क्रिय प्रतिरोधके सम्बन्धमें पूछताछ की है वह श्री पोलकने मेरे पास भेजा है। मुझे आपके प्रश्नोंका अत्यन्त संक्षिप्त उत्तर देनेकी ही फुर्सत है। मेरी कल्पनाके अनुसार नि० प्र० आत्मबल है और वह मुख्यत: धार्मिक सिद्धान्त है। अत: उसके क्षेत्रके अन्तर्गत हर तरहका अन्याय आ जाता है। यह बल उतना ही पुराना है जितना यह संसार। प्रह्लाद, डैनियल, ईसा, मीराबाई और अन्य ऐसे ही लोगोंके चरित्रपर विचार कीजिए जिनके जीवनमें मार्गदर्शक सिद्धान्त धर्म रहा है। दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंने न्यूनाधिक इसी बलका प्रयोग किया था और उन्होंने जिस हदतक अन्य बलोंको छोड़कर इस बलका उपयोग किया उसी हदतक उन्हें सफलता भी मिली।

आपका दूसरा प्रश्न है, यह विचार पहले किसके दिमागमें आया। मैंने इन शब्दोंका जो अर्थ किया है उसे देखते हुए, इस प्रश्नका उत्तर देना आवश्यक नहीं जान पड़ता। किन्तु यह कहा जा सकता है कि जहाँतक राजनीतिक मंचसे इसका प्रयोग करनेका सम्बन्ध है; यह विचार मुझसे ही उद्भूत हुआ है। मुझे इसकी कोई जानकारी न थी; किन्तु टॉल्स्टॉयने इसकी ओर मेरा ध्यान खींचा था।

ब्रिटिश लोकसभामें पास किये गये शिक्षा-सम्बन्धी विधेयकपर विवाद और डॉ० विलफर्ड[2] एवं अन्य लोगों द्वारा किये गये निष्क्रिय प्रतिरोधके अवसरपर श्री विंस्टन चर्चिलने[3] कहा था कि नि० प्र० ब्रिटिश संविधानके अनुसार पूर्णत: वैध है। इसी प्रकारकी बात जनरल स्मट्सने हमारे निष्क्रिय प्रतिरोधके सम्बन्धमें सीनेटके सदस्य ह्वाइट साइडको उत्तर देते हुए कही थी। ह्वाइट साइडने माँगकी थी कि रेलवेके यूरोपीय कर्मचारियोंकी हड़तालके सम्बन्धमें, जो तभी खत्म हुई थी, निर्वासित किये गये नौ अंग्रेजोंके साथ-साथ श्री गांधीको भी निर्वासित कर दिया जाये।

१. यह पत्र श्री बोसके पोलकको लिखे गये १५ अगस्त, १९१७ के पत्रके उत्तरमें भेजा गया था। श्री बोसने इसमें पोलकसे निष्क्रिय प्रतिरोधके सम्बन्धमें कुछ प्रश्न पूछे थे।

२. जॉन क्लिफर्ड (१८३६–१९२३); ब्रिटेनके चर्च प्रथा-विरोधी मंत्री और उदारदलीय राजनयिक, जिन्होंने १९०२ के शिक्षा विधेयकका विरोध कर-बन्दीके रूपमें किया था।

३. सर विंस्टन लियोनार्ड स्पेंसर चर्चिल (१८७४-१९६५) अंग्रेज राजनयिक और ग्रन्थकार, उपनिवेश उपमन्त्री १९०५-८ (गांधीजी उनसे प्रथम बार १९०६ में मिले जब वे शिष्टमण्डलके साथ इंग्लैंड गये थे); युद्ध सामग्री-मन्त्री, १९१७; युद्ध-मन्त्री, १९१८-२१; प्रधान-मन्त्री, १९४०-४५, ५१-५५; १९५३ में साहित्यपर नोबेल पुरस्कार दिया गया।

मैं एकाएक विधान-शास्त्रके किसी वकीलका हवाला देनेमें असमर्थ हूँ।[1]

आपके पाँचवें प्रश्नके लिए ऐतिहासिक उदाहरणोंकी आवश्यकता है। इसका उत्तर अनुच्छेद २ में दिया गया है।

आपका छठा प्रश्न है, यह वैधानिक तरीकोंमें आता है या नहीं। इसका उत्तर देनेकी आवश्यकता नहीं है। उत्तर देनेमें देर हुई इसका मुझे खेद है। मैं १६ सितम्बर तक अहमदाबादमें रहूँगा। उसके बाद बिहार जानेकी तैयारी करूँगा।

महादेव देसाईके स्वाक्षरोंमें दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ६३८५) की फोटो-नकल से।

४०५. सहकारिताका नैतिक आधार[2]

आपका कृपापात्र होनेका मुझे केवल इतना ही अधिकार है कि कई मास पूर्व मैं श्री यूवेंकके साथ मिल मजदूरोंकी एक सभामें गया था, जिन्हें वे सहकारिताके सिद्धान्त समझाना चाहते थे। जिस चालमें[3] लोग रहते थे वह बहुत गन्दी थी। कुछ ही पहले पानी बरसनेके कारण उसकी दशा और खराब हो गई थी। और मुझे यह बात मुक्तकंठसे स्वीकार करनी चाहिए कि यदि श्री यूवेंक, जिन्होंने उस कामको बिलकुल अपना लिया था, इतना अधिक उत्साह न दिखलाते तो मैं उस कामको छोड़ ही देता। किन्तु वहाँ जब हम एक बहुत ही जर्जर-सी चारपाई पर जा बैठे, हमें चारों ओरसे पुरुषों, स्त्रियों और बालकोंने घेर लिया था। श्री यूवेंकने एक आदमीको, जो सबसे आगे बढ़कर आया था और देखनेमें बिलकुल भोला जान पड़ता था, आड़े हाथों लिया। जब वे उससे और उसके आसपासके लोगोंसे गुजरातीमें बातें कर चुके तब उन्होंने यह इच्छा प्रकट की कि मैं भी उन लोगोंसे कुछ कहूँ। जिस आदमीसे उन्होंने पहले बातें की थीं उसकी निगाहसे सन्देहशीलता टपकती थी, इसलिए स्वभावतः मैंने सहकारिताके नैतिक गुण समझाये। मेरा खयाल है जिस ढंगसे मैंने उस विषयका निरूपण किया था वह ढंग, श्री यूवेंकको कुछ पसन्द आया था। मेरा विश्वास है कि इसीलिए उनकी कृपासे इस समय मैं आपको थोड़ा कष्ट देने और नैतिक दृष्टिसे सहकारितापर थोड़ी देर तक विचार प्रकट करनेके लिए बुलाया गया हूँ।

सहकारिताकी सूक्ष्म विधियोंके विषयमें मेरा ज्ञान नहीं के बराबर है। भाई देवधरजीने इस विषयको पूरी तरह अधिकृत कर लिया है। वे जो कुछ करते हैं वह स्वभावतः मुझे आकृष्ट करता है और मैं सोचनेके लिए तैयार हो जाता हूँ कि उसमें कुछ-न-कुछ अच्छाई अवश्य है और उसपर विचार करना बहुत-कुछ कठिन है। श्री

१. चौथे और पाँचवें प्रश्न थे :

(४) क्या विधान शासनके किसी वकीलने इस विषयपर विचार किया है?

(५) इतिहासमें से सत्याग्रहियोंके उदाहरण दें. . . ।

२. सितम्बर १७, १९१७के बम्बई प्रान्तीय सहकारिता सम्मेलनमें पठित ।

३. गुजरात और महाराष्ट्रमें एक ही साथ बने हुए किरायेके मकान।

यूवेंकने कृपापूर्वक इस विषयका कुछ साहित्य मुझे दे दिया था। और चम्पारनमें मुझे सहकारिताके प्रयत्नोंका कुछ प्रभाव देखनेका अनुपम अवसर मिला था। मैंने श्री यूवेंककी दस मुख्य बातें पढ़ ली हैं और बिहारके श्री कॉलिन्सकी बारह बातें भी, जो मुझे द्वादश विधियों[1] जैसी लगती हैं। चम्पारनमें एक कथित कृषक बैंक है। यदि उन प्रयत्नोंका उद्देश्य लोगोंको सहकारिताकी सफलता बताना हो तो मैं समझता हूँ कि वे निराशाजनक हैं। इसी तरह का कुछ काम पादरी हॉज भी चुपचाप कर रहे हैं। और मैं समझता हूँ कि जो लोग उनके सम्पर्कमें आते हैं उनपर उनके प्रयत्नोंका प्रभाव पड़ता है। श्री हॉजमें सहकारिताके सम्बन्धमें बहुत उत्साह है और उन्हें अपने प्रयत्नोंके जो परिणाम दिखाई देते हैं, सम्भवतः वे समझते हैं कि वे सब सहकारिताकी ही देन हैं। मैंने दोनों महाशयोंके कामको ध्यानपूर्वक देखा है; अतः बिना झिझक यह निष्कर्ष निकाला है कि व्यक्तिगत गुणों या अवगुणोंके कारण ही उनमें से किसीको सफलता और किसीको विफलता हुई है।

स्वयं मुझमें सब बातोंके लिए बहुत-कुछ जोश रहता है, परन्तु पच्चीस वर्षके प्रयोग और अनुभवसे मुझमें बहुत-कुछ सतर्कता और विवेक-बुद्धि आ गयी है। जो कार्यकर्त्ता किसी काममें लगते हैं वे अवश्य ही, जाने-अनजाने उसके गुणोंको बहुत-कुछ बढ़ाकर बताते हैं और प्रायः उसके दोषोंको ही उसकी विशेषताओंमें बदल देते हैं। इस विषयमें बहुत-कुछ सतर्क होनेपर मैं अहमदाबादकी अपनी छोटी संस्थाको[2] संसारमें सर्वोत्तम समझता हूँ। केवल उसीसे मुझे यथेष्ट प्रेरणा मिलती है। आलोचक मुझसे कहते हैं कि वह आत्मारहित आत्मबलकी प्रतीक है और कठोर अनुशासनसे बिलकुल मशीनकी तरह हो गई है। मैं समझता हूँ कि इस सम्बन्धमें हम दोनों ही, उसके आलोचक और मैं गलतीपर हैं। वह अधिकसे-अधिक राष्ट्रको एक ऐसा आवास देनेका नम्र प्रयत्न है, जिसमें पुरुष तथा स्त्रियाँ भारतीय प्रकृतिके अनुरूप बिलकुल स्वतन्त्रता और स्वच्छन्दतासे अपने-अपने चरित्रका विकास कर सकें, यदि उसके चालक यथेष्ट ध्यान न रखें तो जो अनुशासन वास्तवमें सदाचारका मूल है, वही अनुशासन उसका चरम उद्देश्य नष्ट करनेका कारण हो सकता है। इसलिए सहकारिताके सम्बन्धमें जिन लोगोंके मनमें बहुत अधिक उत्साह है उन लोगोंको मैं सचेत करता हूँ कि वे झूठी आशाएँ न बाँधें।

सहकारिता सर डैनियल हैमिल्टनके लिए तो 'धर्म' ही बन गई है। गत १३ जनवरीको उन्होंने स्कॉटिश चर्च-कॉलिजके विद्यार्थियोंके सम्मुख एक व्याख्यान दिया था। इसमें उन्होंने अपनी बात दृष्टान्त द्वारा स्पष्ट करनेके विचारसे स्कॉटलैंडकी दो सौ वर्ष पहलेकी दरिद्रताका उदाहरण दिया था और यह दिखाया कि किस तरह वह देश दरिद्रावस्थासे निकलकर सम्पन्न हो गया है।

१. ट्वेल्व-कमान्डमेन्ट्स्; रोममें ४५१-४५० ईसा-पूर्व प्रचलित बारह कानून जो रोमके कानूनकी मूल भित्ति हैं।

२. सत्याग्रह आश्रम।

उन्होंने कहा: उस देशको केवल दो ही शक्तियोंने उन्नत किया है—एक स्कॉटिश चर्चने और दूसरे स्कॉटिश बैंकोंने। चर्चसे तो मनुष्य तैयार होते थे और बैंकोंसे धन, जिससे लोग जीवनमें प्रतिष्ठित होते थे . . .। चर्च राष्ट्रको ईश्वरसे भय करना सिखाता था; और यही बुद्धिमत्ताका मूल है। चर्चके देहाती स्कूलोंमें लड़कोंने यह सीखा कि मानव-जीवनका मुख्य उद्देश्य ईश्वरका गुणगान करना और सदा उसकी भक्ति करना है। मनुष्योंको ईश्वरमें तथा अपने-आपमें विश्वास करनेकी शिक्षा दी गई और इस प्रकार जिस विश्वसनीय चरित्रका निर्माण हुआ उसकी नींवपर स्कॉटिश बैंक प्रणालीकी स्थापना की गई।

इसके उपरान्त सर डैनियलने यह बताया कि इसप्रकार चरित्रका जो गठन हुआ उसकी नींवपर स्कॉटिश बैंकोंकी अद्भुत प्रणालीका निर्माण किया जा सका है। यहाँतक तो सर डैनियलके मतसे पूरी-पूरी सहमति हो सकती है; क्योंकि 'बिना सदाचारके सहकारिता नहीं हो सकती', यह सिद्धान्त बिलकुल ठीक है। किन्तु वे हमें इससे बहुत आगे ले जाना चाहते हैं। सहकारिताके गुणगान वे इस प्रकार करते हैं:

भारतके भविष्यके सम्बन्धमें आप जैसे चाहें वैसे दिवा स्वप्न देखें, पर यह बात कभी न भूलें कि भारतको एक सूत्रमें पिरोना है और इस प्रकार उसे संसारमें अपना उचित स्थान प्राप्त करनेके योग्य बनाना है; इसीलिए ब्रिटिश सरकार आई है; और सरकारके हाथमें भारतको एक करनेका जो रास्ता है वह सहकारिता आन्दोलन है।

इस समय भारतवर्ष जितनी तरहकी बुराइयोंसे पीड़ित हैं उन सबको दूर करनेका उनकी सम्मतिमें केवल यही एक रामबाण उपाय है। यदि उसका विस्तृत अर्थ लिया जाये तो एक दशामें, जिसका यहाँ उल्लेख करनेकी आवश्यकता नहीं है यह दावा ठीक हो सकता है; लेकिन सर डैनियलने इसका जो संकुचित अर्थ लिया है उसे देखते हुए मैं कह सकता हूँ कि यह एक भ्रान्त मनुष्यकी अत्युक्ति है। उनके इस अन्तिम कथनपर ध्यान दीजिए:

ऋण, जो साख और विश्वासका ही दूसरा नाम है, अधिकाधिक रूपमें संसारका आर्थिक बल बनता जा रहा है और इसी कागजी गोलीके बलपर भारतको विजय और शांति प्राप्त होगी। क्योंकि इस कागजी गोलीपर उस विश्वासकी छाप है जो बड़े-बड़े पहाड़ोंको हिला सकता है।

स्पष्ट ही यह विचार भ्रान्ति है। जो ऋण आजकल संसारका आर्थिक बल बनता जा रहा है उसका कोई नैतिक आधार नहीं है और वह साख या विश्वासका पर्याय नहीं है। साख और विश्वास तो शुद्ध नैतिक गुण हैं। दक्षिण-आफ्रिकाके बैंकोंसे लेनदेन करनेवाले सैकड़ों मनुष्योंने अपने बीस वर्षके अनुभवके बाद जो विचार मुझे बार-बार सुनाये उससे मेरे मनमें यह विचार दृढ़ हो गया है कि जो मनुष्य जितना बड़ा लुच्चा होता है, बैंकोंमें उसकी साख उतनी ही अधिक होती है। बैंक उन लोगोंके आचरणकी खोज-बीन नहीं करते; वे केवल इस बातसे सन्तुष्ट हो जाते हैं कि वे

लोग ठीक समयपर अपनी उधारी या रुक्केकी रकम चुका देते हैं। ऋणकी प्रथाने हमारे इस सुन्दर संसारको उसी तरह घेर लिया है जिस तरह साँप कुंडली बनाकर किसी चीजको घेर लेता है; और हमारे असावधान होते ही वह हमें कुंडलीमें जकड़कर हमारा दम घोट डालता है। इस प्रथाके कारण मैंने बहुत-से घरोंको बरबाद होते देखा है। ऋणपर सहकारी होनेकी छाप लगी है, या नहीं इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता। इसी प्राण-लेवा कुंडलीकी करामातसे यूरोपमें विनाशका दृश्य उपस्थित हो गया है; और हम लोग उसे असहाय होकर देख रहे हैं। मुकदमेबाजी और युद्धमें उसीकी जीत होती है जिसके पास धन अधिक होता है। यह बात जितनी ठीक उतरती हुई आज दिखाई देती है उतनी कदाचित् पहले कभी नहीं दिखाई दी। ऋणके सम्बन्धमें लोगोंका आजकल जो विश्वास है उसे महत्त्व देनेका साहस मैंने केवल इस मुद्देपर जोर देनेके लिए किया है कि सहकारिताका आन्दोलन भारतके लिए उसी हद तक हितकर होगा जिस हद तक वह नैतिक आन्दोलन रहेगा और उसका संचालन पूर्ण धार्मिक लगनके लोगों द्वारा होगा। इससे निष्कर्ष यह निकलता है कि सहकारिताको केवल उन्हीं लोगों तक सीमित रखना चाहिए जो नैतिक दृष्टिसे ठीक रहना चाहते हों परन्तु अति दरिद्र होने अथवा महाजनके चंगुलमें फँसे होनेके कारण नैतिक दृष्टिसे ठीक नहीं रह पाते। उचित ब्याजपर ऋण मिलनेका सुभीता प्राप्त हो जानेसे नीति-भ्रष्ट मनुष्य नीतिमान् नहीं हो जायेंगे; परन्तु राज्यके कर्मचारियों या परोपकार-परायण लोगोंकी बुद्धिमत्ता तो इसीमें है कि वे ऐसे लोगोंको आगे बढ़नेमें सहायता दें जो सज्जन बननेका प्रयत्न कर रहे हों।

प्रायः हम लोगोंका यही विश्वास रहता है कि आर्थिक सम्पन्नतासे नैतिक उत्थान होता है; यह आवश्यक है कि जो आन्दोलन भारतके लिए इतना हितकारी है वह ऐसा भ्रष्ट होकर लोगोंको थोड़े सूदपर ऋण देनेका आन्दोलन-मात्र न रह जाये। इसीलिए मुझे भारतीय सहकारिता समितिकी रिपोर्टमें यह सिफारिश पढ़कर प्रसन्नता हुई थी कि

> वे लोग [समितिके सदस्य] स्पष्ट रूपसे अपनी यह सम्मति प्रकट कर देना चाहते हैं कि यदि सरकार सर्व-साधारणकी दशा सुधारना चाहती है तो उसे केवल सच्ची सहकारिताका, ऐसी सहकारिताका जिसमें इस प्रश्नके नैतिक स्वरूपका खयाल रखा गया हो --- आश्रय लेना चाहिए; ऐसी दिखावटी सहकारिताका नहीं जिसका निर्माण सहकारिताके सिद्धान्तोंको बिना जाने हुए ही किया गया हो।

उस मानदण्डको अपने सामने रखते हुए, संगठित सहकारी समितियोंकी संख्या मात्रसे ही हम इस आन्दोलनकी सफलताका माप नहीं करेंगे, बल्कि उसके सदस्योंकी नैतिक ऊँचाईसे करेंगे। इस अवस्थामें रजिस्ट्रार लोग उन समितियोंकी संख्या बढ़ानेसे पहले प्रस्तुत समितियोंकी नैतिक उन्नति करेंगे। और सरकार उन रजिस्ट्रारोंकी पद-वृद्धि यह देखकर नहीं करेगी कि उन्होंने कितनी समितियोंकी रजिस्ट्री की है; बल्कि यह देखकर करेगी कि प्रस्तुत संस्थाओंको कितनी नैतिक सफलता मिली है। इसका अर्थ यह है कि इस बातका पता लगाना होगा कि सदस्योंको दिया हुआ पैसा किस

काममें लगता है। जिन लोगोंपर सहकारी समितियोंके उचित संचालन करनेका उत्तरदायित्व है वे इस वातका ध्यान रखेंगे कि जो रुपया उधार दिया गया है वह ताड़ी विक्रेताओंकी संदूकचीमें या जुएखानोंके मालिकोंकी जेवमें न चला जायेगा। यदि किसानका घर ताड़ी या जुएसे वच गया तो मैं महाजनको उसके लोभके लिए क्षमा कर दूंगा।

महाजनोंके सम्बन्धमें भी यहाँ कुछ कहना कदाचित् अनुचित न होगा। सहकारिता कोई नई तरकीव नहीं है। जो वन्दर या पक्षी किसानोंकी फसल नष्ट करते हैं उन्हें होहल्ला करके भगानेके लिए वे सहकारका ही आश्रय लेते हैं। अनाज-गाहनेके लिए वे एक ही खलिहानका उपयोग करनेमें सहकार करते हैं। मैंने देखा है कि वे अपने पशुओंके रक्षार्थ उनके चरनेके लिए अच्छीसे-अच्छी जमीन छोड़कर सहकार करते हैं। और किसी विशेप रूपसे लोभी महाजनका विरोध करनेके लिए भी वे लोग सहकार करते हुए देखे गये हैं। किसान मजवूतीसे महाजनकी मुट्ठीमें जकड़े हुए हैं, इसी कारण कुछ लोग सन्देह करते हैं कि सहकारिता कदाचित् सफल नहीं हो सकेगी। परन्तु मुझे इस प्रकारका कोई भय नहीं है। वड़ेसे-वड़ा शक्तिशाली महाजन भी, यदि दुष्ट हो तो उसे सहकारिताके सामने, जिसकी कल्पना मुख्यत: नैतिक आन्दोलनके रूपमें की गई है, झुकना पड़ेगा। किन्तु मुझे चम्पारनके महाजनोंका जो थोड़ा-सा अनुभव है उससे मुझे यह सर्वसामान्य मत वदलना पड़ा है कि उनका "प्रभाव वहुत ही विनाशक" होता है। मैंने उन्हें सदा निर्दयी ही नहीं पाया है और न पाई-पाई वसूल करते ही देखा है। वे अपने असामियोंकी अनेक प्रकारसे सहायता करते हैं और संकट के समय उनकी रक्षा भी करते हैं। वैसे मेरा अवलोकन क्षेत्र इतना छोटा है कि मैं उस अवलोकनके वलपर किसी प्रकारका परिणाम निकालनेका साहस नहीं करता; किन्तु मैं वहुत ही आदर-पूर्वक यह पूछता हूँ कि क्या महाजनोंके अन्तरकी अच्छाईको उभारकर उन्हें अपने दोषोंको निकाल फेंकनेकी दिशामें सहायता पहुँचानेका मन लगाकर कोई प्रयत्न करना सम्भव नहीं है? क्या उन्हें भी सहकारी-सेनामें सम्मिलित होनेके लिए तैयार नहीं किया जा सकता; अथवा क्या अनुभवसे यह प्रमाणित हो गया है कि वे ऐसी प्रार्थनाके योग्य ही नहीं हैं?

मैं देखता हूँ कि यह आन्दोलन सव देशी उद्योगोंका ध्यान रखता है। जुलाहोंकी दशा सुधारनेके मेरे नम्र प्रयत्नमें सरकारने मुझे जो सहायता दी है उसके लिए मैं खुले-आम उसके प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करता हूँ। मैं जो प्रयोग कर रहा हूँ उससे पता लगता है कि इस सम्वन्धमें कार्य करनेके लिए वहुत वड़ा क्षेत्र है। जुलाहोंके आसन्न सर्वनाशके प्रति भारतका कोई भी शुभचिन्तक, कोई भी देशहितैषी उदासीन नहीं रह सकता। जैसा कि डॉ० मैनने कहा है, इस व्यवसायसे कृषकोंको जीविकाका एक अतिरिक्त साधन मिल जाता था और वह अकालसे सुरक्षित रहता था। जो रजिस्ट्रार इस महत्त्वपूर्ण और श्रेष्ठ शिल्पको फिरसे जीवन प्रदान करेगा, भारत उसका कृतज्ञ होगा। मेरे विनम्र प्रयत्नके तीन अंग हैं—प्रथम, इस वातकी जाँच करना कि क्या पुराने ढंगके हाथकरघोंमें कोई सीधा-सादा सुधार किया जा सकता है; दूसरे शिक्षित युवकोंको सरकारी या दूसरी नौकरियोंके मोह और इस धारणासे विरत करना कि

शिक्षा मनुष्योंको स्वतन्त्र धन्धा करनेके अयोग्य बना देती है; इसके साथ ही उन्हें बुनाईके काममें, जो बैरिस्टरी या डॉक्टरीकी तरह ही प्रतिष्ठित धन्धा है, प्रवृत्त करना और तीसरे जिन जुलाहोंने अपना धन्धा छोड़ दिया है उन्हें फिर उसमें लगाना। मैं अपने प्रयोगके पहले दोनों अंगोंके विषयमें कोई बात कहकर अपने श्रोताओंको परेशान नहीं करना चाहता। लेकिन तीसरे अंशके सम्बन्धमें मुझे कुछ वाक्य कहनेकी अनुमति मिलनी चाहिए; क्योंकि प्रस्तुत विषयके साथ उसका प्रत्यक्ष सम्बन्ध है। अभी केवल छः महीने हुए मैंने उसे हाथमें लिया है। पाँच परिवारोंने, जो पहले उस धन्धेको छोड़ चुके थे, उसे फिर ग्रहण कर लिया है और उनका काम अच्छी तरह चल रहा है। उन्हें जितने सूतकी आवश्यकता होती है उतना सूत आश्रम उनके घर पहुँचा देता है; और आश्रमके स्वयंसेवक ही उनके घर जाकर उनका बुना कपड़ा ले आते हैं और बाजार-भावसे उसका नकद दाम दे आते हैं। आश्रमको केवल उतने रुपयेके ब्याजका ही घाटा होता है जितना वह सूत खरीदनेके लिए कर्ज देता है। उसे अभी तक कोई हानि नहीं हुई है और वह कर्जकी न्यूनतम रकम निश्चित करके उस हानिको सीमित कर सका है। इसके बाद और जो-कुछ लेनदेन होता है वह सब नगद होता है। जो कपड़ा हमें मिलता है वह तुरन्त ही बिक जाता है। इसलिए इस व्यवहारमें ब्याजका जो घाटा होता है वह नगण्य है। मैं चाहता हूँ कि श्रोता लोग इस बातका खूब ध्यान रखें कि आदिसे अन्त तक इसका स्वरूप शुद्ध नैतिक है। आश्रमका अस्तित्व उस सहायतापर निर्भर है जो उसे मित्रोंसे मिलती है। इसलिए ब्याज लेना उचित नहीं हो सकता। जुलाहोंपर उसका बोझ नहीं लादा जा सकता। पूरे परिवार, जो पहले छिन्न-भिन्न हो रहे थे, अब फिर एकत्र हो गये हैं। ऋणका उपयोग पहलेसे ही तय होता है। और हम बिचौलियोंके रूपमें इनके परिवारोंमें प्रवेश करनेका अधिकार पाते हैं; इससे मुझे आशा है उनकी और हमारी स्थिति सुधरेगी। बिना अपने आपको उन्नत किये हम उन्हें उन्नत कर ही नहीं सकते। यह अन्तिम सम्बन्ध अभी बन नहीं पाया है, पर हम आशा करते हैं कि शीघ्र ही इन परिवारोंकी शिक्षाका काम भी हम अपने हाथमें ले लेंगे और जबतक सभी बातोंमें हम उनके साथ सम्बन्ध न स्थापित कर लेंगे तबतक हम लोग सन्तुष्ट न होंगे। हमारा यह स्वप्न कोरी कल्पना नहीं है। यदि ईश्वरने चाहा तो यह स्वप्न किसी दिन साकार हो जायेगा। अपने छोटे-से प्रयोगका वर्णन बहुत विस्तारसे करनेका साहस मैंने इसलिए किया है कि मैं अन्य उदाहरण देकर यह बतला दूँ कि सहकारितासे मेरा तात्पर्य क्या है जिससे अन्य लोग उसका अनुकरण कर सकें। हमारे सामने आदर्श स्पष्ट होना चाहिए। सम्भव है कि उस आदर्शको प्राप्त करनेमें हम विफल रहे हों, परन्तु उसकी प्राप्तिका उद्योग हमें कभी छोड़ना नहीं चाहिए। उस दशामें हमें उन "लुच्चोंके सहकार" का भय न रह जायेगा जिसका डर रस्किनको था; और वह उचित ही था।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ६४१२) की फोटो-नकलसे।
तथा इंडियन रिव्यू, अक्तूबर, १९१७

४०६. पत्र : मगनलाल गांधीको

रांची

[आश्विन सुदी ७, सितम्बर २३, १९१७][1]

चि० मगनलाल,

आज तुम लोगोंसे विदा हुए १२ वाँ दिन है। इन ग्यारह दिनोंमें से नौ दिन और रातें मैंने रेलगाड़ीमें बिताईं और सिर्फ दो रातें किसी घरमें। फिर भी मेरी तबीयतको कोई हानि नहीं हुई। आज बारहवें दिन अनाज खाया है। बम्बईमें अमृतलाल भाईके[2] साथ मकानके बारेमें बातचीत हुई। छगनलालने तुम्हें लिखा ही होगा। उन्होंने कुछ बहुत महत्त्वपूर्ण बातें बताईं। [कई जगह] हमें मुख्यत: लकड़ीका उपयोग करना ही पड़ेगा। नींवके काममें मुश्किल पड़ेगी। वहाँ नींव डाली ही नहीं जा सकती। इस स्थितिमें लकड़ीका ढांचा बनाकर उसे ईंटोंसे भरना ही एक उपाय है। [इसी प्रकार] उन्होंने कहा है कि पुस्तकालयकी इमारत और लम्बी करनी पड़ेगी, नहीं तो उसमें पर्याप्त उजाला नहीं आयेगा। यह सब वे स्वयं विस्तारपूर्वक लिखनेवाले हैं। यह तो तुम्हें याद होगा कि जीवणलाल भाईवाले बँगलेसे बत्ती और खंभा ले आना है। हमें उसकी जरूरत पड़ेगी। अमृतलाल भाईका सुझाव है कि लकड़ीपर आगे-पीछे डामर पोता जाये। पाखाने और पेशाबघर अच्छी तरह बनाये जायें, इसकी व्यवस्था पहलेसे ही करना। उसपर खर्च किया हुआ पैसा व्यर्थ नहीं जायेगा। [गंदा] पानी तुरन्त बह जाये, इसका प्रबन्ध करना पड़ेगा। आश्रममें जहाँ-जहांसे, जितना मिल सके उतना पत्थर और रोड़ा आदि इकट्ठा कर लेना चाहिए। रास्ते काफी चौड़े रखना और उन्हें जल्दी ही बनवा डालना। ऐसा लगता है कि मुझे रांचीमें जितना मैं सोचता था उससे कहीं ज्यादा वक्त लगेगा। पहली बैठक सोमवारको होगी।

बापूके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५७१६) से।
सौजन्य : राधाबेन चौधरी।

१. गांधीजी अहमदाबादसे ११ सितम्बरको रवाना हुए थे और बम्बई, मद्रास तथा पूना होते हुए २२ सितम्बरको रांची पहुँचे थे। पत्रके अन्तमें चम्पारन जाँच समितिकी जिस बैठकका उल्लेख हुआ है वह रांचीमें २४ सितम्बरको हुई थी। मूल पत्रमें तिथि भादों सुदी ७ दी गयी है जो स्पष्टत: गलत है।

२. अमृतलाल ठक्कर।

४०७. चम्पारन-समितिकी बैठककी कार्यवाहीसे

रांची
सितम्बर २४, १९१७

अध्यक्षने कहा कि उन्हें पता चला है कि श्री गांधी रिपोर्टके उस मसविदेके बारेमें जो प्रचारित किया जा चुका है, कुछ कहना चाहते हैं। श्री गांधीने कहा कि उन्होंने माननीय लेफ्टिनेंट गवर्नरसे भेंट की थी और उन्हें उनसे मालूम हुआ कि शरहबेशीके सम्बन्धमें किये जानेवाले विरोधी दावोंपर पंच निर्णय सम्भव है। अध्यक्षने कहा कि जब वे रांचीमें थे तब उन्होंने इस मामलेपर स्थानीय सरकारसे बातचीत की थी और बताया था कि इसके तीन तरीके हो सकते हैं:

१. स्थानीय सरकार पंच-निर्णय करे,
२. ब्रिटिश जायदाद २५ प्रतिशत बकाया अदा करे, या
३. प्रश्नको विशेष न्यायाधिकरणके लिए छोड़ दिया जाये।

उन्हें मालूम हुआ है कि स्थानीय सरकार पंच-निर्णयके लिए तैयार नहीं है, किन्तु स्थानीय अधिकारियोंके साथ सलाह-मशविरा करनेके बाद वह दूसरे सुझाव-पर विचार करनेके लिए तैयार है। तथापि स्थानीय अधिकारियोंने इस विचारका विरोध किया, और जब उन्होंने खुद बागान-मालिकों — अर्थात् सर्वश्री नॉर्मन, हिल तथा इर्विनके सामने यह विचार रखा तो उन्हें मालूम हुआ कि वे भी इसके पक्षमें नहीं हैं। इसलिए वे इस नतीजेपर पहुँचे कि स्थानीय सरकारने पहले और दूसरे विकल्पोंका खयाल छोड़ दिया है। और इसके परिणामस्वरूप रिपोर्ट यह मानकर तैयार की गई है कि तीसरा सुझाव स्वीकार कर लिया जायेगा। श्री गांधीने कहा कि उनके विचारमें सर एडवर्ड गेट पंच निर्णय करनेके लिए तैयार हो जायेंगे। और सुझाव दिया कि यह मामला उन्हें सौंप दिया जाये। श्री रेनीने बताया, पहले यह निश्चित कर लेना चाहिए कि सम्बद्ध पक्ष इसके लिए तैयार हैं कि नहीं। अध्यक्षने कहा मामला महामान्य [लेफ्टिनेन्ट गवर्नर] को सौंपनेसे पहले एक या दो मुद्दोंपर निर्णय करना आवश्यक है। पहला है तुरकौलियाके सम्बन्धमें। चूंकि श्री हिल शरहबेशी में २० प्रतिशतसे अधिक कम करनेके लिए राजी नहीं हुए और श्री गांधीने कहा था कि वे विशेष मामलोंपर विचार करनेके लिए तैयार हैं; इसलिए अध्यक्षने पूछा कि क्या वे तुरकौलियाके सम्बन्धमें २० प्रतिशत और ४० प्रतिशतके बीच पंच निर्णय करानेके लिए सहमत हो जायेंगे? श्री गांधीने इसपर अपनी सहमति दे दी। अध्यक्षने बताया, दूसरा मुद्दा यह है कि मान लें कुछ बागान-मालिक सहमत होते हैं और कुछ नहीं होते तो ऐसी हालतमें पंच निर्णय क्या उन्हीं लोगोंके मामलेमें होगा जो सहमत होते हैं? श्री गांधीने कहा कि उनके विचारमें

यदि सम्बन्धित कुछ लोग अपने मामलेको साधारण न्यायालयोंमें लड़ना उचित समझते हों तो उन्हें इसपर कोई आपत्ति नहीं होगी। श्री रीड इसपर सहमत हो गये। तब सभापतिने पूछा, क्या श्री गांधी यह चाहते हैं कि पंच-निर्णय माननीय सर एडवर्ड गेट स्वयं करें अथवा यह स्थानीय सरकारको सौंप दिया जाये? गांधीजीने उत्तर दिया कि उनके विचारमें माननीय सर एडवर्ड गेटको ही स्वयं पंच-निर्णय करना चाहिए। इसपर भी समिति सहमत हो गई। श्री रीडने जानना चाहा कि क्या महामान्य प्रत्येक कारखानेके लिए अलग-अलग अंक निश्चित करेंगे? श्री गांधीने जवाब दिया कि उनकी समझमें तफसीलमें जानेकी आवश्यकता नहीं है, इसे महामान्यपर ही छोड़ा जा सकता है। तब सभापतिने बताया कि मान लीजिए यदि पंच-निर्णय कर दिया गया; तो क्या बागान मालिकोंको इस सम्बन्धमें कोई आश्वासन देना आवश्यक है कि पंच-निर्णय रैयतके लिए अनिवार्य होगा। श्री ऐडमीने कहा कि इसके लिए विधानकी आवश्यकता होगी। किन्तु गांधीजीने उत्तर दिया कि यदि रैयतकी ओरसे उन्हें कार्य करनेके लिए वकालत-नामा मिल जाये तो उनके विचारमें यह ज्यादा आसान होगा और साथ ही यह विधानके समान ही प्रभावशाली भी हो जायेगा। इससे अधिक विलम्ब भी नहीं होगा और सभी दृष्टियोंसे सम्भवतः यह विशेष विधानकी अपेक्षा कम तकलीफदेह भी होगा। सभापतिने पूछा कि जो लोग शरहबेशी नहीं दे रहे हैं और जिनके नाम रेकार्डमें नीलका कर्ज दर्ज है उनके मामलेमें क्या करना होगा। श्री गांधीने उत्तर दिया कि अन्तमें जो पंच-निर्णय हो उसके अनुसार उन्हें अपना ऋण अदा करनेकी छूट होनी चाहिए। अध्यक्षने बताया, समिति यह पहले ही स्वीकार कर चुकी है कि 'तिन-कठिया' प्रणाली इतनी बुरी है कि उसका उन्मूलन कर देना चाहिए। श्री गांधीने कहा कि इसके बावजूद उनकी समझमें यह नहीं आ सका कि यदि रैयत नहीं चाहती तो उसे बढ़ा हुआ किराया देनेके लिए मजबूर क्यों किया जाना चाहिए। वे प्रयत्न करके रैयतसे वकालतनामा उपलब्ध करनेके लिए तैयार हैं, किन्तु रैयतको पंच-निर्णय स्वीकार करनेके लिए मजबूर नहीं किया जाना चाहिए। श्री रीडने कहा कि उनके विचारमें वकालतनामा उपलब्ध करनेमें बहुत देर लगेगी और अध्यक्षने पूछा कि यदि रैयत बादमें इसे अस्वीकार कर दे तो क्या होगा? श्री गांधीने कहा कि ऐसी हालतमें रैयतको संघर्ष करना होगा; किन्तु इसकी कोई सम्भावना नहीं। वे रिपोर्टमें यह शामिल करनेके लिए राजी हो जायेंगे कि "बागान-मालिकोंकी सुरक्षाके लिए रैयत द्वारा लेफ्टिनेंट गवर्नरके निर्णयको स्वीकार करनेके बारेमें सम्बन्धित रैयतसे वकालतनामा प्राप्त करनेकी जिम्मेदारी श्री गांधीकी होगी।" उन्होंने यह भी कहा कि यदि रैयत इस करारपर केवल हस्ताक्षर कर दे कि लेफ्टिनेंट गवर्नर द्वारा निश्चित अंकोंको वह स्वीकार कर लेगी तो सम्भवतः वह और भी आसान हो। अध्यक्षने पूछा कि यदि इस करारको उपलब्ध करनेके पहले ही पंच-निर्णय हो गया तो क्या उसके बाद रैयतके पास हस्ताक्षर प्राप्त करनेके लिए जाना उचित होगा? श्री गांधीने कहा कि तब वकालतनामा नहीं बल्कि वैधानिक स्वीकृति प्राप्त

करनेकी बात होगी। श्री रेनीने कहा, आवश्यकता इस बातकी है कि बागान-मालिकों द्वारा शेष किराया वसूल करनेके लिए मुकदमा दायर करनेपर भी रैयत जरा भी ननु-नच न कर सके। श्री रीडने बताया कि यदि रेकार्डमें तरमीम किये हुए किरायोंकी पुनः जांच करनी हो तो इसके लिए विधानका होना आवश्यक है और रैयतमें प्रत्येकसे ऐसा इकरारनामा लेना होगा जिसमें सभी विशिष्ट मामलोंमें तय की गई शर्तोंका ब्योरा हो। अध्यक्षने कहा, कठिनाई यह है कि जहाँ समितियाँ बागान-मालिकोंकी हदतक उनके प्रमुखोंसे बातचीत कर रही हैं वहाँ रैयतकी हदतक उन्हें उसके प्रतिनिधियोंसे विचार-विमर्श करना पड़ रहा है। इसे हल करनेके लिए जो दो तरीके प्रस्तावित किये गये हैं वे इस प्रकार हैं:

(१) पंच-निर्णय; यह एक लम्बी प्रक्रिया होगी, इसलिए इसके सम्पन्न होनेसे पहले वकालतनामा प्राप्त करना, और

(२) वैधानिक स्वीकृति, जो पंच-निर्णयके बाद श्री गांधीको प्राप्त करनी है।

श्री ऐडमी ने कहा कि यदि दूसरा सुझाव स्वीकार कर लिया गया तो रैयतमें हर व्यक्तिसे अलग-अलग करार करना होगा और उसका पंजीयन कराना होगा। अध्यक्षने बताया कि ऐसी हालतमें खर्च बहुत करना पड़ेगा और यह निर्णय भी करना होगा कि इस खर्चको कौन उठायेगा। श्री गांधीने कहा कि वकालतनामा प्राप्त करनेमें कमसे-कम एक मास लगेगा। श्री रीडने कहा कि उनके विचारमें विधान अधिक अच्छा होगा। श्री रेनीने बताया कि वकालतनामा उपलब्ध करनेसे पहले पंच-निर्णयका होना असम्भव है और उन्होंने श्री गांधीसे पूछा कि क्या वे इस सिफारिशसे सहमत नहीं होंगे कि आवश्यकता पड़नेपर समझौतेको विधान द्वारा अनिवार्य कर दिया जाये? श्री गांधीने इसपर अपनी सहमति दी। श्री रीडने कहा कि उनकी समझमें तिन-कठिया प्रणालीके उन्मूलनके लिए विधान हर तरहसे आवश्यक है और इसलिए उन्हें कोई ऐसा कारण नजर नहीं आता कि शरहबेशीके सम्बन्धमें भी क्यों न विधानमें उपबन्ध शामिल किया जाये। अध्यक्षने कहा कि उनके विचारमें विशेष विधानका प्रस्ताव एक जुआ है; विधान-परिषद्पर निर्भर करता है; किन्तु सदस्योंका आम विचार है कि वहाँ इस सम्बन्धमें कोई कठिनाई नहीं होगी। इसपर अन्तिम रूपसे सहमति प्राप्त कर ली गई कि अध्यक्ष महामान्यके पास जायें और सबकी ओरसे प्रार्थना करें कि वे निम्नलिखित आधारपर पंच-निर्णय करें:

(१) तुरकौलियासे सम्बद्ध शरहबेशीमें २० प्रतिशत तथा ४० प्रतिशतके बीच कमी।

(२) पिपरा, मोतीहारी, जलहा, तथा सिरनीमें २५ प्रतिशत तथा ४० प्रतिशतके बीच कमी।

पंच-निर्णय वहीं होना है जहाँ सम्बन्धित पक्ष सहमत हों। सम्बन्धित पक्ष सहमत न हों तो उन्हें आम अदालतमें जानेकी छूट होगी। विभिन्न पक्षोंके लिए पंच-निर्णय भी विभिन्न हो सकते हैं। श्री गांधी इस बातको छोड़ दिया जाना ज्यादा अच्छा समझते

हैं; किन्तु पंच-निर्णयके असफल होनेकी अपेक्षा वे इसे बनाये रखना पसन्द करते हैं। जहाँ किसान नीलकी खेतीका इकरार कर चुका हो वहाँ उसे यह चुननेका अधिकार है कि या तो इकरारके मुताबिक नीलकी खेती करे या उसके बदले निश्चित दरके अनुसार रकम अदा कर दे। पंच-निर्णय आपत्कालीन विधान द्वारा अमलमें लाया जायेगा।

इसके बाद अध्यक्षने कहा कि यदि महामान्यने पंच-निर्णय करना स्वीकार कर लिया तो रिपोर्टमें शायद इस तथ्यका उल्लेख-भर होगा। श्री गांधीने कहा कि वे सबसे पहले पंचनिर्णय हो जाना ज्यादा अच्छा समझते हैं; इसके बाद जिस अंकपर फैसला हो उसे समितिकी सिफारिशके रूपमें रिपोर्टमें शामिल कर लिया जाये। साथ ही यह सिफारिश भी की जाये कि इसे अमलमें लानेके लिए कानून बना देना चाहिए। समितिने इसपर अपनी सहमति दे दी।

इसके बाद अध्यक्षने कहा कि अब उनको रिपोर्टपर विचार करना है। उन्होंने श्री गांधीसे कहा कि वे अपने आम विचार समितिके सामने रखें। श्री गांधीने कहा कि मेरे विचारमें रिपोर्ट हमारे हिसाबसे बहुत लम्बी है और एक संक्षिप्त जाँच-पड़तालके बाद समितिका इतनी लम्बी-चौड़ी कहानी पेश करना ठीक नहीं है। उन्होंने बताया कि सारी सामग्री सरकारी रेकॉर्डोमें दर्ज है और विचारार्थ विषयके कारणोंमें गये बिना केवल निष्कर्ष ही दिये जाने चाहिए थे। उन्होंने देखा है कि जिन पंच-निर्णायकोंने कारण नहीं दिये, वे सभी ज्यादा सफल रहे। अध्यक्षने कहा कि यदि सब सदस्य इसे ठीक मानें तो मैं सहमत हूँ।

अध्यक्षने कहा कि रिपोर्टमें मुकर्ररी गाँवोंके तावानपर विचार नहीं किया गया। उसमें केवल ठेकागाँवोंमें तावानके मामलेपर विचार किया गया है। उन्होंने विशेष रूपसे राजपुरके मामलेका उल्लेख किया। श्री गांधीने कहा कि मेरे विचारमें तावानका एक अंश श्री हडसनको वापस देना चाहिए; क्योंकि तिन-कठिया नीलके स्थानपर खुश्की नील रखनेसे उन्हें कोई हानि नहीं हुई है, यदि आवश्यकता हो तो विशेष विधान द्वारा भुगतान लागू किया जा सकता है।

इसके बाद अध्यक्षने एक सहमति-टिप्पणी सामने रखी जो कि माननीय राजा कौर्त्या-नन्द सिंहने बंगाल काश्तकारी अधिनियमके खण्ड ७५ और ५८ के सम्बन्धमें की गई सिफारिशोंके खिलाफ पेश की थी। खण्ड ७५ में किये गये संशोधनके सम्बन्धमें श्री ऐडमीने बताया कि इस आधारपर आपत्ति वैध न हो इसलिए विधान-सभाने पहले ही उल्लंघनसे सम्बन्धित दो वैकल्पिक तरीकोंको अमलमें लानेका सिद्धान्त स्वीकृत कर लिया था। श्री गांधीने कहा कि बादमें कानूनी नुक्ता न उठे इसलिए आपत्ति वैध लगती है; किन्तु इस आपत्तिका निराकरण हो जाता है, क्योंकि कमिश्नरसे अपील की जा सकेगी। अध्यक्षने बताया कि सिफारिश वस्तुतः उक्त खण्डको सर्वथा वैसा ही बना देनेके लिए की गई है, जैसा कि वह छोटा नागपुर काश्तकारी अधिनियममें है। और उन्होंने राजा साहबसे पूछा कि यदि सिफारिशको चम्पारन जिले तक ही सीमित कर दिया

जाये तो क्या वे सहमत नहीं होंगे? राजा कीर्त्यानन्द सिंहने कहा कि इस शर्तपर वे सहमत होनेको तैयार हैं।

[अंग्रेजीसे]

सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन, नं० १८१, पृ० ३५१-६।

४०८. चम्पारन-समितिकी बैठककी कार्यवाहीसे

रांची
सितम्बर २५, १९१७

अध्यक्षने कहा, मैं लेफ्टिनेंट गवर्नरसे मिल चुका हूँ। उन्होंने कहा है कि वे स्वयं अपने द्वारा पंच-निर्णय दिये जानेके प्रस्तावका निश्चित उत्तर देनेके लिए तैयार नहीं हैं। उनके लिए यह स्थिति स्वीकार करना कुछ कठिन होगा, क्योंकि उन्हें सरकारके प्रधानकी हैसियतसे रिपोर्टपर कार्रवाई करनी होगी। इसलिए उन्होंने सुझाव दिया है कि यदि न्यायालयका कोई न्यायाधीश पंच-निर्णय देनेके लिए नियुक्त कर दिया जाये तो यह सम्भवतः अधिक अच्छा होगा। श्री गांधीने कहा कि मेरी समझमें यह पंच-निर्णय कोई बाकायदा और औपचारिक पंच-निर्णय नहीं है इसलिए इस पंच-निर्णयके लिए किसी ऐसे व्यक्तिकी आवश्यकता नहीं है जो कानूनी बारीकियाँ समझता हो बल्कि ऐसे व्यक्तिकी आवश्यकता है जो चतुराईसे काम ले सके। श्री रीडने कहा कि इर्विन और हिल पंच-निर्णयकी बात मान लेंगे, इसमें सन्देह है, और यह तो तय है कि वे उच्च न्यायालयके न्यायाधीशको पंच बनानेकी बात कभी न मानेंगे। अध्यक्षने कहा कि ऐसी परिस्थितिमें पंच-निर्णयके प्रस्तावपर विचार करनेसे कोई लाभ नहीं है। श्री गांधीने इस विचारसे सहमति प्रकट की; किन्तु कहा कि मुझे फिर भी पंच-निर्णय करा सकनेकी आशा है।

अध्यक्षने रिपोर्टपर हुई बहसका जिक्र करते हुए कहा कि आरम्भका वह भाग निकाला जाये या नहीं जिसमें इन प्रश्नोंसे सम्बन्धित इतिहास दिया गया है। यह ध्यान रखना है कि कुल मिलाकर रिपोर्ट लोगोंकी समझमें आनी चाहिए और उससे ऐसा आभास नहीं मिलना चाहिए कि समितिने बेगार टाली है। श्री रेनीने कहा कि दूसरे अध्यायको निकाल देनेमें उन्हें कोई आपत्ति नहीं है। श्री ऐडमी दूसरे अध्यायको ज्योंका-त्यों रखनेके पक्षमें थे। राजा कीर्त्यानन्द सिंहने सुझाव दिया कि ठीकेदारी प्रथासे सम्बन्धित अनुच्छेद छोटा किया जा सकता है। श्री रीडने कहा कि उन्हें दूसरे अध्यायको कायम रखनेमें कोई आपत्ति नहीं दिखाई देती। कोई भी व्यक्ति समस्याके वर्तमान रूपको समझ सके, इसके लिए वह आवश्यक है। श्री गांधीने कहा कि यदि रिपोर्ट सर्वसम्मत न हो तो मैं इसे समझ सकता हूँ; बहुमत यदि अपनी

युक्तियोंको पूरी तरह पेश करना चाहे तो मैं उसका विरोध न करूँगा। अध्यक्षने कहा कि श्री गांधीका जिन मुद्दोंपर विरोध है उन्हें वे ठीक-ठीक बता दें; तब रिपोर्टमें परिवर्तन किया जा सकता है और यदि सम्भव हो तो उसमें सभीके दृष्टिकोणोंका खयाल रखा जा सकता है। श्री रेनीने कहा कि यदि दूसरे अध्यायमें कोई बात विवादास्पद हो तो वह रिपोर्टके विवादास्पद भागमें रखी जा सकती है। उन्होंने यह भी कहा कि यदि रिपोर्टमें न्यायाधिकरणकी सिफारिश करनी हो तो शरहबेशीके प्रश्नपर विस्तारसे विचार करना अनावश्यक है, क्योंकि न्यायाधिकरणको उसी प्रश्नका तो निर्णय करना होगा; किन्तु यदि सरकार उस प्रश्नका निर्णय स्वयं कर रही हो तो युक्तियोंको कुछ विस्तृत रूपमें देने की आवश्यकता होगी। श्री गांधीने कहा, मेरा खयाल तो यह है कि सरकारको निर्णय बहुमतके विचारों और मेरे विचारोंके बीचमें देना होगा; मैं तो यही चाहता हूँ कि सरकार मामलेकी न्याय्यता देखकर निर्णय दे और तुरन्त कानून बना दे। यदि सरकार यह मानती है कि शरहबेशी गैरकानूनी है और तिन-कठियाका, कानूनी होनेपर भी, इतना दुरुपयोग किया जाता है कि उसे रद कर देना चाहिए, तो उसको न्यायाधिकरण नियुक्त करनेकी आवश्यकता न होगी और वह उसके बिना ही इनके विरुद्ध कानून बना देगी। यदि मैं यहाँ पहले आ गया होता तो मैं किसानोंको मुआवजेके विरुद्ध सलाह देता। किन्तु स्थिति यह है कि मुआवजा दिया जा चुका है; श्री रीड कहते हैं कि उन्होंने केवल मुआवजा देनेकी शर्तपर तिन-कठियाकी रदगीकी सिफारिश करना मंजूर किया है; और यह बात मुझे माननी पड़ती है। अध्यक्षने कहा, समिति सरकारकी ओरसे वचन नहीं दे सकती; किन्तु इस सम्बन्धमें मेरे खयालसे सरकारका दृष्टिकोण क्या है मैं उसका संकेत दे सकता हूँ। यदि पंच-निर्णयसे मामला तय करा लिया जाये तो दोनों पक्षोंकी स्वीकृतिसे सरकार उस समझौतेको कार्यान्वित करनेके लिए किसी कठिनाईके बिना कानून बना सकती है। यदि समझौता न हो तो दो विकल्प रह जाते हैं:

(१) सरकार स्वयं निर्णय कर ले और उसके अनुसार कानून बना दे, या
(२) यह मामला एक विशेष न्यायाधिकरणको सौंप दिया जाये या मामूली अदालतोंके लिए छोड़ दिया जाये।

पहले विकल्पके सम्बन्धमें यह बात है कि उसमें सम्पत्तिके महत्त्वपूर्ण दावोंको प्रभावित करनेवाले प्रश्न आते हैं। यदि सरकार इन्हें अपनी मरजीसे तय करे तो वह उसकी मनमानी और जोर-जबरदस्ती होगी। इसलिए समझौता न हुआ तो कदाचित दूसरा विकल्प ही स्वीकार किया जायेगा। अध्यक्षने आगे कहा, श्री गांधी रिपोर्टमें जो परिवर्तन करना चाहते हैं जबतक समितिके सम्मुख उसके सम्बन्धमें निश्चित सुझाव न हों, तबतक आगे बढ़ना असम्भव है। मैं तो यह चाहता हूँ कि रिपोर्ट यथासम्भव सर्वसम्मत हो; अर्थात् जो भी विवादास्पद मामला हो वह शरहबेशी-सम्बन्धी भागमें आ जाये। श्री गांधीने कहा कि तिन-कठियाका दायित्व और शरहबेशीका औचित्य कुछ मामलोंमें

कानून-सम्मत माना गया है; रिपोर्ट-भरमें यह एक ही प्रमुख विचार मिलता है। अध्यक्षने कहा कि यदि श्री गांधी रिपोर्टको बारीकीसे पढ़ जायें, तो इसके प्रत्येक भागपर अलग-अलग विचार किया जा सकता है।

पंच-निर्णयकी संभावनापर विचार करते हुए श्री गांधीने कहा कि मेरे खयालसे यदि गोरे जमींदार यह मानते हैं कि उनका मामला कानूनकी दृष्टिसे ठीक है तो उनका पंच-निर्णय लेनेसे इनकार करना अव्यावहारिक है। अध्यक्षने पूछा कि क्या श्री गांधी पंच-निर्णयके लिए रजामंद हैं, यदि वे रजामंद हों तो एक उन्होंका मामला लेना ठीक होगा। श्री रेनीका खयाल था कि इससे दोनोंमें से एक पक्षका खयाल यह बन सकता है कि स्थानीय सरकार अन्य मामलोंमें निष्पक्ष न्याय करनेमें असमर्थ है। उन्होंने सुझाव दिया कि यदि एक विशेष न्यायाधिकरण नियुक्त कर दिया जाये तो बागान-मालिकोंको प्रत्येक मामला विस्तारसे चलानेके बजाय न्यायाधिकरणसे पंच-निर्णय लेनेकी बात माननेके लिए स्वतन्त्र छोड़ा जा सकता है। अध्यक्षने कहा कि उनकी समझमें इससे कोई लाभ नहीं होगा।

तब अध्यक्षने सुझाव दिया कि न्यायाधिकरणकी रचना और उसके कर्त्तव्योंपर विचार कर लिया जाये। श्री ऐडमीने कहा कि उसमें तीन सदस्य हों जिससे मतभेद होनेपर निर्णय हो सके। उनका खयाल यह भी था कि यदि कोई कानूनी मुद्दा हो तो उसके सम्बन्धमें उच्च न्यायालयसे निर्णय लिया जा सकता है। इसमें एक यही प्रश्न हो कि इस दायित्वसे मुक्तिके लिए मुआवजेकी उचित रकम क्या हो। समितिने न्यायाधिकरणके सदस्योंकी संख्या तीन रखना स्वीकार किया और तब उसके सदस्योंके सम्बन्धमें विचार किया गया। अध्यक्षने सुझाव दिया कि न्यायाधिकरणमें निम्न सदस्य हों:

(१) एक न्याय-विभागका अधिकारी जो जिला-जजसे नीचे दर्जेका न हो,
(२) एक माल अधिकारी जो कलेक्टरसे नीचे दर्जेका न हो, और
(३) एक अन्य जज या एक अन्य माल-अधिकारी।

इनमें (१) के सम्बन्धमें श्री रेनीने यह प्रस्ताव किया कि न्याय-विभागका अधिकारी उच्च-न्यायालयका न्यायाधीश हो और न्यायाधिकरणके निर्णयके विरुद्ध अपील न हो।

किन्तु श्री गांधीका खयाल था कि अपीलका अधिकार होना चाहिए, क्योंकि न्यायाधिकरण कभी-कभी भूल कर जाते हैं। न्यायाधिकरणमें न्याय-विभागका अधिकारी चाहे उच्च न्यायालयका न्यायाधीश हो चाहे जिला जज, उनका विचार दोनों दशाओंमें एक ही था। उन्होंने यह माना कि अपीलका अधिकार कानूनी मुद्दों तक ही सीमित रहे। श्री ऐडमीने कहा कि यदि न्यायाधिकरणमें उच्च न्यायालयका न्यायाधीश रहेगा तो वह अपीलकी अनुमति न देगा; किन्तु सूक्ष्म नियमकी दृष्टिसे न्यायाधिकरणके निर्णयके विरुद्ध अपीलकी अनुमति देनेमें कोई आपत्ति नहीं है। श्री रीडने भी श्री रेनीसे सहमति

प्रकट की। राजा कीर्त्यानन्द सिंहने कहा, यदि श्री गांधी शहरबेशीमें २५ प्रतिशतकी कमीसे सहमत हो जायें तो मैं इसे ज्यादा पसन्द करूँगा, क्योंकि इससे न्यायाधिकरण, जो स्पष्टतः बहुत कष्टप्रद होगा, नियुक्त न करना पड़ेगा। समितिने स्वीकार किया कि न्यायाधिकरणका दूसरा सदस्य माल अधिकारी हो और वह कलेक्टरसे नीचे दर्जेका न हो। श्री रेनीने कहा कि वे न्यायाधिकरणके तीसरे सदस्यका चुनाव स्थानीय सरकार-पर छोड़ना पसन्द करेंगे, क्योंकि सम्भव है वह न तो जजको नियुक्त करना चाहे और न माल अधिकारीको। श्री ऐडमीने कहा कि वे तीसरा सदस्य किसी न्याय अधिकारीको बनाना ज्यादा पसन्द करेंगे। श्री गांधीको भी न्याय अधिकारीकी नियुक्ति ही ज्यादा पसन्द थी। उन्होंने कहा कि यहां जो मामला पेश है वह वैसा नहीं है जैसा पंच-निर्णयमें होता है। औपचारिक न्यायाधिकरणमें वे न्याय अधिकारियोंका बहुमत रखना पसन्द करते। अध्यक्षने पूछा कि क्या उच्च न्यायालयका न्यायाधीश और जिला जज साथ-साथ बैठ सकते हैं। श्री ऐडमीने कहा कि उनके खयालसे इसमें कोई आपत्ति नहीं है। श्री रेनीने कहा कि सरकारकी इच्छा किसी बैरिस्टर या वकीलको रखनेकी हो सकती है और उसकी इच्छा न्यायाधिकरणमें कमसे-कम एक भारतीयको रखनेकी भी हो सकती है। उनका खयाल था कि यदि वे न्यायाधिकरणके सदस्योंके सम्बन्धमें बहुत विस्तृत सिफारिश करेंगे तो उससे सरकारके हाथ बँध जायेंगे। उसके बाद अध्यक्षने न्यायाधिकरणके कर्त्तव्योंका प्रश्न उठाया। उन्होंने सुझाव दिया कि आवश्यक कानून बनाकर उसके कर्त्तव्य कुछ-कुछ इस प्रकार निर्धारित कर दिये जाने चाहिए ——

यह कि एक निर्धारित समयके भीतर किसी भी पक्षके प्रार्थनापत्र देनेपर न्यायाधि-करण यह निर्णय करेगा:

(१) [रैयत पर] नील बोनेका दायित्व है या नहीं।

(२) यदि है तो बेशी लगानके रूपमें, मुआवजा दिया जाना चाहिए या नहीं, यदि दिया जाना है तो कितना।

(३) यदि न्यायाधिकरण यह निर्णय दे कि मुआवजा दिया जाये तो वह उस मुआवजेका निर्धारण करते समय इन मुद्दोंका ध्यान रखे:

(क) लगानकी मात्रा किसी भी हालतमें उचित और न्याय्य लगानसे अधिक न हो;

(ख) मौजूदा लगान और वह अर्सा जिसमें बेशी लगान नहीं रहा; और

(ग) शरहबेशीकी वास्तविक दर जो किसी जमींदारीमें या पास-पड़ोसकी जमींदारियोंमें ली गई हो।

श्री ऐडमीने कहा कि यदि न्यायाधिकरणको कम दर निर्धारित करनी हो तो यह तरीका शायद सबसे अच्छा है। यह सुझाव दिया जा चुका है कि स्थितियाँ चाहे जैसी हों, न्यायाधिकरण उचित और न्याय्य लगान बांधे। श्री रेनीने कहा कि उनकी दृष्टिसे न्यायाधिकरणको यह तय करनेके लिए मुक्त छोड़ देना चाहिए कि वह किन मुद्दोंपर

विचार करे। उसकी मरजीकी भी हद है, क्योंकि वह मूल लगानसे कम लगान नहीं बांध सकता और न शरहबेशीको मिलाकर कुल जितना मौजूदा लगान है उससे ज्यादा बढ़ा ही सकता है। अध्यक्षने कहा कि उन्होंने मार्गदर्शनके लिए जो मुद्दे सुझाये हैं वैसे कुछ मुद्दोंके बिना तो वे माल-अधिकारीकी हैसियतसे लगान-बन्दोबस्त करनेमें झिझकेंगे। श्री रीडने बताया कि बन्दोबस्तके कागजात उपलब्ध हैं और उनसे न्यायाधिकरणको सहायता मिलेगी। अध्यक्षने कहा कि बन्दोबस्तके ये कागजात उत्तर भारतमें लगान-निर्धारणका जो अर्थ है उसको ध्यानमें रखकर तैयार नहीं किये गये हैं और उनके विचारसे तो इससे यह कार्रवाई बहुत लम्बी हो जायेगी। श्री रेनीने अपने विचार-पर जोर नहीं दिया; किन्तु उनका खयाल यह था कि किन मुद्दोंपर विचार करना है इसका निर्णय न्यायाधिकरणपर छोड़ दिया जाना चाहिए। अध्यक्षने कहा कि यह मंशा पूरा हो सकता है, बशर्ते कि अन्य बातोंका खयाल करते हुए यह व्यवस्था कर दी जाये कि न्यायाधिकरण ऊपर बताये गये तीन मुद्दोंको ध्यानमें रखे। श्री गांधीने कहा कि यदि कोई ऐसी सिफारिश की जायेगी जिससे बंगाल काश्तकारी कानूनकी धाराएँ और सख्त हो जाती हों तो उसका विरोध विधान-परिषद्‌में किया जायेगा। जहाँतक सम्भव हो, समितिके सुझावका उद्देश्य कानूनको नरम बनाना होना चाहिए, उसे सख्त बनाना नहीं। श्री रीडने कहा, मेरे खयालसे यदि न्यायाधिकरणको यह अधिकार दिया जाये कि वह केवल उस लगानपर ही विचार करे जो बन्दोबस्तके वक्त मुकर्रर किया गया था और आवश्यक होनेपर उसमें कमीबेशी करे तो यह ज्यादा आसान होगा। अध्यक्षने कहा कि विशेष न्यायाधिकरणको केवल उन्हीं किसानोंके मामलोंपर विचार करना होगा जिनका दायित्व कागजातमें दर्ज है या जिनसे शरहबेशी ले ली गई है। यह बात मान ली गई कि सूचना निकलनेकी तारीखसे तीन महीने तक न्यायाधिकरण प्रार्थनापत्र स्वीकार करेगा और यदि इस अर्सेमें प्रार्थनापत्र नहीं दिये गये तो बन्दोबस्तके कागजातमें लिखी हुई बात अन्तिम मानी जायेगी। श्री ऐडमीको एक ऐसा अनुच्छेद तैयार करनेके लिए कहा गया जिसमें ये सब निर्णय आ जायें। यह अनुच्छेद रिपोर्टके अनुच्छेद २४ के अन्तमें जोड़ा जायेगा।

श्री गांधी यह व्यवस्था भी कराना चाहते थे कि न्यायाधिकरण डराने-धमकाने, अनुचित प्रभाव डालने और अन्य गैरकानूनी कार्योंके मामलोंकी सुनवाई करे अर्थात् वह तिन-कठिया प्रथाके पुराने इतिहासकी छानबीन करे। श्री ऐडमीने कहा कि इसमें बहुत समय लगेगा। श्री गांधीने कहा कि एक नमूनेका मामला ले लिया जाये और अन्य मामलोंमें उसीका अनुकरण किया जाये। अध्यक्षने कहा कि मेरे खयालसे इस धारामें — कि न्यायाधिकरण यह तय कर सकता है कि मुआवजा दिया जाये तो कितना दिया जाये — इस व्यवस्थाका समावेश हो जाता है। काश्तकार यह युक्ति दे सकता है कि चूंकि गोरा जमींदार अबतक काफी मुआवजा वसूल कर चुका है, इसलिए अब कोई मुआवजा देय नहीं है। मैं समझता हूँ कि श्री गांधी अपने इस मूल रुखपर आ रहे हैं कि न्यायाधिकरण

नियुक्त ही न किया जाये। न्यायाधिकरण नियुक्त हो या न हो, एक मुद्दा तो ऐसा रहता ही है जिसे सरकारको तय करना होगा। श्री रेनी ने कहा कि यदि न्यायाधिकरणका इन सब मामलोंपर विचार करना आवश्यक हो तो समस्त मामलेको सामान्य न्यायालयोंके लिए छोड़ देना और सम्बन्धित मुकदमोंको तय करनेके लिए केवल एक विशेष न्यायाधीश नियुक्त कर देना सम्भवतः ज्यादा आसान बात होगी। श्री गांधीने कहा कि यदि सरकारको इतना भी लगा कि सहज न्याय इस मामलेके पक्षमें है तो वह न्यायाधिकरण नियुक्त कर देगी, क्योंकि, जैसा अध्यक्ष कह चुके हैं, वह एक मनमाना आदेश निकालनेकी जिम्मेदारी अपने ऊपर नहीं ले सकती। श्री ऐडमीने कहा, मेरे खयालसे न्यायाधिकरणको अपनी मरजीके अनुसार काम करनेका अधिकसे-अधिक अधिकार दिया जाना चाहिए। श्री रेनीने कहा, तुरकौलियाका मामला बहुत-कुछ डराये-धमकाये जानेकी बातको लेकर ही लड़ा गया है और यही मुद्दा न्यायाधिकरणके सम्मुख आनेवाले शरहबेशीके मामलोंमें भी उठाया जा सकता है। परन्तु न्यायाधिकरण उन किसानोंके मामलोंपर भी विचार करेगा जिनसे शरहबेशी नहीं ली गई है; और फिर भी जिन्होंने इस दायित्वको समाप्त करनेके आवेदन दिये होंगे। यदि न्यायाधिकरण इन पिछले मामलोंमें लगान बढ़ाने देता है—तो वह इससे पूर्व उल्लिखित उन मामलोंमें भी लगान क्यों न बढ़ाने देगा जिनमें डर या धमकीके कारण समझौता बेकायदा है? अतः मेरा खयाल यह नहीं है कि डर या धमकीकी बात कोई बहुत बड़ी बात है। इस तरहके मामलोंकी व्यवस्था रखनेके लिए ही मैंने यह सुझाव दिया है कि न्यायाधिकरण उन सभी बातोंपर विचार करे जिनका सम्बन्ध वह इस प्रश्नसे समझे। श्री रीडने पूछा कि न्यायाधिकरणका खर्च कौन देगा। अध्यक्षने कहा कि खर्च शायद सरकार देगी। उन्होंने श्री गांधीसे पूछा, न्यायाधिकरण कितना समय लगायेगा, क्या यह बता सकते हैं? श्री गांधीने कहा, स्थितियाँ ज्यादासे-ज्यादा अनुकूल रहें तो भी मेरे खयालसे इसमें कमसे-कम एक मास लगेगा। श्री ऐडमीका खयाल था कि इसमें इससे बहुत ज्यादा समय लगेगा।

छपी हुई गवाहीके सम्बन्धमें श्री गांधीने कहा कि वे चाहते हैं कि तीन किसानोंकी जो लिखित गवाही खुले तौरपर ली गई है, उसके साथके कागज भी छापे जायें। अध्यक्षने कहा कि वे परिशिष्टके रूपमें छापे जा सकते हैं। श्री गांधी यह भी चाहते थे कि उन्होंने जिन दूसरे किसानोंके बयान पेश किये हैं, वे भी छापे जायें। श्री रीडने इसपर आपत्ति की। अध्यक्षने कहा कि जिन गवाहोंसे अनौपचारिक रूपसे पूछताछ की गई है, यदि उनके बयान छाप दिये जायें तो यह श्री गांधीके उद्देश्यकी पूर्तिके लिए काफी होगा। श्री गांधीने कहा कि वे इन बयानोंको ध्यानसे पढ़कर इस मुद्देपर विचार करेंगे। वे यह भी चाहते थे कि उन्होंने फैसलोंकी जो नकलें दाखिल की हैं वे भी छापी जायें। अध्यक्षने कहा कि इससे यह रेकार्ड बहुत भारी-भरकम हो जायेगा। ये सब फैसले सरकारी दस्तावेज हैं। उनका छापा जाना उतना जरूरी नहीं है जितना जरूरी समितिके सामने पेश किये गये सरकारी कागजातोंको छापना है। श्री गांधीने कहा कि

उनका खयाल है कि श्री गॉर्लेकी रिपोर्ट छापी जानी चाहिए। अध्यक्षने कहा कि यह तय करना सरकारका काम है। श्री गांधीने कहा कि वे इन कागजातोंका उल्लेख अपनी रिपोर्टमें करनेके खयालसे छपवाना चाहते हैं। अध्यक्षने कहा कि वे छापे न जायें तब भी श्री गांधी उनका उल्लेख कर सकते हैं।

बैठक इसके बाद स्थगित हो गई।

[अंग्रेजीसे]

सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन, सं० १८२, पृष्ठ ३५६–६१।

४०९. पत्र : अखबारोंको[1]

रांची
सितम्बर २५, १९१७

सेवामें
सम्पादक,
'लीडर'

महोदय,

दक्षिण आफ्रिकासे भारतमें आये हुए मुझे ढाई वर्षसे कुछ अधिक समय हो गया। इस समयका एक चतुर्थांश मैंने स्वेच्छापूर्वक भारतीय रेलोंके तीसरे दर्जेमें यात्रा करनेमें विताया है। मैंने उत्तरमें लाहौर तक, दक्षिणमें ट्रेंकेवार तक और कराचीसे कलकत्ते तक यात्रा की है। मेरे तीसरे दर्जेमें यात्रा करनेके अनेक कारणोंमें से एक कारण उस हालतकी जानकारी प्राप्त करना था जिनमें इस दर्जेके यात्री यात्रा करते हैं और इसीलिए मैंने जहांतक हो सका है, उसका बहुत ही सूक्ष्मतासे अवलोकन किया है। इस अवधिमें मैंने अधिकांश रेलोंकी व्यवस्था बड़ी वारीकीसे देखी है। जो-जो त्रुटियाँ मेरे देखनेमें आईं उनके सम्बन्धमें मैंने भिन्न-भिन्न रेलोंके प्रवन्धकर्त्ताओंसे समय-समयपर पत्र-व्यवहार किया है। लेकिन मैं समझता हूँ, अव समाचारपत्रों तथा सर्वसाधारणसे यह कहनेका समय आ गया है कि वे सव मिलकर इस कष्टके विरुद्ध धर्म-युद्धमें प्रवृत्त हों; यह कष्ट यद्यपि विना अधिक कठिनाईके ही दूर हो सकता है तथापि इतना समय बीत जानेपर भी दूर नहीं किया गया है।

इस महीनेकी १२ तारीखको मैंने वम्बईसे मद्रासकी डाकगाड़ीका टिकट लिया और १३ रुपये ९ आने दिये। डिब्बेपर लिखा हुआ था कि यह डिब्बा २२ यात्रियोंके

१. भारतीय रेलोंमें तीसरे दर्जेकी यात्राके सम्बन्धमें। गांधीजीने इसकी प्रति वाणिज्य और उद्योग सचिवको दिल्ली भेजी थी और उसके साथ भेजे गये अपने पत्रमें कुछ सुझाव भी दिये थे। देखिए खण्ड १४, "पत्र: वाणिज्य और उद्योग-सचिवको", ३१–१०–१९१७।

लिए है। उसमें इतने यात्रियोंके लिए केवल बैठनेकी गुंजाइश हो सकती थी। उस डिब्बेमें सोनेकी बेंचें नहीं थीं कि यात्री जरा भी आरामसे लेट सकें। मद्रास पहुँचनेसे पहले इस गाड़ीमें दो रातें वितानी थीं। पूना पहुँचनेसे पहले हमारे डिब्बेमें २२ से अधिक यात्री नहीं सवार हुए; और इसका कारण यह था कि गाड़ीमें जो लोग अपेक्षाकृत अधिक ढीठ थे वे दूसरे यात्रियोंको उसमें घुसनेसे बलपूर्वक रोकते थे। केवल दो-तीन आग्रही यात्रियोंको छोड़कर बाकी सबको बराबर बैठे-बैठे ही सोना पड़ा। रायचूर पहुँचनेके उपरान्त भीड़को रोकना असम्भव हो गया। यात्रियोंके रेले-पर-रेले आ रहे थे और उन्हें बाहर ही बाहर रोक रखना लड़ने-भिड़नेवालोंकी भी शक्तिके बाहर था। यदि गार्ड या रेलवेके दूसरे कर्मचारी आते थे तो वे और अधिक यात्रियोंको गाड़ीमें ठूँसकर चले जाते थे।

एक उद्धत मेमन व्यापारीने यात्रियोंको अचारकी तरह ऐसे ठूँस-ठूँसकर भरनेका विरोध किया। उसने कहा कि रेलमें यह उसकी पाँचवीं रात है; किन्तु इसका कुछ भी परिणाम न हुआ। गार्डने उसे अपमानित किया और कहा कि आखिरी स्टेशनपर रेलवेके प्रबन्धकर्त्ताओंसे उसकी शिकायत की जायेगी। उस रात उस गाड़ीमें अक्सर ३५ यात्री रहे। कुछ लोग फर्शपर धूलमें पड़े रहे और कुछको खड़ा रहना पड़ा। एक बार कुछ वृद्ध यात्रियोंके हस्तक्षेपसे दो पक्षोंमें मारपीट होते-होते रह गई। ये वृद्ध यात्री नहीं चाहते थे कि मिजाजकी गरमा-गरमी दिखाकर कष्टमें और वृद्धि की जाये।

रास्तेमें यात्रियोंको चायकी जगह रंगदार पानी मिला जिसमें मैली चीनी और सफेद रंगका द्रव, जिसे लोग भ्रमसे दूध कहते थे, मिला हुआ था। इससे उस पानीका रंग मटमैला हो जाता था। मैं केवल उसकी रंगतके बारेमें कह सकता हूँ, किन्तु स्वादके बारेमें यात्री साक्षी हैं।

सारे सफरमें डिब्बा एक बार भी झाड़ा या पोंछा नहीं गया। परिणाम-स्वरूप जब कोई फर्शपर चलता था या यों कहिए कि फर्शपर बैठे हुए यात्रियोंके बीचसे निकलता था तब उसे धूलमें होकर निकलना पड़ता था।

डिब्बेका पाखाना सारे सफरमें एक बार भी साफ नहीं किया गया और उसकी टंकीमें पानी नहीं था।

यात्रियोंके लिए [स्टेशनोंपर] खाने-पीनेकी जो चीजें बिक रही थीं वे गन्दी दिखाई देती थीं तथा उनको बेचनेवालोंके हाथ तो और भी अधिक गन्दे थे। जिन बरतनोंमें वे चीजें रखी होती थीं वे भी गन्दे होते थे और जिन तराजुओंसे वे तोली जाती थीं उनके पलड़े भी गन्दे ही होते थे। खाने-पीनेकी उन चीजोंका स्वाद पहले ही लाखों मक्खियाँ चख चुकी थीं। जिन लोगोंने खानेकी ये बढ़िया चीजें खरीदीं थीं उनसे मैंने उनके सम्बन्धमें उनकी सम्मति पूछी। बहुतसे लोगोंने उनकी किस्मके सम्बन्धमें जो कहना चाहिए था कहा; लेकिन सभीने यह कहकर सन्तोष कर लिया कि इस सम्बन्धमें वे निरुपाय हैं और जो-कुछ मिल जाता है वही उन्हें लेना पड़ता है।

स्टेशनपर पहुँचकर मैंने देखा कि गाड़ीवाला जितना किराया माँगता है उतना किराया लिये बिना मुझे नहीं ले जायेगा। मैंने नम्रतासे इसका विरोध किया और

उससे कहा कि मैं उसे निश्चित किराया दूंगा। मुझे सत्याग्रह करना पड़ा तब कहीं वह मुझे ले गया। मैंने उससे यही कहा, मुझे या तो तुम गाड़ीसे खींचकर उतार दो या पुलिसके सिपाहीको बुला लो।

लौटते समय भी यात्रामें ऐसी ही दशा रही। डिब्बा पहले ही भर चुका था और यदि मेरे एक मित्र बीचमें न पड़ते तो मैं बैठनेकी जगह भी न पा सकता। अवश्य ही मैं यात्रियोंकी निश्चित संख्याके अतिरिक्त था। वह डिब्बा ९ आदमियोंके लिए बनाया गया था, परन्तु उसमें हर समय १२ आदमी तो रहते ही थे। एक स्थानपर रेलवेका एक बड़ा कर्मचारी एक विरोधकर्त्तापर बिगड़ गया। उसने उसे पीटनेकी धमकी दी और कुछ यात्रियोंको मुश्किलसे डिब्बेमें ठूंसनेके बाद दरवाजा बन्द करके ताला लगा दिया। इस डिब्बेमें एक पाखाना था, परन्तु हम उसे पाखाना नहीं कह सकते। वह यूरोपीय पाखानेके ढंगका बना था, परन्तु उसका व्यवहार उस रूपमें नहीं किया जा सकता था। उसमें एक नल था, परन्तु उसमें पानी बिलकुल नहीं था और मेरे इस कथनका खण्डन नहीं किया जा सकता कि उसकी गन्दगीसे बीमारी फैल सकती थी।

डिब्बा भी बिलकुल खराब दिखता था। लकड़ीकी चीजोंपर गर्दकी बहुत मोटी तह जमी थी और मेरा खयाल है कि उनको कभी साबुन या पानीसे नहीं धोया गया था।

इस डिब्बेमें कई तरहके यात्री थे। उनमें तीन हृष्ट-पुष्ट पंजाबी मुसलमान, दो सुसंस्कृत तमिल और दो मुसलमान व्यापारी थे जो पीछेसे आकर हम लोगोंमें सम्मिलित हो गये थे। व्यापारियोंने कहा कि जगह पानेके लिए उन्हें रिश्वत देनी पड़ी है। एक पंजाबीको यात्रा करते तीन रातें बीत गई थीं और वह बहुत थका-माँदा था। किन्तु वह लेट नहीं सकता था। उसने बताया कि वह दिन-भर सेंट्रल स्टेशनपर बैठा-बैठा यात्रियोंको टिकट लेनेके लिए रिश्वतें देते देखता रहा। दूसरेने कहा कि उसे टिकट लेने और बैठनेकी जगह पानेके लिए पांच रुपये देने पड़े। वे तीनों आदमी लुधियाने जानेवाले थे और उन्हें अभी कई रात यात्रा करनी थी।

जो-कुछ मैंने कहा है वह कोई अपवाद नहीं बल्कि आम बात है। मैं रायचूर, ढोंढ, सोनपुर, चक्रधरपुर, पुरुलिया, आसनसोल तथा दूसरे जंक्शन स्टेशनों-पर उतरा हूँ और उन स्टेशनोंके मुसाफिरखानोंमें गया हूँ। उन्हें देखकर लज्जा आती है; उनमें कोई व्यवस्था और सफाई नहीं बल्कि बड़ी अव्यवस्था है और भयंकर शोरगुल होता है। यात्रियोंके बैठनेके लिए बेंचें या तो हैं ही नहीं और हैं भी तो काफी नहीं हैं। वे गन्दे फर्शपर बैठते और गन्दा खाना खाते हैं। वे चाहे जहाँ जूठन फेंकते और थूकते हैं; और चाहे-जैसे बैठते हैं और सब जगह तम्बाकू पीते हैं। उन मुसाफिरखानोंके साथ बने पाखानोंका तो वर्णन ही नहीं किया जा सकता। शिष्ट भाषणके नियमोंको बिना तोड़े उनका ठीक-ठीक वर्णन करनेकी शक्ति मुझमें नहीं है। कीटाणु-नाशक पाउडर, राख या कीटाणु-नाशक तरल पदार्थोंको तो कोई जानता भी नहीं। उनके आस-पास मक्खियोंका जो झुण्ड भिनभिनाता है वह आपको सावधान करता है कि यहाँ पाँव मत धरना। लेकिन तीसरे दर्जेका यात्री गूँगा और

लाचार होता है। चाहे उन स्थानोंमें जाना मौतको बुलाना ही क्यों न हो, परन्तु फिर भी वह शिकायत नहीं करना चाहता। मैं ऐसे यात्रियोंको जानता हूँ जो रेलोंमें अपने कष्ट कम करनेके लिए ही उपवास करते हैं। सोनपुरमें यात्रियों तथा अधिकारियोंको सावधान करनेके लिए मक्खियाँ नहीं थीं तो बर्रें थीं। परन्तु उनसे भी कोई फल नहीं हुआ। शाही राजधानीमें तीसरे दर्जेका एक टिकटघर बिलकुल काल-कोठरी है और केवल नष्ट करनेके ही योग्य है।

ऐसी दशामें यदि प्लेग भारतमें एक राष्ट्रीय रोग हो गया है तो यह आश्चर्यकी बात नहीं है। जहाँ यह हालत हो कि यात्री जहाँ पहुँचते हों वहाँ कुछ गंदगी फैलाते हों और जाते हों तो अपने साथ उससे भी अधिक गन्दगी ले जाते हों वहाँ कोई अन्य परिणाम हो ही नहीं सकता।

केवल भारतीय रेलोंमें ही ऐसा है कि यात्री बिलकुल निर्भय होकर सभी डिब्बोंमें तम्बाकू या सिगरेट पीते हैं और स्त्रियोंकी उपस्थितिका एवं उन लोगोंके विरोधका ध्यान नहीं करते जो तम्बाकू नहीं पीते। यद्यपि ऐसा विनियम है कि जो डिब्बा केवल तम्बाकू पीनेवालोंके लिए ही नियत न हो उसमें बिना अपने साथी यात्रियोंकी आज्ञाके तम्बाकू पीना वर्जित है; किन्तु लोग उसकी परवाह नहीं करते।

इस जबरदस्त बुराईको दूर करनेमें इस भीषण युद्धको भी आड़े नहीं आने दिया जा सकता। युद्धके कारण इस गन्दगी और भीड़-भाड़को सहन करना उचित नहीं हो सकता। यह तो समझमें आ सकता है कि ऐसे कठिन समयमें यात्रियोंका आना-जाना ही बन्द कर दिया जाये; परन्तु यह समझमें नहीं आ सकता कि उस गन्दगी और उन स्थितियोंको कायम रखा जाये या उनमें वृद्धि की जाये जिनसे स्वास्थ्य और नीतिको हानि पहुँचती है। अब जरा पहले दर्जेके यात्रियोंकी दशाकी तुलना तीसरे दर्जेके यात्रियोंकी दशासे कीजिए। मद्रासका पहले दर्जेका किराया तीसरे दर्जेके किरायेसे पँचगुनेसे कुछ अधिक होता है। किन्तु पहले दर्जेके यात्रियोंको जितनी सुविधाएँ मिलती हैं, तीसरे दर्जेके यात्रियोंको क्या उसका पाँचवाँ हिस्सा, बल्कि दसवाँ हिस्सा भी मिलती हैं? यह माँग करना निस्सन्देह न्याय्य है कि खर्च और सुविधाओंमें कुछ अनुपात रखा जाना चाहिए।

यह बात सभी लोग जानते हैं कि पहले और दूसरे दर्जेके यात्राकी दिनपर-दिन बढ़नेवाली सुख-सुविधाओंका खर्च तीसरे दर्जेके यात्री ही देते हैं। तीसरे दर्जेके यात्रियोंको कमसे-कम बिलकुल जरूरी सुविधाएँ प्राप्त करनेका अधिकार तो है ही।

तीसरे दर्जेके यात्रियोंकी उपेक्षा करनेका अर्थ लाखों आदमियोंको व्यवस्था, सफाई और सभ्य, संयुक्त जीवनकी उत्तम शिक्षा देने और लोगोंमें सीधी-सादी और परिष्कृत रुचि उत्पन्न करनेका अवसर खोना भी है। इस दिशामें शिक्षा प्राप्त करनेके बजाय तीसरे दर्जेके यात्रियोंको यात्रामें जो अनुभव होता है उससे सुघड़ता और स्वच्छताकी भावना और भी कुंठित हो जाती है।

उक्त दोषको दूर करनेके लिए जो-जो उपाय बतलाये जा सकते हैं उनमें मैं एक यह उपाय नम्रतापूर्वक जोड़ देना चाहता हूँ: बड़े लाट, जंगी लाट, राजे महाराजे, इम्पीरियल कौंसिलके मेम्बर और ऊँचे दर्जेमें यात्रा करनेवाले उच्च वर्गोंके अन्य लोग बिना पहलेसे

सूचना दिये बीच-बीचमें तीसरे दर्जेकी यात्राका अनुभव प्राप्त किया करें। इससे तीसरे दर्जेके यात्रियोंकी दशामें आश्चर्यजनक परिवर्तन हो जायेगा और ऐसे लोगों यात्री जो शिकायतें नहीं करते और मामूली आरामसे एक स्थानसे दूसरे स्थानको जानेकी आशा करते हैं, अपने दिये हुए किरायेके बदले कुछ आराम पाने लगेंगे।

आपका, आदि,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
लीडर, ४-१०-१९१७

४१०. पत्र : जमनालाल बजाजको

रांची
आश्विन शुक्ल ९ [सितम्बर २५, १९१७][1]

सुज्ञ भाईश्री,

आपका पत्र एक मुंबईमें मैं रेलपर जाता रहा उस वखत मीला था। इस बारेमें मैंने आपके पास मेरा भतीजाको जानेका कह दीया था। अब रामनारायणजीका पत्र आ गया है। ये रखने लायक देख पडते है। थोड़ी और हकिकत उनके पास मंगवाया हुं। दो शिक्षक मनेर से मीले है। एकको रख लीया हुं। दूसरेकी बात कर रहा हुं। दो मासके बाद वे आ सकेंगे। रामनारायणजी तीसरे होंगे। इतनेसे गुजारा हो जायेगा।

आपका,
मोहनदास गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल पत्र (जी० ए० २८३५) की फोटो-नकल से।

४११. पत्र : मगनलाल गांधीको

रांची
मंगलवार [सितम्बर २५, १९१७ या उसके बाद][2]

चि० मगनलाल,

मैं अभी बुखारसे मुक्त नहीं हुआ हूँ। सावधानी बरत रहा हूँ। दवा नहीं लेता। मुक्त हो जाऊँगा, ऐसा विश्वास है। चिन्ता करनेका कारण नहीं है।

१. गांधीजी इस तारीखको रांचीमें थे। मूल पत्रमें भाद्रपद शुक्ल ९ दिया है। प्रतीत होता है कि यहाँ कुछ गलती हो गई है; होना आश्विन शुक्ल ९ चाहिए था क्योंकि पहली तिथिको गांधीजी रांचीमें नहीं थे। **पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद** पुस्तकमें भी पत्रकी तारीख २५ सितम्बर दी गई है।

२. पत्रमें आश्रमकी इमारतोंके बारेमें अमृतलाल ठक्करके सुझावोंका उल्लेख है जिससे ज्ञात होता है कि यह पत्र मगनलाल गांधीके नाम लिखे गये २३ सितम्बर १९१७ के पत्रके बादका है।

भाई नरहरिसे कहना कि प्रोफेसर बलवन्तरायने[1] गोखलेजीके भाषणोंकी प्रस्तावना लिखना स्वीकार किया है। मैं जानता हूँ कि तुम्हारी कठिनाइयोंका पार नहीं होगा। [लेकिन] कठिनाइयोंके बिना पुरुषार्थ कहाँ? तुम्हारी तबीयत-भर ठीक रहे तो मैं निश्चिन्त रहूँगा। तुम्हारी सांत्वनाके लिए आज तुम्हें तार[2] भेजा है, पहुँच गया होगा। डाक कैसे पहुँचती है सो लिखना। लोगोंके रहने और रसोई करनेके लिए तुमने क्या व्यवस्था की है।

अमृतलाल भाईका खयाल है कि लकड़ीकी चौखटके बिना वहाँ मकान बनवाना सम्भव नहीं है। आज उनका एक पत्र आया है जिसमें वे कहते हैं कि तुम्हें [मकानोंका] नक्शा वे एक-दो दिनमें भेज देंगे। मैं देखता हूँ कि मुझे अभी यहाँ दो-चार दिन और लगेंगे। बा से कहना कि मेरे विषयमें बिलकुल भी चिन्ता न करे।

बापूके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५७१७) से।

सौजन्य : राधाबेन चौधरी

४१२. चम्पारन-समितिकी बैठककी कार्यवाहीसे

रांची
सितम्बर २६, १९१७

अध्यक्षने कहा कि कल मेरी श्री हिलसे बातचीत हुई थी; परन्तु मैंने उन्हें अपने आग्रहपर दृढ़ पाया। श्री हिलने मुझसे कहा कि उनकी समझमें तो श्री इर्विन मध्यस्थता स्वीकार नहीं करेंगे; शायद नॉर्मन कर लें। श्री हिलने यह भी कहा कि उन्होंने [लगानमें] कमीके बारेमें अपनी ओरसे जो रजामन्दी दी सो ठीक नहीं किया। बेहतर हो कि यह मामला अदालत द्वारा ही निपटाया जाये; [क्योंकि] सवाल सिर्फ रुपये-पैसेका ही नहीं है, बल्कि प्रतिष्ठाका है। [इतना कहकर] अध्यक्षने अपना यह मत प्रकट किया कि ऐसी परिस्थितिमें पंच-फैसलेका विचार कतई छोड़ देना चाहिए। परन्तु प्रश्न यह उठता है कि श्री नॉर्मनके मुकदमेके विषयमें पंच-फैसलेकी कार्रवाई जारी रखना हितकर होगा या नहीं। कठिनाई यह है कि एक ही समयमें दो तरहके समझौते साथ-साथ चलते रहेंगे और उसके लिए दो तरहके विधानोंकी आवश्यकता पड़ेगी। श्री रेनीने कहा कि समितिकी सिफारिशके होते हुए भी वे अपना मामला पंचोंके द्वारा अलगसे तय करा सकते हैं और उस दशामें उनपर किसी प्रकारका

१. प्रो० बलवन्तराय कल्याणराम ठाकोर, गांधीजीके सहपाठी; गुजराती भाषा तथा साहित्यके विद्वान् और लेखक।

२. यह उपलब्ध नहीं है।

बन्धनकारी विधान लागू न होगा। ऐसा करनेसे उन्हें सन्तोष हो सकता है। श्री गांधीने कहा कि श्री नॉर्मनके मामलेके बारेमें, उनकी पेढ़ीकी हदतक समझौतेको कार्यान्वित करनेमें कोई कठिनाई न होगी। इकरारनामा क्रमशः एकके बाद एक प्रत्येक गाँवसे लिखाया जा सकता है। अध्यक्षने कहा कि केवल एक पेढ़ीके लिए कानून बनाना कठिन होगा। श्री ऐंडमीने कहा कि इसकी जरूरत ही न पड़ेगी। विधानकी रूपरेखा इस प्रकारकी रखी जा सकती है कि या तो लगानको निश्चित करनेके सम्बन्धमें दोनों पक्ष न्यायाधिकरणमें अर्जी पेश करें या मध्यस्थताके लिए पंच फैसलेकी माँग करें। अगर पंचों द्वारा मामला तय कराना है तो यह व्यवस्था करनी होगी कि फैसले-पर न्यायाधिकरण द्वारा अमल किया जाये। इस मामलेमें यह जरूरी नहीं है कि विधानमें किसी खास पेढ़ीका नाम लिया जाये। श्री गांधीने कहा कि पक्षोंकी रजामन्दीसे कोई बात साधारणतया शायद ही बनती हो। श्री गांधीने अब [इस मामलेमें] अपने तथा समितिके शेष सदस्योंके बीच मतभेद स्वीकार करते हुए यह पूछा कि उस मतभेदको वास्तविक मतभेद मानकर समितिकी [खास] सिफारिशके रूपमें रखा जा सकता है या नहीं। अध्यक्षने कहा कि जब इसके पूर्व इस मामलेपर विचार किया जा रहा था, तब मेरा खयाल यह था कि बागान-मालिकोंके द्वारा शरहबेशीको छोड़ देनेका कोई सवाल ही नहीं उठता। परन्तु उन्होंने अपनी मरजीसे शरहबेशीका कुछ अंश छोड़ देनेकी स्वीकृति दे दी थी, ताकि सद्भावनाके साथ समझौता किया जा सके। मैं बागान-मालिकोंकी रजामन्दीके बिना सरकारसे और आगे बढ़नेकी सिफारिश करनेको तैयार नहीं हूँ। श्री रीडने यह भी कहा कि अधिकसे-अधिक जो-कुछ हो सकता है, सो सूचित किया जा चुका है, उससे अधिक किये जानेके प्रस्तावसे मैं सहमत नहीं हूँ। अध्यक्षने कहा कि जबतक श्री गांधी इन सीमाओंको माननेको तैयार नहीं हो जाते, तबतक आपसकी सहमतिसे किये गये समझौतेकी सम्भावना नहीं है। श्री रीडने पूछा कि क्या इस प्रकारके समझौतेकी सम्भावना है जिसमें शुरू-शुरूमें तो ४० फी सदीकी और कुछ साल बाद २५ फी सदीकी कमी की जा सके। अध्यक्षने कहा कि मेरे खयालसे बागान-मालिक इसके लिए राजी न होंगे। उन्होंने यह भी कहा कि मुझे मालूम हुआ है कि यद्यपि श्री इर्विन अपना वचन पूरा करेंगे तथापि उससे बच निकलनेका कोई मार्ग मिल जाने-पर उन्हें प्रसन्नता ही होगी। अध्यक्षने श्री गांधीसे पूछा कि रैयतोंके हकमें क्या हितकर होगा, बागान-मालिकों द्वारा निर्धारित सीमाका स्वीकार कर लेना या कानूनकी रूसे निपट लेना। मेरा खयाल तो यह है कि अगर मामलेको कानूनकी मददसे निपटानेको छोड़ दें, तो असफलताकी सम्भावना बहुत अधिक है; इसलिए उस मार्गको न अपनाना ही लाभदायक होगा। श्री गांधीने कहा कि मुझे इसमें खतरा नहीं दीख पड़ता क्योंकि मुझे पूरा भरोसा है कि मैं बातको साबित कर ले जाऊँगा। अध्यक्षने गांधीजीसे पूछा कि आप किस आधारपर ऐसा भरोसा कर रहे हैं। मैं यह सवाल इसलिए कर रहा हूँ कि आपने अपनी बात समितिके चार सदस्योंके समक्ष रखी जरूर है, परन्तु आप

उसके बारेमें उन्हें सन्तुष्ट नहीं कर पाये हैं। दो सरकारी गवाहों, श्री स्वीनी और श्री हेकॉकको भावना निश्चय ही रैयतके प्रति सहानुभूतिशून्य नहीं है; मेरे मनमें यह विश्वास हो गया है कि मामलेको आपने गलत ढंगसे समझा है। उसका कानूनी अर्थ भी — जहाँतक व्यक्त किया जा चुका है — आपकी धारणाके विपरीत बैठता है। श्री गांधीने कहा कि बात ऐसी नहीं है। मैं समझता हूँ कि तुरकौलियावाला फैसला मेरे पक्षमें है, क्योंकि कबूलियतें[1] कुछ ही मामलोंमें पेश की जा सकती हैं, सबमें नहीं। अध्यक्षने कहा कि श्री हिलने मुझे बताया है कि जहाँतक तुरकौलियावालोंका सम्बन्ध है, वे कोई खतरा मोल नहीं ले रहे हैं। क्योंकि अधिकांश मामलोंमें पंजीकृत कबूलियतें मौजूद हैं। श्री हिलने भी मुझे बताया है कि वे बड़ेसे-बड़े वकीलोंकी सलाह ले चुके हैं। और उनकी समझमें इस मुकदमेमें उनकी जीत लगभग निश्चित ही है। श्री गांधीने कहा कि रैयतके दिलोंमें भी बहुत भरोसा है, परन्तु वही मेरे अनुमानका आधार नहीं है। इस मामलेमें मेरी जीत होगी मेरा यह इत्मीनान मामलेकी न्याय-संगतिपर आधारित है। मेरा खयाल है कि दुर्भाग्यसे श्री स्वीनीके विचार सही नहीं हैं और बादमें व्यक्त किये गये उनके विचारोंपर इस बातका असर पड़ा है कि वे अपने पुराने निर्णयको बदलना नहीं चाहते थे। अध्यक्षने कहा कि श्री हिलका खयाल है कि आम चर्चाकी वजहसे उनकी ख्यातिपर आँच आई है। इस कारण वे न्यायाधिकरण [की नियुक्ति] का स्वागत करेंगे; इससे उन्हें अपनी सफाई पेश करनेका अवसर हाथ आ जायेगा। श्री गांधीने कहा कि यदि ऐसी बात है तो न्यायाधिकरणकी नियुक्ति जरूरी ही मानी जानी चाहिए और इस कारण भी कि श्री इर्विनने जो वचन दिया था उसके लिए उन्हें खेद है। इसका कारण यह है कि इस वचनके आधारपर समझौता हो जानेपर भी थोड़ा-बहुत असन्तोष बना ही रहेगा। और मैं इस सूरतको पैदा नहीं होने देना चाहता। अध्यक्षने कहा कि मेरा ऐसा खयाल नहीं है कि श्री इर्विनके वायदेके सम्बन्धमें स्थिति पूरी तौरपर समझी जा चुकी है। बागान-मालिक कटौतीके लिए तैयार जरूर हुए हैं, परन्तु इसलिए नहीं कि उनका यह खयाल हो गया है कि हमारा पूरा दावा ही गलत है, बल्कि समितिकी इच्छाओंका आदर करनेकी गरजसे तथा इसलिए कि वे सबकी सहमतिसे किये गये समझौतेको हासिल करनेके निमित्त कुछ अंशका त्याग करना पसन्द करते हैं। इसलिए यह मान बैठनेका कोई कारण नहीं है कि इन शर्तोंके साथ किये गये समझौतेपर असन्तोष होगा। इसपर श्री गांधीने श्री हिलके दिलकी बात जानने तथा उन्हें अपनी स्थिति साफ करनेका अवसर देनेके अभिप्रायसे उनके पास जाने और उनसे मिलनेका प्रस्ताव [समितिके सामने] रखा। अध्यक्षने कहा, तो मैं यह समझ लूँ कि यदि आप [श्री गांधी] श्री हिलके रुखको दिलसे न्यायपूर्ण ठहराते हैं तो आप उनका प्रस्ताव मान लेंगे। श्री गांधीने कहा कि मेरे कथनका अभिप्राय यह नहीं है; मेरा

१. लगान चुकानेका इकरार।

इरादा तो यह है कि मैं श्री हिलसे मिलकर उन्हें मामलेको पंचोंके सुपुर्द कर देनेके लिए राजी करूँ। अगर मैं ऐसा न कर पाया और यदि मुझे ऐसा लगा कि श्री हिलकी दलीलें काफी मजबूत हैं तो मुझे बागान-मालिकोंके प्रस्तावके बारेमें मेरे द्वारा पहले प्रकट की गई अस्वीकृतिपर फिरसे विचार करना होगा। अध्यक्षने कहा कि श्री हिलने मुझसे कहा है कि वे न तो कमेटी द्वारा प्रस्तावित सरपंचकी नियुक्तिके बारेमें और न फैसलेको २० और ४० फी सदीके अन्दर सीमित करनेके बारेमें अपनी रजामन्दी दे रहे हैं। अलबत्ता वे पटना या कलकत्ता उच्च-न्यायालयसे किसी यूरोपीय न्यायाधीशको जिसे भूधारण कानून-(टैनेंसी एक्ट) का पूरा ज्ञान हो, या किसी व्यापारी वर्गके व्यक्तिको पंच बनानेको तैयार हैं, श्री गांधीने कहा कि इस बातसे कि आखिरकार पंचों द्वारा निर्णय किये जानेकी सम्भावना हो गई है; मेरे मनमें आशा बँध रही है। उन्होंने यह कहते हुए कि यदि पंचोंमें एक व्यक्ति मामलेकी पूरी जानकारी रखनेवाला[1] हुआ तो समितिको सुविधा रहेगी, श्री हिलसे पूछा कि क्या आप चम्पारनसे एक पंचका लिया जाना स्वीकार न करेंगे। मैंने कुछ दिन पूर्व यह सुझाव पेश किया था कि एक न्यायाधिकरण जिसके सदस्य श्री एपरले[1], पं० मदनमोहन मालवीय और अध्यक्ष श्री हेकॉक हों, नियुक्त किया जाये। और यदि दूसरे पक्षवाले राजी हों तो श्री हेकॉकको अध्यक्षके रूपमें स्वीकार करनेमें मुझे कोई आपत्ति नहीं है। श्री रीडने कहा कि मेरा तो जरूर यह खयाल है कि बागान-मालिक श्री हेकॉकको स्वीकार कर लेंगे, परन्तु अध्यक्षको इसके बारेमें सन्देह है। श्री गांधीने कहा कि यदि वे श्री हेकॉकको अध्यक्षके रूपमें स्वीकार करनेको तैयार हैं तो यह समझा जायेगा कि चुनाव उक्त दोनों अंकों [२० से ४०] के बीच ही होना चाहिए। श्री रीडने कहा कि मेरा ऐसा खयाल नहीं है कि श्री हिल इस आधारपर बात स्वीकार कर लेंगे। अध्यक्षने कहा कि श्री हिलका खयाल यह है कि वे, गलत हो या सही, अपनी शरहबेशी स्वेच्छासे २० प्रतिशत कम करानेको तैयार हैं, परन्तु पंचोंके निर्णयके द्वारा अधिक दिये जानेकी मजबूरीका जोखिम उठानेको तैयार नहीं हैं। यदि यह कहना उनकी ही मरजीपर छोड़ दिया जाये कि आया वे बिना किसी द्वेषके अधिक देनेको तैयार हैं या नहीं, तो शायद वे कहेंगे कि हाँ, तैयार हूँ, मैं अधिक देना स्वीकार करता हूँ। श्री हिलने कहा कि जिस बातको मैं अपने आचरणकी तीव्र निन्दाके रूपमें ले रहा हूँ उसे मैं कदापि स्वीकार नहीं कर सकता। अलबत्ता, यदि कानूनके अन्तर्गत नियुक्त न्यायाधिकरणके द्वारा दिये गये निर्णयमें मेरे आचरणकी तीव्र निन्दा आती है, तो स्वीकार कर लूँगा। यह विषय व्यवसायसे नहीं, अन्तरात्मासे सम्बन्धित है। यह निश्चय किया गया कि श्री रीड और अध्यक्ष महोदय श्री हिलसे तुरन्त मुलाकात करें और श्री रीड तथा श्री गांधी उनसे तीसरे पहर मिल लें। अध्यक्षने कहा कि मेरा खयाल तो यह है कि यदि यह मुलाकात कामयाब हो गई तो दूसरी नील-पेढ़ियोंके प्रबन्धक श्री नॉर्मन, श्री ईर्विन, श्री जेम्सन

१. देखिए "चम्पारन-समितिकी बैठककी कार्यवाहीसे", १४-८-१९१७।

और श्री वायनको[1] बुला भेजा जाये। मेरा खयाल है कि अगर दो कारखानेदारोंको सहमत किया जा सके तो पंच-फैसलेका मार्ग ठीक रहेगा। परन्तु, यदि केवल एक ही सहमत हो तो बेकार है। उन्होंने यह कहते हुए कि मान लिया जाये कि तुरकौलिया और पिपरा किसी समझौतेपर राजी हो गये हैं, पूछा कि क्या उस सूरतमें कमेटी इस बातकी सिफारिश करनेको तैयार है कि शेष तीन कारखानोंपर उसी प्रकारका समझौता कानूनन लाद दिया जाये — भले ही उनके मालिक राजी न हों? कमेटीने रजामन्दी प्रकट करते हुए कहा कि ऐसा किया जायेगा।

श्री रोडने यह प्रश्न उठाया कि तिन-कठियाका उन्मूलन अनिवार्य कर दिया जाना चाहिए या नहीं। श्री गांधीने कहा कि मेरी रायमें यद्यपि विधानसभा इसे स्वीकार न करेगी तथापि बहुत अधिक सम्भावना इस बातकी है कि रैयत स्वेच्छासे तिन-कठिया उठाये जानेकी अर्जी पेश करेगी। श्री रोडने कहा कि मुझे सन्देह है कि सारी रैयत ऐसा करेगी; उन्होंने यह भी कहा कि अगर केवल एक या दो रैयतोंपर तिन-कठिया प्रथा लागू रहेगी, तो बड़ी असुविधा होगी। अध्यक्षने कहा कि मुझे मालूम हुआ है कि गवर्नर महोदय इस प्रथाको बन्द कर दिये जानेके पक्षमें हैं। श्री गांधीने कहा कि इसमें कानूनी अड़चनें सामने आयेंगी, पर मैं यह माननेको तैयार हूँ कि इस प्रथाको कमेटीकी सिफारिशके परिणामस्वरूप बन्द कर दिया जाना चाहिए। अध्यक्षने कहा कि रैयतको इकरारनामा भरनेकी अनुमतिका न दिया जाना — और ऐसा उचित भी है — एक बात है और रैयतकी इच्छा रहते हुए भी उन्हें इकरारनामेसे पृथक् रखा जाना दूसरी बात। रैयतका हक पूर्ण रूपसे सुरक्षित है, क्योंकि न्यायाधिकरण उचित लगानसे अधिक लगान निश्चित करनेमें असमर्थ है। अध्यक्षने आगे चलकर कहा कि तुरकौलियामें रैयतका पांच फीसदी भाग अब भी तिन-कठिया प्रथाको बनाये हुए है। श्री हिल अपनी बातको सिद्ध करनेके लिए जिन-जिन तथ्योंपर भरोसा किये बैठे हैं उनमें से एक यह भी है। श्री गांधीने कहा कि जब खुश्की नील बड़े पैमानेपर उगाई जा रही है — आशा भी ऐसी ही थी — तब रैयतको तिन-कठिया करारमें बँधे होनेके कारण, यह शीघ्र मालूम हो जायेगा कि परिवर्तन करा लेना उनके हितमें होगा। श्री रेनीने कहा कि यदि किसी सूरतसे पुरानी प्रथा चालू रह गई तो नई खुश्की-प्रथाके कार्यान्वित किये जानेमें बाधा पड़ सकती है। श्री गांधीने कहा कि मैं इस सिफारिशको समूचे समझौतेके एक अंशके रूपमें तो माननेको तैयार हूँ, परन्तु यदि न्यायाधिकरणकी नियुक्ति की गई तो नहीं; उस सूरतमें विधान द्वारा तिन-कठिया समाप्त कर दी जायेगी और जमींदारके हाथमें, अगर उसकी इच्छा हुई, इस आशयकी अर्जी देनेका विकल्प रह जायेगा कि मुआवजेके रूपमें अतिरिक्त लगान निर्धारित कर दिया जाये।

इसके बाद समितिकी बैठक स्थगित हो गई।

[अंग्रेजीसे]

सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन, सं० १८३, पृष्ठ ३६१-५।

१. सिरनी कारखानेके मालिक।

४१३. प्राक्कथन

"व्हाट इंडिया वॉंट्स: आटॉनॉमी विदिन द एम्पायर"

सितम्बर २७, १९१७[1]

मुझे श्री नटेसनकी[2] पुस्तिका पढ़कर बहुत हर्ष हुआ। यह पुस्तिका व्यस्त राजनीतिज्ञों और कार्यकर्त्ताओंके लिए दैनिक उपयोगके खयालसे बढ़िया हाथ-पोथी है। श्री नटेसनने उनके लिए स्वराज्य आन्दोलनका सिलसिलेवार विवरण बड़े ही रोचक ढंगसे और ग्राह्य रूपमें प्रस्तुत किया है। उन्होंने सरकारी कागजोंके जो अंश कालानुक्रमसे इस पुस्तकमें उद्धृत किये हैं, वे स्वयं अपनी कहानी कह रहे हैं। मेरा खयाल है कि आजकलकी राजनीतिके उन विद्यार्थियों तथा समालोचकोंको जिन्हें सरकारी पोथोंको पढ़नेकी परवाह नहीं रहा करती अथवा जिनकी उनतक पहुँच नहीं हो पाती, इस पुस्तिकासे बड़ी मदद मिलेगी।

स्वशासन[3] सम्बन्धी संयुक्त योजनाके बारेमें मेरा विचार यह है — यद्यपि मैं उनमें इतनी दिलचस्पी नहीं लेता जितनी हमारे नेतागण लेते हैं किन्तु सरकारकी दृष्टिसे वह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है और उसका ध्यान इसकी ओर आकर्षित हुए बिना नहीं रह सकता। क्योंकि जनसाधारणके मनको जितना इसने उद्वेलित कर रखा है उतना और किसी वस्तुने नहीं। मैं यह कहनेका साहस कर रहा हूँ कि जबतक यह योजना सरकार द्वारा मंजूर नहीं की जायेगी तबतक देशमें शांति रह ही नहीं सकती।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन रिव्यू, अक्तूबर १९१७

१. देखिए, अगला शीर्षक।

२. जी० ए० नटेसन, सम्पादक, **इंडियन रिव्यू**।

३. जिसे महायुद्धके बाद मुस्लिम लीगकी सुधार समितिके साथ सलाह-मशविरा करनेके पश्चात् अखिल भारतीय कांग्रेस समितिने तैयार किया था। यह योजना दिसम्बर १९१६ में उक्त संस्थाओंके लखनऊ अधिवेशनमें सर्वसम्मतिसे पास की गई थी।

४१४. पत्र: जी० ए० नटेसनको

रांची

सितम्बर २७, [१९१७]

प्रिय श्री नटेसन,

मुझे आपकी पुस्तिका[1] पढ़कर बहुत हर्ष हुआ है। यह पुस्तिका व्यस्त राजनीतिज्ञों और कार्यकर्ताओंके लिए दैनिक उपयोगके खयालसे बढ़िया हाथ-पोथी है। आपने उनके लिए स्वराज्य आन्दोलनका सिलसिलेवार विवरण बड़े ही रोचक ढंगसे और ग्राह्य रूपमें प्रस्तुत किया है। सरकारी कागजोंके जो अंश आपने कालानुक्रमसे इस पुस्तिकामें उद्धृत किये हैं उन्हें आपने अपनी कहानी खुद ही कहने दी है। मेरा खयाल है कि आज-कलकी राजनीतिके उन विद्यार्थियों और समालोचकोंको जिन्हें सरकारी पोथोंको पढ़नेकी या तो परवाह नहीं रहा करती या जिनकी उनतक पहुँच नहीं हो पाती, इस पुस्तिकासे बड़ी मदद मिलेगी।

इतना तो सार्वजनिक प्रकाशनकी दृष्टिसे। आपने "एन अपील टु द ब्रिटिश डिमॉक्रेसी" नामक पुस्तक प्रकाशित करनेका जो इरादा किया है वह बुद्धिमत्तापूर्ण है। आपको यह जानकर दुःख होगा कि जबसे मैं रांची आया हूँ तबसे मुझे तिजारी आ रही है। हर तीसरे दिन बुखार आता है। कल चौथा दिन था। बुखार केवल तीसरे पहर ही चढ़ता है इसलिए जो काम हाथमें ले रखा है, उसमें कोई खलल पैदा नहीं हो रहा है। परन्तु कमजोरी बहुत आ गई है। जो आशंका मैंने समाचारपत्रोंके नाम अपनी रेलोंके सम्बन्धमें लिखी चिट्ठीमें[2] व्यक्त की है वह मेरे ही बारेमें सही सिद्ध हो गई। जब मैंने उक्त पत्र तैयार किया था, तब मुझे इसका कोई अन्दाज नहीं था।

मैं आपके भाषणोंके लेखोंके[3] विषयमें यह चाहता हूँ कि आप वक्तकी कोई मियाद मुकर्रर न करें। उस सूरतमें मैं गुजरातीमें हाल-ही में लिखे हुए अपने कुछ लेखोंका अनुवाद दे सकूँगा। मेरे खयालसे उनमें बहुत-कुछ उपयोगी बातें हैं। इस कामको करनेके लिए नवम्बरसे पहले अवकाश मिलना कठिन है। सम्भवतः उसके बाद मैं लिखना शुरू करूँगा।

मेरे ज्वरके कारण आप चिन्तित न हों। वह अपने समयसे ही जायेगा।

हृदयसे आपका,

मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (जी० एन० २२२६) की फोटो-नकलसे।

४१५. चम्पारन-समितिकी बैठककी कार्यवाहीसे

रांची
सितम्बर २८, १९१७

रिपोर्टके ४ थे अध्यायपर चर्चा शुरू हुई। . . . श्री गांधीने कहा कि उन्हें अध्यायके अनुच्छेदोंका सिलसिला पसन्द नहीं आया। उनका कहना था कि पहले दो अनुच्छेद छोड़ दिये जायें और उनकी जगह केवल इतना ही कह दिया जाये कि समितिकी जांचके अनुसार कौन-कौनसे अबवाब वसूल हुए पाये गये हैं, इस रिवाजकी निन्दा की जाये और इस सम्बन्धमें समितिकी सिफारिशें दे दी जायें।

श्री इर्विन और नॉर्मनसे मिलनेके लिए क्या किया जाये, इसकी चर्चा हुई। ऐसा तय हुआ कि श्री रीड उनसे शनिवारके दिन मिलें और इसके बाद यदि जरूरी हो तो श्री गांधी उनसे रविवारके दिन मिलें। अगली बैठकके लिए सोमवारको प्रातःकालका समय निश्चित हुआ।

इस समझौतेमें [गोरे] जमींदारोंकी सद्भावना प्राप्त करनेकी सम्भावनाकी चर्चा करते हुए अध्यक्षने श्री गांधीसे पूछा कि चम्पारनके सम्बन्धमें उनका भावी कार्यक्रम क्या है। श्री गांधीने समितिको अपनी बात बताई। बातचीतके सिलसिलेमें श्री रीडने यह सवाल उठाया कि अगले वर्ष नीलकी फसलका क्या होगा। श्री गांधीने कहा कि अगर उसके लिए किसानोंको उचित कीमत दी गई तो वे किसानोंको नीलकी खेती करनेकी सलाह देंगे। श्री रीडने कहा कि कीमतका यह सवाल पहली बार उठाया जा रहा है; समितिका पहला निर्णय था और श्री गांधी उससे सहमत थे कि सन् १९१७–१८ में नीलकी खेती पुराने आधारपर ही की जाये ताकि जमींदारोंको अपनी पद्धति बदलनेके लिए पर्याप्त समय मिल सके।

श्री गांधीने कहा कि मेरा अभिप्राय यह था कि मैं किसानोंको नीलकी खेती करते रहनेकी सलाह तो दूंगा किन्तु उन पुरानी शर्तोंपर नहीं; क्योंकि वे किसानोंके लिए हानिकर हैं। किसान नीलकी खेती करते रहें इसके लिए वे अपने प्रभावका उपयोग करनेके लिए तैयार हैं; किन्तु उन्हें वाजवी दाम मिलना चाहिए। अध्यक्षने पूछा कि क्या यह सम्भव है कि संघ द्वारा निर्धारित दरसे जमींदार कुछ प्रतिशत अधिक देनेके लिए राजी हो जायें और इस प्रकार यह वर्ष निकाल दिया जाये। श्री गांधीने कहा कि इस प्रस्तावके आधारपर समझौता किया जा सकता है। श्री रीडने कहा कि जबतक मैं जमींदारोंसे सलाह-मशविरा नहीं कर लेता तबतक मैं यह प्रस्ताव मंजूर नहीं कर सकता।

समितिकी बैठक इसके बाद स्थगित हो गई।

[अंग्रेजी]

सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन, सं० १८५, पृष्ठ ३६६-७।

४१६. पत्र: वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको

रांची

सितम्बर ३०, [१९१७]

प्रिय श्री शास्त्रियर,

देखिए, जोरावर लोग भी धराशायी होने लगे। मैंने समझ रखा था कि मैं कभी वीमार न पड़ूँगा। परन्तु मैं शीत ज्वरसे पीड़ित हूँ; वुखार हर तीसरे दिन तीसरे पहर आ जाता है, अलवत्ता इसके कारण मेरे रोजमर्राके काममें वाधा नहीं पहुँच रही है। चार-पाँच रोज पहले रेल यात्रियोंके वारेमें अपने उस पत्रमें[1] (जाने वह आपकी नजरसे गुजरा है या नहीं) जव मैं यह लिख रहा था कि उन हालतोंमें, यात्रियोंके वीमार पड़नेका डर है तव मुझे यह पता न था कि मैं स्वयं उसका शिकार होने जा रहा हूँ और सो भी पत्र भेजनेके एकदम वाद ही। आप चिन्ता न करें; मैं अपना इलाज स्वयं कर रहा हूँ। सम्भव है आपसे इलाहावादमें मुलाकात हो। मैं "सम्भावनाकी वात" इस खयालसे लिख रहा हूँ कि हो सकता है [तवतक] यहाँ मेरा जाँच समिति-सम्वन्धी काम पूरा न हो पाये। वहुत लम्वी वातचीतके पश्चात् अव कहीं हम लोग सव मुद्दोंपर एकमत हो पाये हैं और रिपोर्ट सर्वसम्मत होगी।

हाँ, यह ठीक है कि गुजरात सभाने कार्यकर्त्ताओंका चुनाव कर लिया है। इस सभाकी आकांक्षा एक लाख हस्ताक्षर प्राप्त कर लेनेकी है। वम्वईमें होम रूल लीग इस कामको हाथमें लिय हुए है। श्रीमती वेसेंटका जो पत्र मुझे अभी-अभी मिला है, उससे मालूम हुआ है कि उनके कार्यकर्त्ता यही काम मद्रासमें कर रहे हैं। स्वयंसेवकोंके लिए पूरी-पूरी हिदायतें[2] तैयार कर ली गई हैं और ग्रामीणों तथा उन अन्य लोगोंको जिनसे हस्ताक्षर करनेको कहा जायेगा, कार्यक्रम समझानेकी दृष्टिसे उसका पूरा-पूरा अनुवाद कर लिया गया है। इस आयोजनके पीछे मन्शा यह है कि समस्त देश इस प्रार्थनापत्रको अपना प्रार्थनापत्र मान ले और इसलिए इसका अनुवाद भिन्न-भिन्न भाषाओंमें किया जाना चाहिए। मूल मसविदा गुजरातीमें था। आपने उसका जो अंग्रेजी रूपान्तर पढ़ा है वह उसी मूलका अनुवाद है। जहाँतक मेरा सम्वन्ध है, मेरी निगाहमें उसका मूल्य केवल इतना है कि एक तो जनताको प्रशिक्षण मिलेगा और दूसरे, पढ़े-लिखे पुरुषों और शिक्षित स्त्रियोंको जनताके घनिष्ठ सम्पर्कमें आनेका अवसर प्राप्त होगा।

पूरी उम्मीद है कि आप स्वस्थ होंगे।

हृदयसे आपका,

मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी प्रति (जी० एन० ६२९४) की फोटो-नकलसे।

१. देखिए "पत्र: अखबारोंको", २५-९-१९१७।

२. देखिए "स्वयंसेवकोंको निर्देश", १३-९-१९१७ से पूर्व।

४१७. पत्र : भगवानजी वकीलको

रांची
आश्विन वदी ३, [अक्तूबर ३, १९१७][1]

भाई श्री,

तुम्हारी ओरसे भेजे गये कागजात मुझे मिले हैं। उन्हें पढ़कर जो बन सकेगा वह करूँगा। मैं अभी तुरन्त काठियावाड़ आ सकूँगा, यह बात सम्भव नहीं जान पड़ती। [मुझे] चम्पारनसे छुट्टी ही नहीं मिलती।

मोहनदास गांधीके वन्देमातरम्

भाईश्री भगवानजी अनूपचन्द
शहर राजकोट
काठियावाड़

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें पोस्टकार्डपर लिखित मूल गुजराती पत्र (जी० एन० ५८०६) की फोटो-नकलसे।

४१८. पत्र : सर एडवर्ड गेटको

रांची
अक्तूबर ४, १९१७

प्रिय सर एडवर्ड गेट,

आपके इसी माहकी १ली तारीखके पत्रके लिए मेरे धन्यवाद स्वीकार कीजिए। रिपोर्टपर आज सब सदस्योंके दस्तखत हो गये[2]; उसे सबने स्वीकार किया है। मेरी विनम्र सूचना है कि यह रिपोर्ट और [उससे सम्बन्धित] सरकारी प्रस्ताव शीघ्रातिशीघ्र प्रकाशित कर दिये जायें।[3] आपको यह जानकर प्रसन्नता होगी कि कुछ [गोरे] जमींदार इस बातके लिए व्यग्र हैं कि मैं शीघ्र ही चम्पारन पहुँचूं और किसानोंको शान्त करनेका काम हाथमें लूं। क्या मैं उन्हें, जाँच-समितिने अपनी रिपोर्टमें जो कुछ कहा है सो बतला सकता हूँ?

१. चम्पारनके उल्लेखसे प्रतीत होता है कि यह पत्र १९१७ में लिखा गया था।

२. रिपोर्टपर ३ अक्तूबर, १९१७ की तारीख है; देखिए परिशिष्ट ११।

३. सपरिषद् गवर्नरकी आज्ञा (ऑर्डर-इन-कौंसिल) ६ अक्तूबर, १९१७ को जारी हुई थी, देखिए परिशिष्ट १२ और चम्पारन काश्तकारी विधेयक (चम्पारन एग्रेरियन बिल), परिशिष्ट १३।

अपने प्रति आपके अतिशय सौजन्यसे प्रेरित होकर मैं आपसे एक अनुरोध और करना चाहता हूँ। क्या मैं यह आशा करूँ कि प्रस्ताव अवसरके महत्त्वके अनुरूप होगा और उसकी भाषा बिलकुल स्पष्ट होगी? किसानोंके नाम देशी भाषामें जो सन्देश प्रकाशित किया जाये वह उनके हृदयोंको छूनेवाला होना चाहिए और उसमें सारी बात पूरी तरह समझाकर कही जानी चाहिए। अगर इसमें अविनय न मानी जाये तो मैं कहना चाहूँगा कि यदि सरकार इस सम्बन्धमें मेरी सेवाओंको उपयोगी समझे तो मैं उन्हें प्रदान करनेके लिए सहर्ष प्रस्तुत हूँ।

मैं मोतीहारी तारीख ८ को पहुँच जाऊँगा और वहां इस माहकी १२ तारीख तक रहूँगा। तारीख १५ को मुझे भागलपुरमें एक काम निपटाना है और उसके बाद ७ नवम्बर तक मुझे [अपने कार्यक्रमसे] छुट्टी नहीं मिलेगी; ७ नवम्बरको मैं वापस मोतीहारी जा पहुँचनेकी उम्मीद करता हूँ। मैं आज रांचीसे रवाना हो रहा हूँ।

आपका विश्वस्त,

मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (नेशनल आर्काइव्ज़ ऑफ इंडिया) से; सिलेक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन, सं० १८९, पृष्ठ २९१–२ से ली।

४१९. पत्रका अंश[1]

[अक्तूबर ४, १९१७][2]

इस समय . . .।

कल समितिकी रिपोर्टपर सदस्योंकी सही हो गई। उसे सबने स्वीकार किया है। मैं फिर दौरेपर निकल रहा हूँ।[3]

सबको मेरा स्नेह कहें।

आपका,

मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (सी० डब्ल्यू० ५७२७) से।

सौजन्य: एच० एस० पोलक

१. इस पत्रका केवल अन्तिम पृष्ठ उपलब्ध है।

२. पत्रमें चम्पारन काश्तकारी जाँच समितिकी रिपोर्टका उल्लेख हुआ है; इस रिपोर्टपर सदस्योंकी सही ३ अक्तूबर, १९१७को हुई थी।

३. देखिए पिछला शीर्षक।

४२०. पत्र : एस्थर फैरिंगको

रांची,
अक्तूबर ४, १९१७

प्रिय एस्थर,

मैं तुम्हें जितनी जल्दी-जल्दी लिखना चाहता था उतनी जल्दी-जल्दी नहीं लिख सका हूँ। मैं अभी-अभी अपने जीवनके एक अत्यन्त समृद्ध अनुभवसे गुजरा हूँ और उसमें मैं तुम्हें शरीक करना चाहता हूँ। अपनी आशाके विपरीत कामके भारी बोझके फलस्वरूप मैं मलेरियासे बीमार पड़ गया — सो भी ठीक ऐसे वक्तपर जब कि बीमार पड़ना मुझे पुसा नहीं सकता था। उस समय मुझे रोज कमेटीके कामके लिए हाजिर होना पड़ता था। इलाजके लिए जो दवा लेनेकी सलाह दी गई, वह थी कुनैन। मैं उसे लेना नहीं चाहता था, लेता नहीं था। मेरी श्रद्धाने मेरी रक्षा की। एक भी बैठक में चूका नहीं और कल हम सबने रिपोर्ट[1] स्वीकार करते हुए उसपर अपनी सही कर दी। मेरा खयाल है कि बीमारी भी अब अन्तिम रूपसे चली गई है। इस अनुभवके बारेमें और विस्तारसे लिखनेके लिए मेरे पास समय नहीं है। लेकिन आगे जब हमें मिलनेका अवसर आये तो तुम मुझसे उसका वर्णन विस्तारसे करनेके लिए कहना। रेल-गाड़ियोंकी हालतपर समाचार-पत्रोंको भेजा गया मेरा पत्र तो तुमने पढ़ ही लिया होगा।[2] अगर वह तुम्हारी नजरसे न गुजरा हो तो तुम आश्रमको उसकी एक नकल तुम्हारे पास भेजनेके लिए लिखना।

तुम मद्रास नहीं आई, यह तुमने बिलकुल ठीक किया। हमारे स्नेहमें धैर्य और विनय-पूर्ण संकोच होना चाहिए। अपने प्रेममें प्रदर्शनशील तो वे ही हो सकते हैं जिनके पास पैसा है और जिन्हें अवकाशका अभाव नहीं है। जैसा कि स्वाभाविक है, प्रेम प्रकट करनेका हमारा तरीका उनसे भिन्न और बेहतर है। सच्चा प्रेम अपनेको बाहर तो तभी प्रकट करता है जब उसकी अनिवार्य आवश्यकता हो; वह इस बीच मूक रहकर दिन-प्रतिदिन और निरन्तर वृद्धिगत होता रहता है। मोतीहारीमें ७ से १३ तक हूँ। उसके बाद अहमदाबाद।

तुम्हारा,
बापू

[अंग्रेजीसे]
माई डियर चाइल्ड

१. देखिए परिशिष्ट ११।
२. देखिए "पत्र: अखबारोंको", २५-९-१९१७।

परिशिष्ट

परिशिष्ट १

बनारसकी घटनाके बारेमें श्रीमती बेसेंटका स्पष्टीकरण

१

मद्रास,
फरवरी १०, १९१६

श्री गांधीने एक वक्तव्य[1] दिया है। उसे तार द्वारा पाकर हमने अपने पत्रमें छापा है। इस सम्बन्धमें मुझे यह कह देना उचित लगता है कि मेरे हस्तक्षेपका कारण मेरे पीछे खड़े अंग्रेजका, जो मेरे खयालसे खुफिया पुलिसका अधिकारी था, कथन था। मैंने उसे यह कहते सुना "ये जो-कुछ कह रहे हैं, वह सब नोट किया जा रहा है; और कमिश्नरके पास भेजा जायेगा।" जो-कुछ कहा गया था उनमें से कई वाक्योंका अर्थ ऐसा निकाला जा सकता था जो, मैं जानती हूँ, निश्चय ही श्री गांधी को अभिप्रेत नहीं हो सकता था; इसलिए मैंने अध्यक्षसे यह कहना अधिक अच्छा समझा कि इस सभामें राजनीतिकी चर्चा अनुपयुक्त है। मैंने यह नहीं कहा था कि राजा लोग चले जायें। मुझे यह भी ज्ञात नहीं कि यह बात किसने कही थी। मैं बहुत अच्छी तरह जानती हूँ कि श्री गांधी किसीको मारनेके बजाय स्वयं मरना पसन्द करेंगे। किन्तु मेरा खयाल यह है कि उनके कथनका गलत अर्थ निकाला जा सकता था और बनारसकी जैसी स्थिति थी उसमें मुझे उनकी व्यक्तिगत सुरक्षा खतरेमें मालूम होती थी। सार्वजनिक शान्ति किसी भी प्रकार भंग न हो, यह चिन्ता तो उनके इस विचारसे बहुत ही स्पष्ट हो जाती है कि हमें कांग्रेसका अधिवेशन बुलाकर भी सरकारको परेशानीमें न डालना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
न्यू इंडिया, १०–२–१९१६
बंगाली, १२–२–१९१६

१. देखिए "भेंट: बनारसकी घटनाके सम्बन्धमें ए० पी० आई० को", ९–२–१९१६।

२

फरवरी १७, १९१७

उक्त वक्तव्य[1] हमें "मद्रास मेल" से मिला है। श्री गांधीने टेलीफोनसे पूछा था कि क्या मैं उनका वक्तव्य छाप सकूँगी। मैंने 'हां' कहा। मेरा खयाल है कि "मद्रास मेल" द्वारा भेजा गया यह वक्तव्य ही वह वक्तव्य है।

मैं खेदपूर्वक वक्तव्यके पहले अनुच्छेदका खण्डन करती हूँ। खण्डन करना आवश्यक है। मेरी समझमें नहीं आता कि यदि मैं श्री गांधीके "ठीक पीछे बैठी थी" तो श्री गांधीने मुझे "महाराजा दरभंगासे दूर बैठे हुए राजाओंसे कानाफूसी करते हुए" कैसे देखा! मेरी समझमें यह भी नहीं आता कि राजाओंने मेरी कानाफूसी कैसे सुनी। एक राजा साहब मेरी बगलमें जरूर बैठे थे मगर वे तो सब लोगोंके उठ जाने पर ही उठे थे। मैं राजाओंके साथ नहीं गई, बल्कि अपने गिर्द बैठे हुए मित्रोंके साथ बैठी रही। और श्री गांधी तो यह कहते हैं कि मैं उनसे विचार-विमर्श कर रही थी; साथ ही वे यह भी कहते हैं कि मैं उठकर राजाओंके साथ चली गई थी। मैं सभा भंग होनेके बाद कुछ मिनट तक वहाँसे नहीं गई और उसके बाद भी उस रास्तेसे नहीं गई जिससे राजा लोग गये थे। बल्कि उस रास्तेसे गई जो मंचसे मेरे घरकी ओर जाता था।

मेरे पास श्री गांधीके भाषणकी रिपोर्ट नहीं है। किन्तु श्री गांधी चाहते हैं कि मैं उन वाक्योंका उल्लेख करूँ जिनके कारण मैंने हस्तक्षेपकी आवश्यकता समझी। मेरा उत्तर यह है: मैंने समझा कि इस प्रकारकी अराजनैतिक सभामें, जिसमें राजा लोग और अन्य कई ऐसे लोग उपस्थित हैं जिन्हें सरकारकी अप्रसन्नतासे हानि पहुँच सकती है, श्री गांधीको अंग्रेजोंके भारतसे बोरिया-बसना बाँधकर जानेकी सम्भावनाका उल्लेख नहीं करना था; यह बात उन्होंने दो बार कही। उन्हें यह भी नहीं कहना था कि यदि वे स्वयं भारतीयोंको स्वशासनके योग्य समझें तो वे अपने हजारों देशवासियोंके साथ अंग्रेजोंकी तोपोंके मुँहके सामने जाने और वीरतापूर्वक अपने प्राण देनेके लिए भी तैयार हैं; किन्तु वे अभी भारतीयोंको इस योग्य नहीं समझते। उनका स्पष्ट रूपसे यह कहना भी अबुद्धिमत्तापूर्ण था कि "मैं अराजकतावादी हूँ।" और उन्होंने अपने ऐसा कहनेका आशय नहीं समझाया। उन्हें यह नहीं कहना था कि बमबाजीके कारण बंग-भंग रद हो गया। उन्हें बम फेंकनेवाले युवकोंकी प्रशंसा भी नहीं करनी थी। मैं बहुत अच्छी तरह जानती हूँ कि खुफिया रिपोर्टोंमें ये वक्तव्य किस प्रकार दिये जायेंगे। मैं ऐसी रिपोर्टोंसे हानि उठा चुकी हूँ और इसीलिए मैंने अध्यक्षसे उक्त अनुरोध किया था। यदि सभाके संयोजक स्वयं श्री गांधी होते तो वे क्या कहते हैं, यह सोचना उन्हींका काम था, किसी दूसरेको इससे कोई सरोकार न होता। परन्तु स्थिति यह थी कि आमन्त्रित सज्जनोंको बुलानेकी जिम्मेवारी विश्वविद्यालय-समितिकी थी और उस समितिमें मैं भी शामिल हूँ। मेरे चारों ओर लोग शिकायतके स्वरमें बोल रहे थे शायद

१. देखिए "श्रीमती बेसेंटको उत्तर", १७-२-१९१६ से पूर्व; प्रतीत होता है कि यह भी **मद्रास मेल**में प्रकाशित किया गया था।

मुझे इसके बावजूद श्री गांधीको मनमानी करने देना था। यदि मैं चुप रहती तो हस्तक्षेप सम्भवतः अधिक सख्त होता; मैं इसीको टालना चाहती थी और मेरा हस्तक्षेप इस तरह ममतासे उद्भूत था। मुझे इस बातकी प्रसन्नता है कि श्री गांधी जो कहना चाहते थे वह उन्होंने स्वयं स्पष्ट कर दिया है। किन्तु उन्होंने मेरे सम्बन्धमें जो गलत-बयानी की है, उसका मुझे दुःख है।

यहाँ श्री एस० एस० सेटलुरका पत्र भी 'हिन्दू' से लेकर दिया जा रहा है। इससे उस घटनाका ठीक-ठीक विवरण मिल जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

न्यू इंडिया, १७-२-१९१६

३[1]

जिन लोगोंने श्री गांधीका अपने भाषणके सम्बन्धमें वक्तव्य और जिन बातोंपर मुझे आपत्ति हुई थी उनको बतानेके सम्बन्धमें मुझसे की गई उनकी प्रार्थनाको देखा है वे तुरन्त यह स्वीकार कर लेंगे कि उनपर असद्भावका दोषारोपण तो बिलकुल नहीं किया जा सकता।

. . . मैंने दूसरोंके अनुरोधसे जो कुछ कहनेसे इनकार कर दिया था, श्री गांधीने चूँकि मुझसे उसे प्रकट कर देनेकी प्रार्थना की है, मैं विवश हूँ और अब कह सकती हूँ कि वही शब्द जो किसी दूसरे व्यक्तिके मुँहसे निकलते तो गलत असर डालते, श्री गांधीकी भावनाकी हद तक निरापद क्यों हैं। इसके अतिरिक्त, वे यह नहीं जानते थे जैसा कि मैं जानती थी, कि उनके सम्मुख जो छात्र बैठे थे, वे खुफिया पुलिसके अफसरोंने उनके साथ जो व्यवहार किया था उसके कारण क्रोधसे भभक रहे थे। कुछ छात्र उस दिन कॉलेजमें नजरबन्द कर दिये गये थे। उनका यह अपमान अकारण और उत्तेजनात्मक था। पिछले कुछ दिनोंमें नगरके प्रतिष्ठित लोग जिस तरह गिरफ्तार किये गये थे और कुछ पुरुषों एवं कुछ वृद्धा स्त्रियों तकसे जिस तरह निर्दयतापूर्ण व्यवहार किया था, वे उसके कारण भी नाराज थे। सभामें श्रोतागण भड़क सकते थे और मुझे भय था कि कुछ लोग, जो गांधीजीके सत्याग्रहके सिद्धान्तको नहीं जानते थे, उनके बमबाजीके परिणामोंके सम्बन्धमें कहे हुए शब्दोंका यह अर्थ भी निकाल सकते थे कि इन साधनोंका प्रयोग उचित है, भले ही उन्होंने उनकी निन्दामें कुछ भी कहा हो।

स्वयं उनके शब्दोंपर विचार करें तो मैं कहना चाहती हूँ कि श्री गांधीने अंग्रेजोंके भारतसे बाध्य होकर जानेके सम्बन्ध में जो कुछ कहा था, वह अबुद्धिमत्तापूर्ण था। किन्तु उसका अर्थ वह नहीं निकला जो मैं कहती तो निकलता, क्योंकि मैं स्वराज्य प्राप्तिके लिए सक्रिय कार्य कर रही हूँ। यदि वही बात मैंने कही होती, तो वह धमकीका रूप ले लेती, क्योंकि बहुतसे लोग उनका सम्बन्ध अपने मनमें स्वभावतः मेरी भारतको

१. यह पत्रके सम्पादकीय स्तम्भोंमें श्रीमती एनी बेसेंटके नामसे "श्री गांधीके बचावमें" शीर्षकके साथ छापा गया था।

स्वशासित राष्ट्र बनानेकी माँगसे जोड़ लेते और यद्यपि मैं केवल नौकरशाहीकी हुकूमतको हटानेके लिए काम करती हूँ और यह आशा करती हूँ कि अनेक अंग्रेज भी भावी उत्तरदायी सरकारको चलानेमें सहायता करेंगे; फिर भी यही कहा गया होता: "आप जिस चीजको लाना नहीं चाहतीं उसकी बात क्यों करती हैं?" किन्तु श्री गांधीपर इस प्रकारके हेतुका आरोप नहीं किया जा सकता, क्योंकि उन्होंने तो स्पष्ट कहा था: "आप स्वराज्यके योग्य नहीं हैं।" उन्होंने छात्रोंसे कहा था, "आप मेरी बातोंसे यह समझनेकी भूल न करें कि आप स्वराज्यके योग्य हैं। यदि मैं यह समझता कि आप तैयार हैं तो मैं प्रसन्नतापूर्वक तोपोंके सामने जाता और अपने प्राण दे देता।" परन्तु यह याद रखना चाहिए कि जब श्री गांधी यह बात कहते हैं तब उनका आशय यह नहीं होता। किन्तु यही बात मैं कहती तो उसका अर्थ युद्ध होता। वे सशस्त्र सैनिकोंके विरुद्ध एक ऐसी भीड़के अभियानका नेतृत्व कर चुके हैं, जो मरनेके लिए तैयार थी, मारनेके लिए नहीं, उनका विरोध सदा शान्तिपूर्ण रहा है। उन्होंने वीरतापूर्वक कष्ट सहे हैं, कष्ट दिये कभी नहीं। इसीलिए मैं कहती हूँ कि उनके सम्बन्धमें अन्य सक्रिय राजनीतिज्ञोंकी तरह राय कायम नहीं की जा सकती, उन्होंने अपने और अपने साथियोंके जीवनको खतरेमें डाला है, किन्तु अपने विरोधियोंके लिए कभी खतरा पैदा नहीं किया है।

जिस देशमें "अराजकतावाद" बम फेंकनेका अर्थ देता हो, उसमें स्पष्ट शब्दोंमें "मैं अराजकतावादी हूँ" कहना नासमझी है। श्री गांधी टॉल्स्टॉयकी तरह 'दार्शनिक अराजकतावादी' हैं; वे उनसे बहुत मिलते-जुलते हैं। श्री गांधीने जिस अर्थमें इस शब्दका प्रयोग किया है उस अर्थमें यूरोपके अनेक अत्यन्त उदात्त और शुद्ध लोग — स्त्री और पुरुष — अराजकतावादी हैं। प्रिंस क्रोपाटकिन, एडवर्ड कार्पेंटर, वॉल्ट ह्विटमैन इसी विचार-श्रृंखलाके लोग हैं। वे सच्चे रहस्यवादी हैं और उनका मार्गदर्शन उनके अन्तरमें स्थित प्रभु करता है। उन्हें किसी बाहरी कानूनकी आवश्यकता नहीं होती। 'मद्रास मेल' प्रत्यक्षतः श्री गांधीकी तुलना टॉल्स्टॉयसे करनेपर झुंझला गया है। किन्तु साहित्यिक दृष्टिकोणको छोड़ दें तो दोनोंमें श्री गांधी ही महान्‌तर हैं। टॉल्स्टॉय किसानका जीवन बिताते थे और जूते बनाकर अपना गुजारा करते थे। गांधीका जीवन भी वैसा ही है और फिर वे अपने समाजके काममें लगे रहते हैं। टॉल्स्टॉयसे रूसी सरकार इसी प्रकार घृणा करती थी जिस प्रकार दक्षिण आफ्रिकाकी सरकार गांधीसे। किन्तु गांधीने अपने लोगोंके लिए कष्ट उठाया है, जब कि टॉल्स्टॉयने लोगोंके लिए कभी कष्ट नहीं उठाया। टॉल्स्टॉय बहुत दूर रहते हैं, इसलिए आंग्ल-भारतीय उनकी प्रशंसा कर सकते हैं; और चूंकि गांधी समीप रहते हैं, उन्हें गालियाँ दी जाती हैं। दोनों ही मनुष्य दिव्य सन्देश-वाहक हैं और दूरस्थ लोग उनकी प्रशंसा करते हैं।

मैं अपने १८९४ के भाषणको, जो मैंने उस वर्ष मद्रासके कांग्रेस अधिवेशनमें दिया था, उलट-पुलट करके देख रही थी। यह विचित्र बात है कि इसमें दिव्य सन्देश-वाहकके सम्बन्धमें कही गई बातें अराजकतावादकी दार्शनिक कल्पनापर लागू होती हैं जब किसी दूरस्थ सुवर्णयुगमें राज्यहीन राज्य होगा और जब कोई अपने भाईको कुछ नहीं सिखायेगा, बल्कि सभी लोग ईश्वरके सिखाये हुए होंगे। टॉल्स्टॉय, गांधी, कार्पेन्टर-जैसे दिव्य सन्देशवाहक उस सुदूर भविष्यके आदर्शकी घोषणा करते हैं; किन्तु

अभी सामान्य संसार इसके लिए तैयार नहीं है और न अगले कई हजार वर्षों तक तैयार होगा। मनुष्य बाहरी कानूनके दवावके बिना केवल तभी चल सकता है जब वह आन्तरिक दवाव, भीतरके पवित्र कानूनसे मार्गदर्शन ले। किन्तु गांधी तो निःस्वार्थ, शुद्ध, सरल और निरन्तर आत्मत्यागका जीवनयापन करते हैं। तब उन्हें किस बाहरी कानूनकी आवश्यकता है? ऐसे मनुष्य जिस राष्ट्रमें जनमते हैं वे उसकी अमूल्य निधि होते हैं और उसे वीरत्व एवं उच्च चारित्र्यकी प्रेरणा देते हैं।

निदान, मैं कहती हूँ कि जहाँ हम श्री गांधीके कुछ विचारोंको वर्तमानकी अपेक्षा किसी दूरस्थ भावी पीढ़ीके लिए अधिक उपयुक्त मानते हैं और उनकी राजनीतिको, यदि हम उसे राजनीतिकी संज्ञा दें तो अव्यावहारिक और वैधानिक परिवर्तनके मार्गमें एक रुकावट समझते हैं, वहाँ आंग्ल-भारतीयों या नौकरशाहीकी ओरसे प्रहार किये जानेपर हम — हममें से लाखों लोग — एक होकर उनका साथ देंगे। हम उनके जीवन और उच्च आदर्शोंके कारण उनका सम्मान करते हैं और उनके प्रति श्रद्धा रखते हैं। भले ही हम वर्तमान विषम स्थितियोंमें उनके शब्दोंको अबुद्धिमत्तापूर्ण क्यों न समझते हों।

[अंग्रेजीसे]

न्यु इंडिया, १९-२-१९१६

परिशिष्ट २

अहिंसा परमोधर्मः — एक सत्य या सनक?

लेखक : लाला लाजपतराय

न सत्यसे बड़ा कोई धर्म है और न 'अहिंसा परमोधर्मः' [के अनुसार अहिंसा] से अधिक उदात्त कोई जीवन-चर्या। यदि कोई मनुष्य अहिंसाको ठीक समझ ले और ठीक तरहसे उसे जीवनमें उतारे तो वह सन्त और देवता बन सकता है। किन्तु यदि वह इसे ठीक तरहसे न समझे और ठीक तरहसे लागू न करे तो इससे वह कायर, कापुरुष, हीन और मूढ़ बन जाता है। कभी भारतीय इसका ठीक अर्थ समझते थे और इसका उचित व्यवहार भी करते थे; इसलिए वे सच्चे, उदात्त और वीर पुरुष होते थे। उसके बाद कुछ अच्छे लोगोंमें, जो पूर्ण सदाशयी और अन्यथा सन्त प्रकृतिके थे, अहिंसाने एक वहमका रूप ले लिया और उन्होंने उसे समस्त सद्गुणोंसे ऊँचे आसनपर ही आसीन नहीं कर दिया, बल्कि उसे पवित्र जीवनकी एकमात्र कसौटी बना दिया। उन्होंने अपने जीवनमें ही इसकी अति नहीं की; बल्कि इसे सर्वोत्कृष्ट राष्ट्रीय सद्गुण बताकर अन्य सब बातोंकी उपेक्षा कर दी। अहिंसासे जो उनके मतसे पवित्रताकी सर्वोच्च कसौटी थी, अन्य सब सद्गुण, जिनसे मनुष्य और राष्ट्र उदात्त बनते हैं, हीन करार दे दिये गये। साहस, वीरता और शौर्य सब गुण निकृष्ट हो गये। प्रतिष्ठा और आत्मसम्मानका महत्त्व कम हो गया। देशभक्ति, देशप्रेम, कुटुम्बप्रेम और जातीय सम्मान सब समाप्त हो गये। अहिंसाका ऐसा विकृत या अनुचित उपयोग करनेसे या अन्य प्रत्येक वस्तुकी उपेक्षा करके उसे अति महत्त्व देनेसे ही हिन्दुओंका सामाजिक, राजनैतिक और नैतिक

अधःपतन हुआ। वे यह भूल गये कि शौर्य भी उतना ही अच्छा गुण है जितना अहिंसा। वास्तवमें शौर्य और अहिंसामें किसी तरहकी विसंगति नहीं है, बशर्ते कि अहिंसाका ठीक उपयोग किया जाये; उन्होंने इस तथ्यकी उपेक्षा की कि व्यक्तिगत और जातीय हितोंकी रक्षाके लिए यह कर्त्तव्य हो जाता है कि दुर्बलोंकी शक्तिमानोंसे रक्षा की जाये और आक्रमणकारियों, अनधिकारियों, कामी दुष्टों, स्त्रियोंका सतीत्व भंग करनेवाले कुख्यात लोगों, गुंडों और ठगोंको अन्याय करने और हानि पहुँचानेसे रोका जाये। वे यह तथ्य भूल गये कि सात्विक क्रोध और उसके परिणामोंके भयसे पाप-प्रवृत्त लोगोंकी आत्माओंका निर्दोष लोगोंको हानि पहुँचाने, पवित्रताको भंग करने और अन्य लोगोंके उचित अधिकार छीननेसे विरत रहना, मानव जातिके लिए आवश्यक है। उन्हें इस सत्यकी महत्ता और पुनीतता दिखाई नहीं दी कि जो बुराई या अत्याचार और उत्पीड़नका बलात् प्रभुत्व कायम होने देता है या उसे सहन करता है वह एक प्रकारसे उसको उकसाता या उत्साहित करता है और इसलिए अंशतः बुराई करनेवाले व्यक्तिके उत्कर्ष और शक्तिको बढ़ानेमें सहयोगी बनता है।

अति अहिंसाका और अहिंसाका अनुचित उपयोग ऐसी सड़ाँध है जिसका विष समस्त शरीरमें फैल जाता है। यह संड़ाँध मनुष्यकी शक्तियोंको क्षीण कर देती है और स्त्री-पुरुषोंको ऐसे अर्ध-विक्षिप्त, उन्मादी और दुर्बल प्राणियोंमें परिवर्तित कर देती है जो ऐसा कोई कार्य नहीं कर सकते जिसके लिए मनुष्यको उदात्त उद्देश्य रखने और उदात्त गुणोंका आश्रय लेनेकी आवश्यकता होती है। इससे लोग सनकी और कायर हो जाते हैं। जैन धर्मके संस्थापक संत पुरुष थे जिन्होंने जीवनमें त्याग और तपस्याका व्रत लिया था। उनके अनुयायी जैन साधु अत्यन्त संत स्वभावके लोग हैं जिन्होंने इन्द्रियों और मनके विषयों और विकारोंको जीतनेमें अधिकसे-अधिक सफलता पाई है। टॉल्स्टॉय — जैसी अहिंसासे भारतके लोग तीन हजार वर्षोंसे परिचित हैं और उसका आचरण करते हैं, भूमण्डलमें ऐसा कोई देश नहीं है जिसमें इतने अहिंसावादी हों और उनका अहिंसामें इतना गहरा विश्वास हो। भारतमें ये लोग शताब्दियोंसे रहते हैं। फिर भी संसार-भरमें ऐसा कोई अन्य देश नहीं है जो इतना पद-दलित और मानवीय गुणोंसे इतना वियुक्त हो जितना भारत इस समय है या पिछले पन्द्रह सौ वर्षोंसे रहा है। कुछ लोग कह सकते हैं कि यह अधःपतन अहिंसाके कारण नहीं हुआ; बल्कि अन्य सद्गुणोंका त्याग करनेसे हुआ है। किन्तु मैं यह बात जोर देकर कहना चाहता हूँ कि **इसका कमसे-कम एक कारण** इस सत्यकी विकृति है जिसके परिणामस्वरूप भारतके लोगोंने सम्मान, शौर्य और सद्गुणोंका मार्ग त्याग दिया है। सबसे बुरी बात तो यह है कि जो लोग इस सिद्धान्तमें अपना पूर्ण विश्वास होनेका दावा करते हैं उनके अपने आचरणसे ही यह सिद्ध हो जाता है कि एक ऐसे सत्यके अनुचित उपयोगसे जीवनमें दाम्भिकता, निर्वीर्यता और निर्दयता आये बिना नहीं रहती। मेरा जन्म एक जैन परिवारमें हुआ। मेरे पितामहका अहिंसामें सम्पूर्ण विश्वास था। उन्हें साँपसे काटा जाना पसन्द होता था; किन्तु उसे मारना नहीं। वे कीड़ें-मकोड़ों तकको हानि नहीं पहुँचाते थे। वे घंटों धार्मिक कृत्योंमें लगे रहते। बाह्यतः वे बहुत ही धर्म-परायण व्यक्ति थे और उनका स्थान ऊँचा था। उनके एक भाई साधु थे। वे एक धार्मिक आचार्य और अपने संप्रदायके

सम्मानित नेता थे। वे एक अति ऊँचे दर्जेके श्रमण थे। मैंने अपने जीवनमें उन सरीखे व्यक्ति कम ही देखे हैं। वे अपने सिद्धान्तोंका पूर्ण पालन करते थे और तपश्चर्या एवं वासनाओं और तृष्णाके दमनमें अग्रणी थे। किन्तु नैतिकताके ऊँचे मापदण्डके अनुसार उनका जीवन व्यर्थ और अस्वाभाविक था; मुझे उनसे प्रेम था और मैं उनका आदर करता था, मैं उनके सिद्धान्तोंपर नहीं चल सका। उन्होंने भी मुझे उनपर चलानेकी चिन्ता नहीं की। उनके भाई अर्थात् मेरे सगे पितामह भी अहिंसामें, किन्तु विकृत अहिंसामें — विश्वास करते थे, जिसमें उनके लेखे **कैसी भी स्थिति हो, किसी भी प्राणीके प्राण लेनेका तो निषेध** है; किन्तु अपने व्यापार और व्यवसायमें सव तरहकी धोखा-धड़ी उचित ही नहीं, वल्कि अच्छी है। उनके व्यवसाय सम्वन्धी नीति-नियमोंके अनुसार यह सव विहित था। मैंने जैन धर्मके अनेक अनुयायी देखे हैं जो व्यवहारमें वच्चों और विधवाओंसे उनके मुँहका कौर भी निकाल लेंगे; किन्तु जुँओं, चिड़ियों या अन्य जानवरोंके मारे जानेका खतरा हो तो उनकी रक्षा करनेमें हजारों रुपये खर्च देंगे। मेरे कहनेका तात्पर्य यह नहीं है कि भारतके जैन शेष हिन्दुओंकी अपेक्षा अधिक अनीतिमय आचरण करते हैं। मैं यह भी कहना नहीं चाहता कि इस प्रकारका अनीतिमय आचरण अहिंसाका परिणाम है। ऐसा निराधार आरोप करनेकी तो मैं वात भी नहीं सोच सकता। जैनोंकी एक विशेष जीवन-पद्धति है। उसपर विचार करें तो उनका समाज एक वड़ा समाज है। जैन दानी हैं, आतिथ्यकारी हैं, चतुर एवं दक्ष व्यापारी हैं। हिन्दुओंकी कुछ अन्य जातियोंमें भी ये गुण हैं। तथापि मैं यह कहना चाहता हूँ कि अन्य जातियोंसे उनकी अवस्था अहिंसाको चरम रूपमें पालन करनेके कारण कदापि अच्छी नहीं हुई है और न उसके कारण उन्हें ऊँचा नैतिक स्थान ही प्राप्त हुआ है। असल वात यह है कि गुंडागर्दी और शक्तिके अन्य प्रदर्शनोंके कारण सवसे अधिक हानि इन्हीं लोगोंकी होती है, क्योंकि अपनी परम्परागत भीरुता और शक्ति-प्रयोगके प्रति घृणाके कारण अन्य लोगोंकी अपेक्षा ये अधिक असहाय होते हैं। ये न तो अपना वचाव कर सकते हैं और न अपने प्रियजनों और निकट-सम्वन्धियोंकी ही प्रतिष्ठाकी रक्षा कर सकते हैं। यूरोप 'शक्तिके ईश्वरीय अधिकार'का आधुनिक अवतार है। वहाँ टॉल-स्टॉयका जन्म होना शुभ है। किन्तु भारतकी स्थिति भिन्न है। हम भारतीय, शक्ति और हिंसाकी हिमायत करते हैं तो, अत्याचार करने, दूसरे लोगोंके अधिकार छीनने या आक्रमण करनेके निमित्त नहीं। मेरा विश्वास है कि भारतमें यह स्थिति कभी नहीं आयेगी। किन्तु यदि हमें यह सिखाया जाये कि आत्मरक्षाके लिए या अपने सम्मानकी या अपनी पत्नियों, भगिनियों, पुत्रियों और माताओंके सम्मानकी रक्षाके निमित्त भी उचित शक्तिका प्रयोग करना पाप है, तो यहाँ इसकी गुंजाइश नहीं है। ऐसा शिक्षण अस्वाभा-विक और हानिकर है। हम एक वैध उद्देश्यको प्राप्त करनेके लिए कानूनके विरुद्ध शक्तिके प्रयोगकी निन्दा करते हैं; किन्तु यदि एक वड़ा और सम्मानित व्यक्ति हमारे नवयुवकोंको यह कहता हो कि हम अपने संरक्षित जनोंकी सम्मान-रक्षाके लिए अपने आपको उन लोगोंके हाथोंमें सौंप दें जो उनकी पवित्रताको नष्ट कर रहे हों और साथ ही यह भी कहता हो कि हमारा यह कार्य प्रहार करनेकी अपेक्षा कहीं अधिक शारीरिक और मानसिक वीरताका सूचक होगा, तो हम चुप नहीं वैठे रह सकते। मान लीजिए कि

कोई गुंडा हमारी बेटीपर आक्रमण कर रहा है। श्री गांधी कहते हैं कि उनकी अहिंसाकी कल्पनाके अनुसार हमारी उस बेटीकी सम्मान रक्षाका एकमात्र उपाय यही है कि हम अपनी बेटी और उस आक्रमणकारीके बीचमें आ खड़े हों। किन्तु यदि आक्रमणकारी हमें गिरा दे और अपने जघन्य संकल्पको पूरा करे तब हमारी बेटीका क्या हाल होगा। श्री गांधीका कहना है कि गुंडेका मुकाबला अपनी शक्तिसे करके उसे रोकनेके लिए जितनी मानसिक और शारीरिक वीरताकी आवश्यकता होती है उसकी अपेक्षा शान्त खड़े रहने और उसे अपनी घृणित मनमानी करने देनेके लिए अधिक मानसिक और शारीरिक वीरताकी आवश्यकता होती है। श्री गांधीके प्रति भारी सम्मान प्रकट करते हुए मैं कहना चाहता हूँ कि इसका कोई अर्थ नहीं है। मेरे मनमें श्री गांधीके व्यक्तित्वके प्रति अत्यधिक सम्मानका भाव है। मैं जिन लोगोंकी पूजा करता हूँ उनमें वे भी आते हैं। मुझे उनकी सचाईमें कोई सन्देह नहीं है। मैं उनके हेतुओंपर भी शंका नहीं करता। किन्तु उन्होंने जो अनिष्टकारी मत स्थिर किया है उसका तीव्र विरोध करना मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूँ। इस सम्बन्धमें गांधी-जैसे व्यक्तिको भी भारतके नवयुवकोंके मस्तिष्क विषाक्त करनेकी छूट नहीं दी जानी चाहिए। जातीय शक्तिके स्रोतोंको अपवित्र करनेकी स्वतन्त्रता किसीको नहीं होनी चाहिए। इसका प्रचार ईसा तो दूर, बुद्धने भी नहीं किया था। मैं समझता हूँ कि इस हदतक तो जैन भी नहीं जायेंगे। क्यों? इन स्थितियोंमें तो सम्मानपूर्ण जीवन ही असम्भव हो जायेगा। जिस मनुष्यका ऐसा मत हो वह किसीको मनचाही करनेसे दृढ़तापूर्वक नहीं रोक सकता। तब श्री गांधीने दक्षिण आफ्रिकामें भारतीयोंके निष्कासनकी गोरोंकी पोषित नीतिके विरुद्ध विद्रोहका झंडा ऊँचा करके उनकी भावनाओंको ठेस क्यों पहुँचाई? युक्ति-युक्त बात तो यह होती कि ज्यों ही दक्षिण आफ्रिकी सरकारने उनको निकालनेकी इच्छा प्रकट की थी त्यों ही वे अपना बोरिया-बिस्तर लेकर उस देशसे चले आते और अपने देशवासियोंको भी वैसा ही करनकी सलाह देते, क्योंकि ऐसी स्थितियोंमें किसी भी प्रकारका प्रतिरोध करनेसे हिंसा होती; आखिर शारीरिक हिंसा मानसिक हिंसासे ही तो उद्भूत होती है। यदि किसी चोर या लुटेरे या किसी शत्रुको मार भगानेका विचार करना पाप है तो उसका शक्तिसे प्रतिरोध करना उससे भी बड़ा पाप है। यह बात देखनेमें ऐसी बेहूदी है कि मुझे श्री गांधीके भाषणकी इस रिपोर्टकी सत्यतापर सन्देह होने लगता है। किन्तु अखबारोंमें इस भाषणकी खुली आलोचना की जा रही है और श्री गांधीने इसका कोई खण्डन नहीं किया है। कुछ भी हो, मैं यह अनुभव करता हूँ कि जबतक इस भाषणका खण्डन या स्पष्टीकरण नहीं किया जाता तबतक मैं चुप नहीं बैठ सकता। और इस मान्यताको असन्दिग्ध पुनीत सत्यके रूपमें भारतके किसी भी युवक द्वारा अनुगमन करनेके लिए फैलने नहीं दे सकता। श्री गांधी एक काल्पनिक पूर्ण विश्वकी रचना करना चाहते हैं। निस्सन्देह वे ऐसा करनेके लिए स्वतन्त्र हैं और उन्हें दूसरोंको भी वैसा करनेके लिए कहनेकी स्वतन्त्रता है। किन्तु मैं भी उनकी भूल बताना अपना कर्त्तव्य समझता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

मॉडर्न रिव्यू, जुलाई १९१६

परिशिष्ट ३

एल० एफ० मॉर्संहेडके नाम गाँधीजीके पत्रके सहपत्र

१

स्थानीय नेताओंकी ओरसे गांधीजीको पत्र

मुजफ्फरपुर
अप्रैल १३, १९१७

प्रिय श्री गांधी,

हम आपके उस बयानकी पूरी-पूरी ताईद करते हैं जो आपने आज कमिश्नर (तिरहुत डिवीजन) के सामने दिया है। तात्पर्य उस बयानसे है कि आप प्रान्तके सार्वजनिक नेताओंके अनुरोधपर ही निलहे जमींदारों और भारतीय काश्तकारोंके सम्बन्धोंके प्रश्नके बारेमें जांच-पड़ताल करने और हमें अपने ढंगसे अपनी दक्ष सहायतासे लाभान्वित करने इस डिवीजनमें आये थे। आपको आमन्त्रित करनेमें हम लोग भी शामिल थे। हम आपके उस बयानकी भी ताईद करते हैं कि कांग्रेसके पिछले अधिवेशनके दौरान हममें से अधिकांश लोगोंने आपसे इस विषयपर एक प्रस्ताव पेश करनेके लिए कहा था, और आपने इस आधारपर हमारा अनुरोध अस्वीकार कर दिया था कि आपने स्वयं यहाँ आकर इस प्रश्नका अध्ययन नहीं किया था। हमने आपको इस कारणसे आमन्त्रित किया था कि हमने सोचा, आपको विशेष अनुभव है, इसलिए इस विषयकी पूरी तौरपर एक वैधानिक और निष्पक्ष जांच-पड़तालके लिए आप ही सबसे उपयुक्त व्यक्ति रहेंगे और वह जांच सम्बन्धित पक्षोंके हितमें रहेगी।

हृदयसे आपके,
ब्रजकिशोर प्रसाद
रामनवमी प्रसाद
गयाप्रसाद सिंह
रामदयालु सिन्हा

२

बाबू अरिक्षण सिन्हाकी टिप्पणी

मुजफ्फरपुर
अप्रैल १३, १९१७

पिछली लखनऊ कांग्रेसमें मैं एक प्रतिनिधिकी हैसियतसे गया था। इस प्रान्तके लगभग सभी प्रमुख व्यक्तियोंने प्रतिनिधियोंकी हैसियतसे लखनऊ अधिवेशनमें भाग लिया था — उनकी संख्या लगभग ८१ रही होगी। बिहारके प्रतिनिधियोंने लखनऊमें माननीय

पंडित मदनमोहन मालवीय और श्री गांधीसे मुजफ्फरपुर और चम्पारन जाकर निलहे जमींदारों और काश्तकारोंके मामलेका अध्ययन करनेका अनुरोध किया था। उन्होंने यथाशीघ्र मुजफ्फरपुर आनेका वचन दिया था। बिहारके प्रतिनिधियोंने श्री गांधीसे यह अनुरोध भी किया था कि वे इस विषयपर कांग्रेसमें एक प्रस्ताव पेश करें, परन्तु उन्होंने इस आधारपर ऐसा करनेसे इनकार कर दिया कि उन्होंने स्वयं यहाँ आकर इस प्रश्नका अध्ययन नहीं किया था।

अरिक्षण सिन्हा

[अंग्रेजीसे]

सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन, संख्या १७ और १८, पृष्ठ ६०–१।

परिशिष्ट ४

आपराधिक कार्रवाईकी संहिताकी धारा १४४ के अन्तर्गत आदेश

अप्रैल १६, १९१७

सेवामें
श्री मो० क० गांधी
इस समय मोतीहारीमें

चूंकि इस डिवीजनके कमिश्नरने अपने एक पत्र द्वारा, जिसकी एक प्रति संलग्न है, मुझे बतलाया है कि इस जिलेमें कहीं भी आपकी उपस्थिति सार्वजनिक शान्तिके लिए खतरनाक होगी और उसके कारण ऐसे गम्भीर ढंगका उत्पात हो सकता है जिसमें लोगोंके प्राणोंकी हानिका अन्देशा है और चूंकि इस सम्बन्धमें तत्काल कार्रवाई करना अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है;

इसलिए मैं इसके द्वारा आपको आदेश देता हूँ कि आप जिलेमें उपस्थित न रहें और अगली ट्रेनसे ही जिलेसे बाहर चले जायें।

डब्ल्यू० बी० हेकॉक
जिला मजिस्ट्रेट
चम्पारन

इस नोटिसके साथ कमिश्नरके पत्रकी एक प्रति संलग्न थी, जो इस प्रकार थी :

मुजफ्फरपुर
अप्रैल १३, १९१७

सेवामें ––
चम्पारनके जिला मजिस्ट्रेट
महोदय,

श्री मो० क० गांधी, जैसा कि वे स्वयं कहते हैं, नीलके खेतोंमें काम करनेवाले भारतीय मजदूर जिन परिस्थितियोंमें काम करते हैं, उनकी जाँच करनेके लिए जनताके बार-बार बुलाये जानेपर यहाँ आये हैं और वे स्थानीय प्रशासनकी सहायता चाहते हैं। वे आज सुबह मुझसे मिलने आये थे। मैंने उनको समझाया था कि प्रशासन उन्नीसवीं सदीके सातवें दशकसे ही निलहे जमींदारों और काश्तकारोंके सम्बन्धोंपर नजर रखता आ रहा है और अभी इस समय हम, चम्पारनमें यह समस्या जिस रूपमें मौजूद है, उसके एक पहलूके सम्बन्धमें खास तौरसे चिन्तित हैं; परन्तु यह एक सन्देहास्पद बात है कि ऐसे समय, जब हम समस्याको हल करनेकी कोशिशमें हैं, बीचमें ही किसी अजनबी द्वारा हस्तक्षेप करनेसे उलझन बढ़ नहीं जायेगी। मैंने उनको चम्पारनमें दंगोंकी आशंकाका भी आभास दिया; उनसे कहा कि वे इस बातका प्रमाण दें कि जनताने उनसे जाँच करनेके लिए बार-बार कहा है और बताया कि इस मामलेके बारेमें शायद सरकारको लिखना पड़े।

मुझे आशा थी कि श्री गांधी चम्पारनके लिए रवाना होनेसे पहले मुझे फिर लिखेंगे, परन्तु हमारी मुलाकातके बाद मुझे सूचित किया गया है कि उनका उद्देश्य सही जानकारी हासिल करनेके बजाय शायद आन्दोलन करना ही अधिक है और सम्भव है कि वे आगे कुछ लिखा-पढ़ी किये बिना ही कार्रवाई शुरू कर दें। मेरा खयाल है कि यदि वे आपके जिलेमें गये तो वहाँ सार्वजनिक शान्तिके भंग होनेका खतरा है। आपसे मेरा अनुरोध है कि यदि वे वहाँ पहुँचें तो आप उनको दण्ड प्रक्रिया संहिताकी धारा १४४ के अन्तर्गत एक आदेश द्वारा तुरन्त जिला छोड़ देनेका आदेश दे दें।

आपका,
एल० एफ० मॉर्सहेड
कमिश्नर तिरहुत डिवीजन

[अंग्रेजीसे]

सत्याग्रह इन चम्पारन, पृष्ठ १०७–८; और **सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन**, संख्या १९, पृष्ठ ६१–२।

परिशिष्ट ५

गांधीजीसे भेंटके सम्बन्धमें माननीय मॉडकी टिप्पणी

मई १०, १९१७

× × ×

१० मईको श्री गांधीके साथ मेरी काफी लम्बी वार्ता हुई . . .।

हमारी वार्ता अत्यधिक स्पष्टवादिताके साथ विविध विषयोंपर उत्तर-प्रत्युत्तरके ढंगसे हुई थी। मैं उस सारी वार्ताका सारांश यहाँ पेश नहीं कर सकता। उस सबका निष्कर्ष यही था कि जब मैंने उनको सुझाया कि अबतक वे यथेष्ट साक्ष्य जुटा चुके होंगे और अब अपना प्रतिवेदन तैयार करनेकी स्थितिमें होंगे, तो उन्होंने एक प्रारम्भिक प्रतिवेदन भेजनेकी बात तुरन्त मान ली और यह भी मान लिया कि इस बीच उनके सहायक लोग साक्ष्य दर्ज करना बन्द कर देंगे और वे केवल उन नये-नये गाँवोंमें जाकर जहाँ बागान-मालिकों या रैयतकी ओरसे उनको विशेष तौरपर बुलाया जायेगा, स्वयं ही चुपचाप जाँच-पड़ताल करेंगे। मैंने सुझाव रखा कि उनको अब सहायकोंकी सहायता नहीं लेनी चाहिए। इसपर उन्होंने कहा कि वे इसके बारेमें कोई निश्चित वचन नहीं दे सकते और उनको इस बातसे बड़ी व्यथा पहुँची कि उन सहायकोंके उद्देश्य और मंशाके बारेमें लोगोंको अविश्वास हुआ है। उन्होंने जोर देकर कहा कि यदि किसीका यह विश्वास है कि वे लोग इस आन्दोलनको एक यूरोपीय-विरोधी आन्दोलन मानते हैं या पीठ पीछे आपसमें इसी तौर-तरीकेसे इसके बारेमें बातचीत करते हैं, तो वह सरासर गलत है। क्योंकि उनकी भावना तनिक भी इस प्रकारकी नहीं है। उन्होंने कहा कि वे बागान-मालिकोंके सामने कुछ निश्चित प्रस्ताव रखना चाहते थे, जिनको यदि स्वीकार कर लिया जाये तो वे अपने सारे कागजात नष्ट करके यहाँसे चल देंगे, परन्तु उन्होंने यह भी स्वीकार किया कि उनके खयालसे इससे कोई ज्यादा फायदा नहीं होगा, क्योंकि उन्होंने बागान-मालिकोंके सामने जो एक-दो सुझाव व्यक्तिगत रूपसे रखे थे उनपर उनकी प्रतिक्रिया आशानुकूल नहीं हुई थी। मैंने कहा कि मेरे खयालसे तो बागान-मालिकोंके साथ उनके बात करनेका तनिक भी फायदा नहीं और उनको बागान-मालिकोंसे एसी आशा नहीं करनी चाहिए कि वे लोग उनको [श्री गांधीको] किसी भी तरहका प्रस्ताव रखनेका किसी भी रूपमें अधिकारी मानें; अच्छा तो यह रहेगा कि उन्होंने जो सामग्री इकट्ठी कर ली है उसके आधारपर वे अपना प्रतिवेदन तैयार कर लें और उसे सरकारके पास, या यदि वे उसे भारत-सरकारके पास भेजना बेहतर समझें, तो उसे भेज दें। उन्होंने कहा कि भारत-सरकारके सामने मामला ले जानेकी उनकी तनिक भी इच्छा नहीं है; उनका अपना विचार तो सबसे पहले स्वयं बागान-मालिकोंसे बात करनेका था और यदि इसमें विफलता मिले तो स्थानीय अधिकारियोंके पास जानेका, और यदि वे भी सन्तुष्ट न कर सकें, तो स्थानीय सरकारके पास और यदि स्थानीय

सरकारसे भी सन्तोष न हो सके तो फिर भारत-सरकारके पास मामला ले जानेका है। यदि भारत सरकारके सामने जानेसे भी बात न बने तो उनका विचार अन्तिम उपायके रूपमें भारतके लोकमतको जगानेका है।

अन्तमें उन्होंने पूछा कि उनको अपना प्रतिवेदन किसके नाम सम्बोधित करना चाहिए — कलक्टर या कमिश्नर या स्थानीय सरकारके नाम? मैंने कहा कि सबसे अच्छा तो यही रहेगा कि उनका प्रतिवेदन सरकारके नाम सम्बोधित हो, क्योंकि उस स्थितिमें कलक्टर या कमिश्नरको यह दुविधा नहीं रहेगी कि उसे आगे बढ़ानेसे पहले उनको प्रतिवेदनपर चर्चा करना जरूरी है या नहीं। सौजन्यके तौरपर उनको उसकी एक प्रति स्थानीय अधिकारियोंको भेज देनी चाहिए और सरकार यदि जरूरी समझेगी तो उनकी राय या जो आवश्यक लगे वह सूचना माँग लेगी। मैंने कहा कि एक अफवाह थी कि वे [श्री गांधी] मुजफ्फरपुरमें भी वही करना चाहते हैं जो उन्होंने चम्पारनमें किया था। इसपर उन्होंने कहा कि फिलहाल उनकी वैसी कोई मंशा नहीं थी, हालांकि वह भारतके सम्बन्धमें अपनी सामान्य जानकारी बढ़ानेके लिए उस प्रान्तके अन्य स्थानोंका भी दौरा कर सकते हैं। मैंने गयाके दक्षिणवर्त्ती और हजारीबागके समीपवर्त्ती इलाकोंमें जानेका उनसे विशेष आग्रह किया। मैंने बताया कि वहाँके किसानों की जो दशा है उसकी तुलनामें वे पायेंगे कि चम्पारनकी रैयत अधिक स्वतन्त्र और साहसी है। दो घंटोंकी अपनी वार्त्ताकी समाप्ति करते-करते हमने औपनिवेशिक प्रवासके सम्बन्धमें बड़ी दिलचस्प बातें कीं, परन्तु इस फाइलसे उसका कोई सम्बन्ध नहीं है।

[अंग्रेजीसे]

सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन, संख्या ७१, पृष्ठ १२१–४।

परिशिष्ट ६

गांधीजी द्वारा दर्ज किये गये किसानोंके बयान

मई १९, १९१७

(क)

मौजा चेलाभर टोला राजकुमार, ढोकरहा कोठीका हीरा राय वल्द दुर्गा राय।

मेरी उम्र करीब ५० साल है, मेरी स्त्री जीवित है। मेरे एक पुत्र और तीन पुत्रियाँ हैं। मेरे पास चेलाभरमें ५ बीघे और बेलवा कोठीमें १।। बीघा जमीन है। करीब २।। कट्ठे जिरात जमीन मुझपर थोपी गई है। मैंने श्री गांधीके जरिये उसे वापस कर देनेकी बात कहलवाई थी। कल सुबह लगभग १० बजे श्री हॉल्टम मेरे घरके पास आये थे। उनको देखकर मैं उनके पास गया। वे घोड़ेपर सवार थे। पटवारी रामलगन लाल और तहसीलदार अमलासिंह और तीन कारिन्दे उनके साथ थे। वहाँ कई लोग इकट्ठे

हो गये। श्री हॉल्टमने हम सभीको सम्बोधित करके कहा : "तुम लोकको हम देखेगा। तुमसे [हमारा] कौन नाता अव है। जिरात दे दिया। मैं तुमरो हर भैंस पीछे १२ आने, हर बैल पीछे ८ आने और हर गाय पीछे ४ आने परतीमें चरानेके लिए वसूल करूँगा। अगर तुम नहीं दोगे, तो मैं तुम्हारे मवेशियोंको काँजीहाउसमें डाल दूँगा। तुमको नील भी उगानी पड़ेगी।" मवेशी चरानेके लिए अभी तक हमको कुछ भी नहीं देना पड़ा है। हम उनकी वात सुनते रहे, कहा कुछ नहीं। वे अपने आदमियोंसे वात करके चले गये।

मो० क० गांधी द्वारा दर्ज और
आवश्यकतानुसार वावू राजेन्द्रप्रसाद द्वारा
स्पष्ट किया गया बयान।

(ख)

मोजा टोकरहा, टोला शिकारपुर, कोठी ढोकरहाका कोइरी जनाई महतो वल्द ठाकुर महतो।

मेरे एक स्त्री है, वच्चा कोई नहीं। मेरी उमर ४० साल है। शिकारपुरमें मेरी ३।। वीघे जमीन है। मुझपर २।। कट्ठे जिरात जमीन थोपी गई थी। यह वात आजसे करीव दस साल पहलेकी है। मैंने और भी कई लोगोंके साथ श्री गांधीके जरिये अपनी जिरात वापस करनेकी वात कहलवाई थी। श्री गांधी जिस दिन सरसवामें आये मैं उस दिन मौजूद था। करीव ६ वजे शामको मैं ढोकरहा कोठीके पाससे निकलता हुआ शिकारपुर लौट रहा था। कोठीकी कचहरी उसके अहातेमें है। पाससे गुजरनेवालेको कचहरी साफ दिखाई पड़ती थी, जैसी कि मुझे भी दिखाई पड़ी। मैंने सुखारी महतोको वरामदेमें देखा। वह वरामदेके फर्शपर कागजातका एक पुलंदा लिये खड़ा था। मुझे मालूम है कि कचहरी आगमें जल चुकी थी। मुझे इस वातपर यकीन नहीं कि वह काम रैयतका है।

मो० क० गांधी द्वारा दर्ज और
आवश्यकतानुसार वावू राजेन्द्रप्रसाद द्वारा
स्पष्ट किया गया वयान

(ग)

चेलाभर, कोठी ढोकरहाका देवनारायण राय वल्द ठाकुर राय।

मेरी उम्र ४० साल है। मेरी पत्नी जीवित है। कोई वच्चा नहीं है। चेलाभरमें मेरे पास १२ बीघे जमीन है। ८ कट्ठे जिरात जमीन मुझपर थोपी गई थी। मैंने श्री गांधीके जरिये जिरात वापस करनेके लिए कहलवाया था। कल श्री हॉल्टमका सिपाही मुझे राजकुमारके घर जाकर कोठीसे खरीदे हुए भूसेकी कुटाईके लिये तहसीलदारको २ रुपये देनेके लिए पकड़ लाया था। रुपये अदा करनेके वाद मैं वहाँ खड़ा हुआ था। ठीक उसी समय श्री हॉल्टम घोड़ेपर सवार आते हुए दिखाई दिये। वहाँ वहुतसे लोग मौजूद थे। श्री हॉल्टमके साथ वहाँ उनके सिपाही भी आये थे। पटवारी भी वहाँ था। श्री हॉल्टमने सभी लोगोंसे कहा : "हमारा तुम्हारा नाता कौन। तुम लोग हमारा जिरात

दे दिया। तुमको देखा जायेगा। अब तुम्हारा [तुमको] नील लगाना होगा। तुमको चराईके लिए हर भैंस पीछे १२ आने, हर बैल पीछे ८ आने और हर गाय पीछे ४ आने देने पड़ेंगे। नहीं दोगे तो तुम्हारे मवेशी काँजीहाउसमें डाल दिये जायेंगे।" जब साहेब आया, तब हीरा राय मौजूद था। हमने अभीतक मवेशी चरानेके लिए कुछ भी नहीं दिया है। हम सुनते रहे, कहा कुछ भी नहीं। उन्होंने अपने आदमियोंसे कुछ कहा और चले गये।

मो० क० गांधी द्वारा दर्ज और
आवश्यकतानुसार बाबू राजेन्द्रप्रसाद द्वारा
स्पष्ट किया गया बयान

(घ)

चेलाभरका मेरखुन तुरहा, वल्द परम तुरहा, उमर करीब २६ साल, शादी शुदा, एक पुत्रका पिता, ७ बीघे जमीन और ७ कट्ठे जिरात। उसने जिरात वापस कर दी है। उक्त बयानका समर्थन करता हूँ।

मो० क० गांधी
बेतिया, १९ मई, १९१७

चेलाभरका शिवप्रसाद राय, वल्द प्रताप राय, पत्नी और ३ पुत्र, डेढ़ बीघा जमीन है, जिरात बिलकुल नहीं। उक्त बयानकी ताईद करता हूँ।

मो० क० गांधी
बेतिया, १९ मई, १९१७

चेलाभरका शिवनन्दन, वल्द देवनारायण राय, उमर ३० साल, पत्नी-बच्चे नहीं, ४॥ बीघे जमीन है, २ कट्ठे जिरात वापस की है। उक्त बयानकी ताईद करता हूँ।

मो० क० गांधी
बेतिया, १९ मई, १९१७

अमर राय, वल्द शिशुपाल राय, उमर २५ साल, पत्नी है, बच्चे नहीं, ४ बीघे जमीन है, ११॥ कट्ठे जिरात है। उक्त बयानकी ताईद करता हूँ।

मो० क० गांधी
बेतिया, मई १९, १९१७

टाइप की अंग्रेजी प्रतिसे।
सौजन्य: गांधी स्मारक निधि

परिशिष्ट ७

चम्पारन कृषीय जाँच समितिके समक्ष साक्ष्य आमन्त्रित करनेका सरकारी नोटिस

जुलाई, १९१७

चम्पारनकी खेती-बाड़ीकी परिस्थितिकी जाँच करनेके लिए नियुक्त की गई समिति लगभग १५ जुलाईसे जाँच शुरू करेगी। समितिकी बैठकें बेतिया और मोतीहारी (और इसके बाद निश्चित किये जानेवाले किसी अन्य स्थानमें) होंगी किन्तु इन स्थानोंमें बैठकोंकी ठीक-ठीक तिथियाँ अभी नियत नहीं की गई हैं।

इसीलिए समिति लिखित साक्ष्य पेश करनेके इच्छुक सभी व्यक्तियों, संघों और सार्वजनिक संस्थाओंको उसे मन्त्री, चम्पारन कृषीय जाँच समिति (एग्रेरियन इंक्वाइरी कमेटी), सचिवालय, रांचीके पतेपर १० जुलाईसे पहले लेखककी अर्हताओंके विवरणके एक ज्ञापनके साथ भेजनेके लिए आमन्त्रित करती है।

[अंग्रेजीसे]

सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन, संख्या १४३, पृष्ठ १७०।

परिशिष्ट ८

गुजरात सभा कार्यालयका परिपत्र

श्री मोहनदास करमचन्द गांधी, बार-एट-लॉ
श्री शिवलाल मोतीलाल पटेल, बी० ए०, एलएल० बी०
श्री किशन एन० देसाई, एम० ए०, एलएल० बी०
श्री गणेश वासुदेव मावलंकर, बी० ए०, एलएल० बी०

मंत्री

गुजरात सभा कार्यालय
कारंज
अहमदाबाद
सितम्बर १३, १९१७

प्रिय महोदय,

भारत मन्त्री परममाननीय श्री मॉंटेग्युने भारतकी वर्तमान राजनीतिक परिस्थितिका स्वयं अध्ययन करनेके लिए हमारे देशमें आनेकी इच्छा व्यक्त की है। अनुमान है कि अक्तूबर १९१७ के अन्ततक वे भारत पहुँच जायेंगे।

श्री मॉंटेग्यु अधिकारियोंके साथ यथासमय सुधारोंके प्रश्नपर चर्चा करेंगे और लोक-प्रतिनिधि संस्थाओंके सुझाव भी प्राप्त करेंगे। परन्तु भारतके आंग्ल-भारतीय समाचारपत्रोंने जो रुख अपनाया है और जो निश्चित रूपसे वह अपनायेगा ही, उसे देखते हुए हमारे लिए इतना ही पर्याप्त नहीं है कि हम लोक-प्रतिनिधि संस्थाओंकी हैसियतसे इस प्रश्नपर भारत मन्त्रीके साथ चर्चा करें, वल्कि यह भी परम आवश्यक है कि हम सुधारोंके पक्षधर विशाल लोकमतकी ओर स्पष्ट रूपसे उनका ध्यान आकर्षित करके सुधार-विरोधी प्रतिक्रियावादी शक्तियोंके खिलाफ लड़नेके लिए उनके हाथ मजबूत करें। ऐसा अवसर वार-बार हाथ नहीं आता, और इसमें चूकना एक अपराध जैसा होगा।

हमारी सभाने इसी दृष्टिसे, अपने अध्यक्ष श्री मोहनदास करमचन्द गांधीके सुझावपर, गुजरातके ब्रिटिश प्रजाजनों द्वारा हस्ताक्षरित एक प्रार्थनापत्र श्री मॉंटेग्युके सामने पेश करना तय किया है। प्रार्थनापत्र छोटा-सा है और इसका मसविदा श्री मो० क० गांधीने श्री आर० वी० रमणभाई एम० नीलकंठके साथ सलाह-मशविरा करके वनाया है। प्रार्थनापत्रकी एक प्रति यहाँ संलग्न है।

आप देखेंगे कि मूल प्रार्थनापत्र गुजरातीमें है और साथमें उसका अंग्रेजी अनुवाद भी नत्थी है। सभाने सोच-समझकर ऐसा किया है, क्योंकि अंग्रेजीके माध्यमसे देशकी विशाल जनतातक पहुँचना असम्भव है। सभा जनताके वीच भाषण करने और उसे सुधार-योजना समझानेके लिए एक स्वयंसेवकदल संगठित कर रही है। स्वयंसेवकोंके लिए कुछ खास हिदायतें हैं जिनका मसविदा स्वयं श्री गांधीने तैयार किया है। उसमें स्पष्ट कहा गया है कि किसी भी स्वयंसेवकको प्रार्थनापत्रपर किसी भी ऐसे व्यक्तिके हस्ताक्षर नहीं लेने चाहिए जो योजनाको समझता न हो या जो नावालिग अथवा सरकारी कर्मचारी हो। प्रत्येक स्वयंसेवकको पत्रक-रूपमें छपे, कुछ प्रारम्भिक उक्तियोंसहित, सुधार-योजनाके गुजराती अनुवादकी एक प्रति दी जाती है, और उसे इस पत्रकमें निरूपित विषयोंसे वाहर न जानेकी कड़ी हिदायत रहती है।

महात्मा, खण्ड १ में प्रकाशित अंग्रेजी परिपत्रकी प्रत्याकृति से।

परिशिष्ट ९

चम्पारन समितिकी बैठककी कार्यवाहीका विवरण

सितम्बर २७, १९१७

सर्वश्री इर्विन, हिल और नॉर्मनको तीन विकल्पोंपर विचार करनेके लिए रांची वुलाया जाये :

क. प्रत्येकको वतलाना चाहिए कि वह निम्नलिखित शर्तोंपर शरहवेशी द्वारा हुई लगान-वृद्धिमें कितने प्रतिशत तक की कमी करनेको तैयार है :

(१) कि इस बार शरहवेशी द्वारा हुई लगान वृद्धिमें वह जितनी कमी करनेको तैयार हो वह पिछली वारके प्रस्तावसे काफी अधिक हो; वागान-मालिक

इस दिशामें जितना भी आगे बढ़ेंगे उसे भविष्यमें पारस्परिक सद्भावकी आशासे काफी मान लिया जायेगा।

(२) कि इसे श्री गांधी एक सन्तोषजनक समझौतेके रूपमें पूरी तरह स्वीकार कर लेंगे और इसे काश्तकारों द्वारा सचाईके साथ मान्य कराने और बागान-मालिकों तथा उनके किसानोंके बीच भविष्यमें शान्तिपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करनेके लिए वे काश्तकारोंपर अपने प्रभावका पूरा-पूरा उपयोग करेंगे।

(३) कि कानून बनाकर समझौतेको बन्धनकारी रूप दे दिया जायेगा।

ख. यदि उपर्युक्त समझौता न हुआ तो शरहबेशीका सवाल पंच-फैसलेके लिए सौंप दिया जाये। वह पंच-फैसला इन विकल्पोंमें से किसी एकके आधारपर होगा:

(१) एक ही पंच नियुक्त किया जाये जो तुरकौलियाके लिए २० से ४० प्रतिशत तक की और मोतीहारी तथा पीपराके लिए २५ से ४० प्रतिशत तक की कमी करनेके अधिकारके साथ फैसला करेगा। ऐसे पंचका चुनाव बागान-मालिकों और श्री गांधीकी पारस्परिक सहमतिसे किया जायेगा।

(२) तीन पंचोंकी नियुक्ति की जाये, जिनमें से एकको बागान-मालिक तथा दूसरेको श्री गांधी नियुक्त करें और दोनोंके बीच मध्यस्थता करनेके लिए तीसरेकी नियुक्ति ये दोनों मिलकर करें और यदि दोनों किसी एकके नाम-पर सहमत न हो सकें तो मध्यस्थकी नियुक्ति सर एडवर्ड गेट करें। इस प्रकार नियुक्त किये जानेवाले पंच-न्यायालयको यह अधिकार होगा कि वह कतई कोई कमी न करनेसे लेकर सौ फीसदी तक की कमी करनेके आधारपर फैसला दे सकता है। पंचोंको सूचित कर दिया जाये कि बागान-मालिकोंने तुरकौलियामें २० प्रतिशत और मोतीहारी तथा पीपरामें २५ प्रतिशत कमी करनेका और श्री गांधीने काश्तकारोंकी ओरसे ४० प्रतिशतकी कमी स्वीकार करनेका प्रस्ताव रखा था, लेकिन अब ये प्रस्ताव वापस ले लिये गये हैं और पंचोंको, वे जैसा भी सोचें वैसा फैसला देनेकी पूरी सत्ता प्राप्त है।

इन दोनों विकल्पोंके अन्तर्गत भाग 'क' में उल्लिखित (२) और (३) शर्तें प्रभावी रहेंगी।

साथ ही, सभी प्रस्तावोंमें एक यह शर्त शामिल रहेगी कि बन्दोबस्तके कागजातमें दर्ज सभी वर्तमान दायित्वोंको रद कर दिया जायेगा और उसके बदले उसपर शरहबेशी निर्धारित की जायेगी जो दर अन्य लोगोंके साथ ही एवजी माफी [कम्युटेशन] होनेकी सूरतमें उनपर लागू होती और उसमें उतनी कमी कर दी जाये जितनी पारस्परिक सहमतिसे तय हो या पंच लोग निर्धारित करें।

पंच-फैसलेके प्रस्तावोंके अन्तर्गत बागान-मालिक और श्री गांधी दोनों अपने-अपने मामलोंका लिखित बयान पेश करेंगे और दोनोंको एक दूसरेके बयानका जवाब पेश करनेकी छूट रहेगी। कोई भी पक्ष किसी वकीलके जरिये या स्वयं उपस्थित होकर अधिकारपूर्वक अपना प्रतिनिधित्व नहीं कर सकेगा। पंच या पंचगण अपनी इच्छानुसार

कोई भी कागज पेश करनेका आदेश दे सकेंगे, बागान-मालिकों या अन्य लोगोंसे जवाब-तलब कर सकेंगे, और वे लिखित बयान तथा सम्बन्धित पक्षों द्वारा दिये जानेवाले उनके जवाब पेश होनेके बाद एक सप्ताहके अन्दर-अन्दर अपना फैसला दे देंगे।

[अंग्रेजीसे]

सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन, संख्या १८४, पृष्ठ ३६५–६६

परिशिष्ट १०

गाँधीजी और प्रमुख बागान-मालिकों द्वारा हस्ताक्षरित समझौता

सितम्बर २९, १९१७

खण्ड 'क' के अन्तर्गत सर्वश्री हिल, नॉर्मन और इर्विन तथा श्री गांधीके बीच यह समझौता हो गया है कि शरहबेशीमें निम्नलिखित कटौती की जायेगी —

(१) मोतीहारी लिमिटेड और पीपरा संस्थानोंमें २६ प्रतिशत और

(२) तुरकौलिया लिमिटेडमें २० प्रतिशत। शर्तें (२) और (३) लागू रहेंगी।

यह समझौता १३२५ फसली सालके शुरूसे प्रभावी होगा, पिछले वर्षोंका लगान सर्वे-बन्दोबस्तकी दरोंपर ही बना रहेगा। सर्वेके कागजातमें दर्ज नील उत्पादनका वर्तमान दायित्व १३२५ फसली सालके शुरूसे रद कर दिया जाये और उसके बदले शरहबेशी निर्धारित की जाये। इसकी दर वही हो जो अन्य लोगोंके साथ उनके मामलोंमें भी एवजी माफी [कम्युटेशन] मिलनेपर होती, और उसमें अब जितनी कमी करना तय हुआ है उतनी कमी कर दी जायेगी।

मो० क० गांधी

जे० बी० नॉर्मन
प्रबन्धक, पीपरा संस्थान
डब्ल्यू० एस० इर्विन
प्रबन्धक, मोतीहारी लिमिटेड
जे० एल० हिल
प्रबन्धक, तुरकौलिया लिमिटेड

[अंग्रेजीसे]

सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन, संख्या १८६, पृष्ठ ३६७–६८

परिशिष्ट ११

चम्पारन कृषीय जाँच समितिका प्रतिवेदन

अक्तूबर ३, १९१७

अध्याय १

समितिकी रचना और कार्यविधि

समितिकी नियुक्ति और विचार-विषय

चम्पारन कृषिय जाँच समितिकी नियुक्ति बिहार और उड़ीसा सरकारने अपने १० जून, १९१७ के प्रस्ताव सं० १८९०–ग के द्वारा की थी। यह प्रस्ताव यहाँ उद्धृत किया जाता है:

"पिछले पचास सालोंमें विभिन्न अवसरोंपर चम्पारन जिलेमें जमींदारों और किसानोंके सम्बन्धों और नीलकी खेतीसे सम्बन्धित स्थितियोंके कारण खासी परेशानी रही है। जब नीलका उद्योग उन्नत था तव उसकी खेतीकी स्थितियाँ भिन्न थीं। किन्तु जब उसमें गिरावट आई और उसके साथ-साथ अन्नके भाव भी बढ़े तथा परिस्थितियाँ भिन्न हो गईं तो इससे पुनः समन्वय करनेकी आवश्यकता हुई। कुछ इन स्थितियों और कुछ अन्य स्थानीय कारणोंसे, १९०८ में नीलके कुछ संस्थानोंमें उपद्रव हुए। बंगालकी सरकारने इन उपद्रवोंके कारणोंकी जाँचके लिए श्री गॉर्लेको नियुक्त किया और उनकी रिपोर्ट एवं सिफारिशोंपर सर एडवर्ड बेकरकी अध्यक्षतामें स्थानीय सरकारके अधिकारियों और बिहार बागान-मालिक जमींदार संघके प्रतिनिधियोंकी कुछ बैठकोंमें विचार किया गया। इस विचारके फलस्वरूप नीलकी खेतीकी शर्तें इस प्रकार बदल दी गईं कि उनसे किसानोंकी शिकायतें दूर हो जायें; ये शर्तें बिहार बागान-मालिक संघने स्वीकार कर लीं।

"१९१२ में फिर आन्दोलन उठा; किन्तु उसका प्रधान कारण नीलकी खेतीकी शर्तें नहीं, नीलके कुछ कारखानोंकी कार्रवाई थी। ये कारखाने नील बनाना कम कर रहे थे और अस्थायी पट्टेके गाँवोंमें अपने पट्टेदारोंसे नीलकी खेतीके बजाय इकट्ठा रुपया देने या स्थायी पट्टेके गाँवोंमें लगान बढ़ा देनेके सम्बन्धमें करार करा रहे थे। इस सम्बन्धमें स्थानीय अधिकारियों और सरकारको बहुतसी अर्जियाँ दी गईं। इसके साथ ही बेतिया सब-डिवीजनके उत्तरी गाँवोंमें, जहाँ नीलकी खेती कभी की ही नहीं गई थी, अर्जियाँ दी गईं जिनमें भारतीय और यूरोपीय ठेकेदारों द्वारा अबवाब लगाये जाने या गैरकानूनी रूपसे लगान बढ़ाये जानेकी शिकायतें की गई थीं। इन सब दरखास्तोंमें लगान और पट्टेदारीकी शर्तोंका सवाल खास तौरसे उठाया गया था और चूंकि जिलेमें नया बन्दोबस्त, जमींदारों और किसानोंके वर्तमान सम्बन्धोंकी विस्तृत जाँच करके आरम्भ किया जानेवाला था, इसलिए यह ठीक समझा गया कि इन दरखास्तों

पर अखीरी तौरपर बन्दोवस्त अधिकारियोंकी रिपोर्ट मिलनेसे पहले कोई हुक्म न दिया जाये। नया बन्दोवस्त १९१३ के जाड़ेमें शुरू हुआ था। ७ अप्रैल, १९१५ को स्थानीय व्यवस्थापिका परिषद्‌में एक प्रस्ताव प्रस्तुत करके यह प्रार्थना की गई कि किसानोंकी शिकायतोंकी जाँच करने और उन्हें दूर करनेके उपाय सुझानेके लिए सरकारी और गैर-सरकारी सदस्योंकी एक जाँच-समिति नियुक्त की जाये। किन्तु परिषद्‌में बहुमतने इस प्रस्तावका विरोध किया, इनमें परिषद्‌के १६ गैर-सरकारी सदस्योंमें से १२ सदस्य थे। प्रस्ताव इस आधारपर अस्वीकृत कर दिया गया कि 'फिलहाल उक्त समितिको नियुक्त करना आवश्यक नहीं है, क्योंकि बन्दोवस्त-अधिकारी सम्बन्धित प्रश्नोंके निर्णयके लिए जरूरी सभी सामग्रीको जुटानेमें लगे हैं और जिस अतिरिक्त जाँचका प्रस्ताव किया जा रहा है उससे जमींदारों और किसानोंके सम्बन्ध जिनपर बन्दोवस्तकी कार्रवाईका असर पड़ना शुरू हो गया है, और भी कटु हो जायेंगे।

"अब जिलेके उत्तरी भागमें बन्दोवस्तका कार्य पूरा हो चुका है और शेष भागमें पूरा होनेवाला है एवं खेतीकी हालत और जमींदारों तथा किसानोंके सम्बन्धोंके बारेमें बहुतसे प्रमाण इकट्ठे किये जा चुके हैं। बेतिया सब-डिवीजनके पट्टेके उन उत्तरी गाँवोंके, जो पट्टेके हैं और जिनमें नील नहीं बोया जाता, किसानोंकी शिकायतोंकी प्रारम्भिक रिपोर्ट मिल गई है और उसपर कार्रवाई की जा चुकी है; इन गाँवोंमें गैर-कानूनी करोंकी वसूलीकी मनाही कर दी गई है। बेतिया राजके सम्बन्धित गाँवोंके पट्टेकी शर्तोंपर भी पुनर्विचार करनेका आदेश दे दिया गया है। जहाँतक जिलेके दूसरे भागोंके किसानोंकी शिकायतोंका सम्बन्ध है, बन्दोवस्त-अधिकारीकी अन्तिम रिपोर्ट अभी नहीं मिली है, किन्तु अभी हालमें वहाँ जो घटनाएँ हुई हैं उनसे जमींदारों और किसानोंके सम्बन्धोंका समस्त प्रश्न मुख्यतः किसानोंसे नीलकी खेती बन्द करनेके एवजमें मुआवजा या बेशी लगान लेनेके करार करवानेका प्रश्न, फिर प्रमुखरूपसे सामने आ गया है। इन स्थितियोंमें और विभिन्न क्षेत्रोंमें से प्राप्त इस आशयके आवेदनोंको ध्यानमें रखते हुए कि प्रस्तुत समस्याओंके हलमें स्थानीय सरकारको सरकारी और गैर-सरकारी सदस्योंकी एक संयुक्त जाँच-समितिकी जाँचसे महत्त्वपूर्ण सहायता मिल सकती है, अतः अब उसकी नियुक्तिका समय आ गया है, सपरिषद् लेफ्टिनेंट गवर्नरने यह निर्णय किया है कि बन्दोवस्तकी कार्रवाईकी अन्तिम रिपोर्टकी प्रतीक्षा न की जाये और यह प्रश्न एक जाँच-समितिको सौंप दिया जाये। समितिमें समस्त सम्बन्धित पक्षोंका प्रतिनिधित्व होगा।

"इस निर्णयके अनुसार भारत सरकारकी स्वीकृति लेकर निम्न समिति नियुक्त कर दी गई है:

अध्यक्ष

एफ० जी० स्लाई, सी० एस० आई०, कमिश्नर, मध्य प्रदेश।

सदस्य

माननीय श्री एल० सी० ऐडमी, आई० सी० एस०, बिहार और उड़ीसाके कानूनी मामलातके परामर्शदाता और व्यवस्थापक।

माननीय राजा हरिहरप्रसाद नारायणसिंह,[1] बिहार और उड़ीसा व्यवस्थापिका परिषद्के सदस्य।

माननीय श्री डी. जे० रीड, बिहार और उड़ीसा व्यवस्थापिका परिषद्के सदस्य।

जी० रेनी महोदय, आई० सी० एस०, भारत सरकारके राजस्व विभागके उपसचिव।

मो० क० गांधी।

मन्त्री

ई० एल० टैनर आई० सी० एस०, दक्षिण बिहारके बन्दोबस्त-अधिकारी।

"समितिके कर्त्तव्य इस प्रकार होंगे:

(१) चम्पारन जिलेके जमींदारों और किसानोंके सम्बन्धोंकी जाँच करना, इसमें नीलकी खेती और नील तैयार करनेसे सम्बन्धित समस्त विवाद आ जाता है;

(२) इन विषयोंमें प्राप्त प्रमाणोंकी जाँच करना और स्थानीय रूपसे और अन्यथा, जैसा समिति उचित समझे, आगे जाँच करके अन्य प्रमाणोंको इकट्ठा करना और

(३) अपने निष्कर्षोंसे सरकारको अवगत करना और साथ ही जिन अनुचित प्रथाओं एवं शिकायतोंका उसे पता चले उनको दूर करनेके उपाय सुझाना।

"सपरिषद् लेफ्टिनेंट गवर्नर चाहते हैं कि जाँच-समिति तथ्योंका पता लगानेके लिए जो कार्यविधि ठीक समझे उसे अपनानेके लिए स्वतन्त्र रहे।

"समितिकी बैठक १५ जुलाईके आसपास होगी और अपना कार्य तीन महीनेमें पूरा कर लेगी, ऐसी आशा है।

समितिकी कार्यप्रणाली

२. जाँच-समितिने प्रान्तके अखबारोंमें एक सूचना छपवाई थी और वह मोतीहारीमें कलक्टरकी कचहरी और बेतियाकी तहसीलमें भी चस्पाँ की गई थी। इसमें कहा गया है कि जिन व्यक्तियों, संघों और सार्वजनिक संस्थाओंको लिखित गवाही देनी हो, वे अपनी गवाहियाँ समितिके मन्त्रीको भेज दें। उसमें यह भी कहा गया था कि समिति की बैठकें बेतिया, मोतीहारी और अन्य केन्द्रोंमें, जहाँ बैठकें करना आवश्यक समझा जाये, १५ जुलाईसे आरम्भ होंगी।

इस सूचनापर बिहार बागान-मालिक संघ (प्लांटर्स एसोसिएशन) एक नीलकी कोठीके मैनेजर और एक अन्य जमींदारीके मैनेजर; पच्चीस किसानों, बेतिया राजके मैनेजर श्री व्हिटी, सी० आई० ई०, आई० सी० एस०, उत्तरी बिहारके बन्दोबस्त-अधिकारी श्री स्वीनी, आई० सी० एस०, तिरहुतके कमिश्नर श्री लुई, आई० सी० एस०, सब-डिविजन ऑफीसर, बेतिया, श्री एल० एफ० मॉर्सहैड, आई० सी० एस० और बेतियाके

१. माननीय राजा हरिहरप्रसाद नारायणसिंहने बीमार हो जानेके कारण समितिकी बैठक होनेसे पहले ही समितिकी सदस्यतासे इस्तीफा दे दिया था और उनके स्थानपर स्थानीय सरकारने अपने ९ जुलाई १९१७के प्रस्ताव सं० २३९९-ग द्वारा बनैलीके राजा कीर्त्यानन्दसिंह, सदस्य, व्यवस्थापिका परिषद्, बिहार और उड़ीसाको, समितिका सदस्य नियुक्त कर दिया था।

भूतपूर्व सब-डिवीजन ऑफीसर श्री ई० एच० जॉन्स्टन, आई० सी० एस० के लिखित वक्तव्य प्राप्त हुए। बिहार जमींदार संघ [लैंड होल्डर्स एसोसिएशन] को खास तौरसे अपने विचारोंका ज्ञापन देनेके लिए निमन्त्रित किया गया; किन्तु उसका उत्तर आया कि उसके पास चम्पारनकी कृषि-सम्बन्धी अवस्थाओंके बारेमें सामग्री और तथ्य नहीं हैं; इसलिए वह कोई लिखित मत प्रस्तुत नहीं कर सकता।

समितिकी प्रारम्भिक बैठक अपनी कार्यविधि और जांचका क्षेत्र निश्चित करनेके लिए ११ जुलाईको रांचीमें हुई और उसकी खुली बैठकें मंगलवार १७ जुलाईको बेतियामें आरम्भ हुई थी। बेतिया और मोतीहारीमें आठ बैठकें हुई जिनमें उन्नीस व्यक्तियोंकी गवाहियाँ दर्ज की गई। इनमें से चार सरकारी अधिकारी (बन्दोबस्त-अधिकारी, बेतियाका सब-डिवीजन अधिकारी, चम्पारन जिलेका कलक्टर और बेतिया राजका मैनेजर), किसानोंके तीन प्रतिनिधि, बिहार बागान-मालिक संघका प्रतिनिधि और बारह संस्थानोंके मैनेजर थे। हमने आठ संस्थानोंमें स्थानीय जाँच भी की जिसमें मैनेजरोंसे विस्तृत पूछताछ की गई, सम्बन्धित नीलकी कोठियोंके रजिस्टर और हिसाब-किताब देखे गये, उन किसानोंसे पूछाताछ की गई जिन्होंने लिखित वक्तव्य दिये थे और किसानोंके बड़े-बड़े समुदायोंसे, जो हमसे मिलनेके लिए इकट्ठे हुए थे, बहुत-सी बातें पूछी गई। स्थानीय सरकारने अपने सरकारी कागजात उपलब्ध करके हमारी बहुत सहायता की और संस्थानोंके मैनेजरोंने हमें पूरी जानकारी दी एवं अपने कागजात और रजिस्टर जांचनेको सुविधाएँ दीं; समिति इनकी इस जबर्दस्त सहायताके लिए कृतज्ञता ज्ञापित करना चाहती है।

अध्याय २

नील-सम्बन्धी शिकायतें

प्रारम्भिक — जमींदार

३. सरकारने हमें चम्पारन जिलेके इतिहास, आर्थिक स्थिति और पिछले किसान-जमींदार विवादोंसे सम्बन्धित पहलेके कागज उपलब्ध कर दिये हैं। हमें जाँच करनेके लिए इतना समय तो नहीं मिला कि हम इस जानकारीमें कोई उपयोगी तथ्य जोड़नेमें समर्थ हो सकते; इसलिए हम इस रिपोर्टमें अबतक उपलब्ध समस्त सामग्रीकी पुनरावृत्ति करना नहीं चाहते। केवल कुछ ऐसे मोटे-मोटे तथ्य ही देना चाहते हैं जिनका हमारी वर्तमान जाँचसे सीधा सम्बन्ध है। ऐतिहासिक कारणोंसे यह जिला बड़ी-बड़ी जमींदारियोंका जिला है और अब भी इसका तीन चौथाई भाग इन तीन बड़े मालिकोंके अधिकारमें है — बेतिया राज जो १८९८ से सरकारी [कोर्ट आफ वार्डके] प्रबन्धमें है, रामनगरकी जमींदारी, यह भी सरकारी प्रबन्धमें ली जा चुकी है और मधुबनकी जमींदारी। बेतिया और रामनगरकी जमींदारियोंमें ठेकेदारोंको पट्टेपर गाँव

देनेकी प्रथाका, बड़ी हदतक सदासे अनुगमन किया जा रहा है। इनमें सीधे अपने प्रबन्धके गाँवों और ठेकेदारोंको पट्टेपर दिये गये गाँवोंकी संख्या इस प्रकार है:

जमींदारीका नाम	सीधे अपने प्रबन्धमें	स्थायी पट्टेपर	अस्थायी पट्टोंपर और अन्य पट्टोंपर	कुलयोग
१	२	३	४	५
बेतिया	२५२	५०३	९६४	१,७१९×
रामनगर	३१	१०२	३६८	५०१+

ठेकेदारकी यह पद्धति मधुबन जमींदारी विभागमें इतनी प्रचलित नहीं है। इस जमींदारीमें १६३ गाँव हैं जिनमें से कुछ पट्टेपर दिये हुए हैं।

जिलेमें इन ठेकेदारोंमें सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण वर्ग यूरोपीय नील उत्पादकोंका ही है। नीलकी कुछ पुरानी कोठियों (अर्थात् तुरकौलिया, पीपरा, मोतीहारी और राजपुर) को उन्नीसवीं शताब्दीके पहले दशकसे बेतिया राजके कुछ गाँवोंके पट्टे मिले हुए हैं और वे तबसे लगातार उनके नाम चले आते हैं; अन्य कोठियाँ बादमें स्थापित हुई हैं। उत्तरी-पश्चिमी जिलेमें भी कुछ यूरोपीय ठेकेदार हैं जिन्होंने नीलकी खेती कभी नहीं की या दो साल पहले तक नहीं की थी। १८९२–९९ के बन्दोबस्तसे यह पता चला था कि यूरोपीय ठेकेदार जिलेके ४६ प्रतिशत भागमें जमींदारी अधिकारोंका उपभोग कर रहे हैं और प्रतीत होता है कि यह क्षेत्र अबतक सम्भवतः कुछ बढ़ गया है। मोटे तौरपर यह कहा जा सकता है कि जिलेका लगभग आधा भाग यूरोपीय ठेकेदारोंको और आधेसे कुछ ही अधिक भाग अन्य ठेकेदारोंको पट्टेपर दे दिया गया है। बेतिया और रामनगर दोनों जमींदारियोंने कुछको स्थायी पट्टे दिये हुए हैं जो मुकर्ररी कहलाते हैं। बेतियामें मुकर्ररी पट्टे १८८८ में आरम्भ हुए थे, ये एक बड़े कानूनी करारके अंग थे जिसके अनुसार इंग्लैंडमें कर्ज लिया गया था और उस कर्जसे राज्यके कर्जे इकट्ठे किये गये और उनका ब्याज घटाया गया था। इन पट्टोंकी शर्तोंके अनुसार पट्टेदारकी स्थिति प्रायः जमींदारकी जैसी है। उनका लगान स्थायी रूपसे निश्चित है। हम यह पता नहीं लगा सके हैं कि रामनगरकी जमींदारीमें मुकर्ररी पट्टे किन स्थितियोंमें दिये गये थे; किन्तु इसमें बहुत सन्देह प्रतीत नहीं होता कि बेतियाकी तरह रामनगरमें भी वे मूलतः मालिककी आर्थिक परेशानीके कारण ही दिये गये थे।

नीलका क्षेत्र और खेतीके तरीके

४. यहाँ १८९२–९९के बन्दोबस्तके समय नीलका क्षेत्र ९३,००० एकड़ था जो कुल खेतीके क्षेत्रका ६.६३ प्रतिशत होता है। किन्तु कृषिकी अर्थ-व्यवस्थामें उसका महत्त्व इस प्रतिशतसे जितना प्रतीत होता है वह वस्तुतः उसकी अपेक्षा बहुत अधिक था।

×. ये आँकड़े बेतिया राज्यके मैनेजरने दिये हैं। बन्दोबस्त-अधिकारीकी रिपोर्टके अनुसार राज्यमें कुल गाँव १,६३० हैं। स्पष्टतः गाँवोंकी इकाईमें कुछ अन्तर है।

+. ये आँकड़े बन्दोबस्त-अधिकारीसे प्राप्त हुए हैं।

इस क्षेत्रके एक तिहाई भागमें अपनी जमीनमें ये नीलकी कोठीवाले खुद खेती करते थे और दो-तिहाईमें उनके पट्टेदार किसान खेती करते थे। कृत्रिम नीलकी स्पर्धाके कारण नीलकी खेतीका यह रकबा जो १९०७ में ५२,००० एकड़ था, १९१४ में घटकर ८,१०० एकड़ रह गया। किन्तु युद्धकालमें ऊँचे भावोंसे उत्तेजन पाकर यह क्षेत्र १९१६ में फिर बढ़कर २१,९०० एकड़ हो गया। नीलके कोठीदार अपनी मिल्कियतकी या अपने पट्टेकी जिन जमीनोंमें खुद नीलकी खती करते हैं (जिसे सामान्यतः जिरात काश्त कहा जाता है) उसकी ओर विशेष ध्यान देनेकी आवश्यकता नहीं है। किन्तु जिस शर्तपर किसान इन कोठीदारोंके लिए अबतक नीलकी खेती करते रहे हैं, उसके कारण अनेक वार झगड़े हुए हैं और यद्यपि हम इन झगड़ोंके इतिहासपर विचार करना आवश्यक नहीं समझते; किन्तु इस प्रथाका कुछ विवरण दिये बिना हम वर्तमान असन्तोषके कारणोंको भलीभाँति स्पष्ट नहीं कर सकते। इसके मुख्य तत्त्व पिछले १०० वर्षोंमें वदले नहीं जान पड़ते। इस प्रणालीके अन्तर्गत पट्टेदार अपनी जमीनके एक भागमें कोठीदारके लिए नीलकी खेती करना स्वीकार करता है। ऐसा जान पड़ता है कि यह क्षेत्र जिसमें वह यह खेती करता था, कभी बीघेमें पाँच कट्ठे (चौथाई) रहता था; किन्तु १८६७ से पहले ही यह घटाकर चार कट्ठे कर दिया गया था। १८६८ में यह तीन कट्ठे किया गया और इसीसे इस प्रथाका नाम तिन-कठिया हो गया। १९१० में नील बागान-मालिक संघने एक विनियम बनाकर इस क्षेत्रका बीघे पीछे अनुपात दो कट्ठे कर दिया; किन्तु तिन-कठिया नाम इस प्रथासे चिपका ही रहा। जहाँ इस प्रथाके अन्तर्गत नीलकी खेती की जाती है वहाँ जमींदार और किसानके बीच समझौतेकी शर्तें सामान्यतः एक दस्तावेजमें दी जाती हैं जो साटा कहा जाता है। इसमें किसान यह लिखकर देता है कि उसे एक निश्चित रकम पेशगी मिली और वह हर साल एक निश्चित रकबेमें नीलकी खेती करनका वचन देता है। वह चुने हुए खेतोंकी नीलकी वुआईके लिए तैयारी करे और फसलकी निराई और पक जानेपर कटाई अपने खर्चसे करता है; बीज कोठीदार देता है; उसकी वुआई कोठीदार और किसान दोनों करते हैं। खेतसे कोठीतक हर फसलकी ढुलाईका खर्च कोठी देती है। एक बीघेमें उत्पन्न नीलका कितना दाम दिया जाना है, यह साटेमें नियत होता है और वह वास्तविक उपजमें कमी या बेशीके साथ कम या ज्यादा नहीं होता। यदि ऐसे कारणोंसे, जिनके लिए किसान जिम्मेदार नहीं होता, फसल मारी जाती है तो उसका दाम केवल आधा दिया जाता है; किन्तु शर्त यह होती है कि किसानको उसी फसलमें दूसरी जिंस बोनेके लिए समय रहते नीलके खेतको जोत लेने दिया जाये। जुताईके वक्त शुरूमें किसानको नीलके दामका कुछ हिस्सा बिना ब्याज पेशगी दे दिया जाता है; किन्तु वह प्रायः उसके लगान खाते जमा कर लिया जाता है और नकद नहीं दिया जाता। साटेमें एक दण्डात्मक धारा भी होती है जिसमें वह हर्जाना जो किसानको यह करार पूरा न कर सकने, अर्थात् नीलके लिए निर्धारित जमीनमें कोई दूसरी फसल वो देनेपर बागान-मालिकको देना पड़ेगा, निर्धारित कर दिया जाता है।

ऐसा जान पड़ता है कि चम्पारनमें अभी कुछ समय पहले तक 'खुश्की' प्रथा नहीं थी जिसके अन्तर्गत किसान कोठीदारके लिए नील बोता तो है; किन्तु उसकी

देख-रेखमें नहीं वोता और अपनी उपजको तोलसे या मूल्यांकनके किसी अन्य तरीकेसे वेचता है। इसपर हम वादके अनुच्छेदमें अधिक विस्तारसे विचार करेंगे।

नीलका मूल्य

५. किसानोंको इस प्रकार पैदा किय गये नीलका जो मूल्य दिया जाता है वह समय-समयपर वदलता रहा है। मालूम हुआ है कि झगड़े-फसादके दिनोंके वाद १८६९ में नीलकी कोठियोंने प्रति एकड़ नीलका दाम ६ रुपये ८ आने से बढ़ाकर ९ रु० कर दिया था और दूसरी वार फिर फ़साद होनेपर १८७७ में उसे बढ़ाकर ११ रुपये ५ आने कर दिया था। उसी साल पहले-पहल यह भी साफ-साफ तय किया गया कि जिस जमीनमें नील वोया जायेगा उसका लगान माफ कर दिया जायेगा। पहले यह प्रथा नहीं थी। १८९७में विहार नील वागान-मालिक संघने अपनी मर्जीसे यह दर वढ़ाकर १२ रुपये प्रति एकड़ कर दी। अन्तमें सन् १९१०में श्री गॉर्लेकी जाँचके वाद भाव वढ़ाकर १३ रुपये प्रति एकड़ कर दिया गया और अव भी यही भाव है। यदि नीलकी जमीनके लगानकी माफीको गिनें तो इस समय किसानको लगभग १५ रु० ८ आ० प्रति एकड़का दाम मिलता है। किसानोंकी हमसे यह आम शिकायत रही कि इन दामोंके कारण नीलकी खेतीकी अपेक्षा उन्हें वर्तमान भावोंसे देशी फसलोंसे अधिक लाभ हो सकता है, नीलकी खेती करनेके कारण उन्हें खासी आर्थिक हानि उठानी पड़ती है। कुछ खास नील उत्पादकोंने यह वात स्वीकार की है और हमारा खयाल है कि किसीका जिससे कोई वड़ा मतभेद भी नहीं है कि नीलसे किसानको देशी फसलोंकी अपेक्षा रुपयेके रूपमें प्रत्यक्ष प्रतिफल कम ही मिलता है; किन्तु उससे उसे कुछ प्रत्यक्ष लाभ होनेकी वात जोर देकर कही जाती है। जैसे अदलती-वदलती फसल लेनेके लिए नीलकी खेतीका महत्त्व है और फिर फसलके लिए जुताई शुरू होनेसे पूर्व किसानको विना व्याज पेशगी मिल जाती है जो फसलके आधे मूल्यके वरावर होती है। अन्तमें इस वातपर भी जोर दिया जाता है कि किसानोंको कम लगान-पर जो जमीनें मिली हुई हैं उसका सीधा सम्वन्ध नीलकी खेतीसे है और इसलिए उचित भावोंकी वात करते समय इसका भी ध्यान रखा जाना चाहिए। नीलकी खेतीकी तिन-कठिया प्रथामें किसानोंकी आर्थिक स्थिति कैसी है इसका हमारे लिए अनुमान लगानेका प्रयत्न करना कठिन है और यह अनावश्यक भी है, क्योंकि हमें विश्वास है कि अनेक कारणोंसे यह प्रथा मूलतः सदोष है और इसलिए वन्द कर दी जानी चाहिए।

नीलकी खेतीकी प्रथाके दोष

६. इस प्रथासे सम्वन्धित ऐसी कई वातें हैं जो हमारी रायमें इससे उत्पन्न निकृष्ट परिणामोंके लिए प्रत्यक्ष रूपसे उत्तरदाई हैं। पहली वात यह है कि किसानको जो दाम दिया जाता है वह नियत होता है और कई सालों तक अपरिवर्तित रहता है। हम जानते हैं कि विहार नील वागान-मालिक संघ द्वारा नियत किये हुए दाम वहुत-ही कम हैं। किन्तु संघकी स्वीकृति मिलते ही वह निर्ख अधिकृत मान लिया जाता है और सव कोठियाँ उसीके अनुसार चलती हैं। पचास वरसोंमें किसानोंको दिये जाने-

वाले दाम दुगुने किये जा चुके हैं ताकि नीलका जो दाम दिया जाता है उसका उसी अवधिमें अन्य भावोंके स्तरमें जो आम वृद्धि हुई है उससे सामंजस्य किया जा सके। किन्तु नीलके दाम प्रत्येक कालमें नियत रहने और आम भावोंमें लगातार वृद्धि होनेका परिणाम यह होता है कि यदि किसी कालके आरम्भमें दाम उचित थे तो वे उसके अन्तमें बहुत कम हो गये। यह बात स्वतः असन्तोष उत्पन्न करती है और हम देखते हैं कि १८९७ में नीलके दाममें जो वृद्धि की गई थी उसके सिवा हर बार नीलके दाम झगड़े और असन्तोषके बाद ही बढ़ाये गये थे। अतः इस प्रथाके विरुद्ध एक उचित आपत्ति यह है कि नीलके दाम उपद्रव और आन्दोलन किये बिना कभी बढ़ाये ही नहीं गये।

दूसरी बात यह है कि दाम रकबेपर नियत किये जाते हैं और वे फसलकी पैदावारके अनुसार नहीं बदलते। इससे स्पष्टतः दो दोष पैदा होते हैं। नीलके कोठीदार नील बोनेके लिए स्वयं खेत छाँटते हैं। इस प्रथाके इस पक्षपर प्रायः आपत्ति की गई है। निश्चय ही इसका दुरुपयोग सम्भव है, अर्थात् यह कहा जाता है कि गाँवके बिलकुल आसपासकी जमीनें, जो बहुत खतीली और सर्वोत्तम होती हैं, प्रायः नील बोनेके लिए छाँटी जाती हैं। किन्तु जमीनके चुनावके बारेमें किये गये इस आरोपका असली तत्त्व यह नहीं है कि इसका दुरुपयोग किया जायेगा, बल्कि यह है कि यह प्रथा ही बुरी है। जबतक नील उत्पादकको अच्छी या बुरी फसलका दाम एक ही देना पड़ता है, तबतक वह नील बोनेके लिए किसानकी जमीनमें से अधिक अच्छी जमीन ही छाँटेगा। इस तरह जमीन छाँटनेके विरुद्ध किसान रोष प्रकट करता है — इसलिए नहीं कि उसकी सर्वोत्तम जमीन छाँटी जाती है, बल्कि इसलिए कि उसकी काम करनेकी स्वतन्त्रतामें हस्तक्षेप होता है। हमारा खयाल है कि नीलकी खेतीकी अप्रियताका मुख्य कारण यही है; इस सम्बन्धमें यह प्रथा मूलतः सदोष है।

प्रति एकड़ एक नियत दाम देनेका प्रत्यक्ष परिणाम यह होता है कि इस प्रथामें एक दूसरा विशेष दोष उत्पन्न हो जाता है। यह विशिष्ट दोष भी नीलकी खेतीकी अप्रियताका उतना ही बड़ा कारण है। यह विशिष्ट दोष है कोठीदारके मातहत कर्मचारियों द्वारा नीलकी खेतीकी कड़ी देखरेख। निस्सन्देह इस देखरेखसे तमाम छोटे-मोटे जुल्मोंकी गुंजाइश पैदा हो जाती है और किसान खेतीके विभिन्न कार्योंको अपनी ज्यादासे-ज्यादा फुरसतके समयके बदले कोठीदारके कर्मचारीकी जब मर्जी हो जाये तभी करनेके लिए मजबूर किये जानेपर रोष प्रकट करते हैं। इस प्रथासे कोठीदारके कारिन्दोंको उन किसानोंपर अत्याचार करनेका मौका मिलता रहता है जिनसे उन्हें द्वेष हो सकता है या जिनसे वे अपने अनुग्रहकी कीमत वसूल करना चाह सकते हैं। कोई मैनेजर अच्छा हो तो वह अपने अधीनस्थ कर्मचारियोंके जुल्मोंको बहुत सीमित कर सकता है; किन्तु अच्छेसे-अच्छा मैनेजर भी अपने अल्प वेतन-भोगी अधीनस्थ कर्मचारियोंको सत्ता हाथमें आनेपर अत्याचार करनेसे बिलकुल नहीं रोक सकता। जबतक दाम रकबेपर दिये जाते हैं और पैदावारके मुताबिक घटते-बढ़ते नहीं, तबतक कड़ी देखरेख आवश्यक होगी। इस दृष्टिसे भी हम समझते हैं, यह प्रथा मूलतः बुरी है।

तिन-कठिया प्रथाके विरुद्ध एक दूसरी आपत्ति यह है कि नीलकी खेतीसे बाध्यताकी शर्त जुड़ी हुई है। हमें विश्वास है कि पिछले पचास वर्षोंसे तिन-कठिया प्रथाके

अनुसार नीलकी खेतीको किसान नापसन्द करते रहे हैं और सदा उससे मुक्त होनेके लिए तैयार रहे हैं। बाध्यताकी इस शर्तका कोई कानूनी आधार है या नहीं, यह निर्णय करना कानूनी पंच-न्यायालयका काम है; किन्तु यह लोगोंमें अप्रिय है, यह इसी बातसे सिद्ध हो जाता है कि इन बरसोंमें बहुतसे किसानोंने रुपया देकर नीलकी खेतीसे अपना पिण्ड छुड़ाया है। जिलेमें भविष्यमें शान्ति रहे, इसके लिए यह आवश्यक है कि जमींदार और किसानके सम्बन्ध कानूनमें निश्चित रूपसे बता दिये जायें और नीलकी खेती बाध्यताकी भावना या किसी परम्परागत अधिकारसे जुड़ी हुई न रहे।

तिन-कठिया प्रथाको रद करनेका सुझाव

७. इसलिए हम देखते हैं कि तिन-कठिया प्रथा किसानोंमें अप्रिय है। वे इसे लाभप्रद नहीं समझते; उसमें कुछ मूलभूत दोष हैं और वह आधुनिक अवस्थाओंमें जमींदारों और किसानोंके जो सम्बन्ध होने चाहिए उनसे मेल नहीं खाती। इसलिए हम सिफारिश करते हैं कि चम्पारनमें नीलकी खेती करनेकी यह प्रथा बिलकुल उठा दी जाये और इस किस्मका फेरफार करनेके लिए कानून बनाया जाये। इसका असर उन पट्टोंपर पड़ेगा जिनमें अधिकार-सूची (रेकर्ड ऑफ राइट्स) में पट्टेदारीकी अनिवार्य शर्तके तौरपर नील बोना दर्ज है; इस मुद्देके सम्बन्धमें एक सिफारिश बादमें अलग अनुच्छेदमें की जायेगी।

नीलकी खेतीकी भावी प्रथा

८. निस्सन्देह हम यह नहीं चाहते कि नील बोना बन्द कर दिया जाये, बल्कि यह चाहते हैं कि वह न्यायपूर्ण और उचित शर्तोंपर बोया जाये। इस समय भी कुछ कोठीदार ऐच्छिक प्रथा (खुश्की) के अन्तर्गत नीलकी खेती करा रहे हैं और हमारा खयाल है कि भविष्यमें केवल यही प्रथा जारी रहने दी जानी चाहिए। ऐच्छिक प्रथाकी मुख्य विशेषताएँ ये होनी चाहिए :

(१) किसान करार करने या न करनेके लिए बिलकुल स्वतन्त्र होने चाहिए।
(२) नील बोनेके लिए कोई खेत चुनना पूर्णतः किसानोंकी मर्जीपर छोड़ दिया जाना चाहिए।
(३) नीलके जो दाम दिये जायें वे ऐच्छिक समझौतेसे, पूर्ण व्यापारिक आधारपर तय किये जाने चाहिए।
(४) दाम उपजकी तोलपर नियत किये जाने चाहिए, किन्तु यह तोल दोनों पक्ष राजी हों तो, वस्तुतः तोलनेके बजाय चुने हुए पंच द्वारा कूतकर तय कराई जा सकती है।
(५) करारकी अवधिको कम रखनेपर जोर होना चाहिए और यह अवधि तीन बरससे ज्यादा की न हो।

हम इस पिछली शर्तको महत्त्वपूर्ण मानते हैं। किसानोंके हितकी दृष्टिसे हम नहीं मानते कि उनको अपने जमींदारोंके साथ बरसों पहले नियत किये दामोंपर किसी फसल विशेषको उगानेके लिए बँध जाने दिया जाये। यह स्पष्ट है कि हम जिस

वाध्यताकी वातको समाप्त कर देना चाहते हैं, लम्वे करारोंसे उसे कायम रखनेमें सहायता मिलेगी।

हम सामान्यतः किसी वाहरी सत्ता द्वारा फसल विशेषके लिए न्यूनतम दामोंके नियत किये जानेके विरुद्ध हैं, क्योंकि ऐसे दामोंके अधिकतम दामोंके रूपमें परिणत हो जानेकी प्रवृत्ति वहुत प्रवल होती है। किन्तु नील उद्योगके पिछले इतिहासको देखते हुए, हमारा विश्वास है कि पहले कुछ वर्षोंमें किसी तरहका संरक्षण देना जरूरी होगा। इसलिए हम सिफारिश करते हैं कि विहार नील वागान-मालिक संघ नीलके न्यूनतम भाव डिवीजन कमिश्नरकी मंजूरीसे वाँधे और यह सावधानी तवतक जारी रखी जाये जवतक स्थानीय सरकारको उसे अनावश्यक हो जानेका विश्वास न हो जाये।

नीलकी खेतीसे मुक्ति

९. पिछली शताव्दीके अन्तिम दशकमें जर्मनीमें कृत्रिम नील वनने लगा और वहाँकी पेढ़ियाँ कुदरती रंगकी अपेक्षा उसे सस्ता वेचने लगीं। इसका विहारके नील-उद्योगपर गहरा असर हुआ। कुदरती रंगका दाम लगातार घटता गया और यद्यपि उत्पादन-व्यय कम करने और उत्पादन वढ़ानेके प्रयत्न किये गये (जैसे जावासे नीलका अच्छा पौधा लाया गया जिससे प्रति एकड़ ज्यादा रंग निकलता था) किन्तु उनमें जो सफलता मिली वह नगण्य थी। एक-एक करके नीलकी कोठियाँ कृत्रिम रंगसे स्पर्धा कर सकनेकी आशा त्यागती गईं और अन्य उपायोंकी ओर ध्यान देने लगीं जिनमें किसानोंको नीलकी खेतीसे मुक्त करनेका किसी-न-किसी रूपमें हर्जाना लेना मुख्य था।

जिलेके उत्तरी भागमें दो कोठियोंने नीलकी खेती करानेके वजाय नियत मात्रामें धान लेना आरम्भ किया; किन्तु यह प्रथा सरकारने पसन्द नहीं की, इसलिए वह अभी हालमें छोड़ दी गई है। कुछ अन्य कोठियोंने नीलके वजाय चीनी या जई लेनेका तरीका अपनाया। हमें वताया गया है कि वाड़ा कोठीने कुछ किसानोंसे तीन कट्ठे नीलके वजाय डेढ़ कट्ठे चीनीके साटे किये हैं। मलहिया, वैरिया और कुरिया कोठियाँ नीलके वजाय सीमित मात्रामें जईकी खेती करवाती हैं। १९०८के अन्तमें उपद्रवोंके वाद सरकारके निर्देशसे विहार नील वागान-मालिक संघने सन् १९१० में एक विनियम वनाया था जिसमें साटेके अन्तर्गत नीलके सिवा कोई दूसरी फसल वुवानेकी साफ मनाही की गई है। ये उपद्रव नीलकी चार कोठियोंमें हुए थे जिनमें से तीन मलहिया, वैरिया और कुरियाकी कोठियाँ थीं। यह नियम जिन कोठियोंकी प्रथाको ध्यानमें रखकर खास-तौरसे वनाया गया था वे उसका उल्लंघन करती रहीं; हमारी समझमें यह खेदजनक है।

१९११में नीलकी खेती वन्द करनेका आम आन्दोलन शुरू हुआ जो १९१४में महायुद्धके आरम्भ तक अवाधित रूपसे चलता रहा। उस समय नीलके भाव वहुत वढ़ जानेसे नील वनानेमें फिर लाभ होने लग गया था। सामान्यतः परिवर्तनके दो अलग-अलग तरीके अपनाये गये। कुछ किसानोंने लगान वढ़ानेके करार कर दिये। यह तरीका साधारणतः शरहवेशी कहा जाता था। कुछ किसानोंने या तो एक मुश्त नकद रुपया देकर नीलकी खतीसे मुक्ति पाई या उसके लिए उतनी रकमका तमस्सुक लिख दिया

जिसका व्याज १२ प्रतिशत था। यह तरीका तावान या तामाम कहा जाता है। इन दोनों ही वर्गोंके किसानोंको यह वचन दिया गया कि शरहवेशी या तावान दे चुकनेपर कोठीदार या उनके उत्तराधिकारी भविष्यमें तिन-कठियाकी शर्तोंके अन्तर्गत उनको नीलकी खेती करनेके लिए न कहेंगे।

शरहवशी केवल पाँच कोठियोंने ली है, तुरकौलिया, मोतीहारी, पीपरा, जलहा और सिरनी। इनमें से जलहा और सिरनी तुरकौलिया की छोटी शाखा कोठियाँ हैं जो पिछले कुछ वरसोंमें वेच दी गई थीं। इनमें भी केवल उन गाँवोंमें ही शरहवेशी ली गई है जिनमें कोठीदारोंको वेतिया राजसे मुकर्ररी पट्टा मिला हुआ है और उन वहुत थोड़ेसे गाँवोंमें ली गई है जिनमें उनको मालिकाना हक हासिल हैं। जिन गाँवोंमें इन कोठीदारोंको अस्थायी पट्टा मिला हुआ है, उनमें उन्होंने तावान लिया है। इसमें केवल पीपरा ही अपवाद है। इनके अलावा दूसरी नौ कोठियोंने भी तावान लिया है जिनमें राजपुर, वाड़ा, वैरिया और भेलवा सवसे अधिक महत्त्वपूर्ण हैं। जिस दरसे शरहवेशी ली गई है, उसमें अलग-अलग कोठियोंके गाँवोंमें वहुत अन्तर है; किन्तु औसत वृद्धि पहले लगानसे ५० से ६० प्रतिशत तक है। निम्न तालिकासे प्रकट होता है कि चार कोठियोंके गाँवोंमें लगान औसतन कितना वढ़ाया गया और लगानकी पहली रकमसे उसका प्रतिशत अनुपात क्या है :

क्रम संख्या	कोठीका नाम	प्रति एकड़ लगानमें वृद्धि	पहले लगानसे प्रतिशत अनुपात
१	२	३	४
		रु० आ० पा०	
१	तुरकौलिया ...	० – १५ – ०	५० प्रतिशत
२	जलहा ...	१ – ३ – ०	५५ ,,
३	मोतीहारी ...	१ – ६ – ६	६० ,,
४	पीपरा ...	० – १५ – ०	७५ ,,

पीपरामें जहाँ यह लगान असाधारण रूपसे कम था, प्रतिशत अनुपात सवसे अधिक है। तावानकी दरें भी अलग-अलग थीं और वह प्रायः किसानकी जितनी जमीनमें नील वोया जाता था उसीपर कूता गया था, अर्थात् वीघेमें तीन कट्ठेपर। अक्सर यह उस रकमके आधारपर नियत किया गया था जो नीलकी कोठीको किसानोंसे करार तोड़नेपर नीलके हर्जानेके रूपमें मुकदमा चलानेपर मिला था। तावानकी रकम ६६ रुपयेसे २० रुपये प्रति एकड़ तक थी और सम्भवतः उसका औसत प्रति एकड़ ५० और ६० रुपयेके वीचमें था और किसानकी कुल जमीनपर ७ रु० ८ आने से ९ रु० तक प्रति एकड़के वरावर होगा।

इस परिवर्तनका जिन कोठियोंपर प्रभाव पड़ा, उनमें पहले तिन-कठियाकी शर्तोंके अन्तर्गत ५०,००० एकड़में नील वोया जाता था। इसमें से ४०,००० एकड़का रकवा, १८,००० एकड़ तावान लेकर और २२,००० एकड़ शरहवेशीके अन्तर्गत मुक्त कर दिया

गया। अभी हालमें जो बन्दोवस्त हुआ है उसमें तिन-कठिया केवल तुरकौलिया, मोती-हारी, पीपरा, जलहा और सिरनी इन पाँच कोठियोंके इलाकेमें ही पट्टेदारीकी शर्तके रूपमें दर्ज की गई है और इनमें नीलकी खेतीका रकवा १,९१० एकड़ है, ऐसा इन कोठियोंका दावा है, यद्यपि हम नहीं जानते कि यह शर्त किस हदतक दर्ज की गई है। हमने सब कोठियोंसे नीलकी मौजूदा खेतीके आँकड़े प्राप्त करनेका प्रयत्न किया है और यद्यपि ये समस्त जिलेके पूरे-पूरे आँकड़े नहीं हैं, फिर भी इनमें भूल-चूक बहुत कम है। इनसे प्रकट होता है कि नीलका २६,८४८ एकड़का पूरा रकवा इस प्रकार बँटा हुआ है:

जिरातके	अन्तर्गत	१०,६९७ एकड़
तिन-कठियाके	,,	९,५४२ एकड़
खुश्कीके	,,	६,६०९ एकड़

शरहबेशीसे परिवर्तन

१०. नीलके बदलेमें जो बेशी लगान लिया गया है, वह हर मामलेमें रुपयेमें दो आनेसे अधिक है जो बंगाल काश्तकारी कानूनके खण्ड २८ की धारा (ख) में सामान्यतः लगान-वृद्धिके कारणोंकी हद रखी गई है। किन्तु उस खण्डकी तीसरी धाराके अन्तर्गत यह हद उस अवस्थामें लागू नहीं होती जब किसानको जमींदारकी सुविधाके लिए कोई खास फसल उगानेके बदलेमें खास तौरसे कम लगानपर जमीन दी गई हो। कोठीदारोंका कहना है कि पट्टेदार बीघेमें अपनी तीन कट्ठे जमीनमें नील बोनेके लिए वचनबद्ध हैं; उनकी जमीनका लगान उनके इस वचनको ध्यानमें रखकर बाँधा गया था और इसी वचनके कारण उन्होंने उसमें वृद्धि नहीं की थी। वस्तुतः यह कहा जाता है कि नील बोना पट्टेकी एक शर्त है। अपनी इस उक्तिके समर्थनमें कोठीदारोंने कुछ सट्टों और कबूलियतोंका उल्लेख किया है जो १८८० से पूर्व कुछ किसानोंने किये थे। उनमें बीघेमें तीन कट्ठे जमीनमें नील बोनेके दायित्वका उल्लेख किया गया है। किसानोंकी ओरसे यह कहा जाता है कि वस्तुतः उन्होंने नील बोनेका कोई वचन नहीं दिया है और न उसके कारण उनकी जमीनोंका लगान ही कोई खास कम है। इस बातपर भी जोर दिया जाता है कि लगान बढ़ाना कानून-सम्मत हो चाहे न हो, किसान जिस भारसे इतने दीर्घकालसे पीड़ित हैं उससे मुक्तिके मूल्यके रूपमें उनपर लगान बढ़ाना अन्यायपूर्ण है। अन्तमें यह भी कहा जाता है कि किसानोंने ये करार दबावसे या डरकर या वास्तविक कानूनी स्थिति न जाननेके कारण किये थे।

बन्दोबस्त-अधिकारी श्री स्वीनीने हमें बताया है कि नये बन्दोबस्तमें इस लगान-वृद्धिके सम्बन्धमें जाँच की गई थी और उन्होंने हमें यह बताया कि इन मामलोंको तय करनेमें महकमा बन्दोबस्तने किन सिद्धान्तोंका अनुसरण किया है। तुरकौलिया कोठीके गाँवोंके किसानोंने दीवानी अदालतमें नौ मुकदमे दायर किये थे जिनमें अदालतसे प्रार्थना की गई थी कि वह उनकी उन कबूलियतोंको, जिनमें उन्होंने लगान बढ़ाना मंजूर किया है, इस आधारपर अवैध करार दे कि वे दबावमें आकर लिखी गई हैं और कानून-सम्मत नहीं हैं। इन मुकदमोंकी अपील इस समय हाईकोर्टमें विचाराधीन है।

हमें अपनी जाँचसे पूरा विश्वास हो गया है कि किसानोंमें इस लगान-वृद्धिसे बहुत कटुता है और उसको रद करवानेके लिए समस्त कानूनी उपाय किये जायेंगे। कानून न बनाया जायेगा तो ऐसा लगता है कि लम्बी मुकदमेबाजी होगी और बहुत खर्च होगा। यह मुकदमेबाजी भले ही खत्म हो जाये, किन्तु इसके फलस्वरूप दोनों पक्षोंमें कटुताकी स्थायी भावना उत्पन्न हो जायेगी। हमारा खयाल यह भी है कि इस कठिन प्रश्नके सम्बन्धमें जमींदारों और किसानोंमें तत्काल समझौता हो जाना अत्यन्त वांछनीय है। इन स्थितियोंमें हमें यह बहुत ही जरूरी जान पड़ता है कि सम्भव हो तो शान्ति और सद्भावकी खातिर दोनों पक्षोंमें आपसी आदान-प्रदानकी भावनासे और पारस्परिक सहमतिसे समझौता करा दिया जाये। इसी उद्देश्यसे हमने तीन मुख्य कोठियोंके प्रतिनिधियोंसे बातचीत की थी और हमें यह सूचित करते हुए हर्ष होता है कि हमें अपने प्रयत्नोंमें सफलता मिली है। २९ नवम्बरको रांचीमें हमारी एक बैठक हुई थी जिसमें सर्व श्री हिल, इर्विन और नॉर्मन जो तुरकौलिया लिमिटेड, मोतीहारी लिमिटेड और पीपरा कोठीके मैनेजर हैं, उपस्थित थे और श्री गांधी किसानोंके स्वार्थोंका प्रतिनिधित्व कर रहे थे। निम्न मुद्दोंपर समझौता हो गया है:

(१) शरहबेशी द्वारा जो लगान-वृद्धि हुई है, वह फसली सन् १३२५ (अक्तूबर, १९१७) से तुरकौलिया लिमिटेडके मामलेमें २० प्रतिशत और मोतीहारी लिमिटेड तथा पीपरा संस्थानके सम्बन्धमें २६ प्रतिशत घटा दी जायेगी, किन्तु १३२५ फसलीके पूर्वतक लगान सर्वे-बन्दोबस्तवाली दरोंपर ज्योंके-त्यों बने रहेंगे।

(२) सर्वे रेकर्डमें दर्ज नील-सम्बन्धी मौजूदा दायित्व फसली सन् १३२५के प्रारम्भके साथ ही समाप्त कर दिया जायेगा, और उसके बदले बढ़ा हुआ लगान (शरहबेशी), जिस दरपर वह अन्य लोगोंके साथ-साथ इनके मामलेमें भी राहतकी व्यवस्था [कम्यूटेशन] कर देनेपर होता, उस दरपर निर्धारित किया जायेगा, और फिर उसमें समझौतेके अनुसार जितनी कमी करना तय हुआ है, उतनी कमी कर दी जायेगी।

काश्तकारोंके प्रतिनिधिकी हैसियतसे हमारे सहयोगी श्री गांधी इस व्यवस्थाको एक सन्तोषजनक समझौतेके रूपमें पूरी तरह स्वीकार करते हैं, और यह वचन देते हैं कि वे इसे ईमानदारीके साथ स्वीकार करने तथा बागान-मालिकों और काश्तकारोंके सम्बन्धोंको भविष्यमें शान्तिपूर्ण बनानेके लिए काश्तकारोंपर अपने प्रभावका पूरा उपयोग करेंगे। इस समझौतेके साथ एक शर्त जुड़ी हुई है कि कानून द्वारा इसे पूरी तरह बन्धनकारी रूप दिया जाये। हम इस समझौतेको, सम्बन्धित सभी पक्षोंके लिए न्यायोचित मानते हैं, और इसलिए सिफारिश करते हैं कि पारस्परिक सहमतिसे सम्पन्न किये गये इस समझौतेको आपात्कालीन विधि-निर्माण द्वारा सभी सम्बन्धित पक्षोंके लिए बन्धनकारी बनानेकी दृष्टिसे तुरन्त कार्रवाई की जानी चाहिए।

जहाँतक जलहा और सिरनीके संस्थानोंका सवाल है, यद्यपि वे पारस्परिक सहमतिसे सम्पन्न इस समझौतेमें शामिल नहीं हैं, फिर भी हमारी सिफारिश है कि इनके मामलेमें

भी उन्हीं शर्तोंपर २६ प्रतिशतकी कमी कर दी जाये जिन शर्तोंपर मोतीहारी और पीपरामें कमी की गई है।

तावानके आधारपर राहत

११. हमें अब भी उन मामलोंपर विचार करना शेष है जिनमें एकमुश्त रकम लेकर काश्तकारोंको नील-सम्बन्धी दायित्वसे मुक्त कर दिया गया है। मुक्तिके इस तरीकेको हम काश्तकारोंके हितोंके लिए स्पष्ट रूपसे हानिकर समझते हैं। फैक्टरियोंने तावान लेनेकी बातका बचाव दो भिन्न-भिन्न तरीकोंसे किया है। कुछ संस्थान ऐसा दावा नहीं करते कि काश्तकारीकी किसी शर्त अथवा काश्तकारोंके किसी दायित्वके अनुसार उनके लिए नीलका उत्पादन करना जरूरी था। उनका कहना है कि यह बन्धन तो सिर्फ तदर्थ किये गये साटोंके अनुसार ही लागू होता है, और काश्तकारोंने जो रकमें चुकाई थीं सो, सम्बन्धित पक्षोंके लिए सन्तोषजनक शर्तोंपर उक्त अनुबन्धके समाप्त होनेके एवजमें ही। किन्तु काश्तकारों द्वारा अनुबन्धकी समाप्तिके एवजमें रकमें चुकाये जानेका सिद्धान्त समझमें नहीं आता। जब दोनों पक्ष एक अनुबन्धको समाप्त करना चाहते हैं तब उनमें से एकको कोई बहुत बड़ी रकम क्यों अदा करनी पड़े—विशेषकर उस हालतमें जब अनुबन्धको समाप्त करनेका प्रस्ताव रकम प्राप्त करनेवाले पक्षने रखा हो। हमारा खयाल है, किसी भी संस्थानके मामलेमें अदा की जानेवाली रकममें अनुबन्ध चालू रहनेकी अवधिके कम-ज्यादा होनेसे कोई अन्तर नहीं आया। हालाँकि यदि मामला सिर्फ अनुबन्धसे ही सम्बद्ध रहता तो निश्चय ही ऐसा होना चाहिए था। फिर, ऐसे हर मामलेमें, जिसमें तावान लिया गया, सौदेके एक हिस्सेके रूपमें यह वचन दिया गया था कि भविष्यमें न फैक्टरीके मौजूदा मालिक और न ऐसा कोई व्यक्ति ही, जिसके नाम फैक्टरीका स्वामित्व हस्तान्तरित किया जाये, काश्तकारसे नीलका उत्पादन करनेको कहेगा। हमारे विचारसे इस बातमें सन्देहकी कोई गुंजाइश नहीं है कि काश्तकारोंने जिस चीजके लिए रकमें अदा कीं वह चीज थी नील उपजानेके दायित्वसे मुक्ति, और वे मात्र साटोंकी बनी हुई अवधिसे मुक्ति पानेके लिए इतनी बड़ी रकमें अदा नहीं करते।

जिन पुरानी फैक्टरियोंने मुकर्ररी गाँवोंके सम्बन्धमें शरहबेशीका सहारा लिया और अस्थायी पट्टेवाले गाँवोंके सम्बन्धमें तावान लिया, एक दूसरी ही बात कहती हैं। दोनों ही तरहके मामलोंमें उनका दावा यह है कि काश्तकारीकी यह एक शर्त ही थी—यानी जिस शर्तपर काश्तकारने जमीन प्राप्त की थी उसके अनुसार उसपर नील उपजानेका दायित्व था। लेकिन यदि ऐसी कोई फैक्टरी किसी अस्थायी पट्टेवाले गाँवमें लगान बढ़ाती तो पट्टेको अगली बार नया करते समय उस लाभके दसमें नौ हिस्से ऊपरके जमींदारके पास चले जाते। परिणामस्वरूप ऐसी फैक्टरियाँ विचित्र ढंगका दावा पेश करती हैं। उनका कहना है कि काश्तकारोंपर नील पैदा करनेका बन्धन लगाना केवल फैक्टरीका अधिकार था उसके ऊपरके भू-स्वामीका नहीं, और इसलिए काश्तकारीके साथ लगाई गई शर्तको रद [कम्यूट] करने और उसका पूरा लाभ प्राप्त करनेका अधिकार भी फैक्टरीको ही था, तथा इस लाभमें ऊपरका भूस्वामी कोई हिस्सा

प्राप्त करनेका दावा नहीं कर सकता था। इसका मतलब यह हुआ कि किसी काश्तकारके नाम जमीन बन्दोबस्त करते समय कोई अस्थायी जमींदार काश्तकारीके साथ ऐसी शर्त लगा सकता है, जिसके लाभपर केवल वही दावा कर सके। इस स्थितिके समर्थनमें हमारे सामने कोई भी कानूनी प्रमाण पेश नहीं किया गया, और हमें यह स्थिति कतई स्वीकार नहीं है। यदि काश्तकारीके साथ कोई शर्त लगाई जाती है तो पट्टेदार उसके लाभका उपभोग तभीतक कर सकता है जबतक उसके पास उस जमीनका पट्टा है — उसके बाद नहीं। बेतिया राजने नील-सम्बन्धी शर्तका दावा न किया है और न अब कर रहा है; और फैक्टरियोंने जिस रूपमें हमारे सामने अपना दावा पेश किया है, उस रूपमें तो, हमारा खयाल है, उसे बिलकुल अस्वीकार कर देना चाहिए।

इसलिए हमें लगता है कि चाहे किसी भी सिद्धान्तका सहारा लिया जाये, अस्थायी पट्टेवाले गाँवोंमें तावान लेना उचित नहीं था। अदायगी अनुबन्धकी समाप्तिके लिए की गई थी, इस कथनका उत्तर यह है कि काश्तकार पैसे देकर इस चीजको खरीदनेके लिए आतुर नहीं थे, और न यह — यानी नील-उत्पादनके दायित्वसे अन्तिम मुक्ति — फैक्टरी द्वारा बेची जानेवाली चीजोंमें कोई सर्वोपरि चीज थी। अगर यह कहा जाता है कि जिन शर्तोंपर काश्तकारोंको जमीनकी काश्तकारी दी गई थी, उनमें से एकके अनुसार वे नील-उत्पादनके दायित्वसे बँधे हुए थे तो यह स्पष्ट है कि अदायगीका स्वरूप उस हदतक सारे लगानको एक मुश्त वसूल करने जैसा हुआ; और तब कहना होगा कि यह ऊपरके जमींदारके हितोंके लिए हानिकर हुआ। चूँकि तावान लेनेकी बातके सम्बन्धमें बेतिया राजको जानकारी थी और उसने उसे रोकनेके लिए कोई कार्रवाई नहीं की इसलिए हमारा विचार है कि राजको भी इस सम्बन्धमें अपने ऊपर कुछ जिम्मेदारी लेनी पड़ेगी। हमारी सिफारिश है कि जहाँ अस्थायी पट्टेवाले गाँवोंमें तावान लिया गया, वहाँ बेतिया राज अस्थायी पट्टे नये करनेके लिए एक यह शर्त लगा दे कि तावानके रूपमें प्राप्त की गई रकमका २५ प्रतिशत राजको दे दिया जाये; और फिर हमारी सिफारिश यह भी है कि राज उस रकमको सम्बन्धित काश्तकारोंको वापस कर दे। इसके अतिरिक्त चूँकि तावानको कमसे-कम अंशतः पंजीकृत लगान मानना है, इसलिए हम सिफारिश करते हैं कि बेतिया राज सात वर्षों तक के लिए, मूल्य-वृद्धि आदिके कारणोंसे बन्दोबस्त अदालतों द्वारा अनुमति प्राप्त होनेपर भी, ऐसे काश्तकारोंके सम्बन्धमें लगान बढ़ानेका अधिकार छोड़ दे, जिन्होंने तावान दिया है।

हमें यह सूचना मिली है कि ऐसे कुछ मामलोंमें, जहाँ अभी हालमें गाँव किसी फैक्टरीके पट्टेके अधीन आये थे, प्रबन्धकोंने काश्तकारोंसे साटे लिखवा लिये, और एक-दो साल नील उपजानेके बाद तावान लेकर उसके बदले नील-सम्बन्धी अधिकारको छोड़ दिया। इस प्रकारकी कार्रवाइयाँ हमें तो बिलकुल औचित्यहीन प्रतीत होती हैं। अपने काश्तकारोंके हकमें बेतिया राजका यह फर्ज है कि वह इस मामलेमें हस्तक्षेप करे। हमारी सिफारिश है कि ऐसे मामलोंमें, कोर्ट ऑफ वार्ड्सको इन संस्थानोंके नाम अस्थायी पट्टोंको तबतक नया नहीं करना चाहिए जबतक कि वे तावानके रूपमें प्राप्त सारी रकम वापस नहीं कर देते।

कुछ संस्थानोंने, जिनमें सबसे महत्त्वपूर्ण राजपुर है, स्थायी पट्टेवाले गाँवोंमें भी तावान लिया था। इस तथ्यको ध्यानमें रखते हुए कि पारस्परिक सहमतिसे सम्पादित समझौतेमें भावी शान्ति-सद्भावनाकी दृष्टिसे शरहबेशीमें कुछ कमी करना तय हुआ है, हमारा खयाल है कि स्थानीय सरकार मुकर्ररीदारोंको ऐसे ही आधारपर तावानकी रकमका एक हिस्सा वापस कर देनेकी सलाह दे। राजपुर संस्थानने तावानकी दर बहुत कम रखी, इस बातका खयाल रखते हुए हमारा विचार है कि दस प्रतिशतकी कमी करना पर्याप्त होगा।

राजघाट संस्थानका विशेष मामला

१२. और अन्तमें हम राजघाट फैक्टरी (प्रबन्धक, श्री एपरले) के विशिष्ट मामलेकी चर्चा करना चाहते हैं। वहाँ काश्तकारीकी किसी शर्तका दावा तो नहीं किया जाता, किन्तु काश्तकारोंने इस आशयका अनुबन्ध किया था कि लगान-वृद्धिसे मुक्त रहनेके बदलेमें वे नील पैदा किया करेंगे। इन अनुबन्धोंकी अवधि समाप्त होने-पर पारस्परिक सहमतिसे यह व्यवस्था कायम रखी गई, और फलतः जब नये बन्दो-बस्तके दौरान उचित समय आया तो इस फैक्टरीने लगान-वृद्धिके लिए अर्जी नहीं दी। हमारी स्थानीय जाँच-पड़तालके सिलसिलेमें काश्तकारोंने हमें बताया कि वे अब नील-उत्पादनके दायित्वसे मुक्त होना चाहते हैं। इन परिस्थितियोंमें यह सर्वथा उचित है कि इस फैक्टरीको बन्दोबस्ती प्रक्रियाके अनुसार आम लगान-वृद्धिके लिए अर्जी देनेकी सुविधा दी जाये; किन्तु चूँकि बंगाल काश्तकारी कानून [टेनेंसी ऐक्ट] के खण्ड १०५ के अनुसार इस प्रक्रिया की कालावधि पहले ही समाप्त हो चुकी है, इसलिए जबतक सरकार उक्त कानूनके खण्ड ११२ के अधीन कार्रवाई नहीं करती तबतक यह असम्भव है। यदि यह उपाय कारगर न हो सके तो हमारी सिफारिश है कि जो विशेष कानून बनाया जाये, उसमें एक ऐसी धारा शामिल कर ली जाये जिसके आधारपर यह संस्थान खण्ड १०५ का लाभ उठा सके।

अध्याय ३

अबवाब और ठीका-पट्टोंका नवीकरण

'अबवाब'

१३. हमारी जाँचसे पता चलता है कि अभी हालतक इस जिलेके पश्चिमोत्तर हिस्सेमें गैर-निलहे संस्थानोंके ठेकेदार काश्तकारोंसे दर्ज किये गये लगानके अलावा भी कुछ रकमें नियमपूर्वक वसूल करते थे। ये अनिधिकृत दातव्य आम तौरपर अबवाबके नामसे जाने जाते हैं। १७९३ के दस-साला बन्दोबस्तके विनियम ८ के खण्ड ५४ के अनुसार अबवाब लगाना वर्जित है। इस विनियममें स्पष्ट रूपसे यह विधान कर दिया गया है कि सभी जमींदारोंको एक निश्चित तिथिके भीतर अबवाबकी रकमको लगानके साथ मिलाकर एक कर देना पड़ेगा, और यदि कोई अबवाब लगायेगा तो वह जुर्मानेका भागी होगा। फिर १८५९ के कानून १० के खण्ड १० तथा १८८५ के

बंगाल काश्तकारी कानून ८ के खण्ड ७४ में भी इस निषेधपर जोर दिया गया। पिछले कई वर्षोंसे बेतिया राजके प्रत्यक्ष प्रबन्धके अधीन आनेवाले गाँवोंमें कोई अबवाब वसूल नहीं किया गया है। किन्तु, यद्यपि राजने उससे कोई प्रत्यक्ष लाभ नहीं उठाया, फिर भी गैर-निलहे संस्थानोंके ठेकेदार ऐसी वसूली करते रहे; और आखिर अभी हालमें नये बन्दोबस्तके समय इस गैर-कानूनी कार्रवाईकी ओर ध्यान दिलानेपर कोर्ट ऑफ वार्ड्सने दर्ज किये हुए लगान और अधिकृत महसूलोंके अलावा और किसी प्रकारकी रकम वसूल करनेकी मनाही करते हुए आदेश जारी किये। हमने जो गवाहियाँ लीं, उनसे पता चलता है कि यह कार्रवाई अपने उद्देश्यकी दृष्टिसे सफल सिद्ध हुई है। कुछ निलहे संस्थानोंमें हमने देखा कि किसान फरखावन नामसे सालाना एक छोटी-सी रकम अदा किया करते हैं। यह रकम आम तौरपर सीधे पटवारी द्वारा लगान-वसूलीके समय ली जाती है। यह दस्तूर भी गैरकानूनी है, क्योंकि पटवारीके वेतनका दायित्व जमींदारोंपर है। रामनगर राजमें अबवाबकी नियमित वसूली अब भी प्रचलित है। हमें एक ऐसा पट्टा दिखाया गया, जिसमें निर्देश है कि अमुक अबवाब उस राज्यके ठेकेदारको दिये जायेंगे। इसके अलावा उसमें एक ऐसी धारा भी है, जिसके द्वारा ठेकेदार कुछ ऐसे महसूल वसूलनेको भी बँधे हुए हैं, "जो काश्तकारों और बनियोंसे पुराने रिवाजके अनुसार लिये जाते हैं।" ठेकेदारों द्वारा लिये जानेवाले अबवाबके कई नाम[1] हैं, जिनमेंसे अधिकांश नाम बहुत पुराने समयसे चले आ रहे हैं। लेकिन इस प्रणालीका पूर्ण विकास अपेक्षाकृत हालकी बात जान पड़ती है, और यह उन्नीसवीं सदीके अन्तिम चरणसे अधिक पुरानी नहीं होगी। इस पूर्णता तक पहुँचनेके लिए इस प्रणालीको पुराने अबवाबकी वृद्धि और उनके एकीकरणकी अवस्थाओंसे गुजरना पड़ा है, और उस एकीकृत उगाहीको तबसे अमूमन 'सलामी' या 'पानी खर्चा' के नामसे जाना जाता है। इस उगाहीको कहीं-कहीं — जैसे मसुरारी संस्थानमें — तिन-कठिया भी कहा जाता है — सो इसलिए कि यह नील-सम्बन्धी दायित्वसे कुछ मिलती-जुलती है, यद्यपि इसके अन्तर्गत नील उपजाने-जैसी कोई बात नहीं होती। इस उगाहीकी रकम आम तौरपर ३ रुपये से लेकर ३–८–० रुपये प्रति बीघे होती है, जिसका मतलब हुआ लगानमें ६० से १०० फीसदी तक की वृद्धि। इस राजके यूरोपीय ठेकेदार नियमपूर्वक इस ढंगके अबवाबकी उगाही कर रहे हैं, यद्यपि उन्होंने अभी हालतक नीलका कोई उत्पादन नहीं किया। इनके अतिरिक्त कुछ भारतीय ठेकेदार तथा छोटे-छोटे मालिकान भी ऐसी उगाही करते रहे हैं। जिलेके शेष हिस्सोंमें अबवाबकी नियमित उगाहीकी कोई शिकायत नहीं सुननेको मिली, और ऐसा लगता है कि कमसे-कम अभी हालके कुछ वर्षोंमें किसी विशेष उद्देश्यसे — उदाहरणार्थ, यदि मालिकके परिवारमें किसीका

१. इनमें से मुख्य हैं बंधबेहरी (नदी, तालाब आदिके बाँधसे सम्बन्धित), पैनखर्चा (सिंचाईसे सम्बन्धित), चुल्हिआवन और कोल्हुआवन (गुड़ बनानेकी भट्टी और तेलके कोल्हूपर), बपही-पुतही, मरवच और सगौरा (मृत्यु और विवाहपर), हिसवना, तहरीर, जंगल-इस्मनवीसी, बँटछपी (नापतोलकी चीजोंपर), दसहरी और चैतनवमी, गुरुभेंटी और उपरोहिती। ये अबवाब बराबर इन्हीं नामोंसे वसूल नहीं किये जाते थे; एक गाँवमें इनका नाम कुछ होता था तो दूसरेमें कुछ और।

व्याह हो रहा हो तो उसके लिए — यदा-कदा, लेकिन यदा-कदा ही, कुछ वसूली की गई है।

जिलेके पश्चिमोत्तर हिस्सेमें इस प्रकारकी आम गैर-कानूनी वसूली चलती ही रही है; फिर भी इस तथ्यके वावजूद कि वंगाल काश्तकारी कानूनके खण्ड ७५ में ऐसे मामलोंमें कानूनी प्रतिकारकी व्यवस्था है, इसके अन्तर्गत कोई मुकदमा दायर नहीं किया गया है। कलक्टरका विचार है कि यह खण्ड एक निष्प्रयोजन नियमके रूपमें ही पड़ा रह गया, क्योंकि काश्तकारोंने कोई शिकायत नहीं की और वैसे भी इस कानूनको लागू करनेमें वड़ी कठिनाइयाँ हैं। हमसे कहा गया कि खण्ड ७५ को इस प्रकार संशोधित कर दिया जाये जिससे कलक्टरको, खण्ड ५८ की तरह ही इसके अन्तर्गत भी, मामलोंको सरसरी तौरपर निवटा देनेका अधिकार प्राप्त हो जाये। और हम इस वातसे सहमत हैं कि चम्पारन जिलेमें मौजूद विलक्षण परिस्थितियोंका सामना करनेके लिए किसी विशेष उपायकी आवश्यकता है। हम यह भी मानते हैं कि इस वातको जरा और भी विस्तृत रूपसे प्रचारित कर दिया जाये कि अववावकी वसूली गैर-कानूनी है। इसी वसूलीके साथ दस्तूरी नामसे ज्ञात एक और उगाही प्रचलित है, जो उतनी ही गैर-कानूनी है। इसके अन्तर्गत जमींदारोंके नौकर काश्तकारों द्वारा अदा की गई रकमपर ऊपरसे एक वट्टा लेते हैं। अतः, हमारी सिफारिश है कि:

(१) सरकार एक राजघोषणा जारी करके जमींदारों और काश्तकारोंको सूचित कर दे कि अववाव और जमींदारोंके नौकरों द्वारा वसूली जानेवाली दस्तूरी, दोनों गैर-कानूनी हैं, और उनकी वसूली वन्द कर देनी है;

(२) कोर्ट ऑफ वार्ड्सको अपने अधिकार-क्षेत्रमें आनेवाले राजोंमें इन निषेधाज्ञाओंको लागू करना चाहिए; और

(३) हमने चम्पारन जिलेके लिए जो विशिष्ट कानून वनानेकी सिफारिश की है, उसमें एक धारा ऐसी होनी चाहिए, जिसमें व्यवस्था की जाये कि यदि कलक्टर चाहे तो अपनी ही इच्छासे किसी जमींदार द्वारा काश्तकारोंसे देय लगानके अतिरिक्त कोई रकम वसूलनेकी कार्रवाईकी जाँच करके सजा दे सकता है, और उसके निर्णयपर साधारण अपील की जा सकेगी। जुर्मानेकी रकम अधिकसे-अधिक ५० रुपये तय करना उचित होगा, लेकिन अगर काश्तकारसे वसूली गई अतिरिक्त रकमका दुगुना ५० रुपयेसे अधिक हो तो इस दुगुनी रकमपर ही जुर्माना तय किया जाये। हमारे सहयोगी माननीय राजा कीर्त्यानन्द सिंह कानून वनानेसे सम्वन्धित इस प्रस्तावसे असहमति व्यक्त करते हैं।

लगानकी रसीद

१४. जहाँ अववाव नियमित रूपसे लिये जाते हैं, वहां प्रचलन यह है कि काश्तकार द्वारा चुकाई गई पहली किश्तकी रकम अववावकी मांग खाते जमा कर ली जाती है और उसे तवतक कोई रसीद नहीं दी जाती जवतक कि काश्तकार पूरे अववाव और लगानका कमसे-कम कुछ हिस्सा चुका नहीं देता। यह प्रचलन इस कारणसे और

भी आसान हो जाता है कि आम तौरपर लगानकी रसीदें तबतक नहीं दी जाती हैं जबतक कि वर्ष-भरकी अदायगी पूरी नहीं हो जाती। फिर, उपजके रूपमें चुकाये गये लगानके लिए कोई रसीद नहीं दी जाती। बंगाल काश्तकारी कानूनकी अनुसूची २ में रसीदका जो फार्म निर्धारित किया गया है, उससे स्पष्ट है कि विधान-मण्डलका इरादा यह था कि किसी भी वर्षमें की गई लगानकी पहली अदायगी काश्तकारको दी गई रसीदमें दर्ज कर दी जाये और काश्तकार आगे जब भी कोई अदायगी करे तो उसे दर्ज करवानेके लिए वह रसीद फिर पेश करे। हमारी स्थानीय जाँचोंके दौरान हमें बताया गया कि ऐसी कोई पद्धति चम्पारनके लिए उपयुक्त नहीं होगी, क्योंकि काश्तकार आगेकी किश्तकी अदायगी करते समय पहली रसीद पेश नहीं कर पाता है। यदि कानूनकी पाबन्दी करनी हो तो दूसरी पद्धति यह है कि हर अदायगीके लिए पूरी रसीद दी जायें। इससे लिखा-पढ़ीका काम बहुत बढ़ जायेगा, क्योंकि लगान बराबर छोटी-छोटी किस्तोंमें चुकाया जाता है। हमारे विचारसे इन मध्यवर्त्ती अदायगियोंके लिए किसी-न-किसी प्रकारकी रसीद देना आवश्यक है, यद्यपि उस रसीदको निर्धारित फार्मकी तरह विशद बनानेकी जरूरत नहीं है; और इसलिए हम सिफारिश करते हैं कि स्थानीय सरकारको चाहिए कि वह खण्ड ५६ (३) के उपबन्धके अन्तर्गत अपनी सत्ताका उपयोग करके मध्यवर्त्ती अदायगियोंके लिए एक सीधे-सादे ढंगकी रसीद निर्धारित कर दे, और पूरे विवरणवाली रसीद अन्तिम अदायगीके लिए सुरक्षित रखी जाये। मध्यवर्त्ती रसीदमें सिर्फ काश्तकारका नाम और खतियान नम्बर तथा तिथि-सहित अदा की गई रकम और जिस खाते रकम जमा की जाये उस खातेका नाम देनेकी जरूरत है।

ठेका-पट्टेका नवीकरण

१५. हम अनुच्छेद ३ में बता चुके हैं कि इस जिलेमें ठेकेदारी प्रथा कितनी अधिक प्रचलित है। यदि हम ऐसा मानते हैं कि अतीतकी बुराइयोंका इस प्रथासे अविच्छेद सम्बन्ध रहा है और भविष्यमें भी इस प्रथाके अन्तर्गत जमींदारों और काश्तकारोंके सम्बन्ध अच्छे नहीं हो सकते, तो इस प्रथाकी परिसमाप्तिकी सिफारिश करना हमारा कर्त्तव्य है। और यद्यपि हम निःसन्देह, ऐसा मानते हैं कि जमींदारों और काश्तकारोंके सम्बन्ध, साधारणतया, कोर्ट ऑफ वार्ड्सकी नियमावलीमें बताई गई सामान्य नीतिपर आधारित सीधी व्यवस्थाकी कार्यक्षम प्रणालीके अन्तर्गत ही सर्वोत्तम रीतिसे अच्छे बनाये जा सकते हैं; फिर भी हमारा खयाल है कि उपयुक्त ढंगकी ठेकेदारी प्रणालीके अधीन भी यह सम्भव है। हम इस प्रणालीके किसी भी प्रकारके विस्तारके विरुद्ध हैं, और यदि किसी कारणसे किसी गाँवका पट्टा नया नहीं किया जाता तो उसे किसी दूसरे ठेकेदारको पट्टेपर देनेसे यह अधिक अच्छा है कि उसे सीधी व्यवस्थाके अन्तर्गत ले लिया जाये। बेतिया और रामनगर राजोंकी ठेकेदारी प्रणालीकी रचना कोर्ट ऑफ वार्ड्सने नहीं की थी। बहुत-से ठेकेदारोंकी हैसियत काफी पुरानी है। इनके अतिरिक्त उनके पहलेके सम्बन्धोंसे उत्पन्न कुछ और कारण भी हो सकते हैं, जिनको देखते हुए नीतिमें एकाएक परिवर्तन कर देना उपयुक्त नहीं लगता। यदि ठेकेदारोंके आचरण

काश्तकारों या ऊपरके जमींदारोंके हितोंके लिए हानिकर सिद्ध हुए हैं तो पट्टा नया करनेसे पहले उसके आचरणकी जाँच-परख कर लेनी चाहिए। जिन मामलोंमें कोर्ट ऑफ वार्ड्स पट्टोंको नया करनेका निर्णय दे, उन मामलोंमें, हमारा खयाल है, अल्प अवधिके पट्टे देनेकी अपेक्षा एक बन्धन लगाकर अपेक्षाकृत लम्बी अवधिके पट्टे देना अधिक अच्छा होगा, और वह बन्धन यह रहे कि पट्टोंकी शर्तें तोड़नेपर वे रद माने जायेंगे। इन परिस्थितियोंमें पट्टेदारोंको इस दृष्टिसे पर्याप्त कमीशन दिया जाये कि उन्हें वसूलीका (जिन पिछले बकायोंकी वसूली दुस्साध्य हो उनकी वसूलीका भी) खर्च और अपने लिए एक समुचित पारिश्रमिक मिल सके। जबतक राज अपने ठेकेदारोंको उचित शर्तोंपर लाभ नहीं देता तबतक वह इस कारणसे उत्पन्न बुराइयोंकी सारी जिम्मेदारीसे अपनेको नहीं बचा सकता। उचित कमीशन क्या होगा, इसका हिसाब, निःसन्देह, हर पट्टेके सम्बन्धमें लगाया जा सकता है। दूसरी ओर, जहाँ ठेकेदारको दिया जानेवाला कमीशन सीधी व्यवस्थाके अनुमानित खर्चसे अधिक हो, वहाँ पट्टेको इन शर्तोंपर नया करनेके लिए उस मामलेकी खूबियोंके आधारपर कोई विशिष्ट औचित्य होना चाहिए। और अन्तमें, पट्टोंमें समितिकी ऐसी सिफारिशोंको लागू करनेकी शर्तें होनी चाहिए जिन्हें सरकार स्वीकार कर ले। इनमें विशेष रूपसे ये शर्तें भी शामिल रहें कि अगर काश्तकार स्वयं न चाहे तो नील नहीं उपजाया जाये और किसी प्रकारके अबवाब भी नहीं वसूले जायें। हमारा खयाल है कि राज ठेका-व्यवस्थाके अन्तर्गत आनेवाले गाँवोंके हित-साधनके लिए भी अपने-आपको जिम्मेदार माने, और जब भी उनके हित खतरेमें पड़ जायें तो वह उसके निराकरणको भी अपना दायित्व समझे।

अध्याय ४

काश्तकारोंकी अन्य शिकायतें

हस्तान्तरणपर शुल्क

१६. अब हमें कुछ अन्य बातोंपर विचार करना शेष है। इनमें से कुछ वे हैं जो अतीतमें परेशानियोंका कारण रही हैं और कुछका सम्बन्ध ऐसे सुझावोंसे है, जो भूमि-व्यवस्थामें सुधार लानेकी दृष्टिसे पेश किये जा रहे हैं। पहली बात है, दखली जोतके हस्तान्तरण पर ली जानेवाली फीस। जहाँतक उत्तराधिकार द्वारा स्वामित्व-हस्तान्तरणका सवाल है, यह फीस गैर-कानूनी है, क्योंकि बंगाल काश्तकारी कानूनके खण्ड २६ की रूसे काश्तकारोंको हस्तान्तरणका अधिकार प्राप्त है, और इस अधिकारके विरुद्ध कोई दस्तूर कायम नहीं है। ऐसे शुल्कोंका उल्लेख बपही-पुतही नामसे परिच्छेद ३ में अबवाबके रूपमें किया जा चुका है। और जहाँतक उत्तराधिकारसे भिन्न नियमोंके अन्तर्गत होनेवाले हस्तान्तरणोंका प्रश्न है, यह ध्यान देने योग्य बात है कि किसी जोतका एक अंश किसी अन्यके नाम हस्तान्तरित करनेके लिए कानूनन जमींदारकी स्वीकृति लेनी आवश्यक है, क्योंकि इसमें काश्तकारीके अन्तर्विभाजनका सवाल उठता है (खण्ड ८८,

बंगाल काश्तकारी कानून)। दखली जोतकी हस्तान्तरणीयता दस्तूरपर निर्भर करती है। चम्पारनमें आम दस्तूर यह बताया जाता है कि जमींदारकी अनुमतिके बिना कोई हस्तान्तरण नहीं हो सकता। इस प्रकार जमींदार उत्तराधिकारके अतिरिक्त किसी और नियमसे होनेवाले मान्यता-प्राप्त हस्तान्तरणोंके लिए कानूनी तौरपर शुल्क ले सकता है, और सामान्यतया यही व्यवहार प्रचलित भी जान पड़ता है। किन्तु, साथ ही हमारा यह भी खयाल है कि जहाँ सम्भव हो —— जैसे कोर्ट ऑफ वार्ड्सके अन्तर्गत आनेवाले राजोंमें —— शुल्कका कोई एक-सा मान अपना लिया जाये तो अच्छी व्यवस्थाके विचारसे यह अच्छा होगा। आवश्यकता होनेपर इस मानमें समय-समयपर परिवर्तन किये जा सकते हैं, और जब हस्तान्तरी निर्धारित शुल्क देनेको तैयार रहेगा तब भी इस मानके कारण जमींदारके निषेधाधिकारमें कोई विघ्न नहीं पड़ेगा, क्योंकि शुल्क तो तभी लिया जायेगा जब कि हस्तान्तरणपर स्वीकृति मिल चुकी हो। अतएव, हमारी सिफारिश है कि कोर्ट ऑफ वार्ड्सके अन्तर्गत आनेवाले राजोंमें समय-समयपर शुल्कका एक उचित मान निर्धारित किया जाये, और उसे प्रत्यक्ष अथवा अस्थायी पट्टेवाले गाँवोंमें लागू किया जाये और जहाँतक मुकर्ररी पट्टेपर दिये गये गाँवोंका सवाल है, राज पट्टेदारोंको भी यह नीति अपनानेको प्रेरित करनेके लिए अधिकसे-अधिक प्रयत्न करे।

नामोंके दाखिल-खारिजके लिए दी जानेवाली अर्जियोंके सम्बन्धमें बेतिया राजने जो प्रक्रिया अपना रखी है, उसकी बड़ी आलोचना की गई है। अभी सम्बन्धित पक्षोंका बेतियामें हाजिर होना आवश्यक होता है; इससे अकारण असुविधा होती है; क्योंकि स्थानीय जाँच तो बराबर की ही जाती है। साथ ही हमें यह वांछनीय नहीं लगता है कि ऐसी अर्जियोंको निबटानेका अधिकार ठेकेदारोंको हो —— भले ही किसानोंको उनके निर्णयके विरुद्ध मैनेजरके पास अपील करनेकी सुविधा भी प्राप्त हो। इसलिए हमारी सिफारिश है कि दाखिल-खारिज करनेका अधिकार राजके मैनेजरको हो, किन्तु यदि प्रार्थी चाहे तो वह ठेकेदारकी मारफत अपनी अर्जी भेज सके; ठेकेदार उसे अपनी रिपोर्टके साथ मैनेजरके पास भेज दे और जब मैनेजरसे आदेश प्राप्त हो जाये तब वह उसकी सूचना प्रार्थीको दे दे।

चमड़ा-सम्बन्धी अधिकार

१७. अभी हालमें एक शिकायत बहुत जोरोंसे की जाने लगी है। इसका सम्बन्ध बेतिया राज और रामनगर राज तथा उनके कुछ पट्टेदारोंके इस दावेसे है कि सभी मृत पशुओंके चमड़ोंपर उनका अधिकार है। पिछले कुछ वर्षोंसे चमड़ेकी कीमत बढ़ जानेसे स्वामित्वका यह सवाल अधिक महत्त्वपूर्ण हो गया है। पहले दस्तूर यह था कि एक छोटी-सी रकम अदा करके चमार राजसे ग्राम-विशेषके चमड़ेपर अधिकारका पट्टा ले लेता था, और उधर काश्तकारको एक निश्चित संख्यामें जूतोंके जोड़े और अन्य सामान दिया करता था। इसके अतिरिक्त उसकी पत्नी भी दाईके रूपमें काश्तकारके घर सेवा-टहल कर दिया करती थी। किन्तु, अब यह सब बदल गया है। चरसा महालके नामसे ज्ञात बेतिया राजकी आमदनीका यह स्रोत विभिन्न लोगोंको पट्टेपर दे दिया गया। इनमें से कुछ लोग तो ऐसे थे, जिन्होंने बहुत बड़े क्षेत्रमें चमड़ेके स्वामित्वका अधिकार प्राप्त कर

लिया और कुछ ऐसे चमार थे जिन्होंने एक-एक गाँवकी सीमा तक यह अधिकार प्राप्त किया। इस स्रोतसे राजाकी कुल सालाना आमदनी ३,००० रुपये है। अन्य आय-स्रोतोंके साथ चमड़ा-सम्बन्धी अधिकार भी उन नील कोठियोंको हस्तान्तरित कर दिया गया, जिन्हें १८८७ में मुकर्ररी पट्टे दिये गये। रामनगर राजमें पिछले दो वर्षोंमें इस महालसे ७९,००० रुपयेकी आमदनी हुई है। बेतिया राजके प्रबन्धकने इस दावेको दस्तूरके आधारपर उचित ठहरानेकी कोशिश की है और वह जनहितके नामपर भी इसका समर्थन करता है; उसका कहना है कि इससे पशुओंको जहर खिलाकर मार डालनेकी आशंका कम हो जाती है। दूसरी ओर यह कहा जाता है कि चमड़ेपर मृत जानवरके मालिकका कानूनी अधिकार है; पहले चमारोंको मृत पशुओंका चमड़ा उतार देनेके बदले परती जमीनका उपयोग करने दिया जाता था। दस्तूरके आधारपर ऐसे अधिकारका औचित्य सिद्ध करनेका सवाल तो अदालतके द्वारा निबटाया जाना चाहिए। किन्तु, हमें इस बातमें सन्देह है कि जहाँ ऐसे दस्तूरको सिद्ध कर दिया जाये, वहाँ भी उसकी रूसे मृत पशुके मालिकका चमड़ेपर प्रकृत अधिकार छीना जा सकता है। इसलिए हमारा विचार है कि यदि जमींदारोंको कोई कानूनी अधिकार प्राप्त हो तो उसका खयाल रखते हुए, चमड़ा मृत पशुके स्वामीकी सम्पत्ति है, और उसे यह अधिकार है कि वह चमड़ेको चाहे कीमत लेकर बेच दे या किसी प्रकारकी सेवाके बदले किसीको दे दे।

मिट्टीके तेलका एकाधिकार

१८. कुछ इसीसे मिलता-जुलता मिट्टीके तेलके व्यापारपर एकाधिकारका दावा था। बेतिया राजने यह दावा वापस ले लिया है और हमारा खयाल है कि अब मुकर्ररीदारोंको भी चाहिए कि वे मिट्टीका तेल बेचनेके लिए जो परवाने जारी करते आ रहे हैं, उस चलनको समाप्त कर दें, क्योंकि वे भी तो अपने दावे राजसे ही प्राप्त करते हैं। इस चलनको स्पष्टतः कानूनी तौरपर लागू नहीं किया जा सकता और इससे व्यापारमें रुकावट पड़ती है।

पेड़ोंपर अधिकार

१९. पेड़ सम्बन्धी अधिकारको लेकर काश्तकारोंके बीच बहुत जबरदस्त असन्तोष देखनेमें आता है। कानूनी स्थिति १८९२–९९ के बन्दोबस्तमें भी निर्धारित कर दी गई है और मौजूदा दूसरे बन्दोबस्तमें भी। ऐसा लगता है कि काश्तकार अपनी जोतोंमें खड़े पेड़ोंको भी जमींदारोंकी स्वीकृतिके बिना काट नहीं सकते, और सूखे अथवा काटे गये पेड़की आधी कीमतपर जमींदारका हक है। काश्तकारका कहना है कि वह जमीनके लिए लगान चुकाता है तो पेड़-सहित उसके सारे उत्पादनोंपर उसका अधिकार होना चाहिए। किन्तु दूसरी ओर, लगान दस्तूरका खयाल रखते हुए निर्धारित किया गया था; और फिर जमींदारको एक कानूनी अधिकार तो है ही। काश्तकार निःसन्देह इस बन्दिशको बहुत महसूस करता है कि वह चाहनेपर भी अपनी ही जोतसे जमींदारकी अनुमतिके बिना लकड़ी नहीं ले सकता; उसे इससे जमींदारके अमलों द्वारा दुर्व्यवहारका

डर रहता है। दूसरी ओर यह खतरा है कि सारे पेड़ काश्तकारोंको सौंप देनेका परिणाम यह भी हो सकता है कि जल्द ही उन सबका खात्मा हो जाये। इसलिए जिलेमें पेड़ काफी हैं, और कहा जाता है कि सारनमें, जहाँ काश्तकार जिस जमीनका लगान देते हैं उसपर खड़े पेड़ोंपर उन्हें पूरा अधिकार प्राप्त है, भूमिको वृक्ष-शून्य बना देनेकी प्रवृत्तिका कोई चिह्न दिखाई नहीं देता। मौजूदा दस्तूरसे होनेवाली असुविधाओंको ध्यानमें रखते हुए हम सिफारिश करते हैं कि बेतिया राजमें काश्तकारोंके सामने लकड़ीमें जमींदारोंका आधा हिस्सा खरीद लेनेका विकल्प रखा जाये। पेड़ोंका मूल्य-निर्धारण उचित सिद्धान्तोंपर हो। जहाँ विवाद हो वहाँ मामला निर्धारक (असेसर) के सुपुर्द कर दिया जाये। यदि व्यवहारमें यह पाया जाये कि क्षेत्र-विशेषसे खरीदके लिए अर्जियाँ इतनी अधिक संख्यामें आ रही हैं कि भूमिको अनुचित रूपसे वृक्ष-शून्य कर देनेकी सम्भावना दिखाई देती है तो राज इस विकल्पको सीमित कर दे।

चरागाह सम्बन्धी अधिकार

२०. जाँचके दौरान हमने पाया कि लगभग सारी परती जमीन निरपवाद रूपसे जमींदारोंकी सम्पत्तिके तौरपर दर्ज है। अपवाद जमीनके वे कुछ थोड़े-से टुकड़े ही हैं जो सड़कों, कब्रगाहों तथा खलिहानों आदिके रूपमें सामूहिक उद्देश्योंके लिए उपयोगमें लाये जाते हैं। और इस प्रकार जमींदारको सारी परती जमीन आबाद करने या अपने निजी उपयोगके लिए घेर रखनेका अधिकार मिल जाता है। लोगोंका कहना है कि यह ग्रामीण समुदायके हितके मार्गमें बाधक है, और इससे जमींदारके हाथमें एक ऐसा हथियार आ जाता है कि अगर वह दुष्ट हुआ तो अपने काश्तकारोंके साथ कोई विवाद होनेपर उसका उपयोग उनके खिलाफ कर सकता है। इस सम्बन्धमें सन्देहकी कोई गुंजाइश नहीं कि सामुदायिक उपयोगके लिए कुछ जमीन छोड़ देनेसे गाँवको बड़ा लाभ होता है। यह जरूरी नहीं कि वह टुकड़ा इतना विस्तृत हो कि गाँव-भरके जानवर उसमें चर सकें, लेकिन उसे इतना बड़ा तो होना ही चाहिए कि उसमें वे निर्बन्ध रूपसे घूम-फिर सकें और आबाद जमीनोंमें उनके जानेका भी भय न रहे। इसलिए हम सिफारिश करते हैं कि मालिकों तथा स्थायी पट्टेदारोंको उपर्युक्त ढंगके सामुदायिक उपयोगके लिए हर गाँवमें जमीनका एक टुकड़ा रख छोड़नेकी सलाह दी जाये। कोर्ट ऑफ वार्ड्सके सीधे प्रबन्धके अन्तर्गत आनेवाले गाँवोंके बारेमें हमारी सिफारिश है कि उनमें कोर्ट ऑफ वार्ड्सकी ओरसे ही यह व्यवस्था की जाये, और उसके अन्तर्गत आनेवाले गाँवोंमें हर पट्टेको नया करनेके पूर्व समुचित जाँच-पड़ताल करके इस प्रकारका आरक्षण किया जाये और ऐसी आरक्षणकी शर्तें पट्टेमें ही शामिल कर ली जायें।

श्रम

२१. काश्तकारोंने हमारे पास शिकायत की है कि उनके श्रमके एवजमें जमींदार जो पारिश्रमिक देते हैं, वह अपर्याप्त होता है। किसी भी जमींदारने हमारे सामने काश्तकारोंके श्रम, हल या गाड़ीपर किसी प्रकारका दावा पेश नहीं किया, और यह स्वीकार किया जाता है कि सभी प्रकारका श्रम श्रमिकोंकी इच्छाके अनुसार तथा

पारिश्रमिककी स्थानीय दरपर प्राप्त किया जाना चाहिए। यद्यपि हमारे लिए सभी प्रकारके श्रमोंके लिए उचित दरें निर्धारित करना स्पष्टतः असम्भव ही है, किन्तु हमारा विचार है कि यदि बिहार बागान-मालिक संघ स्थानीय बाजार दरोंके हिसाबसे पारिश्रमिकका एक निम्नतम मान निर्धारित कर दे और अपने सदस्य-संस्थानोंपर उसी दरसे पारिश्रमिक देनेका बन्धन लगा दे तो यह व्यवस्था उसके लिए लाभदायक रहेगी। हम मानते हैं कि ऐसा करनेसे व्यवहार-रूपमें निम्नतम दरके ही अधिकतम मान लिये जानेकी आशंका है, किन्तु पारिश्रमिककी दरें धीरे-धीरे बदलती हैं और इस प्रस्तावको अंगीकार कर लेनेसे संघ कमसे-कम यह तो जान सकेगा कि कोई संस्थान स्पष्टतया अपर्याप्त पारिश्रमिक तो नहीं दे रहा है, और इस प्रकार वह उसपर अधिक अच्छा नियन्त्रण रख सकेगा। इसलिए हम सिफारिश करते हैं कि सारा श्रम विशुद्ध रूपसे श्रमिककी इच्छासे प्राप्त श्रम हो तथा उसके लिए स्थानीय बाजार दरपर पारिश्रमिक दिया जाये; और इस क्षेत्रके कमिश्नरकी स्वीकृतिसे संघ स्थानीय बाजार दरोंके आधारपर पारिश्रमिकका एक निम्नतम मान स्थापित कर दे तथा इस मानमें स्थानीय दरोंके अनुसार समय-समयपर परिवर्तन किया जाये।

गाड़ी-साटा

२२. श्रमके सवालसे ही सम्बन्धित है बैल-गाड़ियोंकी जरूरत पूरी करनेका सवाल। अधिकांश नील फैक्टरियोंको वर्षके कुछ खास मौसमोंमें नीलकी फसलको फैक्टरियोंमें ले जाने और कूड़े-कर्कटको खेतोंमें फेंकनेके लिए बहुत-सी गाड़ियोंकी जरूरत होती है। अधिकांश फैक्टरियाँ पूरे साल अपनी साधारण जरूरतोंको पूरा करनेकी दृष्टिसे पर्याप्त गाड़ियाँ रखती हैं, किन्तु उक्त विशेष अवसरोंके लिए जरूरी अतिरिक्त गाड़ियाँ किरायेपर ले लेती हैं। गाड़ियोंकी जरूरत नियमित रूपसे पूरी होती रहे, इसलिए गाड़ीवानके साथ साटा किया जाता है। इस साटेके अनुसार गाड़ीवानोंको एक निश्चित वर्षावधितक कुछ विशेष अवसरोंपर अपने गाड़ी बैल देने पड़ते हैं, और इस साटेको ध्यानमें रखकर प्रायः निरपवाद रूपसे गाड़ीवानोंको एक पेशगी रकम दे दी जाती है, जो कुछ मामलोंमें इतनी बड़ी भी हुआ करती है कि उससे गाड़ी और बैलकी एक जोड़ी खरीदी जा सके। किन्तु, आम तौरपर पेशगी रकम ३०–४० रुपये ही हुआ करती है। हम यह मानते हैं कि इस उद्योगके लिए इस प्रकारके अनुबन्ध आवश्यक हैं और यदि भाड़ा उचित दिया जाये तथा अनुबन्धकी अवधि लम्बी न हो तो इस प्रणालीके विरुद्ध कोई आपत्ति नहीं की जा सकती। किन्तु, इन अनुबन्धोंकी अवधि — जो कभी-कभी बीस वर्ष भी हुआ करती है — गाड़ीवानोंके हितोंके लिए बाधक है। हमारी सिफारिश है कि ५० रुपये तककी पेशगी रकमवाले अनुबन्धोंकी अवधि तीन साल सीमित कर दी जाये, और जब पेशगी रकम ५० रुपयेसे अधिक हो तब उस अवधिकी अधिकतम सीमा पाँच साल निर्धारित कर दी जाये, और यह भी कि बागान-मालिक संघ अपने सदस्योंपर इस आशयका एक उपनियम लागू करे।

जुर्माने

२३. हमें कुछ ऐसी शिकायतें भी मिली हैं कि कुछेक जमींदारोंने चन्द ऐसे विशिष्ट मामलोंमें, जिनसे उनके अपने हितोंका कोई सम्बन्ध नहीं था और जिनमें अपनी कोई क्षति नहीं हुई थी, काश्तकारोंपर जुर्माने ठोंके और जुर्मानोंसे प्राप्त रकमें भी अपने पास रख लीं। यह बात स्पष्टतः गैरकानूनी है, और यह चीज, जिसे दण्ड-करकी वसूली कहना ही उचित होगा, बन्द की जानी चाहिए।

मवेशीखाने

२४. हमारा ध्यान चम्पारन जिलेमें मवेशीखानोंकी व्यवस्थाके सवालकी ओर भी दिलाया गया है। मवेशीखाने अधिकांशतः पट्टेपर फैक्टरियोंको दे दिये जाते हैं। किन्तु, इसके परिणामस्वरूप इस प्रकारकी शिकायतें आने लगीं हैं कि कभी-कभी काश्तकारोंको परेशान करनेके लिए उनका अनुचित उपयोग किया जाता है और उनके पशुओंको अकारण ही उनमें बन्द कर दिया जाता है। हमारे लिए अलग-अलग शिकायतोंकी जाँच करना और जाँचके निष्कर्षोंकी लिखित रिपोर्ट तैयार करना तो असम्भव है, किन्तु मवेशीखानोंके पट्टे जमींदारोंको देनेसे इस व्यवस्थाका दुरुपयोग किये जानेकी सम्भावना है। अतः हमारी सिफारिश है कि प्रयोगके तौरपर मवेशीखानोंकी व्यवस्था सीधे जिला बोर्डके हाथोंमें देकर देखा जाये कि कैसा चलता है।

ग्राम प्रशासन-सम्बन्धी कागजात

२५. हमने देखा है कि यहाँ उत्तर भारतके अन्य प्रान्तोंकी तरह गाँवोंके दस्तूरोंका कोई ठीक-ठीक लेखा नहीं है, और बन्दोवस्तके समय गाँवोंके विभिन्न दस्तूरोंको दर्ज करनेके लिए जो पद्धति अपनाई गई वह यह कि गाँवके विवरणमें इन्हें दर्ज कर लिया गया; लेकिन ये विवरण किसी ऐसे प्रालेखके अंग नहीं हैं जिनपर पक्का भरोसा किया जा सके। अतिकांश प्रान्तोंमें ऐसे दस्तूरों और अधिकारोंका एक नियमित लेखा रखना वांछनीय पाया गया है। हम यह मानते हैं कि विहारके गाँवोंमें सामुदायिक जीवन उतना प्रवल नहीं है जितना कुछ अन्य प्रान्तोंमें और इन ग्राम-प्रशासनके कागजातमें दर्ज सिंचाई-सम्बन्धी अधिकार-जैसी कुछ वातें विहारके अधिकारोंके रेकर्डमें शामिल हैं। लेकिन तव भी हमारा खयाल है कि यदि चरसा-सम्बन्धी अधिकारों, चरागाहों-सम्बन्धी अधिकारों तथा घर बनाने तथा ऐसी ही अन्य वातोंके सम्बन्धमें दस्तूरसे प्राप्त अधिकारोंको ग्राम-विवरणसे किसी अधिक प्रामाणिक रेकर्डमें दर्ज किया जाये तो यह लाभदायक ही रहेगा। हम सरकारसे इस सुझावपर विचार करनेका अनुरोध करते हैं।

विविध

२६. अन्तमें हम दो और सिफारिशें पेश करना चाहते हैं। इनका उद्देश्य यह निश्चित कर देना है कि सरकार द्वारा जारी किये गये आदेशका पूरा पालन किया जायेगा। पहली सिफारिश तो यह है कि सरकार जो भी आदेश जारी करे उन्हें अधिकसे अधिक प्रचारित करके देशी भाषामें काश्तकारोंको उनकी पूरी जानकारी दे दी जाये।

दूसरी यह है कि प्रत्यक्ष कर्मचारी-वर्ग और विशेषकर कोर्ट ऑफ वार्ड्सके कर्मचारी-वर्गके दिमागमें यह बात बैठा देनी चाहिए कि जबतक सरकारको यह विश्वास नहीं हो जाये कि उसके आदेशोंका पूरी तरह पालन किया गया है तबतक उस दिशामें प्रयत्नशील रहना उन सबके कर्त्तव्योंका एक महत्त्वपूर्ण अंग होगा।

एफ० जी० स्लाई (अध्यक्ष)
एल० सी० ऐडमी
कीर्त्यानन्द सिंह
डी० जे० रीड
जी० रैनी
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

चम्पारन कृषीय जाँच समितिकी रिपोर्ट: नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इंडिया।

परिशिष्ट १२

परिषदीय परमादेश

अक्तूबर ६, १९१७

आज दोपहर बाद परिषद्में चम्पारन कृषीय जाँच समितिके प्रतिवेदनपर चर्चा हुई और यह तय किया गया कि समितिकी सिफारिशोंको आम तौरपर स्वीकार कर लिया जाये तथा एक प्रस्ताव और आवश्यक प्रशासनिक आदेश जारी करके तथा अविलम्ब विधान[1] बनाकर उनको लागू करनेके लिए कदम उठाये जायें।

आदेश हुआ कि चर्चाके दौरान तय पाई गई नीतिके अनुरूप एक प्रस्तावका मसविदा जितनी जल्दी हो सके, तैयार किया जाये।

[अंग्रेजीसे]

सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन, सं० १९०, पृष्ठ ३९२।

१. देखिए अगला शीर्षक।

परिशिष्ट १३

चम्पारन कृषीय विधेयक, १९१७

(परिषद द्वारा पारित रूपमें)

चम्पारन जिलेमें

कुछ कृषीय विवादोंके निवटारे और निर्धारणके लिए

एक विधेयक

चूँकि चम्पारन जिलेमें रहनेवाले भू-स्वामियों और उनकी भूमिपर काश्त करनेवाले किसानोंके वीच कुछ मामलोंके सम्वन्धमें चल रहे विवादोंका निवटारा और निर्धारण वांछनीय है;

और चूँकि भारत सरकारसे इस अधिनियमको पारित करनेकी मंजूरी भारत सरकार अधिनियम, १९१५ के खण्ड ७९ के अन्तर्गत पहले ली जा चुकी है।

इसलिए इसके द्वारा निम्नलिखित अधिनियम वनाया जाता है:

संक्षिप्त नाम और क्षेत्र

१. (१) इस अधिनियमका नाम चम्पारन कृषीय अधिनियम १९१८ होगा।

(२) यह चम्पारन जिलेपर लागू होगा।

व्याख्यात्मक धारा

२. वंगाल काश्तकारी कानून, १८८५ में पारिभाषित इस अधिनियमके सभी शब्दों और शव्द समुच्चयोंका अर्थ वही होगा जो उस अधिनियममें उनको दिया गया था और

"रेकर्ड ऑफ राइट्स" (अधिकार-सूची) का अर्थ होगा वंगाल काश्तकारी कानून, १८८५ के खण्ड १०३ के उपखण्ड (२) के अन्तर्गत अन्तिम रूपसे प्रकाशित 'रेकर्ड ऑफ राइट्स'।

कुछ शर्तों और आरोपणोंकी मंसूखी

३. (१) इस अधिनियमके लागू होनेपर और इसके पश्चात् किसी भूस्वामी और उसके काश्तकारके वीच हुआ कोई भी ऐसा समझौता, पट्टा या अन्य अनुवन्ध, जिसमें उसकी काश्तकी भूमि या उसका कोई हिस्सा किसी फसल विशेषकी खेतीके लिए अलग रखनेकी शर्त सम्मिलित हो, उस शर्तकी हदतक प्रभावहीन माना जायेगा:

शर्त यह है कि यदि काश्तकारने यह अधिनियम लागू होनेके पहले किसी समझौते, पट्टे या अनुवन्धके अन्तर्गत ऐसी शर्तके वदले कोई पेशगी रकम ली हो तो उसे वापस करनी पड़ेगी। या यदि शर्त आंशिक रूपसे पूरी की जा चुकी हो तो उस पेशगी रकमका उतना हिस्सा वापस करना पड़ेगा जितना कि विना पूरी की हुई शर्तके वरावर वैठता हो, और वापस की जानेवाली कथित पेशगी रकम या उसके अनुपातका

निर्धारण स्थानीय सरकार द्वारा नियत अधिकारी द्वारा किया जायेगा और उस अधिकारीका आदेश अन्तिम होगा तथा उसे दीवानी अदालतमें अर्जी देकर, इस उद्देश्यसे राज्यादेशकी तरह लागू किया जा सकेगा कि निर्धारित रकमको कथित काश्तकारीके लिए अदा किये जानेवाले लगानके रूपमें चुका दिया जाये।

(२) इस अधिनियमके लागू होनेपर या उसके पश्चात् किसी काश्तकारीके साथ जुड़ी हुई ऐसी शर्त या आरोपण, जिसके अनुसार उस काश्त या काश्तके किसी हिस्सेको किसी विशेष फसलके उत्पादनके लिए अलग रखनेकी वात हो, किसी भी सीमा तक वैध नहीं होगा।

शर्त हटानेके कारण लगानमें तब्दीली और रेकर्ड-ऑफ राइट्समें निर्धारित लगान दर्ज करना

४. (१) (क) जहाँ भी खण्ड ३ में निरूपित प्रकारकी किसी शर्त, विशेष शर्त या आरोपणसे किसी काश्तकारको छुटकारा देनेके खयालसे उस काश्तकार द्वारा अदा किये जानेवाले लगानमें पहली अक्तूवर १९१७ से पहले कोई वृद्धि की गई हो, वहाँ उल्लिखित तिथिसे उस वृद्धिकी रकमको तुरकौलिया लिमिटेडको अदा किये जानेवाले लगानके मामलेमें वीस प्रतिशत और अन्य सभी मामलोंमें छब्बीस प्रतिशत घटा दिया जायेगा;

(ख) जहाँ भी खण्ड ३ के उपखण्ड (२) में निरूपित प्रकारकी किसी विशेष शर्त या आरोपणको किसी काश्तकारीसे सम्वन्धित अधिकार-सूची (रेकर्ड ऑफ राइट्स) में दर्ज कर दिया गया हो वहाँ उस विशेष शर्त या आरोपणके इन्दराजको रद कर दिया जायेगा और उस काश्तका लगान, जिस गाँवके अन्दर वह काश्त आती हो, उस गाँवके अन्य काश्तोंके सम्वन्धमें या एक ही जमींदारके अधीनस्थ जिन पास-पड़ोसके गाँवोंके अन्दर आती हो उन गाँवोंकी अन्य काश्तोंके सम्वन्धमें धारा (क) के अन्तर्गत अनुमत कमी करनेके वाद लगान-वृद्धिका जो अनुपात हो उसी अनुपातसे वढ़ा दिया जायेगा।

(२) उपखण्ड (१) की धारा (क) के अन्तर्गत की गई कमी या धारा (ख) के अन्तर्गत की गई वृद्धि या उस उपखण्डकी धारा (ख) के अन्तर्गत विशेष शर्त या आरोपणका इन्दराज रद करनेके फलस्वरूप निर्धारित किये जानेवाले किसी काश्तके लगानको अधिकार-सूची (रेकर्ड ऑफ राइट्स) में प्रविष्ट किया जायेगा और ऐसी प्रविष्टिको पहली अक्तूवर, १९१७ से अधिकार-सूचीका ही हिस्सा माना जायेगा और वह लगानकी राशिका निर्णायक साक्ष्य होगा।

(३) स्थानीय सरकार नियम द्वारा यह विहित कर सकती है कि—

(क) उपखण्ड (१) की व्यवस्थाओंके अन्तर्गत कटौती और वृद्धिकी ठीक-ठीक राशि और उसके वाद निकले काश्तके लगानका निर्धारण हर मामलेमें कौन अधिकारी करेगा;

(ख) उपखण्ड (२) में उल्लिखित प्रविष्टि किस अधिकारी द्वारा की जायेगी;

(ग) ऐसा अधिकारी किस कार्यविधिका अनुगमन करेगा।

(४) उपखण्ड (३) की धारा (क) के अन्तर्गत संविहित किये गये अधिकारीका निर्णय निम्नलिखित विषयोंमें अन्तिम होगा —

(क) किसी काश्तकार द्वारा अदा किये जानेवाले लगानमें जो वृद्धि की गई है वह खण्ड ३ में निरूपित प्रकारकी शर्त, विशेष शर्त या आरोपणसे छुटकारा देनेके बदलेमें ही की गई है या नहीं, और यह भी कि ऐसी वृद्धिकी राशि कितनी है;

(ख) अधिकार-सूची (रेकर्ड ऑफ राइट्स) में किया गया कोई इन्दराज खण्ड ३ के उपखण्ड (२) में निरूपित प्रकारकी किसी विशेष शर्त या आरोपणका इन्दराज ही है या नहीं;

(ग) उपखण्ड (२) की व्यवस्थाओंके अन्तर्गत अधिकार-सूची (रेकर्ड ऑफ राइट्स) में प्रविष्ट किये जानेवाले लगानकी राशि कितनी हो;

और ऐसे निर्णयके सही या गलत होनेके बारेमें न कोई मुकदमा दायर किया जा सकेगा और न अदालतमें कोई कार्रवाई हो सकेगी।

(५) उपखण्ड (१) की धारा (क) में उल्लिखित किसी भी काश्तकारके मामलेमें उसकी काश्तके लगानके सम्बन्धमें अधिकार-सूची (रेकर्ड ऑफ राइट्स) में अन्तिम रूपसे प्रकाशित इन्दराजको पहली अक्तूबर, १९१७ से पहलेके बकाया लगानकी वसूलीसे सम्बन्धित दावे या अदालती कार्रवाईके सिलसिलेमें ऐसी काश्तके सम्बन्धमें बढ़ी हुई दर लागू होनेके दिनसे लेकर फसली साल १३२४ के अन्ततक सालाना लगानकी अदायगीके योग्य राशिका निर्णायक साक्ष्य माना जायेगा :

यह उपखण्ड इस अधिनियमके लागू होनेके समय विचाराधीन दावों और अदालती कार्रवाइयोंपर भी लागू होगा।

फसल विशेषकी एक निर्दिष्ट मात्रा देनेके अल्पकालीन करारकी रक्षा

५. इस अधिनियमकी कोई भी व्यवस्था किसी काश्तकारको अपने भू-स्वामीके साथ अपनी काश्त या उसके किसी हिस्सेपर होनेवाली उपज-विशेषकी एक निर्दिष्ट मात्रा देनेका करार करनेसे नहीं रोकेगी :

शर्त यह होगी कि

(१) ऐसा करार भंग करनेके लिए हर्जानेका कोई भी दावा इसी आधारपर किया जा सकेगा कि निर्दिष्ट मात्रामें उपज नहीं दी गई, भूमिके किसी भागमें कोई खास फसल न उगानेके आधारपर नहीं :

(२) ऐसे करारकी अवधि तीन वर्षसे अधिक नहीं होगी; और

(३) दी जानेवाली उपजका मूल्य उसके वजनसे या उसके वजनके सम्बन्धमें मध्यस्थता करनेवालोंकी रायके आधारपर निर्धारित किया जायेगा।

६. इस अधिनियमकी व्यवस्थाएँ, अन्य किसी अधिनियमकी किसी भी व्यवस्थाके बावजूद, प्रभावी होंगी।

[अंग्रेजीसे]

सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन, पृष्ठ ५१८–२०

सामग्रीके साधन-सूत्र

गांधी स्मारक संग्रहालय, नई दिल्ली: गांधी साहित्य और सम्बन्धित कागजातका केन्द्रीय संग्रहालय तथा पुस्तकालय। देखिए खण्ड १, पृष्ठ ३५९।

नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इंडिया, नई दिल्ली।

राष्ट्रीय पुस्तकालय (नेशनल लाइब्रेरी), कलकत्ता।

साबरमती संग्रहालय: पुस्तकालय तथा आलेख संग्रह, जिनमें गांधीजीके दक्षिण आफ्रिकी कालके और १९३३ तकके भारतीय कालसे सम्बन्धित कागजात सुरक्षित हैं। देखिए खण्ड १, पृष्ठ ३६०।

'अमृतबाजार पत्रिका': कलकत्तासे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक समाचारपत्र।

'आश्रम': शान्तिनिकेतनकी हस्तलिखित मासिक पत्रिका।

'इंडियन ओपिनियन': (१९०३-६१) प्रति शनिवारको प्रकाशित होनेवाला पत्र जिसका प्रकाशन डर्बनमें आरम्भ किया गया था, किन्तु जो बादमें फीनिक्स ले जाया गया था। इसमें अंग्रेजी और गुजराती दो विभाग थे। प्रारम्भमें हिन्दी तथा तमिल विभाग भी थे।

'इंडियन रिव्यू': मद्राससे प्रकाशित अंग्रेजी मासिक पत्र।

'इंडियन सोशल रिफॉर्मर': बम्बईसे प्रकाशित अंग्रेजी साप्ताहिक पत्र।

'काठियावाड़ टाइम्स': राजकोटसे प्रकाशित गुजराती साप्ताहिक पत्रिका।

'खेड़ा वर्तमान': खेड़ासे प्रकाशित गुजराती साप्ताहिक पत्र।

'गुजरात मित्र अने गुजरात दर्पण': सूरतसे प्रकाशित गुजराती साप्ताहिक समाचार-पत्र।

'गुजराती': बम्बईसे प्रकाशित गुजराती साप्ताहिक समाचारपत्र।

'टाइम्स ऑफ इंडिया': बम्बईसे और अब दिल्लीसे भी प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'तत्त्वबोधिनी पत्रिका': बंगालसे प्रकाशित मासिक पत्रिका।

'न्यू इंडिया': मद्राससे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'पायनियर': पहले इलाहाबादसे और अब लखनऊसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'प्रजाबन्धु': अहमदाबादसे प्रकाशित गुजराती साप्ताहिक पत्र।

'प्रताप': कानपुरसे प्रकाशित हिन्दी साप्ताहिक पत्र।

'बंगाली': कलकत्तासे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'बॉम्बे क्रॉनिकल': बम्बईसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'बुद्धि प्रकाश': अहमदाबादसे प्रकाशित गुजराती पत्रिका।

'मद्रास मेल': मद्राससे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'मराठा': पूनासे प्रकाशित अंग्रेजी साप्ताहिक पत्र।

'मॉडर्न रिव्यू': कलकत्तासे प्रकाशित अंग्रेजी मासिक पत्रिका।

'लीडर': इलाहाबादसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'वैदिक मेगज़ीन': अंग्रेजी मासिक पत्रिका।

'सद्धर्म प्रचारक': गुरुकुल काँगड़ीका मुखपत्र।

'समालोचक': अहमदाबादसे प्रकाशित गुजराती पत्रिका।

'हिन्दू': मद्राससे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

चम्पारन कृषीय जाँच समितिकी रिपोर्ट: सुपरिंटेंडेंट, गवर्नमेंट प्रिंटिंग, बिहार उड़ीसा, पटना, १९१७।

बॉम्बे गवर्नमेंट पुलिस एक्स्ट्रैक्ट्स।

बॉम्बे सीक्रेट एक्स्ट्रैक्ट्स'।

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके इक्तीसवें अधिवेशनकी रिपोर्ट।

रसशाला औषधाश्रम, गोंडलकी रिपोर्ट।

१५वें बम्बई प्रान्तीय सम्मेलनकी कार्रवाईकी रिपोर्ट।

'अमरनाथ झा': ए मेमोरियल वाल्यूम (अंग्रेजी); सम्पादक के० के० मेहरोत्रा।

'गांधीजीनी साधना' (गुजराती): रावजीभाई पटेल, नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद, १९३९।

'पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद': काका कालेलकर, जमनालाल बजाज ट्रस्ट, वर्धा, १९५३।

'बापूजीनी शीतल छायामां' (गुजराती): करसनदास चितलिया, भगिनी समाज, बम्बई।

'बापूनी प्रसादी' (गुजराती): मथुरादास त्रिकमजी, नवजीवन प्रेस, अहमदाबाद, १९४८।

'महात्मा: लाइफ ऑफ मोहनदास करमचन्द गांधी', (अंग्रेजी): दी० गो० तेन्दुलकर, झवेरी और तेन्दुलकर, बम्बई, १९५१–५४; आठ जिल्दोंमें।

'महात्मा गांधी': रामचन्द्र वर्मा, गांधी हिन्दी पुस्तक भण्डार, कालबादेवी, बम्बई।

'महात्मा गांधी: हिज़ लाइफ राइटिंग्ज़ ऐंड स्पीचेज़' (अंग्रेजी); गणेश ऐंड कं०, मद्रास।

'महात्मा गांधीनी विचार सृष्टि' (गुजराती): मथुरादास त्रिकमजी।

'महादेव देसाईज़ अर्ली लाइफ' (अंग्रेजी): नरहरि डी० परीख, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५३।

'माई डियर चाइल्ड' (अंग्रेजी): एलिस एम० बार्न्ज़, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५६।

'माझी जीवन-कथा, (मराठी): गंगाधरराव देशपाण्डे, मौज प्रकाशन गृह, बम्बई, १९६०।

'लाइफ ऑफ विनोबा' (अंग्रेजी): सर्वोदय प्रचारालय, तंजोर।

'लेटर्स ऑफ राइट ऑनरेबिल वी० एस० श्रीनिवास शास्त्री' (अंग्रेजी): टी० एन० जगदीशन्, रोचहाउस ऐंड सन्स, लिमिटेड, मद्रास, १९४४।

'सत्याग्रह इन चम्पारन' (अंग्रेजी): राजेन्द्र प्रसाद, नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद, १९४९।

'सिलेक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज़ मूवमेंट इन चम्पारन' (अंग्रेजी): डॉ० बी० बी० मिश्र, बिहार सरकार, १९६३।

'स्पीचेज़ ऐंड राइटिंग्ज ऑफ महात्मा गांधी': जी० ए० नटेसन ऐंड कं०, मद्रास।

तारीखवार जीवन-वृत्तान्त

(जनवरी ९, १९१५–अक्तूबर ६, १९१७)

१९१५

जनवरी ९ : गांधीजी और कस्तूरबा बम्बईके अपोलो बन्दरपर जहाजसे उतरे। 'बॉम्बे क्रॉनिकल' और 'टाइम्स ऑफ इंडिया' के प्रतिनिधियोंके पूछनेपर गांधीजीने कहा कि मैं श्री गोखलेकी सलाहका पालन करूँगा और भारतमें कुछ समय तक स्थितिका अवलोकन और अध्ययन करूँगा।

जनवरी ११ : घाटकोपर, बम्बईमें स्वागत-समारोह।

जनवरी १२ : माउंट पेटिट, बम्बईमें सर फीरोजशाह मेहताकी अध्यक्षतामें सार्वजनिक स्वागत-समारोह।

जनवरी १३ : हीराबागमें बम्बई नेशनल यूनियनकी ओरसे स्वागत। बाल गंगाधर तिलक और जोज़ेफ़ बैप्टिस्टा भी उपस्थित थे।

जनवरी १४ : भारत सेवक समाज (सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी) की बम्बई शाखा द्वारा आयोजित प्रीति-भोजमें सम्मिलित हुए। बम्बईके गवर्नरसे भेंट की। बम्बईकी गुर्जर-सभा द्वारा मुहम्मद अली जिन्नाकी अध्यक्षतामें आयोजित उद्यान भोजमें गये।

जनवरी १५ : राजकोट, पोरबन्दर तथा सौराष्ट्रके अन्य स्थानोंकी यात्रापर बम्बईसे रवाना हुए।

जनवरी १७ : राजकोटके नागरिकों द्वारा अभिनन्दन समारोह, अध्यक्षता राजकोटके दीवानने की।

जनवरी २१ : राजकोटके मोढ़-समाज द्वारा मानपत्र।

जनवरी २२ : दरबारगढ़ पहुँचे।

जनवरी २५ : पोरबन्दर पहुँचे।

जनवरी २६ : दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रह संघर्षमें सहायता देनेके लिए गांधीजीने पत्र लिखकर पोरबन्दरके प्रशासक, मेजर हॅनकॉकको धन्यवाद दिया।

जनवरी २७ : गोंडलके रसशाला औषधाश्रमको देखने गये।

जनवरी १९१५ : फीनिक्स आश्रमके बालकोंको शान्तिनिकेतनमें ठहरानेके लिए रवीन्द्रनाथ ठाकुरने पत्र लिखकर गांधीजीको धन्यवाद दिया।

फरवरी २ : गांधीजी अहमदाबादसे बम्बई पहुँचे।

फरवरी ७ : बम्बईके मिशन स्कूलमें भाषण।

फरवरी ८ : पूना पहुँचे। भारत सेवक समाज (सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी) का सदस्य बननेके विषयमें बातचीत।

फीनिक्सके दलका गुरुकुलमें जो आतिथ्य और सत्कार हुआ, उसके सम्बन्धमें

महात्मा मुंशीराम (स्वामी श्रद्धानन्द) को धन्यवादका पत्र लिखा।

फरवरी ११: पूनाकी दक्षिण सभा द्वारा स्वागत-समारोह।

फरवरी १२: पूनाकी सार्वजनिक सभा द्वारा प्रीति-भोजका आयोजन।

फरवरी १३: गांधीजीने पूनामें महर्षि कर्वेका अनाथ बालिकाश्रम, फर्ग्युसन कॉलेज और आनन्दाश्रम देखा।

किर्लोस्कर थियेटरमें सार्वजनिक सभा।

फरवरी १४: बम्बईमें सनातन-धर्म नीति शिक्षण प्रवर्तक समितिके पुरस्कार वितरण समारोहकी अध्यक्षता की।

फरवरी १५: बम्बईके कपोल छात्रावासमें भाषण। शान्तिनिकेतनके लिए रवाना हुए।

फरवरी १७: बोलपुर पहुँचे। सी० एफ० ऐन्ड्रयूजसे मिले। भारतीय रीतिसे स्वागत किया गया। उस दिन रवीन्द्रनाथ वहाँ नहीं थे।

फरवरी १९: गोपाल कृष्ण गोखलेका पूनामें देहावसान।

फरवरी २०: शान्तिनिकेतनमें गोखलेके निधनपर शोक-सभामें भाषण। शोकमें एक वर्ष तक नंगे पैर रहनेका व्रत लिया। ट्रान्सवाल ब्रिटिश भारतीय संघको तार देकर सार्वजनिक रूपसे शोक मनानेका सुझाव दिया। पूनाके लिए रवाना हुए।

फरवरी २१: लाहौर षड्यन्त्रका भण्डाफोड़ हुआ।

फरवरी २३: रेल-यात्राकी असुविधाओंके सम्बन्धमें पूर्व भारतीय रेलवेके ट्रैफिक मैनेजरको पत्र लिखा।

मार्च ३: गोखलेके निधनपर आयोजित सार्वजनिक शोकसभामें जिसकी अध्यक्षता बम्बईके गवर्नरने की, गांधीजीने मुख्य प्रस्ताव पेश किया। बम्बईके लिए रवाना हुए।

मार्च ४: मगनलाल गांधीको पत्र लिखा जिसमें अहमदाबादमें एक संस्था स्थापित करनेकी इच्छा व्यक्त की।

मार्च ५: शान्तिनिकेतन पहुँचे; रवीन्द्रनाथ ठाकुरसे भेंट।

मार्च १३: कलकत्तामें महाराजा कासिम बाजारके महलके मैदानमें स्वागत-समारोह। हरिलाल गांधीने अन्तिम रूपसे गांधीजीसे अलग होनेका निर्णय किया।

मार्च १४: डॉ० प्राणजीवन मेहतासे मिलनेके लिए गांधीजी, रामदास और छगनलालके साथ कलकत्तासे 'लंका' नामक जहाजमें रंगूनके लिए रवाना हुए।

मार्च १७: रंगून पहुँचे।

मार्च १८: भारत सुरक्षा अधिनियम पास किया गया।

मार्च २६: गांधीजी रंगूनसे जहाज द्वारा कलकत्ताके लिए रवाना हुए।

मार्च २७: पूर्व भारतीय रेलवेके ट्रैफिक मैनेजरने गांधीजीके २३ फरवरीवाले पत्रका उत्तर देते हुए अतिरिक्त भाड़ा वापस करना स्वीकार किया।

मार्च ३१: कलकत्ताके कॉलेज स्क्वेयरमें पी० सी० लायन्सकी अध्यक्षतामें छात्रोंकी एक सभा हुई जिसमें गांधीजीने युवकोंको अराजकतापूर्ण कामोंमें भाग न लेनेकी सलाह दी।

अप्रैल २: शान्तिनिकेतनमें गुरुदेव रवीन्द्रनाथ, सी० एफ० ऐन्ड्रयूज और वहाँके अध्यापकोंसे बातचीत की।

अप्रैल ५: शान्तिनिकेतनसे हरद्वार पहुँचे जहाँ कुम्भ मेला हो रहा था।

अप्रैल ६: हरद्वारके निकट गुरुकुलमें स्वामी श्रद्धानन्दसे भेंट की।

अप्रैल ७: हृषीकेश गये, पैदल लक्ष्मण-झूला तक गये, और स्वर्गाश्रम देखने गये।

अप्रैल ८: गुरुकुल काँगड़ीके ब्रह्मचारियोंने स्वागतका आयोजन किया।

अप्रैल ९: गांधीजीने प्रतिदिन आहारमें केवल पाँच वस्तुएँ लेनेका व्रत लिया।

अप्रैल १२: कस्तूरबा तथा अन्य लोगोंके साथ दिल्ली पहुँचे।

अप्रैल १४: मथुरा और वृन्दावनकी यात्रा की। मद्रासके लिए रेलगाड़ीसे रवाना हुए।

अप्रैल १७: मद्रास पहुँचे।

अप्रैल २०: मद्रासमें गोखले-क्लबके सदस्योंके समक्ष भाषण दिया।

अप्रैल २१: गांधीजीके सम्मानमें सर सुब्रह्मण्य अय्यरकी अध्यक्षतामें इंडियन साउथ आफ्रिका लीग, मद्रास द्वारा स्वागत-समारोहका आयोजन। श्रीमती बेसट, न्यायमूर्ति तैयबजी और वी० एस० श्रीनिवास शास्त्री उपस्थित थे।

अप्रैल २२: 'मद्रास मेल' के प्रतिनिधिसे भेंटमें गांधीजीने भारतमें अपने भावी कार्यक्रमके बारेमें बताया।

अप्रैल २३: मद्रास महाजन सभा द्वारा आयोजित सभामें और प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी द्वारा आयोजित जलपानके अवसरपर भाषण किये।
एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिको भेंटमें बताया कि दक्षिण आफ्रिकामें शुरू किया गया काम किस तरह जारी रहेगा।

अप्रैल २४: मुस्लिम लीगकी मद्रास शाखाने लॉली हॉलमें गांधीजी और कस्तूरबाके सम्मानमें जलपानका आयोजन किया।
मद्रासके कानून पेशा लोगों द्वारा आयोजित भोजके अवसरपर भाषण।

अप्रैल २५: सोशल सर्विस लीग, मद्रास द्वारा रानडे भवनमें आयोजित सभामें भाषण।
आर्य वैश्य महासभा द्वारा आयोजित स्वागत-समारोहमें भाग लिया।

अप्रैल २६: मद्रासके भारतीय ईसाइयों द्वारा आयोजित स्वागत-समारोहमें गांधीजीने दक्षिण आफ्रिकामें ईसाई प्रचारकों द्वारा प्रदान की गई सहायताओंका उल्लेख किया।

अप्रैल २७: वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीकी अध्यक्षतामें वाई० एम० सी० ए० में मद्रासके छात्रों द्वारा स्वागत-समारोहका आयोजन।

अप्रैल २९: मद्रासकी लक्ष्मी मेमोरियल आर्य पाठशाला देखने गये।
लाड गोविन्ददासके निवास-स्थानपर मद्रासके गुजराती समाज द्वारा आयोजित भोजमें गये।

अप्रैल ३०: मायावरमसे ट्रैंकेबार (मद्रास राज्य) पहुँचे।
दक्षिण भारतीय दलित वर्ग संघकी ओरसे आयोजित स्वागत-समारोहमें भाग लिया।

मई १: मायावरम वापस गये।

मई २: मायावरमके विक्टोरिया टाउन हॉलमें अस्पृश्यता और स्वदेशीके विषयमें भाषण देते हुए कहा कि अपने नेताओंसे मेरा कोई 'झगड़ा' नहीं है।

मई ५–६: नेलौरमें मद्रास प्रान्तीय-सम्मेलनके अधिवेशनमें भाग लिया।

मई ७: मद्रासमें भारतीय दक्षिण आफ्रिकी-संघकी सभामें गांधीजीने दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रह आन्दोलनकी चर्चा की और जी० ए० नटेसनको उनकी सहायताके लिए धन्यवाद दिया। संघने एक प्रस्ताव द्वारा अपनेको विघटित करते हुए कोषमें जमा बाकी रकमको गांधीजीको सौंपनेका निश्चय किया।

मई ८: बंगलौर पहुँचे।

गवर्नमेंट हाईस्कूलमें गोखलेके चित्रका अनावरण किया।

लालबागमें आयोजित स्वागत-समारोहमें भाग लिया।

मई ११: अहमदाबाद वापस पहुँचे। अहमदाबादमें आश्रम स्थापित करनेके सम्भावित व्ययका तखमीना तैयार किया।

मई २० से पूर्व: कोचरब आश्रमके संविधानका मसविदा तैयार किया।

मई २३: फीनिक्सका दल मगनलाल गांधीके साथ गुरुकुल काँगड़ीसे अहमदाबाद पहुँचा।

जून १: 'बालकोंमें मिथ्या भाषणके दोष'के लिए एक दिनका उपवास किया।

जून ३: सम्राट्के जन्म-दिवसपर वितरित की जानेवाली उपाधियोंकी सूचीमें गांधीजीको भी ब्रिटिश साम्राज्यकी सेवाके उपलक्ष्यमें कैसरे-हिन्द पदक देनेकी घोषणा की गई।

जून १६: दक्षिण आफ्रिकी भारतीय कोषके मन्त्री, जे० बी० पेटिटको पत्र लिखकर दक्षिण आफ्रिकामें जनवरी ३१, १९१५ तक सत्याग्रह आन्दोलनके सिलसिलेमें होनेवाली आमदनी और खर्चका हिसाब दिया।

जून २६: पूना जाकर कैसरे-हिन्द पदक लिया।

जुलाई ११: पूनामें बम्बई प्रान्तीय सम्मेलनके १५वें अधिवेशनमें भाग लिया।

लोकमान्य तिलकसे दो बार भेंट की।

जुलाई: गवर्नमेंट ऑफ इंडिया ऐक्ट, १९१५ पास हो गया।

सितम्बर २०: गांधीजी सी० एफ० ऐन्ड्र्यूज और डब्ल्यू० डब्ल्यू० पियर्सनके बम्बई पहुँचनेपर उनसे मिले और उनके साथ अहमदाबादके लिए रवाना हुए।

सितम्बर २३: सी० एफ० ऐन्ड्र्यूज और पियर्सन जहाजसे फीजीके लिए रवाना हुए।

गांधीजीने श्रीनिवास शास्त्रीको एक पत्रमें लिखा कि सत्याग्रह आश्रममें एक अछूत-परिवारको रखनेके कारण शायद उन्हें (गांधीजीको) कस्तूरबासे अलग होकर ढेड़ोंकी बस्तीमें रहना पड़ेगा।

सितम्बर २६: ढेड़ जातिके दूदाभाई और उनकी पत्नी सत्याग्रह आश्रममें रहनेके लिए आये।

गांधीजीने ए० एच० वेस्टको लिखा कि 'इंडियन ओपिनियन'को हर कीमतपर चलाते रहना चाहिए।

सितम्बर ३०: बम्बईमें दक्षिण आफ्रिकी भारतीय कोष समितिकी बैठकमें भाग लिया।

वलिअम्मा हॉलकी स्थापनाके प्रस्तावपर विचार किया गया।

अक्तूबर १५: लॉर्ड हार्डिजने अपने एक खरीतेमें गिरमिट प्रथाको पूर्णतया समाप्त करनेकी जोरदार सिफारिश की।

अक्तूबर २८: बम्बईके एम्पायर थियेटरमें गांधीजीने गिरमिटिया प्रथापर भाषण दिया। सभाकी अध्यक्षता सर इब्राहीम रहीमतुल्लाने की।

नवम्बर ५: बम्बईमें सर फीरोजशाह मेहताका स्वर्गवास।

गांधीजीने ए० एच० वेस्टको लिखा कि वलिअम्मा हॉलका विचार छोड़ दिया जाये।

नवम्बर १५: गांधीजीने अहमदाबादमें प्रेमाभाई हॉलमें सर फीरोजशाह मेहताके निधन-पर आयोजित सभामें शोक-प्रस्ताव पेश किया। सर चिनूभाई सभाके अध्यक्ष थे।

नवम्बर २१: अहमदाबादमें श्रीमद् राजचन्द्रकी जयन्तीके समारोहकी अध्यक्षता की।

नवम्बर २८: श्री एन० सी० मेहताके आई० सी० एस० परीक्षामें उत्तीर्ण होनेपर उनके सम्मानमें अहमदाबादमें आयोजित एक समारोहमें भाषण दिया।

दिसम्बर १: अहमदाबादसे राजकोट जाते हुए गांधीजी कस्तूरबाके साथ वीरमगाँव पहुँचे।

दिसम्बर ४: राजकोटसे गोंडल पहुँचे।

दिसम्बर ८: भावनगरमें राज्यके दीवानकी अध्यक्षतामें नागरिकों द्वारा आयोजित एक स्वागत-समारोहमें भाषण किया।

भावनगरके मोढ़-समाजकी ओरसे अभिनन्दन-पत्र भेंट।

दिसम्बर १२: अमरेलीसे हडाला होते हुए बगसरा पहुँचे। लोगोंको वीरमगाँवके चुंगी-घरको हटवानेमें सहायता देनेका वचन दिया।

दिसम्बर २४: बम्बईमें सर दोराबजी टाटाकी अध्यक्षतामें होनेवाले औद्योगिक सम्मेलनमें भाग लिया, और गिरमिट प्रथा समाप्त करनेकी सिफारिश करनेके लिए वाइस-रॉय महोदयके प्रति धन्यवादके प्रस्तावका समर्थन किया।

दिसम्बर २७–२९: बम्बईमें एस० पी० सिन्हाके सभापतित्वमें अखिल भारतीय कांग्रेसका अधिवेशन। गांधीजीने 'भारत तथा उपनिवेश' विषयपर प्रस्ताव पेश किया। कांग्रेसने अ० भा० कांग्रेस कमेटीको मुस्लिम लीगकी कार्यकारिणीसे परामर्श करके स्व-शासनकी योजना तैयार करनेका आदेश दिया। कांग्रेसके संविधानमें संशोधन करके उन सभी राजनीतिक संगठनोंको प्रतिनिधित्व देनेकी व्यवस्था की गई जो कमसे-कम दो वर्षसे कार्य कर रहे हों। गांधीजी विषय समितिमें नहीं चुने जा सकते थे इसलिए सभापतिने उन्हें उसका सदस्य नामजद किया।

दिसम्बर ३०: अखिल भारतीय मुस्लिम लीगकी बैठक मौलाना मजहरुल हककी अध्यक्षतामें बम्बईमें हुई।

१९१६

जनवरी १: प्रागजी देसाईकी जन्मभूमि सालेजमें गांधीजीको अभिनन्दनपत्र दिया गया।

जनवरी २: सूरतमें आर्य-समाजके वार्षिकोत्सवकी अध्यक्षता की, और एक मन्दिरका उद्घाटन किया।

जनवरी ३ : सूरतमें जैन छात्र पुस्तकालयके उद्घाटनके अवसरपर पाटीदार युवक संघ और आर्य-समाजके एक समारोहमें भाषण।
जिला वकील संघ, सैयदपुरा मुस्लिम संघ और इस्लामिया पुस्तकालय द्वारा आयोजित विभिन्न स्वागत-समारोहोंमें भाग लिया।

जनवरी ४ : दाऊद मुहम्मद (अध्यक्ष, नेटाल भारतीय कांग्रेस) के जन्म-स्थान कठोड़ (सूरत) गये।

जनवरी ५ : नवसारीके निवासियों द्वारा आयोजित समारोहमें भाषण।
कोली फकीरा तथा पारसी रुस्तमजी द्वारा दक्षिण आफ्रिकामें की गई सेवाओंकी प्रशंसा की।

जनवरी १३ : श्रीनिवास शास्त्रीको पत्र लिखा जिसम भारत सेवक समाजकी कार्यप्रणालीसे अपनी असहमति प्रकट की।

जनवरी १६ : भारतके वाइसरॉय-पदपर लॉर्ड चैम्सफोर्डके नियुक्त किये जानेकी घोषणा की गई।

जनवरी १७ : अहमदाबाद जिलेके वावला नामक स्थानपर जनहितार्थ कार्यालय द्वारा गांधीजीका अभिनन्दन किया गया।

फरवरी ४ : भारतके वाइसरॉय, लॉर्ड हार्डिंजने बनारस हिन्दू विश्वविद्यालयका शिला-न्यास किया।

फरवरी ५ : गांधीजीने काशी नागरी प्रचारिणी सभाके वार्षिकोत्सवमें भाग लिया और हिन्दीके महत्त्वपर भाषण किया।

फरवरी ६ : महाराजा दरभंगाकी अध्यक्षतामें बनारस विश्वविद्यालय-सप्ताह मनानेके लिए आयोजित एक सभामें गांधीजीका भाषण। सभी उपस्थित राजा गण और श्रीमती बेसेंट विरोध प्रकट करनेके लिए सभा छोड़कर चले गये। सभाकी कार्रवाई सहसा भंग हो गई।

फरवरी ७ : दरभंगाके महाराजको पत्र लिखकर गांधीजीने वाइसरॉय महोदयके सम्बन्धमें अपनी उक्तियोंका आशय स्पष्ट किया।

फरवरी ९ : बम्बई पहुँचे। बनारसकी घटनाके बारेमें एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिको वक्तव्य देकर अपना पक्ष स्पष्ट किया।

फरवरी १० : गांधीजी द्वारा दिये गये इस वक्तव्यके जवाबमें श्रीमती बेसेंटने 'न्यू इंडिया' में लेख लिखकर इस बातसे इनकार किया कि उन्होंने राजाओंको सभाका त्याग करनेकी सलाह दी थी। गांधीजीको उनके भाषणके दौरान बीच-बीचमें टोकनेका उन्होंने औचित्य सिद्ध किया।

फरवरी १४ : मद्रासमें होनेवाले मिशनरी सम्मेलनमें गांधीजीने स्वदेशीके विषयमें भाषण दिया।

फरवरी १६ : मद्रास वाई० एम० सी० ए० में सत्याग्रह आश्रमके उद्देश्योंपर प्रकाश डाला।
मद्रासके समाज सेवा संघ (सोशल सर्विस लीग) की वार्षिक बैठकमें भाषण किया।
'यंग इंडिया' ने बनारस-काण्डपर टिप्पणी प्रकाशित की।

फरवरी १७ : बनारस-काण्डके बारेमें श्रीमती बेसेंट द्वारा किये गये खण्डनके जवाबमें गांधीजीका पत्र मद्रासके 'हिन्दू' में छपा।

'न्यू इंडिया' ने गांधीजीके उक्त पत्रको प्रकाशित किया और साथ ही उसके बारेमें श्रीमती बेसेंटका स्पष्टीकरण भी। मद्रासके ऐंडर्सन हॉलमें आयोजित एक वाद-विवाद प्रतियोगितामें गांधीजीने अध्यक्षता की।

फरवरी १९ : दक्षिण सभाके निमन्त्रणपर पूना पहुँचे, और किर्लोस्कर थियेटरमें गोखलेकी बरसीके उपलक्ष्यमें आयोजित सभामें बोले।

फरवरी २३ : अहमदाबाद लौटे। एक सभामें अध्यक्षता की जिसमें भारतीय महिला विश्वविद्यालयके संस्थापक धों० के० कर्वेका सार्वजनिक व्याख्यान हुआ।

फरवरी २५ : 'लीडर' में प्रकाशित एक लेख लिखकर गांधीजीने गिरमिट प्रथाको तत्काल समाप्त करनेकी मांग की।

फरवरी २६ : हैदराबाद (सिन्ध) में सार्वजनिक स्वागत-समारोह।

फरवरी २७ : हैदराबाद (सिन्ध) के होमस्टेड हॉलमें गोखलेके चित्रका अनावरण किया।

फरवरी २८ : नारी-शाला, नवलराय, हीराचन्द, अकादमी, नवविद्यालय, हाईस्कूल और कुन्दनमल गर्ल्स स्कूल देखने गये।

हीराबागमें हैदराबादके गुजराती और दक्षिणी लोगोंसे भेंट की।

चेचकके टीकेके सम्बन्धमें होमस्टेड हॉलमें भाषण।

फरवरी २९ : कराचीके नागरिक संघ द्वारा स्वागत; खालिकदीना हॉलमें गोखलेके चित्रका अनावरण किया। गुजराती हिन्दुओंने अभिनन्दन-पत्र भेंट किया।

मार्च २ : कराची बन्धु मण्डलके स्वागत-समारोहमें भाषण। सिन्धके सार्वजनिक जीवनके बारेमें 'पारसी संसार' के प्रतिनिधिको अपनी राय बताई।

मार्च ४ : उपनिवेश मन्त्री बोनर लॉने फीजीके कार्यवाहक गवर्नरके नाम एक खरीतेमें एक अन्तर्विभागीय समिति नियुक्त करने और अगले पाँच वर्षो तक गिरमिट प्रथाको जारी रखनेके बारेमें अपनी सहमति प्रकट की।

मार्च २० : शाही विधान परिषद्में पण्डित मदनमोहन मालवीयने भारतीय गिरमिटिया मजदूरोंकी भर्तीकी प्रथा समाप्त करनेकी माँग करते हुए एक प्रस्ताव पेश किया। प्रस्तावको स्वीकार करते हुए वाइसरॉयने घोषणा की कि भारत-मन्त्री और भारत सरकार दोनोंने इस प्रथाको समाप्त करनेका निश्चय कर लिया है।

गांधीजीने हरद्वारके निकट गुरुकुल काँगड़ीमें भाषण किया।

मार्च ३० : सत्याग्रह संघर्षके खर्चेके बारेमें जे० बी० पेटिटको पत्र लिखा।

अप्रैल ४ : भारतके नये वाइसरॉय लॉर्ड चैम्सफोर्डका बम्बई-आगमन। प्रदर्शन किये गये।

लॉर्ड हार्डिंज़ भारतसे रवाना हो गये।

अप्रैल १९ : गांधीजीको गुजरात वर्नाक्यूलर सोसाइटीका आजीवन सदस्य नामजद किया गया।

अप्रैल २१, २२, २३ : इलाहाबादमें अ० भा० कांग्रेस कमेटीकी बैठकमें भारतके स्वशासनकी योजनापर विचार किया गया।

अप्रैल २३: लोकमान्य तिलकने प्रथम होमरूल लीगकी स्थापना की। इसका मुख्य कार्यालय पूनामें रखा गया।

अप्रैल २९ – मई १: वेलगाँवमें वम्वई प्रान्तीय राजनीतिक सम्मेलनका अधिवेशन; १९१५ में कांग्रेस-संविधानकी धारा २२ में जो संशोधन हुआ था, उसे ध्यानमें रखते हुए गांधीजीने देशके राजनीतिक संगठनोंमें समझौता होना चाहिए, इस उद्देश्यके एक प्रस्तावका समर्थन किया।

अप्रैल ३०: वेलगाँवमें "दलित वर्गों" के सम्बन्धमें भाषण।

मई ७: पूनामें मजिस्ट्रेटकी अदालतमें लोकमान्य तिलकके विरुद्ध मुकदमा शुरू हुआ।

मई १३: गांधीजीने भावनगर जैन बोर्डिंग होस्टलके छात्रोंको चायके स्थानपर पेयके रूपमें ग्रहण करनेके लिए गेहूँका चूर्ण भेजा।

मई २८: 'न्यू इंडिया' का मुद्रक होनेके नाते एनी बेसेंटसे मद्रास सरकारने प्रेस ऐक्टके अधीन जमानत की माँग की।

जून ४: गांधीजीने अहमदाबादमें जाति संघोंके सम्मेलनमें अस्पृश्यताके सम्बन्धमें भाषण किया।

जून ५: सम्मेलनके दूसरे दिन हिन्दू जाति प्रथाके सम्बन्धमें भाषण।

जून ७ के वाद: विनोबा भावेके पिताको पत्र लिखकर विनोबाकी सादगीकी प्रशंसा की।

जून १२: एनी बेसेंटने लन्दनमें एक सहायक होमरूल लीगकी स्थापना की।

जून २४: वम्बईके नागरिकोंकी सभामें गांधीजीने प्रेस ऐक्टके विरुद्ध एक प्रस्ताव पेश किया।

जुलाई २६ से पूर्व: रेल मुसाफिरोंकी कठिनाइयोंके वारेमें गुजरातीमें एक पुस्तिका लिखी।

जुलाई २७: कोचरब आश्रममें प्रार्थनाके वाद होनेवाली सभामें दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रहके रहस्यको समझाया।

अगस्त १२: लोकमान्य तिलकसे एक वर्ष तक सदाचरणका मुचलका माँगा गया। जमानतकी रकम जमा कर दी गई।

सितम्वर १: एनी बेसेंटने मद्रासमें होमरूल लीगकी स्थापना की।

अक्तूवर २१: अहमदावादमें होनेवाले वम्बई प्रान्तीय राजनीतिक सम्मेलनमें गांधीजीने अध्यक्ष पदके लिए मुहम्मद अली जिन्नाका नाम प्रस्तावित किया।

अक्तूवर २२: वम्वई प्रान्तीय सम्मेलनमें गांधीजीने भारत प्रतिरक्षा अधिनियमको लागू किये जानेके ढंगका और बम्वई प्रदेशमें एनी बेसेंटका प्रवेश-निषेध करनेवाली सरकारी आज्ञाका विरोध करते हुए एक प्रस्ताव पेश किया।

अक्तूवर २३: वम्वई प्रान्तीय सम्मेलनमें गांधीजीने प्रस्ताव पेश करके गिरमिटिया प्रथा समाप्त करने, वीरमगाँव रेलवे-स्टेशन तथा काठियावाड़की सीमापर स्थापित चुंगी-चौकियाँ हटानेकी माँग की।

नवम्वर १: एनी वेसेंटको मध्यप्रान्तमें प्रवेश करनेका निषेध किया गया।

नवम्वर ९: वड़वान (सौराष्ट्र) में गांधीजीने श्रीमद् राजचन्द्रकी जयन्तीके अवसरपर भाषण किया।

सुरक्षा सम्बन्धी मामलेमें बम्बई हाईकोर्टने लोकमान्य तिलकके पक्षमें निर्णय सुनाया।

नवम्बर १७: अ० भा० कांग्रेस कमेटी तथा मुस्लिम लीगने कलकत्तामें अपना संयुक्त सम्मेलन किया।

दिसम्बर १२: गांधीजीने सत्याग्रह-कोष और 'इंडियन ओपिनियन' के बारेमें ए० एच० वेस्टको पत्र लिखा।

दिसम्बर २२: इलाहाबादमें म्योर सेन्ट्रल कॉलेजकी अर्थशास्त्र-विभाग समितिके तत्वावधानमें "क्या आर्थिक उन्नति वास्तविक उन्नतिके विपरीत बैठती है?" विषयपर भाषण। सभाकी अध्यक्षता पण्डित मदनमोहन मालवीयने की।

दिसम्बर २३: पण्डित मदनमोहन मालवीयकी अध्यक्षतामें होनेवाली एक सार्वजनिक सभामें गांधीजीने 'प्राचीन और अर्वाचीन शिक्षा' के सम्बन्धमें भाषण दिया।

दिसम्बर २६-३०: लखनऊमें अम्बिकाचरण मजूमदारके सभापतित्वमें कांग्रेसका अधिवेशन। सुधार-सम्बन्धी कांग्रेस-लीग योजना स्वीकृत। कांग्रेसके दोनों दलोंमें समझौता; १९०७ में सूरत कांग्रेसमें हुए झगड़ेके बाद तिलकने पहली बार अधिवेशनमें भाग लिया। गांधीजीने गिरमिटिया प्रथा और भारत सुरक्षा अधिनियमके ऊपर प्रस्ताव पेश किये।

श्रीमती एनी बेसेंट, डॉ० रासबिहारी घोष, सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, मजहरुल हक, जिन्ना, पोलक और उत्तर प्रदेशके लेफ्टिनेंट गवर्नर शामिल हुए।

साम्राज्यके प्रति भारतीयोंकी निष्ठा, आर्म्स ऐक्ट, स्वयंसेवक या किसी दूसरी हैसियतसे सेनामें काम; प्रेस ऐक्ट, गिरमिटिया मजदूरों, उपनिवेशोंमें बसे भारतीयों, बिहारके बागान-मालिकों और रैयतके सम्बन्धोंके बारेमें प्रस्ताव पास किये गये।

दिसम्बर २७: लन्दनके "राउंड टेबल" को लिखा गया लॉयनेल कर्टिसका पत्र 'न्यू इंडिया' में छपा।

दिसम्बर २९: गांधीजीने लखनऊमें अखिल भारतीय एक-भाषा व एक-लिपि सम्मेलनकी अध्यक्षता की।

दिसम्बर ३१: मुस्लिम लीगके अधिवेशनमें कांग्रेस-लीग सुधार योजना प्रस्तुत की गई। उपनिवेशोंमें भारतीयोंके साथ होनेवाले दुर्व्यवहारके विरोधमें श्री जिन्नाका प्रस्ताव स्वीकृत किया गया। गांधीजी भी अधिवेशनमें शामिल हुए और हिन्दू-मुस्लिम एकतापर बोले।

१९१७

जनवरी २: कांग्रेस अधिवेशनके बाद गांधीजी लखनऊसे अहमदाबाद लौट आये।

जनवरी १४: गांधीजीने वक्तव्य देकर स्पष्ट किया कि "राउंड टेबल" के मन्त्रीके नाम लायनेल कर्टिसका पत्र प्राप्त हुआ था।

जनवरी १७: नारणदास गांधीको पत्र लिखकर एक राष्ट्रीय विद्यालय स्थापित करनेका अपना संकल्प प्रकट किया।

जनवरी १८ के बाद: विद्यालयकी योजना तैयार की।

फ़रवरी ४: अहमदाबादमें गिरमिट प्रथाके विरोधमें आयोजित सभाकी अध्यक्षता की। ऐन्ड्रयूज और पोलक भी बोले।

फरवरी ७: शाही विधान परिषदके सत्रका उद्घाटन करते हुए वाइसरॉयने बताया कि उन्होंने पण्डित मदनमोहन मालवीयको गिरमिट-प्रथाको पूर्णतया समाप्त करनेके उद्देश्यसे एक विधेयक पेश करनेकी अनुमति क्यों नहीं दी थी।

फरवरी ७ के बाद: गांधीजीने एक वक्तव्य जारी करके वाइसरॉयको गिरमिट प्रथाके बारेमें आश्वासन देनेके लिए धन्यवाद दिया।

फरवरी ९: बम्बईमें एक्सेलिसयर थियेटरमें आयोजित एक सार्वजनिक सभामें गांधीजीने गिरमिट प्रथा तुरन्त समाप्त करनेकी माँग करते हुए तत्सम्बन्धी एक प्रस्तावका समर्थन किया।

फरवरी ११: होमरूल-लीग, बम्बईके तत्त्वावधानमें होनेवाली गिरमिट-प्रथा विरोधी सभामें भाषण।

फरवरी १९: श्री गोखलेकी बरसीके अवसरपर होनेवाली सभाकी अध्यक्षता करनेके लिए गोधरा पहुँचे।

फरवरी २६: सूरतकी सार्वजनिक सभामें गिरमिटिया मजदूरोंकी भर्ती बन्द करनेकी माँग की।

मार्च २: कराचीमें होमरूल-लीगके मुख्य कार्यालयमें सत्याग्रह और सादगीके ऊपर भाषण किया।

हरदेवी बाई गर्ल्स स्कूल गये। पारसी थियेटरमें कच्छी और गुजराती समाजके लोगोंसे मिले।

सार्वजनिक सभामें लोगोंसे बड़ी तादादमें फौजमें भर्ती होनेका आग्रह किया। कराचीमें सार्वजनिक सभामें गांधीजीने माँग की कि मई ३१, १९१७ तक गिरमिटिया प्रथा समाप्त कर दी जाये।

मार्च ६: महाराजा कासिम बाजारके निमन्त्रणपर कलकत्ता पहुँचे। टाउन हॉलमें आयोजित सार्वजनिक सभामें घोषणा की कि भारत ३१ मईसे आगे गिरमिटियोंकी भर्ती कदापि सहन नहीं करेगा।

मार्च १२: भारत-सुरक्षा अधिनियमके अन्तर्गत गिरमिटिया मजदूरोंकी भर्ती और उनको उपनिवेशोंमें भेजे जानेका निषेध करते हुए सपरिषद् वाइसरॉयका निर्णय 'गजट' में प्रकाशित।

अप्रैल ८: गांधीजीने अ० भा० कांग्रेस कमेटीकी बैठकमें भाग लिया जिसमें कांग्रेसके कामके लिए आठ आदमियोंका एक शिष्टमण्डल इंग्लैंड भेजनेका निश्चय किया गया।

अप्रैल १०: गांधीजी राजकुमार शुक्लके साथ चम्पारन जाते हुए पटना पहुँचे। मजहरुल हकके साथ ठहरे।

मुजफ्फरपुर पहुँचनेपर जे० बी० कृपलानी आदिने स्वागत किया।

गांधीजी उस रात छात्रावासमें रहे।

अप्रैल ११ : गांधीजी बिहार बागान-मालिक संघके मंत्री जेम्स विल्सनसे मिले और अपने आनेका प्रयोजन बताया।
संध्याको मुजफ्फरपुरके वकीलोंसे मिले।
लोक-सेवा आयोगकी रिपोर्टके बारेमें रैमजे मैक्डॉनल्डके बयानका जवाब दिया और कहा कि यदि श्री गोखले रहते तो वे श्री अब्दुर्रहीमके साथ मिलकर एक अल्पमतीय रिपोर्ट तैयार करते।

अप्रैल १२ : गांधीजीने तिरहुत डिवीजनके कमिश्नरको पत्र लिखकर भेंटकी अनुमति मांगी और स्थानीय प्रशासनके सहयोगकी कामना व्यक्त की।

अप्रैल १३ : तिरहुतके कमिश्नर मॉर्सहेडसे मुजफ्फरपुरमें भेंट की। बादमें पत्र लिखकर अपने जांच कार्यके क्षेत्रके विषयमें बताया और स्थानीय नेताओंके वक्तव्य साथमें भेजे।

अप्रैल १५ : मगनलाल गांधीको पत्र लिखकर बताया कि चम्पारनकी स्थिति फीजी और नेटालसे भी ज्यादा खराब है।
मोतीहारी पहुँचे।

अप्रैल १६ : चम्पारन जिलेके जसौली नामक स्थानके लिए रवाना हुए। सरकारने उन्हें पहली गाड़ीसे जिला छोड़कर चले जानेकी आज्ञा दी। गांधीजी मोतीहारी लौट आये और जिला मजिस्ट्रेट डब्ल्यू० बी० हेकॉकको आदेशका उल्लंघन करनेके इरादेकी सूचना पत्र द्वारा दी। कैसरे-हिन्द पदक वापस करनेके अपने निर्णयकी सूचना वाइसरॉयके निजी सचिवको पत्र लिखकर दी।

अप्रैल १८ : मोतीहारीके जिला मजिस्ट्रेटकी अदालतमें उपस्थित हुए और आदेशका उल्लंघन करनेका कारण बताते हुए एक वक्तव्य पढ़ा। मामला २१ अप्रैल तकके लिए स्थगित हो गया।

अप्रैल १९ : गांधीजीके ऊपर जारी की गई सरकारी आज्ञाके विरोधमें बिहार प्रान्तीय संघकी कार्यकारिणीने वाइसरॉय और लेफ्टिनेंट गवर्नरको विरोधपत्र भेजनेका निश्चय किया।

अप्रैल २० : सरकारने गांधीजीके खिलाफ मुकदमा उठा लेनेकी आज्ञा दी और जिला अधिकारियोंको जाँच-कार्यकी अवधिमें उन्हें सारी सुविधाएँ देनेका आदेश दिया।

अप्रैल २१ : गांधीजीने बिहार और उड़ीसा प्रान्तके लेफ्टिनेंट गवर्नरको मुकदमा उठानेके लिए धन्यवादका तार भेजा। सामाचारपत्रोंको एक वक्तव्य भेजा। हेकॉकसे भेंट की।

अप्रैल २२ : मोतीहारीसे बेतियाके लिए रवाना हुए।

अप्रैल २३ : बेतियाके सब-डिवीजनल अफसरसे भेंट की।

अप्रैल २७ : बेतिया राजके प्रबन्धक जे० टी० ह्विटीने मॉर्सहेडको पत्र लिखकर गांधीजी द्वारा की जा रही जाँचपर आपत्ति करते हुए सुझाव दिया कि सरकार एक कमीशन नियुक्त करे।

अप्रैल २८ : बिहार बागान-मालिक संघके अवैतनिक मंत्री, हर्बर्ट कॉक्सने गांधीजी द्वारा जांच किये जानेपर आपत्ति प्रकट करते हुए मॉर्सहेडको पत्र लिखा। गांधीजीने

वेतियाके सब डिवीजनल अफसरको पत्र लिखकर इस आरोपका खण्डन किया कि वे उसके अधिकारोंमें हस्तक्षेप कर रहे हैं।

अप्रैल : लन्दनमें साम्राज्यीय युद्ध सम्मेलनकी बैठक। भारतकी ओरसे सर एस० पी० सिन्हा, महाराजा बीकानेर और सर जेम्स मेस्टनने भाग लिया। भारत मंत्रीने भविष्यमें सभी साम्राज्यीय सम्मेलनोंमें भारतको प्रतिनिधित्व देनेके निर्णयकी घोषणा की।

मई १ : मॉर्सहेडने विहार और उड़ीसा प्रान्तके मुख्य सचिवको पत्र लिखकर एक जाँच-कमीशन नियुक्त करनेकी सिफारिश की। गांधीजी मोतीहारी गये।
तुरकौलिया (चम्पारन) की नील कम्पनीके एक वँगलेमें आगजनीकी घटना।

मई २ : सरकारने समाचारपत्रोंमें प्रकाशित इस रिपोर्टका खण्डन किया कि गांधीजीके ऊपरसे मुकदमा उठानेकी आज्ञा भारत सरकारने दी थी।

मई ५ : विहार वागान-मालिक संघके निर्देशकोंने गांधीजीके जाँच-कार्यके ढंगके विरोधमें एक जोरदार प्रस्ताव पास किया।

मई ९ : चम्पारनसे पटना पहुँचनेपर जनता द्वारा गांधीजीका शानदार स्वागत।
विहार और उड़ीसा प्रान्त-कार्यकारिणी परिषद्के सदस्य, डब्ल्यू० मॉड, मॉर्सहेड, हेकॉक, लुई और ह्विटीसे मिले।

मई १० : गांधीजी पटनामें मॉडसे मिले और अपनी जाँचकी परिचयात्मक प्रारम्भिक रिपोर्ट प्रस्तुत करना स्वीकार किया।

मई १३ : वेतियासे गांधीजीने चम्पारनकी रैयतकी दशाका विवरण एच० मैक्फर्सनको भेजा।

मई १४ : अपनी जाँच-रिपोर्टकी प्रतियाँ मॉड, मॉर्सहेड और हेकॉकको भेजीं।

मई १७ : भारतीय होमरूल लीगका प्रथम वार्षिक सम्मेलन जोज़ेफ वेप्टिस्टाकी अध्यक्षतामें नासिकमें हुआ।
गांधीजी द्वारा अपने कार्य और ओलहा अग्निकाण्डके वारेमें 'ए० पी० आई०' की रिपोर्टका खण्डन; हेकॉकके साथ हुए पत्र-व्यवहारका प्रकाशन।

मई १८ : ढोकरहामें लोहरिया फैक्टरीकी कचहरीकी इमारत आग लगनेसे जलकर ध्वस्त।

मई १९ : गांधीजीने लोहरियाकी नील कम्पनीके प्रवन्धकको रैयतपर होनेवाले जुल्मके वारेमें पत्र लिखा।

मई २० : प्रान्तके लेफ्टिनेंट गवर्नरने भारत सरकारके गृह-सदस्यको पत्र लिखकर गांधीजीके विरुद्ध की जानेवाली प्रस्तावित कार्यवाहीका ब्यौरा भेजा।
विहार वागान-मालिक संघने मॉर्सहेडको पत्र लिखकर आगजनीकी घटनाओंकी जिम्मेदारी गांधीजीके कार्योंपर डाली।
गांधीजीने हेकॉकको वेलवा और ढोकरहा कम्पनियोंके वारेमें पत्र लिखते हुए वागान-मालिकों द्वारा रैयतको डराये-धमकाये जानेकी शिकायत की।

मई २१ : मैक्फर्सनने सरकारसे भारत सुरक्षा कानूनके अन्तर्गत गांधीजी और उनके साथियोंको चम्पारनसे वाहर निकालनेकी अनुमति माँगी। ह्विटीने मॉडको लिखा कि गांधीजी यूरोपीयोंके खिलाफ आन्दोलन केन्द्रके प्रेरक-विन्दु वन गये हैं।

मई २२ : गांधीजीने ढोकरहा अग्निकाण्डके बारेमें हेकॉकको एक और वक्तव्य भेजा। मॉंसहेडको लिखे अपने पत्रमें हेकॉकने ढोकरहा अग्निकाण्डकी जिम्मेदारी गांधीजीकी उपस्थितिपर डालते हुए कहा कि उनका जांच-कार्य जिलेकी शान्तिके लिए बहुत बड़ा खतरा है।

मई २४ : वाइसरॉयने अपनी कार्यकारिणी-परिषद्से परामर्श किया। बादमें भारत सरकारके गृह-विभागने मैक्फर्सनको तार भेजकर एक शक्तिसम्पन्न जांच समिति नियुक्त करनेकी सलाह दी।

मई २६ : गांधीजीने एस्थर फैरिंगको पत्र लिखा जिसमें चम्पारनकी रैयतकी दशाकी तुलना गुलामोंसे की।

मई २७ : सपरिषद लेफ्टिनेंट गवर्नरने गांधीजीको ४ जूनको रांची बुलाया। मैक्फर्सनने भारत सरकारको लिखा कि प्रस्तावित समितिमें गांधीजी रैयतके प्रतिनिधिकी हैसियतसे सदस्य नियुक्त किये जायें।

मई २९ या उससे पूर्व : समाचारपत्रोंको दिये एक वक्तव्यमें कहा कि निश्चित मुद्दोंके बारेमें जांच करनेसे वर्तमान स्थितिमें सुधार हो जायेगा, बशर्ते कि जाने-माने अन्यायोंको तुरन्त समाप्त कर दिया जाये।

मई ३० : मैक्फर्सनको पत्र लिखकर लेफ्टिनेंट गवर्नरसे मिलनेकी स्वीकृति ली, और अपने जाँच-कार्यमें बागान-मालिकों द्वारा डाली जानेवाली अड़चनोंकी शिकायत की।

मई १९१५ : ब्रिटिश गायना, ट्रिनीडाड, जमैका और फीजीमें एक नई सहायता प्राप्त प्रवास-योजनापर विचार करनेके लिए लन्दनमें अन्तर्विभागीय सम्मेलन आयोजित हुआ।

जून १ : बागान-मालिकोंने सरकारको पत्र लिखकर माँग की कि गांधीजीको चम्पारनसे निकाल दिया जाये।

जून २ : भारत सरकारके गृह-विभागने बिहार सरकारको लिखा कि एक महीनेके भीतर समिति नियुक्त करके जांच-कार्य आरम्भ कर दिया जाये।
गांधीजी पटना पहुँचे। मालवीयजी, राजेन्द्रप्रसाद तथा अन्य लोगोंसे मिले। रांचीके लिए रवाना।

जून ४ : गांधीजी राँचीमें लेफ्टिनेंट गवर्नरसे मिले।
महाराजा दरभंगा (सदस्य, कार्यकारिणी-परिषद) को जाँचके बारेमें अपनी शर्तें लिख भेजीं।

जून ५ : लेफ्टिनेंट गवर्नरसे बातचीत; कार्यकारिणी-परिषदके सदस्योंसे मिले। पटनाके लिए रवाना।

जून ७ : पटना पहुँचे। मालवीयजीसे सलाह करने बाद सरकारी जाँच समितिकी सदस्यताकी स्वीकृति भेज दी।

जून ८ : यूरोपीय संघके मंत्रीने गांधीजीको चम्पारनसे निकाल देनेकी माँग की।
गांधीजी बेतिया पहुँचे।

जून १० : सरकारी प्रस्तावमें चम्पारन जाँच समितिकी जाँचके विषय और सदस्योंके नामोंकी घोषणा की गई।

गांधीजीने मैक्फर्सनको लिखा कि वेतियामें रैयतसे बयान लिया जाना बन्द कर दिया गया है।

जून १२ : मोतीहारी गये। बयानोंका लिया जाना बन्द कर दिया गया।

जून १४ : विहार बागान-मालिक संघके अवैतनिक मन्त्रीने मैक्फर्सनको पत्र लिखकर समितिमें गांधीजीको शामिल करनेपर विरोध प्रकट किया।

जून १६ : मद्रास सरकारने श्रीमती वेसेंट, जी० एस० अरुण्डेल और बी० पी० वाडिया-पर नजरबन्दी आदेश जारी कर दिया।

जून १७ : गांधीजी बेतियासे अहमदाबादके लिए रवाना हुए।
वापस लौट आये।

जून २८ : गांधीजी भारत सेवक समाजके मंत्री डॉ० देवके साथ अहमदाबादसे मोतीहारी लौटे।

जून २९ : हेकॉकको पत्र लिखा और उसमें गाँववालोंकी सहायतार्थ डॉ० देव तथा स्वयंसेवकोंको भेजनेका प्रस्ताव रखा।

जून ३० : दादाभाई नौरोजीका निधन।
'पायनियर' में पत्र लिखकर गांधीजीने अपनी वेशभूषाकी आलोचनाका उत्तर दिया। जे० बी० पेटिटको श्रीमती बेसेंट तथा अन्य लोगोंकी नजरबन्दीके बारेमें पत्र लिखा और निषेधके बावजूद गाँवोंमें जोरदार प्रचार-कार्य करनेकी सलाह दी।

जुलाई : विहार सरकारने विज्ञप्ति निकालकर सूचना दी कि जाँच-कार्य जुलाईके मध्यसे आरम्भ होगा।

जुलाई ७ : पटनासे गांधीजीने वाइसरॉयके निजी सचिवको पत्र लिखा जिसमें श्रीमती बेसेंटकी नजरबन्दीको "भयंकर भूल" बताया।

जुलाई ९ : राजा हरिहरप्रसाद सिंह द्वारा अस्वस्थताके कारण त्याग-पत्र देनेपर उनके स्थानपर राजा कीर्त्यानन्द सिंह चम्पारन जाँच-समितिके सदस्य नामजद किये गये।

जुलाई ११ : चम्पारन जाँच-समितिने अपनी विधि और जाँचके विषय निर्धारित करनेके लिए आरम्भिक बैठक की।

जुलाई १२ : हाउस ऑफ कॉमन्स सभामें ई० एस० मॉंटेग्यु (भूतपूर्व भारत उपमन्त्री) ने भारत सरकारके वर्तमान गठनकी कड़ी आलोचना की।

जुलाई १३ : गांधीजीने एक निजी परिपत्रमें सत्याग्रह आश्रमकी गति-विधियों और खर्चेका तखमीना बताते हुए सहायताकी अपील की।

जुलाई १७ : ई० एस० मॉंटेग्यु भारत मन्त्री नियुक्त हुए।
चम्पारन जाँच-समितिकी बैठक बेतियामें आरम्भ हुई।

जुलाई १९ : चम्पारन जाँच समितिकी बैठक बेतियामें हुई।

जुलाई २५ : ब्रिटिश इंडिया स्टीम नेवीगेशन सर्विसके जहाजोंमें डेकपर यात्रा करनेवाले मुसाफिरोंके प्रति बरती जानेवाली उपेक्षाके सिलसिलेमें गांधीजीने रंगूनकी यात्री-कष्ट समितिके सचिवको पत्र लिखा। विहार बागान-मालिक संघने चम्पारन जाँच-समितिको एक लिखित वक्तव्य दिया।

जुलाई २६ : चम्पारन जाँच-समितिकी बैठक मोतीहारीमें हुई, जिसमें मोतीहारी लिमिटेड कम्पनीके प्रबन्धक डब्ल्यू० एस० इर्विनने बयान दिया।

जुलाई २८ : कांग्रेस-लीग सुधार परिषद्की बम्बईमें संयुक्त बैठक।

जुलाई २९ : गांधीजीने शरहबेशीके बारेमें एक गोपनीय टिप्पणी जाँच समितिके सदस्योंके विचारार्थ तैयार की।

अगस्त प्रमुख भारतीय नेताओंने, जिनमें कांग्रेसी भी शामिल थे, मॉंटेग्युकी आगामी भारत-यात्राको ध्यानमें रखते हुए सत्याग्रह आन्दोलन चलानेके विरोधमें एक घोषणा-पत्र निकाला।

अगस्त ८ : चम्पारन जाँच-समितिकी बैठक बेतियामें हुई। अबवाब-सम्बन्धी गांधीजीका सुझाव मान लिया गया।

अगस्त १० : जाँच समितिने तिन-कठिया प्रथा समाप्त करना स्वीकार कर लिया।

अगस्त ११ : गांधीजीने शरहबेशीके सवालपर समितिकी बठकमें चर्चा की, और अपने प्रस्ताव प्रस्तुत किये।

अगस्त १२ : जाँच समितिने बागान-मालिकोंके साथ परामर्श किया और सर्वसम्मतिसे तिन-कठिया प्रथाके स्थानपर खुश्की-प्रथा लागू करनेका निश्चय किया।

अगस्त १३ : गांधीजीने चम्पारन जाँच समितिके अध्यक्षको शरहबेशी और तिन-कठियाके बारेमें पत्र लिखकर बागान-मालिकोंके साथ समझौतेकी अपनी शर्तें बताईं।

अगस्त १४ : समिति गांधीजीके सुझावोंपर विचार करनेके बाद स्थगित हो गई।

अगस्त १५ : गांधीजीने पीपरा नील कारखानेके प्रबन्धकसे रैयतके मारे-पीटे जानेकी शिकायत की।

अगस्त १६ : बेतिया और मोतीहारीमें सेवा-कार्य जारी रखनेके लिए स्वयंसेवकोंके शिविर स्थापित करके गांधीजी अहमदाबाद जाते हुए पटना पहुँचे।

अगस्त २० : कॉमन्स सभामें ई० एस० मॉंटेग्युने प्रशासनके प्रत्येक क्षेत्रमें भारतीयोंको उत्तरोत्तर अधिकाधिक स्थान देनेकी ब्रिटिश सरकारकी नीति घोषित की।

अगस्त २४ : श्रीमती बेसेंट और उनके साथी कार्यकर्त्ताओंकी रिहाईकी माँग करनेके लिए अहमदाबादमें व्यापारियोंकी एक सभामें गांधीजी बोले।

अगस्त ३१ : महादेव देसाईको अपने साथ काम करनेका निमन्त्रण दिया।

सितम्बर : 'इंडियन रिव्यू' में "उपनिवेशोंमें भारतीय प्रवासी" शीर्षक लेख लिखकर लन्दनमें होनेवाले अन्तर्विभागीय सम्मेलनकी रिपोर्टपर अपने विचार प्रकट किये।

सितम्बर १ : उपनिवेशोंमें प्रवास विषयक अन्तर्विभागीय सम्मेलनकी रिपोर्टपर आधारित भारत सरकारका प्रस्ताव प्रकाशित हुआ।

गांधीजीने सत्याग्रहके बारेमें शंकरलाल बैंकरको पत्र लिखा।

सितम्बर २ : सरकारके दमनकारी कानूनोंके विरुद्ध सत्याग्रह आन्दोलन चलानेके प्रस्ताव-पर विचार करनेके लिए बम्बई प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीकी बैठक हुई; इसमें गांधीजीने भाग लिया।

सितम्बर ४ : गांधीजी बम्बईसे अहमदाबाद लौटे।

सितम्बर ११ : अहमदाबादसे मद्रासके लिए रवाना हुए।

सितम्बर १३ से पूर्व : गुजरात सभाकी ओरसे भारत-मन्त्री श्री मॉंटेग्युको देनेके लिए एक याचिका तैयार की।

सितम्बर १७ : श्रीमती बेसेंट, वाडिया और अरुण्डल रिहा किये गये।

गांधीजी पूना पहुँचे।

प्रान्तीय सहकारिता सम्मेलनमें "सहकारिताका नैतिक आधार" विषयक निबन्ध पढ़ा।

सितम्बर १८ : पूनासे रांचीके लिए रवाना हुए।

सितम्बर २१ : शाही विधान-परिषद्में पण्डित मदनमोहन मालवीयने प्रस्ताव पेश किया कि आई० सी० एस० की परीक्षा भारत और इंग्लैंड, दोनों जगह एक साथ होनी चाहिए।

सितम्बर २२ : गांधीजी रांची पहुँचे।

सितम्बर २३ : रांचीमें लेफ्टिनेंट गवर्नरसे अपनी भेंटमें गांधीजीने शरहबेशी और चम्पारनमें स्वयं-सेवकोंके कामके विषयमें बातचीत की।

सितम्बर २४–२८ : चम्पारन जाँच-समितिकी रांचीमें होनेवाली अन्तिम बैठकमें गांधीजीने भाग लिया।

सितम्बर २५ : गांधीजीने तीसरे दर्जेकी रेलयात्राके बारेमें अखबारोंमें एक पत्र लिखा।

सितम्बर २७ : "भारत साम्राज्यके अन्दर रहकर स्वशासन क्यों चाहता है।" (ह्वॉट इंडिया वांट्स : आटोनॉमी विदिन द इम्पायर) शीर्षकसे लिखी गई नटेसनकी पुस्तिकाके लिए गांधीजीने भूमिका लिखी।

सितम्बर २९ : शरहबेशीमें कमी करनेके बारेमें प्रमुख बागान-मालिकोंके साथ होनेवाले समझौतेपर गांधीजीने हस्ताक्षर किये।

अक्तूबर २ : गांधीजीके जन्मदिवसपर मद्रासके गोखले हॉलमें श्रीमती बेसेंटने गांधीजीके चित्रका अनावरण किया।

अक्तूबर ३ : चम्पारन जाँच-समितिके अन्य सदस्योंके साथ गांधीजीने रिपोर्टपर हस्ताक्षर किये।

अक्तूबर ४ : गांधीजीने समितिकी रिपोर्टपर सरकारके निर्णयको क्षेत्रीय भाषामें प्रकाशित करनेका सुझाव देते हुए लेफ्टिनेंट गवर्नरको पत्र लिखा।

अक्तूबर ५ : रांचीसे पटना पहुँचे, और वहाँसे कांग्रेस कमेटीकी बैठकमें भाग लेनेके लिए इलाहाबाद रवाना हुए।

अक्तूबर ६ : अ० भा० कांग्रेस कमेटी और अ० भा० मुस्लिम लीगकी परिषद्की संयुक्त बैठक इलाहाबादमें हुई जिसमें कांग्रेस-लीग योजनाका समर्थन करनेके लिए एक अखिल भारतीय शिष्टमण्डल वाइसरॉय और भारत-मन्त्रीके पास भेजनेका निश्चय किया गया।

चम्पारन जाँच-समितिकी रिपोर्टको सपरिषद् लेफ्टिनेंट गवर्नरने स्वीकार कर लिया।

शीर्षक-सांकेतिका

सांकेतिका

ख

ग

फ

व

श